आगम-साहित्यरत्नमालायाः षष्ठं रत्नम्

प्राचीनाचार्यकृतभाष्योपेतं, श्रीविसाहगणिमहत्तरप्रणीतम्

निशीथ-सूत्रम्

आचार्यप्रवर श्री जिनदासमहत्तरविरचितया

विशेषचूर्ण्या समलंकृतम्

विंशतितमोद्देशकस्य सुबोधाख्यया संस्कृत-व्याख्यया सहितञ्च

चतुर्थो विभागः

उद्देशकाः १६–२०

सम्पादक :

उपाध्याय कवि अमर मुनि

मुनि कन्हैयालाल 'कमल'
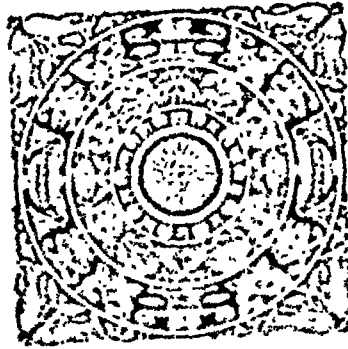
आगम - प्रतिष्ठान

ज्ञान - पीठ, आगरा

आचार - शास्त्र

के

सतर्क एवं सजग मर्मी अध्येताओं

को

—उपाध्याय अमर मुनि

प्रकाशकीय

निशीथचूर्णि का यह चतुर्थ खण्ड, पाठकों की सेवा में पहुँच रहा है। आशा की थी कि तीसरे खण्ड के अनन्तर शीघ्र ही चतुर्थ खण्ड का प्रकाशन किया जा सकेगा, किन्तु आशा के ठीक विपरीत इसके प्रकाशन में विलम्ब हो गया है।

बात यह हुई कि श्रद्धेय उपाध्याय श्री अमरमुनि जी महाराज को बीच में एक चातुर्मास के लिए अलवर जाना पड़ा और इस चातुर्मास के लिए आगरा में ठहरे भी, तथा सम्पादन के शेष कार्य की पूर्णाहुति के लिए सोत्साह उपक्रम भी किया; किन्तु दीर्घ काल तक अस्वस्थ रहने के कारण सम्पादन-कार्य में यथेष्ट प्रगति न हो सकी। उधर दूसरे सम्पादक मुनि श्री कन्हैयालाल जी 'कमल' अपने श्रद्धेय गुरुदेव स्थविर श्री फतेहचन्द जी महाराज की अस्वस्थता के कारण सुदूर राजस्थान की ओर विहार कर गये। अस्तु, हम प्रतिज्ञात समयावधि के अन्दर पाठकों की उत्सुकता का यथोचित स्वागत करने में असमर्थ रहे।

आप जानते हैं, ज्ञानपीठ के साधन बहुत सीमित हैं। हमें यह स्वीकार करने में जरा भी आपत्ति नहीं कि ज्ञानपीठ इतने बड़े महान् ग्रन्थ को प्रकाशित करने की क्षमता नहीं रखता है; फिर भी कुछ साहित्य-प्रेमी सज्जनों का, जो अपने नामोल्लेख की भी अपेक्षा नहीं रखते, कुछ ऐसा उत्साहवर्धक सहयोग रहा है कि हम इस भगीरथ कार्य को आशातीत सफलता के साथ सम्पादित कर सके।

निशीथ-चूर्णि के प्रस्तुत प्रकाशन ने देश एवं विदेश के विद्वज्जगत् में काफी समादर का स्थान प्राप्त किया है, और इसके लिए हमें अनेक स्थानों से मुक्त हृदय से साधुवाद मिला है तथा हमें अन्य अनेक प्राचीन ग्रन्थों के प्रकाशन के लिए भी प्रोत्साहित किया गया है। संभव है, हम प्रस्तुत ग्रन्थ के जैसे ही अन्य विराट् ग्रन्थों का यथावसर प्रकाशन कर सकें एवं भारतीय साहित्य की श्री-वृद्धि में अपना अभीष्ट योग दे सकें।

सोनाराम जैन
मन्त्री, सन्मति ज्ञानपीठ
आगरा

सम्पादकीय

यह निशीथचूर्णि का चतुर्थ खण्ड है, और अब निशीथचूर्णि अपने में पूर्ण है। इतने बड़े भीमकाय ग्रन्थ का सम्पादन एवं प्रकाशन इतनी शीघ्रता के साथ पूर्ण होना, वस्तुतः एक आश्चर्य है। जिस गति से प्रारम्भ में सम्पादन एवं मुद्रण चल रहे थे, यदि वही गति अन्त तक बनी रहती, तो संभव था, इतना विलम्ब भी न होता। परन्तु कुछ ऐसी विघ्न-परम्परा उपस्थित होती रही कि हम चाहते हुए भी तदनुसार कुछ न कर सके।

निशीथचूर्णि अद्यावधि कहीं भी मुद्रित नहीं हुई है। यह पहला ही मुद्रण है। अतः सम्पादन से सम्बन्धित सभी प्रकार की सतर्कता रखते हुए भी, हम, और तो क्या, अपनी कल्पना के अनुसार भी सफल नहीं हो सके। कारण यह था कि लिखित पुस्तक-प्रतियाँ अधिकतर अशुद्ध मिलीं, और ताडपत्र की प्रति तो उपलब्ध ही न हो सकी। सबसे बड़ी बात यह भी थी कि इस प्रकार का सम्पादन-कार्य हमारे लिए पहला ही था, जिसके लिए *'सर्वारम्भा हि दोषेण धूमेनाग्निरिवावृताः'* कहा गया है। अस्तु, सम्पादन में त्रुटियाँ रही हैं, जो हमारे भी ध्यान में हैं, परन्तु, एतदर्थ क्षमायाचना के अतिरिक्त, अब हम अन्य कुछ कर भी तो नहीं सकते।

प्रस्तुत सम्पादन का विद्वज्जगत् में बड़ा आदर हुआ है। विश्वविद्यालय तथा तत्सम अन्य सर्वोच्च शिक्षा-संस्थाओं ने अपने पुस्तकालयों के लिए इस ग्रन्थ की प्रतियाँ मँगाई हैं, अध्ययन के बाद मुक्त भाव से प्रशंसा-पत्र प्रेषित किये हैं। भुवनेश्वर (उड़ीसा) में, अक्टूबर में आयोजित 'अखिल भारतीय प्राच्य विद्या-परिषद्' (आल इंडिया ओरियंटल क बीसवें अधिवेशन के प्राकृत एवं जैन धर्म विभाग के अध्यक्ष डा० सांडेसरा ने भी अभिभाषण में प्रस्तुत सम्पादन को 'नोंध-पात्र' गिना है। विद्वान् मुनिवरों खोलकर इसे सराहा है। हमें प्रसन्नता है कि हमारा यह नगण्य कार्य, साहि नीय विशिष्ट स्थान प्राप्त कर सका।

एक बात और भी है। कुछ लोग उक्त प्रकाशन से नार उत्तर हम क्या दें! हमारा काम एक प्राचीन ग्रन्थ को, जो अब लोगों की सीमा में ही प्रायः कारा-यापन कर रहा था, मात्र, हमने ला दिया। हमारी दृष्टि सु-विशुद्ध रूप से ज्ञानोपासना परम्परा के हैं? उन्होंने क्या लिखा है? यह बात के

और उस युग में भी वह कहाँ तक औचित्य की सीमा में था? हमारे अपने साम्प्रदायिक पक्षवद्ध मनोवृत्ति के व्यक्ति क्या कहेंगे और क्या नहीं? उनसे प्रशंसा प्राप्त होगी अथवा निन्दा? यह सब सोचना साहित्यकार का काम नहीं है। साहित्यकार का काम है, शुद्ध भाव से ज्ञान-साधना करना। और वह हमने *'यावद्बुद्धिवलोदयं'* की है। वस, अपना कार्य पूरा हुआ।

निशीथ-चूर्णि को हम जैन-साहित्य का, जैन-साहित्य का ही नहीं, भारतीय साहित्य का एक महान् ग्रन्थ मानते हैं। जैन-आचार का यह शेखर ग्रन्थ है। आचार-शास्त्र की गुत्थियों का रहस्योद्घाटन, जैसा इस ग्रन्थ में हुआ है, वैसा अन्यत्र दुर्लभ है। भारतीय इतिहास तथा लोक-संस्कृति की प्रकट एवं अप्रकट विपुल सामग्री का तो एक प्रकार से यह विश्व-कोष ही है। इसके अध्ययन के विना, निशीथ-सूत्र एवं अन्य छेद-सूत्र कथमपि बुद्धिगम्य नहीं हो सकते; यह हमारा अधिकार की भाषा में किया जाने वाला सुनिश्चित दावा है, जो किसी के भी मिथ्या प्रचार से झुठलाया नहीं जा सकता। निशीथ-चूर्णि क्या है, और उसमें ऐसा क्या कुछ है, जो वह पौर्वात्य एवं पाश्चात्य, तथैव जैन एवं जैनेतर सभी विद्वानों के आकर्षण का केन्द्र वनी हुई है? इसके लिए पं० दलसुखभाई मालवणिया (प्राध्यापक—जैन-दर्शन, हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी) की विस्तृत प्रस्तावना *'निशीथ: एक अध्ययन'* का अवलोकन किया जा सकता है। पण्डित जी ने गम्भीर अथच तलस्पर्शी अध्ययन के साथ जो तत्कालीन ऐतिहासिक स्थिति का विश्लेषण किया है, वह विद्वज्जगत् को चकित कर देने वाला है। हम यहाँ इस सम्वन्ध में स्वयं और कुछ लिखकर पुनरुक्ति नहीं करना चाहते।

यह ठीक है कि चूर्णि एक मध्यकालीन प्राचीन कृति है, एक विशेष संप्रदाय एवं परम्परा से सम्वन्धित है, वह उग्र साध्वाचार की अपक्रान्ति के एक विलक्षण मोड़ पर शब्दवद्ध हुई है, उस पर देश एवं काल की वदली हुई परिस्थितियों का भी अनेकविध प्रभाव पड़ा है। अस्तु, चूर्णि की कुछ वातें ऐसी हैं, जो अटपटी सी हैं, जैन धर्म की मूल परम्परा
काफी दूर जा पड़ी हैं। परन्तु इस सवसे क्या! पाठक को अपनी बुद्धि का उपयोग करना
हंस के नीर-क्षीर-विवेक से काम लेना है। किसी भी छद्मस्थ आचार्य की सभी वातें पूर्ण
सं· ग्राह्य हों, एवं सर्वप्रकारेण सभी को मान्य हों; यह तो न कभी हुआ है, और न कभी
"पन्नासमिक्खए धम्मं" का उत्तराध्ययनसूत्रीय सन्देश आख़िर किस काम आयेगा! इस
प निशीथचूर्णि के प्रथम भाग की प्रस्तावना (सन् १९५७) में पहले से ही पाठकों
का स्थान प्र· के लिए, वह भी काफी स्पष्टता के साथ, लिख चुके हैं। अस्तु हम समझते हैं,
तथा हमें अन्य· चूर्णि की तद्युगीन कुछ अटपटी वातों को ही अग्रस्थान देकर अनर्गल
है, हम प्रस्तुत ग्र· वे अपने कलुषित अहं का ही कुप्रदर्शन कर रहे हैं। यदि कोई गुलाव
साहित्य की श्री-वृद्धि· पुष्प में केवल काँटे ही देखता है; यदि कोई निर्मल चन्द्र में मात्र कलंक
यह उसके *'दोषदृष्टिपरं मन:'* का ही दोष कहा जायगा, और क्या?

· भाव से निशीथ-चूर्णि का अध्ययन करना चाहिए। आचार्य
गत् की सूक्ष्मताओं का, उतार-चढ़ावों का वड़ी कुशलता के
ठोर, कठोरतर एवं कठोरतम चर्या को अग्रस्थान देते हुए
साधक को, कथंचित् अपवाद-प्ररूपणा के द्वारा, सर्वथा

अपभ्रष्ट होने से संरक्षण भी दिया है। आखिर *'जीवन्नरो भद्रशतानि पश्येत्'* के यथार्थवादी सिद्धान्त को कोई कैसे सहसा अपदस्थ कर सकता है? साधना और जीवन का प्रामाणिक विश्लेपण करने की दिशा में, चूर्णि, एक महत्त्वपूर्ण उपादेय सामग्री प्रस्तुत करती है। कुछेक प्रतिकूल बातों को छोड़कर, शेष समस्त ग्रन्थ सूत्रार्थ की गंभीर एवं उच्चतर विपुल सामग्री से अटा पड़ा है। आखिर, २० × ३० अठपेजी १६७३ पृष्ठों के महाग्रन्थ की अमूल्य चिन्तन सामग्री से, कुछेक प्रतिकूल बातों की कल्पित भीति से वंचित रहना, विचारमूढ़ता नहीं तो और क्या है? *'अल्पस्य हेतोर्बहु हातुमिच्छन्, विचार-मूढः प्रतिभासि मे त्वम्।'* अस्तु, आशा है आज का चिन्तनशील तटस्थ साधक, अपनी तत्त्वसंग्राहिणी प्रतिभा के उज्ज्वल प्रकाश में, सारासार का ठीक मूल्यांकन करके, स्वपर की संयम-साधना को निरन्तर उज्ज्वल से उज्ज्वलतर बनायेगा।

मुनि श्री अखिलेशचन्द्र जी का, प्रस्तुत सम्पादन-कार्य में, प्रारंभ से ही उत्साहवर्द्धक सहयोग रहा है। उनकी व्यवस्था-बुद्धि के द्वारा, समय-समय पर काफी सुविधाएँ उपलब्ध हुई हैं। अस्तु, उनकी मधुर स्मृति का समुल्लेख, यहां हमारे लिए आनन्द की वस्तु है।

महावीर-दीक्षा-कल्याणक,
मार्गशिर कृ० दशमी, वीराब्द २४८६

—उपाध्याय अमरमुनि
—मुनि कन्हैयालाल

साधना का अनेकान्त

जे आसवा ते परिस्सवा, जे परिस्सवा ते आसवा।

—जो आस्रव के हेतु हैं वे कभी संवर के हेतु हो जाते हैं, और जो संवर के हेतु हैं वे कभी आस्रव के हेतु भी बन जाते हैं।

—आचारांग सूत्र १।४।२

जे जत्तिआ य हेऊ, भवस्स ते चेव तत्तिआ मुक्खे।
गणणाईया लोगा, दुण्हवि पुन्ना भवे तुल्ला ॥२४२॥

—अज्ञानी एवं रागद्वेषी जीवों के लिए जो संसार के हेतु हैं, वे ही समभावी एवं विवेकी आत्माओं के लिए मोक्ष के हेतु हो जाते हैं। ये भव तथा मोक्ष सम्बन्धी हेतु, संख्या की दृष्टि से, परस्पर तुल्य असंख्यात लोकाकाश परिमाण हैं।

—आचार्य हेमचन्द्र, पुष्पमाला प्रकरण

कल्प्याकल्प्यविधिज्ञः संविग्नसहायको विनीतात्मा।
दोषमलिनेऽपि लोके प्रविहरति मुनिर्निरुपलेपः ॥१३८॥

—जो कल्पनीय और अकल्पनीय की विधि को जानता है, संसार से भयभीत संयमी जन जिसके सहायक है, और जिसने अपनी आत्मा को ज्ञान, दर्शन, चारित्र और उपचार-विनय से युक्त कर लिया है, वह साधु राग द्वेष से दूषित लोक में भी राग-द्वेष से अछूता रहकर विहार करता है।

किञ्चिच्छुद्धं कल्प्यमकल्प्यं स्यात्स्यादकल्प्यमपि कल्प्यम्।
पिण्डः शय्या वस्त्रं पात्रं वा भेषजाद्यं वा ॥१४५॥

—भोजन, शय्या, वस्त्र, पात्र अथवा औषध आदि कोई वस्तु कभी शुद्ध, अतएव कल्पनीय होने पर भी अकल्पनीय हो जाती है और कभी अकल्पनीय होने पर कल्पनीय हो जाती है।

देशं कालं पुरुषमवस्थामुपघातशुद्ध परिणामान्।
प्रसमीक्ष्य भवति कल्प्यं नैकान्तात्कल्प्यते कल्प्यम् ॥१४६॥

—देश, काल, क्षेत्र, पुरुष, अवस्था, उपघात और शुद्ध परिणामों की अपेक्षा से अकल्पनीय वस्तु ...पनीय हो जाती है। और कोई कल्पनीय वस्तु भी सर्वथा कल्पनीय नहीं होती।

—आचार्य उमास्वाति, प्रशमरति प्रकरण

...जन, वस्त्र, तथा मकान आदि जो कुछ पदार्थ साधु को दान देने के उद्देश्य से ...वे आधाकर्म कहलाते हैं। ऐसे आधाकर्म आहार आदि का उपभोग करने वाला ...न होता ही है, ऐसा एकान्त वचन न कहना चाहिए; क्योंकि—आधाकर्मी ...विधि के अनुसार अपवाद-मार्ग में कर्मबन्ध के कारण नहीं होते हैं। किन्तु ...न करके आहार की गृद्धि से जो आधाकर्मी आहार लिया जाता है ...ना है।

—आचार्य जवाहरलाल जी म० के तत्त्वावधान में सम्पादित
सूत्रकृताङ्ग, द्वितीय श्रुतस्कंध, पृ० २९९

निशीथ भाष्य मूल : भाण्डारकर इन्स्टीट्यूट पूना से प्राप्त

६५६

निशीथ चूर्णि : भाण्डारकर इन्स्टीट्यूट पूना से प्राप्त

निशीथ : एक अध्ययन

लेखक :
पं० दलसुख मालवणिया
प्राध्यापक – जैन दर्शन
हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी

आगम-प्रतिष्ठान
सन्मति ज्ञान पीठ, आगरा

षोडश उद्देशक:

उक्त पचदशमोद्देशक । इदानी षोडश प्रारभ्यते, तत्रायं सम्बन्ध –

देहविभूसा बंभस्स अगुत्ती उज्जलोवहित्तं च ।
सागारिते य (वि) वसतो, बंभस्स विराहणाजोगो ॥५०६५॥

पचदसमुद्देसगे देहविभूसाकरण उज्जलोवधिधारण च णिसिद्ध, मा वभवयस्स अगुत्ती, पसगतो मा बभव्वयस्स विराहणा भविस्सति । इहावि सोलसमुद्देसगे मा अगुत्ती बभविराहणा वा, अतो सागारिय-वसहिणिसेहो कज्जति । एस सम्बन्धो ॥५०६५॥

एतेण सम्बन्धेणागयस्स सोलसमुद्देसगस्स इम पढम सुत्त –

जे भिक्खू सागारियसेज्जं अणुपविसइ, अणुपविसंतं वा सातिज्जति ॥१॥

सह आगारीहि सागारिया, जो त गेण्हति वसहि तस्स आणादी दोसा, चउलहु च से पच्छित्त ॥

सन्नासुत्तं सागारियं ति जहि मेहुणुब्भवो होइ ।
जत्थित्थी पुरिसा वा, वसंति सुत्तं तु सट्ठाणे ॥५०६६॥

ज सुत्ते "सागारिय' ति एसा सामयिकीसज्ञा । जत्थ वसहीए ठियाण मेहुणुब्भवो भवति सा सागारिगा, तत्थ चउगुरुगा ।

अधवा – जत्थ इत्थिपुरिसा वमति सा सागारिका, इत्थिसागारिगे चउगुरुगा सुत्तणिवातो । "सट्ठाणि" त्ति जा पुरिससागारिगा, णिग्गथीण पुरिससागारिगे चउगुरुगा । सेस तहेव ॥५०६६॥ एस सुत्तत्थो ।

इमो णिज्जुत्तिवित्थरो –

सागारिया उ सेज्जा, ओहे य विभागओ उ दुविहाओ ।
ठाण-पडिसेवणाए, दुविहा पुण ओहओ होति ॥५०६७॥

सागारिया सेज्जा दुविहा – ओहेण विभागओ य । ओहेण पुण दुविधा – ठाणातो पडिसेवणातो अ । एतेसु पच्छित्त भणिहिति ॥५०६७॥

सागारियणिक्खेवो, चउव्विहो होइ आणुपुव्वीए ।
णामं ठवणा दविए, भावे य चउव्विहो भेदो ॥५०६८॥

उच्यते –

को जाणति [1]केरिसओ, कस्स व माहप्पता समत्थत्ते ।
धिइदुब्बला उ केई, डेवेंति पुणो अगारिजणं ॥५१०३॥

छउमत्थो को जाणइ णाणादेसियाण कस्स केरिसो भावो, इत्थिपरिस्सहे उदिण्णे कस्स वा माहप्पता, महतो अप्पा माहप्पता । अहवा – माहप्पता प्रभावो । त च माहप्प पभाव वा समत्थता चितिज्जति । सामत्थ धिती, सारीरा सत्ती । इदियणिग्गह प्रति ब्रह्मव्रतपरिपालने वा कस्स किं माहात्म्यमिति । एयम्मि वि अपरिण्णाए सागारियवसधीए ठियाण तत्थ जे धितिदुब्बला ते रूवादीहिं अक्खित्ता विगयसजमधुरा अगारिट्ठाण "डेवेति" – परिभुजतीत्यर्थ ॥५१०३॥

ते य सजया पुव्वावत्था इमेरिसा होज्जा –

केइत्थ भुत्तभोई, अभुत्तभोई य केइ निक्खंता ।
रमणिज्ज लोइयं ति य, अम्हं पेयारिसं आसी ॥५१०४॥

भुत्ताऽभुत्ता दो वि भणति – रमणिज्जो लोइओ धम्मो । जे भुत्तभोगी ते भणति – अम्ह पि गिहासमे ठियाण एरिस खाणपाणादिक आसि ॥५१०४॥

कि च –

एरिसओ उवभोगो, अम्ह वि आसि (त्ति) ण्ह एण्हि उज्जल्ला ।
दुक्कर करेमो भुत्ते, कोउगमितरस्स ते दट्ठुं ॥५१०५॥

"उवभोगो" त्ति ण्हाणवत्थाभरणगधमल्लाणुलेवणधूवणवासतवोलादियाण पुव्व आसी । इण्हि इदार्णि, उज्जल्ला प्राबल्येन, मलिणसरीरा लद्धसुहासादा अम्हे सुदुक्कर सहामो, एव भुत्तभोगी चिंतयति । "इतर"त्ति अभुत्तभोगी, त त रूवादि दट्ठु कोउअ करेज्जा ॥५१०५॥

सति कोउएण दोण्ह वि, परिहेज्ज लएज्ज वा वि आभरणं ।
अण्णेसिं उवभोगं, करेज्ज वाएज्ज उड्डाहो ॥५१०६॥

"सति" त्ति पुव्वरयादियाण सरण भुत्तभोगिणो, इयरस्स कोउअ । एते दोण्णि वि असुभभावुप्पण्णा वत्थे वा परिहेज्ज, आभरण वा "लएज्ज" त्ति अप्पणो आभरेज्ज, अण्णेसिं वा वत्थादियाण उवभोग करेज, वाएज वा आतोज्ज । असजतो वा सजत आयरियादि दट्ठु उड्डाह करेज ॥५१०६॥

किं च –

तच्चित्ता तल्लेसा, भिक्खा-सज्झायमुक्कतत्तीया ।
विकहा-विसुत्तियमणा, गमणुस्सुग उस्सुगब्भूया ॥५१०७॥

त इत्थीमादी रूव दट्ठु तदगावयवसरूवचितण चित्त, तदगपरिभोगऽज्झवसाओ लेसा (भिक्खा) सज्झायादिसजमजोगकरणमुक्कतत्ती णिव्वावारादित्यर्थ । वायिगजोगेण सजमाराहणी कहा, तव्विवक्खभूता विकहा । कुसलमणधारणोदीरणेण सजमसासविद्धि(?)करेत्ता सो त्रस्तमना ततो विगहाविसोत्तियमणा भवति । एवं

१ को किरिसो, इति बृहत्कल्पे गा० २४५५ ।

इदाणिं भावसागारियं –

[1]अट्ठारसविहमबंभं, भावउ ओरालियं च दिव्वं च ।
मणवयणकायगच्छण, भावम्मि य रूवसंजुत्तं ॥५११३॥

एय दव्वसागारिय भणतेण भावसागारियपि एत्थेव भणिय, तहावि वित्थरतो पुणो भण्णति – त भावसागारिय अट्ठारसविहं अबभ। तस्स मूलभेदा दो – ओरालिय च दिव्व च। तत्थ ओरालिय नवविह इम – ओरालियं कामभोगा मणसा गच्छति, गच्छावेति, गच्छत अणुजाणति। एव वायाए वि। काएण वि। एते तिण्णि तिया णव। एव दिव्वेण वि णव। एते दो णवगा अट्ठारस। एय अट्ठारसविह अबभ भावसागारिय ॥५११३॥

"[2]भावम्मि य रूवसजुत्त" त्ति अस्य व्याख्या –

अहव अबंभं जत्तो, भावो रूवा सहगयातो वा ।
भूसण-जीवजुतं वा, सहगय तव्वज्जियं रूवं ॥५११४॥

अबभभावो जतो उप्पज्जइ त च रूव रूवसजुत्त वा, कारणे कज्जोवयाराओ, त चेव भावतो अबभ।

अहवा— उदिण्णभावो ज पडिसेवति त च रूव वा होज्ज, रूवसहगत वा। तत्थ ज इत्थीसरीर सचेयण भूसणसजुत्त त रूवसहगत।

अहवा – अणाभरण पि जीवजुत्त त रूवसहगत भण्णति, "तव्वज्जिय रूव" ति सचेयण इत्थीसरीर भूसणवज्जिय रूवं भण्णति, अचेयण वा रूव भण्णति ॥५११४॥

तं पुण रूवं तिविहं, दिव्वं माणुस्सगं च तेरिच्छं ।
तत्थ उ दिव्वं तिविहं, जहण्णयं मज्झिमुक्कोसं ॥५११५॥ कठा

दिव्वे इमे मूलभेदा –

पडिमेतरं तु दुविहं, सपरिग्गह एक्कमेक्कगं तिविहं ।
पायावच्च-कुडुंबिय-डंडियपरिग्गहं चेव ॥५११६॥

पडिमाजुय त दुविह – सण्णिहित असण्णिहित वा। "इतर" ति – देहजुय त पि सचेयण अचेयण। पुणो एक्केक्क सपरिग्गह अपरिग्गह वा। ज सपरिग्गह त तिविधेहिं परिग्गहित। पच्छद्ध कठ ॥५११६॥

दिव्व जहण्णादिगं तिविध इम –

वाणंतरिय जहण्णं, भवणवती जोइसं च मज्झिमगं ।
वेमाणियमुक्कोसं, पगयं पुण ताण पडिमासु ॥५११७॥

वाणमतर जहण्ण, भवणवासि जोइसियं च मज्झिमय, वेमाणिय उक्कोसय। इह पडिमाजुत्तेण [illegible]रो जेण वसहिविसोही अधिकया ॥५११७॥

---

[1] अट्ठारसविहऽबभ इति बृहत्कल्पे गा० १४६५। [2] गा० ५११३।

डडियपरिग्गहिते एते चेव तिण्णि पच्छित्ता काललहुआ तवगुरुआ। जम्हा जहण्णादिविभागेण कत सण्णिहितासण्णिहितेण ण विसेसियव्व, तम्हा विभागे ओहो गओ ॥५१२१॥

इदाणि विभागपच्छित्त – तत्थ एयाणि चेव जहण्णमज्झिमुक्कोसाणि असण्णिहियसण्णिहियभिण्णा छट्ठाणा भवति।

ताहे भण्णति –

चत्तारि य उग्घाया, पढमे वितियम्मि ते अणुग्घाया।
ततियम्मि य एमेवा, चउत्थे छम्मास उग्घाता ॥५१२२॥

जहण्णेण असण्णिहिय पढम ठाण, सण्णिहिय वितिय ठाण।
मज्झिमे असण्णिहिय तइयट्ठाणं, सण्णिहिय चउत्थ।
उक्कोसेण असण्णिहिय पचम, सण्णिहिय छट्ठ।
जहण्णए असण्णिहिए पायावच्चपरिग्गहिते ठाति चउलहुय, सण्णिहिए चउगुरु। मज्झिमए असण्णिहिए "एमेव" त्ति – चउगुरुगा, सण्णिहिए छल्लहुगा॥५१२२॥

पंचमगम्मि वि एवं, छट्ठे छम्मास होंतऽणुग्घाया।
असन्निहिते सन्निहिते, एस विही ठायमाणस्स ॥५१२३॥

उक्कोसए असण्णिहिए पायावच्चपरिग्गहिते ठाति एमेव त्ति छल्लहुगा, सण्णिहिए छग्गुरु। एसो ठाणपच्छितस्स विधी भणितो ॥५१२३॥

पायावच्चपरिग्गह, दोहि वि लहु होंति एते पच्छित्ता।
कालगुरुं कोडुंबे, डंडियपारिग्गहे तवसा ॥५१२४॥

पायावच्चे उभयलहु, कोटुविए कालगुरू, डडिए तवगुरू। सेस पूर्ववत् ॥५१२४॥

ठाणपच्छित्त चेव बितियादेसतो भण्णति –

अहवा भिक्खुस्सेयं, जहण्णगाइम्मि ठाणपच्छित्तं।
गणिणो उवरिं छेदो, मूलायरिए हसति हेट्ठा ॥५१२५॥

ज एय जहण्णगादी असन्निहियसन्निहियभेदेण चउलहुगादि – छग्गुरुगावसाण एय भिक्खुस्स भणिय। "गणि" त्ति-उवज्झाओ, तस्स चउगुरुगादी छेदे ठायति। आयरियस्स छल्लहुगादी मूले ठायति। इह चारणाविकप्पे जहा उवरिपद वड्ढति तहा हेट्ठापद हस्सति। ॥५१२५॥

पढमिल्लुगम्मि ठाणे, दोहि वि लहुगा तवेण कालेणं।
वितियम्मि य कालगुरू, तवगुरुगा होंति तइयम्मि ॥५१२६॥

इह पढमिल्लुग पागतित ठाण, वितिय कोटुव, ततित दडिय। सेस पूर्ववत् ॥५१२६॥ एयं ठायतस्स पच्छित्त भणिय।

इदाणिं पडिसेवतस्स पच्छित्त भण्णति –

चत्तारि छच्च लहु गुरु, छम्मासिय छेद लहुग गुरुगो तु।
मूलं जहण्णगम्मी, सेवंते पसज्जणं मोत्तुं ॥५१२७॥

"पडिसेवणाए" त्ति – पडिसेवतस्स अतियाराणुरूवा मूलाणवट्ठपारंचिया एव संभवति ।

जति पुण ठितो ण चेव पडिसेवति तो कह एते भवतु ? ॥५१३२॥

जति पुण सव्वो वि ठितो, सेवेज्जा होज्ज चरिमपच्छित्तं ।
तम्हा पसंगरहितं, जं सेवति तं ण सेसाइं ॥५१३३॥

जति णियमो होज्ज सव्वो ठायतो पडिसेवेज्जा तो जुज्जइ त तुम भणसि, जेण पुण ण सव्वो ठायतो पडिसेवति तेण कारणेण पसगरहिय ज ठाण सेवति तत्थेव पायच्छित्त भवति ॥५१३३॥

"[1]पसज्जणा तत्थ होति एक्केक्क" त्ति एक्केक्कातो पायच्छित्तठाणातो पसज्जणा भवति ।

कह ?, उच्यते – त साधु तत्थ ठिय दट्ठु अविरयश्रो को वि तस्सेव सक करेज्जा – "णूणं पडिसेवणाणिमित्तेण एस एत्थ ठिओ," ताहे दिट्ठे सका भोतिगादी भेदा भवति ।

अह पसग इच्छसि तो इमो पसगो "[2]चरिमपदे चरिमपदं" ति अस्य व्याख्या –

अद्दिट्ठातो दिट्ठं, चरिमं तहि संकमादि जा चरिमं ।
अहव ण चरिमाऽऽरोवण, ततो वि पुण पावती चरिमं ॥५१३४॥

चारणियाए कज्जमाणीए अदिट्ठदिट्ठेहिं अदिट्ठपदातो ज दिट्ठपद त चरिमपद भण्णति, ततो चरिमपदातो सका भोतिगादिपदेहिं विभासाए जाव चरिम पारचिय च पावति ।

स्यात् मति .– "अथ दृष्ट कथ सका ?, ननु नि शकितमेव । उच्यते – दूरेण गच्छतो दिट्ठे वि अविभाविते सका, अहवा – आसण्णतो वि ईसि अद्धऽच्छि णिरिक्खणेण सका भवति ।

अहवा – "चरिमपदे चरिमपद" भण्णति । असण्णिहितपदातो सण्णिहितपद चरिमपद ति । तत्थ सण्णिहिया पडिमा खित्तमादी करेज्जा, परितावणमादिपदेहिं चरिम पावेज्जा । अहव ण चरिमारोवण त्ति तृतीय प्रकार – जहण्णे चरिम मूल, मज्झिमे चरिम अणवट्ठो, उक्कोसे चरिम पारचिय । ततो एक्केक्कातो चरिमपदातो सकादिपदेहिं चरिम पारंचिय पावइ ॥५१३४॥

"[3]तं पि य आणादिनिप्फण्ण" ति अस्य व्याख्या –

अहवा आणादिविराहणाओ एक्केक्कियाओ चरिमपदं ।
पावति तेण उ णियमा, पच्छित्तधरा अतिपसंगो ॥५१३५॥

अहवा – आणाणवत्थमिच्छत्तविराहणाण चउण्ह पयाण विराहणापद चरिम, सा विराहणा दुविहा – आय-सजमेसु । तत्थ एक्केक्कातो त चरिमपद णिप्फज्जइ ।

कह ?, उच्यते – तस्सामिणा दिट्ठे पताविए आयाए परितावणादि चरिम पावति, सजमे भग्गे पुण सठवणे – छक्काय चउसु गाहा । एव चरिम पावति । जम्हा पसगओ बहुविह भवति तम्हा पसगरहिय ज चेव आसेवित त चेव दायव्व । ठायमाणस्स ठाणपच्छित्त चेव, पडिसेवमाणस्स पडिसेवणापच्छित्त – न प्रसगमित्यर्थ ॥५१३५॥

---

१ गा० ५१३२ । २ गा० ५१३२ । ३ गा० ५१२८ ।

संकेत

उ० = उद्देश

सू० = सूत्र

पृ० = पृष्ठ

भा० = भाष्य

नि० गा० = निशीथ भाष्य गाथा

नि० चू० = निशीथ-चूर्णि

व्यव० = व्यवहार सूत्र

आचा० नि० गा० = आचारांग निर्युक्ति गाथा

आचा० चू० = आचारांग चूर्णि

आचा० नि० टी० = आचारांग निर्युक्ति टीका

दशवै० = दशवैकालिक सूत्र

हि० के० = हिस्ट्री ओफ दी केनोनिकल लिटरेचर ओफ दी जैनाज
लेखक : प्रो० हीरालाल कापडिया

वृत्ति शीघ्र कार्ये" ति। तेहि य गामेयगेहिं दुल्लिहिय ति काउ वसे छेत्तु अवाण वती कता। गवेसाविया चाणक्केण – "कि कत ?" ति। आगतो, उवालद्धा, एते वसा रोधगादिसु उवउज्जंति, कीस भे छिण्णा ?, दसिय लेहचीरिय – "अण्ण सदिट्ठं अण्ण चेव करेहि" त्ति डडपत्ता। ततो तस्स गामस्स सबालवुड्ढेहिं पुरिसेहिं अधोसिरेहिं वति काउ सो गामो सव्वो दड्ढो। अण्णे भणति – सवालवुड्ढा पुरिसा तीए वतीए छोढु दड्ढा ॥५१३९॥

एगमरणं तु लोए, आणति वा उत्तरे अणंताइं।
अवराहरक्खणट्ठा, तेणाणा उत्तरे बलिया ॥५१४०॥

लोइयआणाइक्कमे (एगमरण)। लोगुत्तरे पुण आणाइक्कमे अणेगाति जम्ममरणाइ पावति। अण्ण च अतिचाररक्खणट्ठा चेव आणा बलिया, आणाअणतिक्कमे य अइयाराइक्कमो रक्खितो चेव भवति ॥५१४०॥

"अणवत्थ" त्ति अस्य व्याख्या –

अणवत्थाए पसंगो, मिच्छत्ते संकमादिया दोसा।
दुविहा विराहणा पुण, तहियं पुण संजमे इणमो ॥५१४१॥ कठा

अणट्ठाडंडो विकहा, वक्खेव विसोत्तियाए सतिकरणं।
आलिंगणादिदोसा, असण्णिहिए ठायमाणस्स ॥५१४२॥

अकारणे डडो अणट्ठाडडो, सो – दव्वे भावे य। दव्वे अकारणे अवरद्ध रायकुल डडेति। भावडडो णाणादीण हाणी ॥५१४२॥

"[1]विकहाए" वक्खाण –

सुटठु कया अह पडिमा, विणासिया ण वि य जाणसि तुमं ति।
इति विकहादधिकरणं, आलिंगणे भंग भद्दितरा ॥५१४३॥ कठा

आलिंगणे कज्जमाणे कयादि हत्थादियाण भगो हवेज्जा, तत्थ सपरिग्गहे भद्दपताइ दोसा हवेज्जा, वक्खेवो त पेक्खतस्स, उल्लाव च करेतस्स सुत्तत्थपलिमथो।

विसोत्तिया दव्वे भावे य। दव्वे सारणिपाणीय वहत तणमादिणा रुद्ध, अण्णतो कासारादिसु गच्छति, ततो सस्सहाणी भवति। भावे णाणादीण, आगमस्स विसोत्तियाए चरित्तस्स विणासो भवति।

सतिकरण ति भुत्तभोगीण, अभुत्तभोगीण कोउअ।

अध कोइ मोहोदएण आलिगेज्ज, आलिंगिता भज्जेज्जा, असण्णिहिए सपरिग्गहे भद्दपतदोसा, पच्छाकम्मदोसा य, पतो तत्थ गेण्हणादी करेज्ज। एते असण्णिहिते ठायमाणस्स दोसा ॥५१४३॥

इमे य सण्णिहिए –

वीमंसा पडिणीयट्ठया व भोगत्थिणी व सन्निहिया।
काणच्छी उक्कंपण, आलाव णिमंतण पलोभे ॥५१४४॥

सण्णिहिया तिहिं कारणेहिं साधु पलोहेज्जा – वीमसट्ठया पडिणीयट्ठयाए भोगत्थिणी वा।

---

[1] गा० ५१४२।

परविसयमोइणणो एगस्स रण्णो अभिणिवेसेण अकारिणो वि गामणगरादि सव्वे विणासेइ, एव एगेण कयमकज्ज सव्वो बालवुड्ढादी जो जत्थ दीसइ सो तत्थ मारिज्जति । एस कडगमद्दो ।

अथवा – इमो कडगमद्दो, सह तेण कारिणा, मोत्तु वा त कारि (ण), जो आयरिओ गच्छो वा कुल गणो वा त वावादेति, तत्थ वा ठाणे जो सघो त वावादेति ॥५१४९॥

अथवा इम कुज्जा—

गेण्हणे गुरुगा छम्मास कड्ढणे छेदो होति ववहारे ।
पच्छाकडम्मि मूलं, उड्डहण-विरुंगणे णवमं ॥५१५०॥

पडिसेवते गहिते ङ्क । हत्थे वत्थे वा घेत्तु कड्ढिते णीते रायकुल फ्रुं । तेण परिकड्ढिते फ्रा । ववहारे छेदो । पच्छाकडो त्ति जितो मूल । उड्डाहे कते विरुगिते वा अणवट्ठो भवति ॥५१५०॥

उद्दावण णिव्विसए, एगमणेगे पदोस पारंची ।
अणवट्ठप्पो दोसु य, दोसु य पारंचिओ होति ॥५१५१॥

उद्दविते णिव्विसए वा कते एगमणेगेसु वा पदोसे कते सो पडिसेवगो पारचिय पावति । उड्डहण विरुगण एतेसु दोसु अणवट्ठो भवति, णिव्विसतोद्दवणेसु दोसु पदेसु पारचिय ॥५१५१॥

अथवा – पट्ठो इम कुज्जा—

एयस्स णत्थि दोसो, अपरिक्खितदिक्खगस्स अह दोसो ।
इति पंतो णिव्विसए, उद्दवण विरुंगणं व करे ॥५१५२॥

एयस्स त्ति पडिसेवगस्स ण दोसो, जो अपरिक्खित्त दिक्खेति तस्स एस दोसो, इति एव चिंतेउ पतो आयरिय णिव्विसय करेज्जा, उद्दवेज्ज वा, कण्ण णास-णयणुप्पायण वा करेज्ज, एयं विरूवकरण विरूवण ॥५१५२॥

अहवा सण्णिहिते इमे दोसा—

तत्थेव य पडिबंधो, अदिट्ठ गमणादि वा अणेंतीए ।
एते अण्णे य तहिं, दोसाओ होंति सण्णिहिए ॥५१५३॥

तत्थेव पडिमाए पडिबध करेज्जा, अदिट्ठे त्ति—लेप्पगमामिणा अदिट्ठे वि इमे दोसा भवति ।

अथवा—सा वाणमतरी विगयकोउगा णागच्छति, तीए अणेंतीए सो पडिगमणादी करेज्ज ॥५१५३॥

ताओ पुण सण्णिहियपडिमाओ इमम्मि होज्जा—

कट्ठे पोत्ते चित्ते, दंतकम्मे य सेलकम्मे य ।
दिट्ठिप्पत्ते रूवे, खित्तचित्तस्स भंसणया ॥५१५४॥

पुव्वद्ध कठ । दिट्ठिणा पत्त रूव दृष्टमित्यर्थ । तेण रूवेण खित्त चित्त जस्स सो खित्तचित्तो, तस्स खित्तचित्तस्स पमत्तत्तणओ चारित्ताओ जीवियाओ वा भसो भवति ॥५१५४॥

ततियभगे सुइयविज्जाओ भवति – ताओ य णिच्च सुइसमायारत्तणओ सव्वसुइदव्वपडि-सेवणतो महिड्डियत्तणओ य दुहविण्णप्पाओ, तेसिं उग्गत्तणतो णिच्च दुरणुचरत्तणओ य छेहे य सावायत्तणओ सुहमोया ।

चउत्थभगे गोरि-गधारीओ मातगविज्जाओ साहणकाले लोगगरहियत्तणतो दुहविण्ण-वणाओ, जहिट्ठकामसपायत्तणओ य दुहमोया ॥५१५८॥ एव चउत्थभगो वक्खाओ ।

इदाणिं तिविधपरिग्गहे गुरु लाघव भण्णति –

तिण्ह वि कतरो गुरुओ, पागतिय कुडुंबि डंडिए चेव ।
साहस असमिक्ख भए, इतरे पडिपक्ख पभुराया ॥५१५९॥

सीसो पुच्छति – "पायावच्च-कुडुबिय-डडियपरिग्गहाण कत्थ गुरुतरो दोसो, कत्थ वा अप्पतरो ?" एत्थ य भयणा भण्णति – पागतिय गुरुतर, कोडुबिय-डडिय लहुतर ।

कह ?, उच्यते – सो सुक्खत्तणेण साहसकारी असमिक्खियकारी य, अणीसरत्तणओ य भय ण भवति । एव सो पागतिओ मारण पि ववसेज्जा ।

"इयरे" त्ति कोडुबिय-डडिया, ते पागतितस्स पडिपक्खभूतो ।

कह ?, उच्यते – ते साहसकारी ण भवति, असमिक्खियकारी य ण भवति, पन्ना भवति, भय च तेसिं भवति । ५१५९॥

इम –

ईसरियत्ता रज्जा, व भंसए मंतुपहरणा रिसओ ।
तेण समिक्खियकारी, अण्णा वि य सिं बहू अत्थि ॥५१६०॥

मन्तु कोवो । एते रिसओ कोवपहरणा भवति, रुट्ठा य मा म रज्जाओ ईसरत्तणओ य भसेहिंति, अतो ते समिक्खियकारी भवति । अण्ण च तेसिं अण्णाओ वि बहू पडिमाओ अत्थि, अतो तेसु अणादरा ॥५१६०॥
(अत्रोच्यते) –

अहवा – "[1]पत्थरो" त्ति अस्य व्याख्या –

पत्थारदोसकारी, णिवावराधो य बहुजणे फुसइ ।
पागतिओ पुण तस्स व निवस्स व भया ण पडिकुज्जा ॥५१६१॥

डडियकोडुबिओ गुरुतरो, पागतितो लहुतरो । राया पहू, सो एगस्स अत्थस्स रुट्ठो सवे पत्थार करेज्जा, रायावकारो य बहुजणे फुसति, तेण सो गुरुतरो । पागतियावराहो पुण बहुजणे ण फुसइ, अण्ण च – पागतितो "तस्स" त्ति साहुस्स "भया" णिवस्स भया पच्चवकार ण करेति, एतेण कारणेण पागतितो लहुतरो ॥५१६१॥

किं च –

अवि य हु कम्मद्दण्णा, ण य गुत्ती तेसि णेव दारिद्दा ।
तेण कयं पि ण णज्जति, इतरत्थ धुवो भवे दोसो ॥५१६२॥

---

१ गा० ५१४९ ।

मिहुणकाले भगिणी गम्मा। सेसकाले भगिणी, धूया य सव्वकाल अप्पणो अगम्मा, अण्णस्स तातो देति त्ति अतो ताहिं सह ज मेहुण त मज्झिम।

खरिगादिसु सव्वजणसामण्णासु ण तिव्वाभिणिवेसो, अतो त जहण्ण। इह माणुस्सदेहजुएण अधिकारो, ण पडिमासु। त देह दुविध – सचेयणमचेयण वा ॥५१६७॥

सामण्णतो देहजुए ठायतस्स इम –

[1]पढमिल्लुगम्मि ठाणे, चउरो मासा हवंतऽणुग्घाता।
छम्मासा [2]उग्घाया, बितिए ततिए भवे छेदो ॥५१६८॥

पढमिल्लुग त्ति जहण्ण, पायावच्चपरिग्गहितो जहण्णे ठाति ङ्क।

बितिए त्ति मज्झिमे पायावच्चपरिग्गहे ठाति फ्रु।

ततिय त्ति उक्कोस पायावच्चपरिग्गहे उक्कोसे ठाति छेदो ॥५१६८॥

ण भणिय कोविव छेदो, अतस्तज्ज्ञापनार्थमिदमुच्यते–

पढमस्स ततियठाणे, छम्मासुग्घाइओ भवे छेदो।
चउमासो छम्मासो, बितिए ततिए अणुग्घातो ॥५१६९॥

एत्थ पढमट्ठाण पायावच्चपरिग्गह, तस्स ततिय ठाण उक्कोसय, तत्थ जो सो छेदो सो छम्मासितो उग्घातितो णायव्वो। "चउमासो" पच्छद्ध अनयोस्तृतीयस्थानानुवर्तनादिदमुच्यते।

बितिए त्ति कोटुबे उक्कोसे कोडुबपरिग्गहे चउगुरुओ छेदो।

ततिए त्ति डडियपरिग्गहे गुरुओ छम्मासिओ छेदो। अर्थादापन्न कोटुबे जहण्णए मज्झिमए य ज चेव पायावच्चे, एव चेव डडिए वि जहण्णमज्झिमे ॥५१६९॥

पढमिल्लुगम्मि तवारिह, दोहि वि लहु होंति एए पच्छित्ता।
बितियम्मि य कालगुरू, तवगुरुगा होंति ततियम्मि ॥५१७०॥

पढमिल्लुगं णाम पायावच्चपरिग्गहे दोण्णि आदिल्ला तवारिहा, ते दो वि लहुया।

बितिए त्ति कोडुबिए जे तवारिहा दोण्णि आइल्ला ते कालगुरु तवलहु।

ततिए त्ति डडियपरिग्गहिए जे आदिल्ला दोण्णि तवारिहा ते काललहू तवगुरु ॥५१७०॥ एयं ठाणपच्छित्त। मणुएसु गत।

इदाणि पडिसेवणापच्छित्त –

चतुगुरुगा छग्गुरुगा, छेदो मूलं जहण्णए होंति।
छग्गुरुग छेद मूलं, अणवट्ठप्पो य मज्झिमए ॥५१७१॥

---

१ प्रथम नाम जघन्य मानुष्यरूप, तत्र प्राजापत्यपरिगृहीतादौ भेदत्रयेऽपि तिष्ठतश्चत्वारोऽनुद्घाता मासा, गुरव इत्यर्थ।

द्वितीय – मध्यम, तत्रापि त्रिष्वपि भेदेषु षण्मासा अनुद्घाता.।

तृतीय – उत्कृष्ट, तत्र भेदत्रयेऽपि तिष्ठतश्छेदो भवेत्, बृहत्कल्पे गा० २५१८। २ ऽणुग्घाया, इति बृहत्कल्पे गा० २५१८।

लेप्पग आलिंगतस्स जे हत्थादिभंगे पच्छकम्मादिया दोसा भवंति ते इह देहजुते ण भवंति । इमे देहजुए दोसा भवंति — इत्थी कामातुरत्तणओ णहेहिं ता छिंदेज्ज, दंतेहिं वा छिंदेज्ज, तेहिं सो सूइज्जति सपक्खेण वा परपक्खेण वा जहा एस सेवगो त्ति ॥५१७६॥

माणुसीसु वि इमे चउरो विकप्पा —

सुहविण्णप्पा सुहमोइया य सुहविण्णप्पा य होंति दुहमोया ।
दुहविण्णप्पा य सुहा, दुहविण्णप्पा य दुहमोया ॥५१७७॥

भंगचउक्कं कंठं ।

चउसु वि भंगेसु जहक्कम्मं इमे उदाहरणा —

खरिया महिड्डिगणिया, अंतेपुरिया य रायमाया य ।
उभयं सुहविण्णवणे, सुमोय दोहिं पि य दुहाओ ॥५१७८॥

खरिया सव्वजणसामण्ण त्ति सुहविण्णवणा, परिपेलवसुहलवासादत्तणतो सुहमोया पढमभंगिल्ला ।

महिड्डिगणिया वि गणियत्तणतो चेव सुहविण्णप्पा जोव्वणरूवविब्भमरूवादिभावजुत्तत्तणतो य भावक्खेवकारिणि त्ति दुहमोया बितियभंगिल्ली ।

ततियभंगे अंतेपुरिया । तत्थ दुप्पवेसं भयं च, अतो दुहविण्णवणा, अवायबहुलत्तणओ सुहमोया ।

चउत्थे भंगे रण्णो माता । सा सुरक्खिया भयं च सव्वस्स य गुरुठाणे पूयणिज्जति दुहविण्णवणा, सव्वसुहसपायकारिणी अवाए य रक्खति जम्हा तेण दुहमोया । पच्छद्धेण एते चेव जहक्कम्मं चउरो भंगा गहिया ॥५१७८॥

चोदगो पुच्छइ —

तिण्ह वि कतरो गुरुओ, पागतिए कुडुंबि डंडिए चेव ।
साहस असमिक्खभए, इतरे पडिपक्ख पभु राया ॥५१७९॥

कंठा पूर्ववत् । गतं माणुस्सगं ।

इदाणिं तेरिच्छं —

तेरिच्छं पि य तिविहं, जहण्णयं मज्झिमं च उक्कोसं ।
पायावच्च कुडुंबिय, दंडियपारिग्गहं चेव ॥५१८०॥

जहण्णगादिगं तिविधं, एक्केक्कं पायावच्चादितिपरिग्गहियं भाणियव्वं ।

अतिग अमिला जहण्णा, खरि महिसी मज्झिमा वलवमादी ।
गोणि कणेरुक्कोसं, पगतं सजितेतरे देहे ॥५१८१॥

इह दव्वावेक्खतो जहण्णमज्झिमुक्कोसगा ।

निशीथ : एक अध्ययन

प्रस्तुत ग्रन्थ :

आचारांग सूत्र की अन्तिम चूला 'आयारपकप्प' नाम की थी। जैसाकि उसके 'चूला' नाम से प्रसिद्ध है, वह कभी आचारांग में परिशिष्ट रूप से जोड़ी गई थी। प्रतिपाद्य विषय की गोप्यता के कारण वह चूला 'निशीथ' नाम से प्रसिद्ध हुई, और आगे चलकर आचारांग से पृथक् एक स्वतंत्र शास्त्र बनकर 'निशीथ सूत्र' के नाम से प्रचलित होगई। प्रस्तुत ग्रन्थराज, उसी निशीथ सूत्र का संपादन तथा प्रकाशन है। प्रस्तुत प्रकाशन की विशेषता यह है कि इसमें मूल निशीथ सूत्र के अतिरिक्त उसकी प्राकृत पद्यमय 'भाष्य' नामक टीका है, जो अपने में 'नियुक्ति' को भी संमिलित किए हुए हैं। साथ ही भाष्य की व्याख्यास्वरूप प्राकृत गद्यमय 'विशेष चूर्णि' नामक टीका और चूर्णि के २०वें उद्देश की संस्कृत व्याख्या भी है। इस प्रकार निशीथ सूत्र का प्रस्तुत सम्पादन मूलसूत्र, नियुक्ति, भाष्य, विशेष चूर्णि और चूर्णि-व्याख्या का एक साथ संपादन है।

इसके संपादक उपाध्याय कवि श्री अमरमुनि तथा मुनि श्री कन्हैयालालजी 'कमल'—मुनिद्वय हैं। इसके तीन भाग प्रथम प्रकाशित हो चुके हैं। यह चौथा भाग है। इस प्रकार यह महान् ग्रन्थ विद्वानों के समक्ष प्रथम बार ही साङ्गोपाङ्ग रूप में उपस्थित हो रहा है। इसके लिये उक्त मुनिद्वय का विद्वद्वर्ग चिरऋणी रहेगा। गोपनीयता के कारण हम लोगों के लिये इसकी उपलब्धि दुर्लभ ही थी। चिरकाल से प्रतीक्षा की जाती रही, फिर भी दर्शन दुर्लभ! मुझे यह कहने में तनिक भी संकोच नहीं है कि प्रस्तुत ग्रन्थराज को इस भाँति विद्वानों के लिए सुलभ बनाकर उक्त मुनिद्वय ने तथा प्रकाशक संस्था—सन्मति ज्ञान पीठ, आगरा ने वस्तुतः अपूर्व श्रेय अर्जित किया है।

प्रस्तुत में इतना कहना आवश्यक है कि छेद ग्रन्थों के भाष्यों और चूर्णियों का संपादन अपने में एक अत्यन्त कठिन कार्य है। यह ठीक है कि सद्भाग्य से संपादन की सामग्री विपुल मात्रा में उपलब्ध है, किन्तु यह सामग्री प्राचुर्य जहां एक ओर संपादक के कार्य को निश्चितता की सीमा तक पहुँचाने में सहायक हो सकता है, वहां दूसरी ओर संपादक के धैर्य और कुशलता को भी परीक्षा की कसौटी पर चढ़ा देता है। प्रसिद्ध छेद सूत्र—दशा[1], कल्प,[2] व्यवहार[3] और निशीथ तथा पंचकल्प का परस्पर इतना निकट सम्बन्ध है कि कुशल संपादक

---

१. विजयकुमुद सूरि द्वारा संपादित होकर प्रकाशित है।

२. 'बृहत्कल्प' के नाम से मुनिराज श्री पुण्यविजय जी ने छः भागों में संपादित करके प्रकाशित कर दिया है।

३. श्री माणेक मुनि ने प्रकाशित कर दिया है। किन्तु वह अत्यन्त अशुद्ध है, अतः पुनः संपादन आवश्यक है।

चोदगाह –

जम्हा पढमे मूलं, बितिए अणवट्ठ तइय पारंची ।
तम्हा ठायंतस्सा, मूलं अणवट्ठ पारंची ॥५१८६॥ कठा

आचार्याह –

पडिसेवणाए एवं, पसज्जणा तत्थ होइ एक्केक्के ।
चरिमपदे चरिमपदं, तं पि य आणादिणिप्फण्णं ॥५१८७॥ कठा

ते चेव तत्थ दोसा, मोरियआणाए जे भणित पुव्विं ।
आलवणादी मोत्तुं, तेरिच्छे सेवमाणस्स ॥५१८८॥

पूर्ववत् पुव्वद्ध कठ । माणुसित्थीसु जहा आलवणविब्भमा भवति तहा तिरिक्खीसु णत्थि । अतो ते आलवणादि तिरिक्खीसु मोत्तु, सेसा आयसजमविराहणादिदोसा सव्वे सभवति ॥५१८८॥

जह हास-खेड्ड-आकार-विब्भमा होंति मणुयइत्थीसु ।
आलावा य बहुविहा, ते णत्थि तिरिक्खइत्थीसु ॥५१८९॥ कठा

विण्णवणे इमो चउभगो –

सुहविण्णप्पा सुहमोइया य, सुहविण्णप्पा य होंति दुहमोया ।
दुहविण्णप्पा य सुहा, दुहविण्णप्पा य दुहमोया ॥५१९०॥

चउभगरयणा कठा कायव्वा ॥५१९०॥

चउभगे जहसख इमे उदाहरणा –

अमिलादी उभयसुहा, अरहण्णगमादिमक्कडि दुमोया ।
गोणादि ततियभंगे, उभयदुहा सीहि-वग्घीओ ॥५१९१॥

पढमभगे सुहग्गहणे निरपायत्वात् सुहविण्णवणा, लोगगरहिय अप्पत्वाच्च सुहमोया ।

वितियभंगे वाणरिमादी रिउकाले कामातुरत्तणतो सुहविण्णप्पा, ताओ चेव जदा अणुरत्ताओ तदा दुहमोया । एत्थ दिट्ठतो अरहण्णगो ।

ततियभगे गोणादियाओ सपक्खे वि दुक्ख समागम इच्छति, किमग पुण मणुए । अतो दुहविण्णवणा, लोगगरहियत्तणतो सुहमोया ।

चरिमभगे सीहिमादियाओ जीवियतकरीओ तेण दुहविण्णप्पाओ, ताओ चेव जया अणुरत्ताओ अणुवध ण मुयति त्ति दुहमोया ॥५१९१॥

चोदगो पुच्छति – "को एरिसो असुभो भावो हुज्जा, जो तिरिक्खजोणीओ लोगगरहियाओ आसेवेज्जा" ?

अतो गामादीण सुद्धवसहिं अलभता बाहिं गामस्स निवसति । इमेहिं कारणेहिं – वास वासति, अहवा – बाहिं सीहमादिभावयभय, सरीरावहितेणगभय वा, ताहे अतो चेव भावसागारिए वसति । तत्थ तिविधा वि पडिमाओ दिव्वा माणुसा तिरिया य वत्थमादिएहिं आवरेंति, अतरे वा कडगचिलिमिलिं देंति । एव गीयत्था जयणाए वसता सुज्झति ॥५१९५॥

बहुधा दव्वभावसागारियसभवे इमं भण्णति –

जहिं अप्पतरा दोसा, आभरणादीण दूरतो य मिगा ।
चिलिमिणि णिसि जागरणं, गीते सज्झाय-झाणादी ॥५१९६॥

अप्पतरदोसे गीयत्था ठायति, आभरणाउज्जभत्तादीण य अगीयत्था दूरतो ठविज्जति, त दिम अप्पणा ठायति, अतरे वा कडगचिलिमिलिं देति, रातो य जागरण करेंति, गीयत्था इत्थिमादिगीतादिसद्देसु य सज्झाय करेति, झाण वा झायति ॥५१९६॥

एसा खलु ओहेणं, वसही सागारिया समक्खाया ।
एत्तो उ विभागेणं, दोण्ह वि वग्गाण वोच्छामि ॥५१९७॥

ज पुरिसइत्थीण सामण्णतो अविभागेण अक्खाय एस ओहो भण्णइ । सेस कठ ।

इमो कप्पसुत्ते (प्रथमोद्देशके सूत्र २६, २७, २८, २९) विभागो भणितो –

णो कप्पइ णिग्गथाण इत्थिसागारिए उवस्सए वत्थए ।

कप्पइ णिग्गंथाण पुरिससागारिए उवस्सए वत्थए ।

णो कप्पति णिग्गथीण पुरिससागारिए उवस्सए वत्थए ।

कप्पइ णिग्गथीण इत्थिसागारिए उवस्सए वत्थए ॥५१९८॥

एसेव सुत्तक्कमो इमो भणितो –

समणाणं इत्थीसुं, ण कप्पति कप्पती य पुरिसेसुं ।
समणीणं पुरिसेसुं, ण कप्पति कप्पती थीसुं ॥५१९८॥ कठा

इत्थीसागारिए उवस्सयम्मि सव्वेव इत्थिगा होती ।
देवी मणुय तिरिक्खी, सच्चेव पसज्जणा तत्थ ॥५१९९॥

जाए इत्थीए सागारिए उवस्सए ण कप्पइ वसिउ सा इत्थी भाणियव्वा, अतो भण्णति – सच्चेव इत्थिया होइ जा हेट्ठा णतरसुत्ते भणिता, ता य देवी मणुस्सी तिरिच्छी । एतासु ठियस्स त चेव पच्छित्त, ते चेव आयमजमविराहणादोसा, सच्चेव पसज्जणापसज्जणपच्छित्त, त चेव ज पुव्वसुत्ते भणिय ॥५१९९॥

चोदगाह –

जति सव्वेव य इत्थी, सोही य पसज्जणा य सच्चेव ।
सुत्तं तु किमारद्धं, चोदग ! सुण कारणं एत्थं ॥५२००॥

जइ सव्व चेव त ज पुव्वसुत्ते भणिय, तो किमिह पुण इत्थसागारियसुत्तमारभो ?

तो एक का संशोधन और संपादन करते हुए दूसरे का संशोधन और संपादन भी सहज भाव से कर ले, तो कोई आश्चर्य नहीं। किन्तु इसके लिये अपार धैर्य की अपेक्षा रहती है, जो गति की शीघ्रता को साधने वाले इस युग में सुलभ नहीं है। ऐसी स्थिति में हमें इतने से भी संतोष करना चाहिए कि एक सुवाच्य रूप में संपादन हमारे समक्ष आया तो सही। जहां तक प्रस्तुत निशीथ का सम्बन्ध है, कहा जा सकता है कि इसमें और भी संशोधन अपेक्षित है। फिर भी विद्वान् लोग जिसकी वर्षों से राह देखते रहे हैं[1], उसे सुलभ बनाकर, उक्त मुनि राजों ने जो श्रेय अर्जित किया है, वह किसी प्रकार भी कम प्रशंसनीय नहीं है।

निशीथसूत्र को छेद-सूत्र माना जाता है। आगमों के प्राचीन वर्गीकरण में छेद ग्रन्थों का पृथक् वर्ग नहीं था; किन्तु जैसे-जैसे श्रमण संघ के आचार की समस्या जटिल होती गई और प्रतिदिन साधकों के समक्ष अपने संयम का पालन और उसकी सुरक्षा के साथ-साथ जैन धर्म के प्रचार और प्रभाव का प्रश्न भी आने लगा, तैसे-तैसे आचरण के नियमों में अपवाद मार्ग बढ़ने लगे और संयम-शुद्धि के सदुपायस्वरूप प्रायश्चित्त-विधान में भी जटिलता आने लगी। परिणामस्वरूप आचारशास्त्र का नवनिर्माण होना आवश्यक हो गया। आचारशास्त्र की जटिलता के साथ-ही-साथ उसकी रहस्यमयता भी क्रमशः बढ़ने लगी। फलतः आगमों का एक स्वतन्त्र वर्ग, छेद ग्रन्थों के रूप में वृद्धिगत होने लगा। यह वर्ग अपनी टीकानुटीकाओं के विस्तार के कारण अंग ग्रन्थों के विस्तार को भी पार कर गया। इतना ही नहीं, उक्त वर्ग ने अंगों के महत्त्व को भी अमुक अंश में कम कर दिया। जो अपवाद, अंगों के अध्ययन के लिये भी आवश्यक नहीं थे, वे सब छेद ग्रन्थों के अध्ययन के लिये आवश्यक ही नहीं, अत्यावश्यक करार दिए गए; यही छेद-वर्ग के महत्त्व को सिद्ध करने के लिये पर्याप्त है। अन्ततोगत्वा आगमों का जो अन्तिम वर्गीकरण हुआ, उसमें, छेद ग्रन्थों के वर्ग को भी एक स्वतंत्र स्थान देना पड़ा। इस प्रकार छेद ग्रन्थों को जैन आगमों में एक महत्त्व का स्थान प्राप्त है—यह हम सबको सहज ही स्वीकार करना पड़ता है। और यह भी प्रायः सर्वसम्मत है कि उन छेद ग्रन्थों में भी निशीथ का स्थान सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। प्रस्तुत महत्ता के मौलिक कारणों में निशीथ सूत्र की निर्युक्ति, भाष्य, चूर्णि, विशेष चूर्णि आदि टीकाओं का भी कुछ कम योगदान नहीं है। अपितु, यों कहना चाहिए कि भाष्य और चूर्णि आदि के कारण प्रस्तुत ग्रन्थ का महत्त्व अत्यधिक बढ़ गया है। अतएव निशीथ के प्रस्तुत प्रकाशन से एक महत्व पूर्ण कार्य की संपूर्ति उपाध्याय श्री अमर मुनि और मुनिराज श्री कन्हैयालाल जी 'कमल' ने की है, इसमें सन्देह नहीं है।

इतः पूर्व निशीथ का प्रकाशन साइक्लोस्टाईल रूप में आचार्य विजयप्रेमसूरि और पं० श्री जंबूविजय जी गणि द्वारा हुआ था। उस संस्करण में निशीथ सूत्र, निर्युक्ति-मिश्रित भाष्य और विशेष चूर्णि संमिलित थे। किन्तु परम्परा-पालन का पूर्वाग्रह होने के कारण, वह संस्करण, विक्री के लिये प्रस्तुत नहीं किया गया, केवल विशेषसंयमी आत्मार्थी आचार्यों को ही वह उपलब्ध था। निशीथ सूत्र का महत्त्व यदि एक मात्र संयमी के लिये

१. जब से डा० जगदीशचन्द्र जैन ने अपने निबन्ध में निशीथचूर्णि की सामग्री का उपयोग करके विद्वद् जगत् में इसकी बहुमूल्यता प्रकट की है, तब से तो चूर्णि की माँग बराबर बनी रही है।

ही होता, तब तो संपादक मुनिराजों का उक्त एकांगी मार्ग उचित भी माना जा सकता था, किन्तु निशीथ की टीकाओं में भारतीय इतिहास के सामाजिक, राजनैतिक, धार्मिक, दार्शनिक आदि विविध अंगों को स्पर्श करने वाली प्रचुर सामग्री होने के कारण, तत्-तत् क्षेत्रों में संशोधन करने वाले जिज्ञासुओं के लिये भी निशीथ एक महत्त्वपूर्ण उपयोगी ग्रन्थराज है, अतः उसकी ऐकान्तिक गोप्यता विद्वानों को कथमपि उचित प्रतीत नहीं होती। ऐसी स्थिति में भारतीय इतिहास के विविध क्षेत्रों में संशोधन कार्य करने वाले विद्वानों को सभाष्य एवं सचूर्णि निशीथ सूत्र उपलब्ध करा कर, उक्त मुनिराजद्वय ने विद्वानों को उपकृत किया है, इसमें संदेह नहीं। जिस सामग्री का उपयोग करके प्रस्तुत संस्करण का प्रकाशन हुआ है, वह सामग्री पर्याप्त है, ऐसा नहीं कहा जा सकता। फिर भी संपादकों ने अपनी मर्यादा में जो कुछ किया है और विद्वानों के समक्ष सुवाच्य रूप में निशीथसूत्र, निर्युक्तिमिश्रित भाष्य और विशेष चूर्णि प्रकाशित कर जो उपकार किया है, वह चिर स्मरणीय रहेगा, यह कहने में जरा भी अतिशयोक्ति नहीं है। संपादकों का इस दिशा में यह प्रथम ही प्रयास है, फिर भी इसमें उन्हें जो सफलता मिली है, वह कार्य की महत्ता और गुरुता को देखते हुए– साथ ही समय की अल्पावधि को लक्ष्य में रखते हुए, अभूतपूर्व है। अत्यन्त अल्प समय में ही इतने विराट ग्रन्थ का संपादन और प्रकाशन हुआ है। समय और अर्थव्यय दोनों ही दृष्टियों से देखा जाए, तो वह नगण्य ही है। किन्तु जो कार्य मुनिराजों की निष्ठा ने किया है, वह भविष्य में होने वाले अन्य महत्वपूर्ण कार्यों के प्रति उनके अन्तर्मन को उत्साहशील बनाएगा ही, तदुपरान्त विद्वान लोग भी अब उनसे इससे भी अधिक प्रभावोत्पादक ग्रन्थों के प्रकाशन-संपादन की अपेक्षा रखेंगे– यह कहने में तनिक भी संकोच नहीं। हम आशा करते हैं कि उपाध्याय श्री अमर मुनि तथा मुनिराज श्री कन्हैयालाल जी, प्रस्तुत क्षेत्र में जब प्रथम बार में ही इस उल्लेखनीय सफलता के साथ आगे आये हैं, तब ये दोनों अपने प्रस्तुत शुभग सहकार को भविष्य में भी बनाये रखेंगे और विद्वानों को अनेकानेक ग्रन्थों के मधुर फलों का रसास्वादन कराकर अपने को चिर यशस्वी बनाएंगे! कहीं यह न हो कि प्रथम प्रयास के इस अभूत पूर्व परिश्रम के कारण आने वाली थकावट से प्रस्तुत क्षेत्र ही छोड़ बैठें, फलस्वरूप हमें उनसे प्राप्त होने वाले सुपक्व साहित्यिक मिष्ट फलों के रसास्वाद से वंचित होना पड़े। हमारी और अन्य विद्वानों की उनसे यह विनम्र प्रार्थना है कि वे इस क्षेत्र में अधिकाधिक प्रगति करें और यथावसर अपनी अमूल्य सेवाएं देते रहें।

निशीथ का महत्त्व :

छेद सूत्र दो प्रकार के हैं—एक तो अंगान्तर्गत और दूसरे अंग-बाह्य। निशीथ को अंगान्तर्गत माना गया है, और शेष छेद सूत्रों को अंग बाह्य; यह निशीथ सूत्र की महत्ता को सप्रमाण सूचित करता है। छेदसूत्र का स्वतंत्र वर्ग बना और निशीथ की गणना उसमें की जाने लगी, तब भी वह स्वयं अंगान्तर्गत ही माना जाता रहा—इस बात की सूचना प्रस्तुत निशीथ सूत्र की चूर्णि के प्रारंभिक भाग के वक्तव्यों से छिपी नहीं रहेगी। तथापि यदि स्पष्ट रूप से देखना हो, तो इसके लिए निशीथ भाष्य की गा० ६१८० और उसकी विशेष चूर्णि को पढ़ना चाहिए। वहाँ शिष्य स्पष्ट रूप से प्रश्न करता है कि कालिक श्रुत आचारांगादि है और प्रकल्प=निशीथ उसी का एक अंश है, जबकि वह तो पार्श्वस्थ के ज्ञात अध्ययनों का सार्वत्रिक

जाने पर, चरणानुयोग के अन्तर्गत हो गया। किन्तु जो अन्य छेद अध्ययन अंग वाह्य हैं, उनका समावेश कहाँ होगा? उत्तर में कहा गया है कि वे छेद सूत्र भी चरणानुयोग में ही सम्मिलित समझने चाहिएँ। इससे स्पष्ट है कि समग्र छेदों में से केवल निशीथ ही अंगान्तर्गत है।

भाष्यकार के मत से छेदसूत्र उत्तम श्रुत[१] है। निशीथ भी छेद के अन्तर्गत है, अतः उक्त उल्लेख पर से उसकी भी उत्तमता सूचित होती है। कहा गया है कि प्रथम चरणानुयोग का अर्थात् आचारांग के नव अध्ययन का ज्ञान किये विना ही जो उत्तमश्रुत का अध्ययन करता है, वह दंडभागी वनता है[२]। छेद सूत्रों को उत्तम श्रुत क्यों कहा गया? इसका उत्तर दिया गया है कि छेदों में प्रायश्चित्त-विधि वताई गई है, और उससे आचरण की विशुद्धि होती है। अतएव यह उत्तम श्रुत है[३]। उपाध्यायादि पदों की योग्यता के लिये भी निशीथ का ज्ञान आवश्यक माना गया है[४]। निशीथ के ज्ञाता को ही अपनी टोली लेकर पृथक् विहार करने की आज्ञा शास्त्र में दी गई है। इसके विपरीत यदि किसी को निशीथ का सम्यक् ज्ञान नहीं है, तो वह अपने गुरु से पृथक् होकर, स्वतंत्र विहार नहीं कर सकता[५]। आचारप्रकल्प=निशीथ का उच्छेद करने वालों के लिये विशेप रूप से दण्ड देने की व्यवस्था की गई है[६]। इतना ही नहीं, किन्तु निशीथ-धर के लिये विशेष अपवाद मार्ग की भी छूट दी गई है[७]। इन सव वातों से—लोकोत्तर दृष्टि से—भी निशीथ की महत्ता सिद्ध होती है।

छेद सूत्र को प्रवचन रहस्य[८] कहा गया है। उसे हर कोई नहीं पढ़ सकता, किन्तु विशेष योग्यतायुक्त व्यक्ति ही उसका अधिकारी होता है। अनधिकारी को[९] इसकी वाचना देने से, वाचक, प्रायश्चित्त का भागी होता है[१०]। इतना ही नहीं, किन्तु योग्य पात्र को न देने से भी प्रायश्चित्त का भागी होता है[११]। क्योंकि ऐसा करने पर सूत्र-विच्छेद आदि दोष होते हैं।[१२]

आचार प्रकल्प=निशीथ के अध्ययन के लिये कम-से-कम तीन वर्ष का दीक्षापर्याय विहित है। इससे पहले दीक्षित साधु भी इसे नहीं पढ़ सकता है[१३]। यह प्रस्तुत शास्त्र के गांभीर्य की

१. नि० गा० ६१८४
२. नि० सू० उ० १९ सू० १८, भाष्य गा० ६१८४
३. नि० गा० ६१८४ की चूर्णि
४. व्यवहार सूत्र उद्देश ३, सू० ३–५, १०
५. व्यवहार भाग–४, गा० २३०, ५६६
६. वही, उद्देश ५, सू० १५—१८।
७. वही, उद्देश ६, पृ० ५७—६०।
८. नि० चू० गा० ६२२७, व्यवहार भाष्य तृतीय विभाग, पृ० ५८।
९. अनधिकारी के लिये, देखो—नि० चू० भा० गा० ६१९८ से।
१०. नि० सू० उ० १९ सू० २१।
११. वही, सू० २२
१२. नि० गा० ६२३३।
१३. नि० चू० गा० ६२६५, व्यवहार भाष्य—उद्देश ७, गा० २०२—३

और महत्त्वपूर्ण संकेत है। साथ ही यह भी कहा गया है कि केवल दीक्षापर्याय ही अपेक्षित नहीं है, परिणत बुद्धि[1] का होना भी आवश्यक है।

दोषों की आलोचना, किसी अधिकारी गुरु के समक्ष करनी चाहिए। प्राचीन परंपरा के अनुसार कम-से-कम कल्प और प्रकल्प--निशीथ का ज्ञान जिसे हो, उसी के समक्ष आलोचना की जा सकती है[2]। जब तक कोई श्रुत साहित्य में निशीथ का ज्ञाता न हुआ हो, तब तक वह आलोचना सुनने का अधिकारी नहीं होता—यह प्राचीन परंपरा रही है। आगे चलकर कल्प शब्द से दशा, कल्प और व्यवहार—ये तीनों शास्त्र विवक्षित माने गये है। और गाथागत 'तु' शब्द से अन्य भी महाकल्प सूत्र, महा-निशीथ और निर्युक्ति पीठिका भी विवक्षित हैं, ऐसा माना जाने लगा[3]। किन्तु मूल में कल्प और प्रकल्प-निशीथ ही विवक्षित रहे, यह निशीथ की महत्ता सिद्ध करता है। आलोचनार्ह ही नहीं, किन्तु उपाध्याय पद के योग्य भी वही व्यक्ति माना जाता था, जो कम-से-कम निशीथ को तो जानता ही हो[4]। श्रुत-ज्ञानियों में प्रायश्चित्त दान का अधिकारी भी वही है, जो कल्प और प्रकल्प-निशीथ का ज्ञाता हो। इससे भी शास्त्रों में निशीथ का क्या महत्त्व है, यह ज्ञात होता है[5]। इसका कारण यह है कि अनाचार के कारण जो प्रायश्चित्त आता है, उसका विधान निशीथ में विशेष रूप से मिलता है[6]। और उस प्रायश्चित्त विधि के पीछे बल यह है कि स्वयं निशीथ का आधार पूर्वगत श्रुत है, अतः उससे भी शुद्धि हो सकती है[7]। इसका फलितार्थ यह है कि केवली और चतुर्दश पूर्वधर को प्रायश्चित्त-दान का जैसा अधिकार है, प्रकल्प-निशीथ धर को भी वैसा ही अधिकार है[8]। निशीथ सूत्र के अधिकारी और अनधिकारी का विवेक करते हुए भाष्यकार ने अंत में कहा है कि जो रहस्य को संभाल न सकता हो, जो अपवाद पद का आश्रय लेकर अनाचार में प्रवृत्ति करने वाला हो, जो ज्ञानादि आचार में प्रवृत्त न हो, ऐसे व्यक्ति को निशीथ सूत्र का रहस्य बताने वाला संसार-भ्रमण का भागी होता है। किन्तु जो रहस्य को पचा सकता हो, यावज्जीवन पर्यन्त उसको धारण कर सकता हो, मायावी न हो, तुला के समान मध्यस्थ हो, समित हो, और जो कल्पों के अनुपालन में स्वयं संलग्न होकर दूसरों के लिये मार्ग दर्शक दीपक का काम करता हो, वह धर्ममार्ग का आचरण करके अपने संसार का उच्छेद कर लेता है। अर्थात् निशीथ के बताये मार्ग पर चलने का फल मोक्ष है[9]।

---

१. व्यव० उद्देश १०, सू० २०—२१; व्यवहार भा० गा० १०१—१०२। तथा नि० चू० पृ० ३
२. नि० गा० ६३९५ और व्यवहार भाष्य, विभाग-२, गा० १३३;
३. निशीथ चू० गा० ६३९८ और व्यवहार टीका विभाग २, गा० १३७;
४. व्यवहार सूत्र उद्देश ३, सूत्र ३
५. नि० गा० ६४९८
६. नि० गा० ६४९७, ६४९९
७. वही, गा० ६५०० व्यवहार भाष्य द्वि० विभाग, गा० २५९; द० विभाग, गा० १९६
८. वही, गा० ६६७४ तथा व्यवहार द्वितीय विभाग, भाष्य गा० २३१
९. नि० ६७०२—६७०३, व्यवहार उद्देश १०, सूत्र २०।

निशीथ सूत्र ही नहीं, किन्तु उसकी 'पीठिका' के लिये भी कहा गया है कि यदि कोई अवहुश्रुत, रहस्य को वता देने वाला, जिस किसी के समक्ष—यावत् श्रावकों के संमुख भी अपवाद की प्ररूपणा करने वाला, अपवाद का अवलंवन लेने वाला,असंविग्न और दुर्वलचरित्र व्यक्ति हो, तो उसे पढ़ने का अधिकार नहीं है। अतएव ऐसे अनधिकारी व्यक्ति को 'पीठिका' के अर्थ का ज्ञान नहीं कराना चाहिए। यदि कोई हठात् ऐसा करता है तो वह प्रवचन-घातक होता है और दुर्लभ-वोधि वनता है।[१]

लोकोत्तर दृष्टि से तो इस प्रकार निशीथ का महत्त्व स्वयं सिद्ध है ही, किन्तु लौकिक दृष्टि से भी निशीथ का महत्त्व कुछ कम नहीं है। ईसा की छठी सातवीं शती में भारत वर्ष के सामाजिक, राजनैतिक तथा धार्मिक संघों की क्या परिस्थिति थी, इसका तादृश चित्रण निशीथ-भाष्य और चूर्णि में मिलता है। तथा कई शब्द ऐसे भी हैं, जो अन्य शास्त्रों में यथास्थान प्रयुक्त मिलते तो हैं, किन्तु उनका मूल अर्थ क्या था, यह अभी विद्वानों को ज्ञात नहीं है। निशीथ-चूर्णि उन शब्दों का रहस्य स्पष्ट करने की दिशा में एक उत्कृष्ट साधन है, यह कहने में तनिक भी अतिशयोक्ति नहीं है।

'निसीह' शब्द और उसका अर्थ :

आचारांग निर्युक्ति में पांचवीं चूला का नाम 'आयार पकप्प' तथा 'निसीह' दिया हुआ है[२]। अन्यत्र भी उक्त शास्त्र के ये दोनों नाम मिलते हैं। नन्दी में (सू० ४४) और पक्खियसुत्त (पृ० ६६) में भी 'निसीह' शब्द प्रस्तुत शास्त्र के लिये प्रयुक्त है। धवला में इसका निर्देश 'णिसिहिय' शब्द से हुआ है। तथा जय धवला में 'णिसीहिय' का निर्देश है[३]। और अंगप्रज्ञप्ति चूलिका में (गा० ३४) 'णिसेहिय' रूप से उल्लेख है।

'निसीह' शब्द का संस्कृत रूप 'निशीथ', तत्त्वार्थ-भाष्य[४] जितना तो प्राचीन है ही। किन्तु दिगम्वर साहित्य में उपलब्ध 'णिसिहिय'—या 'णिसीहिय' शब्द का संस्कृत रूप 'निपिधक' हरिवंश पुराण में (१०, १३८) मिलता है, किन्तु गोम्मट सार टीका में 'निपिद्धिका' रूप निर्दिष्ट है, "निपेधनं प्रमाददोषनिराकरणं निपिद्धिः, संज्ञायां क प्रत्यये 'निपिद्धिका' प्रायश्चित्तशास्त्रमित्यर्थः।"

(जीव काण्ड, गा० ३६८)

वेवर ने 'निसीह' शब्द के विषय में लिखा है :

This name is explained strangely enough by Nishitha though the

१. नि० गा० ४९५—६

२. आचा० नि० गा० २९१, ३४७

३. पट्खण्डागम, भाग १ पृ० ९६, कसायपाहुड, भाग १ पृ० २५, १२१ टिप्पणों के साथ देखें।

४ तत्त्वार्थ भाष्य १, २०

character of the Contents would lead us to expect Nishedha (निषेध)[1]

अर्थात् उनके मतानुसार 'निसीह' शब्द का स्पष्टीकरण संस्कृत में 'निषेध' शब्द के साथ संबन्ध जोड़कर होना चाहिए, न कि 'निशीथ' शब्द से। अपने इस मत की पुष्टि में उन्होंने दश सामाचारीगत द्वितीय 'नैषेधिकी' समाचारी के लिये प्रयुक्त[2] 'निसीहिया' शब्द को उपस्थित किया है। तथा स्वाध्याय-स्थान के लिये प्रयुक्त 'निसीहिया'[3] शब्द का भी उल्लेख किया है। और उन शब्दों की व्याख्याओं को देकर यह फलित किया है कि From this we may indubitably conclude that the explanation by Nishitha (निशीथ) is simply an error[4]—अर्थात् 'निसीह' शब्द को 'निशीथ' शब्द के द्वारा व्याख्यात करना भ्रम है। गोम्मटसार की व्याख्या भी इसी ओर संकेत करती है। दिगम्बरपरंपरा में इस शास्त्र के लिये प्रयुक्त शब्द 'णिसिहिय' या 'णिसीहिय' है। अतएव उक्त शब्द की व्याख्या, उस प्रकार के अन्य शब्द के आधार पर, 'निषिधक' या 'निषिद्धिका' होना असंगत नहीं लगता।

दिगम्बरों के यहाँ प्राकृत शब्दों का जब संस्कृतीकरण हुआ, तब उनके समक्ष वे मूल शास्त्र तो थे नहीं। अतएव शब्दसादृश्य के कारण वैसा होना स्वाभाविक था। किन्तु देखना यह है कि जिनके यहाँ मूल शास्त्र विद्यमान था और वह पठन पाठन में भी प्रचलित था, तब यदि उन्होंने 'निसीह' की संस्कृत व्याख्या 'निशीथ' शब्द से की तो, क्या वह उचित था या नहीं। समग्र ग्रन्थ के देखने से, और निर्युक्तिकार आदि ने जो व्याख्या की है उसके आधार पर, तथा खास कर तत्त्वार्थ भाष्य को देखते हुए, यही कहना पड़ता है कि 'निसीह' शब्द का संबन्ध व्याख्याकारों ने जो 'निशीथ' के साथ जोड़ा है, वह अनुचित नहीं है। निशीथ सूत्र में प्रतिपाद्य निषेध नहीं है, किन्तु निषिद्धवस्तु के आचरण से जो प्रायश्चित्त होता है उसका विधान है[5]। अर्थात् जहाँ कल्प आदि सूत्रों में या आचारांग की प्रथम चार चूलाओं में निषेधों की तालिका है वहाँ निशीथ में उनके लिये प्रायश्चित्त का विधान है। स्पष्ट है कि निषिद्ध वस्तु का या निषेध का प्रतिपादन करना, यह इस ग्रन्थ का मुख्य प्रयोजन नहीं है। गौणरूप से उन निषिद्ध कृत्यों का प्रसंगवश उल्लेख मात्र है। क्योंकि उनका कथन किए बिना प्रायश्चित्त का विधान कैसे होगा? ध्यान देने की बात तो यह है कि इस ग्रन्थ में ऐसा एक भी सूत्र नहीं मिलता, जो निषेध-परक हो। ऐसी स्थिति में 'निषेध' के साथ इसका संबन्ध जोड़ना अनावश्यक है। वस्तु स्थिति यह है कि वेबर ने और गोम्मट-टीकाकार ने, इस ग्रन्थ के नाम का जो पूर्व प्राचीन टीकाकारों ने

१. इन्डियन एन्टीक्वेरी, भा० २१, पृ० ९७
२. उत्तराध्ययन २६, २
३. दशवै० ५, २, २
४. इन्डियन एन्टीक्वेरी, भा० २१, पृ० ९७
५. इसका समर्थन शीलांकाचार्य ने भी किया है—"णिसिहियं [illegible] सुत्तं"—आचा०, भाग १, पृ० ६८।
"[illegible] णिसीहियं [illegible]"—आचारांग, भा० १, पृ० [illegible]।

किया है, उस पर ध्यान नहीं दिया। अतएव उनको यह कल्पना करनी पड़ी कि मूल शब्द 'निसीह' का संस्कृत रूप 'निषेध' से सम्बन्ध रखता है। 'निशीथ' नाम के जो अन्य पर्याय-वाचक शब्द दिये हैं[१], उनमें भी कोई निषेधपरक नाम नहीं है। ऐसी स्थिति में इस ग्रन्थ का नाम निशीथ के स्थान में 'निषेध' करना उपयुक्त नहीं कहा जा सकता। टीकाकारों को 'निसीहिया' शब्द और उसका अर्थ अत्यन्त परिचित भी था। ऐसी स्थिति में यदि उसके साथ 'निसीह' शब्द का कुछ भी सम्बन्ध होता, तो वे अवश्य ही वैसी व्याख्या करते। परन्तु वैसी व्याख्या नहीं की, इससे भी सिद्ध होता है कि 'णिसीह' का 'निशीथ' से सम्बन्ध है, न कि 'निषेध' से।

'णिसीह'—निशीथ शब्द की व्याख्या, परम्परा के अनुसार निक्षेप पद्धति का आश्रय लेकर, निर्युक्ति-भाष्य—चूर्णि में की गई है[२]। उसका सार यहाँ दिया जाता है, ताकि निशीथ शब्द का अर्थ स्पष्ट हो सके, और प्रस्तुत में क्या विवक्षित है—यह भी अच्छी तरह ध्यान में आ सके।

निशीथ शब्द का सामान्य अर्थ किया गया है—अप्रकाश।—'णिसीहमप्रकाशम्'[३]। द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव की दृष्टि से जो निशीथ की विवेचना की गई है, उस पर से भी उसके वास्तविक अर्थ का संकेत मिलता है।

द्रव्य निशीथ मैल या कालुष्य है। गंदले पानी में कतक वृक्ष के फल का चूर्ण डालने पर उसका जो मैल नीचे बैठ जाता है वह द्रव्य निशीथ है, और उसका प्रतियोगी स्वच्छ जल अनिशीथ है। अर्थात् जो द्रव्य अस्वच्छ या कलुष है, वह निशीथ है।

क्षेत्र-दृष्टि से लोक में जो कलुष अर्थात् अंधकारमय प्रदेश हैं उन्हें भी निशीथ की संज्ञा दी गई है। देवलोक में अवस्थित कृष्ण राजियों को, तिर्यग्लोक में असंख्यात द्वीप समूहों के उस पार अवस्थित तमःकाय को, तथा सीमंतक आदि नरकों को अंधकारावृत होने से निशीथ कहा गया है। मैल जिस प्रकार स्वयं कलुष या अस्वच्छ है अर्थात् स्वच्छ जल की भांति प्रकाश-रूप नहीं है, वैसे ही ये प्रदेश भी कलुष ही हैं। वहाँ प्रकाश नहीं होता, केवल अंधकार ही अंधकार है। इस प्रकार क्षेत्र की दृष्टि से भी अप्रकाश, अप्रकट, या अस्वच्छ प्रदेश, अर्थात् अंधकारमय प्रदेश ही निशीथ है।

काल की दृष्टि से रात्रि को निशीथ कहा जाता है, क्योंकि उस समय भी प्रकाश नहीं होता, अपितु अंधकार का ही राज्य होता है। अतएव रात्रि या मध्यरात्रि भी काल-दृष्टि से निशीथ है।[४]

---

१. नि० गा० ३

२. नि० गा० ६७ से

३. नि० चू० गा० ६८, १४८३

४. रात में होने वाले स्वाध्याय को भी 'निशीथिका' कहा गया है। इसी पर से प्रस्तुत सूत्र, जो प्रायः अप्रकाश में पढ़ा जाता है, निशीथ नाम से प्रसिद्ध हुआ है। धवला और जय-धवला में 'निशीथिका' का ही प्राकृतरूप 'निसीहिया' स्वीकृत है, ऐसा मानना उचित है।

वत्तम्मि जो गमो खलु, गणवच्छे सो गमो उ आयरिए ।
णिक्खिवणे तम्मि चत्ता, जमुद्दिसे तम्मि ते पच्छा ॥५५६०॥

जो वत्तस्स भिक्खुस्स गमो सो गमो गणावच्छेइए आयरियाण । इम णाणत्त – जइ णाण-दसण-णिमित्त गच्छति अप्पणो य से आयरिओ सविग्गो तस्स पासे णिक्खिविउ गच्छ अप्पवितितो ततितो वा गच्छति ।

अह से अप्पणो आयरिओ असविग्गो तो ते साधू जति तस्स पासि णिक्खिविउ गच्छति तो तेण ते चत्ता भवति, तम्हा ण णिक्खियव्वा णेयव्वा । तेण ते जेण तेण पगारेण ते य घेत्तु जत्थ गतो तत्थ पढम अप्पाण णिक्खिवति, पच्छा भणति – "जहा मे अह, तहा मे इमे वि" । "तम्मि ते पच्छा" तस्स सिस्सा भवति ॥५५६०॥

णिक्खिवणा अप्पाणो परे य संतेसु तस्स ते देंति ।
संघाडगं असंते, सो वि ण वावारऽणापुच्छा ॥५५६१॥

जदा अप्पा परो य णिक्खित्तो तदा तस्स वि आयरियस्स किं वा जाया ?, जति से सति त्ति अप्पणो य सहाया पहुप्पति ताहे तेण तस्स चेव दायव्वा, असतेसु सघाडग एग देति, अवसेसा अप्पणा गेण्हति । अह सव्वहा असहातो सव्वे वि गेण्हति, तेण वि से कायव्व, तस्स गुरुस्स अणापुच्छाए सो ते ण वावारेति ॥५५६१॥

आयरिय गिहिभूय ओसण्ण वा जत्थ पेच्छति तत्थिम भणति –

ओहावित-उस्सण्णे, भण्णति अणाहओ विणा वयं तुब्भे ।
कमसीसमसागारिए, दुप्पडियरगं जतो तिण्हं ॥५५६२॥

पुव्वद्ध कठ । ओसण्णस्स पुव्वगुरुस्स कमा पादा सिरेण तेसु णिवडति असागारिए ।

सीसो भणति – "तस्स असजयस्स कह चलणेसु णिवडिज्जइ" ।

आयरिओ भणति – "दुप्पडियरय जतो तिण्ह" दुक्ख उवकारिस्स पच्चुवकारो क्रिज्जति, त जहा – माता पिउणो, सामिस्त, धम्मायरियस्स । अतो तस्स पादेसु वि पडिज्जति, ण दोसो ॥५५६२॥

कि च –

जो जेण जम्मि ठाणम्मि, ठविओ दंसणे व चरणे वा ।
सो तं तओ चुयं तम्मि चेव कातं भवे निरिणो ॥५५६३॥

सो सीसो तेण आयरिएण णाणादिसु ठविओ, इदाणि सो आयरिओ ततो णाणादिभावाओ चुतो, तं चुअ सो सीसो तेसु चेव णाणादिसु ठवेतो णिरण्णो भवति ॥५५६२॥

जे भिक्खू वुग्गहवक्कंताणं असणं वा पाणं वा खाइमं वा साइमं वा देइ,
देंतं वा साइज्जइ ॥सू०॥१६॥

जे भिक्खू वुग्गहवक्कंताणं असणं वा पाणं वा खाइमं वा साइमं वा पडिच्छइ,
पडिच्छंतं वा सातिज्जइ ॥सू०॥१७॥

जे भिक्खू वुग्गहवक्कंताणं वत्थं वा पडिग्गहं वा कंबलं वा पायपुंछणं वा देइ,
देंतं वा साइज्जइ ॥सू०॥१८॥

निसीह शब्द और उसका अर्थ :

भाव की दृष्टि से जो अप्रकाशरूप हो वह निशीथ है (जाणिज्जे)। अर्थात् प्रस्तुत निशीथ सूत्र, इसीलिये निशीथ कहा गया कि वह सूत्ररूप में, अर्थ रूप में और उभय रूप में सर्वत्र प्रकाश-योग्य नहीं है, किन्तु एकान्त में ही पठनीय है। चर्चा का सार यह है कि जो अंधकारमय है—अप्रकाश है, वह लोक में निशीथ नाम से प्रसिद्ध है। अतएव जो भी अप्रकाश-धर्मक हो, वह सब निशीथ कहे जाने योग्य है।

'जं होति अप्पगासं, तं तु णिसीहं ति लोग-संसिद्धं।
जं अप्पगासधम्मं, अण्णं पि तयं निसीधं ति।'

—नि० सू० गा० ६९

भाव निशीथ का लौकिक उदाहरण रहस्य सूत्र है। हर किसी के लिये अप्रकाशनीय रहस्य-सूत्रों में विद्या, मंत्र और योग का परिगणन किया गया है। ये सूत्र अपरिणत बुद्धि वाले पुरुष के समक्ष प्रकाशनीय नहीं हैं, फलतः गुप्त रखे जाते हैं। उसी प्रकार प्रस्तुत निशीथ सूत्र भी गुप्त रखने योग्य होने से 'निशीथ' है।

चूर्णिकार ने निशीथ शब्द का उपर्युक्त मूलानुसारी अर्थ करके दूसरे प्रकार से भी अर्थ देने का प्रयत्न किया है :

कतक फल को द्रव्य निसीह कह सकते है, क्योंकि उसके द्वारा जल का मल बैठ जाता है अर्थात् जल से मल का अंश दूर हो जाता है—"जम्हा तेण कलुसुदए पक्खित्तेण मलो णिसीयति—उदगादवगच्छतीत्यर्थः।" प्रस्तुत में प्राकृत शब्द 'निसीह' का सम्बन्ध संस्कृत शब्द नि × सद् से जोड़ा गया है।[1]

क्षेत्र-णिसीह, द्वीप समुद्रों से बाहिरी लोक है, क्योंकि वहां जीव और पुद्गलों का अभाव ज्ञात होता है। "खेत्तणिसीहं बहिदीवसमुद्दादिलोगो य, जम्हा ते पण्ण जीवपुग्गलाणं तदभावो अव-गच्छति।" जिस प्रकार द्रव्य निशीथ में पानी से मैल का अपगम विवक्षित था, उसी प्रकार यहां भी अपगम ही विवक्षित है। अर्थात् ऐसा क्षेत्र, जिसके प्रभाव से जीव तथा पुद्गलों का अपगम होता है—अर्थात् वे दूर हो जाते हैं, क्षेत्र निशीथ कहा जाता है।

कालणिसीह दिन को कहा गया है; वह इसलिये कि रात्रि के अंधकार का अपगम दिन होते ही हो जाता है। "कालणिसीहं अहो, तं पुण अंधकारस्स णिसीयणं भवति।" यहां भी निसीह शब्द का अपगम अर्थ ही अभिप्रेत है।

भावणिसीह की व्याख्या स्वयं भाष्यकार ने की है :

अट्ठविह-कम्मपंको णिसीयते जेण तं णिसीहं।

नि० सू० गा० ७०

1. 'उपनिषद्' शब्द में भी 'उप + नि + सद्' है। इसका अर्थ है—जिस रहस्यज्ञान के द्वारा अज्ञानमल निरस्त होता है वह 'उपनिषद्' है। अथवा जो गुरु के समीप बैठकर सीखा जाता है वह 'उपनिषद्' है।

तेसिं असणादिं देते पच्छित्त सव्वपदेसु चउलहुं, अत्थे चउगुरु, आणादिया य दोसा, अणवत्थपसगा अण्णो वि दाहिति, सड्ढाण वि मिच्छत्त जणेति ।।५६२६।।

दाण[1]ग्गहणे[2] संवास[3]ओ य वायण[4] पडिच्छणादी[5] य ।

सरिसं[6] पभासमाणा, जुत्तिसुवण्णेण[7] ववहरंति ।।५६२७।।

"[1]दाणे" त्ति अस्य व्याख्या –

गव्वेण ते उद्दिण्णा, अण्णे वा देंते दट्ठू भासंति ।

नूणं एते पहाणा, विसादि संसग्गिए गच्छे ।।५६२८।।

अम्ह एते असणादि देति गव्व करेज्ज, तेण गव्वेण उदिण्णेण पलावा भवेज्ज । अण्णो वा दिज्जत दट्ठु भणेज्ज – "णूण एते चेव पहाणा" । तेसिं वा किं वि अहाभावेण गेलण्ण होज्ज, ते .णेज्ज – "एतेहिं किं पि विसादि दिण्ण", एत्थ गेण्हण-कड्ढणादिया दोसा । एव दाणसंसग्गीए अगीयसेहादिया चोदिता तेसु चेव वएज्जा ।।५६२८।।

"[2]गहणे त्ति अस्य व्याख्या –

तेसिं पडिच्छणे आणा, उग्गममविसुद्ध आभिओगं वा ।

पडिणीयया व देज्जा, बहुआगमियस्स विसमादी ।।५६२९।।

तेसिं हत्थातो भत्तादि पडिच्छनस्स तित्थकराणातिक्कमो, उग्गमादि असुद्ध परिभुजति, वसीकरण वा देज्ज "अम्ह एते पडिवक्खो" त्ति पडिणीयत्तणे । अहवा – एस बहु आगमिउ त्ति विसादि देज्ज ।

एगत्रसहिसवासेण सेहा णिद्धम्मा सीदति, तेसिं वा चरिय गेण्हति ।

सुय-वायण पडिच्छणादिसु वि समग्गिमादिदोसा ।

जुत्तिसुवण्णदिट्ठतेण वा सरिस चरणकरण कहेतो सेहादी हरेति । जम्हा एवमादि दोसा तम्हा णो किं चि तेसिं देज्जा, पडिच्छेज्ज वा, ण वा सवसेज्जा । एव सकरेतेण पुव्वभणिया दोसा परिहरिया भवति । ।।५६२९।।

भवे कारण –

असिवे ओमोयरिए रायदुट्ठे भए व गेलण्णे ।

अद्धाण रोहए वा, अयाणमाणे वि बितियपदं ।।५६३०।।

असिवादिकारणेहिं तेसिं दिज्जति पडिच्छति वा ।।५६३०।।

इम गेलण्णे –

गेलण्णं मे कीरति, न कीरती एव तुब्भ भणियम्मि ।

एस गिलाणो एत्थं, गवेसणा णिण्हओ सो य ।।५६३१।।

१ गा० ५६२७ । २ गा० ५६२७ । ३ गा० ५६२७ ।

अर्थात् अष्टविध कर्ममल जिससे वैठ जाए[1]—दूर हो जाए, वह निशीथ है।

स्पष्ट है कि यहाँ भी णिसीह शब्द में मूल धातु नि × सद् ही माना गया है। 'उपनिषद्' शब्द में भी उप × नि × सद् धातु है। उसका तात्पर्य भी पास में विठा कर गुरु द्वारा दी जाने वाली विद्या से है। अर्थात् उपनिषद् शब्द का भी 'रहस्य' 'गोप्य' एवं 'अप्रकाश्य' अर्थ की ओर ही संकेत है। निषेध शब्द में मूल धातु नि × सिध् है। अतः स्पष्ट ही है कि वह यहाँ विवक्षित नहीं है।

तात्पर्य यह है कि णिसीह—निशीथ शब्द का मुख्य अर्थ गोप्य है। अस्तु जो रात्रि की तरह अप्रकाशरूप हो, रहस्यमय हो, अप्रकाशनीय हो, गुप्त रखने योग्य हो, अर्थात् जो सर्व-साधारण न हो, वह निशीथ है। यह आचार-प्रकल्प शास्त्र भी वैसा ही है, अतः इसे निशीथ सूत्र कहा गया है। णिसीह=निशीथ शब्द का दूसरा अर्थ है—जो निसीदन करने में समर्थ हो। अर्थात् जो किसी का अपगम करने में समर्थ हो, वह 'णिसीह[2]=निशीथ है। आचारप्रकल्प शास्त्र भी कर्ममल का निसीदन – निराकरण करता है, अतएव वह भी निशीथ कहा जाता है। हाँ, तो उपर्युक्त दोनों अर्थों के आधार पर प्राकृत 'णिसीह' शब्द का सम्बन्ध 'निषेध' से नहीं जोड़ा जा सकता।

निशीथ चूर्णि में शिष्य की ओर से शंका की गई है कि[3] यदि कर्मविदारण के कारण आयारपकप्प शास्त्र को निशीथ कहा जाता है, तब तो सभी अध्ययनों को निशीथ कहना चाहिए; क्योंकि कर्मक्षय करने की शक्ति तो सभी अध्ययनों में है। गुरु की ओर से उत्तर दिया गया है कि अन्य सूत्रों के साथ समानता रखते हुए भी इसकी एक अपनी विशेषता है, जिसके कारण यह सूत्र 'निशीथ' कहा जाता है। वह विशेषता यह है कि यह शास्त्र, अन्यों को अर्थात् अधिकारी से भिन्न व्यक्तियों को, सुनने को भी नहीं मिलता[4]। अगीत, अति परिणामी और अपरिणामी अनधिकारी हैं, अतः वे उक्त अध्ययन को सुनने के भी अधिकार नहीं हैं, क्योंकि यह सूत्र अनेक अपवादों से परिपूर्ण है। और उपर्युक्त अनधिकारी अनेक दोषों से युक्त होने के कारण यत्र तत्र अर्थ का अनर्थ कर सकते हैं।

एक और भी शंका-समाधान दिया गया है। वह यह कि जिस प्रकार लौकिक आरण्यक आदि शास्त्र रहस्यमय होने से निशीथ हैं, उसी प्रकार प्रस्तुत लोकोत्तर शास्त्र भी निशीथ हैं। दोनों में रहस्यमयता की समानता होने पर भी प्रस्तुत आचारप्रकल्पशास्त्र-रूप निशीथ की यह विशेषता है कि वह कर्ममल को दूर करने में समर्थ है, जबकि अन्य लौकिक निशीथ—

---

१. यहाँ वैठने से कर्म का क्षय, क्षयोपशम और उपशम विवक्षित है।

२. गाथा में 'णिसीध' पाठ है। वह 'कथ' के 'कध' रूप की याद दिलाता है। मात्र शब्द-श्रुति के आधार पर 'णिसीध' का 'निषेध' से सम्बन्ध न जोड़िए, क्योंकि व्युत्पत्ति में 'णिसीयते जेण' लिखा हुआ है।

३. नि० गा० ७० की चूर्णि।

४. 'अविसेसे वि विसेसो सुइं पि जं णेइ अण्णेसिं'—नि० गा० ७०

आरण्यकादि वैसे नहीं हैं। आरण्यकादि शास्त्र तो सब कोई सुन सकते हैं, जब कि प्रस्तुत निशीथ शास्त्र अन्य तीर्थिकों के श्रुतिगोचर भी नहीं होता। स्वतीर्थिकों में भी अगीतार्थ आदि इसके अधिकारी नहीं हैं। यही इसकी विशेषता है।[1]

यह चर्चा भी इस बात को सिद्ध करती है कि णिसीह शब्द का सम्बन्ध निषेध से नहीं, किन्तु रहस्यमयता या गुप्तता से है। अर्थात् निसीह का जो अप्रकाश रूप निशीथ अर्थ किया गया है, वही मौलिक अर्थ है।

प्रस्तुत निशीथ सूत्र का तात्पर्य निषेध से नहीं है—इसकी पुष्टि निर्युक्ति, भाष्य तथा चूर्णि ने, जो इस शास्त्र का प्रतिपाद्य विषय या अधिकार बताया है, उससे भी होती है। कहा गया है कि आचारांग सूत्र के प्रथम नव ब्रह्मचर्य अध्ययनों और चार चूलाओं में उपदेश दिया गया है, अर्थात् कर्तव्याकर्तव्य का विवेक बताया गया है। किन्तु पाँचवीं चूला निशीथ में वितथकर्ता के लिये प्रायश्चित्त का विधान है। अर्थात् निशीथ चूला का प्रतिपाद्य विषय प्रायश्चित्त है[2]। अतएव स्पष्ट है कि प्रस्तुत 'णिसीह' शब्द का संस्कृतरूप 'निषेध' नहीं बन सकता।

'निशीथ' के पर्याय :

आचारांग की चूलाओं के नाम निर्युक्ति में जहाँ गिनाए हैं, वहाँ पाँचवीं चूला का नाम 'आयारपकप्प'[3]='आचार प्रकल्प' बताया गया है। आगे चलकर स्वयं निर्युक्तिकार ने पाँचवीं चूला का नाम 'निसीह'[4]=निशीथ भी दिया है। अतएव निशीथ अथवा आचार प्रकल्प, ये दोनों नाम इसके सिद्ध होते हैं[5]। टीकाकार भी इसका समर्थन करते हैं। देखिए,=टीकाकार ने 'आयारपकप्प' शब्द का पर्याय 'निशीथ' दिया है—"आचारप्रकल्पः—निशीथः" (आचा० नि० टी० २९१)। टीका में अन्यत्र चूलाओं के नाम की गणना करते हुए भी टीकाकार उसका नाम 'निशीथाध्ययन' देते हैं[6]। उक्त प्रमाणों पर से यह स्पष्ट हो जाता है कि ये दोनों नाम एक ही सूत्र की सूचना देते हैं।

निशीथ सूत्र के लिए पकप्प शब्द भी प्रयुक्त है। परन्तु, आयारपकप्प का ही संक्षिप्त नाम 'पकप्प' हो गया है, ऐसा प्रतीत होता है। क्योंकि निशीथ-चूर्णि के प्रारंभ में—"एवं कयप्पणामो पकप्पनामस्स विवरणं वन्ने"—(नि० चू० पृ० १) ऐसा चूर्णिकार ने कहा है। आचार शब्द का ...

---

१. नि० गा० ७० की चूर्णि
२. नि० गा० ७१
३. आचा० नि० २९१। नि० गा० २
४. आचा० नि० गा० ३४७
५. निशीथ-चूर्णिकार भी इसे निसीह चूला कहते हैं—नि० चू० १
६. आचा० नि० टी० गा० ११

रण्णा पडिसिद्ध मा एतेसि कोइ देज्ज। एव वत्थपादेसु अलब्भमाणेसु इमा जयणा – ज देवकुलादिसु कप्पडिएसु उच्छुद्ध त गिण्हति, विप्पइण्ण ज उक्कुरुडियादिसु ठित एसणादिसु वा जतति पूर्ववत् ॥५७२०॥

हितसेसगाण असती, तण अगणी सिक्कगा य वागा य ।
पेहुण-चम्मग्गहणे, भत्तं च पलास पाणिसु वा ॥५७२१॥

रण्णा रुट्ठेण साधूण उवकरण हरित, सेम ति अण्ण णत्थि, ताहे सीताभिभूता तणाणि गेण्हेज्जा, अगणि गेण्हेज्ज, अगणि वा सेवेज्ज। पत्तगबधाभावे सिक्कगडियादे काउ हिं (डे) ज्ज, सन्नादि प (व) क्कतया पाउरणा गेण्हेज्ज, पेहुण ति मोरगमया पिच्छया रयहरणट्ठाणे करेज्ज, पत्थरण पाउरण वा जह बोडियाण, चम्मय वा पत्थरणपाउरण गेण्हेज्ज, पलासपत्तिमादिसु भत्त गेण्हेज्ज, अहवा – भत्त कुडगादिसु गेण्हेज्जा पलासपत्तेसु वा भुजेज्ज। पाणीसु वा गहण भुजण वा ॥५७२१॥

असती य लिंगकरणं, पण्णवणट्ठा सयं व गहणट्ठा ।
आगाढकारणम्मि, जहेव हंसादिणं गहणं ॥५७२२॥

असति रण्णोवसमस्स, उवकरणस्स वा असति, ताहे परलिंग करेति। ज रण्णो अणुमत तेण लिंगेण ठिता ससमय-परसमयविदू वसभा रायाण पण्णवेति – उवसामेतीत्यर्थ। तेन वा परलिगेन ठिता उवकरण स्वयमेव गृण्हन्ति, एय चेव आगाढ। अण्णम्मि वा आगाढे जहेव हसमादितेल्लाण गहण दिट्ठ तहा इह पि आगाढे कारणे वत्थ-पत्तादियाण गहण कायव्व। ओसोवण-तालुग्घाडमादिएहिं अन्येन वाहिं सप्रयोगेनेत्यर्थ ॥५७२२॥ उवकरणहडे त्ति गयं।

इदाणि [1]भेदे त्ति –

दुविहम्मि भेरवम्मि, विज्जणिमित्ते य चुण्ण देवीए ।
सेट्ठिम्मि अमच्चम्मि य, एसणमादीसु जइयव्वं ॥५७२३॥

भेरव भयानक, त दुविह जीवियाओ चारित्ताओ वा ववरोवेति त रायाण पदुट्ठ विज्जादीहि वसीकरेज्जा, णिमित्तेण वा आउट्टिज्जति, चुण्णेहिं वा आघसमादीहिं वसीकज्जति। "देवी य" त्ति जा य तस्स महादेवी इट्ठा सा वा विज्जादीहिं आउट्टिज्जति, अहवा – खतगो खतिगा वा से जो वा रण्णो अवुक्कमणिज्जो, जइ तेहिं भण्णतो ठितो सुदर।

अह ण ठाति ताहे सेट्ठि भण्णति, अमच्च वा, जइ ते उवसमेज्जा। अहवा – जाव उवसमइ ताव सेट्ठि-अमच्चाण अवग्गहे अच्छति, जो वा रण्णो अवुक्कमणिज्जो तस्स वा घरे अच्छति, एसणादिसु जयति पूर्ववत्। पासजण (पासडगण) वा उवट्ठावेज्जा, जइ णाम ते उवसामेज्ज अप्पणिज्जाहिं अणुसासणादीहिं ॥५७२३॥

आगाढे अण्णलिंगं, कालक्खेवो बहिं निगमणं वा ।
कतकरणे करणं वा, पच्छायण थावरादीसु ॥५७२४॥

अणुवसमते एरिसे आगाढकारणे अण्णलिग करेति, तेण परलिगेण तत्थेव कालक्खेव करेति, अणज्जमाणा विसयतर वा गच्छति, जाहे सव्वहा उवसामेउ ण तीरइ ताहे "कयकरणे करणं व" त्ति सहस्स-जोही त सासेज्ज, अह त पि णत्थि ताहे "पच्छादणथावरादीसु" ति जाव पसादिज्जति ताव रुक्खग्गहणेसु

[1] गा० ५७०९।

त्ति साधुणो अक्खा, सगुणा जणवया सथरणिज्जा भवति । ते पुण गुणा आहारो उवही सेज्जा सथारगो, अण्णो य बहुविहो । उवधी सतत अविरुद्धो लब्भति, उच्चारपासवणभूमीओ य सति, सज्झायो सुज्झति । "विहाराए" त्ति दप्पेण णो असिवादिकारणे, तस्स चउलहु आणादिया य दोसा ॥५७२८॥

इमो णिज्जुत्तिवित्थारो –

आरियमणारिएसुं, चउक्कभयणा तु संकमे होति ।
पढमततिए अणुण्णा, बितियचउत्थाऽणणुण्णाया ॥५७२९॥

आरितातो जणवयाओ आरिय जणवय सकमइ, एव चउभगो कायव्वो, सेस कठ ॥५७२९॥

आरिय-आरियसंकम अद्धछ्वीसं हवंति सेसा तु ।
आरियमणारियसंकम, बोधिगमादी मुणेतव्वा ॥५७३०॥

अद्धछव्वीसाए जणवयाण अण्णतराओ अण्णतर चेव आरिय सकमति तस्स पढमभगो, आरियातो अण्णयरबोहिगविसय सकमतस्स बितिओ ॥५७३०॥

अणारियारियसंकम, अंधादमिला य होंति णायव्वा ।
अणारियअणारियसंकम, सग-जवणादी मुणेतव्वा ॥५७३१॥

अधदमिलादिविसयाओ आरियविसय सकमतस्स तइओ, अणारियातो सगविसयाओ अणारिय चेव जवणविसय सकमतस्स चउत्थो । एस खित्त पडुच्च चउभगो भणितो ॥५७३१॥

इम लिग पडुच्च भण्णति –

भिक्खुसरक्खे तावस, चरगे कावाल गारलिंगं च ।
एते अणारिया खलु, अज्जं आयारभंडेणं ॥५७३२॥

भिक्खूमादी अणारिया लिंगा, "अज्ज" ति आरिय, त पुण आयारभडय रयोहरण-मुहपोत्तिया-चोलपट्टकप्पा य पडिग्गहो समत्तो य ।

आयारभडग एत्थ वि चउभगो कायव्वो ।

आरियलिंगाओ आरियलिंग एस पढमभगो । एत्थ थेरकप्पातो जिणकप्पातिसु सकम करेति । बितिओ कारणिओ, ततिए भिक्खुमादि उवसतो, चउत्थे भिक्खुमादी सरक्खादीसु ।

अहवा चउभगो – आयरिओ आरियलिंग सकमति भावणा कायव्वा ।

अहवा चउभगो – आरिएण लिंगेण आरियविसय सकमति, भावणा कायव्वा । जो आरिएण वि लिगेण अणारियविसय सकमति, एत्थ सुत्तणिवातो । सेस विकोवणट्ठा भणिय ॥५७३२॥

को पुण आरिओ, को वा अणारिओ ?

अतो भण्णति –

मगहा कोसंबीया, थूणाविसओ कुणालविसओ य ।
एसा विहारभूमी, पत्ता वा आरियं खेत्तं ॥५७३३॥

इह सोलसमुद्देसगे चउलहुगाऽविकारो – तुम च अणारियविसयसकमे चउगुरु देसि, अतो सुत्तविसवातो ।

आयरिओ भणइ – तुम सुत्तणिवात ण याणसि । इह सुत्तणिवातो मणसकप्पे चउलहु, पदभेदे चउगुरु, पथमोइण्णेसु छल्लहु, अणारियविसयपत्तेसु छग्गुरु, सजमायविराहणाए सट्ठाण । तत्थ सजमविराहणाए "छक्काय चउसु लहु" गाहा भावणिज्जा । आयविराहणाए चउगुरुग परितावणाई वा ।।५७३६।।

आणादिणो य दोसा, विराहणा खंदएण दिट्ठंतो !
एवं ततियविरोहो, पडुच्चकालं तु पण्णवणा ।।५७४०।।

आयविराहणाए खदगो दिट्ठतो –

दोच्चेण आगतो खंदएण वाए पराजिओ कुवितो ।
खंदगदिक्खा पुच्छा णिवारणाऽऽराध तव्वज्जा ।।५७४१।।

चपा णाम णगरी, तत्थ खदगो राया । तस्स भगिणी पुरदरजसा उत्तरापथे [1]कुभाकारकडे णगरे डडगिस्स रण्णो दिण्णा ।

तस्स पुरोहिओ मरुगो पालगो, सो य अकिरियदिट्ठी । अण्णया सो दूओ आगतो चप । खदगस्स पुरतो जिणसाहुअवण्ण करेति । खदगेण वादे जिओ, कुविओ, गओ स-णगर । खंदगस्स वह चितेतो अच्छइ ।

खदगो वि पुत्त रज्जे ठवित्ता मुणिसुव्वयसामिअंतिए पचसयपरिवारो पव्वतितो अधीयसुयस्स गच्छो अणुण्णाओ ।

अण्णया भगिणी दिच्छामि त्ति जिण पुच्छति । सोवस्सग्ग से कहिय ।

पुणो पुच्छति – "आराहगो ण व ?" त्ति ।

कहिय जिणेण – तुमं मोत्तु आराहगा सेसा । गतो णिवारिज्जतोऽवि ।।५७४१।।

सुतो पालगेण आगच्छमाणो –

उज्जाणाऽऽउह णूमेण, णिवकहणं कोव जंतयं पुव्वं ।
बंध चिरिक्क णिदाणे, कंबलदाणे रजोहरणं ।।५७४२।।'

पालगेण अग्गुज्जाणे पचसया आयुहाण ठविया । साहवो आगया तत्थ ठिता । पुरदरजसा दिट्ठा, खदगो कबलरयणेन पडिलाभितो । तत्थ णिसिज्जाओ कयाओ ।

पालगेण राया वुग्गाहितो । एस परिसहपराजिओ आगओ तुम मारेउ रज्ज अहिट्ठेहेति ।

कह णज्जति ?, आयुधा दसिया ।

कुविओ राया, पालगो भणितो – मारेहि त्ति । तेण इक्खुजत कय ।

खदगेण भणिय – 'म पुव्व मारेहि ।' जतसमीवे खभे बधिउ ठविओ, साहु पीलिउ रुहिरचिरिक्काहि खदगो भरितो । खुड्डगो आयरिय विलवतो, सो वि आराहगो । खदगेण णियाण कत ।।५७४२।।

देकर जिस प्रकार 'पकप्प' नाम हुआ, उसी प्रकार 'पकप्प' शब्द का छेद देकर केवल 'आयार' भी इसका नाम हो गया है—ऐसा गुणनिष्पन्न नामों की सूचि के देखने से पता चलता है।

"आयारपकप्पस्स उ इमाइं गोण्णाइं णामधिज्जाइं आयारमाइयाइं"—नि० गा० २।

निशीथ के जो अन्य गुणनिष्पन्न नाम हैं, वे ये हैं=अग्ग=अग्र, चूलिया=चूलिका[१]। यह सब, नाम के एक देश को नाम मानने की प्रवृत्ति का फल है। साथ ही, इस पर से यह भी ध्वनित होता है कि आचारांग का यह अध्ययन सबसे ऊपर है, या अंतिम है।

अन्यत्र भी निशीथ सूत्र के निशीथ[२], 'पकप्प'[३]=प्रकल्प और 'आयारपकप्प'[४]=आचार प्रकल्प ये नाम मिलते हैं।

दिगम्बर परम्परा में, जैसा कि हम पूर्व बता आए हैं, इसके नाम 'निसिहिय', 'निसीहिय' 'निषिधक', और 'निषिद्धिका' प्रसिद्ध हैं।

निशीथ का आचारांग में संयोजन और पृथक्करण :

आचारांग-निर्युक्ति की निम्न गाथा से स्पष्ट है कि प्रारंभ में मूल आचारांग केवल प्रथम स्कंध के नव ब्रह्मचर्य अध्ययन तक ही सीमित था। पश्चात् यथासमय उसमें वृद्धि होती गई। और वह प्रथम 'बहु' हुआ और तदनन्तर-'बहुतर' अर्थात् आचारांग के परिमाण में क्रमशः वृद्धि होती गई, यह निम्न गाथा पर से स्पष्टतः प्रतिलक्षित होता है :

णवबंभचेरमइओ अट्ठारसपयसहस्सिओ वेओ।
हवइ य सपंचचूलो बहु-बहुतरओ पयग्गेण।

—आचा० नि० ११

निर्युक्ति में प्रयुक्त 'बहु' और 'बहुतर' शब्दों का रहस्य जानना आवश्यक है। आचारांग के ही आधार पर प्रथम की चार चूलाएँ बनीं और जब वे आचारांग में जोड़ी गईं, तब वह 'बहु' हुआ। प्रारंभ की चार चूलाएँ 'निशीथ' के पहले बनीं, अतएव वे प्रथम जोड़ी गईं। इसका प्रमाण यह है कि समवाय[५] और नंदी[६]—दोनों में आचारांग का जो परिचय उपलब्ध है, उसमें मात्र २१ ही अध्ययन कहे गये हैं। तथा अन्यत्र समवाय, में जहाँ आचार, सूयगड, स्थानांग के अध्ययनों की संख्या का जोड़ ५७ बताया गया है, वहाँ भी निशीथ का वर्जन करके आचारांग के मात्र २५ अध्ययन गिनने पर ही वह जोड़ ५७ बनता है[७]। अतएव स्पष्ट है कि प्राचीन

१. नि० गा० ३
२. व्यव० विभाग २, गा० १६८;
३, व्यव० विभाग २ गा० १३७, २२१, २५०, २५४; व्यव० उद्देश ३; गा० १६६
४. व्यवहार सूत्र उद्देश ३, सू० ३, पृ० २७
५. समवाय सूत्र १३६
६. नंदी सू० ४५
७. समवाय सू० ५७

अणुयाणे अणुयाती, पुप्फारुहणाइ उक्खिरणगाइं ।
पूयं च चेतियाणं, ते वि सरज्जेसु कारेंति ॥५७५४॥

अणुजाणं रहजत्ता, तेसु सो राया अणुजाणति, भडचडगसहितो रहेण सह हिंडति, रहेसु पुप्फारुहणं करेति, रहग्गतो य विविधफले खज्जगे य कवड्डगवत्थमादी य उक्खिरणे करेति, अन्नेसि च चेइयघरट्ठियाण चेइया पूय करेति, ते वि रायाणो एव चेव सरज्जेसु कारावेति ॥५७४७॥

इम च ते पच्चंतियरायाणो भणति –

जति मं जाणह सामिं, समणाणं पणमधा सुविहियाणं ।
दव्वेण मे ण कज्जं, एयं खु पियं कुणह मज्झं ॥५७५५॥

गच्छह सरज्जेसु, एव करेह त्ति ॥५७५५॥

वीसज्जिता य तेणं, गमणं घोसावणं सरज्जेसु ।
साहूण सुहविहारा, जाया पच्चंतिया देसा ॥५७५६॥

तेण सपइणा रण्णा विसज्जिता, सरज्जाणि गतु अमाघात घोसति, चेइयवरे य करति, रहजाणे य । अधदमिलकुडक्कमरहट्ठता एते पच्चतिया, सपतिकालातो आरब्भ सुहविहारा जाता ।

सपतिणा साधू भणिया – गच्छह एते पच्चतियविसए, विवोहेता हिंडह ।

ततो साधूहि भणिय – एते , ण किंचि साधूण कप्पाकप्प एसण वा जाणति, कह विहरामो ? ॥५७५६॥

ताहे तेण सपतिणा –

समणभडभावितेसुं, तेसुं रज्जेसु एसणादीहिं ।
साहू सुह पविहरिता, तेणं चिय भद्दगा ते उ ॥५७५७॥

समणवेसधारी भडा विसज्जिया बहू, ते जहा साधूण कप्पाकप्प तहा त दरिसतेहि एसणसुद्ध च भिक्खग्गहण करेतेहि जाहे सो जणो भावितो ताहे साधू पविट्ठा, तेसि सुहविहारं जात, ते य भद्दया तप्पभिई जाया ॥५७५७॥

उदिण्णजोहाउलसिद्धसेणो, स पत्थिवो णिज्जितसत्तुसेणो ।
समंततो साहुसुहप्पयारे, अकासि अंधे दमिले य घोरे ॥५७५८॥

उदिण्णा सजायवला, के ते ?, जोहा, तेहि आउलो–बहवस्ते इत्यर्थ । तेण उदिण्णाउलत्तेण सिद्धा सेणा जस्स सो उदिण्णजोहाउलसिद्धसेणो । उदिण्णजोहाउलसिद्धसेणत्तणतो चेव विपक्खभूता सत्तुसेणा ते निज्जिया जेण स पत्थिवो णिज्जियसत्तुसेणो सो अधडविडाईसु अकासि कृतवान् सुहविहारमित्यर्थ ॥५७५८॥

जे भिक्खू दुगुंछियकुलेसु असणं वा पाणं वा खाइमं वा साइमं वा पडिग्गाहेइ, पडिग्गाहेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥२७॥

जाहे चउलहु पत्तो ताहे इमाए जयणाए गेण्हति –

अण्णत्थ ठवावेउं, लिंगविवेगं च काउ पविसेज्जा ।
काऊण व उवयोगं, अदिट्ठे मत्तादि संवरितो ।।५७६४।।

सो दुगुछितो असणवत्थादी अप्पसागारिय अण्णत्थ सुण्णघरादिसु ठवाविज्जति, तम्मि गते पच्छा गेण्हति । अहवा – रओहरणादिउवकरण अण्णत्थ ठवेतु सरक्खादिपरलिग काउ जहा अयसादिदोसा ण भवति तहा पविसिउ गेण्हति । अहवा – मज्झण्हादी विअणकाले दिगावलोयण काउ अण्णेण अदिस्सतो मत्तय पत्त वा वासकप्पमादिणा सुट्ठु आवरेत्ता पविसति गेण्हइ य, वत्थादिय पि जहा अविसुद्ध तहा गेण्हति, वसहिं अण्णत्थ अलभतो बाहि सावयतेणभएसु वसहिं गेण्हेज्ज, जहा ण णज्जति तहा वसति । सज्झाय ण करेति । रायदुट्ठादिसु अभिगमो अप्पसागारिए सज्झायझाणधम्मकहादी वि करेज्ज ।।५७६४।।

जे भिक्खू असणं वा पाणं वा खाइमं वा साइमं वा पुढवीए णिक्खिवइ, णिक्खिवंतं वा सातिज्जति ।।३३।।

जे भिक्खू असणं वा पाणं वा खाइमं वा साइमं वा संथारए णिक्खिवइ, णिक्खिवंतं वा सातिज्जति ।।३४।।

जे भिक्खू असणं वा पाणं वा खाइमं वा साइमं वा वेहासे णिक्खिवइ णिक्खिवंतं वा सातिज्जति ।।३५।।

पुढवि-तण-वत्थमातिसु, संथारे तह य होइ वेहासे ।
जे भिक्खू णिक्खिवती, सो पावति आणमादीणि ।।५७६५।।

पुढविग्गहणातो उव्वट्टगादिभेदा दट्ठव्वा, दब्भादितणसथारए वा, वत्थे, वत्थसथारए वा, कवलादिफलहसथारए वा, वेहासे वा दोरगेण उल्लवेइ, एवमादिपगाराण अण्णयरेण जो णिक्खिवइ तस्स चउलहु, तस्स आणादिया य दोसा, सजमायविराहणा य ।।५७६५।।

तत्थ सजमे –

तक्कंतपरोप्परओ, पलोट्टछिण्णे य भेद कायवहो ।
अहि-मूसलाल-विच्छुय, संचयदोसा पसंगो वा ।।५७६६।।

सुण्णे भत्तपाणे चउरिंदियाओ घरकोइलातो तक्केंति, त पि मज्जारा, एव तक्केतपरप्परो डेप्पत वातादिवसेण वा पलोट्टंति छक्कायविराहणा, आयपरिहाणी य वेहासट्ठित मूसगादिछिण्णे भायणभेदो छक्कायवहो वा आयपरिहाणी य । एसा सजमविराहणा ।

इमा आयविराहणा –

अहिस्स मूसगस्स वा उस्सिसघमाणस्स लाला पडेज, णीससतो वा विस मुचेज, विच्छुगाइ वा पडेज, विस वा मुचेज, जे वा सण्णिहिसचए दोसा तत्थ वि णिक्खित्ते ते चेव दोसा, पसगतो सण्णिहिं पि ठुवेज्जा ।।५७६६।।

अण्णउत्थिएहिं समं भुंजति अण्णउत्थियाण वा मज्झे ठितो परिवेढितो भुंजति, आणादिया दोसा, ओहओ चउलहु पच्छित्तं ॥५७७१॥

विभागतो इमं –

पुव्वं पच्छा संथुय, असोयवाई य सोयवादी य ।
लहुगा चउ जमलपदे, चरिमपदे दोहि वी गुरुगा ॥५७७२॥

पुव्वसंथुया असोय-सोयवाति य, पच्छासंथुया असोय-सोय त्ति । एतेसु चउसु पदेसु लहुगा चउरो त्ति, जमलपदं वि कालतवेहिं विसेसिज्जंति जाव चरिमपदं । पच्छासंथुतो सोयवादी तत्थ चउलहुगं तं कालतवेहिं दोहिं वि गुरुगं भवति ॥५७७२॥

थीसुं ते च्चिय गुरुगा, छल्लहुगा होंति अण्णतित्थीसु ।
परउत्थिणि छग्गुरुगा, पुव्वावरसमणि सत्तऽट्ठ ॥५७७३॥

एयासु चेव इत्थीसु पुरपच्छअसोयसोयासु चउगुरुगा कालतवेहिं विसेसिता । एतेसु चेव अण्णतित्थियपुरिसेसु चउसु छल्लहुगा कालतवविसिट्ठा । एयासु चेव परतित्थिणीसु छग्गुरुगा । पुव्वसंथुयासु समणीसु छेदो, अवरं त्ति पच्छसंथुयासु समणीसु अट्ठमं ति मूलं ॥५७७३॥

अयमपरः कल्पः –

अहवा वि णालबद्धे, अणुव्वओवासए य चउलहुगा ।
एयासुं चिय थीसुं, णालसम्मे य चउगुरुगा ॥५७७४॥

णालबद्धेण पुरिसेण अणालबद्धेण य गहिताणुव्वतो वा सावगेण, एतेसु दोसु वि चउलहुगा । एयासु चिय दोसु इत्थीसु णालबद्धे य अविरयसम्मद्दिट्ठिम्मि एतेसु वि चउगुरुगा ॥५७७४॥

अण्णालदंसणित्थिसु, छल्लहु पुरिसे य दिट्ठआभट्ठे ।
दिट्ठित्थि पुम अदिट्ठे, मेहुणि भोती य छग्गुरुगा ॥५७७५॥

इत्थीसु अणालबद्धासु अविरयसम्मद्दिट्ठीसु दिट्ठाभट्ठेसु पुरिसेसु एतेसु दोसु वि छल्लहुगा, इत्थीसु दिट्ठाभट्ठासु पुरिसेसु अ अदिट्ठाभट्ठेसु [1]मेहुणि त्ति माउलपिउस्सयधाता, भोइय त्ति पुव्वभज्जा, एतेसु चउसु वि छग्गुरुगा ॥५७७५॥

अद्दिट्ठाभट्ठासु थीसुं संभोगसंजती छेदो ।
असमणुण्णसंजतीए मूलं थीफाससंबंधो ॥५७७६॥

इत्थीसु अदिट्ठाभट्ठासु सभोइय-संजतीसु य एयासु दोसु वि छेओ, असमणुण्ण त्ति असंभोइय-संजतीसु मूलं, इत्थीहिं सह भुंजतस्स फासे सबंधो, आयपरोभयदोसा, दिट्ठे संकातिया य दोसा, जति संजतिसंतितो समुद्देसो तो चउलहु अधिकरणं वा ॥५७७६॥

पुव्वं पच्छाकम्मे, एगतरदुगुंछ उड्डुड्डाहो ।
अण्णोण्णामयगहणं खद्धग्गहणे य अचियत्तं ॥५७७७॥

---

१ मेहुणि मामाकी तथा भूआ की लडकी तथा साली (पत्नी की बहिन) ।

जे भिक्खू आयरिय-उवज्झायाणं सेज्जासंथारगं पाएणं संघट्टेत्ता हत्थेणं अणणुण्णवेत्ता धारयमाणो गच्छति, गच्छंतं वा सातिज्जइ॥सू०॥३८॥

आचार्य एव उपाध्याय आयरिय-उवज्झाओ भण्णति, केसिंचि आयरिओ केसिंचि आयरिअ-उवज्झातो । अहवा – जहा आयरियस्स तहा उवज्झायस्स वि न सघट्टेज्जति । पातो सव्वाऽफरिसि त्ति अविणतो । हत्थेण अणणुण्णवति – न हस्तेन स्पृष्ट्वा नमस्कारयति मिथ्यादुष्कृत च न भाषते, तस्स चउलहु ।

सेज्जासथारग्गहणातो इमे वि गहिया –

आहार उवहि देहं, गुरुणो संघट्टियाण पादेहि ।
जे भिक्खु ण खामेति, सो पावति आणमादीणि ॥५७८१॥

आहारे त्ति – जत्थ मत्तगे भत्त धारित, उवहि त्ति – कप्पादी, सेस कठ ॥५७८१॥

कहं पुण संघट्टेति ?, भण्णति –

पविसंते णिक्खमंते, य चंकमंते व वावरंते वा ।
चेट्ठणिवण्णाऽऽउंटण, पसारयंते व संघट्टे ॥५७८२॥

पथे वा चकमतो विस्सामणादिवावार करेतो, सेस कठ ॥५७८२॥

चोदगाह – "जुत्त आहारउवधिदेहस्स य अघट्टण । सथारगभूमी किं ण सघट्टिज्जति ? को वा उवकरणातिसघट्टिएसु दोसो ?,

आचार्य आह –

कमरेणु अबहुमाणो, अविणय परितावणा य हत्थादी ।
संथारग्गहणमत्रा, उच्छुवणस्सेव वति रक्खा ॥५७८३॥

कमेसु त्ति-पदेसु जा रेणू सा सथारगभूमीए परिसडति, उवकरणे वा लग्गति, अबहुमाणो अविणओ य सघट्टिए कओ, अण्ण च उच्छूवणे रक्खियव्वे वतिं रक्खति – ण भजण देति, तस्स रक्खणे उच्छुवण रक्खित चेव, एव सथारगस्स असघट्टणे गुरुस्स देहातिया दूरातो चेव परिहरिता । सजमायविराहणा य, आयरिय च अवमण्णतेण सजमो विराहिओ ।

कह ? जेण तम्मि चेव णाणदसणचरित्ताणि अधीणाणि –

"[1]जे यावि मदे त्ति गुरु०" वृत्त ।

आयविराहणा – जाए देवयाए आयरिया परिग्गहिता सा विराहेज्ज, अण्णो वा कोइ आयरिय पक्खित्तो साधू उट्ठेज्जा, तत्थ असखडादी दोसा ॥५७८३॥

वितियपदमणप्पज्झे, ण खमे अविकोविते व अप्पज्झे ।
खित्तादोसण्णं वा, खामे आउट्टिया वा वि ॥५७८४॥

अणप्पज्झो सेहो वा अजाणतो ण खामेति, आयरिय वा खितादिचित्त सारवेतो दित्तचित्त वा उवेच्च सघट्टेज्जा, ओसण्ण वा "म एए ओसण्णमिति परिभवति" त्ति उज्जमेज्जा, एव आउट्टियाए वि सघट्टेज्जा पच्छा खमावेइ ॥५७८४॥

---

१ दशवै० अ० ९ गा० २ ।

मज्झि त्ति – मुहताओ मुहाओ जहा दो वि अना चउरगुल कमति एय रयताणप्पमाण ॥५७९१॥

अहवा – जिणकप्पियस्स कप्पप्पमाण इम –

अवरो वि य आएसो, संडासो सोत्थिए निवण्णे य ।
जं खंडियं दढं तं, छम्मासे दुब्बलं इयरं ॥५७९२॥

आदेसो त्ति – प्रकार । सडासो त्ति कप्पाण दीहप्पमाण, एय जाणुसडासगातो आढत्त पुते पडिच्छादेतो जाव वध एय दीहत्तण । सोत्थिए त्ति – दो वि वोधव्वकण्णे दोहिं वि हत्थेहिं घेत्तु दो वि वाहुसीसे पावति ।

कह ? उच्यते – दाहिणेग वाम वाहुसीस, एव दोण्ह वि कलादीण हृदयपदेसे सोत्थियागारो भवति । एय कप्पाण वोधव्व ॥५७९२॥

एत्थ आएसेण इम कारण –

संडासछिड्डेण हिमाइ एति, गुत्ता अगुत्ता वि य तस्स सेज्जा ।
हत्थेहि तो गेण्हिय दो वि कण्णे, काऊण खंधे सुवई व झाई ॥५७९३॥

जिणकप्पियाण गुत्ता अगुत्ता वा सेज्जा होज्जा, ताए सेज्जाए उक्कुडुअणिविट्ठस्स सडासछिड्डेसु अही हिमवातो वा आगच्छेज्ज, तस्स रक्खणट्ठाते, तेण कारणेण एस पाउरणविही, कप्पाण एय पमाण भणिय – "दो वि कण्णे" त्ति दो वि वत्थस्स कण्णे घेत्तुं णिवण्णो णिसण्णो वा सुवति झायति वा । सो पुण उक्कुडुतो चेव अच्छइ प्रायो जग्गति य ।

केई भणति – उक्कुडुओ चेव णिद्दाइओ सुवइ ईसिमेत्त ततियजामे ।

सो पुण केरिस वत्थ गेण्हति ? ज "[1]खडिय" ति छिण्ण ज एक्कातो पासाउ, त च ज छम्मास धरति जहण्णेण त दढ गेण्हति, [2]"इयर" ति ज छम्मास ण धरति त दुब्बल ण गेण्हति ॥५७९३॥ एयं गच्छणिग्गयाण पमाण गत ।

इदाणि गच्छवासीण प्रमाण प्रमाण-प्रमाण च भण्णत्ति –

कप्पा आतपमाणा, अड्ढाइज्जा उ वित्थडा हत्थे ।
एवं मज्झिम माणं, उक्कोसं होंति चत्तारि ॥५७९४॥

उक्कोसेण चत्तारि हत्था दीहत्तणेण एय पमाण अणुग्गहत्थ थेराण भवति, पुहुत्ते वि छ अगुला समाधिया कज्जति ॥५७९४॥

मज्झिमुक्कोसएसु दोसु वि पमाणेसु इम कारण –

संकुचित तरुण आतप्पमाण सुवणे ण सीतसंफासो ।
दुहतो पेल्लण थेरे, अणुचिय पाणादिरक्खा य ॥५७९५॥

तरुणभिक्खू वलवतो, सो सकुचियपाओ सुवति, जेण कारणेण तस्स ण सीतस्पर्शो भवति तेण तस्स कप्पा आयप्पमाणा । जो पुण थेरो सो खीणवलो ण सक्केति सकुचियपादो सुविउ तेण तस्स अहियप्पमाणा

---

१ गा० ५७९२ । २ गा० ५७९२ ।

आगम-संकलन काल में एक काल ऐसा रहा है, जब चार चूलिकाएँ तो आचारांग में जोड़ी जा चुकी थीं, किन्तु निशीथ नहीं जोड़ा गया था। एक समय आया कि जब निशीथ भी जोड़ा गया, और तभी वह 'बहु' से 'बहुतर' हो गया। और उसके २६ अध्ययन हुए।

नंदी सूत्र और पक्खियसुत्त – दोनों में आगमों की जो सूची दी गई है, उसे देखने पर स्पष्ट हो जाता है कि उस काल तक आगमों के वर्गीकरण में छेद-जैसा कोई वर्ग नहीं था। नंदी और पक्खियसुत्त में अंग बाह्य ग्रन्थों की गणना के समय, कालिक श्रुत में[1], निशीथ को स्थान मिला है। इससे स्पष्ट है कि एक ओर नंदी के अनुसार ही आचारांग के २५ अध्ययन हैं, तथा दूसरी ओर नंदी में ही अंग बाह्य ग्रन्थों की सूची में निशीथ को स्थान प्राप्त है। अस्तु यही कहना पड़ता है कि उक्त नंदी सूची के निर्माण के समय निशीथ आचारांग से पृथक् था। किन्तु आचारांग-निर्युक्ति के अनुसार निशीथ आचारांग की ही पांचवीं चूला अर्थात् २६ वां अध्ययन है। इसका फलितार्थ यह होता है कि नन्दीगत आगम-सूची का निर्माण-काल और आचारांग-निर्युक्ति की रचना का काल, इन दोनों के बीच में ही कहीं निशीथ आचारांग में जोड़ा गया है।

और यदि नंदी को निर्युक्ति[2] के बाद की रचना माना जाए, तब तो यह कहना अधिक ठीक होगा कि इस बीच वह (निशीथ) 'आचारांग' से पृथक् किया गया था।

अब प्रश्न यह है कि निशीथ को आचारांग में ही क्यों जोड़ा गया? पूर्वगत श्रुत के आचार नामक वस्तु के आधार पर निशीथ का निर्माण हुआ था और उसका वास्तविक एवं प्राचीन नाम आचार-प्रकल्प था। अतएव कल्पना होती है कि संभवतः विषय साम्य की दृष्टि से ही वह आचारांग में जोड़ा गया हो। और ऐसा करने का कारण यह प्रतीत होता है कि आचार-प्रकल्प में प्रायश्चित्त का विधान होने से यह आवश्यक था कि वह प्रामाणिकता की दृष्टि से स्वयं तीर्थंकर के उपदेश से कम न हो! अंग ग्रन्थों का प्रणयन तीर्थंकर के उपदेश के आधार पर गणधर करते हैं, ऐसी मान्यता होने से अंगों का ही लोकोत्तर आगमरूप प्रामाण्य सर्वाधिक है। अस्तु प्रामाण्य की प्रस्तुत उत्तम कोटि के लिए ही आचार प्रकल्प-निशीथ को आचारांग का एक अंश या चूला माना गया, हो तो कोई आश्चर्य की बात नहीं।

प्रथम की चार चूला तो आचारांग के आधार पर ही बनी थीं[3]। अतएव उनका समावेश तो आचारांग की चूला-रूप में सहज था ही। किन्तु पांचवीं चूला निशीथ का आधार आचारांग न होने पर भी उसे आचारांग में ही सम्मिलित करने में इस लिये बाधा नहीं हो सकती थी कि समग्र अंग ग्रन्थों के मूलाधार पूर्वग्रन्थ माने जाते थे। प्रस्तुत चूला का निर्माण पूर्वगत आचार वस्तु नामक प्रकरण से हुआ था[4]। और विषय भी आचारांग से संबद्ध था। निशीथ का एक नाम 'आचार'[5] भी है। यह भी इसी ओर संकेत करता है।

---

१. हि० कै० पृ० ३४–३५
२. निर्युक्तियों जिस रूप में आज उपलब्ध हैं, वह उनका अंतिम रूप है; किन्तु उनका निर्माण तो उस से पहले प्रारम्भ हो गया था।
३. आचा० नि० गा० २८८–२९०
४. आचा० नि० गा० २९१
५. नि० गा० ३

संथारुत्तरपट्टो, अड्डाइज्जा य आयया हत्था ।
दोण्हंपि य वित्थारो, हत्थो चउरंगुलं चेव ॥५८०३॥

उण्णिओ संथारपट्टगो, खोमिओ तप्पमाणो उत्तरपट्टगो, सेसं कण्ठ्यं ॥५८०३॥

इमो चोलपट्टगो –

दुगुणो चउग्गुणो वा, हत्थो चउरंस चोलपट्टो य ।
थेरजुवाणाणट्ठा, सण्हे थूलंमि य विभासा ॥५८०४॥

दढो जो सो दीहत्तणेण दो हत्था वित्थारेण हत्थो सो दुगुणो कतो समचउरंसो भवति, जो दढ-दुब्बलो सो दीहत्तणेण चउरो हत्था, सो वि चउगुणो कओ हत्थमेत्तो चउरंसो भवति, एगगुण ति गणणप्पमाणे, उण्णिया एगा णिसिज्जा पमाणप्पमाणेन हस्तप्रमाणा तप्पमाणा चेव तस्स अतो पच्छादणा खोमिया णिसेज्जा ॥५८०४॥

चउरंगुलं वितत्थी, एयं मुहणंतगस्स उ पमाणं ।
बीओवि य आएसो, मुहप्पमाणेण निप्फन्नं ॥५८०५॥

वितियप्पमाण विकण्णकोणगहिय णासिगमुह पच्छादेति जहा किकाडियाए गठी भवति ॥५८०५॥

गोच्छयपादट्ठवणं, पडिलेहणिया य होइ णायव्वा ।
तिण्हं पि उ प्पमाणं, वितत्थि चउरंगुलं चेव ॥५८०६॥ कण्ठ्या

जो वि दुवत्थ तिवत्थो, एगेण अचेलतो व संथरती ।
ण हु ते खिंसंति परं, सव्वेण वि तिण्णि घेत्तव्वा ॥५८०७॥

जिणकप्पियाण गहण, थेरकप्पियाण परिभोग प्रति, जो एगेणं संथरति सो एग गेण्हति परिभुजति वा । जो दोहिं संथरति सो दो गेण्हति परिभुजति वा, एव ततिओ वि ।

जिणकप्पिओ वा अचेलो जो संथरति सो अचेलो चेव अच्छति, एस अभिग्गहविसेसो भणिओ । एतेण अभिग्गहविसेसट्ठिएण अधिकतरवत्थो ण हीलियव्वो ।

किं कारण ? जम्हा जिणाण एसा आणा, सव्वेण वि तिण्णि कप्पा घेत्तव्वा ।

थेरकप्पियाण जइ अपाउएण संथरति तहावि तिण्णि कप्पा णियमा घेत्तव्वा ॥५८०७॥

कप्पाण इमो गुणो –

अप्पा असंथरंतो, निवारिओ होति तिहि उ वत्थेहिं ।
गिण्हति गुरू विदिण्णे पगासपडिलेहणे सत्त ॥५८०८॥

सीतादिणा असंथरतस्स त असंथरण वत्थपरिभोगेण णिवारित भवति। ते य वत्थे गुरुणा आयरिएण दिण्णे गेण्हति, पगासपडिलेहण त्ति अचोरहरणिज्जे, उक्कोसेण सत्त गेण्हति ॥५८०८॥

इम उस्सग्गतो, अववादियं च प्रमाण –

तिण्णि कसिणे जहण्णे, पंच य दढदुब्बला य गेण्हेज्जा ।
सत्त य परिजुण्णाइं, एयं उक्कोसयं गहणं ॥५८०९॥

दोहिं वि गुरु । परिकम्मणति वा सिव्वणति वा एगट्ठ । एगसरा डडी उव्वट्टणि घग्गरसिव्वणि य एसा अविही, झसकटगदुसरिगा य विही ॥५८१५॥

इदाणि "[1]विभूस" त्ति –

उदाहडा जे हरियाहडीए, परेहि धोतादिपदा उ वत्थे ।
भूसाणिमित्तं खलु ते करेते, उग्घातिता वत्थ सवित्थरा उ ॥५८१६॥

"उदाहड" त्ति भणिया "[2]हरिया हडिया" सुत्ते । परेहिं ति तेणगेहिं जे धोतातो पदा कता ते जति अप्पणा विभूसावडियाए करेति त जहा धोवति वा, रयति वा, घट्टेति वा, मट्ठ वा करेति, [3]विवरित्तरगेहिं वा रयति तस्स चउलहु । सवित्थरग्गहणातो धोतादिपदे करेतस्स जा आयविराहणा तासु ज पच्छित्त त च भवति ॥५८१६॥

विभूस करेतस्स इमो अभिप्पाओ –

मलेण घत्थं बहुणा उ वत्थं, उज्झाइओ हं चिमिणा भवामि ।
हं तस्स धोवम्मि करेमि तत्तिं, वरं ण जोगो मलिणाण जोगो ॥५८१७॥

मलिन वस्त्र तेन वाऽह विरूपो दृश्ये, यस्माद्विरूपोऽह दृश्ये तस्मात्तस्य वस्त्रस्य धौतव्ये "तत्ति" त्ति – जेण त धोव्वति. गोमुत्तातिणा त उदाहरामि, "वर ण जोगो" त्ति – वर मे अवत्थगस्स कप्पति अच्छिउ, ण य मलिणेहिं वत्थेहिं सह सजोगो ॥५८१७॥ कारणे पुणो धोवतो सुद्धो ।

चोदगो भणाति – णणु धोवतस्स । "[4]विभूसा इत्थीससग्गी" सिलोगो ।

आयरिओ भणइ –

कामं विभूसा खलु लोभदोसो, तहावि तं पाहूणतो ण दोसो ।
मा हीलणिज्जो इमिणा भविस्सं, पुव्विड्ढिमादी इय संजती वि ॥५८१८॥

काम चोदगाभिप्पायस्स अणुमयत्थे, खलु अवधारणे, जा एपा विभूसा – एस लोभ एवेत्यर्थ , तहावि त वत्थ "[5]सुविभूसित कारणे काऊण पाउरणे ण दोसो भवति ।

रायाइइड्ढिम जो इड्ढि विहाय पव्वइओ सो चिंतेति – "मा इमस्स प्रवुहजणस्स इहलोकपडिबद्धस्स इमेहिं मलिणवत्थेहिं हीलणिज्जो भविस्सामि त्ति । एस सावसत्तो जेग त तारिस विभूतिं परिचज्ज इम अवत्थ पत्तो [6]किमण्ण तवेण पाविहित्ति" त्ति, एव सजती वि हिंडइ अच्छति वा णिच्च पडरपडपाउआ ॥५८१८॥

ण तस्स वत्थादिसु कोइ संगो, रज्जं तणं चेव जहाय तेणं ।
जो सो उवज्झाइय वत्थसंगो, तं गारवा सो ण चएइ मोत्तुं ॥५८१९॥

जो सो इड्ढिम पव्वतितो ण तस्स वत्थादिसु कोइ सगो त्ति वा बधण ति वा एगट्ठ । कह णज्जति जहा सगो णत्थि ?, उच्यते— जतो तेण रज्ज बहुगुण तृणमिव जढ । सेस कठ ॥५८१९॥ विभूसत्ति गय ।

---

१ गा० ५७८६ । २ बृहत्कल्पे सू० ४५ । ३ विचित्त इत्यपि पाठ । ४ दशवै० अ० ८ गा० ५७ । ५ सूईभूय इत्यपि पाठ । ६ किमणेण इत्यपि पाठ. ।

अब इस प्रश्न पर विचार करें कि केवल इसी चूला को पृथक् क्यों किया गया ? और कब किया गया ? नाम से सूचित होता है कि यह ग्रन्थ रहस्यरूप है—गुप्त रखने योग्य है। और यह भी कहा गया है कि यह ग्रन्थ अपवाद मार्ग से परिपूर्ण है। अतः उक्त विशेषताओं के कारण यह आवश्यक हो गया कि हर कोई व्यक्ति इसे न पढ़े। उक्त मान्यता के मूल में यह डर भी था कि कहीं अनधिकारी व्यक्ति इसे पढ़कर अपने दुराचरण के समर्थन में इसका उपयोग न करने लगें। अतएव इसके अध्ययन को मर्यादित करना आवश्यक था।[1]

प्राचीन काल में जब तक दशवैकालिक की रचना नहीं हुई थी, तब तक यह व्यवस्था थी कि दीक्षार्थी को सर्वप्रथम आचारांग का प्रथम अध्ययन शस्त्रपरिज्ञा पढ़ाया जाता था। और दीक्षा देने के बाद भी आचारांग के पिंडैपणा संबन्धी प्रमुख अंश पढ़ने के बाद ही वह स्वतन्त्र भाव से पिंडैषणा के लिये जा सकता था। इससे पता चलता है कि दीक्षा के पहले ही आचारांग की पढ़ाई शुरू हो जाती थी[2]। किन्तु निशीथ की अपनी विशेपता के कारण यह आवश्यक हो गया था कि उसे परिपक्व बुद्धि वाले ही पढ़ें, और इसीलिये यह नियम बनाना पड़ा कि कम-से-कम तीन वर्ष का दीक्षा-पर्याय होने पर ही[3] निशीथ का अध्ययन कराया जाए। संभव है, ऐसी स्थिति में निशीथ को शेप आचारांग से पृथक् करना अनिवार्य हो गया हो ?

दूसरी बात यह भी है कि निशीथ सूत्र मूल में ही अपवाद-बहुल ग्रन्थ है। और जैसे-जैसे उस पर नियुक्ति,–भाष्य–चूर्णि–विशेष चूर्णि आदि टीका ग्रन्थ बनते गये, वैसे-वैसे उसमें उत्तरोत्तर अपवाद बढ़ते ही गये। ऐसी स्थिति में वह उत्तरोत्तर अधिकाधिक गोपनीय होता जाए, यह स्वाभाविक है। फलस्वरूप शेष ग्रन्थ से उसका पार्थक्य अनिवार्य हो जाए, यह भी सहज है। इस प्रकार जब आचारांग के शेषांश से निशीथ का पार्थक्य अनिवार्य हो गया, तब उसे सर्वथा आचारांग से पृथक् कर दिया गया।

अब प्रश्न यह है कि नंदी और अनुयोगद्वार की तरह नवीन वर्गीकरण में उक्त सूत्र को चूलिका सूत्र-रूप से पृथक् ही क्यों न रखा गया, छेद में ही शामिल क्यों किया गया ? इसका उत्तर सहज है कि जब दशा, कल्प, और व्यवहार, जिनका कि मूलाधार प्रत्याख्यान पूर्व था, छेद ग्रन्थों में संमिलित किये गये, तो निशीथ भी उसी प्रत्याख्यान पूर्व के आधार से निर्मित होने के कारण छेद ग्रन्थों में शामिल कर लिया जाए, यह स्वाभाविक है। इतना ही नहीं, किन्तु निशीथ का भी वैसा ही विषय है, जैसा कि अन्य छेद ग्रन्थों का। यह भी एक प्रमाण है, जो निशीथ सूत्र को छेद सूत्रों की शृंखला में जोड़े जाने की ओर महत्त्व पूर्ण संकेत है।

---

१. नि० गा० ६९, ७० की चूर्णि

२. व्यवहार उद्देश ३. विभाग ४, गा० १७४–१७६

३. व्यवहार उद्देश १०, सू० २१ पृ० १०७।

निशीथ सूत्र अंग या अंगबाह्य ?

समग्र आगम ग्रन्थों का प्राचीन वर्गीकरण है—अंग और अंगबाह्य। निशीथ सूत्र के नाम से जो ग्रन्थ हमारे समक्ष है, उसे आचारांग की पांचवीं चूला[1] कहा गया है और अध्ययन की दृष्टि से वह आचारांग का छब्बीसवां अध्ययन घोषित किया गया है[2]। इस पर से स्पष्ट है कि वह कभी अंगान्तर्गत रहा है। किन्तु एक समय ऐसा आया कि उपलब्ध आचारांग सूत्र से इस अध्ययन को पृथक् कर दिया गया; और इसका छेद सूत्रों में परिगणन किया जाने लगा। तदनुसार यह निशीथ सूत्र, अंग ग्रन्थ-आचारांग का अंग होने के कारण अंगान्तर्गत होते हुए भी, अंग बाह्य हो गया[3] है।

वस्तुतः देखा जाए तो अंग और अंगबाह्य जैसा विभाग उत्तरकालीन ग्रन्थों में नहीं होता है, किन्तु अंग, उपांग, छेद, मूल, प्रकीर्णक और चूलिका—इस रूप में आगम ग्रन्थों का विभाग होता है। और तदनुसार निशीथ छेद[4] में संनिलित किया जाता है।

एक बात की ओर यहाँ विशेष ध्यान देना आवश्यक है कि स्वयं आचारांग में भी 'निशीथ' एक अंतिम चूला रूप है। इसका अर्थ यह है कि वह कभी-न-कभी मूल आचारांग से जोड़ा गया था। और विशेष कारण उपस्थित होने पर उसे पुनः आचारांग से पृथक् कर दिया गया।

उपर्युक्त विवेचन पर से यह कहा जा सकता है कि निशीथ मौलिक रूप में आचारांग का अंग था ही नहीं, किन्तु उसका एक परिशिष्ट मात्र था। इस दृष्टि से छेद में, जो कि अंगबाह्य या अंगेतर वर्ग था, निशीथ को संमिलित करने में कोई आपत्ति नहीं हो सकती थी।

अंगवर्ग के अन्तर्गत न होने मात्र से निशीथ का महत्त्व अन्य अंग ग्रन्थों से कुछ कम हो गया है—यह तात्पर्य नहीं है; क्योंकि निशीथ का अपना जो महत्त्व है, वही तो उसे छेद के अन्तर्गत करने में कारण है। निशीथ को आचारांग का अंग केवल श्वेताम्बर आम्नाय में माना जाता है, यह भी ध्यान देने की बात है। दिगम्बर आम्नाय में निशीथ को अंगबाह्य ग्रन्थ ही माना गया है। अंगों में इसका स्थान नहीं है। वस्तुतः अंग की व्याख्या के अनुसार निशीथ अंगबाह्य ही होना चाहिए। क्योंकि यह गणधरकृत तो है नहीं। स्थविर या आरातीय आचार्यकृत है। अतएव जैसा कि दिगम्बर आम्नाय में उसे केवल अंगबाह्य कहा गया है, वस्तुतः वह अंगबाह्य ही होना चाहिए। और श्वेताम्बरों के यहाँ भी अंगेतर छेद वर्ग के अन्तर्गत होकर वह अपने ठीक स्थान पर पहुँच गया है।

1. नि० पृ० २
2. वही पृ० ४
3. छेदवर्ग में समावेश होने पर भी [illegible] और [illegible] को [illegible] [illegible] देखो, नि० गा० [illegible] और [illegible]
4. नि० पै० पृ० ३४–३५
5. देखो, [illegible] भाग १ पृ० [illegible], [illegible] भाग १ पृ० [illegible]

दिगम्बरों के यहाँ केवल १४ ग्रन्थों को ही अंगवाह्य वताया गया है, और उन चौदह में छः तो आवश्यक के छः अध्ययन ही हैं। ऐसी स्थिति में निशीथ की प्राचीनता स्वतः सिद्ध हो जाती है। और इस पर से यह भी संभवित है कि वह श्वेताम्वर-दिगम्वंर के भेद के बाद ही कभी आचारांग का अंश माना जाने लगा हो।

निशीथ के कर्ता :

आचारांग की नियुक्ति में तो आचारांग की चूलिकाओं के विषय में स्पष्टरूप से कहा गया है कि—

"थेरेहिऽणुग्गहट्ठा सीसहिअं होउ पागडत्थं च।
आयाराओ अत्थो आयारग्गेसु पविभत्तो ॥"

—आचा० नि० २८७

अर्थात् आचाराग्र=आचारचूलिकाओं के विषय को स्थविरों ने आचार में से ही लेकर शिष्यों के हितार्थ चूलिकाओं में प्रविभक्त किया है।

स्पष्ट है कि गणधरकृत[1] आचार के विषय को स्थविरों ने आचारांग की चूलाओं में संकलित किया है। प्रस्तुत में 'आचार' शब्द के दो अर्थ किये जा सकते हैं। प्रथम की चार चूला तो आचार अंग में से संकलित की गई हैं, किन्तु पांचवीं चूला आयारपकप्प—निशीथ, प्रत्याख्यान नामक पूर्व की आचारवस्तु नामक तृतीय वस्तु के वीसवें प्राभृत में से संकलित है। अर्थात् आचार शब्द से आचारांग और आचारवस्तु—ये दोनों अर्थ अभिप्रेत हों, यह संभव है। ये दोनों अर्थ इसलिये संभव हैं कि नियुक्तिकार प्रथम चार चूलाओं के आधारभूत आचारांग के तत्तत् अध्ययनों का[2] उल्लेख करने के अनन्तर लिखते हैं कि—

"आयारपकप्पो पुण पच्चक्खाणस्स तइयवत्थूओ।
आयारनामधिज्जा वीसइमा पाहुडच्छेया ॥[3]

—आचा० नि० गा० २९१

पूर्वोक्त आचारांग-नियुक्ति की 'थेरेहिं' (गा० २८७) इत्यादि गाथा के 'स्थविर' शब्द की व्याख्या शीलांक ने निम्न प्रकार से की है—"तत्र इदानीं वाच्यं— केनैतानि निर्यूढानि, किमथ, कुतो चेति ? अत आह—'स्थविरैः' श्रुतवृद्धैश्चतुर्दशपूर्वविद्भि निर्यूढानि—इति"। उक्त कथन पर से हम कह सकते हैं कि शीलांक के कथनानुसार आचार चूला=निशीथ के कर्ता स्थविर थे, और वे चतुर्दश पूर्वविद् थे। किन्तु आचारांग-चूर्णि के कर्ता ने प्रस्तुत गाथा में आए 'स्थविर' शब्द का अर्थ 'गणधर' लिया है—"एयाणि पुण आयारग्गाणि आयारा चेव निज्जूढाणि। केण णिज्जूढाणि ? थेरेहिं (२८७) थेरा—गणधरा।" —आचा० चू० पृ० ३२६

१. आचा० नि० चू० और टी० ८

२. आचा० नि० गा० २८८—२९०।

३. इसी का समर्थन व्यवहार भाष्य से भी होता है—व्यव० विभाग २, गा० २५४

इससे स्पष्ट है कि चूर्णिकार के मत में निशीथ गणधरकृत है।

आचारांग-चूर्णि और निशीथ-चूर्णि के कर्ता भी एक ही प्रतीत होते हैं, क्योंकि निशीथ-चूर्णि के प्रारंभ में 'प्रस्तुत चूर्णि कोई स्वतन्त्र ग्रन्थ है'—ऐसा न कहकर के यह कहा गया है कि :

'भणिया विमुत्तिचूला अहुणावसरो णिसीहचूलाए।'

—नि० पृ० १

अर्थात् "आचारांग की चौथी चूला विमुक्ति-चूला की व्याख्या हो गई। अब हम निशीथ की व्याख्या करते हैं।" इससे स्पष्ट है कि निशीथचूर्णि के नाम से सुप्रसिद्ध ग्रन्थ भी आचारांग-चूर्णि का ही अंतिम अंश है। केवल, जिस प्रकार आचारांग का अध्ययन होने पर भी आचारांग से निशीथ को पृथक् कर दिया गया है उसी प्रकार निशीथ चूर्णि को भी आचारांग की शेष चूर्णि से पृथक् कर दिया गया है। यही कारण है कि निशीथ-चूर्णि के प्रारंभ में अलग से नमस्काररूप मंगल किया गया है।

निशीथ चूर्णि में निशीथ के कर्ता के विषय में निम्न उल्लेख है :

"निसीहचूलज्झयणस्स तित्थगराणं अत्थस्स अत्तागमे, गणहराणं सुत्तस्स अत्तागमे, गणहराणं अत्थस्स अणंतरागमे। गणहरसिस्साणं सुत्तस्स अणंतरागमे, अत्थस्स परंपरागमे। तेण परं सेसाणं सुत्तस्स वि अत्थस्स वि णो अत्तागमे, णो अणन्तरागमे, परंपरागमे।"

—नि० पृ० ४

इससे भी स्पष्ट है कि निशीथ सूत्र के कर्ता, अर्थ-दृष्टि से तीर्थंकर हैं, और शब्द अर्थात् सूत्र-दृष्टि से गणधर हैं[1]। अर्थात् स्पष्ट है कि चूर्णिकार के मत से निशीथ सूत्र के कर्ता गणधर हैं। चूर्णिकार के मत का मूलाधार निशीथ की अंगान्तर्गत होने की मान्यता है। सार यह है कि स्थविर शब्द के अर्थ में मतभेद है। शीलांक मुनि, स्थविर शब्द के विशेषण रूप में चतुर्दश पूर्वधारी ऐसा अर्थ तो करते हैं, किन्तु उन्हें गणधर नहीं कहते। जबकि चूर्णिकार स्थविर पद का अर्थ गणधर लेते हैं। चूर्णिकार ने स्थविर पद का अर्थ, गणधर, इसलिए किया कि निशीथ आचारांग का अंश है, और अंगों की सूत्र-रचना गणधरकृत होती है। अतएव निशीथ भी गणधरकृत ही होना चाहिए।

निर्युक्तिकार जब स्वयं निशीथ को स्थविरकृत कहते हैं, तो चूर्णिकार ने इसे गणधरकृत क्यों कहा? इस प्रश्न पर भी संक्षेप में विचार करना आवश्यक है। यह तो ऊपर कहा ही जा चुका है कि निशीथ सूत्र का समावेश अंग में किया गया है। अतएव एक कारण तो यह है ही कि अंगों की रचना गणधरकृत होने से उसे भी गणधरकृत माना जाए। किन्तु यह परिस्थिति तो निर्युक्तिकार के समक्ष भी थी। फिर क्या कारण है कि उन्होंने निशीथ को गणधरकृत न कहकर, स्थविरकृत कहा? जबकि वे स्वयं आवश्यक सूत्र की निर्युक्ति में [illegible] गणधरों का सूत्रकार के रूप में उल्लेख करते हैं। आचारांग-निर्युक्ति के पूर्व [illegible] आवश्यक-निर्युक्ति की रचना कर चुके थे, और आवश्यक के सामायिकादि अध्ययनों के कर्ता गणधर हैं, ऐसा भी कह चुके थे। तब आचारांग के [illegible] को उन्होंने ही स्थविरकृत क्यों कहा? यह प्रश्न

१. आवश्यक निर्युक्ति गा० [illegible], और गा० [illegible]। [illegible]

२. [illegible] की प्रस्तावना पृ० [illegible]

है। इसका समाधान यही है कि आचारांग का द्वितीय स्कंध वस्तुतः स्थविरकृत था, गणधरकृत नहीं। तब पुनः प्रश्न होता है कि ऐसी स्थिति में चूर्णिकार क्यों ऐसा कहते हैं कि वह गणधरकृत है? आवश्यक सूत्र के विषय में भी ऐसी ही दो परंपराएँ प्रचलित हो गई हैं। इसकी चर्चा मैंने अन्यत्र की है[1]। उसका सार यही है कि प्रामाणिकता की दृष्टि से गणधरकृत का ही महत्त्व अधिक होने से, आगे चलकर, आचार्यों की यह प्रवृत्ति बलवती हो चली कि अपने ग्रन्थ का सम्बन्ध गणधरों से जोड़ें। अतएव केवल अंग ही नहीं, किन्तु अंग बाह्य आगम और पुराण ग्रन्थों को भी गणधरप्रणीत कहने की परंपरा शुरू हो गई। इसी का यह फल है कि प्रस्तुत में निशीथ स्थविरकृत होते हुए भी गणधरकृत माना जाने लगा।

इस परंपरा के मूल की खोज की जाए, तो अनुयोग द्वार से, जो कि आवश्यक सूत्र की व्याख्यारूप है, वस्तु स्थिति का कुछ आभास मिल जाता है। अनुयोगद्वार के प्रारंभ में ही आवश्यक सूत्र का संबन्ध बताते हुए कहा है कि श्रुत दो प्रकार का है—अंग प्रविष्ट और अंग-बाह्य। अंगबाह्य भी दो प्रकार का है—कालिक और उत्कालिक। उत्कालिक के दो भेद हैं—आवश्यक और आवश्यक—व्यतिरिक्त। इस प्रकार श्रुत के मुख्य भेदों में अंग और अंग बाह्य, और अंग बाह्य में आवश्यक और तदतिरिक्त की गणना है[2]। इससे इतना तो फलित होता है कि जब अनुयोग द्वार की रचना हुई, तब अंग के अतिरिक्त भी पर्याप्त मात्रा में आगम ग्रन्थ बन चुके थे। केवल द्वादशांगरूप गणिपिटक ही श्रुत था, ऐसी बात नहीं है। फिर भी इतना विवेक अवश्य था कि आचार्य, अंग और अंगबाह्य की मर्यादा को भली भाँति समझे हुए थे और उनका उचित पार्थक्य भी मानते रहे थे। इस पार्थक्य की मर्यादा यही हो सकती थी कि जो सीधा तीर्थंकर का उपदेश है वह अंगान्तर्गत हो जाय, और जो तदतिरिक्त हो वह अंग-बाह्य रहे। शास्त्रों के प्राचीन अंशों में जहाँ भी जिनप्रणीत श्रुत की चर्चा है वहाँ द्वादशांगी का ही उल्लेख है—यह भी इसी की ओर संकेत करता है। जिनप्रणीत का अर्थ भी यही था कि जितना अर्थ तीर्थंकरों द्वारा उपदिष्ट था, उतना जिनप्रणीत कहा गया, फिर भले ही उन अर्थों को ग्रहण करके शाब्दिक रचना गणधरों ने की हो। अर्थात् अर्थागम की दृष्टि से द्वादशांगी जिनप्रणीत है और सूत्रागम की दृष्टि से वह गणधरकृत है। इसीलिये हम देखते हैं कि समवायांग, भगवती, अनुयोग द्वार, नंदी, षट्खंडागम-टीका, कषायपाहुड-टीका आदि में तीर्थंकरप्रणीत रूप से केवल द्वादशांगी का निर्देश है।[3] तीर्थंकरद्वारा अर्थतः उपदिष्ट वस्तु के आधार पर गणधरकृत शाब्दिक रचना के अतिरिक्त, जो भी हो वह सब, अंगबाह्य है; इस पर से यह भी फलित होता है कि अंग बाह्य की शाब्दिक रचना गणधरकृत नहीं है।

इस प्रकार अनुयोग के प्रारंभिक वक्तव्य से इतना सिद्ध होता है कि श्रुत में अंग और अंगबाह्य-दो प्रकार थे। अनुयोगद्वार में आगे चलकर जहाँ आगम प्रमाण की चर्चा की गई है, यदि उस ओर ध्यान देते हैं, तब यह बात और भी स्पष्ट हो जाती है कि मूल आगम केवल

१. 'गणधरवाद' की प्रस्तावना पृ० ८—१२
२. अनुयोगद्वार सू० ३—५
३. गणधरवाद की प्रस्तावना पृ० ९।

द्वादशांग ही थे। और वही प्रारंभिक काल में प्रमाण-पदवी को प्राप्त हुए थे। आवश्यक का श्रुत से क्या संबन्ध है—यह दिखाना अनुयोग के प्रारंभिक प्रकरण का उद्देश्य रहा है। किन्तु कौन आगम लोकोत्तर आगम प्रमाण है—यह दिखाना, आगे आने वाली आगमप्रमाण चर्चा का उद्देश्य है। उसी आगमप्रमाण की चर्चा में आगम की व्याख्या अनेक प्रकार से की गई है। और प्रतीत होता है कि उन व्याख्याओं का आश्रय लेकर ही अंगेतर=अंगबाह्य ग्रन्थों को भी आगमग्रन्थों के व्याख्याताओं ने गणधरप्रणीत कहना शुरू कर दिया।

अनुयोग द्वार के आगमप्रमाण वाले प्रकरण[1] में आगम के दो भेद किये गये हैं—लौकिक और लोकोत्तर। सर्वज्ञ-तीर्थंकर द्वारा प्रणीत द्वादशांग रूप गणिपिटक—आचार से लेकर दृष्टिवाद पर्यन्त—लोकोत्तर आगम प्रमाण है। इस प्रकार आगम की यह एक व्याख्या हुई। यह व्याख्या मौलिक है और प्राचीनतम आगमप्रमाण की मर्यादा को भी सूचित करती है। किन्तु इस व्याख्या में आगम ग्रन्थों की नामतः एक सूची भी दी गई है, अतएव उससे बाह्य के लिए आगम प्रमाण-संज्ञा वर्जित हो जाती है।

आगम प्रमाण की एक अन्य भी व्याख्या[2] या गणना दी गई है, जो इस प्रकार है : आगम तीन प्रकार का है—सूत्रागम, अर्थागम और तदुभयागम। आगम की एक अन्य व्याख्या भी है कि आगम तीन प्रकार का है—आत्मागम, अनंतरागम और परंपरागम। व्याख्याओं को दृष्टान्त द्वारा इस प्रकार समझाया गया है : तीर्थंकर के लिये अर्थ आत्मागम है; गणधर के लिये अर्थ अनंतरागम और सूत्र आत्मागम है, तथा गणधर-शिष्यों के लिये सूत्र अनंतरागम और अर्थ परंपरागम है। गणधर-शिष्यों के शिष्यों के लिये और उनके बाद होने वाली शिष्य-परंपरा के लिये अर्थ और सूत्र दोनों ही प्रकार के आगम परंपरागम ही हैं। इन दोनों व्याख्याओं में सूत्र पद से कौन से सूत्र गृहीत करने चाहिए, यह नहीं बताया गया। परिणामतः तत्तत् अंगबाह्य आगमों के टीकाकारों को अंगबाह्य आगमों को भी गणधरकृत कहने का अवसर मिल गया। निशीथ-चूर्णिकार ने अनुयोगद्वार की प्रक्रिया के आधार पर ही प्रयाण का विवेचन करते हुए यह कह दिया कि निशीथ अध्ययन तीर्थंकर के लिये अर्थ की दृष्टि से आत्मागम है। गणधर के लिए इस अध्ययन का अर्थ अनंतरागम है किन्तु इसके सूत्र आत्मागम हैं—अर्थात् निशीथ सूत्र की रचना गणधर ने की है। और गणधर-शिष्यों के लिये अर्थ परंपरागम है और सूत्र अनंतरागम है। शेष के लिये अर्थ और सूत्र दोनों ही परंपरागम हैं। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि अनुयोगद्वार की इस वैकल्पिक व्याख्या ने व्याख्याताओं को अवसर दिया कि वे अंगबाह्य को भी गणधरकृत कह दें, इसलिए कि वह भी तो सूत्र है।

आचार्यों ने कुछ भी कहा हो, किन्तु कोई भी ऐतिहासिक इस बात को नहीं स्वीकार कर सकता कि ये सब अंग-बाह्य ग्रन्थ गणधरप्रणीत हैं फलतः प्रस्तुत निशीथ भी गणधर कृत है; जबकि वह मूलतः अंग नहीं, अंग का परिशिष्ट मात्र है। अस्तु निर्युक्ति के कथनानुसार यह ही तर्क संगत है कि निशीथ स्थविरकृत ही हो सकता है, गणधरकृत नहीं।

१. अनुयोगद्वार सू० १४७,

२. पूरे भेद गिना देने से भी व्याख्या हो जाती है, ऐसी आगमिक परिपाटी देखी जाती है।

अब प्रश्न यह है कि निशीथ सूत्र के रचयिता कौन स्थविर थे ? इस विषय में भी दो मत दिखाई देते हैं। एक मत पंचकल्प भाष्य चूर्णि का है, जिसके अनुसार कहा जाता है कि आचार प्रकल्प—निशीथ को आचार्य भद्रबाहु ने 'निज्जूढ' किया था—"तेण भगवता आयारपकप्प-दसा-कप्प-ववहारा य नवम पुव्वनीसंदभूता निज्जूढा।"[1] किन्तु यह मत उचित है या नहीं, इसकी परीक्षा आवश्यक है। दशा श्रुत-स्कन्ध की निर्युक्ति में तो उन्हें मात्र दशा, कल्प, और व्यवहार का ही सूत्रकार कहा गया है :

"वंदामि भद्दबाहुं पाईणं चरिमसगलसुयनाणिं।
सुत्तस्स कारगमिसिं दसासु कप्पे य ववहारे॥"
—दशा० नि० गा० १

इसी गाथा का पञ्चकल्प भाष्य में व्याख्यान किया गया है[2]। वहाँ अंत में कहा है—

तत्तो च्चिय णिज्जूढं अणुग्गहट्ठाए सपय-जतीणं।
तो सुत्तकारतो खलु स भवति दस-कप्प-ववहारे॥

इससे स्पष्ट है कि पंचकल्प-भाष्यकार तक यही मान्यता रही है कि भद्रबाहु ने दशा, कल्प और व्यवहार—इन तीन छेद ग्रन्थों की रचना की है। किन्तु उसी की चूर्णि में यह कहा गया कि निशीथ की रचना भी भद्रबाहु ने की है। अतएव हम इतना ही कह सकते हैं कि पंचकल्प भाष्य-चूर्णि की रचना के समय यह मान्यता प्रचलित हो गई थी कि निशीथ की रचना भी भद्रबाहु ने की थी। किन्तु इस मान्यता में तनिक भी तथ्य होता तो स्वयं निशीथ भाष्य की चूर्णि में आचार्य भद्रबाहु को सूत्रकार न कहकर, गणधर को सूत्रकार क्यों कहा जाता ? अतएव यह सिद्ध होता है कि पंचकल्प भाष्य-चूर्णि का कथन निर्मूल है।

दूसरा मत प्रस्तुत निशीथ सूत्र भाग ४, (पृ० ३९५) के अंत में दी गई प्रशस्ति के आधार पर बनता है कि निशीथ के रचयिता विशाखाचार्य थे। प्रशस्ति इस प्रकार है :

दंसणचरित्तजुत्तो जुत्तो गुत्तीसु सज्जणहिएसु।
नामेण विसाहगणी महत्तरओ गुणाण मंजूसा॥
कित्तीकंतिपिणद्धो जसपत्तो पडहो तिसागरनिरुद्धो।
पुणरुत्तं भमइ महिं ससिव्व गगणं गुणं तस्स॥
तस्स लिहियं निसीहं धम्मधुराधरणपवरपुज्जस्स।
आरोग्गं धारणिज्जं सिस्सपसिस्सोव भोज्जं च॥

यहाँ पर विशाखाचार्य को महत्तर कहा गया है और 'लिहियं' शब्द का प्रयोग है। 'लिहियं' शब्द से रचयिता और लेखक—ग्रन्थस्थ करने वाले—दोनों ही अर्थ निकल सकते हैं। प्रश्न यह है कि निशीथ सूत्र के लेखक ये विशाखगणी कब हुए ?

१. बृहत्कल्प भाष्य भाग ६, प्रस्तावना पृ० ३
२. पूरे व्याख्यान के लिये, देखो—बृहत्कल्प भाष्य भाग ६, प्रस्तावना पृ० २

षट्खंडागम की धवला टीका[1] और कसाय पाहुड की जय धवला टीका में[2] श्रुतावतार[3] की परंपरा का जो वर्णन है, उसमें भ० महावीर के बाद तीन केवली और पाँच श्रुत केवली–इस प्रकार आठ आचार्यों के बाद आने वाले नवम आचार्य का नाम, जो कि ग्यारह दश पूर्वी में से प्रथम आचार्य थे, विशाखाचार्य दिया हुआ है ! जय धवला में केवली और श्रुत–केवली का समय, सब मिलाकर १६२ वर्ष हैं। अर्थात् वीर निर्वाण के १६२ वर्ष के बाद विशाखाचार्य को आचार्य भद्रबाहु से श्रुत मिला। किन्तु वे सम्पूर्ण श्रुत को धारण न कर सके, केवल ग्यारह अंग और दश पूर्व संपूर्ण, तथा शेष चार पूर्व के अंश को धारण करने वाले हुए।

अन्य किसी प्राचीन विशाखाचार्य का पता नहीं चलता, अतएव यह माना जा सकता है कि निशीथ की प्रशस्ति में जिन विशाखाचार्य का उल्लेख है, वे यही थे। अब प्रश्न यह है कि प्रशस्ति में निशीथ के लेखक रूप से विशाखाचार्य के नाम का उल्लेख रहते हुए भी चूर्णिकार ने निशीथ को गणधरकृत क्यों कहा ? तथा विशाखाचार्य तो दशपूर्वी थे, फिर शीलांक ने निशीथ के रचयिता स्थविर को चतुर्दशपूर्वविद् क्यों कहा ? इसके उत्तर में अभी निश्चयपूर्वक कुछ कहना तो संभव नहीं है। चूर्णिकार और निर्युक्ति या भाष्यकार के समक्ष ये प्रशस्तिगाथाएँ रही होंगी या नहीं, प्रथम तो यही विचारणीय है। निर्युक्ति मे केवल स्थविर शब्द का प्रयोग है। और मुख्य प्रश्न तो यह भी है कि यदि निशीथ के लेखक विशाखाचार्य थे, तो क्या इन प्रशस्ति गाथाओं का निर्माण उन्होंने स्वयं किया या अन्य किसी ने ? स्वयं विशाखाचार्य ने अपने विषय में प्रशस्ति-निर्दिष्ट परिचय दिया हो, यह तो कहना संभव नहीं। और यदि स्वयं विशाखाचार्य ने ही यह प्रशस्ति मूलग्रन्थ के अन्त में दी होती, तो निर्युक्तिकार विशाखाचार्य का उल्लेख न करके केवल 'स्थविर' शब्द से ही उनका उल्लेख क्यों करते ? यहाँ एक यह भी समाधान हो सकता है कि निर्युक्ति की वह गाथा, जिसमें चूलाओं को स्थविरकृत कहा गया है, केवल चार चूलाओं के संबन्ध में ही है। और वह पाँचवीं चूला के निर्माण के पहले की निर्युक्ति गाथा हो सकती है। क्योंकि उसमें स्पष्ट रूप से चूलाओं का निर्माण 'आचार' से ही होने की बात कही गई है। और 'आचार' से तो चार ही चूला का निर्माण हुआ है। पांचवीं चूला का निर्माण तो प्रत्याख्यान पूर्व के आचार नामक वस्तु से हुआ है। अतएव 'आचार' शब्द से केवल आचारांग ही लिया जाए और 'आचार' नामक पूर्वगत 'वस्तु' न लिया जाए। प्रथम चार ही चूलाएँ आचारांग में जोड़ी गईं और बाद में कभी पांचवीं निशीथ चूला जोड़ी गई, यह भी स्वीकृत ही है। ऐसी स्थिति में हो सकता है कि निर्युक्ति गत 'स्थविर' शब्द केवल प्रथम चार चूलाओं के ग्रन्थन से ही संबन्ध रखता हो, अंतिम निशीथ चूला से नहीं। किन्तु यदि यही विचार सही माना जाए, तब भी निर्युक्तिकार ने पांचवीं चूला के निर्माता के विषय में कुछ नहीं कहा—यह तो स्वीकृत करना ही पड़ेगा। ऐसी स्थिति में पुनः प्रश्न यह है कि वे पांचवीं चूला निशीथ के कर्ता का निर्देश क्यों नहीं करते ? अतएव यह कल्पना की जा सकती है कि निर्युक्तिकार के समक्ष ये गाथाएँ नहीं थीं। अथवा यों कहना चाहिए कि ये गाथाएँ स्वयं विशाखा

---

१. धवला खंड १, पृ० ६६

२. जयधवला भाग १, पृ० ८५

३. अन्यत्र दी गई श्रुतावतार की परंपरा के लिये, देखो, जय धवला की प्रस्तावना, भाग १, पृ० ४६।

चार्य ने नहीं लिखीं। यदि ये गाथाएँ स्वयं विशाखाचार्य की होतीं, तो चूर्णिकार इन गाथाओं की कुछ-न-कुछ चूर्णि अवश्य करते और बीसवें उद्देश की संस्कृत व्याख्या में भी इसका निर्देश होता। अतएव इस कल्पना के आधार पर यह मानना होगा कि ये गाथाएँ स्वयं विशाखाचार्य की तो नहीं हैं। और यदि ये गाथाएँ स्वयं विशाखाचार्य की ही हैं—ऐसी कल्पना की जाए, तब तो यह भी कल्पना की जा सकती है कि यहाँ 'लिहियं' शब्द का अर्थ 'रचना' नहीं, किन्तु 'पुस्तक लेखन' है। यह हो सकता है कि विशाखाचार्य ने श्रुति-परम्परा से चलते आये निशीथ को प्रथम बार पुस्तकस्थ किया हो। 'पुस्तकस्थ' करने की यह परंपरा, संभव है; स्व ट उन्होंने श्लोकबद्ध करके प्रशस्तिरूप में दी हो, या उनके अन्य किसी शिष्य ने।

यह भी कहा जा सकता है कि यदि भद्रबाहु के अनंतर होने वाले विशाखाचार्य ने ही निशीथ को ग्रन्थस्थ किया हो, तब तो निशीथ का रचना-काल और भी प्राचीन होना चाहिए। इसका प्रमाण यह भी है कि दिगम्बरों के द्वारा मान्य केवल चौदह अंगबाह्य ग्रन्थों की सूची में भी निशीथ का नाम है। अर्थात् यह सिद्ध होता है कि भद्रबाहु के बाद दोनों परंपराएँ जब पृथक् हुईं, उसके पहले ही निशीथ बन चुका था और वह दोनों को समान भाव से मान्य था। और यदि प्रशस्ति गाथाओं के 'लिहियं' शब्द को रचना के अर्थ में माना जाए, तब एक कल्पना यह भी की जा सकती है कि विशाखाचार्य ने ही इसकी रचना की थी। किन्तु संभव है वे श्वेताम्बर आम्नाय से पृथक् परंपरा के आचार्य रहे हों। अतएव आगे चलकर निशीथ के प्रामाण्य के विषय में संदेह खड़ा हुआ हो, या होने की संभावना रही हो, फलतः यही उचित समझा जाने लगा हो कि प्रामाण्य की दृष्टि से उसका संबंध गणधर से ही जोड़ा जाए। इस दृष्टि से निशीथ-चूर्णिकार ने उसका सम्बन्ध गणधर से जोड़ा, और पंचकल्प चूर्णिकार ने भद्रबाहु के साथ, क्योंकि वे भी चतुर्दशपूर्वी थे। अतएव प्रामाण्य की दृष्टि से गणधर से कम तो थे नहीं। इस सब चर्चा का सार इतना तो अवश्य है कि निशीथ के कर्तृत्व के विषय में प्राचीन आचार्यों में भी मतभेद था। तब आज उसके विषय में किसी एक पक्षविशेष के प्रति निर्णय-पूर्वक कुछ कह सकना संभव नहीं है। हाँ, इतना अवश्य कहा जा सकता है कि वह भद्रबाहु की तो कृति नहीं थी। यदि ऐसा होता तो निशीथ चूर्णिकार के लिए उसको लोप कर देने का कोई कारण नहीं था। निशीथ-चूर्णि और पंचकल्प भाष्य चूर्णि, प्रायः एक ही शताब्दी की कृतियाँ होने का संभव है। ऐसी स्थिति में कर्तृत्व के विषय में जो दो मत हैं, वे संकेत करते हैं कि कुछ ऐसी बात अवश्य थी, जो मतभेद का कारण रही हो। वह बात यह भी हो सकती है कि विशाखाचार्य अन्य परंपरा के रहे हों, तो प्रायश्चित्त जैसे महत्त्व के विषय में उन्हें कैसे प्रमाण माना जाए? अतएव अन्य छेद ग्रन्थों के रचयिता होने के कारण प्रायश्चित्त में प्रमाणभूत भद्रबाहु के साथ पंचकल्प चूर्णिकार ने, निशीथ का संबन्ध जोड़ दिया हो। यह एक कल्पना ही है। अतएव इसका महत्त्व अभी कल्पना से अधिक न माना जाए। विद्वानों से निवेदन है कि वे इस विषय में विशेष शोध करके नये प्रमाण उपस्थित करें, ताकि निशीथ सूत्र के कर्ता की सही स्थिति का पता लग सके।

निशीथ का समय :

अब तक जो चर्चा हुई है उसके आधार पर इतना तो कहा ही जा सकता है कि निशीथ की रचना श्वेताम्बर-दिगम्बर मतभेद से या दोनों शाखाओं के पार्थक्य से पहले ही हो चुकी

थी। पट्टावलियों का अध्ययन इस बात की तो साक्षी देता है कि दोनों परंपरा की पट्टावलियाँ आचार्य भद्रबाहु तक तो समान रूप से चलती आती हैं, किन्तु उनके बाद से पृथक् हो जाती हैं। अतएव अधिक संभव यही है कि आचार्य भद्रबाहु के बाद ही दोनों परम्पराओं में पार्थक्य हुआ है। ऐसी स्थति में निशीथ का, जो कि दोनों परम्परा में मान्य हुआ है, निर्माण संघ-भेद के पहले ही हो चुका होगा, ऐसा माना जा सकता है। आचार्य भद्रबाहुकृत माने जाने वाले व्यवहार[1] सूत्र में तो आचार-प्रकल्प का कई बार उल्लेख भी है[2]। अतएव स्पष्ट है कि आचार्य भद्रबाहु के समक्ष किसी-न-किसी रूप में आचारप्रकल्प-निशीथ रहा ही होगा। यह संभव है कि निशीथ का जो अंतिम रूप आज विद्यमान है उस रूप में वह, भद्रबाहु के समक्ष न भी हो, किन्तु उनके समक्ष वह किसी न किसी रूप में उपस्थित था अवश्य, यह तो मानना ही पड़ेगा। ऐसी स्थिति में निशीथ को आचार्य भद्रबाहु के समय की रचना तो माना ही जा सकता है। इस दृष्टि से वीर-निर्वाण के १५० वर्ष के भीतर ही निशीथ का निर्माण हो चुका था; इसे हम असंदिग्ध होकर स्वीकृत कर सकते हैं। एक परंपरा यह भी है कि आचार्य भद्र बाहु ने निशीथ की रचना की है।[3] तब भी इसका समय वीर नि० १५० के बाद तो हो ही नहीं सकता। और एक पृथक् परंपरा यह भी है कि विशाखाचार्य ने इसकी रचना की। यदि उसे भी मान लिया जाय, तब भी विशाखाचार्य, भद्रबाहु के अनन्तर ही हुए हैं, अस्तु यह कहा जा सकता है कि यह ग्रन्थ वीर निर्वाण के १७५ वर्ष के आस पास तो बन ही चुका होगा।

निशीथनिर्युक्ति और उसके कर्त्ता :

प्रस्तुत निशीथ सूत्र की सर्व प्रथम सूत्र-स्पर्शिक निर्युक्ति-व्याख्या बनी है। उसमें सूत्र का सम्बन्ध और प्रयोजन प्रायः बताया गया है, तथा सूत्रगत शब्दों की व्याख्या निक्षेप-पद्धति का आश्रय लेकर की गई है। चूर्णिकार ने सब कहीं भाष्य और निर्युक्ति का पृथक्करण नहीं किया है, अतः संपूर्णभावेन भाष्य से पृथक करके निर्युक्ति गाथाओं का निर्देश कर देना, आज संभव नहीं रहा है। किन्तु स्वयं चूर्णिकारने यत्रतत्र कुछ गाथाओं को निर्युक्तगाथा रूप से निर्दिष्ट किया है। अतः उस पर से यह तो फलित किया ही जा सकता है कि निशीथ भाष्य से निर्युक्ति की गाथाएँ कभी पृथक् रही हैं, जिन पर भाष्यकार ने विस्तृत भाष्य की रचना की। और सब मिलाकर निर्युक्ति गाथाएँ कितनी थीं, यह जानना भी आज कठिन हो गया है। क्योंकि बृहत्कल्प के निर्युक्ति भाष्य[4] की तरह प्रस्तुत में निशीथ के निर्युक्ति और भाष्य भी एक ग्रन्थ

---

१. दशाश्रुतनिर्युक्ति गा० १; व्यवहार भाष्य उद्देश १०, गा० ६०३।

२. व्यव० उद्देश ३, सूत्र ३, १०; उद्देश ५, सू० १५; उद्देश ६, सू० ४-५ इत्यादि।

३. "तेण भगवता आयारपकप्प-दसा-कप्प-ववहरा य नवमपुव्वनीसंदभूता निज्जूढा।"

—पंचकल्प चूर्णि, पत्र १;

यह पाठ बृहत्कल्प भाग ६ की प्रस्तावना में उद्धृत है।

४. 'तच्च सूत्रस्पर्शिकनिर्युक्त्यनुगतमिति सूत्रस्पर्शिकनिर्युक्ति र्भाष्यं चैको ग्रन्थो जात':।

—बृहत्कल्प टीका पृ० २

रूप हो गए हैं। अर्थात् यह कहा जा सकता है कि भाष्यकार ने निर्युक्ति गाथाओं को भाष्य का ही अंग बना लिया है और निर्युक्ति तथा भाष्य दोनों परस्पर मिलकर एक ग्रन्थ बन गया है। निर्युक्ति ने अपनी पृथक् सत्ता खो दी है।

निशीथ, आचारांग का ही एक अध्ययन है। अतएव आचारांग की निर्युक्ति के कर्ता ही निशीथ की निर्युक्ति के भी कर्ता हैं। आचारांगादि दश निर्युक्तियों के कर्ता द्वितीय भद्रबाहु हैं। अतएव निशीथ निर्युक्ति के कर्ता भी भद्रबाहु को ही मानना चाहिए। उनका समय मुनिराज श्री पुण्य विजय जी ने आन्तर तथा बाह्य प्रमाणों के आधार पर विक्रम की छठी शती स्थिर किया है, और उन्हें चतुर्दश पूर्वविद् भद्रबाहु से पृथक् भी सिद्ध किया है। उनकी यह विचारणा प्रमाणपूत है,[1] अतएव विद्वानों को ग्राह्य हुई है।

जब हम यह कहते हैं कि निर्युक्तियों के कर्त्ता द्वितीय भद्रबाहु हैं, तब एकान्त रूप से यह नहीं समझ लेना चाहिए कि निर्युक्ति के नाम से जितनी भी गाथाएँ उपलब्ध होती हैं— निशीथ में या अन्यत्र—वे सभी आचार्य भद्राबाहु द्वितीय की ही कृति हैं। क्योंकि आचार्य भद्राबाहु द्वितीय ही एकमात्र निर्युक्तिकार हुए हैं, यह बात नहीं है। उनसे भी पहले प्रथम भद्रबाहु और गोविंदवाचक हो चुके हैं, जो निर्युक्तिकार के नाम से प्रसिद्ध हैं। और वस्तुतः प्राचीनकाल से ही यह परम्परा रही है कि जो भी मूल सूत्र का अनुयोग=अर्थ कथन करता था, वह, संक्षिप्त-शैली से निर्युक्ति पद्धति का आश्रय लेकर ही करता था। यही कारण है कि प्राचीनतम संक्षिप्त व्याख्या का नाम निर्युक्ति दिया गया है। व्याख्याता अपने शिष्यों के समक्ष गाथाबद्ध करके संक्षिप्त व्याख्या करता था और शिष्य उसे याद कर लेते थे। ये ही निर्युक्ति गाथाएँ शिष्य-परंपरा से उत्तरोत्तर चली आती रहीं। प्रथम भद्रबाहु, गोविंद वाचक,[2] अथवा द्वितीय भद्रबाहु ने उन्हीं परंपरा प्राप्त निर्युक्तियों को संकलित तथा व्यवस्थित किया। साथ ही आगमों की व्याख्या करते समय जहाँ आवश्यकता प्रतीत हुई, अपनी ओर से कितनी ही स्वनिर्मित नई गाथाएँ भी, जोड़ दी गई है। इसी दृष्टि से ये तत्तत निर्युक्ति ग्रन्थों के रचयिता कहे जाते हैं। प्राचीनकाल के लेखकों का आग्रह मौलिक रचयिता बनने में उतना नहीं था, जितना कि नई सजावट में था। फलतः वे जहाँ से जो भी उपयुक्त मिलता, उसे अपने ग्रन्थ का अंग बना लेने में संकोच नहीं करते थे। मौलिक की अपेक्षा परंपरा प्राप्त की अधिक महत्ता थी। अतएव अपने पूर्वगामी लेखकों का ऋणस्वीकारोक्ति के रूप में नामोल्लेख किये बिना अथवा उद्धरण आदि की सूचना दिए बिना भी, अपने ग्रन्थ में पूर्व का अधिकांश ले लेते थे—इसमें संकोच की कोई बात न थी। ग्रन्थ-रचनाकार के रूप में अपने को यशस्वी बनाने की उतनी आकांक्षा न थी, जितनी कि इस बात की तमन्ना थी कि व्याख्येय अंश, किसी भी तरह हो, अध्येता के लिये स्पष्ट हो जाना चाहिए। अतएव आधुनिक अर्थ में उनका यह कार्य साहित्यिक चोरी नहीं कहा जा सकता; क्योंकि उन्हें मौलिकता का आग्रह भी तो नहीं था।

---

१. बृहत्कल्पभाष्य, भाग छठा, प्रस्तावना पृ० १-१७

२. बृहत्कल्प प्रस्तावना, भाग ६, पृ० १८—२०; तथा निशीथ, गा० ३६५६।

प्रस्तुत निशीथभाष्य में नियुक्ति संमिलित हो गई है—इसका प्रमाण यह है कि कई गाथाओं के सम्बन्ध में चूर्णिकार ने नियुक्ति गाथा होने का उल्लेख किया है, जैसे कि :

५९२, ६०१, ६१४, ६१६, ६३०, ६३६, ६८५, ७५६, ८१६, ८९५, ९४८, ९७८, ९९९, १०१०, १०२५, १०५४, ११०४, १२८७, १३००, १३१०, १४६५, १४८३, १४९१, १५१४, १५४४, १५९२, १६६६, १८९५, २०६६, २१८१, २१९६, २४३१, २५३३, २६०७, २८८८, २९३४, ३१२३, ३१३८, ३४७२, ३४७९, ३७८८, ४२१०, ४२३०, ४२७५, ४२७६, ४२७८, ४३४०, ४३४५, ४३४९, ४३५३, ४५००, ४५२७, ४८९८, ५००१, ५०९७, ५४२०, ५६३४, ५७२९।

निशीथनियुक्ति आचार्य भद्रबाहुकृत है, इसका स्पष्ट उल्लेख चूर्णिकारने निम्न रूप में किया है, उससे स्पष्ट हो जाता है कि निशीथ-नियुक्तिकार भद्रबाहु ही थे :

'इदानीं उद्देसकस्स उद्देसकेन सह संबंधं वक्तुकामो आचार्यः भद्रबाहुस्वामी नियुक्तिगाथा-माह—गा० १८९५।

यह सम्बन्ध-वाक्य पांचवें उद्देश के प्रारंभ में है।

कुछ गाथाओं को स्पष्ट रूप से आचार्य भद्रबाहुकृत नियुक्ति-गाथा कहा है, तो कुछ गाथाओं के लिये केवल इतना ही कहा है कि यह गाथा भद्रबाहुकृत है। इससे भी स्पष्ट होता है कि निशीथनियुक्ति भद्रबाहुकृत है। इस प्रकार की कुछ गाथाएँ ये हैं :

७७, २०७, २०८, २९२, ३२५, ४४३, ५४३, ५४५, ७६२, ४३९२, ४४०५, ४४९४, ४७८४, ४८८९, ५०१०, ५६७२, ६१३८, ६४६८, ६५४०, इत्यादि।

बृहत्कल्प की नियुक्ति भी भद्रबाहुकृत है। और बृहत्कल्प-नियुक्ति की कई गाथाएँ, प्रस्तुत निशीथ में, प्रायः ज्यों की त्यों ले ली गई हैं। यहाँ नीचे उन कुछ गाथाओं का निर्देश किया जाता है, जिनके विषय में निशीथचूर्णिकारने तो कुछ परिचय नहीं दिया है, किन्तु बृहत्कल्प के टीकाकारों ने उन्हें नियुक्तिगाथा कहा है।

निशीथ-गा०	बृहत्कल्प-गा०
१८८३	५५६६
१६६६	२८७६
३३५१	५२५४
२५०६	६३६३
३०५५	१६५४
३०७४	१६७३
३३६७	२८४६
४००४	३८२७
४०६८-६६	१८५४-५५
४१४२-४३	५२६४-६५
४१०७	१८६५
४२११	५६२०
४८७३	१०१२
५००८	६०६

आचार्यभद्र वाहु ने अपने से पूर्व की कितनी ही प्राचीन निर्युक्ति गाथाओं का समावेश प्रस्तुत निशीथ निर्युक्ति में किया था, इस वात का पता, निशीथ चूर्णि के निम्न उद्धरण से चलता है। गाथा ३२४ के लिये लिखा है—

'ऐसा चिरंतणगाहा । एयाए चिरंतणगाहाए
इमा भद्दबाहुसामिकया चेव वक्खाणगाहा'

—नि० गा० ३२५

उक्त उद्धरण से स्पष्ट है कि कुछ गाथाएँ भद्रवाहु से भी प्राचीन थीं, जिनका समावेश—साथ ही व्याख्या भी, भद्रवाहु ने निशीथ-निर्युक्ति में की है। चिरंतन या पुरातन गाथाओं के नाम से काफी गाथाएँ निशीथ निर्युक्ति में संमिलित की गई हैं, ऐसा प्रस्तुत चूर्णि-कार के उल्लेख से सिद्ध होता है। उदाहरणार्थ कुछ निशीथ-गाथाएँ इस प्रकार हैं: २४६, ३२४, ३८२, ११८७, १२५१ इत्यादि।

कुछ गाथाएँ ऐसी भी हैं, जिनके विषय में चूर्णिकार ने पुरातन या चिरंतन जैसा कुछ नहीं कहा है। किन्तु वे गाथाएँ वृहत्कल्प भाष्य में उपलब्ध हैं और वहाँ टीकाकारों ने उन्हें 'पुरातन' या 'चिरंतन' कहा है।

निशीथ गा० १६६१ वृहत्कल्प में भी है। एतदर्थ, देखिए, वृहत्कल्प गा० ३७१४। इस गाथा को मलय गिरि ने पुरातन गाथा कहा है—देखो, वृ० गा० ३७१५ की टीका।

नि० गा० १३६८=बृहत्० गा० ४६३२। इसे मलय गिरि ने पुरातन गाथा कहा है।

कभी-कभी ऐसा भी हुआ है कि निशीथ चूर्णि जिसे भद्रबाहुकृत कहती है, उसे मलय गिरि मात्र 'पुरातन' कहते हैं। देखो, निशीथ गा० ७६२=बृ० गा० ३६६४। किन्तु यहाँ चूर्णिकार को ही प्रामाणिक माना जायगा, क्योंकि वे मलयगिरि से प्राचीन हैं।

कुछ गाथाएँ ऐसी भी हैं, जो चूर्णिकार के मत से अन्य आचार्यद्वारा रचित हैं, जैसे—निशीथ गा० १५९, ५००९ आदि।

उक्त चर्चा के फलस्वरूप हम निम्न परिणामों पर आसानी से पहुँच सकते हैं :

(१) आचार्य भद्र बाहु ने निशीथ सूत्र की निर्युक्ति का संकलन किया।

(२) निशीथ निर्युक्ति में जहाँ स्वयं भद्रबाहु-रचित गाथाएँ हैं, वहाँ अन्य प्राचीन आचार्यों की गाथाएँ भी हैं।

(३) बृहत्कल्प और निशीथ की निर्युक्ति की कई गाथाएँ समान हैं।

(४) प्राचीन गृहीत तथा संकलित गाथाओं की आवश्यकतानुसार यथाप्रसंग भद्रबाहु ने व्याख्या भी की है।

निशीथ भाष्य और उसके कर्ता :

निशीथ सूत्र की निर्युक्ति नामक प्राकृत पद्यमयी व्याख्या के विषय में विचार किया जा चुका है। अब निर्युक्ति की व्याख्या के विषय में विचार प्रस्तुत है। चूर्णिकार के अभिप्राय से निर्युक्ति की प्राकृत पद्यमयी व्याख्या का नाम 'भाष्य' है। अनेक स्थानों पर निर्युक्ति की उक्त व्याख्या को चूर्णिकार ने स्पष्ट रूप से 'भाष्य' कहा है, जैसे—'भाष्यं यथा प्रथमोद्देशके' —निशीथ चूर्णि भाग २, पृ० ९८, 'सभाष्यं पूर्ववत्' यह प्रयोग भी कितनी ही बार हुआ है—वही पृ० ७३, ७४, आदि।

चूर्णिकार ने व्याख्याता को कई बार 'भाष्यकार' कहा है, इस पर से भी निर्युक्ति की टीका का नाम 'भाष्य' सिद्ध होता है। जैसे—निशीथ गा० ३८३, ३९०, ४३५, ११००, ४७८५ आदि की चूर्णि। इससे यह तो स्पष्ट ही है कि निर्युक्ति की व्याख्या 'भाष्य' नाम से प्रसिद्ध रही है।

प्रस्तुत भाष्य की, जिसमें निर्युक्तिगाथाएँ भी शामिल हैं, समग्र गाथाओं की संख्या[1] ६७०३ हैं। निशीथ निर्युक्ति के समान भाष्य के विषय में भी कहा जा सकता है कि इन समग्र गाथाओं की रचना किसी एक आचार्य ने नहीं की। परंपरा से प्राप्त प्राचीन गाथाओं का भी यथास्थान भाष्यकार ने उपयोग किया है, और अपनी ओर से भी नवीनगाथाएँ बनाकर

---

१. यह संख्या कम भी हो सकती है, क्योंकि कई गाथाएँ पुनरावृत्त है।

जोड़ी हैं। वृहत्कल्प भाष्य, और व्यवहार भाष्य, यदि इन दो में उपलब्ध गाथाएँ ही निशीथ भाष्य में से पृथक् कर दी जायँ, तो इतने वड़े ग्रन्थ का चतुर्थांश भी शेप नहीं रहेगा, यह कहना कोई अतिशयोक्ति नहीं; किन्तु वास्तविक तथ्य है। इसकी स्पष्ट प्रतीति निम्न तुलना से वाचकों को हो सकेगी। इससे इतना तो सिद्ध होता ही है कि जैन शास्त्रगत विपयों की सुसंवद्ध व्याख्या करने की परंपरा भाष्यों के समय में सुनिश्चित हो चुकी थी; जिसका आश्रय लेना व्याख्याता के लिये अनहोनी वात नहीं थी।

निशीथ भाष्य और व्यवहार भाष्य की गाथाओं की अकारादि क्रम से वनी सूची मेरे समक्ष न थी, केवल वृहत्कल्प भाष्य की अकारादि क्रम सूची ही मेरे समक्ष रही है। फिर भी जिन गाथाओं की उक्त तीनों भाष्यों में एकता प्रतीत हुई, उन की सूची नमूने के रूप में यहाँ दी जाती है। इस सूची को अंतिम न माना जाय। इसमें वृद्धि की गुंजाइश है। इससे अभी केवल इतना ही सिद्ध करना अभीष्ट है कि निशीथभाष्य में केवल चतुर्थांश, अथवा उससे भी कुछ कम ही नया अंश है, शेप पूर्वपरंपरा का पुनरावर्तन है। और प्रस्तुत तुलना पर से यह भी सिद्ध हो जायगा कि परंपरा में कुछ विपयों की व्याख्या अमुक प्रकार से ही हुआ करती थी। अतएव जहाँ भी वह विपय आया, वहीं पूर्व परंपरा में उपलब्ध प्रायः समस्त व्याख्या-सामग्री ज्यों की त्यों रखदी जाती थी।

प्रस्तुत तुलना में जहाँ तु० शब्द दिया है वहाँ शब्दशः साम्य नहीं; किन्तु थोड़ा पाठ-भेद समझना चाहिए।

अन्य संकेत इस प्रकार हैं—नि० भा०=निशीथ भाष्य।

वृ० भा०=वृहत्कल्प भाष्य।

पू०=पूर्वार्ध।

उ०=उत्तरार्ध।

भ० आ०=भगवती आराधना।

कल्पवृहद् भाष्य का तात्पर्य वृहत्कल्प भाष्य में उद्धृत कल्पसूत्र के ही वृहद्भाष्य से है।

व्य० भा०=व्यवहार भाष्य।

निशीथ पीठिका

नि० भा०	बृ० भा०
१३३, ५३२६	२४००
१३५	५०१७ तु०
१३७	५०१९
१३८	५०२०
१३९-१४२	५०२१-२४
१५२,५३८५	३४४०, ३४६६
२०८	३४३४, ३४६२
२०९-१२	३४३६-३९
२०१४ पू०	३४४०,३४६६
२२२-२३	३४५१-५२
२२५	३४५३ (भ०आ० ७६८)
२२७-२९	३४५६-५८
२९८-३०९	६०६६-६०७७
३१०	६०७८ तु०
३११	६०८०
३१२	६०८१
३१३-१६	६०८४-८७
३५२	४९४१ तु०
३९०	४९४१ तु०
३६३-६७	४९४३-४७
३६८	४९४९
३७६	४९१२ तु०

निशीथ सूत्र का भाष्य

नि० भा०	बृ० भा०
४९९	४८९५ तु०
५००	४८९७ तु०
५०१	४८९८ तु०
५०२	४८९९
५०३	४९०२
५०४	४९००
५०५	४९०३
५०६	४९०१
५०७	४९०४
५०८-५१३	४९०५-४९१०
५१८	२५८४ तु०
५१९-५४४	२५८५-२९०९
४४५-४९	२६११-१५
५५३	४९२३ तु०
५५८-५९	४९२३,४९२५
५६०	४९२६ तु०
५६१-२	४९२७-८
५६३	४९१८
५६४	४९१९ तु०
५६५	४९२९ तु०
५७७-८७	४९३०-४०
७५९	३६६१ तु०
७६२	३६६४
७६३	३६६८
७६४	३६६६
७६६	३६६७
८६६-९	६१०५-८
८७१	६११०
८७२	६१११
८८२-३	६०६६-७
९२४-९	३८५६-६१
९३१-४०	३८६३-७२
९४२-७	३८७३-८
९४९-६५	३८८२-९८
९६८	३८९९
९७०, ३२८०	३९००
९७१	३९०१ तु०
१०१३	२०२४
११३८-९	३५१९-२०
११४०-४२	३५२१-२
११४२	३५२४
१३४३	३५२३

नि० भा०	बृ० भा०
११४४-९१	३५२५-७२
११९२	यह गाथा टीका पर से बृ० में फलित होती है। देखो, गा० ३५७२ की टीका।
११९३-१२०४	३५७३-३५८५
१३०७-९	४६०७-९
१३११-१२	४६१२-१३
१३१३	४६१४ तु०
१३१४	५४२ तु०, ४६१६
१३१५	५४३, ४६१७
१३१६-७	५४४, ४६१८, ५४५
१३१८	५४६
१३१९-२५	५४७-५५३
१३२६	५५४, ४६१९
१३२८-३३	५५५-६०
१३३५-५३	५६१-५७९
१३५४	४६२०
१३५५	४६२१ तु०
१३५७	४६२२ तु०
१३५९-८५	४६२३-४९
१३९३-५	३९६२-६४
१३९६-९	४०८०-३
१४०१-८	४०८५-९२
१४०९	३९६५
१४१०-१६	४०९३-९९
१४७२-७७	३१८४-८९
१६२७-८	१५८३, १५७३
१६३१	१५८१
१६३२	१५८४
१६३३, ४१	१५८५-९३
१६४२-४	१६०१-३
१६४५	१६०५

नि० भा०	बृ० भा०
१६४६	१६०४
१६४७	१६०६
१६४८	१६०५
१६४९	१६०७
१६५०-६४	१६०८-२२
१६६६-८९	३६९०-३७१३
१६९०	क० बृहत् भाष्य
१६९१	३७१४
१६९३	३७१६
१६९४	३७१५
१६९५-१७३०	३७१७-५२
१७३१	३७५४
१७३२	३७५३
१७३३-४०	३७५५-६२
१७४१-५४	३७६४-७७
१७५५	३७७९
१७५६	३७७८
१७५७-६३	३७८०-८६
१७६७-८१	३७८७-३८००
१७८२	३८०३
१७८३	३८०४
१७८४	३८०१
१८८३	५५९६
१८८६-८८	५५९७-९९
१८९०	५६००२
१८९१-२	५६०४-५
१८९३	५६०७
१८९४	५६१०
१९४२	१०२९ तु०
१९६८, ३४२६	२८७८, २९७२
१९६९	२८७९, २९७३
१९७०-९४	२९७४-२९९८
१९९५	२९९९ तु०
२०२५-३०	१६७४-७९

नि० भा०	बृ० भा०	नि० भा०	बृ० भा०
२०३१	१६८१	२७२८	४७३८
२०३२	१६८२	२७३७-५१	५४७५-८६
२०३३	१६८०	२७५५-६	५४६०-६१
२०३४-४२	१६८३-६१	२७७४	५७२७, २६६३
२०६७	उपदेशमाला ३६२	२७७६	५७२६, २६६५
२२४२	४६४८	२७७७	५७३०, २६६६
२२४३	४६५०	२७७८	५७३१, २६६७
२२४४	४६५२, ४६६५	२७७६	५७३३, २६६८
२२४६	४६५५	२७८०	५७३४, २६६६
२२४७	४६५७	२७८१	५७३७, २७०१
२२४८	४६५८	२७८२	५७३८, २७०२
२३५१-३	५२५४-६	२७८३	५७३५, २७०४
२३५४	५२५८	२७८४	५७३६, २७०५
२३५६	५२५६	२७८५	५७३६, २७०६
२३५७-६	४१६६-८	२७८६	५७४०, २७०७
२३६१-७०	४७६६-४८०८	२७८७	५७४१, २७०८
२३७२, २४०२	४८०६४८३	२७८८	५७४२, २७०६
२४४८	२०४८ तु०	२७८६	५७४३, २७१०
२४४६-५४	२०५०-५५	२७६०	५७४४, २७११
२४५६	२०६०	२७६१	५७४५, २७१३
२४५८	२०६१	२७६२	५७४६, २७१४
२४५६-६६	२०६४-७१	२७६३	५७४७, २७१५
२४६८-२५०६	६३८२-६०	२७६४	५७४८, २७१६
२५०८-१२	६३६२-६	२७६५	५७४६, २७१७
२५२६	३५८८	२७६६-२८१६	५७६२, ८२
२५३१	३५८६	२८१७-२६	५७५०-५६
२६१८	६०६०	२८३३	५७६१
२६६५	५३४१	२८३४	५५६७
२६६२-८२	५३४२-५८	२८३५-४८	५५६६-८२
२६८५	५३५६	२८५०-६०	५५८३-६३
२७००-२७०५	५०७३-७८	२८६४	६४२२
२७०७-८	५०८१-२	२८८०, १८८६	५५६७
२७०६	५०८४	२८८१, १८८७	५५६८
२७११	५०८३	२८८२, १८८८	५५६६
२७१८-२१	४७२६-३२	२८८६	५७८५
२७२२-२५	४७३४-३७		

नि० भा०	वृ० भा०
२८९९	५७९०
२८९०	५७८९
२८९१-३	५७८६,८
२८९४-२९३१	५७९१, ५८२८
२९३४-४५	५८३०-४१
२९४६	५८४२ तु०
२९४८-६५	५८४३-६०
२९६६	१८७०
२९६९-९६	१८११·९८
२९९७-३००७	१९००-१९१०
३००८	१९१२ तु०
३००९	१९११
३०१०-१२	१९१३-१५
३०१३	१९१७
३०१४	१९१६
३०१५	१९१८
३०१६-२६	१९१९-२९
३०२७	१९३१
३०२८	१९३२
३०२९	१९३०
३०३२	१९३३
३०३३-४६	१९३४-४७
३०४९-८७	१९४८-८६
३०८९-३१०४	१९८७-२००२
३१२४-२७	२७३५-३८
३१२८-३४	२७४०-४६
३१३५	२७५७
३१३६	२७४७
३१४९-५४	४२८०-८५
३१५६-७	४२८६-७
३१८२	५२२५
३२२४-५३	४२४९-९८
३२५४-५५	४२६७-६८
३२५६	४२७९
३२५७-६२	४२८७-९२

नि० भा०	वृ० भा०
३२६३	४२९४
३२६४-७०	४२९५-४३०१
३२७१-७५	४३०३-७
३२८०	३९००
३२९२	३९९९ तु०
३३५९	२७६२
३३६०-१	२७६०-१
३३६२-९०	२७६३-९१
३३९७-३४०४	२८४९-५६
३४०५	२८५८
३४०६	२८५७
३८०७-४०	२८५९-९२
३४४१-५७	२८९४-२९१०
३४५९-६२	२९११-१४
३४६३-४	२९१६-७
३४६५	२९१५
३४६६	२९२०
३४६७	२९१८
२४६८	२९१९
३४६९-७१	२९२१-२३
३५६१-२	५१६६-७
३५६३-७६	५१४०-५४
३५७७	५१५२
३५७८-९	५१५५-६
३५८१-९	५१५७-६५
३५९१-३६००	वृ० में ये गाथाएँ छूट गई हैं, जो वहाँ आवश्यक हैं।
३६०१-१९	५१६८-८६
३६२०	२८२
३६२१	२७७, २८५
३६२२-४	५१८७-८९
३६८१-८७	४९८६-९२
३६९४-९९	५२१४-१९

नि० भा०	बृ० भा०
३७००	५२२४
३७०२	५२३०
३७५२	४११ तु०
३७८८-९७	५९९८-६००७
३७९८-३८००	६०१०-१२
३८१२	३२३ (जीतभाष्य)
३८१३	११३२
३८१४-३९७५	जीतभाष्य (३२९ से) और व्यवहार भाष्य (उ० १०, गा० ४०० से) ये गाथाएँ हैं।
४००४-१५	३८२७-३८
४०१६	३८४१
४०१७	३८३९
४०१८-२०	३८४०-३
४०५९-६४	१८१६-२१
४०६५	१८२५
४०६६	१८२२
४०६७	१८२६
४०६८	१८२३
४०६९	१८२४
४०७०-९३	१८२७-५०
४०९४	१८५३
४०९५	१८५१
४०९६	१७५२
४०९७	१८५६
४०९८-९	१८५४-५
४१००-४१०३	१८५७,६०
४१०४-९	१८६२-६७
४११६-७	१८६८-९
४१४२-६१	५२६४-८३
४१६२	५२८५
४१६३	५२८४
४१६८-८१	५२८७-५३००

नि० भा०	बृ० भा०
४१८२-४	५३०२-४
४१८५	५३०१
४१८६-९५	५३०५-१४
४२१०	५६२१
४२११	५६२०
४२१२	५६२२
४२१३-४९	५६२३-४९
४२५१-५	५६६०-४
४३६९-७२	४५४२-५
४३७३	४५५०
४३७४	४५४९
४५२७	४००१
४७०२	८५२
४७०३	८५१
४७०४-६	८५३-५
४७०८-११	८३९-४२
४७१४-६	८४४-६
४७१९-२९	८५८-६८
४७३०-४	८७०-४
४७३५-५७	४७७-८९९
४७५८-९	९०१-२
४७६०	९००
४७६१-४	९०३-६
४७६६	९०९
४७६७	९०७
४७६८	९०८
४५६९	९१०
४७७०-८८	९११-२९
४७९०-४	९३०-४
४७९५-४८२४	९३६-६५
४८२५	बृ० भा० में टीका की गिनी गई है।
४८२६-९२	९६६-१०३०
४८९३	कल्पबृहद्भाष्य की है।

नि० भा०	बृ० भा०	नि० भा०	बृ० भा०
४८९४	१०३१	५२२३-७	२५७८-८२
४८९५-९६	१०३२-३	५२३१-४८	३३१९-३३३०
४८९८-४९००	१०३४-६	५२४९	कल्पबृहद्भाष्य
४९०१-३	१०३८-४०	५२५०-६०	३३३१-४१
४९०४	१०३७	५२६१	३३४२ तु०
४९०५-७	१०४१-३	५२६४	३३४३
४९०८-४८	१०४५-८५	५२६५-६	३३४४-५ तु०
५००१	२७९४ तु०	५२६७-७६	३३४६-५५
५००२-८	६०३-९	५२७८	३३५६
५०१०-२२	६१०-२२	५२७९	३३५७ तु०
५०२४-४२	६२३-४८	५२८०-५	३३५८-६३
५०५०-५२	२७९५-९७	५२८६-८८	३३६५-६७
५०५३	२७९९	५२८९-९२	३३६८-९२ तु०
५०५४	२७९८	५२९३-८	३३७२-७
५०५५-६०	२८००-२८०५	५२९९	३३७८ तु०
५०६१	२८१०	५३००	३३७९
५०६२-५	२८०६-९	५३०१	३३८० तु०
५०६६-९०	२८११-३५	५३०२	३३८१
५०९८-५११४	२४५०-२४६६	५३०३	३३८२ तु०
५११५ पू० ६ उ०	२४६७	५३०४	३३८४
५११७-२३	२४६८-२४७४	५३०५	३३८७
५१२५	२४७६	५३०६	३३८६
५१२६	२४७५	५३०७	३३८५
५१२७-६२	२४७७-२५१२	५३०८	३३८८
५१६३-४	२५१४-५	५३१०-३२	२३८४-२४०६
५१६५	२५१३	५३३३	२४०८ तु०
५१६६-७९	२५१६-२९	५३३४-५१	२४०९-२४२५
५१८०-९४	२५३४-४८	५३५४-७६	३३१३-३४
५१९५	२५५०	५३७८, ५१५८	२५०८
५१९६	२५४९	५३७९, ५१६४	२५४८
५१९९	२५५२	५३८०, २०८	३४३४, ३४६२
५२००-१३	१५५३-६६	५३८१, २०९	३४३६
५२१५-६	२५६७-८	५३८२, २१०	३४३७
५२१७-२१	२५७२-७६	५३८३, २११	३४३८
५२२२	२५६९, २५७७	५३८४, २१२	३४३९

नि० भा०	वृ० भा०
५३८५-६	३४४०-१
५३८७	३४४०
५३८८	३४४२
५३८९-९५	३४४४-५०
५३९६, २२२	३४५१
५३९७, २२३	३४५२
५३९८	३४५४
५३९९, २२५	३५५३
५४००	३४५५
५४०१, २२७	३४५६
५४०२, २२८	३४५७
५४०३, २२९	३४५८
५४०४	३४६१
५४०५	३४६९
५४०६	३४७०
५४०७	३४७१
५४०८	३४७२
५४०९	३४७३
५४२४	५७१४
५४५७	५७१३
५४५८	२८७९पू० ५३६३उ०
५४५९-६१	५३६३-६५
५४६२	५६६७
५४६३-९५	५३६८-५४००
५४९७-५५०३	५४०१-७
५५०५-१९	५४०८-२२
५५२०	५४२४
५५२१	५४२३
५५२३-२७	५४२५-२९
५५२९-४८	५४३०-४९
५५५०	५४५० उ०
५५५१-२	५४५१-२
५५५४-७०	५४५३-६९
५५७२	५४७२
५५७३	५४७३

नि० भा०	वृ० भा०
५५७४	५४७४
५५७५-८९ = २७३७-५१	५४७५-८९
५५९०, २७५४	५४९४
५५९२, २७५५	५४९०
५५९३, २७५६	५४९१
५५९६-५६२६	आवश्यक निर्युक्ति उत्तराध्ययन निर्युक्ति
५६३५, ४६	३०४१-५२
५६४७-६५	३०५५-७३
५६६६-८६	३०७५-९५
५६८७-९२	३०९७-३१०२
५६९४-५	३१०३-४
५६९६-९९	३१११-१४
५७००-१	३११५
५७०२-३	३११६
५७०४-५	३११७
५७०६	३११८
५७०७-२६	३११९-३८
५७३३	३२६२
५७३४	३२६९
५७३५-३७	३२६६-६८
५७३८	३२७०
५५४०-२	३२७१-३
५७४३-५८	३२७४-८९
५७८६-८८	३९६१-३
५७८९	३९६६
५७९०-१	३९७१-२
५७९२-५	३९६७-७०
५७९६-५८३०	३९१३-४००७
५८३१, ५८२८	४००५
५८३२	४००८
५८३३-८७	४००९-६२
५८८८-५९००	४०६४-७६
५९३३	६३६४

नि० भा०	बृ० भा०
५९४३	४८५१
६११८	७६२
६२८३	११२७
६२८४-८६	११२८-३० तु०
६४६८७-८	व्य० वि० २, गा० २२१-२,
६४६९-६५३५	व्य० वि० २, गा० २२३-२९०

नि० भा०	व्य० भा० ३
६५३६	गा० २९१
६५३७-८	व्य० २९४-५
६५४०	व्य० २९९
६५४२	३०३
६५४३-४६	३०४-७
६५४८	३०८
६५५१-६	३११-६
६५५९-७६	३१९-३६
६५७८	३४१
६५७९	३४४

नि० भा०	व्य० भा० ३
६५८०-१	३४५-६
६५८२	३५१
६५८३	३५५
६५८४	३५६-४०३
६५८५	४०४-५
६५८६	३५१
६५८७	३५४
६५८८-६६३१	३५६-४०३
६६३३-४	४०४-५
६६३६-७	४०६-७
६६३९	४०८
६६४०	४०९
६६४१	४११
६६४२-४७	४१२-७
६६४९-५२	४१८-२१
६६५५	४२२
६६५७	४२३
६६५८	४२८
६६६१	४२६

उक्त तुलना से यह तो सिद्ध होता ही है कि निशीथ भाष्य का अधिकांश बृहत्कल्प भाष्य और व्यवहार भाष्य से[1] उद्धृत है। उक्त दोनों में निशीथ से उद्धरण नहीं लिया गया, इसका कारण यह है कि स्वयं निशीथ भाष्य में ही 'कल्प' शब्द से कल्पभाष्य का उल्लेख है। अतएव यही मानना संगत है कि कल्प और व्यवहार से ही निशीथ में गाथाएँ ली गई हैं। निशीथ-भाष्य गा० ६३५१ में 'सासं जहा कप्पे' कह कर कल्पभाष्य की गा० १२६६ आदि की ओर संकेत किया है। इससे यह भी सूचित होता है कि कल्प और व्यवहार के बाद ही निशीथ भाष्य की रचना हुई है। निशीथ भाष्य गा० ४३४ में बृहत्कल्पभाष्यगत प्रथम प्रलंब-सूत्रीय भाष्य की ओर संकेत है। इससे भी कल्प भाष्य का पूर्ववर्तित्व सिद्ध है।

अब निशीथ भाष्य के रचयिता कौन थे, इस प्रश्न पर विचार किया जाता है। भाष्यकार ने स्वयं अपना परिचय, और तो क्या नाम भी, भाष्य के प्रारंभ में या अंत में कहीं नहीं दिया है। चूर्णिकार ने भी आदि या अंत में भाष्यकार के विषय में स्पष्ट निर्देश नहीं किया

---

१. कल्प और व्यवहार भाष्य के कर्ता एक ही हैं। देखो, बृहत्कल्प भाष्य गा० १—'कप्पववहाराणं वक्खाण विहिं पवक्खामि।' और व्यवहारभाष्य की उपसंहारात्मक गाथा—'कप्पववहाराणं भासं'—गा० १४१ उद्देश १०।

है। ऐसी स्थिति में भाष्यकार के विषय में मात्र संभावना ही की जा सकती है। मुनिराज श्री पुण्य विजयजी ने वृहत्कल्प भाष्य की प्रस्तावना (भाग ६, पृ० २२) में लिखा है कि "यद्यपि मेरे पास कोई प्रमाण नहीं है, फिर भी ऐसा लगता है कि कल्प (अर्थात् वृहत्कल्प), व्यवहार और निशीथ लघुभाष्य के प्रणेता श्री संघदास गणि हैं। कल्प-लघुभाष्य और निशीथ लघुभाष्य इन दोनों की गाथाओं के अति साम्य से[1] हम इन दोनों के कर्ता को एक मानने की ओर ही प्रेरित होते हैं।"

मुनिराज श्री पुण्य विजय जी ने वृहत्कल्प लघुभाष्य की गाथा ३२८९,—जो निशीथ में भी उपलब्ध है (गा० ५७५८),—'उदिण्णजोहाउलसिद्धसेणो स पत्थिवो णिज्जियसत्तुसेणो' में आने वाले 'सिद्धसेन' शब्द के साथ संघदास गणि के नामान्तर का तो कोई सम्बन्ध नहीं? ऐसी शंका भी की है। उन्होंने विद्वानों को इस प्रश्न के विषय में विचार करने का आमंत्रण भी दिया है और साथ ही यह भी सूचना दी है कि निशीथ चूर्णि, पंचकल्पचूर्णि, और आवश्यक हारिभद्री वृत्ति आदि में सिद्धसेनक्षमाश्रमण की साक्षी भी दी गई है। तो क्या सिद्धसेन के साथ भाष्यकार का नामान्तर सम्बन्ध है; या शिष्य प्रशिष्यादिरूप सम्बन्ध है—यह सब विद्वानों को विचारणीय है।

इस प्रकार मुनिराज श्री पुण्य विजयजी के अनुसार वृहद्कल्प आदि के भाष्यकार का प्रश्न भी विचारणीय ही है। अतएव यहाँ इस विषय में यत्किंचित् विचार किया जाए तो अनुचित न होगा।

यह सच है कि चूर्णिकार या स्वयं भाष्य कार ने अपने अपने ग्रन्थों के आदि या अन्त में कहीं भी कुछ भी निर्देश नहीं किया है। तथा यह भी सत्य है कि आचार्य मलयगिरिने भी भाष्यकार के नाम का निर्देश नहीं किया है। किन्तु वृहत्कल्प भाष्य के टीकाकार क्षेम कीर्ति सूरि ने निम्न शब्दों में स्पष्ट रूप से संघदास को भाष्यकार कहा है। संभव है इस सम्बन्ध में उनके पास किसी परंपरा का कोई सूचना सूत्र रहा हो?

"कल्पेऽनल्पमनर्घं प्रतिपदमर्पयति योऽर्थनिकुरुम्बम्।
श्रीसंघदास-गणये चिन्तामणये नमस्तस्मै ॥"

"अस्य च स्वल्पग्रन्थमहार्थतया दुःखबोधतया च सकलत्रिलोकीसुभगङ्करण क्षमाश्रमण नामधेयाभिधेयैः श्रीसंघदासगणिपूज्यैः।"

प्रतिपदप्रकटितसर्वज्ञाज्ञाविराधनासमुद्भूतप्रभूतप्रत्यपायजालं निपुणचरणकरणपरिपालनोपायगोचरविचारवाचालं सर्वथा दूषणकरणेनाप्यदूष्यं भाष्यं विरचयांचक्रे।"

उपर्युक्त उल्लेख पर से हम कह सकते हैं कि वृहत्कल्प भाष्यटीकाकार क्षेमकीर्ति ने वृहत्कल्प भाष्य के कर्ता रूप से संघदास गणि का स्पष्ट निर्देश किया है। वृहत्कल्प भाष्य और व्यवहार भाष्य के कर्ता तो निश्चित रूप से एक ही हैं, यह तो कल्प भाष्य के उत्थान और

---

१. मुनिराज द्वारा सूचित अतिसाम्य यहां दी गई तुलना से सिद्ध होता है।

इमं ओहेण णवविहं पच्छित्तं भण्णति—

चउगुरुगं मासो या, मासो छल्लहुग चउगुरू मासो।
छग्गुरु छल्लहु चउगुरु, बितियादेसे भवे सोही ॥६६४०॥

सीहाणुगो होउ सीहाणुगस्स आलोएति चउगुरु, सीहाणुगस्स वसभाणुगो आलोएति मासलहू, मीहाणुगस्स कोल्लुगाणुओ होउ मासलहू वसभाणुगस्स सीहाणुगो आलोएति छल्लहू, वसभाणुगस्स वसभाणुगो आलोएति चउगुरु, वसभाणुगस्स कोल्लुगाणुगो मासलहु, कोल्लुगाणुगस्स सीहाणुगो आलोएति छग्गुरु, कोल्लुगाणुस्स वसभाणुगो छल्लहू, कोल्लुगाणुगस्स कोल्लुगाणुगो चउगुरु, एस बितियादेसे सोधी भणिया ॥६६४०॥

तेण आलोयगेण अपलिउचिय अपलिउचिय आलोइय, वीप्सा कृता, निरवशेष सर्वमालोचित, "सर्वमेत" ति। अथवा—"सव्वमेय" ति ज अवराहावण्ण ज च पलिउचणाणिप्फण्ण अण्ण च किं वि आलोयणकाले असमायारणिप्फण्ण सव्वमेत स्वकृत। "सगड" "साहणिय" त्ति एक्कतो काउ से मासादि पट्ठविज्जति जाव छम्मासा। अहवा – "साहणिय" त्ति ज छम्मासातिरित्त त परिसाडेऊण झोसेत्ता छम्मासादित्यर्थ। "जे" त्ति य साधू, "एयाए" त्ति या उक्ता [विधि] प्राक्कृतस्य अपराधस्य स्थापना "पट्ठवणा", अहवा – प्रकर्षेण कृतस्य स्थापना। अहवा – अविशुद्धचारित्रात् आत्मा अमायावित्वेन आलोचनाविधानेन उद्धृत्य विसुद्धे चारित्रे प्रकर्षेण स्थापित। अहवा – "पट्ठवणाए" त्ति प्रारभ, य एष आलोचनाविधि प्रायश्चित्तदानविधिश्च अनेन प्रस्थापित प्रवर्तित इत्यर्थ। "पट्ठविय" त्ति तदेव यथारुह प्रायश्चित्तकरणत्वेनारोपित, य एव प्रायश्चित्तकरणत्वेन स्थापित। "णिव्विसमाणो" त पच्छित्त वहतो कुव्वमाणेत्यर्थ। त वहतो प्रमादतो विसयकसाएहिं जइ अण्ण "पडिसेवति" त्ति ततो पडिसेवणाओ "से वि" त्ति ज से पच्छित्त त "कसिण" त्ति सव्व। अहवा – अणुग्गहकसिणेण वा "तत्थेव" त्ति पुव्वपट्ठविए पच्छित्ते आरोवेयव्व चडावेयव्व ति वुत्त भवति। "सिय" त्ति अवधारणे दट्ठव्वो। एस सुत्तत्थो।

इमा णिज्जुत्ती—

मासादी पट्ठविते, जं अण्णं सेवती तगं सव्वं।
साहणिऊणं मासा, छद्दिज्जंतेतरे झोसो ॥६६४१॥

ज छम्मासातिरित्त त एगतर तस्स झोससेस इमाए गाहाए सुत्ते गतत्थ। "पट्ठविए" त्ति ज पद तस्सिमे भेदा –

दुविहा पट्ठवणा खलु, एगमणेगा य होतऽणेगा य।
तवतिग परियत्ततिगं, तेरस उ जाणि त पताई ॥६६४२॥

—प्रकृतं समाप्तम्।

सा पायच्छित्तपट्ठवणा दुविधा – एगा अणेगा वा, तत्थ जा सचइया सा णियमा छम्मासिया एगविधा। सा य दुविधा – उग्घाताणुग्घाता वा। अहवा – केसिं चि मएण एगविधा मासियादीणं अण्णतरठाणपट्ठवणा। तत्थ जा अणेगविहा सा इमा – "तवतिग" पच्छद्ध। तत्थ पणगादिभिण्णमासतेसु परिहारतवो ण भवति, मासादिसु भवतीत्यर्थ। मासिय एक्क तवठाण, दुमासादि जाव चाउम्मासिय वितिय तवट्ठाण, पणमासछम्मासिय तइय तवट्ठाण ति, एते वि उग्घाताणुग्घाता वा, 'परियत्ततिग' णाम पव्वज्जा परियागस्स जत्थ परावत्ती भवति त परियत्ततिग त च छेदतिग, छेदो वि उग्घाताणुग्घाता वा, मूलतिग, अणवट्ठतिग, एक्क

व्यवहार भाष्य के उपसंहार को देखने पर अत्यन्त स्पष्ट हो जाता है[1]। अतएव बृहद्कल्प और व्यवहार भाष्य के कर्ता रूप से संघदास क्षमा श्रमण का स्पष्ट नाम-निर्देश क्षेम कीर्ति ने हमारे समक्ष उपस्थित किया है, यह मानना चाहिए।

अब प्रश्न यह है कि क्या निशीथ भाष्य के कर्ता भी वे ही हैं, जो बृहत्कल्प और व्यवहार भाष्य के कर्ता हैं? मुनिराज श्री पुण्यविजयजीने तो यही संभावना की है कि उक्त तीनों भाष्य के कर्ता एक ही होने चाहिए। पूर्वसूचित तुलना को देखते हुए, हमारे मतसे भी इन तीनों के कर्ता एक ही हैं, ऐसा कहना अनुचित नहीं है। अर्थात् यह माना जा सकता है कि कल्प, व्यवहार और निशीथ-इन तीनों के भाष्यकार एक ही हैं।

अब मुनिराज श्री पुण्यविजयजी ने संघदास और सिद्धसेनकी एकता या उन दोनों के सम्बन्ध की जो संभावना की है, उस पर भी विचार किया जाता है। जिस गाथा का उद्धरण देकर संभावना की गई है, वहां 'सिद्धसेन' शब्द मात्र श्लेपसे ही नाम की सूचना दे सकता है। क्योंकि सिद्ध सेन शब्द वस्तुतः वहां सम्प्रति राजा के विशेषण रूप से आया है, नाम रूप से नहीं। बृहत्कल्प में उक्त गाथा प्रथम उद्देशक के अंत में (३२८९) आई है, अतएव श्लेप की संभावना के लिए अवसर हो सकता है। किन्तु निशीथ में यह गाथा किसी उद्देश के अन्त में नहीं, किन्तु १६ वें उद्देशक के २६ वें सूत्र की व्याख्या की अंतिम भाष्य गाथा के रूप में (५७५८) है। अतएव वहां श्लेपकी संभावना कठिन ही है। अधिक संभव तो यही है कि आचार्य को अपने नाम का श्लेप करना इष्ट नहीं है, अन्यथा वे भाष्य के अंत में भी इसी प्रकार का कोई श्लेप अवश्य करते।

हां, तो उक्त गाथा में आचार्य ने अपने नामकी कोई सूचना नहीं दी है, ऐसा माना जा सकता है। फिर भी यह तो विचारणीय है ही कि सिद्धसेन क्षमाश्रमण का निशीथ भाष्य की रचना के साथ कोई संबंध है या नहीं? मुनिराज श्री पुण्यविजयजीने सिद्धसेन क्षमाश्रमण के नामका अनेकवार उल्लेख होने की सूचना की है। उनकी प्रस्तुत सूचना को समक्ष रखकर मैंने निशीथ के उन स्थलों को देखा, जहाँ सिद्धसेन क्षमाश्रमण का नाम आता है, और मैं इस परिणाम पर पहुँचा हूँ कि बृहत्कल्प, व्यवहार और निशीथ भाष्य के कर्ता निशीथ चूर्णिकारके मतसे सिद्ध-सेन ही हो सकते हैं। क्षेम कीर्ति-निर्दिष्ट संघदास का क्षेमकीर्ति के पूर्ववर्ती भाष्य या चूर्णि में कहीं भी उल्लेख नहीं है, किन्तु सिद्धसेन का उल्लेख तो चूर्णिकार ने वारवार किया है। यद्यपि मैं यह भी कह ही चुका हूँ कि चूर्णिकार ने आदि या अंत में भाष्य कारके नाम का उल्लेख नहीं किया है तथापि चूर्णि के मध्य में यत्र तत्र जो अनेक उल्लेख हैं, वे इस बात को सिद्ध कर रहे हैं कि चूर्णिकारने भाष्य कार के रूप से सिद्धसेन को ही माना है। अब हम उन उल्लेखों की जांच करेंगे और अपने मतकी पुष्टि किस प्रकार होती है, यह देखेंगे।

(१) चूर्णिकारने निशीथ गा० २०५ को द्वार गाथा लिखा है। यह गाथा निर्युक्ति-गाथा होनी चाहिए। उक्त गाथागत प्रथम द्वार के विपय में चूर्णि का उल्लेख है—'सागणिए त्ति दारं। अस्य सिद्धसेनाचार्यो व्याख्यां करोति'—भाष्य गा० २०६ का उत्थान। गा० २०७ के

1. वस्तुतः ये दोनों भाष्य एक ग्रन्थ ही है।

तेमासियं परिहारट्ठाणं पट्ठविए अणगारे अंतरा मासियं परिहारट्ठाणं पडिसेवित्ता आलोएज्जा, अहावरा पक्खिया आरोवणा आइमज्झावसाणे सअट्ठं सहेउं सकारणं अहीणमइरित्तं तेण परं दिवड्ढो मासो ॥सू०॥३५॥

दोमासियं परिहारट्ठाणं पट्ठविए अणगारे अंतरा मासियं परिहारट्ठाणं पडिसेवित्ता आलोएज्जा, अहावरा पक्खिया आरोवणा आइमज्झावसाणे सअट्ठं सहेउं सकारणं अहीणमइरित्तं तेण परं दिवड्ढो मासो ॥सू०॥३६॥

मासियं परिहारट्ठाणं पट्ठविए अणगारे अंतरा मासियं परिहारट्ठाणं पडिसेवित्ता आलोएज्जा, अहावरा पक्खिया आरोवणा आइमज्झावसाणे सअट्ठं सहेउं सकारणं अहीणमइरित्तं तेण परं दिवड्ढो मासो ॥सू०॥३७॥

छम्मासिय पचमासिय चाउम्मासिय तेमासिय दोमासिय मासिय सव्वा लक्खणाओ पत्ताओ। लक्खण पुण मज्झे गहिए आदिमा अतिमा य सजोगा ते भाणियव्वा, जहा छम्मासियादिपट्ठवणा पट्ठविते दोमासियस्स सजोगो भणितो तहा एतेसिं पि सव्वासिं सजोगो भाणियव्वो।

तेण इम अत्थसुत्त – "छम्मासिय परिहारट्ठाण पट्ठविए अणगारे अतरा छम्मासिय चेव परिहारट्ठाण पडिसेवित्ता आलोएज्जा अहावरा चत्तालीसइराइया आरोवणा आदी जाव तेण पर सचत्तालीसतिराया छम्मासा", अत्थो पूर्ववत्।

एव पचमासित परिहारट्ठाण पट्ठविते छम्मासिय पडिसेवति।

एव चाउम्मासिय पट्ठविए पडिसेवति, तेमासिय पट्ठविए पडिसेवति, दोमासिय पट्ठविए पडिसेवति, मासिय पट्ठविए पडिसेवति। एए छ पडिसेवति। छ वि सुत्ता इह णत्थि। किं कारण जेण छम्मासाण परेण ण दिज्जति ? ठविया य सचत्ताला छम्मासा, तेण ठविता सुत्ता नत्थि। इदाणिं छम्मासिए पट्ठविए अतरा पचमासित पडिसेवति। अहावरा वीसतिरातिया आरोवणा आदि मज्झावसाणे जाव तेण पर सपचराया छम्मासा, एव पचमासे पट्ठविते पचमास पडिसेवइ। चाउम्मासिए वि पचमासा, तेमासिए वि पचमासा, दोमासिए वि पचमासा, मासिते वि पचमासा, एत्थ वि ठविया सुत्ता णत्थि, जेण सपचराया छम्मासे ति। छम्मासिए पट्ठविए अतरा चाउम्मासित पडिसेवेज्जा, अहावरा तीसति जाव तेण पर पचमासा, एव पचमासित चउमासित तेमासिय दोमासिय मासिए वि पट्ठविए चउमासिय पडिसेवित्ता आलोएज्जा, अहावरा ती (वी) सतिरातिता आरोवणा जाव तेण पर पचमासा ठविता।

सुत्त एत्थ अत्थि – पचमासिय परिहारट्ठाण पट्ठविते चाउमासित परिहारट्ठाण पडिसेवित्ता आलोएज्जा अहावरा ती (वी) सतिरातिता आरोवणा जाव तेण पर छम्मासो। अत्थो पूर्ववत्। सुत्ता छम्मासिय परिहारट्ठाण पडिसेविते अणगारे अतरा तेमासित परिहारट्ठाण आलोएज्जा, अहावरा पणवीसतिराइदिया आरोवणा आदी जाव तेण पर पचूणा चत्तारि मासा पचमासिते पट्ठविए, चउमासिते पट्ठविए, तेमासिते

उत्थान में निम्न उल्लेख है—'इमा पुण सागणिय-णिक्खित्तदाराणं दोण्हवि भद्दबाहुसामिकता प्रायश्चित्त व्याख्यान गाथा ।' गा० २०८ के उत्थान में चूर्णि है—'इयाणिं संघट्टणे त्ति दारं । एयस्स भद्दबाहुसामिकता वक्खाण गाहा' ।' उक्त २०८वीं गाथा में भद्रबाहु ने नौ अवान्तर द्वार बताए हैं। उन्हीं नव अवान्तर द्वारों की व्याख्या क्रमशः सिद्धसेन ने गा० २०९ से २११ तक की है—इस बात को चूर्णिकारने इन शब्दों में कहा है—एतेषां (अवान्तर-नवद्वाराणां) सिद्धसेनाचार्यो व्याख्यां करोति'—गा० २०९ का उत्थान। गा० २०५ से गा० २०९ तक के उत्थान सम्बन्धी उक्त उल्लेखों के आधार पर हम निम्न परिणामों पर पहुंच सकते हैं—

(अ) स्वयं भद्रबाहु ने भी निर्युक्ति में कहीं-कहीं द्वारों का स्पष्टीकरण किया है। अथवा मूलद्वार गाथा २०५ को यदि प्राचीन निर्युक्त गाथा मानी जाए तो उसका स्पष्टीकरण भद्रबाहु ने किया है।

(ब) भद्रबाहु कृत व्याख्या का स्पष्टीकरण सिद्धसेनाचार्य ने किया है। इसपर से स्पष्ट है कि भद्रबाहु के भी टीकाकार अर्थात् भाष्यकार सिद्धसेनाचार्य हैं।

(क) निशीथ गा० २०८, २०९, २१०, २११, २१२, २१४ इसी क्रम से बृहत्कल्प भाष्य में भी हैं। देखिए, गाथा ३४३४, ३४३६-९, और ३४४०। अतएव वहां भी निर्युक्तिकार और भाष्यकार क्रमशः भद्रबाहु और सिद्धसेन को ही माना जा सकता है।

प्रसंगवश एकबात और भी यहां कह देना आवश्यक है कि आचार्य हरिभद्र ने आवश्यक-निर्युक्ति के व्याख्या-प्रसंग में कुछ गाथाओं को 'मूल भाष्य' की संज्ञा दी है। प्रस्तुत उल्लेख का तात्पर्य यह लगता है कि हरिभद्र ने आवश्यक के ही जिनभद्रकृत विशेष भाष्य की गाथाओं से भद्रबाहुकृत व्याख्या-गाथाओं का पार्थक्य निर्दिष्ट करने के लिये 'मूलभाष्य' शब्द का प्रयोग किया है। यह तात्पर्य ठीक है या नहीं, यह अभी निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता; किन्तु प्रस्तुत में गाथागत एक ही द्वार की स्वयं भद्रबाहुकृत व्याख्या और सिद्धसेन-कृत व्याख्या उपलब्ध हो रही है। अतएव अन्यत्र भी ऐसे प्रसंग में यदि मूलकारकी व्याख्या और अन्यदीय व्याख्या का पार्थक्य निर्दिष्ट करने के लिये 'मूल भाष्य' शब्द का प्रयोग किया जाए तो इसमें अनौचित्य नहीं है। इतना तो कहा ही जा सकता है कि जब कि जिनभद्र से पूर्व भद्रबाहु से भिन्न अन्य किसी आवश्यक के भाष्यकार का पता नहीं लगता, तब मूल भाष्यकार भद्रबाहु ही हों तो कुछ असंभव नहीं।

(२) गा० २९२ में मृषावाद की चर्चा है। इस गाथा को चूर्णि में भद्रबाहु-कृत व्याख्यान गाथा कहा है—'भावमुसावातस्स भद्दबाहुसामिकता वक्खाणगाहा ।'

इस गाथा के पूर्वार्ध की व्याख्या को सिद्धसेन आचार्य कृत कहा है—'पुव्वद्धस्स पुण सिद्धसेणायरिओ वक्खाणं करेति'—गा० २९३ का उत्थान। इससे सिद्ध होता है कि भाष्यकार सिद्धसेन थे।

(३) गा० २९८ और २९९-ये दोनों गाथाएँ द्वार-गाथाएँ हैं, ऐसा चूर्णिकार ने कहा है। अर्थात् ये निर्युक्ति गाथाएँ हैं। इन्हीं दो गाथागत द्वारों की व्याख्या गा० ३०० से ३१६ तक

है। ये सभी गाथाएं बृहत्कल्प में भी हैं—गा० ६०६६—८७। निशीथ-चूर्णि में इन गाथाओं के व्याख्या-प्रसंग में कहा गया है कि व्याख्याकार सिद्धसेन हैं—'अस्यैवार्थस्य स्पष्टतरं व्याख्यानं सिद्धसेनाचार्यः, करोति'– गा० ३०३ का उत्थान। और ३०४ का उत्थान भी ऐसा ही है। इससे फलित होता है कि बृहत्कल्प और निशीथ के भाष्यकार सिद्धसेन हैं।

(४) गा० २४९ को चूर्णि कारने 'चिरंतन' गाथा कहा है और उसकी व्याख्या करने वाले स्पष्ट रूप से सिद्धसेनाचार्य निर्दिष्ट हैं—देखो गा० २५० की चूर्णि—'एतस्स चिरंतनगाहापायस्स सिद्धसेनाचार्यः स्पष्टेनाभिधानेनार्थमभिधत्ते'। यह उल्लेख इस बात की ओर संकेत करता है कि निर्युक्तिकार भद्रबाहुने प्राचीन गाथाओं का भी निर्युक्ति में संग्रह किया था, और भाष्यकार सिद्धसेन हैं।

(५) गा० ४९९ से शुरू होने वाला प्रकरण बृहत्कल्पभाष्य से (गा० ४८९५) ही लिया गया है। उक्त प्रकरण की ५०४ वीं गाथा के उत्थान में लिखा है—'इममेवार्थं सिद्धसेनाचार्यो वक्तुकाम आह।' इससे भी सिद्ध होता है कि बृहत्कल्प और निशीथ भाष्य के कर्ता सिद्ध-सेन हैं।

(६) गा० ५१८ से शुरू होने वाला प्रकरण भी बृहत्कल्प से लिया गया है। देखिए-निशीथ गाथा ५१८ से ५४९ और बृहत्कल्प भाष्य गा० २५८४ से २६१५। इस प्रकरण की ५४० से ५४४ तक की गाथाओं को चूर्णिकारने सिद्धसेनाचार्यकृत बताया है—देखिए, गा० ५४५ की उत्थान चूर्णि। चूर्णिकार और मलयगिरि दोनों का मत है कि इन गाथाओं में जो विस्तार से कहा गया है वही संक्षेप में भद्रबाहुने कहा है—देखिए, नि० गा० ५४५ की चूर्णि और बृह० गा० २६११ की टीका का उत्थान। स्पष्ट है कि निशीथ और बृहत्कल्प के भाष्यकार सिद्धसेन हैं।

(७) गा० ४०६६—६७ की चूर्णि में भद्रबाहुकृत माना है और उन्हीं गाथाओं के अर्थ को सिद्धसेन स्फुट करते हैं, ऐसा निर्देश भी चूर्णि में किया है—'भद्दबाहुकया गाथा' और 'भद्रबाहुकृत-गाथया ग्रहणं निर्दिश्यते'—निशीथ चूर्णि गा० ४०६६ और ४०६७। तदनंतर लिखा है—'एसेवऽत्थो सिद्धसेणखमासमणेण फुडतरो भन्नति'—गा० ४०६८ की निशीथ चूर्णि। जिस प्रकरण में ये गाथाएँ हैं वह समग्र प्रकरण बृहत्कल्प से ही निशीथ में लिया गया है—देखो, निशीथ गा० ४०५९ से ४१०९ और बृह० गा० १८१६—१८६७। मलयगिरि ने बृह० गा० १८२६—नि० गा० ४०६७ को निर्युक्ति कहा है और निशीथ चूर्णि में उसे भद्रबाहु कृत माना गया है। उक्त गाथा की व्याख्या-गाथा को अर्थात् बृ० गा० १८२७—निशीथ गा० ४०७० को भाष्यकारीय कहा गया है, जब कि चूर्णिकार के मत से वह व्याख्या सिद्धसेनकृत है। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि भद्रबाहुकृत निर्युक्ति (बृहत्कल्प और निशीथ निर्युक्ति) की व्याख्या भाष्यकार सिद्धसेनने की है।

(८) निशीथ गा० १६६१, बृहत्कल्प में भी है—बृ० गाथा ३७१५। गा० १६६१ की व्याख्यारूप नि० गाथा १६६४=बृ० गा० ३७१५ को चूर्णिकार स्पष्ट रूप से सिद्धसेन कृत बताते हैं। ये गाथाएँ जिस प्रकरण में हैं, वह समग्र प्रकरण निशीथ में बृहत्कल्प भाष्य से लिया गया है। देखिए, निशीथ भाष्य गा० १६६६–१७८४ और बृ० भा० गा० ३६९०-३८०४। उक्त प्रकरण पर से यही फलित होता है कि भाष्यकार सिद्धसेन हैं।

(९) निशीथ गा० ५४५९ के उत्तरार्ध को और साथ ही गा० ५४६० को वृहत्कल्प भाष्य में (गा० ५३६३-५३६४) निर्युक्ति कहा गया है। और उक्त निर्युक्ति गाथाओं की भाष्य सम्बन्धी व्याख्या गाथाओं के विषय में निशीथचूर्णि के शब्द इस प्रकार हैं—'सिद्धसेणखमासमणो वक्खाणेति' गा० ५४६३ का उत्थान। यह व्याख्यान-गाथा वृहत्कल्प भाष्य में भी है—गा० ५३६८। इस प्रकार स्पष्ट है कि सिद्ध सेन क्षमाश्रमण भाष्यकार हैं।

(१०) गा० ५७१४ की चूर्णिमें गाथा ५७११ को भद्रबाहुकृत कहा है और सिद्धसेन खमासमणने इसी की व्याख्या को फुडतर करने के लिये उक्त गाथाएं बनाई हैं, ऐसा उल्लेख है—'जे भणिया भद्दबाहुकयाए गाहाए सच्छन्दगमणाइया तिण्णि पगारा ते चेव सिद्धसेणखमासमणेहि फुडतरा करेंतेहि इमे भणिता'—गा० ५७१४ की उत्थान-सम्बन्धी निशीथ चूर्णि। यह समग्र प्रकरण बृहत्कल्प से लिया गया है, और प्रस्तुत गाथा को 'निर्युक्ति गाथा' कहा है। देखिए, निशीथ गा० ५६२५-५७२६ और बृह० गा० ३०४१-३१३८। स्पष्ट है कि भाष्यकार सिद्धसेन हैं।

(११) गा० ६१३८, चूर्णि के अनुसार भद्रबाहुकृत निर्युक्ति गाथा है। उक्त गाथा में निर्दिष्ट अतिदेश का भाष्य सिद्धसेन करते हैं, ऐसा उल्लेख चूर्णि में है—

'एइए अतिदेसे कए वि सिद्धसेणखमासमणो पुव्वद्धस्स भणियं अतिदेसं वक्खाणेति।'

—निशीथ चूर्णि, गा० ६१३६

उपर्युक्त सभी उल्लेखों के आधार पर यह निश्चय किया जा सकता है कि निशीथ भाष्य तो निर्विवाद रूप से सिद्धसेन क्षमाश्रमणकृत है। और क्योंकि वृहत्कल्प और व्यवहार के कर्ता भी वे ही हैं, जिन्होंने निशीथ भाष्य की संकलना की है, अतएव कल्प, व्यवहार और निशीथ इन तीनों के भाष्यकर्ता सिद्धसेन हैं—ऐसा माना जा सकता है।

अब तक की भाष्यकार-सम्बन्धी समग्र चर्चा पर एक प्रश्न खड़ा हुआ है। वह यह कि क्षेम कीर्ति ने भाष्यकार के रूप में सिद्धसेन का नाम न देकर संघदास का नाम क्यों दिया? इसका उचित स्पष्टीकरण अभी तो लक्ष्य में नही है। संभव है, भविष्य में कुछ सूत्र मिल सकें और उक्त प्रश्न का समाधान हो सके।

अब प्रश्न यह है कि ये सिद्धसेन क्षमाश्रमण कौन हैं और कब हुए हैं? सन्मति-तर्क के कर्ता सुप्रसिद्ध सिद्धसेन दिवाकर से तो ये क्षमाश्रमण सिद्धसेन भिन्न ही हैं। उक्त निर्णय निम्न प्रमाणों पर आधारित है।

(१) दोनों की पदवी भिन्न है। एक दिवाकर हैं, तो दूसरे क्षमाश्रमण।

(२) सन्मति तर्क सिद्धसेन दिवाकर का ग्रन्थ है, और उसके उद्धरण नय चक्र में हैं। और नयचक्र-कर्ता मल्लवादी का समय विक्रम ४१४ के आसपास है। जब कि प्रस्तुत भाष्य के कर्ता सिद्धसेन क्षमा श्रमण इतने प्राचीन नहीं हैं।

(३) निशीथ भाष्य की चूर्णि, यदि भाष्य के सही अभिप्राय को व्यक्त करती है, तो यह भी माना जा सकता है कि भाष्यकार के समक्ष सन्मति तर्क था और वे अश्वकर्ता सिद्धसेन से भी परिचित थे—देखिए, निशीथ गा० ४८६, १८०४।

(४) भाष्यकार के समक्ष आचारांग-नियुक्ति, ओघनियुक्ति, पिंडनियुक्ति, आवश्यक-नियुक्ति आदि ग्रन्थ थे, जो द्वितीय भद्रबाहु के द्वारा ग्रथित हैं—अतएव सिद्धसेन दिवाकर से, जो द्वितीय भद्रबाहु के पूर्वभावी हैं, भाष्यकार सिद्धसेन भिन्न होने चाहिएँ।

आचारांग-नियुक्ति, जो द्वितीय भद्रबाहु की कृति है, उस पर तो निशीथ भाष्य लिखा ही गया है; अतएव इसके विषय में कुछ संदेह नहीं है। आवश्यक नियुक्ति भी भाष्यकार के समक्ष थी, इसका प्रमाण निशीथ भाष्य गा० ४० है, जिसमें 'उदाहरणा जहा हेट्ठा' कहकर आवश्यक-नियुक्ति का निर्देश किया गया है—देखो, निशीथ चूर्णि गा० ४०—'जहा हेट्ठा आवसगे तहा दट्ठव्वा।' पिंडनियुक्ति का तो शब्दतः निर्देश गा० ४५६ में भाष्यकार ने स्वयं किया है, और चूर्णिकारने भी पिंडनियुक्ति पर से विवरण जान लेने को कहा है—नि० चू० गा० ४५७। चूर्णिकारने गा० २४५४ के 'जो वण्णिओ पुव्विं' अंश की व्याख्या में ओघनियुक्ति का उल्लेख किया है—'पुव्वत्ति ओहनिज्जुत्तीए'। इसी प्रकार गा० ४५७६ में भी 'पुव्वभणिते' का तात्पर्य चूर्णिकारने 'पुव्वं भणितो ओहनिज्जुत्तीए' लिखा है। ऐसा ही उल्लेख गा० ४६३० में भी है।

(५) निशीथ चूर्णि में कहीं सिद्धसेन आचार्य तो कहीं सिद्धसेन क्षमाश्रमण इस प्रकार दोनों रूप से नाम आते हैं। किन्तु कहीं भी सिद्धसेन के साथ 'दिवाकर' पदका उल्लेख नहीं किया गया है, अतएव भाष्यकार सिद्धसेन, दिवाकर सिद्धसेन से भिन्न हैं।

अब इस प्रश्न पर विचार करें कि सिद्धसेन क्षमाश्रमण कब हुए ?

जीत कल्प भाष्य की रचना जिनभद्र क्षमाश्रमण ने की है। और उसकी चूर्णि के कर्ता सिद्धसेन हैं। मेरे विचार से ये सिद्धसेन ही प्रस्तुत सिद्धसेन क्षमाश्रमण हैं। चूर्णिकार सिद्ध-सेन आचार्य जिनभद्र के साक्षात् शिष्य हैं, ऐसा इस लिये प्रतीत होता है कि उन्होंने चूर्णि के प्रारंभ में जिनभद्र की स्तुति की है, और स्तुति-वर्णन की शैली पर से झलक रहा है कि वे स्तुति के समय विद्यमान थे। प्रारंभिक मंगल में सर्वप्रथम भगवान् महावीर को नमस्कार किया है, तदनंतर एकादश गणधर और जंबू प्रभवादि को, जो समस्त श्रुतधर थे। तदनंतर दश-नव पूर्वधर और अतिशयशील शेष श्रुतज्ञानियों को नमस्कार किया है। इसके अनंतर प्रथम प्रवचन को नमस्कार करके पश्चात् जिनभद्र क्षमाश्रमण को नमस्कार किया है। क्षमा श्रमण जी की प्रशस्ति में ६ गाथाओं की रचना की है और वर्तमान कालका प्रयोग किया है ; यह खास तौर पर ध्यान देने जैसी बात है। 'मुणिवरा सेवन्ति सया' गा० ६। 'दससु वि दिसासु जस्स य अणुओगो भमई'—गा० ७। इससे प्रतीत होता है कि सिद्धसेन आचार्य, जिनभद्र क्षमा श्रमण के साक्षात् शिष्य हों, तो कोई आश्चर्य की बात नहीं।

जीत कल्प पर की अपनी चूर्णि में उन्होंने निशीथ की गाथाएँ 'तं जहा' कह करके दी हैं—नि० गा० ४६३ ४८४ और ४८५, जो पृ० ३ में उद्धृत हैं।

मुनिराज श्री पुण्य विजयजी ने जिनभद्र को व्यवहार-भाष्यकार के बाद का माना है। और प्रमाणस्वरूप विशेषणवती की गाथा ३४ गत 'ववहार' शब्द को उपस्थित करते हुए कहा है कि स्वयं जिनभद्र, प्रस्तुत में, 'व्यवहार' शब्द से व्यवहार भाष्यगत गाथा १६२ (उद्देश ६)

की ओर संकेत करते हैं[1]। यदि सिद्धसेन व्यवहार-भाष्य के कर्ता माने जायँ तो इस प्रमाण के आधार से उन्हें जिनभद्र से पूर्व माना जा सकता है, पश्चात्कालीन या उनके शिष्य रूप तो नहीं माना जा सकता। अस्तु सिद्धसेन जिनभद्र के शिष्य कैसे हुए ? यह प्रश्न यहां सहज ही उपस्थित हो सकता है। किन्तु इसका स्पष्टीकरण यह किया जा सकता है कि स्वयं बृहत्कल्प और निशीथ भाष्य में विशेषावश्यक भाष्य की अनेक गाथाएँ उद्धृत हैं। देखिए, निशीथ गा० ४८२३, ४८२४, ४८२५ विशेषावश्यक की क्रमशः गा० १४१, १४२, १४३ हैं। विशेषावश्यक की गा० १४१—१४२ बृहत्कल्प में भी है—गा० ९६४, ९६५। हां तो जीतकल्प चूर्णि की प्रशस्ति के आधार पर यदि सिद्धसेन को जिन भद्र का शिष्य माना जाए तब तो जिनभद्र के उक्त गाथा-गत 'ववहार' शब्द का अर्थ 'व्यवहारभाष्य' न लेकर 'व्यवहार निर्युक्ति' लेना होगा। जिनभद्र ने केवल 'ववहार' शब्द का ही प्रयोग किया है, 'भाष्य' का नहीं। और बृहत्कल्प आदि के समान व्यवहार भाष्य में भी व्यवहार निर्युक्ति और भाष्य दोनों एक ग्रन्थरूपेण संमिलित हो गए हैं, अतएव चर्चास्पद गाथा को एकान्त भाष्य की ही मानने में कोई प्रमाण नहीं है। अथवा कुछ देर के लिए यदि यही मान लिया जाए कि जिनभद्र को भाष्य ही अभिप्रेत है, निर्युक्ति नहीं; तब भी प्रस्तुत असंगति का निवारण यों हो सकता है कि सिद्धसेन को जिनभद्र का साक्षात् शिष्य न मानकर उनका समकालीन ही माना जाय। ऐसी स्थिति में सिद्धसेन के व्यवहार भाष्य को जिनभद्र देख सकें, तो यह असंभव नहीं।

यहां यह स्पष्ट कर देना आवश्यक है कि मैंने ऊपर में विशेषावश्यक भाष्य की जिन गाथाओं को निशीथ भाष्य में उद्धृत होने की बात कही है, उन गाथाओं के पूर्व में आने वाली विशेषावश्यक भाष्य की गा० १४० के अन्त में 'जओ सुएऽभिहियं' ये शब्द हैं। इसका अर्थ कोई यह कर सकता है कि गा० १४१ को विशेषावश्यक के कर्ता उद्धृत कर रहे हैं। किन्तु 'गा० १४१ का वक्तव्यांश श्रुत में कहा गया है, न कि स्वयं वह गाथा'—ऐसा मान कर ही मैंने प्रस्तुत में १४१, १४२, १४३ गाथाओं को विशेषावश्यक से निशीथ में उद्धृत माना है।

ऐसी स्थिति में जिनभद्र और भाष्यकार सिद्धसेन का पौर्वापर्य अंतिम रूप में निश्चित हो गया है, यह नहीं कहा जा सकता। मात्र संभावना ही की जा सकती है। उक्त प्रश्न को अभी विचार-कोटि में ही रखा जाना, इसलिये भी आवश्यक है कि जिनभद्र के जीत कल्प भाष्य और सिद्ध सेन के निशीथभाष्य तथा व्यवहार भाष्य की संल्लेखना-विषयक अधिकांश गाथाएँ एक जैसी ही हैं। तुलना के लिये, देखिए—निशीथ गा० ३८१४ से, व्यवहार भाष्य उ० १०, गा० ४०० से और जीत कल्प भाष्य की गा० ३२९ से। ये गाथाएँ किसी एकने अपने ग्रन्थ में दूसरे से ली हैं या दोनों ने ही किसी तीसरे से ? यह प्रश्न विचारणीय है।

भाष्य कार ने किस देश में रहकर भाष्य लिखा ? इस प्रश्न का उत्तर हमें गा० २९२७ से मिल सकता है। उसमें 'चक्के थुभाइया' शब्द है। चूर्णिकार ने स्पष्टीकरण किया है कि उत्तरापथ में धर्मचक्र है, मथुरा में देवनिर्मित स्तूप है, कोसल में जीवंत प्रतिमा हैं, अथवा तीर्थंकारों की जन्म-भूमि है, इत्यादि मान कर उन देशों में यात्रा न करे। इस पर से ध्वनित

---

१. बृहत्कल्प भाग—६, प्रस्तावना पृ० २२।

होता है कि उक्त प्रदेशों में भाष्य नहीं लिखा गया। संभवतः वह पश्चिम भारत में लिखा गया हो। यदि पश्चिम भारत का भी संकोच करें तो कहना होगा कि प्रस्तुत भाष्य की रचना सौराष्ट्र में हुई होगी। क्योंकि वाहर से आने वाले साधु को पूछे जाने वाले देश-सम्बन्धी प्रश्न में मालव और मगध का प्रश्न है[१]। मालव या मगध में बैठकर कोई यह नहीं पूछता कि आप मालव से आ रहे हैं या मगध से? अतएव अधिक संभव तो यही है कि निशीथ भाष्य की रचना सौराष्ट्र में हुई होगी।

और यह भी एक प्रमाण है कि जो मुद्राओं की चर्चा (गा० ६५७ से) भाष्यकार ने की है, उससे भी यह सिद्ध होता कि वे संभवतः सौराष्ट्र में वैठकर भाष्य लिख रहे थे।

निशीथ विशेष-चूर्णि और उसके कर्ता :

प्रस्तुत ग्रन्थ में निशीथ भाष्य की जो प्राकृत गद्यमयी व्याख्या मुद्रित है, उसका नाम विशेष चूर्णि है। यह चूर्णिकार की निम्न प्रतिज्ञा से फलित होता है :—

"पुव्वायरियकयं चिय अहंपि तं चेव उ विसेसा ॥२॥"

—नि० चू०, पृ० १.

और अंत में तो और भी स्पष्ट रूप से इस वात को कहा है—

"तेण कएसा चुण्णी विसेसनामा निसीहस्स।"

—नि० चू० भा० ४ पृ० ११.

प्रथम, द्वितीय, तृतीय, चतुर्थ, पंचम, षष्ठ, सप्तम और अष्टम, दशम, द्वादश, १३, १४, १५, १७, १८, १९, २० उद्देशक के अंत में 'विसेस-निसीह चुण्णीए' तथा ९. ११. १६, उद्देशक के अन्त में 'निसीह विसेस चुण्णीए' लिखा है। इससे भी प्रस्तुत चूर्णि का नाम विशेष-चूर्णि सिद्ध होता है।

जिस प्रकार आचार्य जिनभद्र का भाष्य आवश्यक की विशेष वातों का विवरण करता है, फलतः वह विशेषावश्यक भाष्य है, उसी प्रकार निशीथ भाष्य की विशेष वातों का विवरण करने वाली प्रस्तुत चूर्णि भी विशेष चूर्णि है। अर्थात् यह भी फलित होता है कि प्रस्तुत चूर्णि से पूर्व भी अन्य विवरण लिखे जा चुके थे; किन्तु जिन वातों का समावेश उन विवरणों में नहीं किया गया था उनका समावेश प्रस्तुत चूर्णि में किया गया है—यही इसकी विशेषता है। अन्याचार्य-कृत विवरण की सूचना तो स्वयं चूर्णिकार ने भी दी है कि—'पुव्वायरियकयं चिय' 'यद्यपि पूर्वाचार्यों ने विवरण किया है, तथापि मैं करता हूँ'।

चूर्णि को मैंने प्राकृतमयी गद्य व्याख्या कहा है, इसका अर्थ इतना ही है कि अधिकांश इसमें प्राकृत ही है। कहीं-कहीं संस्कृत के शब्दरूप ज्यों के त्यों उपलब्ध होते हैं, फिर भी लेखक का झुकाव प्राकृत लिखने की ओर ही रहा है। कहीं-कहीं अभ्यासवश, अथवा जो विषय अन्यत्र से लिया गया उसकी मूल भाषा संस्कृत होने से ज्यों के त्यों संस्कृत शब्द रह गये हैं,

१. नि० भा० गा० ३३४७

किन्तु लेखक प्राकृत लिखने के लिये प्रवृत्त है—यह स्पष्ट है। इसकी भाषा का अध्ययन एक स्वतन्त्र विषय हो सकता है, जो भाषाशास्त्रियों के लिये एक नई वस्तु होगा। प्रसंगाभावतया यहाँ इस विषय में कुछ नहीं लिखना है।

निशीथ चूर्णि एक विशालकाय ग्रन्थ है। प्रायः सभी गाथाओं का विवरण विस्तार से देने का प्रयत्न है। स्वयं भाष्य ही विषयवैविध्य की दृष्टि से एक बहुत बड़ा भंडार है। और भाष्य का विवरण होने के नाते चूर्णि तो और भी अधिक महत्वपूर्ण विषयों से खचित है—यह असंदिग्ध है। चूर्णिगत महत्त्व के विषयों का परिचय यथास्थान आगे कराया जाएगा। यहाँ इतना ही कहना पर्याप्त होगा कि चूर्णिकार ने अपने समय के युग का प्रतिविम्व शब्द-बद्ध कर दिया है। उस काल में मानव-बुद्धि-जिन विषयों का विचार करती थी और उस काल का मानव जिस परिस्थिति से गुजर रहा था, उसका तादृश चित्र प्रस्तुत ग्रन्थ में उपस्थित हुआ है, यह करना अतिशयोक्ति नहीं।

निशीथ चूर्णि के कर्ता के विषय में निम्न बातें चूर्णि से प्राप्त होती हैं :—

(१) निशीथ विशेष चूर्णि के कर्ता ने पीठिका के प्रारंभ में 'पज्जुण्ण खमासमण' को नमस्कार किया है और उन्हें 'अत्थदायि' अर्थात् निशीथ शास्त्र के अर्थ का बताने वाला कहा है, किन्तु अपना नाम नहीं दिया। पट्टावली में कहीं भी 'पज्जुण्ण खमासमण' का पता नहीं लगता। हाँ इतना निश्चित है कि ये प्रद्युम्नक्षमाश्रमण, सन्मति टीकाकार अभय देव के गुरु प्रद्युम्न से तो भिन्न ही हैं। क्योंकि दोनों के समय में पर्याप्त व्यवधान है। फिर भी इतना अवश्य कहा जा सकता है कि चूर्णिकार के उपाध्याय प्रद्युम्न क्षमा श्रमण थे।

(२) १३ वें उद्देश के अंत में निम्न गाथा चूर्णिकारने दी है :—

> संकरजडमउडविभूसणस्स तण्णामसरिसणामस्स ।
> तस्स सुतेणेस कता विसेसचुण्णी णिसीहस्स ॥

प्रस्तुत गाथा में अपने पिता का नाम सूचित किया है। 'शंकर-जटारूप मुकुट के विभूषण रूप' और 'उसके सदृश नाम को धारण करने वाले' इन दो पदों में चूर्णिकार के पिता का नाम छिपा हुआ है। प्रस्तुत में शंकर के मुकुट का भूषण यदि 'सर्प' लिया जाए तो 'नाग'; यदि 'चन्द्र' लिया जाय तो 'शशी' या 'चन्द्र' फलित होता है। स्पष्ट निर्णय नहीं होता।

(३) १५ वें उद्देश के अंत में निम्न गाथा है :—

> रविकरमभिधाणऽक्खरसत्तम वग्गंत-अक्खरजुएणं ।
> णामं जस्सित्थिए सुतेण तस्से कया चुण्णी ॥

इसमें चूर्णिकार ने अपनी माता का नाम सूचित किया है।

(४) १६ वें उद्देश के अन्त में निम्न गाथा चूर्णिकारने दी है :

> देहडो सीह थोरा य ततो जेट्ठा सहोयरा ।
> कणिट्ठा देउलो णण्णो सत्तमो य तिइज्जगो ।
> एतेसिं मज्झिमो जो उ मंदे वी तेण वित्तिता ॥

इस गाथा में चूर्णिकारने अपने भ्राताओं का नाम दिया है। वे सब मिलकर सात भाई थे। देहड़, सीह और थोर-ये तीन उनसे बड़े थे और देउल, णण्ण, और तिइज्जग-ये तीन उनसे छोटे थे। अर्थात् वे अपने माता-पिता की सात संतानों में चौथे थे—बीचके थे।

इसके अलावा वे अपने को 'मंद' भी कहते हैं। यह तो केवल नम्रता-प्रदर्शन है। उनके ज्ञान की गंभीरता और उसके विस्तार का पता, चूर्णि के पाठकों से कथमपि अज्ञात नहीं रह सकता।

(५) चूर्णि के अंत में वीसवें उद्देश की समाप्ति पर अपने परिचय के सम्बन्ध में चूर्णिकार ने दो गाथाएँ दी हैं।

प्रथम गाथा है :

ति चउ पण अट्ठमवग्गे ति पणग ति तिग अक्खरा व तेसिं।
पढमततिएहि तिदुसरजुएहि णामं कयं जस्स ।

सुवोधा व्याख्या के अनुसार आठ वर्ग ये हैं—१ अ, २ क, ३ च, ४ ट, ५ त, ६ प, ७ य, ८ श। इन आठ वर्गों में से तृतीय 'च' वर्ग, चतुर्थ 'ट' वर्ग, पंचम 'त' वर्ग और अष्टम 'श' वर्ग के अक्षर इनके नाम में हैं। 'च' वर्ग का तृतीय—'ज' ; 'ट' वर्ग का पंचम—'ण' ; 'त' वर्ग का तृतीय—'द' ; और 'श' वर्ग का तृतीय—'स'। इन व्यंजनाक्षरों में जो स्वर मिलाने हैं उनका उल्लेख गाथा के उत्तरार्ध में किया गया है। वे स्वर इस प्रकार हैं—प्रथम और तृतीयाक्षर में तृतीय = 'इ' और द्वितीय = 'आ'। अस्तु क्रमशः मिलाकर 'जिणदास' यह नाम फलित होता है।

द्वितीय गाथा है :

गुरुदिण्णं च गणित्तं महत्तरत्तं च तस्स · तुट्ठेहिं।
तेण कयेसा चुण्णी विसेसनामा निसीहस्स ।

अर्थात् गुरु ने जिसे 'गणि' पद दिया है, तथा उनसे संतुष्ट लोगों ने जिसे 'महत्तर' पदवी दी है ; उसने यह निशीथ की विशेष चूर्णि निर्माण की है।

सारांश यह है कि जिनदास गणि महत्तर ने निशीथ विशेष चूर्णि की रचना की है।

नन्दी सूत्र की चूर्णि भी जिनदास कृत है। और उसके अंत में उसका निर्माण-काल शक संवत् ५९८ उल्लिखित है[१]। अर्थात् वि० सं० ७३३ में वह पूर्ण हुई। अतएव जिनदास का काल विक्रम की आठवीं शताब्दी का पूर्वार्ध निश्चित है।

चूर्णिकार जिनदास किस देश के थे, यह उन्होंने स्वयं स्पष्ट रूप से तो कहा नहीं है ; किन्तु क्षेत्र-संस्तव के प्रसंग में उन्होंने कुरुक्षेत्र का उल्लेख किया है। अतः उससे अनुमान किया जा सकता है कि वे संभवतः कुरुक्षेत्र के होंगे[२]।

---

१. विशेष चर्चा के लिये, देखो—अकलंक ग्रन्थत्रय का आचार्य श्री जिनविजयजी का प्रास्ताविक पृ० ४।

२. नि० गा० १०२६ चूर्णि। गा० १०३७ चू०।

विषय-प्रवेश :

प्रस्तुत विषय-प्रवेश निशीथ सूत्र, भाष्य और चूर्णि को एक अखण्ड ग्रन्थ मान कर ही लिखा जा रहा है, जिससे कि एक ही विषय-वस्तु की बार-बार पुनरावृत्ति न करनी पड़े। आवश्यकता होने पर भाष्य-चूर्णिका पृथक् निर्देश भी किया जायगा; अन्यथा केवल 'निशीथ' शब्द का ही प्रयोग होता रहेगा। निशीथ २० उद्देश में विभक्त है और उसमें चर्चित विषयों का विस्तृत विषयानुक्रम चारों भागों के प्रारम्भ में दिया ही गया है। अतएव उसकी पुनरावृत्ति भी यहाँ नहीं करनी है। केवल कुछ विचारणीय बातों का निर्देश करना ही प्रस्तुत में अभीष्ट है। तथा ऐतिहासिक, सांस्कृतिक, राजनैतिक और भाषाकीय सामग्री की ओर, जो इस ग्रन्थ में सर्वत्र बिखरी पड़ी है, विद्वानों का ध्यान आकर्षित करने की दिशा में ही प्रस्तुत प्रयास है। ग्रन्थ की महत्ता एवं गम्भीरता को देखते हुए, तथा समय की अल्पता एवं अपनी बहुविध कार्यव्यग्रता को ध्यान में रखते हुए यद्यपि सफलता संदिग्ध है, तथापि इस दिशामें यत्किंचित् दिग्दर्शन मात्र भी हो सका, तो मेरा यह तुच्छ प्रयास सफल समझा जाएगा।

आचारांग में निर्ग्रन्थ और निर्ग्रन्थी संघ के कर्तव्य और अकर्तव्य के मौलिक उपदेशों का संकलन हो गया था। किन्तु जैसे-जैसे संघ का विस्तार होता गया और देश, काल, अवस्था आदि परिवर्तित होते गये, उत्सर्ग मार्ग पर चलना कठिन होता गया। अस्तु ऐसी स्थिति में आचारांग की ही निशीथ नामक चूला में, उन आचार नियमों के विषय में जो वितथकारी के लिये प्रायश्चित्त बताये गये थे[1], क्या उन प्रायश्चित्तों को केवल सूत्रों का शब्दार्थ करके ही दिया-लिया जाय, या उसमें कुछ नवीन विचारणा को भी अवकाश है? इस प्रश्न का उत्तर हमें मूल निशीथ सूत्र से तो नहीं मिलता; किन्तु दीर्घकाल के विस्तार में यथाप्रसंग जो अनेकानेक विचारणा और निश्चय होते रहे हैं उन सब का दर्शन हमें निर्युक्ति, भाष्य और चूर्णि में होता है। स्पष्ट है कि जिन अपवादों का मूल में कोई निर्देश नहीं, उन अपवादों को भी निर्युक्ति आदि में स्थान मिला है—यह वस्तु पद-पद पर स्पष्ट होती है। प्रतिसेवना के दो भेद दर्प और कल्प[2] के मूल में भी मानवीय दुर्बलता ने उतना काम नहीं किया, जितना कि साधकों के दीर्घ कालीन अनुभव ने। साधक अपने साध्य की सिद्धि के हेतु आज्ञा का शब्दशः पालन करने को उद्यत था, किन्तु तथानुरूप शब्दशः पालन करने पर जब केवल अपना ही नहीं, जैन शासन का भी अहित होने की संभावनाएँ देखने में आईं तो शब्दों से ऊपर उठकर तात्पर्यार्थ पर जाना पड़ा और फलस्वरूप नाना प्रकार के अपवादों की सृष्टि हुई। कई बार उन अपवादों के प्रकार, उनका समर्थन और अवलम्बन की प्रक्रिया का वर्णन पढ़कर ऐसा लगने लगता है कि आदर्श मार्ग से किस सीमा तक संघ का पतन हो सकता है? किन्तु जब हम उन प्रक्रियाओं का अवलम्बन करने वालों की मनः स्थिति की ओर देखते हैं, तो इतना ही कहना पड़ता है कि वे अपने ही द्वारा स्वीकृत नियमोपनियमों के बंधनों से अभिभूत थे। एक ओर उन बन्धनों को किसी प्रकार भी शिथिल न करने की निष्ठा थी, तो दूसरी ओर संघ की

---

१. गा० ७१
२. गा० ७४

प्रतिष्ठा तथा रक्षा का प्रश्न भी कुछ कम महत्त्व का नहीं था—इन दो सीमा-रेखाओं के बीच तत्कालीन मनः स्थिति दोलायमान थी। टीकोपटीकाओं का तटस्थ अध्ययन इस बात की स्पष्ट साक्षी देता है कि बन्धनों को शिथिल किया गया और संघ की प्रतिष्ठा की चेष्टा की गई। यह चेष्टा सर्वथा सफल हुई, यह नहीं कहा जा सकता। कुछ साधुओं ने अपने शिथिलाचार का पोषण संघ प्रतिष्ठा के नाम से भी करना शुरू किया, जिसके फल स्वरूप अन्ततः चैत्यवास, यति-समाज आदि के रूप में समय-समय पर शिथिलाचार को प्रश्रय मिलता चला गया। संघहित की दृष्टि से स्वीकृत किया गया शिथिलाचार, यदि साधक में व्यक्तिगत विवेक की मात्रा तीव्र हो और आचरण के नियमों के प्रति बलवती निष्ठा हो, तब तो जीवन की उन्नति में बाधक नहीं बनता। किन्तु इसके विपरीत ज्योंही कुछ हुआ कि चारित्र का केवल बाह्य रूप ही रह जाता है, आत्मा लुप्त हो जाती है। धीरे-धीरे आचरण में उत्सर्ग का स्थान अपवाद ही ले लेता है और आचरण की मूल भावना शिथिल हो जाती है। जैन संघ के आचार-सम्बन्धी कितने ही औत्सर्गिक नियमों का स्थान आधुनिक काल में अपवादों ने ले लिया है और यदि कहीं अपवादों का आश्रय नहीं भी लिया गया, तो भी यह तो देखा ही जाता है कि उत्सर्ग की आत्मा प्रायः लुप्त हो गई है। उदाहरण के तौर पर हम कह सकते हैं कि श्वेताम्बर संप्रदाय में वस्त्र स्वीकार का अपवाद मार्ग ही उत्सर्ग हो गया है; तो दूसरी ओर दिगम्बरों में अचेलता का उत्सर्ग तात्पर्य-शून्य केवल परंपरा का पालन मात्र रह गया है। मयूरपिच्छ, जो गच्छवासियों के लिये आपवादिक है (नि० गा० ५७२१); वह आज दिगम्बरों में औत्सर्गिक है। वस्तुतः सूत्र और टीकाओं में प्रति-पादित यह उत्सर्ग और अपवाद मार्ग जिस ध्येय को सिद्ध करने के लिये था, वह ध्येय तो साधक के विवेक से ही सिद्ध हो सकता है। विवेकशून्य आचरण या तो शिथिलाचार होता हैं, या केवल अर्थशून्य आडंबर। प्राचीन आचार्य उक्त दोनों से बचने के, देश कालानुरूप मार्ग दिखा रहे हैं। किन्तु फिर भी यह स्पष्टोक्ति स्वीकार करनी ही पड़ती है कि प्राचीन ग्रन्थों में इस बात के भी स्पष्ट प्रमाण मौजूद हैं, जो यह सिद्ध कर रहे हैं कि वे प्राचीन आचार्य भी सही राह दिखाने में सर्वथा समर्थ नहीं हो सके। संघ-हित को यहाँ तक बढ़ावा दिया गया कि व्यक्तिगत आचरण का कोई महत्त्व न हो, ऐसी धारणा लोगों में बद्धमूल हो गई। यह ठीक है कि संघ का महत्त्व बहुत बड़ा है, किन्तु उसकी भी एक मर्यादा होनी ही चाहिए। अन्यथा एक बार आचरण का बाँध शिथिल हुआ नहीं कि वह मनुष्य को दुराचरण के गड्ढे में फिर कहाँ तक और कितनी दूर तक ढकेल देगा, यह नहीं कहा जा सकता। निशीथ के चूर्णि-पर्यंत साहित्य का अध्ययन करने पर बार-बार यह विचार उठता है कि संघ-प्रतिष्ठा की झूठी धुन में कभी-कभी सर्वथा अनुचित मार्ग का अवलम्बन लेने की आज्ञा भी दी गई है, जिसका समर्थन आजका प्रबुद्ध मानव किसी भी प्रकार से नहीं कर सकता। यह कह कर भी नहीं कि उस काल में वही उचित था। कुछ बातें तो ऐसी हैं, जो सदा सर्वत्र अनुचित ही कही जायँगी। ऐसी बातों का आचरण भले ही किसी पुस्तक-विशेष में विहित भी कर दिया हो, तथापि वे सदैव त्याज्य ही हैं। वस्तुतः इस प्रकार के विधान कर्ताओं का विवेक कितना जागृत था, यह भी एक प्रश्न है। अतएव इन टीकाकारों ने जो कुछ लिखा है वह सब उचित ही है, यह कहने का साहस नहीं होता। मेरी उक्त विचारणा के समर्थन में यहाँ कुछ उदाहरण दिये जायँगे; जिन पर विद्वद्वर्ग को ध्यान देना चाहिये और साधकों को भी।

तथाकथित उदाहरणों की चर्चा करने से पहले, उत्सर्ग और अपवाद के विषय में, प्रस्तुत ग्रन्थ में जो चर्चाएँ की गई हैं; उनके सारांश को लेकर यहाँ तद्विषयक थोड़ा विचार प्रस्तुत है। सिद्धान्ततः उत्सर्ग-अपवाद का रहस्य समझने के बाद ही औचित्य-अनौचित्य का विचार सहज बोधगम्य हो सकेगा।

मूल सूत्रों की विचारणा आवश्यक :

सर्व प्रथम यह विचारणीय है कि क्या सब कुछ सूत्र के मूल शब्दों में कहा गया है, या कहा जा सकता है? यदि सब कुछ कह देने की संभावना होती, तब तो प्रारंभ में ही नियमोपनियमों की एक लंबी सूची बना दी जाती और फिर उसमें व्याख्या करने की आवश्यकता ही नहीं रहती। द्रव्य-क्षेत्र-काल भाव की आवश्यकता ने सर्व प्रथम व्याख्याताओं को इसी प्रश्न पर विचार करने को बाध्य किया कि क्या विधि सूत्र अर्थात् आचारांग और तदनन्तर दशवैकालिक आदि में शब्दतः सम्पूर्ण विधि-निषेध का उपदेश हो गया है—ऐसा माना जाए या नहीं?

जिस प्रकार द्रव्यानुयोग के विषय में यह समाधान देना आवश्यक प्रतीत हुआ कि तीर्थंकर केवल त्रिपदी—'उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य'-का उपदेश करते हैं, तदनन्तर उसका विवरण करना या उस त्रिपदी के आधार पर द्वादशांग रूप वाङ्मय की रचना करना गणधर का कार्य है, उसी प्रकार चरणानुयोग की विचारणा में भी आचार्यों को विवश होकर अंत में यह कह देना पड़ा कि—'तीर्थंकरों ने किसी विषय की अनुज्ञा या प्रतिषेध नहीं किया है; केवल इतनी ही आज्ञा दी है कि कार्य उपस्थित होने पर केवल सत्य का आश्रय लिया जाय अर्थात् अपनी आत्मा या दूसरों की आत्मा को धोखा न दिया जाय[१]।' "संयमी पुरुष का ध्येय मोक्ष है। अतएव वह अपने प्रत्येक कार्य के विषय में सोचे कि मैं उससे—मोक्ष से दूर जा रहा हूँ या निकट? जब सिद्धान्त में एकान्त विधि या एकान्त निषेध नहीं मिलता, तब अपने लाभालाभ की चिन्ता करने वाले बनिये के समान साधक अपने आय-व्यय की तुलना करे,[२]" यही उचित है। "उत्सर्ग और अपवाद अति विस्तृत हैं। अतएव संयमवृद्धि और निर्जरा को देखकर ही कर्तव्य का निश्चय किया जाय"—यह उचित है[३]। स्पष्ट है कि आचार्यों ने अपनी उक्त विचारणा में यह तो निश्चित किया ही कि विधि सूत्रों के शब्दों में जो कुछ ग्रथित है, उतना ही और उसे ही अंतिम सत्य मानकर चलने से काम नहीं चलेगा। अतएव आचार-सूत्रों की व्याख्या द्रव्य-क्षेत्र-काल-भाव की दृष्टि से करना नितांत आवश्यक है। केवल 'शब्द' ही नहीं, किन्तु 'अर्थ' भी प्रमाण है; अर्थात् आचार्यों द्वारा की गई व्याख्या भी उतनी ही प्रमाण है, जितना कि मूल शब्द। अर्थात् आचार-वस्तु में केवल शब्दों को लेकर चलने से अनर्थ की संभावना है, अतः तात्पर्यार्थ तक जाना पड़ता है। ऐसा होने पर ही संयम की साधना उचित मार्ग से चल सकती है और साध्य-मोक्ष की प्राप्ति भी हो सकती है। अतएव यह भी कहना पड़ा कि 'यदि सूत्र में जैसा

---

१. नि० गा० ५२४८; बृ० गा० ३३३०।

२. नि० २०६७, उपदेशमाला गा० ३९२।

३. व्य० भाग ३, पृ० ७६, नि० चू० ६०२३।

लिखा है वैसा ही आचरण किया जाए—अर्थात् केवल सूत्रों के मूल शब्दों को आधार मान कर ही आचरण किया जाए और उसमें विचारणा के लिए कुछ अवकाश ही न हो, तो दृष्टि प्रधान पुरुषों द्वारा कालिक सूत्र अर्थात् द्वादशांग की व्याख्या क्यों की गई ?'[1] यही सूचित करता है कि केवल शब्दों से काम नहीं चल सकता। उचित मार्ग यही है कि उसकी परिस्थित्यनुसार व्याख्या की जाय। 'सूत्र में अनेक अर्थों की सूचना रहती है। आचार्य उन विविध अर्थों का निर्देश व्याख्या में कर देते हैं[2]।' सिद्ध है कि विचारणा के बिना यह संभव नहीं। अतएव सूत्र के केवल शब्दों को पकड़ कर चलने से काम नहीं चल सकता। उसकी व्याख्या तक जाना होगा—तभी उचित आचरण कहा जायगा, अन्यथा नहीं। यह आचार्यों का निश्चित अभिप्राय है। 'जिस प्रकार एक ही मिट्टी के पिंड में से कुम्भकार अनेक प्रकार की आकृति वाले वर्तनों की सृष्टि करता है, उसी प्रकार आचार्य भी एक ही सूत्र-शब्द में से नाना अर्थों की उत्प्रेक्षा करता है। जिस प्रकार गृह में जब तक अंधकार है तब तक वहाँ स्थित भी अनेक पदार्थ दृष्टिगोचर नहीं होते हैं, उसी प्रकार उत्प्रेक्षा के अभाव में शब्द के अनेकानेक विशिष्ट अर्थ अप्रकाशित ही रह जाते हैं[3]।' अतएव सूत्रार्थ की विचारणा के लिए अवकाश है ही। यह आचार्यों की विचारणा का ही फल है कि विविध सूत्रों की विचारणा करके उन्होंने निश्चय किया कि किस सूत्र को उत्सर्ग कहा जाय और किस को अपवाद सूत्र ? और किस को तदुभय कहा जाय[4]। तदुभय सूत्र के चार प्रकार हैं—उत्सर्गापवादिक, अपवादौत्सर्गिक, उत्सर्गौत्सर्गिक और अपवादापवादिक। इस प्रकार कुल छः प्रकार के सूत्र होते हैं[5]। इतना ही नहीं, किन्तु ऐसा भी होता है कि 'अनेक में से केवल एक का ही शब्दतः सूत्र में ग्रहण करके शेष की सूचना की जाती है, कोई सूत्र केवल निर्ग्रन्थ के लिये होता है, कोई केवल निर्ग्रन्थी के लिये होता है तो कोई सूत्र दोनों के लिये होता है[6]।' सूत्रों के ये सब प्रकार भी विचारणा की अपेक्षा रखते हैं। इनके उदाहरणों के लिये, वाचक, प्रस्तुत ग्रन्थ की गा० ५२३४ से आगे देख लें—यही उचित है।

जैन आचार्यों ने 'शब्द' के उपरान्त 'अर्थ' को भी महत्त्व दिया है। इसके मूल की खोज की जाए तो पता लगता है कि जैन मान्यता के अनुसार तीर्थंकर तो केवल 'अर्थ' का उपदेश करते हैं। 'शब्द' गणधर के होते हैं[7]।' अर्थात् मूलभूत 'अर्थ' है, न कि 'शब्द'। वैदिकों में तो मूलभूत 'शब्द' है, उसके बाद उसके अर्थ की मीमांसा होती है[8]। किन्तु जैन मत के अनुसार मूलभूत 'अर्थ' है, शब्द तो उसके बाद आता है। यही कारण है कि सूत्रों के शब्दों का उतना महत्त्व नहीं है, जितना उनके अर्थों का है, और यही कारण है कि आचार्यों ने शब्दों को

---

१. नि० गा० ५२३३, बृ० गा० ३३१५।
२. नि० गा० ५२३३ की चूर्णि।
३. नि० गा० ५२३२ की चूर्णि।
४. नि० गा० ५२३४, बृ० गा० ३३१६।
५. वही चूर्णि।
६. नि० गा० ५२३५, बृ० गा० ३३१७।
७. बृ० भा० गा० १९३।
८. बृ० भा० गा० १९१।

उतना महत्त्व नहीं दिया, जितना कि अर्थों को दिया और फलस्वरूप शब्दों को छोड़ कर वे तात्पर्यार्थ की ओर आगे बढ़ने में समर्थ हुए। तात्पर्यार्थ को पकड़ने में सदैव समर्थ हुए या नहीं–यह दूसरा प्रश्न है, किन्तु शब्द को छोड़ कर तात्पर्य की ओर जाने की छूट उन्हें थी, यही यहाँ पर महत्त्व की बात है। इसी दृष्टि से शब्दों के अर्थ के लिये 'भाषा', 'विभाषा', और 'वार्तिक'—ये भेद किये गये। 'शब्द' का केवल एक प्रसिद्ध अर्थ करना 'भाषा' है, एक से अधिक अर्थ कर देना 'विभाषा' है, और यावत् अर्थ कर देना 'वार्तिक' है। जो श्रुतकेवली पूर्वधर है, वही 'वार्तिक' कर सकता है[१]।

एक प्रश्न उपस्थित किया गया है कि जिन अर्थों का उपदेश ऋषभादि तीर्थंकरों ने किया, क्या उन्हीं अर्थों का उपदेश, वर्धमान—जो आयु में तथा शरीर की ऊंचाई में उनसे हीन थे–कर सकते हैं? उत्तर दिया गया है कि शरीर छोटा हो या बड़ा, किन्तु शरीर की रचना तो एक जैसी ही थी, धृति समान थी, केवलज्ञान एक जैसा ही था, प्रतिपाद्य विषय भी वही था, तब वर्धमान उनही अर्थों का प्रतिपादन क्यों नहीं कर सकते? हाँ, कुछ तात्कालिक बातें ऐसी हो सकती हैं, जो वर्धमान के उपदेश की मौलिक विशेषता कही जा सकती हैं। इसी लिये श्रुत के दो भेद होते हैं–'नियत', जो सभी तीर्थंकरों का समान है, और 'अनियत', जो समान नहीं होता[२]।

उपर्युक्त विचारणा से स्पष्ट है कि आचार्यों के समक्ष यह वैदिक विचारणा थी कि शब्द नित्य हैं, उनके अर्थ नित्य हैं और शब्द तथा अर्थ के संबंध भी नित्य हैं। इसी वैदिक विचार को नियत श्रुत के रूप में अपनाया गया है। साथ ही अनेकान्तवाद के आश्रय से अनियत श्रुत की भी कल्पना की गई है। आचार्य अपनी ओर से व्याख्या करते हैं, किन्तु उस व्याख्या का तीर्थंकरों की किसी भी आज्ञा से विरोध नहीं होना चाहिए। अतएव सूत्रों में शब्दतः कोई बात नहीं भी कही गई हो, किन्तु अर्थतः वह तीर्थंकरों को अभिप्रेत थी, इतना ही कहने का अधिकार आचार्य को है। तीर्थंकर की आज्ञा के विरोध में अपनी आज्ञा देने का अधिकार आचार्य को नहीं है। क्योंकि तीर्थंकर और आचार्य की आज्ञा में बलाबल की दृष्टि से तीर्थंकर की आज्ञा ही बलवती मानी जाती है, आचार्य की नहीं। अतएव तीर्थंकर की आज्ञा की अवहेलना करने वाला व्यक्ति अविनय एवं गर्व के दोष से दूषित माना गया है[३]। जिस प्रकार श्रुति और स्मृति में विरोध होने पर श्रुति ही बलवान मानी जाती है, उसी प्रकार तीर्थंकर की आज्ञा आचार्य की आज्ञा से बलवती है।

उत्सर्ग और अपवाद* :

एक बार जब यह स्वीकार कर लिया गया कि विचारणा को अवकाश है, तब परिस्थिति को देखकर मूल सूत्रों के अपवादों की सृष्टि करना, आचार्यों के लिये सहज हो गया।

---

१. बृ० भा० गा० १९६-९।

२. बृ० भा० गा० २०२-४।

३. नि० गा० ५४७२।

* इसका विशेष विवेचन उपाध्याय श्री अमरमुनिजी लिखित निशीथ के तृतीय भाग की प्रस्तावना में द्रष्टव्य है। तथा मुनिराज श्री पुण्यविजयजी की बृहत्कल्प के छठे भाग की प्रस्तावना भी द्रष्टव्य है।

यहाँ पर यह स्पष्ट कर देना भी आवश्यक है कि यह अपवाद मार्ग केवल स्थविरकल्प में ही उचित समझा गया है[१]। जिनकल्प में तो साधक केवल औत्सर्गिक मार्ग पर ही चलते हैं[२]। यह भी एक कारण है कि प्रस्तुत निशीथ सूत्र को 'कल्प' न कहकर 'प्रकल्प' कहा गया है; क्योंकि इसमें उत्सर्ग-कल्प का नहीं; किन्तु स्थविर-कल्पका वर्णन है। स्थविर-कल्प का ही दूसरा नाम 'प्रकल्प' है। और 'कल्प' जिनकल्प को[३] कहते हैं। प्रतिषेध के लिये उत्सर्ग शब्द का प्रयोग है और 'अनुज्ञा' के लिए अपवाद का[४]। इससे फलित है कि उत्सर्ग प्रतिषेध है, और अपवाद विधि है।

संयमी पुरुष के लिये जितने भी निषिद्ध कार्य न करने योग्य कहे गये हैं, वे, सभी 'प्रतिषेध' के अन्तर्गत आते हैं। और जब परिस्थिति-विशेष में उन्हीं निषिद्ध कार्यों को करने की 'अनुज्ञा' दी जाती है, तब वे ही निषिद्ध कर्म 'विधि' बन जाते हैं[५]। परिस्थिति-विशेष में अकर्तव्य भी कर्तव्य बन जाता है; किन्तु प्रतिषेध को विधि में परिणत कर देने वाली परिस्थिति का औचित्य और परीक्षण करना, साधारण साधक के लिये संभव नहीं है। अतएव ये 'अपवाद' 'अनुज्ञा' या 'विधि' सब किसी को नहीं बताये जाते। यही कारण है कि 'अपवाद' का दूसरा नाम 'रहस्य' (नि० चू० गा० ४९५) पड़ा है। इससे यह भी फलित हो जाता है कि जिस प्रकार 'प्रतिषेध' का पालन करने से आचरण विशुद्ध माना जाता है, उसी प्रकार अनुज्ञा के अनुसार अर्थात् अपवाद मार्ग पर चलने पर भी आचरण को विशुद्ध ही माना जाना चाहिए[६]। यदि ऐसा न माना जाता तब तो एक मात्र उत्सर्ग मार्ग पर ही चलना अनिवार्य हो जाता; फल-स्वरूप अपवाद मार्ग का अवलंबन करने के लिए कोई भी किसी भी परिस्थिति में तैयार ही न होता। परिणाम यह होता कि साधना मार्ग में केवल जिनकल्प को ही मानकर चलना पड़ता। किन्तु जब से साधकों के संघ एवं गच्छ बनने लगे, तब से केवल औत्सर्गिक मार्ग अर्थात् जिनकल्प संभव नहीं रहा। अतएव स्थविरकल्प में यह अनिवार्य हो गया कि जितना 'प्रतिषेध' का पालन आवश्यक है, उतना ही आवश्यक 'अनुज्ञा' का आचरण भी है। बल्कि परिस्थिति-विशेष में 'अनुज्ञा' के अनुसार आचरण नहीं करने पर प्रायश्चित्त का भी विधान करना पड़ा है। जिस प्रकार 'प्रतिषेध' का भंग करने पर प्रायश्चित्त है उसी प्रकार अपवाद का आचरण नहीं करने पर भी प्रायश्चित्त है[७]। अर्थात् 'प्रतिषेध' और 'अनुज्ञा' उत्सर्ग और अपवाद—दोनों ही समबल माने गये। दोनों में ही विशुद्धि है। किन्तु यह नहीं भूलना चाहिए कि उत्सर्ग राजमार्ग है, जिसका अवलंबन साधक के लिये सहज है; किन्तु अपवाद, यद्यपि आचरण में सरल है, तथापि सहज नहीं है।

---

१. स्थविरकल्प में स्त्री-पुरुष दोनों होते हैं। जिनकल्प में केवल पुरुष। नि० गा० ८७।

२. नि० गा० ६६६८ की उत्थान चूर्णि।

३. नि० चू० पृ० ३८ गा० ७७ के उत्तरार्ध की चूर्णि। और गा० ८१, ८२ की चूर्णि।

४. नि० चू० गा० ३६४।

५. नि० गा० ५२४५।

६. नि० चू० पृ० ३; गा० २८७, १०२२, १०६८, ४१०३।

७. नि० गा० २३१।

अपवाद का अवलंबन करने से पहले कई शर्तों को पूरा करना पड़ता है; अन्यथा अपवादमार्ग पतन का मार्ग बन जाता है। यही कारण है कि स्पष्ट रूप से प्रतिसेवना के दो भेद बताये गये हैं–अकारण अपवाद का सेवन 'दर्प' प्रति सेवना है और सकारण प्रति सेवना 'कल्प' है। संयमी पुरुष के लिये मोक्ष मार्ग पर चलना, यह मुख्य है। मोक्ष मार्ग में ज्ञान, दर्शन तथा चारित्र की साधना होती है। आचार का पालन करना चारित्र है; किन्तु उक्त चारित्र के कारण यदि दर्शन और ज्ञान की हानि होती हो, तो वह चारित्र, चारित्र नहीं रहता। अतएव ज्ञान-दर्शन की पुष्टि में बाधक होने वाला आचरण चारित्र की कोटी में नहीं आता। यही कारण है कि ज्ञान और दर्शन के कारण आचरण के नियमों में अर्थात् चारित्र में अपवाद करना पड़ता है। उक्त अपवादों का सेवन 'कल्पप्रतिसेवना' के अन्तर्गत इसलिये हो जाता है कि साधक अपने ध्येय से च्युत नहीं होता। अर्थात् अपवाद सेवन के कारणों में 'ज्ञान' और 'दर्शन' ये दो मुख्य हैं। यदि अपवाद सेवन की स्थिति में इन दोनों में से कोई भी कारण उपस्थित न हो, तो वह प्रतिसेवना अकारण होने से 'दर्प' के अन्तर्गत होती है। दर्प का परित्याग करके 'कल्प' का आश्रय लेना ही साधक को उचित है। अतएव दर्प को निषिद्ध माना गया है[1]। ज्ञान और दर्शन इन दो कारणों से प्रतिसेवना हो तो कल्प है—ऐसा मानने पर प्रश्न होता है कि तब दुर्भिक्ष आदि अन्य अनेक प्रकार के कारणों की जो चर्चा आती है[2]; उसका समाधान क्या है? मुख्य कारण तो ज्ञान-दर्शन ही हैं, किन्तु उनके अतिरिक्त जो अन्य कारणों की चर्चा आती है, उसका अर्थ यह है कि साक्षात् ज्ञान दर्शन की हानि होने पर जिस प्रकार अपवाद मार्ग का आश्रय लिया जाता है, उसी प्रकार यदि परंपरा से भी ज्ञान-दर्शन की हानि होती हो तब भी अपवाद का आश्रय लेना आवश्यक हो जाता है। दुर्भिक्ष में उत्सर्ग नियमों का पालन करते हुए आहारादि आवश्यक सामग्री जुटाना संभव नहीं रहता। और आहार के बिना शरीर का स्वस्थ रहना संभव नहीं। शरीर के अस्वस्थ होने पर अवश्य ही स्वाध्याय की हानि होगी, और इस प्रकार अन्ततः ज्ञान-दर्शन की हानि होगी ही। यह ठीक है कि दुर्भिक्ष से साक्षात् ज्ञान-हानि नहीं होती, किन्तु परंपरा से तो होती है। अतएव उसे भी अपवाद मार्ग के कारणों में स्वीकार किया गया है। इसी प्रकार अन्य कारणों का भी ज्ञान-दर्शन के साथ परंपरा सम्बन्ध है।

अथवा प्रतिसेवना का विभाजन एक अन्य प्रकार से भी किया गया है—(१) दर्प प्रति-सेवना, (२) कल्पप्रति सेवना, (३) प्रमादप्रति सेवना और (४) अप्रमादप्रति सेवना[3]। किन्तु उक्त चारों को पुनः दो में ही समाविष्ट कर दिया गया है, क्योंकि प्रमाद दर्प है और अप्रमाद

---

१. नि० गा० ८८। और उसकी चूर्णि। गा० १४४, ३६३, ४६३।

२. नि० गा० १७५, १८८, १६२, २२०, २२१, ४८४,-५, २४४, २५३, ३२१, ३४२, ४१६, ३६१, ३६४, ४२५, ४५३, ४५८, ४८८१ इत्यादि।

३. नि० गा० ६०।

कल्प। अर्थात् जो आचरण प्रमाद-पूर्वक किया जाता है, वह दर्प प्रतिसेवना है और जो अप्रमाद-पूर्वक किया जाता है, वह कल्प प्रति सेवना है[1]।

जैन आचार के मूल में अहिंसा है। एक प्रकार से अहिंसा का ही विस्तार सत्य आदि हैं। अतएव आचरण का सम्यक्त्व इसी में है कि वह अहिंसक हो। और वह आचरण दुश्चरित कहा जाएगा, जो हिंसक हो। हिंसा-अहिंसा की सूक्ष्म चर्चा का सार यही है कि प्रमाद ही हिंसा है और अप्रमाद ही अहिंसा[2] अतएव प्रस्तुत में प्रमाद प्रति सेवना को 'दर्प' कहा गया और अप्रमाद प्रति सेवना को 'कल्प'। संयमी साधक को अप्रमादी रह कर आचरण करना चाहिए, कभी भी प्रमादी जीवन नहीं विताना चाहिए; क्योंकि उसमें हिंसा है और साधक की प्रतिज्ञा अहिंसक जीवन व्यतीत करने की होती है।

अप्रमाद प्रति सेवना के भी दो भेद किये गये हैं—अनाभोग और सहसाकार[3]। अप्रमादी होकर भी यदि कभी ईर्या आदि समिति में विस्मृति आदि किसी कारण से अल्पकाल के लिये उपयोग न रहे, तो वह अनाभोग कहा जाता है[4]। इसमें, यद्यपि प्राणातिपात नहीं है, मात्र विस्मृति है; तथापि यह प्रतिसेवना के अन्तर्गत तो है ही[5]। प्रवृत्ति हो जाने के वाद यदि पता चल जाए कि हिंसा की संभावना है, किन्तु परिस्थितिवश इच्छा रहते हुए भी प्राणवध से वचना संभव न हो, तो उस प्रतिसेवना को सहसाकार कहते हैं[6]। कल्पना कीजिए कि संयमी उपयोगपूर्वक चल रहा है। मार्ग में कहीं सूक्ष्मता आदि के कारण पहले तो जीव दीखा नहीं, किन्तु ज्योंही चलने के लिये पैर उठाया कि सहसा जीव दिखाई दिया और वचाने का प्रयत्न भी किया, तथापि न संभल सकने के कारण जीव के ऊपर पैर पड़ ही गया और वह मर भी गया, तो यह प्रतिसेवना सहसाकार प्रतिसेवना है[7]।

अनाभोग और सहसाकार प्रतिसेवना में प्राणिवध होते हुए भी वंध=कर्म वंध नहीं माना गया है। क्योंकि प्रतिसेवक समित है, अप्रमादी है, और यतनाशील है (नि० गा० १०३)। यतनाशील पुरुष की कल्पिका सेवना, न कर्मोदयजन्य है और न कर्मजनक; प्रत्युत कर्मक्षय-कारी है। इसके विपरीत दर्प प्रतिसेवना कर्मवन्धजनक है (नि० गा० ६३०३-८)। यतना की यह भी व्याख्या है कि अशठ पुरुष का जो भी रागद्वेष रहित व्यापार है, वह सव यतना है। इसके विपरीत रागद्वेषानुगत व्यापार अयतना है। (नि० गा० ६६६६)

---

१. नि० गा० ९१।

२. नि० गा० ९२।

३. नि० गा० ९०, ९५।

४. नि० गा० ९६।

५. नि० चू० गा० ९६।

६. नि० गा० ९७।

७. नि० गा० ९८ से।

अहिंसा के उत्सर्ग-अपवाद :

संयमी जीवन का सर्वस्व अहिंसा है[1]—ऐसा मानकर सर्व प्रथम संयमी जीवन के जो भी नियमोपनियम बने, उन सब में यही ध्यान रखा गया कि साधक का जीवन ऐसा होना चाहिए कि जिसमें हिंसा का आश्रय न लेना पड़े। इसी दृष्टि से यह भी आवश्यक समझा गया कि संयमी के पास अपना कहने जैसा कुछ भी न हो। क्योंकि समग्र हिंसा के मूल में परिग्रह का पाप है। अतएव यदि सब प्रकार के परिग्रह से मुक्ति ली जाए, तो हिंसा का संभव कम से कम रह जाए। इस दृष्टि से सर्व प्रथम यह आवश्यक माना गया कि संयमी अपना परिवार और निवास-स्थान छोड़ दे। अपनी समस्त संपत्ति का परित्याग करे, यहाँ तक कि शरीराच्छादन के लिए आवश्यक वस्त्र तक का परित्याग कर दे[2]। अन्ततः साधना का अर्थ यही हुआ कि सब कुछ त्याग देने पर भी आत्मा का जो शरीर रूप परिग्रह शेष रह जाता है, उसका भी परित्याग करने की प्रक्रियामात्र है। अर्थात् दीक्षित होने के बाद लंबे काल तक की मारणांतिक आराधना का कार्यक्रम ही जीवन में शेष रह जाता है। इस आराधना में राग द्वेष के परित्याग-पूर्वक शरीर के ममत्व का परित्याग करने का ही अभ्यास करना पड़ता है। ज्ञान, ध्यान, जप, तप आदि जो भी साधना के अंग हैं, उन सबका यही फल होता है कि आत्मा से शरीर का संबंध सर्वथा छूट जाए!

साधना, आत्मा को शरीर से मुक्त करने की एक प्रक्रिया है। किन्तु, आत्मा और शरीर का सांसारिक अवस्था में ऐसा तादात्म्य हो गया होता है कि शरीर की हठात् सर्वथा उपेक्षा करने पर आत्म-लाभ के स्थान पर हानि होने की ही अधिक संभावना है। इस दृष्टि से दीर्घकाल तक जो साधना करनी है, उसका एक साधन शरीर भी है, (दश वै० ५, ९२) ऐसा माना गया। अतएव उतनी ही हद तक शरीर की रक्षा करना अनिवार्य है, जितनी हद तक वह साधना का साधन बना रहता है। जहाँ वह साधना में बाधक हो, वहाँ उसकी रक्षा त्याज्य है; किन्तु साधन का सर्वथा परित्याग कर देने पर साधना संभव नहीं—यह भी एक ध्रुव सत्य है। अतएव आत्म-शुद्धि के साथ-साथ शरीर-शुद्धि की प्रक्रिया भी अनिवार्य है। ऐसा नहीं हो सकता कि साधना-स्वीकृति के प्रथम क्षण में ही शरीर की सर्वथा उपेक्षा कर दी जाए। निष्कर्ष यही निकला कि सर्वस्व-त्यागी संयमी जीवन-यापन की दृष्टि से ही आहार ग्रहण करेगा, न कि शरीर की या रसास्वादन की पुष्टि के लिए। आहार जुटाने के लिए जो कार्य या व्यापार एक गृहस्थ को करने पड़ते हैं, यदि साधक भी, वे ही सब कुछ करने लगे, तब तो वह पुनः सांसारिक प्रपंच में ही उलझ जाएगा। इस दृष्टि से यह उचित माना गया कि संयमी अपने आहार का प्रबंध माधुकरी वृत्ति से करे (दशवै० १. २-५)। इस वृत्ति के कारण जैसा भी मिले, या कभी नहीं भी मिले, तब भी उसे समभाव पूर्वक ही जीवन यापन करना चाहिए, यही

---

१. 'अहिंसा निउणा दिट्ठा सव्वभूएसु संजमो' ६.१०।
सव्वे जीवा वि इच्छंति जीविउं न मरिज्जिउं।
तम्हा पाणिवहं घोरं निग्गंथा वज्जयंति णं ॥ ६.११ ॥ दशवै०

२. दश वै० ४.१७–१८।

साधक की आहार-विषयक साधना है। उक्त साधना के मुख्य नियम यही बने कि वह अपने लिये बनी कोई भी वस्तु भिक्षा में स्वीकार न करे, और न अपने लिये आहार की कोई वस्तु स्वयं ही तैयार करे। दी जाने वाली वस्तु भी ऐसी होनी चाहिए जो शरीर की पुष्टि में नहीं; किन्तु जीवन-यापन में सहायक हो अर्थात् रूखा-सूखा भोजन ही ग्राह्य है। और खास बात यह है कि वह ऐसी कोई भी वस्तु आहार में नहीं ले सकता, जो सजीव हो या सजीव से सम्बन्धित हो। इतना ही नहीं, किन्तु भिक्षाटन करते समय यदि संयमी से या देते समय दाता से, किसी को किसी प्रकार का कष्ट हो, जीव-हिंसा की संभावना हो तो वह भिक्षा भी स्वीकरणीय नहीं है। इतना ही नहीं, दाता के द्वारा पहले या पीछे किसी भी समय यदि भिक्षु के निमित्त हिंसा की संभावना हो तो वह इस प्रकार की भिक्षा भी स्वीकार नहीं करेगा। इत्यादि मुख्य नियमों को लक्ष्य में रखकर जो उपनियम बने, उनकी लम्बी सूचियाँ शास्त्रों में हैं (दशवै० अ० ५); जिन्हें देखने से यह निश्चय होता है कि उन सभी नियमोपनियमों के पीछे अहिंसा का सूक्ष्मतम दृष्टिकोण रहा हुआ है। अस्तु जहाँ तक संभव हो, हिंसा को टालने का पूरा प्रयत्न है।

आहार-विषयक नियमोपनियमों का अथवा उत्सर्ग अपवाद-विधि का विस्तार आचारांग, दशवैकालिक, बृहत्कल्प, कल्प आदि में है; किन्तु वहाँ प्रायश्चित्त की चर्चा नहीं है। प्रायश्चित्त की प्राप्ति अर्थतः फलित होती है। किन्तु क्या प्रायश्चित हो, यह नहीं बताया गया। निशीथ मूल सूत्र में ही तत्तत् नियमोपनियमों की क्षति के लिये प्रायश्चित्त बताया गया है[1]। साथ ही निर्युक्ति, भाष्य तथा चूर्णिकारों के लिये यह भी आवश्यक हो गया कि प्रत्येक सूत्र की व्याख्या के समय और प्रायश्चित्त का विवरण देते समय यह भी बता दिया जाए कि नियम के भंग होने पर भी, किस विशेष परिस्थिति में साधक प्रायश्चित्त से मुक्त रहता है—अर्थात् बिना प्रायश्चित्त ही शुद्ध होता है।

आहार-विषयक उक्त नियमों का सर्जन औत्सर्गिक अहिंसा के आधार पर किया गया है। अतएव अहिंसा के अपवादों को लक्ष्य में रखते हुए आहार के भी अपवाद बनाये जाएँ-यह स्वाभाविक है। स्वयं अहिंसा के विषय में भी अनेक अपवाद हैं. किन्तु हम यहाँ कुछ की ही चर्चा करेंगे, जिससे प्रतीत होगा कि जीवन में अहिंसा का पालन करना कितना कठिन है और मनुष्य ने अहिंसा के पालन का दावा करके भी क्या-क्या नहीं किया ?

अहिंसा की चर्चा करते हुए कहा गया है कि यदि कोई व्यक्ति अपने विरोधी का पुतला बनाकर उसे मर्माहत करे तो वह दर्पप्रतिसेवना है[2]—अर्थात् हिंसा है। किन्तु धर्म-रक्षा के

---

१. नि०सू० २. ३२-३६, ३८-४६; ३. १-१५; ४. १९-२१, ३८-३९, ११२; ५. १३-१४, ३४-३५; ८. १४-१८; ९. १-२, ६; ११. ३, ६, ७२-८१; १२. ४, १४-१५, ३०-३१, ४१; १३. ६४-७८; १५. ५-१२, ७५-८६; १६. ४-१३, १६-१७, २७, ३३-३७; १७. १२४-१३२; १८. २०-२३; १९. १-७।

२. नि० गा० १५५।

निमित्त अर्थात् साधु-संघ या चैत्य का कोई विरोधी हो तो, उसका मिट्टी का पुतला[1] बनाकर मर्माहत करना धर्म-कार्य है; फलतः वह कल्प प्रतिसेवना के अन्तर्गत हो जाता है[2]। अर्थात् ऐसी हिंसा करने वाला पापभागी नहीं बनता। हिंसा का यह अहिंसक तरीका आज भले ही हास्यास्पद लगे; किन्तु जिस समय लोगों का मन्त्रों में विश्वास था, उस समय उन्होंने यही ठीक समझा होगा कि हम प्रत्यक्षतः अपने शत्रु की हिंसा नहीं करते, केवल उसके पुतले की हत्या करते हैं और तद्द्वारा शत्रु की हिंसा होती है, अस्तु इस पद्धति के द्वारा हम कम से कम साक्षात् हिंसा से तो बच ही जाते हैं। वस्तुतः विचार किया जाए, तो तत्कालीन साधकों के समक्ष अहिंसा के बल पर शत्रु पर किस प्रकार विजय प्राप्त की जाए, इसकी कोई स्पष्ट प्रक्रिया नहीं थी—ऐसा लगता है। अतएव शत्रु के हृदय को परिवर्तित करने जितना धैर्य न हो, तो यह भी एक अहिंसक मार्ग है। यह मान लिया गया।

धर्म-शत्रु परोक्ष हो तो मंत्र का आश्रय लिया जाय, किन्तु वह यदि समक्ष ही आ जाय और आचार्य आदि के वध के लिये तैयार हो जाय, तो इस परिस्थिति में क्या किया जाए? यह प्रश्न भी अहिंसक संघ के समक्ष था। उक्त प्रश्न का अपवाद मार्ग में जो समाधान दिया गया है वह आज के समाज की दृष्टि में, जो सत्याग्रह का पाठ भी जानता है, भले ही अहिंसक न माना जाए, किन्तु निशीथ भाष्य और चूर्णिकार ने तो उसमें भी विशुद्ध अहिंसा का पालन ही माना है। निशीथ चूर्णि में कहा है कि[3] यदि ऐसा शत्रु आचार्य या गच्छ के वध के लिये उद्यत है, अथवा किसी साध्वी का बलात्कार पूर्वक अपहरण करना चाहता है, अथवा चैत्यों या चैत्यों के द्रव्य का विनाश करने पर तुला हुआ है, और आपके उपदेश को मानता ही नहीं; तब उसकी हत्या करके आचार्य आदि की रक्षा करनी चाहिए। ऐसी हत्या करता हुआ संयमी मूलतः विशुद्ध ही माना गया है 'एवं करेंतो विशुद्धो'।

एक बार ऐसा हुआ कि एक आचार्य बहुशिष्य परिवार के साथ विहार कर रहे थे। संध्या का समय था और वे एक श्वापदाकुल भयंकर अटवी में पहुँच गए। संघ में एक दृढ़ शरीर वाला कोंकणदेशीय साधु था। रात में संघ की रक्षा का भार उसे सौंपा गया। शिष्य ने आचार्य से पूछा कि हिंस्र पशु का प्रतिकार उसे कष्ट पहुँचाकर किया जाय या बिना कष्ट के? आचार्य ने कहा कि यथा संभव कष्ट पहुँचाए बिना ही प्रतिकार करना चाहिए, किन्तु यदि कोई अन्य उपाय संभव न हो तो कष्ट भी दिया जा सकता है। रात में जब शेष साधु सो गए, तो वह कोंकणी साधु रक्षा के लिए जागता रहा और उसने इस प्रसंग में तीन सिंहों की हत्या करदी। प्रातःकाल उसने आचार्य के पास आलोचना की और वह शुद्ध माना गया। इस प्रकार जो भी संघ-रक्षा के निमित्त किसी की हत्या करता है, वह शुद्ध ही माना जाता है[4]।

---

१. मिट्टी का पुतला बनाकर, उसे अभिमंत्रित कर, पुतले में जहाँ-जहाँ मर्म भाग हों वहाँ खंडित करने पर, जिसका पुतला होता उसके मर्म का घात किया जाता था।

२. नि० गा० १६७,

३. नि० चू० गा० २८९।

४. 'एवं आयरियादि कारणेसु वावादिंतो सुद्धो'—नि० चू० गा० २८९, पृ० १०१ भाग १।

भगवान् महावीर के द्वारा आचरित अहिंसा में और इन टीकाकारों की अहिंसा-सम्बन्धी कल्पना में आकाश-पाताल जैसा स्पष्ट अन्तर दीखना है। भ० महावीर तो शत्रु के द्वारा होने वाले सभी प्रकार के कष्टों को सहन कर लेने में ही श्रेय समझते थे। और अपनी रक्षा के लिये मनुष्य की तो क्या, देव की सहायता लेना भी उचित नहीं समझते थे। किन्तु समय का फेर है कि उन्हीं के अनुयायी उस उत्कट अहिंसा पर चलने में समर्थ नहीं हुए, और गीतानिर्दिष्ट—'आततायिनमायान्तम्' की व्यावहारिक अहिंसा-नीति का अनुसरण करने लग गए। विवश होकर पारमार्थिक अहिंसा का पालन छोड़ दिया गया। अथवा यह कहना उचित होगा कि तत्कालीन साधक के समक्ष, अपने व्यक्तित्व की अपेक्षा, संघ और प्रवचन—अर्थात् जैन शासन का व्यक्तित्व अत्यधिक महत्त्वशाली हो गया था। अतएव व्यक्ति, जो कार्य अपने लिये करना ठीक नहीं समझता था, वह सब संघ के हित में करने को तैयार हो जाता था। और तात्कालिक संघ की रक्षा करने में आनन्द मनाता था। ऐसा करने पर समग्ररूप से अहिंसा की साधना को बल मिला, यह तो नहीं कहा जा सकता। किन्तु ऐसा करना इसलिये उचित माना गया कि यदि संघ का ही उच्छेद हो जाएगा तो संसार से सन्मार्ग का ही उच्छेद हो जाएगा। अतएव सन्मार्ग की रक्षा के निमित्त कभी कभाक असन्मार्ग का भी अवलंबन लेना आवश्यक है। प्रस्तुत विचारणा इसलिये दोष पूर्ण है कि इसमें 'सन्मार्ग पर दृढ़ रहने से ही सन्मार्ग टिक सकता है'—इस तथ्य के प्रति अविश्वास किया गया है और 'हिंसा से भी अहिंसा की रक्षा करना आवश्यक है'—इस विश्वास को सुदृढ बनाया गया है। साधन और साध्य की एक रूपता के प्रति अविश्वास फलित होता है, और उचित या अनुचित किसी भी प्रकार से अपने साध्य को सिद्ध करने की एक मात्र तत्परता ही दीखती है। और यह भी एक अभिमान है कि हमारा हो धर्म सर्व-हितकर है, दूसरे धर्म तो लोगों को कु-मार्ग में ले जाने वाले हैं। तभी तो उन्होंने सोचा कि हमें अपने मार्ग की रक्षा किसी भी उपाय से हो, करनी ही चाहिए। एक बार एक राजा ने जैन साधुओं से कहा कि ब्राह्मणों के चरणों में पड़ो, अन्यथा मेरे देश से सभी जैन साधु निकल जाएँ! आचार्य ने अपने साधुओं को एकत्र करके कहा कि जिस-किसी साधु में अपने शासन का प्रभाव बढ़ाने की शक्ति हो, वह सावद्य या निरवद्य जैसे भी हो, आगत कष्ट का निवारण करे। इस पर राजसभा में जाकर एक साधु ने कहा कि जितने भी ब्राह्मण हैं उन सबको आप सभा में एकत्र करें, हम उन्हें नमस्कार करेंगे। जब ब्राह्मण एकत्र हुए, तो उसने कणेर की लता को अभिमंत्रित करके सभी ब्राह्मणों का शिरच्छेद कर दिया; किसी आचार्य के मत से तो राजा का भी मस्तक काट दिया। इस प्रकार प्रवचन की रक्षा और उन्नति की गई। इस कार्य को भी प्रवचन के हितार्थ होने के कारण विशुद्ध माना गया है[१]।

मनुष्य-हत्या जैसे अपराध को भी, जब प्रवचन के कारण विशुद्ध कोटी में माना गया, तब अन्य हिंसा की तो बात ही क्या? अतएव अहिंसा के अन्य अपवादों की चर्चा न करके प्रस्तुत में आहार-सम्बन्धी कुछ अपवादों की चर्चा की जाएगी। इससे पहले यहाँ इस बात की ओर पुनः ध्यान दिला देना आवश्यक है कि यह सब गच्छ-वासियों की ही चर्या है। किन्तु

१. 'एवं पवयणत्थे पडिसेवंतो विसुद्धो'—नि० चू० गा० ४८७।

जिन्होंने गच्छ छोड़ कर जिनकल्प स्वीकार कर लिया हो, वे एकाकी निष्ठावान् श्रमण, ऐसा नहीं कर सकते। उन्हें तो उक्त प्रसंगों पर अपनी मृत्यु ही स्वीकार होती थी, किन्तु किसी को कुछ भी अपनी ओर से कष्ट पहुँचाना स्वीकार नहीं था और न वह शास्त्र-विहित ही था। इस प्रकार अहिंसा में पूर्ण निष्ठा रखने वाले श्रमणों की भी कमी नहीं थी। किन्तु जब यह देख लिया जाता कि अन्य समर्थ श्रमण-संघ की रक्षा करने के योग्य हो गये हैं, तभी ऐसे निष्ठावान् श्रमण को संघ से पृथक् होकर विचरण करने की आज्ञा मिल सकती थी, और वह भी जीवन के अन्तिम वर्षों में[1]। तात्पर्य यह है कि जब तक संघ में रहे, संयमी के लिए शासन और संघ की रक्षा करना—आवश्यक कर्तव्य है, और एतदर्थ यथाप्रसंग व्यक्तिगत साधना को गौण भी करना होता है। जब संघ से पूर्णतया पृथक् हो जाए, तभी व्यक्तिगत साधना का चरमविकास किया जा सकता है। अर्थात् फलितार्थ रूप में यह मान लिया गया कि व्यक्तिगत विकास की चरम पराकाष्ठा संघ में रहकर नहीं हो सकती। संघ में तो व्यक्तिगत विकास की एक अमुक मर्यादा है।

यहाँ पर यह भी ध्यान देने की बात है कि व्याख्याकार ने जिन अपवादों का उल्लेख किया है, जिनके आचरण करने पर भी प्रायश्चित्त न लेने की प्रेरणा की है, यदि उन अपवादों को हम सूत्रों के मूल शब्दों में खोजें तो नहीं मिलेंगे। फिर भी शब्द की अपेक्षा अर्थ को ही अधिक महत्त्व देने की मान्यता के आधार पर, व्याख्याकारों ने शब्दों से ऊपर उठकर अपवादों की सृष्टि की है। अपवादों की आज्ञा देते समय कितनी ही बार औचित्य का सीमातीत भंग किया गया है, ऐसा आज के वाचक को अवश्य लगेगा। किन्तु उक्त अपवादों की पृष्ठभूमि में तत्कालीन संघ की मनःस्थिति का ही चित्रण हमें मिलता है; अतः उन अपवादों का आज के अहिंसक समाज की दृष्टि से नहीं, अपितु तत्कालीन समाज की दृष्टि से ही मूल्यांकन करना चाहिए। संभव है आज के समाज की अहिंसा तत्कालापेक्षया कुछ अधिक सूक्ष्म और सहज हो गई हो; किन्तु उस समय के आचार्यों के लिये वही सब कुछ करना उचित रहा हो। मात्र इसमें आज तक की अहिंसा की प्रगति का ही दर्शन करना चाहिए, न कि यह मान लेना चाहिए कि जीवन में उस समय अहिंसा अधिक थी और आज कम है; अथवा यह भी नहीं समझ लेना चाहिए कि संपूर्ण अहिंसा का परिपालन आज के युग में नहीं हो सकता है, जोकि पूर्व युग में हुआ है। और यह भी नहीं मान लेना चाहिए कि हम आज अहिंसा का चरम विकास जितना सिद्ध कर सके हैं, उस काल में वह विकास उतना नहीं था। भेद वस्तुतः यह है कि आज समुदाय की दृष्टि से भी अहिंसा किस प्रकार उत्तरोत्तर बढ़ सकती है, यह अधिक सोचा जाता है। व्यक्तिगत दृष्टि से तो पूर्वकाल में भी संपूर्ण अहिंसक व्यक्ति का मिलना संभव था, और आज भी मिलना संभव है। किन्तु अहिंसक समाज की रचना किस प्रकार हो सकती है—इस समस्या पर गांधी जी द्वारा उपदिष्ट सत्याग्रह के बाद अधिक विचार होने लगा है—यही नई बात है। समग्र मानव समाज में, युद्ध-शक्ति का निराकरण करके आत्म-शक्ति का साम्राज्य किस प्रकार स्थापित हो—यह आज की समस्या है। और आज के मानव ने अपना केन्द्र बिन्दु,

---

१. बृ० भा० गा० १३५८ से। संघ की उचित व्यवस्था किये बिना जिनकल्पी होने पर प्रायश्चित्त लेना पड़ता था—नि० गा० ४६२६; बृ० गा० १०६३।

व्यक्तिगत अहिंसा से हटाकर प्रस्तुत सामूहिक अहिंसा में स्थिर किया है—यही आज के अहिंसा-विचार की विशेषता है।

आहार और औषध के अपवाद :

अब कुछ आहार-विषयक अपवादों की चर्चा की जाती है। यह विशेषत: इसलिये आवश्यक है कि जैन समाज में आहार के प्रश्न को लेकर बारबार चर्चा उठती है और वह सदैव आज के जैन-समाज के आहार-सम्बन्धी प्रक्रिया को समक्ष रखकर होती है। जैन-समाज ने आहार के विषय में दीर्घकालीन अहिंसा की प्रगति के फलस्वरूप जो पाया है वह उसे प्रारंभकाल में ही प्राप्त था, उक्त मान्यता के आधार पर ही प्रायः प्रस्तुत चर्चा का सूत्रपात होता है। अतएव यह आवश्यक है कि उक्त मान्यता का निराकरण किया जाए और आहार-विषयक सही मान्यता उपस्थित की जाए और आज के समाज की दृष्टि से पूर्वकालीन समाज आहार के विषय में अहिंसा की दृष्टि से कितना पश्चात्पद था—यह भी दिखा दिया जाए। आज का जैन साधु अपवाद की स्थिति में भी मांसाहार ग्रहण करने की कल्पना तक को असह्य समझता है, तो लेने की बात तो दूर ही है। अतएव आज का भिक्षु 'प्राचीनकाल में कभी जैन भिक्षु भी आपवादिक स्थिति में मांस ग्रहण करते थे'—इस तथ्य को स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं है।

आहार का विचार करते समय दो बातों का विचार करना आवश्यक है। एक तो यह कि कौनसी वस्तु साधु को आहार में लेने योग्य है? अर्थात् शाकाहार या मांसाहार दो में से साधु किसे प्रथम स्थान दे? दूसरी बात यह है कि वह गोचरी या पिण्डैषणा के आधाकर्म वर्जन आदि नियमों को अधिक महत्त्व के समझे या वस्तु को? अर्थात् अहिंसा के पालन की दृष्टि से "साधु अपने लिये बनी कोई भी चीज, चाहे वह शाकाहार-सम्बन्धी वस्तु हो या मांसाहार-सम्बन्धी, न लें" इत्यादि नियमों को महत्त्व दे अथवा आहार की वस्तु को?

वस्तु-विचार में यह स्पष्ट है कि साधु के लिये यह उत्सर्ग मार्ग है कि वह मद्य-मांस आदि वस्तुओं को आहार में न ले। अर्थात् उक्त दोषपूर्ण वस्तुओं की गवेषणा न करे और कभी कोई देता हो तो कह दे कि ये वस्तुएँ मेरे लिये अकल्प्य हैं[1]। और यह भी स्पष्ट है कि भिक्षु का उत्सर्ग मार्ग तो यही है कि वह पिण्डैषणा के नियमों का यथावत् पालन करे। अर्थात् अपने लिये बनी कोई भी चीज न ग्रहण करे। तारतम्य का प्रश्न तो अपवाद मार्ग में उपस्थित होता है कि जब अपवाद मार्ग का अवलम्बन करना हो, तब क्या करे? क्या वह वस्तु को महत्व दे या नियमों को? निशीथ में रात्रि भोजन सम्बन्धी अपवादों के वर्णन प्रसंग में जो कहा गया है, वह प्रस्तुत में निर्णायक हो सकता है। अतएव यहाँ उसकी चर्चा की जाती है। कहा गया है कि द्वीन्द्रिय से लेकर पंचेन्द्रिय तक का मांस हो तो अल्पेन्द्रिय जीवों का मांस लेने में कम दोष है और उत्तरोत्तर अधिकेन्द्रिय जीवों का माँस ग्रहण करने में उत्तरोत्तर अधिक दोष है। जहाँ के लोगों को यह पता हो कि 'जैन श्रमण मांस नहीं लेते' वहाँ आधाकर्म-दूषित अन्य आहार लेने

---

१. दश वै० ५.७३, ७४; गा० ७३ के 'पुग्गल' शब्द का अर्थ 'मांस' है। इसका समर्थन निशीथ-चूर्णि से भी होता है—गा० २३८, २८८, ६१००।

में कम दोष है और मांस लेने में अधिक दोष; क्योंकि परिचित जनों के यहाँ से मांस लेने पर निन्दा होती है। किन्तु जहाँ के लोगों को यह ज्ञान नहीं कि 'जैन श्रमण मांस नहीं खाते', वहाँ मांस का ग्रहण करना अच्छा है और आधाकर्म-दूषित आहार लेना अधिक दोषावह है; क्योंकि आधाकर्मिक आहार लेने में जीवघात है। अतएव ऐसे प्रसंग में सर्वप्रथम द्वीन्द्रिय जीवों का मांस ले; उसके अभाव में क्रमशः त्रीन्द्रिय आदि का। इस विषय में स्वीकृत साधुवेश में ही लेना या वेष बदलकर, इसकी भी चर्चा है[1]। उक्त समग्र चर्चा का सार यह है कि जहाँ अपनी आत्मसाक्षी से ही निर्णय करना है और लोकापवाद का कुछ भी डर नहीं है, वहाँ गोचरी-सम्बन्धी नियमों के पालन का ही अधिक महत्व है। अर्थात् औद्देशिक फलाहार की अपेक्षा मांस लेना, न्यून दोषावह, समझा जाता है—ऐसी स्थिति में साधक की अहिंसा कम दूषित होती है। यह भी स्पष्ट कर दिया गया है कि जबकि फासुग-अचित्त वस्तु मांसादि का सेवन भी अपने बलवीर्य की वृद्धि निमित्त करना अप्रशस्त है, तो जो आधाकर्मादि दोष से दूषित अविशुद्ध भोजन करता है, उसका तो कहना ही क्या[2] ? अर्थात् वह तो अप्रशस्त है ही। इससे यह भी सिद्ध होता है कि मांस को भी फासुग-अचित माना गया है।

इस प्रसंग में निशीथगत विकृति की चर्चा भी उपयोगी सिद्ध होगी। निशीथ सूत्र में कहा गया है कि जो भिक्षु आचार्य तथा उपाध्याय की आज्ञा के बिना विकृत-विगय का सेवन करता है, वह प्रायश्चित्त-भागी होता है (उ० ४. सू० २१)।

निशीथ निर्युक्ति में विकृति की गणना इस प्रकार है—

तेल, घृत, नवनीत—मक्खन, दधि, फाणिय—गुड, मद्य, दूध, मधु, पुग्गल—मांस और चलचल ओगाहिम[3] (गा० १५९२—९३)

योगवाही भिक्षु के लिये अर्थात् शास्त्र पठन के हेतु तपस्या करने वाले के लिये कहा गया है कि जो कठिन शास्त्र न पढ़ता हो, उसे आचार्य की आज्ञा पूर्वक दशों प्रकार की विकृति के सेवन की भजना है। अर्थात् आचार्य जिसकी भी आज्ञा दे, सेवन कर सकता है। किन्तु अपवाद मार्ग में तो कोई भी स्वाध्याय करने वाला किसी भी विकृति का सेवन कर सकता है (नि० गा० १५९९)।

विकृति के विषय में निशीथ में अन्यत्र भी चर्चा है। कहा गया है कि विकृति दो प्रकार की है-(१) संचतिया और (२) असंचतिया। दूध, दधि, मांस और मक्खन—ये असंचतिया विकृति हैं। और किसी के मत से ओगाहिम भी तदन्तर्गत है। शेष विकृति, संचतिया कही गई हैं। और उनमें मधु, मांस और मद्य को अप्रशस्त विकृति भी कहा गया है (नि० चू० गा० ३१६९)। यह भी स्पष्ट किया गया है कि विकृति का सेवन साधक की आत्मा को विकृत बना

---

१. नि० गा० ४३६-३९, ४४३-४४७।

२. नि० चू० गा० ४६९।

३. पकाने के लिये तवे पर प्रथमबार रखा गया तप्त घृत। जिसमें तीन बार कोई वस्तु तली न जाय, तब तक वह विकृत है।

देना है। अतएव उसका वर्जन करना चाहिए (नि० गा० ३१६८)। किन्तु चूर्णिकार ने स्पष्टरूप से अपवादपद में विकृति ग्रहण करने की अनुज्ञा का निर्देश किया है और कहा है कि बाल, वृद्ध, आचार्य तथा दुर्बल संयमी रोग आदि में विकृति का सेवन कर सकते हैं (नि० चू० ३१६८)। भाष्यकार ने कहा है कि मांस आदि गर्हित विगय लेते समय, साधु, सर्वप्रथम इस बात की गर्हा करे कि "यह अकार्य है, क्या करें, इसके बिना रोगी के रोग का शमन नहीं होता।" और उतना ही लिया जाए जितने से कि रोगी का काम चल सके। तथा दातार को भी यह विश्वास हो जाए कि सचमुच रोगी के लिये ही लेते हैं, रस-लोलुपता से नहीं। (नि० गा० ३१७० चूर्णि के साथ)।

सामान्यत: निषिद्ध देश में विहार करने की अनुज्ञा नहीं है, किन्तु यदि कभी अपवाद में विहार करना ही पड़े, तो भिक्षु, वेष बदल कर अपने लिये भोजन बना सकते हैं, दूसरों के यहाँ से पक्व फल ले सकते हैं, और मांस भी ग्रहण कर सकते हैं (नि० चू० गा० ३४३६)। और इसके लिये प्रायश्चित्त-विधि भी बताई गई है (नि० गा० ३४५६-७)।

निशीथ सूत्र (११ ८०) में, यदि भिक्षु मांस-भोजन की लालसा से उपाश्रय बदलता है, तो उसके लिए प्रायश्चित्त का विधान है। किन्तु अपवाद में गीतार्थ साधु संखडी आदि में जाकर मांस का ग्रहण कर सकते हैं (नि० गा० ३४८७)। रोगी के लिये चोरी से या मन्त्र प्रयोग करके वशीकरण से भी अभीप्सित औषधि प्राप्त करना अपवाद मार्ग में उचित माना गया है। (नि० गा० ३४७)। औषधि में हंसतेल जैसी वस्तु लेना भी, जो मांस से भी अधिक पाप जनक है, और वह भी आवश्यकता पड़ने पर चोरी या वशीकरण के द्वारा, अपवाद मार्ग में शामिल है।[1] चूर्णिकार ने हंसतैल बनाने की विधि का जो उल्लेख किया है, उसे पढ़कर तो रोंगटे खड़े हो जाते हैं। हंस को चीर कर, मलमूत्र निकाल कर, अनन्तर उसके पेट को कुछ वस्तुएँ भर कर सी लिया जाता है और फिर पकाकर जो तेल तैयार किया जाता है, वह हंसतेल है (नि० गा० ३४८ की चूर्णि)।

भगवान् महावीर की मूल आज्ञा से संयमी के लिए किसी प्रकार की भी चिकित्सा न करने की थी[2], किन्तु एक बार साधु-संघ में चिकित्सा प्रविष्ट हुई कि उसका अपवाद मार्ग में किस सीमा तक प्रचलन होता गया, यह उक्त दृष्टान्त से स्पष्टतया जाना जा सकता है। साधक मृत्युभय से कितना अधिक त्रस्त था—यह तो इससे सिद्ध ही है; किन्तु अपवाद मार्ग की भी जो अमुक मर्यादा रहनी चाहिए थी, वह भी भग्न हो गई—ऐसा स्पष्ट ही लगता है। एक ओर भिक्षुओं को अपनी अहिंसा और आचरण के उत्कृष्टत्व की धाक जमाये रखनी थी, किन्तु दूसरी ओर उत्कट सहनशील संयमी जीवन रह नहीं गया था। अतएव उक्त अपवादों का आश्रय लिया गया। किन्तु पद पद पर यह डर भी था कि कहीं अनुयायी वर्ग ऐसी असंयम मूलक प्रवृत्तियाँ देखकर श्रद्धाभ्रष्ट न हो जाए और साथ ही यह भी भय रहता था कि विरोधियों के समक्ष जैन साधु-समाज का जो आचरण की उत्कटता का बाहरी आवरण है, वह हटकर अंदर का यथार्थ चित्र न खड़ा हो जाए, ताकि उन्हें जैन शासन की अवहेलना का एक साधन

---

१. नि० गा० ३४८; ५७२२ चू०।

२. दश वै० ३.४; नि० सू० ३.२८-४०; १३.४२-४५ इत्यादि।

मिल जाए। अतएव अपवाद मार्ग का जो भी अवलंबन लिया जाता था, उसे गुप्त ही रखने का प्रयत्न किया जाता था (नि० चू० गा० ३४५-३४७)। जहाँ सब प्रकार के कष्टों को सहन करने की बात थी, वहाँ सब प्रकार की चिकित्सा करने-कराने की अनुज्ञा मिल गई। यह किसी भी परिस्थितियों में हुआ हो, किन्तु एक बात स्पष्ट है कि 'मनुष्य के लिये अपने जीवन की रक्षा का प्रश्न उपेक्षणीय नहीं है'—यह तथ्य कुछ काल के लिये उत्साह-वश भले ही उपेक्षित रह सकता है, किन्तु गंभीर विचारणा के अनन्तर, अन्ततः मनुष्य को बाध्य होकर उक्त तथ्य को स्वीकार करना ही पड़ता है और कालिदास का 'शरीरमाद्यं खलु धर्म-साधनम्' वाला कथन व्यावहारिक ही नहीं; किन्तु ध्रुव सत्य सिद्ध होता है। अतएव जिस साधु-संघ का यह उत्सर्ग मार्ग हो कि किसी भी प्रकार की चिकित्सा न करना ('तेगिच्छं नाभिनन्देज्जा'—उत्तरा २. २३); उसे भी रोगावस्था में क्या-क्या साधन जुटाने पड़े और जुटाने में कितनी सावधानी रखनी पड़ी—इसका जो तादृश चित्रण प्रस्तुत ग्रन्थ में है,[1] वह तत्कालीन साधु-संघ की अपने धर्म के प्रति निष्ठा ही नहीं; किन्तु विवश व्यक्ति की व्यग्रता, भय, तथा प्रतिष्ठारक्षार्थ किये जानेवाले प्रयत्न आदि का यथार्थ स्वरूप भी उपस्थित करता है। आज की दृष्टि से देखा जाए, तो यह सब माया जाल सा लगता है और एक प्रकार का दम्भपन भी दीखता है; किन्तु जिस समय धार्मिक साधकों के समक्ष केवल अपने जीवन मरण का प्रश्न ही नहीं, किन्तु संघ—उच्छेद की विकट समस्या भी थी, उस समय वे अपनी जीवन—भूमिका के अनुसार ही अपना मार्ग तलाश कर सकते थे। अन्य प्रकार से कुछ भी सोचना, संभव है, तब उनके लिये संभव ही नहीं रह गया हो। जीवन में अहिंसा और सत्य की प्रतिष्ठा क्रमशः किस प्रकार की गई, और उसके लिए साधकों को किस-किस प्रकार के भले बुरे मार्ग लेने पड़े—इस तथ्य के अभ्यासियों के लिये प्रस्तुत प्रकरण अत्यन्त महत्व का है। सार यही निकलता है कि रोग को प्रारंभ से ही दबाना चाहिए। उसकी उपेक्षा हानिकारक होती है[2]। शरीर यदि मोक्ष का साधन है, तो आहार शरीर का साधन है। अतएव आहार की उपेक्षा नहीं की जा सकती[3]।

ब्रह्मचर्य की साधना में कठिनाई :

जैन-संघ में भिक्षु और भिक्षुणी—दोनों के लिये स्थान है; किन्तु जिन कल्प में, जो साधना का उत्कट मार्ग है, भिक्षुणियों को स्थान नहीं दिया गया। इसका यह कारण नहीं कि भिक्षुणी, व्यक्तिगतरूप से, उत्कट मार्ग का पालन करने में असमर्थ हैं। किन्तु सामाजिक परिस्थिति से बाध्य होकर ही आचार्यों ने यह निर्णय किया कि साध्वी स्त्री एकान्त में अकेली रहकर साधना नहीं कर सकती। जैनों के जिस सम्प्रदाय ने मात्र जिन कल्प के आचार को ही साध्वाचार माना और स्थविर कल्प के गच्छवास तथा सचेल आचार को नहीं माना; उनके लिये एक ही मार्ग रह गया कि वे स्त्रियों के मोक्ष का भी निषेध करें। अतएव हम देखते हैं कि ईसा की प्रथम शताब्दी के बाद के दिगम्बर ग्रन्थों में स्त्रियों के लिये निर्वाण का निषेध किया गया है। और

---

१. नि० गा० २९७०—३१०४; बृ० भा० गा० १८७१—२००२।

२. नि० गा० ४८०६-७; बृ० गा० ६४७-८।

३. नि० गा० ४१५७-४१६६।

प्राचीन ग्रन्थों की व्याख्याओं में प्रस्तुत निषेध को मूल में से खोजने का असफल प्रयत्न किया गया है।

समुदाय में जहाँ साधु और साध्वी दोनों ही हों, वहाँ ब्रह्मचर्य की साधना कठिनतर हो जाती है, अस्तु साधना में, जहाँ कि निवृत्ति की दृष्टि हो, आचार में विधि की अपेक्षा निषेध को ही अधिक स्थान मिलता है[1]। मानव-स्वभाव का और खास कर मानव की कामवृत्ति का गहरा ज्ञान, गीतार्थ आचार्यों को प्रारंभ से ही था—यह तो नहीं कहा जा सकता। किन्तु जैसे-जैसे संघ बढ़ता गया होगा वैसे-वैसे समस्याएँ उपस्थित होती गई होंगी, और देशकालानुरूप उनका समाधान भी खोजा गया होगा—यही मानना उचित है। अतएव कामवृत्ति के विषय में, जो गहरा चिंतन, प्रस्तुत निशीथ से फलित होता है; उसे दीर्घकालीन अनुभवों का ही निचोड़ मानना चाहिए (नि० उद्देश १. सू० १-६)। सार यही है कि स्त्री और पुरुष परस्पर के अतिपरिचय में नहीं, किन्तु एक दूसरे से अधिकाधिक दूर रहकर ही अपनी ब्रह्मचर्य-साधना में सफल हो सकते हैं। ऐसा होने पर भी यदा कदा सामाजिक और राजकीय परिस्थितिवश साधु और साध्वी-समुदाय को निकट रहने के अवसर भी आ सकते हैं, और एक दूसरे की सहायता करने के प्रसंग भी[2]। ऐसी स्थिति में किस प्रकार की सावधानी बरती जाय-यह एक समस्या थी, जो तत्कालीन गीतार्थों के सामने थी। उक्त समस्या के समाधान की शोध में से ही मनुष्य की कामवृत्ति का गहरा चिंतन करना पड़ा है, और उसके फलस्वरूप संयम-स्वीकार के बाद भी साधक किस प्रकार कामवृत्ति में फँसता है और फिसल जाता है, तथा उसके बचाव के लिये क्या करना उचित है—इन सब बातों का मर्मस्पर्शी चित्रण प्रस्तुत निशीथ में मिलता है। मनुष्य की कामवृत्ति के विविध रूपान्तरों का ज्ञान गीतार्थ आचार्यों को हो गया था, तभी तो वे उनसे बचने के उपाय ढूंढ़ निकालने की दिशा में सजग भाव से प्रयत्नशील थे। कामवृत्ति को वे स्वाभाविक नहीं, किन्तु आगन्तुक मानते थे। अतएव उन्हें कामवृत्ति का सर्वथा क्षय असम्भव नहीं, किन्तु सम्भव लगता था। फलतः वे उसके क्षय के लिये प्रयत्नशील भी थे।

तरुणी और रूपवती स्त्रियाँ भी दीक्षित होती थीं। मनचले युवक उनका पीछा करते थे और उनका शील भंग करने को उद्यत रहते थे[3]। संघ के समक्ष, यह एक विकट समस्या थी। सामान्य तौर से भिक्षुणी के साथ किसी भिक्षु को रहने की मनाई थी। किन्तु जहाँ तरुणी साध्वी के शील की सुरक्षा का प्रश्न होता वहाँ आचार्य भिक्षुओं को स्पष्ट आज्ञा देते थे कि वे भिक्षुणी के साथ रहकर उसके शील की रक्षा करें। रक्षा करते हुए भिक्षु कितनी ही बार उद्दण्ड तरुणों को मार भी डालते थे; इस प्रसंग का वर्णन सुकुमालिका के कथानक द्वारा

---

१. नि० उद्देश ६; नि० गा० २ ६६ से; नि० उद्देश १७, सू० १५-१२०; नि० उद्देश ४, सू० २३, २४; नि० उद्देश. ७, सू० १-६१; नि० उद्देश ८, सू० १-११। निशीथ के इन सभी सूत्रों में ब्रह्मचर्य भंग-सम्बन्धी, प्रायश्चित की चर्चा है।

२. नि उद्देश ४, सू० २३, २४; नि० गा० १६६६ से; बृ० गा० ३७२१ से नि० गा० १७४५ से; बृ० ३७६८ से। नि० गा० ३७७६ से।

३. राजा गर्दभिल्ल और कालकाचार्य की कथा के लिये, देखो—नि० गा० २८६० चू०।

निशीथ में किया गया है। किन्तु साथ ही इस तथ्य का भी निर्देश कर दिया है कि मरणासन्न स्थिति में भी तरुणी पुरुष-स्पर्श पाते ही किस प्रकार कामविह्वल बन जाती है, और चाहे पुरुष भाई ही क्यों न हो—वह पुरुष-स्पर्श के सुख का किस प्रकार आस्वादन कर लेती है ? (नि० गा० २३५१-५६; बृ० गा० ५२५४-५२५६)। यह कथा ब्रह्मचर्य का पालन कितना कठिन है, इस ओर संकेत करती है।

मैथुन सेवन के कारणों में क्रोध, मात्सर्य, मान, माया, द्वेष, लोभ, राग आदि अनेक कारण होते हैं। और संयमी व्यक्ति किस प्रकार इन कारणों से मैथुन सेवन के लिये प्रेरित होता है—यह उदारणों के साथ निशीथ में निर्दिष्ट है[1]। किन्तु एक बात की ओर विशेष ध्यान दिलाया है कि यद्यपि अब्रह्म सेवन की प्रेरणा उपर्युक्त विविध कारणों से होती हैं; तथापि यह सार्वत्रिक नियम है कि जब तक लोभ-राग-आसक्ति नहीं होती, तब तक अब्रह्मसेवन संभव नहीं। अतएव मैथुन में व्यापक कारण राग है (नि० गा० ३५६)।

भाववेद के साथ में द्रव्यवेद का परिवर्तन होता है या नहीं, यह एक चर्चा का विषय है। इस विषय पर निशीथ के एक प्रसंग से पर्याप्त प्रकाश पड़ता है। किस्सा यह है कि—किसी भिक्षु की रति, जिसके यहाँ वह ठहरा हुआ था, उसकी कन्या में हो गई। प्रसंग पा भिक्षु ने कन्या का शीलभंग किया। मालुम होने पर कन्या के पिता ने, क्रुद्ध होकर, साधु का लिंगछेद कर दिया। अनन्तर उक्त साधु को एक बूढ़ी वेश्या ने अपने यहाँ रखा और उससे वेश्या का कार्य लिया। उक्त घटना के प्रकाश में, आचार्य ने अपना स्पष्ट अभिप्राय व्यक्त किया है कि उस साधु को पुरुष, नपुंसक और स्त्री तीनों ही वेद का उदय हुआ। (नि० गा० ३५९)।

मैथुन सेवन में तारतम्य कई कारणों से होता है। इस दिशा में देव, मनुष्य, तिर्यञ्च के[2] पारस्परिक सम्बधजन्य अनेक विकल्पों का उल्लेख है। इसके अतिरिक्त प्रतिसेव्य स्वयं हो या उसकी प्रतिमा—अर्थात् चेतन-अचेतन सम्बन्धी विकल्पजाल का वर्णन है। उक्त विकल्पों में जब प्रतिसेवक की मनोवृत्ति के विकल्प भी जुड़ जाते हैं, तब तो विकल्पों का एक जटिल जाल ही बन जाता है। शीलभंग के लिये एक जैसा प्रायश्चित्त नहीं है, किन्तु यथा संभव उक्त विकल्पों से सम्बन्धित तारतम्य के आधार पर ही प्रायश्चित्त का तारतम्य निर्दिष्ट है।[3]

जिस प्रकार अहिंसा, सत्य आदि व्रतों में उत्सर्ग और अपवाद मार्ग है, और इनके अपवादों का सेवन करके प्रायश्चित्त के बिना भी विशुद्धि मानी जाती है ; क्या ब्रह्मचर्य के विषय में भी उसी प्रकार उत्सर्ग—अपवाद मार्ग है ? इस प्रश्न का उत्तर आचार्य ने यह दिया है कि अन्य हिंसा आदि बातों में तो दर्प और कल्प अर्थात् रागद्वेषपूर्वक और रागद्वेषरहित

---

१. नि० गा० ३५५ से। साम्प्रदायिक विद्वेष के कारण भिक्षुणियों के ब्रह्मचर्य का खंडन करना—यह घृणित प्रकार भी निर्दिष्ट है—नि० गा० ३५७।

२. सिंहिनी और पुरुष के संपर्क का भी दृष्टान्त दिया गया है—नि० गा० ५१६२ चू०।

३. नि० गा० ३६०-३६२ ; गा० २१९६ से। गा० ५११३ से; बृ० गा० २४६५ से।

प्रतिसेवना संभव है। किन्तु अब्रह्मचर्य की सेवना रागद्वेष के अभाव में होती ही नहीं। अतएव ब्रह्मचर्य के विषय में अपवाद मार्ग है ही नहीं। अर्थात् ब्रह्मचर्य भंग के लिये यथोचित प्रायश्चित्त ग्रहण किए विना शुद्धि संभव ही नहीं। कभी-कभी ऐसे प्रसंग भी आ जाते हैं, जबकि संयम जीवन की रक्षा के लिये भी ब्रह्मचर्य भंग करना पड़ता है। तब भी प्रायश्चित्त तो आवश्यक ही है। चाहे वह स्वल्प ही हो, किन्तु विना प्रायश्चित के शुद्धि नहीं; यह ध्रुव सिद्धान्त है। हिंसा आदि दोषों का सेवन, संयमजीवन के हेतु किया जाए, तो प्रायश्चित्त नहीं होता; किन्तु ब्रह्मचर्य का भंग संयम के लिये भी किया जाए तब भी प्रायश्चित्त आवश्यक है (नि० गा० ३६३-३६५, बृ० ४९४३-४५)।

शीलभंग के विषय में भी किसी विशेष परिस्थति में यतनापूर्वक कल्पिका प्रतिसेवना का होना संभव माना गया है। किन्तु प्रतिसेवक गीतार्थ, यतनाशील तथा कृतयोगी होना चाहिए, और साथ ही ज्ञानादि विशिष्ट कारण भी होने चाहिएं, तभी वह शीलभंग कर सकता है और निर्दोष भी माना जा सकता है। अन्य आचार्य के मत से यह शर्त भी रखी गई है कि वह रागद्वेष शून्य भी होना चाहिए। किन्तु मूलतत्त्व यही है कि मैथुन की कल्पिका प्रतिसेवना भी विना राग-द्वेष के संभव नहीं है। अतएव कोई कितनी ही यतनापूर्वक प्रतिसेवना करे, फिर भी शुद्धि के लिए अल्प प्रायश्चित्त तो लेना ही पड़ता है (नि०गा० ३६६-७ बृ०गा० ४९४६-४९४७)।

कभी-कभी ऐसा प्रसंग आ जाता है कि संयमी मनुष्य को या तो मरण स्वीकार करना चाहिए या शीलभंग। ऐसे प्रसंग में जो साधक शीलभंग न करके मरण को स्वीकार करता है, वह शुद्ध है। किन्तु जो संयम के हेतु अपने जीवन की रक्षा करना चाहे, और तदर्थ शीलभंग करे, तो ऐसे व्यक्ति के शीलभंग का तारतम्य विविध प्रकार से होता है। इसका एक निदर्शन निशीथ में दिया है कि राजा के अन्तःपुर में पुत्रेच्छा से किसी साधु को पकड़ कर बंद कर दिया जाए तो कोई मरण स्वीकार कर लेता है, और कोई शीलभंग की ओर प्रवृत्त होता है। किन्तु प्रवृत्त होनेवाले के विविध मनोभावों को लक्ष्य में रखकर प्रायश्चित्त का तारतम्य होता है। यह समग्र प्रकरण सूक्ष्म मनोभावों के विश्लेषण का एक महत्त्वपूर्ण नमूना बन गया है[१]।

शीलभंग करने की इच्छा नहीं है, उधर वासना पर विजय भी संभव नहीं[२]—ऐसी स्थिति में श्रमण या श्रमणी की क्या चिकित्सा की जाए; यह वर्णन भी निशीथ में है। उक्त प्रसंग में संयमरक्षा का ध्येय किस प्रकार कम से कम हानि उठाकर सिद्ध हो सकता है—इसी की ओर दृष्टि रखी गई है। प्रस्तुत समग्र वर्णन को पढ़ने पर अच्छी तरह पता लग जाता है कि ब्रह्मचर्य के जीवन में काम-विजय की साधना करते हुए क्या-क्या कठिइयाँ आती थीं

---

१. नि० गा० ३६८ से; बृ० गा० ४९४९।

२. नि० ५७६-७; बृ० ४९२९-३०; कामवासना बालक में भी संभव है, अतः बालक पुत्र और माता में भी रति की संभावना मानी गयी है। दृष्टान्त के लिये, देखो—गा० ३६९९-३७००। बृ० गा० ५२१९-५२२४।

और उनका निवारण भिक्षु लोग किस तरह करते थे[1]। आज यह चिकित्सा हमें कुछ अटपटी-सी मलूम देती है, किन्तु साधक के समक्ष सदा से ही 'सर्वनाशे समुत्पन्ने अर्धं त्यजति पंडितः' की नीति का अधिक मूल्य रहा है।

दीक्षालेनेवाले सभी स्त्री-पुरुष ब्रह्मचर्य की साधना का ध्येय लेकर ही दीक्षित होते हैं—यह पूर्ण तथ्य नहीं। कुछ ऐसे भी होते हैं, जो गृहक्लेश या परस्पर असंतोष आदि के कारण से दीक्षित होते हैं। यदि ऐसे असन्तुष्ट दीक्षित स्त्री-पुरुष कहीं एकान्त पा जाएँ, तो उनमें परस्पर कैसी बातचीत होती है और किस प्रकार उनका पतन होता है—इसका तादृश चित्रण भी निशीथ में है[2]। उसे पढ़कर लेखक की मानस-शास्त्र में कुशलता ज्ञात होती है, और सहसा बौद्ध थेर-थेरी गाथा स्मृतिपट पर आ जाती है। इस तरह के दुर्बल साधकों को ऐसा अवसर ही न मिले, इसकी व्यवस्था भी की गई है।

नपुंसक को दीक्षा देने का निषेध है (नि० गा० ३५०५)। अतएव, आचार्य इस विषय की विविध परीक्षा करते रहे, (नि० गा० ३५६४ से बृ० गा० ५१४० से), किन्तु सावधानी रखने पर भी नपुंसक व्यक्ति संघ में दीक्षित होते ही रहे। ऐसे व्यक्तियों द्वारा संघ और समाज में जो संयम-विराधना होती थी, भाष्यकार और चूर्णिकार ने उसका तादृश चित्रण उपस्थित किया है। वह ऐसा है कि आज पढ़ा भी नहीं जा सकता, तो फिर उसके वर्णन का अवसर तो यहाँ है ही कहाँ। साथ में इतना अवश्य कहना चाहिए कि गीतार्थ आचार्यों ने संघ में अवांछनीय व्यक्ति प्रविष्ट न हो जाएँ, इस ओर पूरा ध्यान दिया है। आधुनिक काल की तरह जिस-किसी को मूंड लेने की प्रवृत्ति नहीं थी—यह भी स्पष्ट होता है।

स्त्री और पुरुष के शारीरिक रचना-भेद के कारण, ब्रह्मचर्य की रक्षा की दृष्टि से, दोनों के नियमों में कहीं-कहीं भेद करना पड़ता है[3]। जिस वस्तु की अनुज्ञा भिक्षु के लिये है, भिक्षुणी के लिये उसका निषेध है। ऐसा तभी हो सकता है, जब कि मार्ग-दर्शक एक-एक वस्तु के विषय में सूक्ष्म निरीक्षण करे और स्वयं सतत जागरूक रहे। निशीथ में ऐसे सूक्ष्म निरीक्षण की कमी नहीं है। सामान्य सी मालूम देने वाली वस्तु में भी ब्रह्मचर्यभंग की संभावना किस प्रकार हो सकती है—इस बात को जाने बिना, निशीथ में जो फलविषयक विधि-निषेध बताये गये हैं, वे कथमपि संभव नहीं थे (नि० गा० ४९०८ से बृ० गा० १०४५ से)।

सार इतना ही है कि ब्रह्मचर्य की साधना, संघ में रहकर, अत्यंत कठिन है। और उक्त कठिनता का ज्ञान स्वयं महावीर को भी था[4]। आगे चलकर परंपरा से इसकी उत्तरोत्तर

---

१. नि० गा० ३७६; ५१६ से; ५८४ से; बृ० ४९३७ से; नि० ६१० से; नि० गा० १७४५ से; बृ० गा० ३७९८ से। नि० गा० २२३० से।

२. नि० गा० १६८३-१६९५; ५९२१; बृ० गा० ३७०७-३७१७। नि० गा० १७८८ से। गुप्तलिपि में किस प्रकार पत्र लिखे जाते थे, उदाहरण के लिये, देखो गा० २२६३-५।

३. साध्वी स्त्री किस प्रकार वस्त्र आदि देकर आकृष्ट की जाती थी, तथा स्त्री-प्रकृति किस प्रकार शीघ्र फिसलने वाली होती है - इसके लिये, देखो—नि० गा० ५०७३-८२।

४. सूत्रकृतांग प्रथम श्रुत स्कंध का चतुर्थ अध्ययन—'इत्थीपरिण्णा' विशेषतः द्रष्टव्य है।

पुष्टि होती गई है। अवश्य ही ब्रह्मचर्य साधना कठिन है, तथापि इस दिशा में मार्ग ढूँढ निकालने के प्रयत्न भी सतत होते रहे हैं। मन जब तक कार्य-शून्य रहता है, तभी तक कामसंकल्प सताते हैं; किन्तु मन को यदि अन्यत्र किसी कार्य में लगा दिया जाय तो काम-विजय सरल हो जाता है—इस मनोवैज्ञानिक तथ्य को एक गांव की लड़की के दृष्टान्त से बहुत सुन्दर रीति से निरूपित किया है। वह लड़की निठल्ली थी, तो अपने रूप के शृंगार में रत रहती थी। फलतः उसे काम ने सताया। समझदार वृद्धा ने यही किया कि घर के कोठार को संभालने का सारा काम उसके सुपुर्द कर दिया। दिन भर कार्य-व्यस्त रहने के कारण वह रात में भी थकावट अनुभव करने लगी, और उसका वह काम संकल्प कहाँ चला गया, उसे पता ही नहीं लगा। इसी प्रकार, गीतार्थ साधु भी, यदि दिनभर अध्ययन अध्यापन में लगा रहे, तो उसके लिये काम पर विजय पाना अत्यन्त सरल हो जाता है (नि० गा० ५७४ चूर्णि)।

मन्त्र प्रयोग के अपवाद :

मूल निशीथ में मंत्र, तंत्र, ज्योतिष आदि के प्रयोग करने पर प्रायश्चित का विधान है[१]। यह इसलिये आवश्यक था कि उक्त मंत्र आदि आजीविका के साधन रूप से प्रयुक्त होते रहे हैं। एक मात्र भिक्षा-चर्या से ही जीवन यापन का व्रत करने वालों के लिये किसी भी प्रकार के आजीविका-सम्बन्धी साधनों का निषेध होने से मंत्रादि का प्रयोग भी निषिद्ध माना जाय—यह स्वाभाविक है।

किन्तु संघबद्ध साधकों के लिए उक्त निषेध का पालन कठिन हो गया। मंत्र की शक्ति है या नहीं, यह प्रश्न गौण है। उक्त चर्चा का यहाँ केवल इतना ही तात्पर्य है कि जिस साधु-समुदाय में मन्त्र-प्रयोग निषिद्ध माना गया था, उसी समुदाय में उसका प्रयोग परिस्थिति-वश करना पड़ा।

अहिंसा-हिंसा की चर्चा करते समय, इस बात का निर्देश कर आए हैं कि मंत्रप्रयोग से साधुओं द्वारा मनुष्य-हत्या भी की जाती थी। यहाँ उसके अलावा कुछ अन्य बातों का निर्देश करना है।

विद्या-साधना श्मशान में होती थी, और उसमें हिंसा को स्थान था। जैनों के विषय में तो यह प्रसिद्धि रही है कि साधु तो क्या, एक गृहस्थ भी छोटी-सी चींटी तक की हिंसा करने में डरता है। अतएव विद्या-साधन में जैनों की प्रवृत्ति कम ही रही होगी—ऐसा स्पष्ट होता है। फिर भी कुछ लोग विद्या-साधन करते थे, यह निश्चित है।

विद्यासाधना में साधक को असंदिग्ध रहना चाहिए, अन्यथा वह सिद्ध नहीं होती। यह बात भी निशीथ में एक जैन श्रावक के उदाहरण से स्पष्ट की गई है (नि० गा० २४ चूर्णि)।

निशीथ में **तालुग्घाडणी** = ताला खोल देना, **ऊसोवणी** = नींद ला देना, **अंजनविज्जा** = आँख में अंजन लगाकर अदृश्य हो जाना (नि० गा० ३४७ चूर्णि), **थंभणीविज्जा** = किसी को

---

१. निशीथ में देखो, ११. ६६-६७, गा० ३३३६ से। उ० १३. १७-२७; उ० १३. ६६; १३. ७४-७८।

स्तब्ध कर देना (नि० गा० ४९२ चू०); आभोगणी = भविष्य जान लेना (नि० गा० २५७२ चू०); ओणामणी = वृक्षादि को नीचा कर देना, उण्णामणी = किसी वस्तु को ऊँचा कर देना (नि० गा० १३); माणसी = मनोवांछित प्राप्त करना, (नि० गा० ४०९ चू०), आदि विद्याओं का उल्लेख मिलता है। इन विद्याओं की साधना और प्रयोग का उद्देश्य विरोधी को परास्त करके भक्तपान, औषधि, वसति आदि प्राप्त करना तथा राजा आदि को अनुकूल करना, आदि हैं। मन्त्रों का प्रयोग वशीकरण, उच्चाटन, अभिचार और अपहृत वस्तु की पुनः प्राप्ति आदि के लिये होता था (नि० गा० ३४७, ४९०, १५७६, १६७,)। औपधि आदि के लिये धाउवायप्पओग = चाँदी-सोना आदि धातुओं का निर्माण करने के प्रयोग (नि० गा० ३९८, १५७६) किये जाते थे। निमित्त (निमित्त सम्बन्धी प्रायश्चित्त के लिये देखो, नि० सू० १.७-८) का प्रयोग करके राजा आदि को वश किया जाता था तथा किस आकृति के पात्र रखना—इसका निर्णय भी निमित्त से किया जाता था (नि० गा० ४९०, १५७६, ७५३)। अंगुष्ठ प्रश्न, स्वप्न प्रश्न आदि प्रश्नविद्या के प्रयोग भी साधु करने लग गये थे (नि० गा० १३६९)।

चोरी गई वस्तु की प्राप्ति तथा आहार और निवास पाने के लिए भी विद्या, मंत्र, चूर्ण, निमित्त आदि का प्रयोग होता था (नि० गा० ८९४, १३५८, १३६९, २३९३)। जोणीपाहुड-नामक शास्त्र के आधार पर अश्व आदि के निर्माण करने का भी उल्लेख है (नि० गा० १८०४)। यदि किसी राजकुमार को साधु बना लेने पर राज-भय उपस्थित हो जाए, तो राजकुमार को अन्तर्धान करने के लिये मंत्र, अंजन आदि के उपयोग का विधान है। और यदि ऐसा संभव न हो तो राजकुमार को साध्वी के उपाश्रय में भी छिपाया जा सकता है—(नि० गा० १७४३ चू०)।

अपनी बहन को छुड़ाने के लिये कालक आचार्य शकों को लाये और गर्दभीविद्या का प्रयोग करके शकों द्वारा गर्दभिल्ल को हराया—यह कथा भी, जो अब काफी प्रसिद्ध है, निशीथ में दी गई है (नि० गा० २८६० चू०)। संयमी पुरुषों के लिये भ्रष्ट साधुओं तथा गृहस्थों की सेवा निपिद्ध है; किन्तु मन्त्र तन्त्र आदि सीखने के लिये अपवाद मार्ग है कि साधु, पासत्था और गृहस्थ की भी सेवा कर सकता है (नि० गा० ३१० चू०)

कभी-कभी निमित्त प्रयोग करने वालों की परीक्षा भी ली जाती थी। कुछ अच्छे निमित्त-शास्त्री उसमें उत्तीर्ण होते थे। चूर्णि में इसकी एक रोचक कथा है। किन्तु यह स्वीकार किया गया है कि छद्मस्थ सदैव सच्चा निमित्त नहीं बता सकता और उसके दुष्परिणाम होने की सभावना भी है। (नि० गा० ४४०५-८) अतएव साधु निमित्त विद्या का प्रयोग न करे।

सांस्कृतिक सामग्री :

निशीथ सूत्र और उसकी टीकानुटीकाओं में राजनैतिक, सामाजिक, धार्मिक आदि विविध विषयों की बहुमूल्य सामग्री बिखरी हुई मिलती है[1]। उसका समग्र भाव से निरूपण करना, तो यहाँ इष्ट नहीं है। केवल कुछ ही विषयों का निर्देश करना है, जिससे कि विद्वानों का ध्यान इस ग्रन्थ की ओर विशेष रूप से आकृष्ट हो सके।

---

१. प्रस्तुत सामग्री का संकलन निशीथ के परिशिष्ट बनने के पहले ही किया गया है। केवल प्रथम भाग का परिशिष्ट मेरे समक्ष है। अतएव यहाँ कुछ ही बातों का निर्देश संभव है।

राजाओं द्वारा किये जाने वाले विविध उत्सव (नि० सू० ८. १४), राजाओं की विविध शालाएँ (८. १५-१६; ९. ७), उनका भोजन[1] और दानपिंड (८. १७-१८), राजा के तीन प्रकार के अन्तःपुर (गा० २५१४), अन्तःपुर के अधिकारी (गा० २५१६), राजा के विविध भक्तपिंड (नि० सू० ९.६), चंपा आदि दश राजधानियाँ (९.१९), राजाओं के आमोद प्रमोद (९.२१), उनके विविध पशु और पशुपालक (९.२२), अश्वादि के दमक, मिठ और आरोह (९. २३-२५), राजा के अनुचर (९.२६) और दास दासी[2] (९.२८) की रोचक गणना निशीथ में उपलब्ध है। टीकाओं में उन शब्दों की व्याख्या की गई है, जो राजनैतिक विषय में संशोधन करने वालों के लिये बहुत उपयोगी सिद्ध होगी।

राजा की सवारी का आँखों देखा रोचक वर्णन है (नि० गा० १२९ चू०)। ग्राममहत्तर, राष्ट्रमहत्तर, भोजिक आदि ग्रामादि के प्रमुख अधिकारी और राजा रक्षक आदि राज्य के अन्य विविध अधिकारियों की व्याख्या की गई है[3]। भाष्य के अनुसार राजा, अमात्य, पुरोहित, श्रेष्ठी और सेनापति—यह प्राधान्य का क्रम है। किन्तु चूर्णि में—राजा, युवराज, अमात्य, श्रेष्ठी और पुरोहित हैं (नि० गा० ६२९९)।

ग्राम, नगर, खेड, कव्वड, मडंब, दोणमुह, जलपट्टण, थलपट्टण, आसम, णिवेसण, णिगम, संवाह और राजधानी—इन सन्निवेशों की स्पष्ट व्याख्या निशीथ में की गई है (नि० सू० ५. ३४ की चूर्णि)।

चक्रवर्ती के 'सीयघर' का वर्णन है कि वर्षा ऋतु में उसमें वायु और पानी नहीं आता, शीतकाल में वह उष्ण रहता है और ग्रीष्म में शीतल (नि० गा० २७९४ चू०)।

राजा श्रेणिक और अभय मंत्री की कई रोचक कथाएँ निशीथ में उपलब्ध हैं—उनसे पता चलता है कि श्रेणिक अपने युग का एक विद्यानुरागी राजा था और वह विद्या के लिये नीच जाति के लोगों का भी विनय करता था। अभय उनका पुत्र भी था और मंत्री भी। वह प्रत्युत्पन्न मति था, और विषम से विषम परिस्थिति में भी अपनी कार्यकुशलता के लिये विख्यात था। ये पिता-पुत्र दोनों ही जिनमतानुयायी थे[4]।

वीतिभय नगर—जो उज्जयिनी से ८० योजन दूर बताया गया है—के राजा उदयन और रानी प्रभावती की कथा रोचक ढंग से कही गई है। उसमें की कुछ घटनाएँ बड़ी ही महत्त्वपूर्ण हैं, जैसे कि राणी के द्वारा उदयन को जैनधर्म में अनुरक्त बनाना, भगवान वर्धमान की प्रतिमा का उज्जयिनी के राजा प्रद्योत के द्वारा अपहरण, उदयन का आक्रमण, मरुदेश में जला भाव के कारण उनके सैन्य की हानि, 'पुष्कर' तीर्थ की उत्पत्ति, उदयन द्वारा स्वयं प्रद्योत को युद्ध के लिये आह्वान और प्रद्योत का पराजय तथा बंधन, अंत में दोनों में पारस्परिक क्षमा,

१. राजा के विशेष आहार का नाम 'कल्लाणग' था—नि० गा० ५७२।

२. परदेशी जातियों के अनेक नाम इस सूची में हैं।

३. नि० ९८९, १३६५, १५६८; नि० सू० ४. ४०, ४३. ४६; गा० २८५२।

४. नि. गा० १३ चू०; २५ चू०; ३२ चू०।

आदि। (नि० गा० ३१८२-८६ चू०)। उक्त कथा में भगवान महावीर की उनके जीवनकाल में ही सर्वालंकारभूपित प्रतिमा बन गई थी और वह जीवंतसामी प्रतिमा कही जाती थी, यह तथ्य ऐतिहासिक महत्त्व का है। तथा अहिंसा की दृष्टि से उदयन का प्रद्योत से यह कहना कि पूरे जनपद की हत्या न करके, हम दोनों ही परस्पर व्यक्तिगत युद्ध कर, क्यों न जय-पराजय का निर्णय करलें-यह काफी ध्यान देने योग्य बात है।

चन्द्रगुप्त से लेकर सम्प्रति तक के मौर्यवंश का इतिहास भी, निशीथ भाष्य और चूर्णि से, स्पष्टतः ज्ञात होता है। इसमें कई तथ्य महत्व के हैं। और संप्रति ने किस प्रकार आंध्र-द्रविड-कुडक्क-महाराष्ट्र आदि दक्षिण देशों में जैन धर्म का प्रचार किया, इसका ऐतिहासिक वर्णन मिलता है। साथ ही जैन आचार के विपय में तत्कालीन आचार्यों की क्या धारणा थी, इसका भी आभास मिलता है। आचार्यों में स्पष्ट रूप से दो दल थे—एक दल कठोर नियम पालन के प्रति तीव्र आग्रही था, जबकि दूसरा दल आचार को कुछ शिथिल करके भी शासन की प्रभावना के लिये उद्यत था[1]। चन्द्रगुप्त का मंत्री चाणक्य श्रावक था और वह जैन श्रमणों की भक्ति करता था। एक बार उसने सुबुद्धि मन्त्री के वध के लिये पुष्पों को विप-मिश्रित भी किया था। (नि० गा० ४४६३-५; ६१६)। चन्द्रगुप्त के वंश के विपय में जिन क्षत्रिय राजाओं को ज्ञान था कि मौर्यवंश तो मयूर-पोपकों का वंश है (अतएव नीच है), वे चन्द्रगुप्त की आज्ञा का पालन नहीं करते थे। चाणक्य ने मौर्यवंश की आज्ञा की धाक जमाने के उद्देश्य से आज्ञा-भंग के कारण एक समग्र गाम को जला दिया था—ऐसा भी उल्लेख है[2]।

शालवाहण (शालिवाहन) राजा की स्तुति, भाष्यकार के समय, इस रूप में प्रचलित थी कि पृथ्वी के एक छोर पर हिमवंत पर्वत है और दूसरी ओर राजा सालवाहण है—इसी कारण पृथ्वी स्थिर है (नि० गा० १५७१)। कालकाचार्य ने 'पतिट्ठाण' नगर के 'सायवाहण' राजा के अनुरोध पर पज्जोसवणा का दिन पंचमी के स्थान में चतुर्थी किया; यह ऐतिहासिक तथ्य भी निशीथ में उल्लिखित है। इसी प्रसंग में उज्जेणी के बलमित्र भानुमित्र का भी वर्णन है (नि० गा० ३१५३)।

एक मुरुण्डराज का उल्लेख, निशीथ में, कितनी ही बार आया है। वह पादलिप्त सूरि का समकालीन है (नि० गा० ४२१५, ४४६०)।

महिड्ढित नामक राजा की उपेक्षा के कारण उसकी कन्याएँ किस प्रकार शीलभ्रष्ट की गईं—इस सम्बन्ध में एक दृष्टान्त दिया गया है (नि० गा० ४८५१)। यह कोई दुर्बल राजा होना चाहिए।

युवराज के लिये अनुप्रभु शब्द का प्रयोग होता था (नि० गा० १३४८, ३३६२)। और हेम नामक एक राजकुमार के विपय में कहा गया है कि उसने इन्द्रमह के लिए एकत्र हुई नगर की रूपवती कन्याओं को अपने अन्तःपुर में रोक लिया था। नगरजनों के द्वारा राजा के पास

---

१. नि० गा० २१५४, ४४६३-६५; ५७४४-५८; बृ० गा० ३२७५-३२८६।

२. नि० गा० ५१३८-३९। बृ० गा० ५४८८-८९।

शिकायत की जाने पर, राजा ने, पुत्र को दण्ड न देकर उलटा यह कहा कि क्या मेरा पुत्र तुम्हारा दामाद बनने योग्य नहीं ? (नि० गा० ३५७५)। एक प्रसंग में इस प्रथा का भी उल्लेख है कि यदि राजा राजनीति से अनभिज्ञ हो, व्यसनी हो, अन्त:पुर में ही पड़ा रहता हो, तो उसे गद्दी से उतार कर दूसरा राजा स्थापित कर देना चाहिए। (नि० गा० ४७९८) कालकाचार्य ने शकराजा को बुलाकर एक ऐसे ही अत्याचारी राजा गर्दभिल्ल को गद्दी से उतार दिया था (नि० गा० २८६०)। उक्त कथा में कालक आचार्य की वहन को उठा ले जाने की बात है। एक ऐसा भी उल्लेख है कि यदि कोई विरोधी राजा किसी राजा के आदरणीय प्रिय आचार्य को उठा ले जाए तो ऐसी दशा में शिष्य का क्या कर्तव्य है ? इससे पता चलता है कि जैन संघ ने जब राज्याश्रय लिया, तब इस प्रकार के प्रसंग भी उपस्थित होने लगे थे[१]। राजा आदि महर्द्धिकों का महत्व साधुसंघ में भी माना गया है। अतएव साध्वीसंघ के ऊपर आपत्ति आने पर यदि कोई राजा दीक्षित साधू हुआ हो तो वह रक्षा करने के लिए साध्वी के उपाश्रय में जाकर ठहर सकता था (नि० गा० १७३५), जबकि दूसरों के लिये ऐसा करना निषिद्ध है।

मथुरा में यवनों के अस्तित्व का उल्लेख है (नि० गा० ३६८९)।

जब परचक्र का भय उपस्थित होने वाला हो, तब श्रमण को अपना स्थान परिवर्तित कर लेना चाहिए; अन्यथा प्रायश्चित्त करना पड़ता है। यह इसलिये आवश्यक था कि अव्यवस्था में धर्मपालन संभव नहीं माना गया (नि० गा० २३५७)। वैराज्य शब्द के अनेक अर्थों के लिए गा० ३३६०-६३ देखनी चाहिएँ। प्राचीनकाल में भी हिमालय से लेकर कन्याकुमारी तक, भारत, एक देश माना जाता था; किन्तु साथ ही 'देश' शब्द की संकुचित व्याख्या भी थी। यही कारण था कि सिन्धु को भी देश कहा और कोंकण को भी देश कहा (नि० गा० ४२८)। जन्म के प्रदेश को देश और उससे बाह्य को परदेश कहा गया है। तथा भारत के विभिन्न जनपदों के आचारों को देशकथा के अन्तर्गत माना गया है (नि० गा० १२५)

देशों में कच्छ (गा० ३८६,), सिन्धु (गा० ३८६, ४२८, १२२५, ३३३७, ५०००), सौराष्ट्र (गा० ६०, ३८६, २७७८, ४८०२)[२], कोसल (गा० १२६, २००), लाट (गा० १२६, २७७८,), मालव (गा० ८७४, १०३०, ३३४७,), कोंकण (गा० १२६, २८९, ४२८,), कुरुक्षेत्र (१०२६), मगध (गा० ३३४७, ५७३३), महाराष्ट्र (१२६, ३३३७,) उत्तरापथ (१२६, २४७, ४५५), दक्षिणापथ (२७७८, ५०२८), रिणकंठ (सिंधदेश की ऊसरभूमि) (गा० १२२५), टक्क (८७४), दमिल (३३३७, ५७३१) गोल्लय (३३३७), कुडुक्क (३३३७), कीरडुक (३३ ७) ब्रह्मद्वीप, (४४७०), आभीर विषय (४४७०), तोसली (४९२३, ४९२४), सगविसय (५७३१), थूणा (५७३३) कुणाल (५७३३) इत्यादि का उल्लेख विविध प्रसंगों में है।

नगरियों में आनंदपुर का नाम आया है। आनंदपुर का दूसरा नाम अक्कत्थली भी था—ऐसा प्रतीत होता है (गा० ३३४४ चू०)। अयोध्या का दूसरा नाम साकेत भी है (गा० ३३४७)। मथुरानगरी में जैन साधुओं का विहार प्राचीन काल से होता आ रहा था। (गा० १२, ११११६,

---

१. नि० गा० ३३८८-८९; बृ० गा० २७८९-९०।

२. कोहय (पाठांतर–कोउय) मंडलं छन्नउइं सुरट्ठा (गा० ४८०२)। बृ० गा० ६४३।

३६८६, ५९९३)। आर्यमंगू—जैसे आचार्य का उल्लेख है कि वे जब मथुरा में आये, तब श्रावकों ने उनकी हर प्रकार से सेवा की थी। यह भी उल्लेख है कि स्तेनभय होने पर एक साधु ने सिंहनाद किया था। अवन्ती जनपद और उज्जेणी का उल्लेख भी ध्यान देने योग्य है (गा० १९, ३२, २९४-६, ५९९३, चू०)। आषाढ़भूति, धूर्ताख्यान आदि कथानकों का स्थान उज्जेणी नगरी है। कोसंबी नगरी (गा० ५७४४, ५७३३) तथा चन्द्रगुप्त की राजधानी पाटलिपुत्र का भी उल्लेख है। पाटलिपुत्र का दूसरा नाम कुसुम्पुर भी है (गा० ४४६३)। सोपारक वंदरगाह का भी उल्लेख है (५१५६)। वहाँ णिगम अर्थात् वणिक् जनों के लिये कर नहीं था। एक वार राजा ने नया कर लगाना चाहा, तो वणिकों ने मर जाना पसंद किया; किन्तु कर देना स्वीकार नहीं किया (गा० ५१५६-७)। दशपुर नगर में आर्यरक्षितने वर्षावास किया था (४५३६) और वहीं मात्रक की अनुज्ञा दी थी। क्षितिप्रतिष्ठित (६०७६) नगर के जितशत्रुराजा ने घोषणा की कि म्लेच्छों का आक्रमण हो रहा है, अतः प्रजा दुर्ग का आश्रय ले ले। दंतपुर (गा० ६५७५), गिरिफुल्लिगा (गा० ४४६६), आदि नगरियों का उल्लेख है।

जनपदों के जीवन-वैविध्य की ओर लेखक ने इसलिये ध्यान दिलाया है कि कभी-कभी इस प्रकार के वैविध्य को लेकर लोग आपस में लड़ने लग जाते हैं, जो उचित नहीं है। अतएव देश-कथा का परित्याग करना चाहिए (नि० गा० १२७)।

जनपदों के जीवन-वैविध्य का निर्देश करते हुए जिन वातों का उल्लेख किया है, उनमें से कुछ का यहाँ निर्देश किया जाता है :—लाटदेश में मामा की पुत्री के साथ विवाह हो सकता है, किन्तु मौसी की पुत्री के साथ नहीं। कोसल देश में आहारभूमि को सर्व-प्रथम पानी से लिप्त करते हैं, उस पर पद्मपत्र विछाते हैं फिर पुष्पपूजा करते हैं, तदनन्तर करोडग, कट्ठोरग, मंकुय, सिप्पी—आदि पात्र रखते हैं। भोजन की विधि में कोंकण में प्रथम पेया होता है, और उत्तरापथ में प्रथम सत्तु। लाट में जिसे 'कच्छ' कहा जाता है, महाराष्ट्र में उसे 'भोयड़ा' कहते हैं। भोयड़ा को स्त्रियाँ वचपन से ही वाँधती हैं और गर्भधारण करने के वाद उसे वर्जित करती हैं। वर्जन भी तव होता है, जवकि स्वजनों के संमिलन के वाद उसे पट दिया जाता है (गा० १२६ चूर्णि)। कोसल में शाल्योदन को नष्ट हो जाने के भय से शीतजल में छोड़ दिया जाता था (गा० २००)। उत्तरापथ में गर्मी अत्यन्त अधिक होती है, अतएव किवाड खुले रखने पड़ते हैं—(गा० २४७)। उत्तरापथ में वर्षा भी सतत होती है (८९०)। सिंधु देश का पुरुष तपस्या करने में समर्थ नहीं होता, किन्तु कोंकण देश का पुरुष तपस्या करने में अधिक सशक्त होता है (४२८)। टक्क मालव और सिन्धु देश के लोग स्वभाव से ही परुष वचन (कठोर) वोलने वाले होते हैं। (गा० ८७४) महाराष्ट्र में मद्य की दूकानों पर ध्वज वाँध दिया जाता था, ताकि भिक्षु लोग दूर से ही समझ जाएँ कि यहाँ भिक्षार्थ नहीं जाना है (११५८)। णिल्लेव जाति अन्यत्र घृणित मानी है, किन्तु सिंध में नहीं (१६१९)। महाराष्ट्र में स्त्री के लिये माउगाम=मातृग्राम शब्द प्रयुक्त होता है (निशीथ उ० ६, सू० १ चू०) महाराष्ट्र में पुरुष के चिह्न को वांधा जाता है (गा० ५२१)। लाट में 'इक्कड' नामक वनस्पति प्रसिद्ध है। संभवतः यह सेमर (गुजराती-आकडा) है (गा० ८८७)। पूर्व देश से विक्रय के लिये लाया हुआ वस्त्र लाट में वहुमूल्य हो जाता है (गा० ९५१)। सौराष्ट्र में 'कांग' नामक धान्य सुलभ है (१२०४)।

लाट और सौराष्ट्र या दक्षिणापथ में कौन प्रधान है ; इस विषय को लेकर लोग विवाद करते थे (गा० २७७८)। महाराष्ट्र में 'श्रमणपूजा' नामक एक विशेष उत्सव प्रचलित था (३१५३)। मगध में प्रस्थ को कुडव कहते हैं (गा० ५८६१)। दक्षिणापथ में आठ कुडव-प्रमाण एक मण्डक पकाया जाता है (३४०३)[1]। दक्षिण पथ में लोहकार, कल्लाल जु'गित कुल हैं जब कि अन्यत्र नहीं। लाट में खड, वरुड, चम्मकार आदि जु'गित हैं (५७६०)। इत्यादि।

वस्त्र के मूल्य की चर्चा में कहा गया है कि जघन्य मूल्य १८ 'रूपक' और उत्कृष्ट मूल्य शतसहस्र 'रूपक' है—(नि० गा० ६५७; बृ० गा० ३८९०)। उस समय रूपक अर्थात् चांदी की कितने ही प्रकार की मुद्राएँ प्रचलित थीं, अतएव उनका तारतम्य दिखाना आवश्यक हो गया था। प्रस्तुत में, ये मुद्राएँ किस प्रदेश में प्रचलित थीं—यह अनुमान से जाना जा सकता है। मेरा अनुमान है कि ये मुद्राएँ उस समय सौराष्ट्र-गुजरात में प्रचलित रही होंगी; क्योंकि उत्तरापथ और दक्षिणापथ की मुद्राएँ अपने स्वयं के प्रदेश में उत्तरापथक या दक्षिणापथक या पाटिल-पुत्रक आदि नाम से नहीं पहचानी जा सकती। ये नाम अन्यत्र जाकर ही प्राप्त हो सकते हैं। उन सभी प्रचलित 'रूपक' मुद्राओं का तारतम्य निम्नानुसार दिखाया गया है :

१ रूवग (रूपक) = १ साभरक[2] (साहरक) अथवा दीविच्चग या दीविच्चिक (दीवत्यक)

१ उत्तरापथक = २ साभरक या २ दीविच्चग

१ पालिपुत्रक (कुसुमपुरग) = २ उत्तरापथक

= ४ साभरक

= २ नेलओ[3]

= ४ दक्षिणापथक[4]

वैद्य को दी जाने वाली फीस की चर्चा के प्रसंग में भी मुद्राओं के विषय में विशेष जानकारी प्राप्त होती है। वह इस प्रकार है—

'कौड़ी' (कपर्दक) जो उस समय मुद्रा के रूप में प्रचलित थी। उसे 'कवडुग' या 'कवड्डग' कहते थे। ताँबे की बनी मुद्रा या 'णाणक' के विषय में कहा गया है कि वह दक्षिणापथ में 'काकिणी' नाम से प्रसिद्ध है। चाँदी के 'नाणक' को भिल्लमाल में चम्मलात (?) कहते हैं; बृहद् भाष्य की टीका में इसे 'द्रम्म' कहा है। सुवर्ण 'नाणक' को पूर्व देश में दीणार' कहते हैं। पूर्व देश में एक अन्य प्रकार का नाणक भी प्रचलित था, जो 'केवडिय' कहलाता था। यह किस

१. बृ० गा० २८५५ में व्याख्या-सम्बन्धी थोड़ा भेद है।

२. सौराष्ट्र के दक्षिण समुद्र में एक योजन दूर 'दीव' (द्वीप) था, वहाँ की मुद्रा —(गा० ९५८ चू०) आज भी यह प्रदेश इसी नाम से प्रसिद्ध है।

३. कांचीपुरी में प्रचलित मुद्रा।

४. नि० गा० ९५८-५९ ; बृ० ३८९१-९२।

धातु से बनता था—यह स्पष्ट नहीं है; किन्तु इसे सुवर्णमुद्रा से भिन्न रखा है और कहा गया है कि यह 'केवडिय' नाणक पूर्व देश में 'केतरात' (वृ० टी० 'केतरा') कहा जाता है[1]।

'दीणार' के विषय में यह भी सूचना मिलती है कि एक 'मयूरांक' नामक राजा था। उसने अपने चित्र को अंकित कर दीणार का प्रचलन किया था 'मयूरंको णाम राया। तेण मयूरंकेण अंकिता दीणारा आहणाविआ।' —नि० गा० ४३१६ चू०। भाष्य में उसे 'मोरणिंव' कहा गया है।

राजा और धनिकों के यहाँ बच्चों को पालने के लिये धातृयाँ रखी जाती थीं। भिक्षु लोग किस प्रकार विभिन्न धाइयों की निन्दा या प्रशंसा करके अपना काम बनाते थे—इसका रोचक वर्णन निशीथ भाष्य में है। विभिन्न कार्यों के लिये नियुक्त पाँच प्रकार की धातृमाताओं का वर्णन भी कम रोचक नहीं है। यह प्रकरण मनोवैज्ञानिक दृष्टि से भी बड़ा ही महत्त्वपूर्ण है (नि० गा० ४३७५-९३)।

प्रातः काल होते ही लोग अपने-अपने काम में लगते हैं—इसका वर्णन करते हुए लिखा है :—लोग पानी के लिये जाते हैं, गायों और शकटों का गमनागमन शुरू हो जाता है, वणिक कच्छ लगाकर व्यापार शुरू कर देता है, लुहार अग्नि जलाने लग जाता है, कुटुम्बी लोग खेत में जाते हैं. मच्छीमार मत्स्य पकड़ने के लिये चल देते हैं, खट्टिक भैंसे को लकड़ी से कूटने लग जाता है, कुछ कुत्तों को भगाते हैं, चोर धीरे से सरकने लग जाते हैं, माली टोकरी लेकर बगीचे में जाता है, पारदारिक चुपके से चल देता है, पथिक अपना रास्ता नापने लग जाते हैं और यांत्रिक अपने यंत्र चला देते हैं—(नि० गा० ५२२ चू०)

शृंगार-सामग्री में नानाप्रकार की मालाओं का (उ० ७. सू० १ से उ० १७. सू० ३-५) तथा विविध अलंकारों का (उ० ७, सू० ७; उ० १७. सू० ९) परिगणन निशीथ मूल में ही किया गया है। तांबूल में संखचुन्न, पुगफल, खदिर, कप्पूर, जाइपत्तिया—ये पाँच चीजें डालकर उसे सुस्वादु बनाया जाता था (गा० ३९९३ चू०)।

नाना प्रकार के वाद्यों की सूची भी निशीथ (उ० १७, सू० १३५-८) में है। देशी और परदेशी वस्त्रों की सूची, तथा चर्मवस्त्रों की केवल सूची ही नहीं, अपितु वस्त्रों के मूल्य की चर्चा भी विस्तार से की गई है (नि० उ० २. सू० २३; उ० १७. सू० १२; गा० ७५९ से; उ० ७. सू० ७ से)।

वस्त्रों को विविध प्रकार से सींया जाता था, इसका वर्णन भी दिया गया है—(नि० गा० ७८२)।

नाना प्रकार के जूतों का रोचक वर्णन भी निशीथ में उपलब्ध होता है। उसे देखकर ऐसा लगता है—मानो लेखक की दृष्टि से जो भी वस्तु गुजरी, उसका यथार्थ चित्र खड़ा कर देने में वह पूर्णतः समर्थ है (नि० गा० ९१४ से)।

सेमर की रुई से भरे हुए तकिये को 'तूली' कहते है। रुई से भरा हुआ, जो मस्तक के नीचे रखा जाता है, वह 'उपधान' कहा जाता है। उपधान के ऊपर गंडप्रदेश में रखने के

---

१. नि० गा० ३०७० चू० ; वृ० गा० १९६६।

लिये 'उपधानिका', घुटनों के लिये 'आलिंगणी', तथा चर्म वस्त्रकृत और रुई से पूर्ण उपधान-विशेष को 'मसूरक' कहा जाता है (नि० गा० ४००१)।

कुम्भकार की पाँच प्रकार की शालाओं का वर्णन है– जहाँ भांड वेचे जाएँ वह पणियशाला, जहाँ भांड सुरक्षित रखे जाएँ वह भंडसाला, जहां कुम्भकार भांड वनाता है वह कम्मसाला, जहाँ पकाये जाते हैं वह पयणसाला (पचनशाला), और जहाँ वह अपना इन्धन एकत्र रखता है वह इंधणसाला है (नि० गा० ५३६१)।

इसी प्रकार वहुत से अन्य शब्दों की व्याख्या भी दी गई है। जैसे—जहाँ लोग उजाणी के लिये जाते हैं, या जो शहर के नजदीक का स्थान है वह उज्जाण-उद्यान कहलाता है। जो राजा के निर्गमन का स्थान हो वह णिज्जाणिया, जो नगर से वाहर निकलने का स्थान हो वह 'णिज्जाण' होता है। उज्जाण और णिज्जाण में वने हुए गृह क्रमशः उज्जाणगिह और णिज्जाणगिह कहलाते हैं। नगर के प्राकार में 'अट्टालग' होता है। प्राकार के नीचे आधे हाथ में वने रथमार्ग को 'चरिया' और वलानक को 'द्वार' कहते हैं। प्राकार के दो द्वारों के वीच एक 'गोपुर' होता है। नीचे से विशाल किन्तु ऊपर-ऊपर संवर्धित जो हो, वह 'कूडागार' है। धान्य रखने का स्थान 'कोट्टागार' (कोठा) कहा जाता है। दर्भ आदि तृण रखने का स्थान, जो नीचे की ओर खुला रहता है, 'तणसाला' है। वीच में दीवालें न हों तो 'साला' और दीवालें हों तो 'गिह' होता है। अश्वादि के लिये 'शाला' और 'गिह', दोनों का प्रवन्ध होता था। इस प्रकार निवास-सम्वन्धी अनेक तथ्य निशीथ से ज्ञात होते हैं (नि० उ० ८. सू० २ से तथा चूर्णि)। 'मडग गिह'—'मृतकगृह' का भी उल्लेख है। म्लेच्छ लोग मृतक को जलाते नहीं, किन्तु घर के भीतर रखते हैं। उस घर का नाम 'मडगगिह' है। मृतक को जलाने के वाद जव तक उसकी राख का पुंज नहीं वनाया जाता, तव तक वह 'मडगछार' है। मृतक के ऊपर ईंटों की चिता वनाना, यह 'मडगथूभ' या 'विचग' है। श्मशान में जहाँ मृतक लाकर रखा जाता है वह 'मडासय'—मृताश्रय है। मृतक के ऊपर वनाया गया देवकुल 'लेण' है (नि० उ० ३ सू० ७२; गा० १५३५, १५३६)।

धार्मिक विश्वासों के कारण नाना प्रकार के गिरिपतन आदि के रूप में किए जाने वाले वालमरणों का भी विस्तृत वर्णन मिलता है—गा० ३८०२ से।

निवासस्थान को कई प्रकार से संस्कृत किया जाता था—जैसे कि संस्थापन = गृह के किसी एक देश को गिरने से रोकना, लिंपन = गोवर आदि से लीपना, परिकर्म = गृह-भूमि का समीकरण, शीतकाल में द्वार को सँकड़े कर देना, गरमी के दिनों में चौड़े कर देना, वर्षा ऋतु में पानी जाने का रस्ता वनाना, इत्यादि विविध प्रक्रियाओं का वर्णन अतिविस्तृत रूप से दिया हुआ है—गा० २०५२ से।

विविध[1] उत्सवों में—तीर्थंकरों की प्रतिमा की स्नानपूजा तथा रथयात्रा का (गा० ११६४) निर्देश है। ये उत्सव वैशाख मास में होते थे (गा० २०२९)। भाद्र शुक्ला पंचमी के दिन जैनों का 'पर्युषण' और सर्वसाधारण का 'इन्दमह' दोनों उत्सव एक साथ ही होने के कारण,

1. नि० उ० १२. सू० १६, गा० ४१३९।

राजा के अनुरोध से कालकाचार्य ने चतुर्थी को पर्युषण किया। तथा महाराष्ट्र में उसी दिन को 'समणपूया' का उत्सव शुरू हुआ—यह ऐतिहासिक तथ्य बड़े महत्व का है (गा० ३१५३ चू०)। गिरिफुल्लिगा नगरी में इट्टगाछण = इट्टगा उत्सव होता था[1]। इट्टगा एक खाद्य पदार्थ है। उत्सव वाले दिन वह विशेष रूप से बनता था। एक श्रमण ने किस प्रकार तरकीब से इट्टगा प्राप्त की, इस सम्बन्ध में एक मनोवैज्ञानिक-साथ ही रोचक कथा निशीथ में दी हुई है (गा० ४४४६-५४)।

वाद्य, नृत्य तथा नाट्य के विविध प्रकारों का भी निर्देश है (५१००-१)।

भगवान् महावीर के समय में जैन धर्म में जातिवाद को प्रश्रय नहीं मिला था। हरिकेश जैसे चांडाल भी साधु होकर बहुमान प्राप्त करते थे। किन्तु निशीथ मूल तथा टीकोपटीकाओं के पढ़ने से प्रतीत होता है कि जैन श्रमणों ने जातिवाद को पुनः अपना लिया है। निशीथ सूत्र में ठवणाकुल अथवा अभोज्यकुल में भिक्षा लेने के लिये जाने का निषेध है (नि० सू० ४. २२)। इसी प्रकार दुगुंछित कुल से संपर्क का भी निषेध है (नि० सू० १६. २७-३२)। कर्म, शिल्प और जाति से ठवणाकुल तीन प्रकार के हैं (१) कर्म के कारण—ण्हाविया (नापित), सोहका = शोधका (धोबी ?), मोरपोसक (मयूरपोषक); (२) शिल्प के कारण—हेट्ठण्हावित्ता, तेरिमा, पयकर, णिल्लेवा; (३) जाति के कारण—पोण (चांडाल), डोम्ब (डोम), मोग्त्तिय। ये सभी जुंगित-दुगुंछित-जुगुप्सित कहे गये हैं (नि० गा० १६१८)।

लोकानुसरण के कारण ही लोक में हीन समझे जाने वाले कुलों में भिक्षा त्याज्य समझी गई है। अन्यथा लोक में जैन शासन की निन्दा होती है और जैन श्रमण भी कापालिक की तरह जुगुप्सित समझे जाते हैं[2]। परन्तु, इसका यह अर्थ नहीं कि जैन श्रमणों में ब्राह्मण एवं क्षत्रिय ही दीक्षित होते थे। ऐसे भी उदाहरण हैं, जिनमें कुम्भकार, कुटुम्बी और आभीर को भी दीक्षा दी गई है (नि० गा० १५, १३६, १३८)। धर्म के क्षेत्र में जाति का नहीं, किन्तु भाव का अधिक महत्व है—इस तथ्य को शिवभक्त पुलिंद और एक ब्राह्मण की कथा के द्वारा प्रकट किया गया है (नि० गा० १४)।

भाष्य में शबर और पुलिंद, जो प्रायः नग्न रहते थे और निर्लज्ज थे, उनका आर्यों को देखकर कुतूहल और तज्जन्य दोषों की ओर संकेत है (नि० गा० ५३१९)।

जुंगितकुल के व्यक्ति को दीक्षा देने का भी निषेध है। इस प्रसंग में जुंगित के चार प्रकार बताये गये हैं। पूर्वोक्त तीन जुंगितों के अतिरिक्त शरीर-जुंगित भी गिना गया है[3]।

---

१. छण और उत्सव में यह भेद है कि जिसमें मुख्य रूप से विशिष्ट भोजन सामग्री बनती है वह छण है, तथा जिसमें भोजन के उपरांत लोग अलंकृत होकर, उद्यान आदि में जाकर, मित्रों के साथ क्री[डा] आदि करते हैं, वह उत्सव है (गा० ५२७६ चू०)।

२. नि० गा० १६२२-२८, अस्वाध्याय की मान्यता में भी लोकानुसरण की ही दृष्टि मुख्य रही [है] ... गा० ६१७१-७९।

३. नि० गा० ३७०६, हस्त पादादि की विकलता आदि के कारण शरीर-जुंगित होत[ा] ... गा० ३७०९।

जाति-जुंगित में कोलिग जाति-विशेष णेक्कार का और वरुड़ का समावेश किया है (नि० गा० ३७०७)। चूर्णिकार ने मतान्तर का निर्देश किया है, जिसके अनुसार लोहार, हरिएस(चांडाल), मेया, पाणा, आगासवासि, डोम्ब, वरुड (सूप आदि बनाने वाले), तंतिवरत्ता, उवलित्ता-ये सब जुंगित जाति हैं (नि० गा० ३७०७ चू०)। भाष्यकार ने कम्म-जुंगित में और भी कई जातियों का समावेश किया है—पोपक (स्त्री. मयूर और कुक्कुट के पोषक—चूर्णि), संपरा (ण्हाविगा और सोधगा—चू०), नट, लंख (बांस पर नाचने वाले—चू०), वाह (व्याध) (मृगलुब्धक, वागुरिया, सुगकारगा—चू०), सोगरिया (शौकरिक) (खट्टिका—चू०), मच्छिगा (माछीमार), (नि० गा० ३७०८)।

ये जुंगित यदि महाजन के साथ या ब्राह्मण के साथ भोजन करने लग जाएँ, और शिल्प तथा कर्म-जुंगित यदि अपना धंधा छोड़ दें, तो दीक्षित हो सकते हैं। अतएव इन्हें इत्वरिक जुंगित कहा गया है। (नि० गा० ३७११, १६१८)।

प्रसंगत: इन जातियों का भी उल्लेख है—भड, णट्ट, चट्ट, मेंठ, आरामिया, सोल्ल, घोड, गोवाल, चक्किय, जंति और खरग (नि० गा० ३५८५ चू०)। ये सब भी हीन कुल ही माने जा रहे थे। अन्यत्र णड, वरुड, छिंपग, चम्मार, और डम्ब का उल्लेख है—गा० ६२६४ चू०।

मालवक स्तेनों (चोरों) का बार बार उल्लेख है। उन्हें मालवक नामक पर्वत के निवासी बताया गया है—गा० १३३५।

जाति का सम्बन्ध माता से है और कुल का सम्बन्ध पिता से है। जाति और कुलों के अपने आजीविका-सम्बन्धी साधन भी नियत थे। कोई कर्म से, तो कोई शिल्प से आजीविका चलाते थे। कर्म वह है, जो बिना गुरु के सीखा जा सके—जैसे, लकड़ी एकत्र करके आजीविका चलाना। और शिल्प वह है, जिसे गुरुपरंपरा से ही सीखना होता है—जैसे, गृह-निर्माण आदि। इसी प्रकार मल्ल आदि गणों की आजीविका के साधन भी अपने-अपने गणों के अनुसार होते थे। (नि० गा० ४४१२-१६)।

व्यापारी वर्ग के दो प्रकार निर्दिष्ट हैं—जो दूकान रख कर व्यापार करे, वह 'वणि'; और जो बिना दूकान के व्यापार करे, वह 'विवणि'—नि० गा० ५७५० चू०।

'सार्थ' के पाँच प्रकार बताये गये हैं[1] :—

(१) 'भंडी' गाडियाँ लेकर चलने वाला।

(२) 'वहिलग' बैल आदि भारवाही पशुओं को लेकर चलने वाला। इसमें ऊँट, हाथी और घोड़े भी होते थे—(नि० गा० ५६६३; बृ० ३०७१)।

(३) 'भारवहा'—गठरी उठाकर चलने वाले मनुष्य, जो 'पोट्टलिया' कहे जाते थे। दोनों प्रकार के सार्थ अपने साथ विक्रय की वस्तुएँ ले जाते थे, और गन्तव्य स्थान [illegible]ते थे। और अपने साथ खाने-पीने की सामग्री भी रखते थे।

१. नि० गा० ५६५८ से; बृ० ३०३६ से।

(४) 'औदरिक' वह सार्थ होता था, जो अपने रुपये लेकर चलता था, और जहाँ आवश्यकता होती, पास के सुरक्षित धन से ही खा-पी लेता था। अथवा 'भोजन-सामग्री अपने साथ रखने वाले को भी औदरिक कहा गया है। ये व्यापारार्थ यात्रा करने वालों के सार्थ हैं।

(५) 'कप्पडिय' अर्थात् भिक्षुकों का सार्थ। यह भिक्षाचर्या करके अपनी आजीविका किया करता था।

सार्थ में मोदकादि पक्वान्न तथा घी, तेल, गुड, चावल, गेहूँ आदि नानाविध धान्य का संग्रह रखा जाता था। और विक्रय के लिये कुंकुम, कस्तूरी, तगर, पत्तचोय, हिंगु, शंखलोय आदि वस्तुएँ प्रचुर मात्रा में रहती थीं। (नि० गा० ५६६४; बृ० गा० ३०७२)। निशीथ में सार्थ से सम्बन्धित नाना प्रकार की रोचक सामग्री विस्तार से वर्णित है, जिसका संबंध सार्थ के साथ विहार-यात्रा करने वाले श्रमणों से है।

अनेक प्रकार की नौकाओं का विवरण भी निशीथ की अपनी एक विशेपता है। एक स्थान पर लिखा है कि तेयालग (आधुनिक वेरावल) पट्टण से वारवई (द्वारका) पर्यन्त समुद्र में नौकाएँ चलती थीं। ये नौकाएँ, अन्यत्र नदी आदि के जल में चलने वाली नौकाओं से भिन्न प्रकार की थीं। नदी आदि के जल में चलने वाली नौकाएँ तीन प्रकार की थीं :—

(१) ओयाण—जो अनुस्रोतगामिनी होती थीं।

(२) उज्जाण—जो प्रतिस्रोतगामिनी होती थीं।

(३) तिरिच्छसंतारिणी—जो एक किनारे से दूसरे किनारे को जाती थीं।

—(नि० गा० १८३)

जल-संतरण के लिये नौका के अतिरिक्त अन्य प्रकार के साधन भी थे; जैसे—कुम्भ = लकड़ी का चौखटा वनाकर उसके चारों कोनों में घड़े वाँध दिए जाते थे; दत्ति = दृतिक, वायु से भरी हुई मशकें; तुम्ब = मछली पकड़ने के जाल के समान जाल वनाकर उसमें कुछ तुम्वे भर दिए जाते थे और इस तुम्वों की गठरी पर संतरण किया जाता था; उडुप अथवा कोट्टिम्ब = जो लकड़ियों को वाँधकर वनाया जाता है; पण्णि = पण्णि नामक लताओं से वने हुए दो वड़े टोकरों को परस्पर वाँधकर उस पर वैठकर संतरण होता था—(नि० गा० १८५, १६१, २३७, ४२०६)। नौकामें छेद हो जाने पर उसे किस प्रकार वंद किया जाता था, इसका वर्णन भी महत्वपूर्ण है। इस प्रसंग में वताया गया है कि मुंज को या दर्भ को अथवा पीपल आदि वृक्ष की छाल को मिट्टी के साथ कूट कर जो पिंड वनाया जाता था, वह 'कुट्टविंद' कहा जाता था और उससे नौका का छेद ंद किया जाता था। अथवा वस्त्र के टुकड़ों के साथ मिट्टी को कूट कर जो पिंड वनाया जाता था, उसे 'चेलमट्टिया' कहते थे। वह भी नौका के छेद को वंद करने के काम में आता था (गा० ६०१७)। नौका-संवंधी अन्य जानकारी भी दी गई है (नि० गा० ६० १२-२३)

भगवान् महावीरने तो अनार्य देश में भी विहार किया था; किन्तु निशीथ सूत्र में विरूप, दस्यु, अनार्य, म्लेच्छ और प्रात्यंतिक देश में विहार का निषेध है (नि० सू० १६, २६)। उक्त सूत्र की व्याख्या में तत्कालीन समाज में प्रचलित आर्य-अनार्य-सम्बन्धी मान्यता की सूचना मिलती है।

शक-यवनादि विरूप हैं; क्योंकि वे आर्यों से वेश, भाषा और दृष्टि में भिन्न हैं। मगधादि साढ़े पच्चीस[1] देशों की सीमा के बाहर रहने वाले अनार्य आत्यंतिक हैं। दांत से काटने वाले दस्यु हैं और हिंसादि अकार्य करने वाले अनार्य हैं (नि० गा० ५७२७)। और जो अव्यक्त तथा अस्पष्ट भाषा बोलते हैं, वे मिलक्खू—म्लेच्छ हैं (गा० ५७२८)। आंध्र और द्रविड देश को स्पष्ट रूप से अनार्य कहा गया है। तथा शकों और यवनों के देश को भी अनार्य देश कहा है (५७३१)।

पूर्व में मगध, दक्षिण में कोसंबी, पश्चिम में थूणाविसय और उत्तर में कुणालाविसय—यह आर्य देश की मर्यादा थी। उससे बाहर अनार्य देश माना जाता था (गा० ५७३३)।

निम्नस्तर के लोग आर्थिक दृष्टि से अत्यन्त गरीब मालूम होते हैं; परिणामस्वरूप उन्हें धनिकों की नौकरी ही नहीं, कभी-कभी दासता भी स्वीकार करनी पड़ती थी। शिल्पादि सीखने के लिये गुरु को द्रव्य दिया जाता था। जो ऐसा करने में असमर्थ होते, वे शिक्षण-काल पर्यन्त, अथवा उससे अधिक काल तक के लिये भी गुरु से अपने को अवबद्ध कर लेते थे (ओबद्ध) (नि० गा० ३७१२)। अर्थात् उतने समय तक वे गुरु का ही कार्य कर सकते थे, अन्य का नहीं। गुरु की कमाई में से ओबद्ध (अवबद्ध) को कुछ भी नहीं मिलता था। किन्तु भृतक=नौकर को अपनी नौकरी के लिये भृति-वेतन मिलता था (नि० गा० ३७१४ और ३७१७ की चूर्णि)।

भृतक-नौकर चार प्रकार के होते थे :

(१) दिवसभयग—दिवस भृतक—प्रतिदिन की मजदूरी पर काम करने वाले।

(२) यात्राभृतक—यात्रापर्यंत साथ देकर नियत द्रव्य पाने वाले। ये यात्रा में केवल साथ देते थे, या काम भी करते थे। और इनकी भृति तदनुसार नियत होती थी, जो यात्रा समाप्त होने पर ही मिलती थी।

(३) कव्वालभृतक—ये जमीन खोदने का ठेका लेते थे। इन्हें उड्ड (गुजराती-ओड[2]) कहा जाता था।

(४) उच्चत्तभयग—कोई निश्चित कार्य-विशेष नहीं, किन्तु नियत समय तक, मालिक, जो भी काम बताता, वह सब करना होता था। गुजराती में इसे 'उचक' काम करने वाला कहा जाता है (नि० गा० ३७१८-२०)।

गायों की रक्षा के निमित्त गोपाल को दूध में से चतुर्थांश, या जितना भी आपस में निश्चत=तय हो जाता, मिलता था। यह प्रतिदिन भी ले लिया जाता था, या कई दिनों का मिलाकर एक साथ एक ही दिन भी (नि० गा० ४५०१-२ चू०)।

दासों के भी कई भेद होते थें। जो गर्भ से ही दास बना लिया जाता था, वह ओगालित दास कहलाता था। खरीद कर बनाये जाने वाले दास को क्रीत दास कहते थे। ऋण

---

१. साढ़े पच्चीस देश की गणना के लिये, देखो-बृ० गा० ३२६३ की टीका।

२. सौराष्ट्र में आज भी इस नाम की एक जाति है, जो भूमि-खनन के कार्य में कुशल है।

से मुक्त न हो सकने पर जिसे दास कर्म करना पड़ता था, उसे 'श्रणए' कहते थे। दुर्भिक्ष के कारण भी लोग दासकर्म करने को तैयार हो जाते थे। राजा का अपराध करने पर दंडस्वरूप दास भी बनाये जाते थे (नि० गा० ३६७६)। कोसल के एक गीतार्थ आचार्य की बहन ने किसी से उद्धीना (उधार) तेल लिया था, किन्तु गरीबी के कारण, वह समय पर न लौटा सकी, परिणामस्वरूप बेचारी को तैलदाता की दासता स्वीकार करनी पड़ी। अन्ततः गीतार्थ आचार्य ने कुशलतापूर्वक मालिक से उक्त दासी की दीक्षा के लिये अनुज्ञा प्राप्त की और इस प्रकार वह दासता से मुक्त हो सकी। यह रोमांचक कथा भाष्य में दी गई है (नि० गा० ४४८७—८६)।

श्रमण-ब्राह्मण :

श्रमण और ब्राह्मण का परस्पर वैर प्राचीनकाल से ही चला आता था[1]। वह निशीथ की टीकोपटीकाओं के काल में भी विद्यमान था (नि० गा० १०८७ चू०) अहिंसा के अपवादों की चर्चा करते समय, श्रमण द्वारा, ब्राह्मणों की राजसभा में की गई हिंसा का उल्लेख किया जा चुका है। ब्राह्मणों के लिये चूर्णि में प्रायः सर्वत्र 'धिज्जातीय' (नि० गा० १६, ३२२, ४८७, ४४४१) शब्द का प्रयोग किया गया है। जहाँ ब्राह्मणों का प्रभुत्व हो, वहाँ श्रमण अपवादस्वरूप यह झूठ भी बोलते थे कि हम कमंडल (कमढग) में भोजन करते हैं—ऐसी अनुज्ञा है (नि० गा० ३२२)। श्रमणों में भी पारस्परिक सद्भाव नहीं था (नि० सू० २.४०)। बौद्धभिक्षुओं को दान देने से लाभ नहीं होता है, ऐसी मान्यता थी। किन्तु ऐसा कहने से यदि कहीं यह भय होता कि बौद्ध लोग त्रास देंगे, तो अपवाद से यह भी कह दिया जाता था कि दिया हुआ दान व्यर्थ नहीं जाता है (नि० गा० ३२३)।

आज के श्वेताम्बर, संभवतः, उन दिनों 'सेयपड' या 'सेयभिक्खु' (नि० गा० २५७३ चू०) के नाम से प्रसिद्ध रहे होंगे (नि० गा० २१४, १८७३ चू०)। श्रमणवर्ग के अन्दर पासत्था अर्थात् शिथिलाचारी साधुओं का भी वर्ग-विशेष था। इसके अतिरिक्त सारूवी और सिद्धपुत्र—सिद्धपुत्रियों के वर्ग भी थे। साधुओं की तरह वस्त्र और दंड धारण करने वाले, किन्तु कच्छ नहीं बांधने वाले सारूवी होते थे। ये लोग भार्या नहीं रखते थे (नि० गा० ४५८७; ५५४८, ६२६६)। इनमें चारित्र नहीं होता था, मात्र साधुवेश था (नि० गा० ४६०२ चू०)। सिद्धपुत्र गृहस्थ होते थे और वे दो प्रकार के थे–सभार्यक और अभार्यक[2]। ये सिद्धपुत्र नियमतः शुक्लांबरधर होते थे। उस्तरे से मुण्डन कराते थे, कुछ शिखा रखते, और कुछ नहीं रखते थे[3]। ये शुक्लांबरधर सिद्धपुत्र, संभवतः 'सेयवड' वर्ग से पतित, या उससे निम्न श्रेणी के लोग थे, परन्तु उनकी बाह्यवेशभूषा प्रायः साधु की तरह होती थी—(नि०गा०५८६)। आज जो श्वेताम्बरों में साधु और यति वर्ग है, संभवतः ये दोनों, उक्त वर्ग द्वय के पुरोगामी रहे हों तो आश्चर्य नहीं। सिद्धपुत्रों के वर्ग से निम्न श्रेणी

---

१. दंडकारण्य की उत्पत्ति के मूल में श्रमण-ब्राह्मण का पारस्परिक वैर ही कारण है—गा० ५७४०-३।

२. अभार्यक को मुंड भी कहते थे—५५४८ चू०।

३. नि० गा० ३४६ चू०। गा० ५३८ चू०। गा० ५५४८ चू०। गा० ६२६६। बृ० गा० २६०३। गा० ४५८७ में शिखा का विकल्प नहीं है।

में 'सावग' वर्ग था। ये 'सावग' = श्रावक दो प्रकार के थे—अणुव्रती और अनणुव्रती—जिन्होंने अणुव्रतों का स्वीकार नहीं किया है (नि० गा० ३४६ चू०)। अणुव्रती को 'देशसावग' और अनणुव्रती को 'दंसणसावग' कहा जाता था (नि० गा० १४२ चू०)।

मुण्डित मस्तक का दर्शन अमंगल है—ऐसी भावना भी (नि० गा० २००५ चूर्णि) सर्वसाधारण में घर कर गई थी। इसे भी श्रमण-द्वेष का ही कुफल समझना चाहिये।

श्रमण परम्परा में निर्ग्रन्थ, शाक्य, तापस, गेरु, और आजीवकों का समावेश होता था (नि० गा० ४४२०; २०२० चू०)। निशीथ भाष्य और चूर्णि में अनेक मतों का उल्लेख है, जो उस युग में प्रचलित थे और जिनके साथ प्रायः जैन भिक्षुओं की टक्कर होती थी। इनमें बौद्ध, आजीवक और ब्राह्मण परिव्राजक मुख्य थे। बौद्धों के नाम विविध रूप से मिलते हैं—भिक्खुग, रत्तपड, तच्चणिय, सक्क आदि। ब्राह्मण परिव्राजकों में उलूक, कपिल, चरक, भागवत तापस, पंचग्गि-तावस, पंचगव्वासणिया, सुईवादी, दिसापोक्खिय, गोव्वया, ससरक्ख आदि मुख्य हैं। इनके अतिरिक्त कापालिक, वैतुलिक, तडिय कप्पडिया आदि का भी उल्लेख है – देखो, नि० गा० १, २४, २६, ३२३, ३६७, ४६८, १४०४, १४४०, १४७३, १४७५, २३४३, ३३१०, ३३५४, ३३५८, ३७००, ४०२३, ४११२ चूर्णि के साथ। परिव्राजकों के उपकरणों का भी उल्लेख है—मत्त, दगवारग, गडुअग्र, आयमणी, लोट्टिया, उल्लंकग्र, वारग्र, चडुयं, कव्वय—गा० ४११३।

यक्षपूजा (गा० ३४८९), रुद्रघर (६३८२) तथा भल्लीतीर्थ (गा० २३४३) का भी उल्लेख है। भृगु कच्छ के एक साधु ने दक्षिणापथ में जाकर, जब एक भागवत के समक्ष, भल्ली तीर्थ के सम्बन्ध में यह कथा कही कि वासुदेव को किस प्रकार भाला लगा और वे मर गये, अनन्तर उनकी स्मृति में भल्लीतीर्थ की रचना हुई, तो भागवत सहसा रुष्ट हो गया और श्रमण को मारने के लिए तैयार हो गया। अन्ततः वह तभी शांत हुआ और क्षमा याचना की, जब स्वयं भल्लीतीर्थ देख आया।

जैनों ने उक्त मतांतरों को लौकिक धर्म कहा है। मूलतः वे अपने मत को ही लोकोत्तर धर्म मानते थे। महाभारत, रामायण आदि लौकिक शास्त्रों की असंगत बातों का मजाक भी उड़ाया है। इस सम्बन्ध में चूर्णिकार ने पाँच धूर्तों की एक रोचक कथा का उल्लेख किया है (नि० गा० २९४-६)। इतना ही नहीं, विरोधी मत को अनार्य भी कह दिया है (५७३२)

जैन धर्म में भी पारस्परिक मतभेदों के कारण जो अनेक सम्प्रदाय-भेद उत्पन्न हुए, उन्हें 'निह्नव' कहा गया है, और उनका क्रमशः इतिहास भी दिया हुआ है (गा० ५५९६-५६२६)।

'पासंड'[1] शब्द निशीथ भाष्य तक धार्मिक सम्प्रदाय के अर्थ में ही प्रचलित था। इसमें जैन और जैनेतर सभी मतों का समावेश होता था।

निशीथ में कई जैनाचार्यों के विषय में भी ज्ञातव्य सामग्री मिलती है। आर्यमंगु और समुद्र के दृष्टान्त आहार-विषयक गृद्धि और विरक्ति के लिये दिये गये हैं (गा० १११६)। स्थूलभद्र के समय तक सभी जैन श्रमणों का आहार-विहार साथ था; अर्थात् सभी श्रमण परस्पर सांभोगिक

१. नि० गा० ६२६२

थे। स्थूलभद्र के दो शिष्य थे—आर्यमहागिरि और आर्य सुहस्ती। आर्यमहागिरि ज्येष्ठ थे, किन्तु स्थूलभद्र ने आर्य सुहस्ती को पट्टधर बनाया। फिर भी ये दोनों प्रीतिवश साथ ही विचरण करते रहे। सम्प्रति राजा ने, अपने पूर्वभव के गुरु जानकर भक्तिवश सुहस्ती के लिये आहारादि का प्रबंध किया। इस प्रकार कुछ दिन तक सुहस्ती और उनके शिष्य राजपिंड लेते रहे। आर्य महागिरि ने उन्हें सचेत भी किया, किन्तु सुहस्ती न माने, फलतः उन्होंने सुहस्ती के साथ आहार-विहार करना छोड़ दिया, अर्थात् वे असांभोगिक बना दिये गए। तत्पश्चात् सुहस्ती ने जब मिथ्या दुष्कृत दिया, तभी दोनों का पूर्ववत् व्यवहार शुरू हो सका। तब से ही श्रमणों में सांभोगिक और विसंभोगिक, ऐसे दो वर्ग होने लगे (नि० गा० २१५३-२१५४ की चूर्णि)। यही भेद आगे चलकर श्वेताम्बर और दिगम्बर रूप से दृढ़ हुआ, ऐसा विद्वानों का अभिमत है।

आर्य रक्षित ने श्रमणों को, उपधि में मात्रक (पात्र) की अनुज्ञा दी। इसको लेकर भी संघ में काफी विवाद उठ खड़ा हुआ होगा; ऐसा निशीथ भाष्य को देखने पर लगता है। कुछ तो यहाँ तक कहने लगे थे कि यह तो स्पष्ट ही तीर्थंकर की आज्ञा का भंग है। किन्तु निशीथ भाष्य, जो स्थविर कल्प का अनुसरण करने वाला है, ऐसा कहने वालों को ही प्रायश्चित का भागी बताता है। आर्यरक्षित ने देशकाल को देखते हुए जो किया, उचित ही किया। इसमें तीर्थंकर की आज्ञाभंग जैसी कोई बात नहीं है। जिस पात्र में खाना, उसी का शौच में भी उपयोग करना; यह लोक-विरुद्ध था। अतएव गच्छवासियों के लिये लोकाचार की दृष्टि से दो पृथक् पात्र रखने आवश्यक हो गये थे—ऐसा प्रतीत होता है; और उसी आवश्यकता की पूर्ति आचार्य आर्यरक्षित ने की (नि० गा० ४५२८ से)।

आचार्य :

लाटाचार्य (११५०), आर्यखपुट (२५८७), विष्णु (२५८७), पादलिप्त (४४६०), चंद्ररुद्र (६६१३) गोविंदवाचक (२७६६,३४२७, ३५५६) आदि का उल्लेख भी निशीथ-भाष्य-चूर्णि में मिलता है।

पुस्तक :

पांच प्रकार के पोत्थय—पुस्तकों का उल्लेख है। वे ये हैं—गंडी, कच्छभी, मुट्ठी, संपुट तथा छिवाडी[1]। इनका विशेष परिचय मुनिराज श्री पुण्यविजयजी ने अपने 'भारतीय जैन श्रमण संस्कृति और लेखन कला' नामक निबन्ध में (पृ० २२-२४) दिया है।

उपर्युक्त पांचों ही प्रकार के पुस्तकों का रखना, श्रमणों के लिए, निषिद्ध था; क्योंकि उनके भीतर जीवों के प्रवेश की संभावना होने से प्राणातिपात की संभावना थी (नि० गा० ४००८) किन्तु जब यह देखा गया कि ऐसा करने में श्रुत का ही ह्रास होने लगा है, तब यह अपवाद करना पड़ा कि कालिक श्रुत = अंग ग्रन्थ[2] तथा निर्युक्ति के संग्रह की दृष्टि से पांचों प्रकार के पुस्तक रखे जा सकते हैं—(नि० गा० ४०२०)।

---

१. नि० गा० १४१६; ४००० चू० बृ० गा० ३८२२ टी०; ४०६६।

२. 'कालियसुयं' आयारादि एक्कारस अंगा—नि० गा० ६१८६ चू०।

कुछ शब्द :

भाषाशास्त्रियों के लिये कुछ विशिष्ट शब्दों के नमूने नीचे दिये जाते हैं, जो उनको प्रस्तुत ग्रन्थ के विशेष अध्ययन की ओर प्रेरित करेंगे, ऐसा मेरा विश्वास है।

वच्चगिह = पाखाना।

छाणहारिग = गोबर एकत्र करने वाला। 'छाण' शब्द आज भी गुजरात में इसी रूप में प्रचलित है।

छुरघरयं = छुरे का घर, हजाम के उस्तरे का घर।

खडखडेंत = गु० 'खडखडाट'।

चेल्लग = चेलो (गु०), शिष्य।

पुलिया = पूली (गु०) तृण की गठरी।

चुक्कति = चूक जाता है। गुजराती—चूक = भूल।

उड्डाह = बदनामी।

डाली = शाखा।

लोट्टो = लोटो (गु०), लोटा।

वाउल्लग = पुतला।

रेल्लिया = पानी की बाढ़ का आ जाना; (गु० रेल)

मक्कोडग = (गु० मकोडा) बड़ी काली चींटी।

जूआ = जूं (गु०);

उद्देहिया = (गु० उधई) दीमक।

कणिक्का = (गु० कणिक) आटे का पिंड।

लंच = (गु० लाँच) घूस।

उघेउं = (गु० उंघ) निद्रा लेना।

मप्पक = (गु० माप) नाप।

कुहाड = (गु० कुहाडो) फरसा।

खड्डा = गड्ढा (गु० खाडो) इत्यादि।

ये शब्द प्रथम भाग में आये हैं, और इन पर से यह सिद्ध होता है कि चूर्णिकार, सौराष्ट्र-गुजराती भाषा से परिचित थे।

इस प्रकार, प्रस्तुत में, दिग्दर्शन मात्र कराया गया है। इससे विद्वानों का ध्यान, प्रस्तुत ग्रन्थ की बहुमूल्य सामग्री की ओर गया, तो मैं अपना श्रम सफल समझूँगा।

आभार :

प्रस्तुत निवन्ध की समाप्ति पर, मैं, संपादक मुनिद्वय तथा प्रकाशकों का आभार मानना भी अपना कर्तव्य समझता हूँ; जिन्होंने प्रस्तुत परिचय के लेखन का अवसर देकर, मुझे निशीथ के स्वाध्याय का सु-अवसर प्रदान किया है। साथ ही, उन्हें लंबे काल तक प्रस्तुत परिचय की प्रतीक्षा करनी पड़ी, एतदर्थ क्षमा प्रार्थी भी हूँ।

वाराणसी—५
ता० १३-३-५६

—दलसुख मालवणिया

विषयानुक्रम

षोडश उद्देशक

सप्तदश उद्देशक

अष्टादश उद्देशक

एकोनविंशतितम उद्देशक

विंशतितम उद्देशक

परिशिष्ट

"अपक्षपातेन यदर्थनिर्णयस्,
तदेव धर्मः परमो मनीषिणाम् ।"

— विना किसी पक्ष-पात के यथार्थ
सत्य का निर्णय करना ही,
विद्वानों का परम धर्म है ।

निशीथ-सूत्रम्

[भाष्य-सहितम्]

आचार्यप्रवर श्री जिनदासमहत्तर-विरचितया

विशेषचूर्ण्या समलंकृतम्

विंशतितमोद्देशकस्य सुबोधाख्यया संस्कृत-व्याख्यया सहितञ्च

चतुर्थो विभागः

उद्देशकाः १६—२०

ण वि किंचि अणुण्णायं, पडिसिद्धं वा वि जिणवरिंदेहिं ।
एसा तेसिं आणा, कज्जे सच्चेण होयव्वं ॥ ५२४८ ॥

दोसा जेण निरुंभंति, जेण खिज्जंति पुव्वकम्माइं ।
सो सो मोक्खोवाओ, रोगावत्थासु समणं व ॥ ५२५० ॥

—भाष्यकार ।

षोडश उद्देशकः

उक्तः पंचदशमोद्देशकः । इदानीं षोडशः प्रारभ्यते, तत्रायं सम्बन्धः –

देहविभूसा बंभस्स अगुत्ती उज्जलोवहित्तं च ।
सागारिते य (वि) वसतो, बंभस्स विराहणाजोगो ॥५०६५॥

पंचदसमुद्देसगे देहविभूसाकरणं उज्जलोवधिधारणं च णिसिद्धं, मा बंभवयस्स अगुत्ती, पसंगतो मा बंभव्वयस्स विराहणा भविस्सति । इहावि सोलसमुद्देसगे मा अगुत्ती बंभविराहणा वा, अतो सागारिय-वसहिणिसेहो कज्जति । एस सम्बन्धो ॥५०६५॥

एतेण सम्बन्धेणागयस्स सोलसमुद्देसगस्स इमं पढमं सुत्तं –

जे भिक्खू सागारियसेज्जं अणुपविसइ, अणुपविसंतं वा सातिज्जति ॥१॥

सह आगारीहिं सागारिया, जो तं गेण्हति वसहिं तस्स आणादी दोसा, चउगुरुं च से पच्छित्तं ॥

सन्नासुत्तं सागारियं ति जहिं मेहुणुब्भवो होइ ।
जत्थित्थी पुरिसा वा, वसंति सुत्तं तु सट्ठाणे ॥५०६६॥

जं सुत्ते "सागारियं" ति एसा सामयिकीसंज्ञा । जत्थ वसहीए ठियाणं मेहुणुब्भवो भवति सा सागारिया, तत्थ चउगुरुगा ।

अथवा – जत्थ इत्थिपुरिसा वसंति सा सागारिया, इत्थिसागारिये चउगुरुगा सुत्तणिवातो । "सट्ठाणे" त्ति जा पुरिससागारिया, णिग्गंथीणं पुरिससागारिये चउगुरुगा । सेसं कंठं ॥५०६६॥ एस सुत्तत्थो ।

इमो णिज्जुत्तिवित्थरो –

सागारिया उ सेज्जा, ओहे य विभागओ उ दुविहाओ ।
ठाण-पडिसेवणाए, दुविहा पुण ओहओ होंति ॥५०६७॥

सागारिया सेज्जा दुविहा – ओहेण विभागओ य । ओहेण पुण दुविहा – ठाणओ पडिसेवणाओ य । एतेसु पच्छित्तं भण्णिहिति ॥५०६७॥

सागारियणिक्खेवो, चउव्विहो होइ आणुपुव्वीए ।
णामं ठवणा दविए, भावे य चउव्विहो भेदो ॥५०६८॥

सागारिगणिक्खेवो णामठवणादिगो चउव्विधो कायव्वो। स पश्चार्धेन कृतश्चतुर्विधः। दव्वे आगमओ, णो आगमओ य ॥५०९८॥

णो आगमओ जाणग-भवियव्वइरित्तं दव्वसागारियं इमं –

रूवं आभरणविही, वत्थालंकारभोयणे गंधे।
आओज्ज णट्ट णाडग, गीए सयणे य दव्वम्मि ॥५०९९॥

"रूव"त्ति अस्य व्याख्या –

जं कट्ठकम्ममादिसु, रूवं सट्ठाणे तं भवे दव्वं।
जं वा जीवविमुक्कं, विसरिसरूवं तु भावम्मि ॥५१००॥

रूवं णाम जं कट्ठचित्तलेप्पकम्मे वा पुरिसरूवं कयं, अहवा – जीवविप्पमुक्कं पुरिससरीरं तं "सट्ठाणे" त्ति णिग्गंथाणं पुरिसरूवं दव्वसागारियं, जे इत्थीसरीरा तं भावसागारियं। एतेसु चेव कट्ठकम्मादिसु जं इत्थीरूवं तं निग्गंथीणं दव्वसागारियं, जे पुण पुरिसरूवा तं तासिं भावसागारियं। आभरणा कडगादी ज पुरिसजोग्गा ते णिग्गंथाण दव्वे, जे पुण इत्थिजोग्गा ते भावे। इत्थीणं इत्थिजोग्गा दव्वे, पुरिसजोग्गा भावे ॥५१००॥

[1]वत्थादि अलंकारं चउव्विहं। भोयणं असणादियं चउव्विहं। कोट्ठगपुडगादी गंधा अणेगविहा। आउज्जं चउव्विहं – ततं विततं घणं झुसिरं। नट्टं चउव्विहं – अंचियं रिभियं आरभडं भसोलं ति।

अहवा इमं [2]णट्टं –

णट्टं होति अगीयं, गीयजुयं णाडयं तु तं होइ।
आहरणादी पुरिसोवभोग दव्वं तु सट्ठाणे ॥५१०१॥

गीतेण विरहितं णट्टं, गीतेणं जुत्तं णाडगं। गीयं चउव्विहं–तंतिसमं तालसमं [3]गहसमं लयसमं च। सयणिज्जं पल्लंकादि बहुप्पगारं। "[4]दव्वे" त्ति दव्वसागारियमेवमुद्दिट्ठं, भोयण-गंधव्व-आओज्ज-सयणाणि। उभयपक्खे वि सरिसत्तणतो णियमा दव्वसागारियं चेव, सेसाणि दव्वभावेसु भाणियव्वाणि। सरिसे दव्वसागारियं, विसरिसे भावसागारियं ॥५१०१॥

एतेसु इमं पच्छित्तं –

एक्केक्कम्मि य ठाणे, भोयणवज्जाण चउलहू होंति।
चउगुरुग भोयणम्मी, तत्थ वि आणादिणो दोसा ॥५१०२॥

रूवादिदव्वसागारियप्पगारेसु एक्केक्कम्मि ठाणे ठायमाणस्स भोयणं वज्जेत्ता सेसेसु चउलहुगा, भोयणे चउगुरुं। केसिं च आयरियाणं – अलंकारवत्थेसु वि चउगुरुगा, आणादिया य दोसा भवंति।

चोदक आह – सव्वे ते साहू, कहं ते दोसे करेज्ज ?,

---

१ गा० ५०९९। २ गा० ५०९९। ३ स्वरसाम्येन गानं। ४ गा० ५०९९।

उच्यते –

को जाणति "केरिसओ, कस्स व माहप्पता समत्थत्ते ।
धिइदुब्बला उ केई, डेवेंति पुणो अगारिजणं ॥५१०३॥

छउमत्थो को जाणइ णाणादेसियाणं कस्स केरिसो भावो, इत्थिपरिस्सहे उदिण्णे कस्स वा माहप्पता, महंतो अप्पा माहप्पता । अहवा – माहप्पता प्रभावो । तं च माहप्पं पभावं वा समत्थता निज्जति । सामत्थं धिती, सारीरा सत्ती । इंदियणिग्गहं प्रति ब्रह्मव्रतपरिपालने वा कस्स किं माहात्म्यमिति । एवमवि ति अपरिणाए सागारियवमधीए ठियाणं तत्थ जे धितिदुब्बला ते रूवादीहिं अक्खित्ता विगयसंजमधुरा अगारिजणं "डेवेंति" – परिभुंजंतीत्यर्थः ॥५१०३॥

ते य संजया पुव्वावत्था इमेरिसा होज्जा –

केइत्थ भुत्तभोई, अभुत्तभोई य केइ निक्खंता ।
रमणिज्ज लोइयं ति य, अम्हं पेयारिसं आसी ॥५१०४॥

भुत्ताऽभुत्ता दो वि भणंति – रमणिज्जो लोइओ धम्मो । जे भुत्तभोगी ते भणंति – अम्हं वि गिहासमे ठियाणं एरिसं खाणपाणादियं आसि ॥५१०४॥

किं च –

एरिसओ उवभोगो, अम्ह वि आसि (त्ति) एह एण्हि उज्जल्ला ।
दुक्कर करेमो भुत्ते, कोउगमितरस्स ते दट्ठुं ॥५१०५॥

"उवभोगो" त्ति ण्हाणवत्थाभरणगंधमल्लाणुलेवणधूववासतंबोलादियाण पुव्वं आसी । इण्हिं इदाणिं, उज्जल्ला प्राबल्येन, मलिणसरीरा लद्धलुक्खाहारा अम्हे सुदुक्करं करामो, एवं भुत्तभोगी चिंतयति । "इतर"त्ति अभुत्तभोगी, तं तं रूवादि दट्ठुं कोउअं करेज्जा ॥५१०५॥

सति कोउगेण दोण्ह वि, परिहेज्ज लाएज्ज वा वि आभरणं ।
अण्णेसिं उवभोगं, करेज्ज वाएज्ज उड्डाहो ॥५१०६॥

"सति" त्ति पुव्वरयादियाण सरणं भुत्तभोगिणो, इयरस्स कोउयं । एते दोण्णि वि [illegible] वत्थे वा परिहेज्ज, आभरणं वा "लाएज्ज" त्ति अप्पाणं आभरेज्ज, अण्णेसिं वा गंधादियाण उवभोगं करेज्ज, वाएज्ज वा आतोज्जं । असंजतो वा संजतं सागारियादि दट्ठु उड्डाहं करेज्ज ॥५१०६॥

किं च –

तच्चिणा तल्लिंगा, भिक्खा-सज्झायमुक्कतत्तीगा ।
विकहा-विसुत्तियमणा, गमणुस्सुग उस्सुगब्भूया ॥५१०७॥

[illegible] (विगता) [illegible] (?) [illegible]

१ [illegible], इति बृहत्कल्पे गा० ३४४५ ।

इत्थिमादिरूवसमागमतो उदिण्णमोहाण त्थीपरिभोगुस्सुयभूताणं गमणे औत्सुक्यं भवति । अभिप्रेतार्थं त्वरित-सम्प्रापणं औत्सुक्यमित्यर्थः ।।५१०७।।

सुट्ठु कयं आभरणं, विणासियं ण वि य जाणसि तुमं पि ।
मुच्छुड्डाहो गंधे, विसोत्तिया गीयसद्देसु ।।५१०८।।

रूवं आभरणं वा दट्ठुं एगो भणाति – "सुट्ठुं" त्ति लट्ठं कयं ।

वितिओ तं भणाति – "एतं विणासियं, अविसेसण्णू तुमं, ण जाणसि किं चि" ।

एवं उत्तरोत्तरेण अधिकरणं भवति, प्रशंसतो वा रागो, इतरस्स दोसो । "मुच्छ" त्ति मुच्छं वा करेज्ज । मुच्छाओ वा सपरिग्गहो होज्जा ।

गंधे त्ति चंदणादिणा विलित्ते धूविते वा अप्पाणे उड्डाहो भवति । आतोज्ज-गीयसद्दादिएसु विसोत्तिया भवति ।।५१०८।।

किं च –

णिच्चं पि दव्वकरणं, अवहितहिययस्स गीयसद्देसु ।
पडिलेहण सज्झाए, आवासग भुंज वेरत्ती ।।५१०९।।

णिच्चमिति तीए वसहीए सव्वकालगीतादिसद्देहिं अवधियमणस्स पडिलेहणादिकरणं सव्वेसिं संजमजोगाणं दव्वकरणं भवति ।।५१०९।।

ते सीदिउमारद्धा, संजमजोगेहि वसहिदोसेणं ।
गलति जतुं तप्पंतं, एव चरित्तं मुणेयव्वं ।।५११०।।

तेसिं एवं वसहिदोसेणं सीअंताणं चरित्तहाणी ।

कहं ?, उच्यते । इमो दिट्ठंतो –

जहा जउ अग्गिणा तप्पंतं गलति एवं जहुत्तसंजमजोगस्स अकरणतातो चरित्तं गलति, ।।५११०।।

वसहिदोसेण जो इत्थिमादीविसयोवभोगभावो असुभो उप्पण्णो –

[१]तण्णिक्खंता केई, पुणो वि सम्मेलणाइदोसेणं ।
वच्चंति संभरंता, भेत्तूण चरित्तपागारं ।।५१११।।

तस्मान्निक्खंता तं वा परित्यज्य निःक्रान्ता तण्णिक्खंता केचिन्न सर्वे । सेसं कंठं ।

एगम्मि दोसु तीसु व, ओहावंतेसु तत्थ आयरिओ ।
मूलं अणवट्ठप्पो, पावति पारंचियं ठाणं ।।५११२।।

वसहिकएण दोसेण जइ एक्को उण्णिक्खमति तो आयरियस्स मूलं, दोसु अणवट्ठो, तिसु पारंचियं । उगुरु जस्स वा वसेण तत्थ ठिता तस्स वा एयं पच्छित्तं ।।५११२।। दव्वसागारियं गतं ।

१ उण्णि...., इति बृहत्कल्पे गा० २४६३ ।

इदाणिं भावसागारियं –

[1]अट्ठारसविहमबंभं, भावउ ओरालियं च दिव्वं च ।
मणवयणकायगच्छण, भावम्मि य रूवसंजुत्तं ॥५११३॥

एयं दव्वसागारियं भणंतेण भावसागारियंपि एत्थेव भणियं, तहावि विसेसओ पुणो भण्णति – तं भावसागारियं अट्ठारसविहं अबंभं। तस्स मूलभेदा दो – ओरालियं च दिव्वं च। तत्थ ओरालियं नवविहं इमं – ओरालियं कामभोगा मणसा गच्छति, गच्छावेति, गच्छंतं अणुजाणति। एवं वायाए वि। काएण वि। एते तिण्णि तिया णव। एवं दिव्वेण वि णव। एते दो णवगा अट्ठारस। एयं अट्ठारसविहं अबंभं भावसागारियं ॥५११३॥

"[2]भावम्मि य रूवसंजुत्तं" त्ति अस्य व्याख्या –

अहव अबंभं जत्तो, भावो रूवा सहगयातो वा ।
भूसण-जीवजुतं वा, सहगय तव्वज्जियं रूवं ॥५११४॥

अबंभभावो जतो उप्पज्जइ तं च रूवं रूवसंजुत्तं वा, कारणे कज्जोवयारातो, तं चेव भावतो अबंभं।

अहवा – उदिण्णभावो जं पडिसेवति तं च रूवं वा होज्ज, रूवसहगतं वा। तत्थ जं इत्थीसरीरं सचेयणं भूसणसंजुत्तं तं रूवसहगतं।

अहवा – अणाभरणं पि जीवजुत्तं तं रूवसहगतं भण्णति, "तव्वज्जियं रूव" ति सजीवं इत्थीसरीरं भूसणवज्जियं रूवं भण्णति, अचेयणं वा रूवं भण्णति ॥५११४॥

तं पुण रूवं तिविहं, दिव्वं माणुस्सगं च तेरिच्छं ।
तत्थ उ दिव्वं तिविहं, जहण्णयं मज्झिमुक्कोसं ॥५११५॥

दिव्वे इमे मूलभेदा –

पडिमेतरं तु दुविहं, सपरिग्गह एक्कमेक्कगं तिविहं ।
पायावच्च-कुडुंबिय-डंडियपरिग्गहं चेव ॥५११६॥

पडिमाजुत्तं तं दुविहं – सन्निहियं असन्निहियं वा। "इतर" ति – देहजुत्तं तं पि सचेयणं अचेयणं वा। पुणो एक्केक्कं सपरिग्गहं अपरिग्गहं वा। जं सपरिग्गहं तं तिविहेहिं परिग्गहियं। सेसं कंठं ॥५११६॥

दिव्वं जहण्णादियं तिविहं इमं –

वाणंतरिय जहण्णं, भवणवती जोइसं च मज्झिमगं ।
वेमाणियमुक्कोसं, पगयं पुण ताण पडिमासु ॥५११७॥

वाणमंतरं जहण्णं, भवणवासि जोइसियं च मज्झिमगं, वेमाणियं उक्कोसं। [illegible] [illegible] पडिमासु अहिगारो भणितः ॥५११७॥

१ अट्ठारसविहमबंभं इति बृहत्कल्पे गा० २४६४ । २ गा० ५११३ ।

अहवा – पडिमाजुएण जहण्णादिया इमे भेदा –

कट्ठे पोत्थे चित्ते, जहण्णयं मज्झिमं च दंतम्मि ।
सेलम्मि य उक्कोसं, जं वा रूवातो णिप्फण्णं ॥५११८॥

जा दिव्वपडिमा कट्ठे पोत्थे लेप्पगे चित्तकम्मे वा जा कीरइ एयं जहण्णयं, अनिष्टस्पर्शत्वात् । जा पुण हत्थिदंते कीरति सा मज्झिमा, जेण सुभतरफरिसा, अत्रापि हीरसंभवः । मणिसीलादिसु जा कीरइ सा उक्कोसा, सुकुमालफरिसत्तणतो अहीरत्तणतो य ।

अथवा – जं विरूवं कयं तं जहण्णं । जं मज्झिमरूवं तं मज्झिमं । जं पुण सुरूवं कयं तं उक्कोसयं ॥५११८॥ सव्वोहतो पडिमाजुए ठायमाणस्स चउलहुं ।

ओहविभागे इमं –

ठाण-पडिसेवणाए, तिविहे दुविहं तु होइ पच्छित्तं ।
लहुगा तिण्णि विसिट्ठा, अपरिग्गहे ठायमाणस्स ॥५११९॥

"तिविध" त्ति - दिव्वमाणुसतेरिच्छे दुविधं पच्छित्तं – ठाणपच्छित्तं पडिसेवणापच्छित्तं च । एवं अत्थनिरूवणं काउं । एयं चेव पुव्वद्धं । अण्णहा भाणियव्वं – "तिविधे" त्ति जहण्णमज्झिमुक्कोसे दुविहं पच्छित्तं – ठाणओ पडिसेवणओ य । तत्थ पडिसेवणओ ताव ठप्पं । ठायंतस्स इमं – "लहुगा तिण्णि विसिट्ठा", दिव्वे पडिमाजुए असण्णिहिए जहन्ने चउलहुया उभयलहु, मज्झिमे लहुगा चेव कालगुरू, उक्कोसे लहुगा चेव तवगुरू ।

अहवा – "तिविधे दुविधं तु" – तिविधं जहण्णगादी, तं सण्णिहियासण्णिहितेण दुविहं ।

अहवा – पडिसेवणाए तं चेव जहण्णादिकं तिविधं । दिट्ठादिट्ठेण दुविधं ॥५११९॥

विभागे ओहपच्छित्तं इमं –

चत्तारि य उग्घाया, पढमे बितियम्मि ते अणुग्घाता ।
छम्मासा उग्घाता, उक्कोसे ठायमाणस्स ॥५१२०॥

पढमे त्ति जहण्णे, तत्थ उग्घाय त्ति चउलहु । बितियं मज्झिमं तत्थ अणुग्घाय त्ति चउगुरुं । उक्कोसे छम्मासा, उग्घाय त्ति छल्लहु । एयं ठायमाणस्स एयस्स इमा उच्चारणविधी – जहण्णे पायावच्चपरिग्गहिते ठाति ङ्क । मज्झिमए पातावच्चपरिग्गहिते ठाति ङ्का । उक्कोसे पातावच्चपरिग्गहिते ठाति फ्ं ॥५१२०॥

इदाणिं एते पच्छित्ता विसेसिज्जंति –

पायावच्चपरिग्गहे, दोहि वि लहू होंति एते पच्छित्ता ।
कालगुरू कोडुंबे, डंडियपरिग्गहे तवसा ॥५१२१॥

जे एते पायावच्चपरिग्गहिते जहण्णए मज्झिमए उक्कोसए य ठायमाणस्स चउलहु च छल्लहुआ पच्छित्ता भणिता । एते कालेण वि तवेण वि लहुगा णायव्वा ।

कोडुंवियपरिग्गहिते एते चेव तिण्णि पच्छित्ता कालगुरु तवलहुआ ।

डंडियपरिग्गहिते एते चेव तिण्णि पच्छित्ता काललहुगा तवगुरुगा । जम्हा जहण्णादिविभागेण कतं सण्णिहितासंण्णिहितेण ण विसेसियव्वं, तम्हा विभागे ओहो गओ ॥५१२१॥

इदाणिं विभागपच्छित्तं – तत्थ एयाणि चेव जहण्णमज्झिमुक्कोसाणि असण्णिहियसण्णिहियभिण्णा छट्ठाणा भवंति ।

ताहे भण्णति –

चत्तारि य उग्घाया, पढमे बितियम्मि ते अणुग्घाया ।
ततियम्मि य एमेवा, चउत्थे छम्मास उग्घाता ॥५१२२॥

जहण्णेण असण्णिहियं पढमं ठाणं, सण्णिहियं बितियं ठाणं ।
मज्झिमे असण्णिहियं तइयट्ठाणं, सण्णिहियं चउत्थं ।
उक्कोसेण असण्णिहियं पंचमं, सण्णिहियं छट्ठं ।
जहण्णाए असण्णिहिए पायावच्चपरिग्गहिते ठाति चउलहुगं, सण्णिहिए चउगुरुं । मज्झिमाए असण्णिहिए "एमेव" त्ति – चउगुरुगा, सण्णिहिए छल्लहुगा॥५१२२॥

पंचमगम्मि वि एवं, छट्ठे छम्मास होंतऽणुग्घाया ।
असन्निहिते सन्निहिते, एस विही ठायमाणस्स ॥५१२३॥

उक्कोसए असण्णिहिए पायावच्चपरिग्गहिते ठाति एमेव त्ति छल्लहुगा, सण्णिहिए छग्गुरुं । एसो ठाणपच्छित्तस्स विधी भणितो ॥५१२३॥

पायावच्चपरिग्गह, दोहि वि लहु होंति एते पच्छित्ता ।
कालगुरुं कोडुंबे, डंडियपारिग्गहे तवसा ॥५१२४॥

पायावच्चे उभयलहुं, कोडुंबिए कालगुरुं, डंडिए तवगुरुं । सेसं पूर्ववत् ॥५१२४॥

ठाणपच्छित्तं चेव बितियादेसतो भण्णति –

अहवा भिक्खुस्सेयं, जहण्णगाइम्मि ठाणपच्छित्तं ।
गणिणो उवरिं छेदो, मूलायरिए हसति हेट्ठा ॥५१२५॥

जं एयं जहण्णगादी असंनिहितसंनिहितभेदेण चउलहुगादि – छग्गुरुगावसाणं एयं भिक्खुस्स भणियं । "गणि" त्ति-उवज्झाओ, तस्स चउगुरुगादी छेदे ठायति । आयरियस्स छल्लहुगादी मूले ठायति । एवं पायच्छित्ते जहा उवरिमं वड्ढति तहा हेट्ठापदं हसति । ॥५१२५॥

पढमिल्लुगम्मि ठाणे, दोहि वि लहुगा तवेण कालेणं ।
बितियम्मि य कालगुरू, तवगुरुगा होंति तइयम्मि ॥५१२६॥

इह पढमिल्लुगं पागतियं ठाणं, बितियं कोडुंबं, ततियं डंडियं । सेसं पूर्ववत् ॥५१२६॥ एवं ठायंतस्स पच्छित्तं भणियं ।

इदाणिं पडिसेवंतस्स पच्छित्तं भण्णति –

चत्तारि छच्च लहु गुरु, छम्मासिय छेद लहुग गुरुगो तु ।
मूलं जहण्णगम्मी, सेवंते पसज्जणं मोत्तुं ॥५१२७॥

पायावच्चपरिग्गहे जहण्णे असण्णिहिए अदिट्ठे ङ्क । दिट्ठे ङ्का । सण्णिहिते अदिट्ठे ङ्का । दिट्ठे र्फु ।

कोटुंवियपरिग्गहे जहण्णए असण्णिहिए – अदिट्ठे र्फु । दिट्ठे र्फा । सण्णिहिते अदिट्ठे र्फा । दिट्ठे छम्मासितो लहुतो छेदो ।

डंडियपरिग्गहिते जहण्णए असण्णिहिते अदिट्ठे छम्मासिओ लहुच्छेदो । दिट्ठे छम्मासिओ गुरू छेदो । सण्णिहिए अदिट्ठे छम्मासितो गुरू छेदो । दिट्ठे मूलं ।

एयं जहण्णपदं अमुयंतेण उदिण्णमोहत्तणतो पडिमं पडिसेवंतस्स पच्छित्तं भणियं पसज्जणं मोत्तुं पसज्जणा णाम दिट्ठे संका भोइगादी, अधवा – गेण्हण कड्ढणादी ॥५१२७॥

चउगुरुग छच्च लहु गुरु, छम्मासियछेदो लहुग गुरुगो य ।
मूलं अणवट्ठप्पो, मज्झिमए पसज्जणं मोत्तुं ॥५१२८॥

मज्झिमे वि एवं चेव चारणविधी, णवरं – चउगुरुगाओ आढत्तं – अणवट्ठे ठाति ॥५१२८॥

तवछेदो लहु गुरुगो, छम्मासिओ मूल सेवमाणस्स ।
अणवट्ठप्पो पारंचिओ य उक्कोस विण्णवणे ॥५१२९॥

उक्कोसे वि एवं चेव चारणविधी, णवरं – चउगुरुगाओ (छल्लहुगातो) आढत्तं पारंचिते ठाति । विण्णवणति पडिसेवणा पत्थणा वा, ॥५१२९॥

इमेण कमेण चारणं करंतेण आलावो कायव्वो –

पायावच्चपरिग्गह, जहण्ण सन्निहित तह असन्निहिते ।
अदिट्ठ दिट्ठ सेवति, आलावो एस सव्वत्थ ॥५१३०॥कंठा

अण्णे चारणियं एवं करेंति – जहण्णे पायावच्चपरिग्गहे असण्णिहिते सण्णिहिते अदिट्ठ दिट्ठ त्ति, एयं पायावच्चपयं अचयंतेण मज्झिमुक्कोसा वि चारियव्वा । पच्छित्तं चउलहुगादि मूलावसाणं ते चेव । एयं कोडुंवियं पि चउगुरुगादि अणवट्ठप्पावसाणं । डंडियं पि छल्लहुगादि पारंचियावसाणं । एत्थ पायावच्चं जहण्णं कोटुंवं मज्झिमं डंडियं उक्कोसं भाणियव्वं, उभयहा वि चारिज्जंतं अविरुद्धं ॥५१३०॥

चोदगो भणति –

जम्हा पढमे मूलं, वितिए अणवट्ठ ततिय पारंची ।
तम्हा ठायंतस्सा, मूलं अणवट्ठ पारंची ॥५१३१॥

"पढमे" त्ति – जहण्णे चउलहुगातो आढत्तं मूले ठाति, मज्झिमे चउगुरुगातो आढत्तं अणवट्ठे ठाति, उक्कोसे छल्लहुयातो आढत्तं पारंचिए ठाति । जइ एवं पडिसेवमाणस्स पायच्छित्तं भवति तम्हा ठायंतस्सेव पारंचियं भवतु । अधवा – ठाणपच्छित्तं वि मूलाणवट्ठपारंचिया भवंतु । किं कारणं ? अवश्यमेव प्रसजनां प्रतीत्य मूलानवस्थाप्यपारंचिकान् प्राप्स्यन्ति ॥५१३१॥

आयरिओ भणइ –

पडिसेवणाए एवं, पसज्जणा होति तत्थ एक्केक्के ।
चरिमपदे चरिमपदं, तं पि य आणादिणिप्फण्णं ॥५१३२॥

"पडिसेवणाए" त्ति – पडिसेवंतस्स अतियाराणुरूवा मूलाणवट्ठपारंचिया एवं संभवंति ।

जति पुण ठितो ण चेव पडिसेवति तो कहं एते भवंतु ? ॥५१३२॥

जति पुण सव्वो वि ठितो, सेवेज्जा होज्ज चरिमपच्छित्तं ।
तम्हा पसंगरहितं, जं सेवति तं ण सेसाइं ॥५१३३॥

जति णियमो होज्ज सव्वो ठायंतो पडिसेवेज्जा तो जुज्जइ तं तुमं भणसि, जेण पुण ण सव्वो ठायंतो पडिसेवति तेण कारणेण पसंगरहियं जं ठाणं सेवति तत्थेव पायच्छित्तं भवति ॥५१३३॥

"[1]पसज्जणा तत्थ होति एक्केक्क" त्ति एक्केक्कातो पायच्छित्तठाणातो पसज्जणा भवति ।

कहं ?, उच्यते – तं साधुं तत्थ ठियं दट्ठुं अविरयओ को वि तस्सेव संकं करेज्जा – "णूणं पडिसेवणाणिमित्तेणं एस एत्थ ठिओ," ताहे दिट्ठे संका भोतिगादी भेदा भवंति ।

अह पसंगं इच्छसि तो इमो पसंगो "[2]चरिमपदे चरिमपदं" ति अस्य व्याख्या –

अदिट्ठातो दिट्ठं, चरिमं तहि संकमादि जा चरिमं ।
अहव ण चरिमाऽऽरोवण, ततो वि पुण पावती चरिमं ॥५१३४॥

चारणियाए गज्जमाणीए अदिट्ठदिट्ठेहिं अदिट्ठपदातो जं दिट्ठपदं तं चरिमपदं भण्णति, ततो चरिमपदातो संका भोतिगादिपदेहिं विभासाए जाव चरिमं पारंचियं ण पावति ।

स्यात् मति :– "अथ दृष्टं कथं संका ?, ननु निःसंकितमेव । उच्यते – दूरेण गच्छंतो दिट्ठे त्ति अविभाविते संका, अहवा – आगच्छंतो वि दीसति [illegible] संका भवति ।

अहवा – "चरिमपदे चरिमपदं" भण्णति । अपच्छिमपदातो पच्छिमपदं चरिमपदं ति । जस्स सण्णिहिया पडिमा गिलाणादी करेज्जा, परितावणमादिपदेहिं चरिमं पावेज्जा । अहवा चरिमारोवण त्ति तृतीयः प्रकारः – जहण्णे चरिमं मूलं, मज्झिमे चरिमं अणवट्ठो, उक्कोसे चरिमं पारंचियं । ततो एक्केक्कपदातो चरिमपदातो संकादिपदेहिं चरिमं पारंचियं पावइ ॥५१३४॥

"[3]तं पि य आणादिनिप्फण्ण" त्ति अस्य व्याख्या –

अहवा आणादिविराहणाओ एक्केक्कियाओ चरिमपदं ।
पावति तेण उ णियमा, पच्छित्तधरा अतिपसंगा ॥५१३५॥

अहवा – आणाअणवत्थमिच्छत्तविराहणाओ एतातो [illegible] विराहणपदं चरिमं, सा विराहणा दुविहा – आयसंजमेसु । तत्थ एक्केक्कातो तं चरिमपदं [illegible] ।

कहं ?, उच्यते – [illegible] दिट्ठे [illegible] चरिमं पावति, [illegible] पुण [illegible] – [illegible] । एवं चरिमं पावति । [illegible] जं पि [illegible] – [illegible] पसंगनिवारणं ॥५१३५॥

१ गा० ५१२८ । २ गा० ५१२९ । ३ गा० ५१३० ।

णत्थि खलु अपच्छित्ती, एवं ण य दाणि कोइ मुंचेज्जा ।
कारि-अकारी समता, एवं सति राग-दोसा य ॥५१३६॥

एवं नास्ति कश्चिदप्रायश्चित्ती, न वा कश्चिदसेवमानोऽपि कर्मबन्धान्मुच्यते, जो वि पडिसेवति तस्स वि तं, जो वि ण पडिसेवति तस्स वि तं । एवं कारि अकारिसमभावता भवति । एवं प्रायश्चित्तसंभवे सति राग दोससंभवो य भवति ॥५१३६॥

"तं पि य आणादिणिफण्णं" पुनरप्यस्यैव पदस्य व्याख्या –

मुरियादी आणाए, अणवत्थ परंपराए थिरकरणं ।
मिच्छत्तं संकादी, पसज्जणा जाव चरिमपदं ॥५१३७॥

सव्वमेयं पच्छित्तं आणादिपदेहिं णिप्फज्जति, अवराहपदे पवत्तंतो तित्थकराणाभंगं करेति तत्थ से चउगुरुं, आणाभंगे मुरियदिट्ठंतो कज्जति ।

तम्मि चेव काले अणवत्थपदे वट्टति तत्थ से ङ्क । अणवत्थतो य परंपरेणं संजमवोच्छेदो भवति ।

तम्मि चेव काले देसेण मिच्छत्तमासेवति, परस्स वा मिच्छत्तं जणेति, थिरं वा करेति, तत्थ से ङ्क ।

अवराहपदे पुण वट्टंतो विराहणापदं वट्टति चेव तत्थ परस्स संकं जणेति जहेयं मोसं तहऽण्णं पि । अहव संकाभोइगादी पसज्जणा चउलहुगादी जाव चरिमं पदं पावति ॥५१३७॥

एत्थ चोदक आह–

अवराहे लहुगतरो, किं णु हु आणाए गुरुतरो दंडो ।
आणाए च्चिय चरणं, तब्भंगे किं न भग्गं तु ॥५१३८॥

चोदगो भणति – "अवराहपदे चउलहुं पच्छित्तं आणाभंगे चउगुरुं दिट्ठं । एवं कहं भवति, णणु अवराहपदे गुरुतरेण भवियव्वं" ?

आयरियो आह – "आणाए च्चिय" पच्छद्धं । परमत्थओ आणाए च्चिय चरणं ठियं, आणा दुवालसंगं गणिपिडगं ति काउं, तव्वतिक्कमे तब्भंगे किं ण भग्गं भवति ?, किं च लोइया वि आणाए भंगे गुरुतरं डंडं करेंति (पवत्तेंति) ।

एत्थ दिट्ठंतो मुरियादि । मुरिय त्ति मोरपोसगवंसो चंदगुत्तो । आदिग्गहणातो अण्णे-रायाणो । ते आणाभंगे गुरुतर डंडं पवत्तेंति । एवं अम्ह वि आणा बलिया ॥५१३८॥

इमं णिदरिसणं –

भत्तमदाणमडंते, आणट्ठवणंब छेत्तु वंसवती ।
गविसण पत्त दरिसिते, पुरिसवति सबालडहणं च ॥५१३९॥

चंदगुत्तो मोरपोसगो त्ति जे अभिजाणंति खत्तिया ते तस्स आणं परिभवंति ।

चाणक्कस्स चिंता–आणाहीणो केरिसो राया ? कहं आणातिक्खो होज्ज ? त्ति । तस्स य चाणक्कस्स कप्पडियत्ते अडंतस्स एगम्मि गामे भत्तं न लद्धं । तत्थ य गामे बहू अंबा वंसा य । तस्स य गामस्स पडिणिविट्ठेणं आणट्ठवणणिमित्तं लिहियं पेसियं इमेरिसं "आम्रान् छित्वा वंशानां

तत्थ वीमंसाए–"किं एस सक्केति खोभेउं ण व" त्ति पडिमाए अणुपविसित्ता काणऽच्छी करेज्ज, थणुक्कंपं (उक्कंपणं) वा करेज्ज, आलावं वा करेज्ज – हे अमुग णाम ! कुसलं ते, निमंतणं वा करेज्ज — मए समं सामि ! भोगा भुंजसु. एवमादिएहिं पलोभेज्जा । अहवा – पलोभेति थणकक्खोरुअद्धप्प-दंसिएहिं, कडक्खच्छिविकारणिरिक्खितेहिं ॥५१४४॥

काणच्छिमाइएहिं, खोभियद्धाति तम्मि भद्दा तु ।
णासति इतरो मोहं, [1]सुवण्णकारेण दिट्ठंतो ॥५१४५॥

जाहे काणच्छिमादिएहिं आगारेहिं खोभितो ताहे गिण्हामि त्ति उद्धातितो, ताहे सा देवता भद्दा णासेति, इतरो णाम सो खोभियसाधू तीए अदंसणं गताए सम्मोहं गतो पडितो तं दट्ठुमिच्छति । कत्तो गयासि ?, विलवति, पण्णविज्जंतो वि पण्णवणं ण गेण्हति । जहा अणंगसेणसुवण्णगारो ॥५१४५॥ एसा भद्दविमंसा ।

इदाणिं "[2]पडिणीयट्ठताए" त्ति –

वीमंसा पडिणीता, विद्दरिसणऽखित्तमाइणो दोसा ।
असंपत्ती संपत्ती, लग्गस्स य कड्ढणादीणि ॥५१४६॥

पडिणीया वि काणच्छिमातिएहिं वीमंसेउं, एत्थ वीमंसा णाम केवला, जाहे खुभिओ धातितो गिण्हामि त्ति ताहे सा पडिणीया "असंपत्ति" त्ति जाव ण चेव गेण्हति हत्थादिणा ताव विद्दरिसणं विकृतरूपं दर्शयति ।

अहवा–विद्दरिसणं अलग्गमेव लोगो लग्गं पासति, खित्तमादि वा करेज्ज, मारेज्ज वा ।

अधवा–सा पडिणीया पडिभोगसंपत्ति काउं तत्थेव लाएज्ज स्वानादिवत्, पडिणीयदेवतापओगओ नेव लेप्पगसामिणा अण्णेण वा दिट्ठे गेण्हणकड्ढणादिया दोसा करेज्ज ॥५१४६॥

पंता उ असंपत्ती, तहेव मारेज्ज खित्तमादी वा ।
संपत्तीइ वि लाएतु, कड्ढणमादीणि कारेज्ज ॥५१४७॥ गतार्था

इदाणिं भोगत्थिणी –

भोगत्थिणी विगते, कोउयम्मि खित्तादि दित्तचित्तं वा ।
दट्ठूण व सेवंतं, देउलसामी करेज्ज इमं ॥५१४८॥

भोगत्थिणी देवता काणच्छिमादिएहिं उवलोभेत्ता खुभिएण सह भोगे भुंजित्ता विगयभोगकोतुका मा अण्णाए सह भोगे भुंजउ त्ति खित्तादिचित्तं करेज्जा । अहवा–तीए सह सेवणं करेंतं दट्ठूणं देउलसामी अहाभावेण इमं करेज्ज ॥५१४८॥

तं चेव णिट्ठवेंती, बंधण णिच्छुभण कडगमद्दो य ।
आयरिए गच्छंमि य, कुल गण संघे य पत्थारो ॥५१४९॥

तं सेवंतं दट्ठुं कुद्धो णिट्ठिवेति त्ति – मारेज्जा, पभू वा सयं बंधिज्जा, अप्पभू वि पभुणा बंधाविज्जा । अधवा – वसधी गाम नगर देस रज्जाओ वा णिच्छूभेज्जा । "कडगो" त्ति खंधावारो । जहा सो

---

[1] अणंगसेणेण, इत्यपि पाठः । [2] गा० ५१४४ ।

परविसयमोइण्णो एतस्स रण्णो अभिणिवेसेण अकारिणो वि णागरगादि सव्वे विणासेइ, एवं एतेण [illegible] सव्वो वालवुड्ढादी जो जत्थ दीसइ सो तत्थ मारिज्जति । एस कडगमद्दो ।

अथवा – इमो कडगमद्दो, सह तेण कारिणा, मोत्तुं वा तं कारि (गं), जो पावरिओ गच्छो वा कुलं गणो वा तं वावादेति, तत्थ वा ठाणे जो संघो तं वावादेति ॥५१४९॥

अथवा इमं कुज्जा –

गेण्हणे गुरुगा छम्मास कड्ढणे छेदो होति ववहारे ।
पच्छाकडम्मि मूलं, उड्डहण-विरंगणे णवमं ॥५१५०॥

पडिसेवंते गहिते ङ्क । हत्थे वत्थे वा घेत्तुं कड्ढिते णीते रायकुलं फ्‌ । तेण पडिकड्ढिते छो । ववहारे छेदो । पच्छाकडो त्ति जितो मूलं । उड्डाहे कते विरंगिते वा अणवट्ठो भवति ॥५१५०॥

उद्दावण णिव्विसए, एगमणेगे पदोस पारंची ।
अणवट्ठप्पो दोसु य, दोसु य पारंचिओ होति ॥५१५१॥

उद्दविते णिव्विसए वा कते एगमणेगेसु वा पदोसे कते सो पडिसेवगो पारंचियं पावति । उड्डहण विरंगण एतेसु दोसु अणवट्ठो भवति, णिव्विसतोद्दवणेसु दोसु पदेसु पारंचिय ॥५१५१॥

अथवा – पदुट्ठो इमं कुज्जा –

एयस्स णत्थि दोसो, अपरिक्खितदिक्खगस्स अह दोसो ।
इति पंतो णिव्विसए, उद्दवण विरंगणं व करे ॥५१५२॥

एयस्स णि पडिसेवगस्स ण दोसो, जो अपरिक्खितं दिक्खेति तस्स एस दोसो, इति एवं चिंतेउं पंतो आयरियं णिव्विसयं करेज्जा, उद्दवेज्ज वा, कण्ण णास-लयणुक्खायणं वा करेज्ज, एवं विरूवकरणं विरंगणं ॥५१५२॥

अहवा सण्णिहिते इमे दोसा –

तत्थेव य पडिबंधो, अदिट्ठ गमणादि वा अणेंतीए ।
एते अण्णे य तहिं, दोसाओ होंति सण्णिहिए ॥५१५३॥

तत्थेव पडिबद्धा पडिबंधं करेज्जा, अदिट्ठे त्ति – [illegible] अदिट्ठे त्ति इमे दोसा भवंति ।

अथवा – सा [illegible] ॥५१५३॥

सागारिओ पुण सण्णिहितासण्णिहिताणो इमम्मि होज्जा –

कट्ठे पोत्ते चित्ते, दंतकम्मे य सेलकम्मे य ।
दिट्ठिप्पत्ते रूवे, भिन्नाभिन्नस्स भंगणया ॥५१५४॥

[illegible] ॥५१५४॥

तासिं पुण सण्णिहियाणं देवयाणं विण्णवणं पडुच्च इमो पगारो भावो होज्जा –

सुहविण्णप्पा सुहमोइया य सुहविण्णप्पा य होंति दुहमोया ।

दुहविण्णप्पा य सुहा, दुहविण्णप्पा य दुहमोया ॥५१५५॥

एतीए गाहाए चउभंगो गहितो ॥५१५५॥

तत्थ पढमभंगे इमं उदाहरणं –

सोपारयम्मि णयरे, रण्णा किर मग्गिश्रो य णिगमकरो ।

अकरो त्ति मरणधम्मो, वालतवे धुत्तसंजोगो ॥५१५६॥

सोपारयम्मि णगरे णेगमो त्ति वाणियजणो वसति । ताण य पंच कुडुंवियसयाणि वसंति ।

तत्थ य राया मंतिणा वुग्गाहितो – "एते रूवगकरं मग्गिज्जंति ।"

रण्णा मग्गिता । ते य 'अकरे' त्ति पुत्ताणुपुत्तिश्रो करो भविस्सई, ण देमो ।

रण्णा भणिया – "जति ण देह, तो इमम्मि गिहे अग्गिपवेसं करेह" । ततो तेहिं मरण-धम्मो ववसितो । "ण य णाम करपवत्तिं करेमो", सव्वे अग्गिं पविट्ठा । ॥५१५६॥

पंचसयभोगि अगणी, अपरिग्गह सालभंजि सिंदूरे ।

तुह मज्झ धुत्तपुत्ताइ अवण्णे विज्जखीलणता ॥५१५७॥

तेसिं पंच महिलसताइं, ताणि वि अग्गिं पविट्ठाणि । ताओ य वालतवेण पंच वि सयाइ अपरिग्गहिया जाता । तेहिं य णिगमेहिं तम्मि चेव णगरे सिंदूरं सभाघरं कारियं । तत्थ पंच सालिभंजिता सता । ते तेहिं देवतेहिं य परिग्गहिता ।

ताओ य देवताओ ण कोइ देवो इच्छइ, ताहे धुत्तेहिं सह संपलग्गाओ । ते धुत्ता तस्संवंधे भंडणं काउमाढत्ता, एसा ण तुहं मज्झं, इतरो वि भणाति – मज्झं ण तुहं । जा य जेण धुत्तेण सह अच्छइ सा तस्स सव्वं पुव्वभवं साहति ।

ततो ते भणंति – हरे ! अमुगणामधेया एस तुज्झ माता भगिणि वा इदाणिं अमुगेण सह संपलग्गा, ता य एगम्मि पीतिं ण वंधंति, जो जो पडिहाति तेण सह अच्छंति । तं च सोउं अयसो त्ति काउं विज्जावातिएणं खीलावियातो ॥५१५७॥ गतो पढम भंगो ।

इदाणिं तिण्णि वि भंगा एगगाहाए वक्खाणेति –

वितियम्मि रयणदेवय, तइए भंगम्मि सुइयविज्जातो ।

[1]गोरी-गंधारीया, दुहविण्णप्पा य दुहमोया ॥५१५८॥

वितियभंगे रयणदेवता उदाहरणं । अप्पड्ढियत्तणतो कामाउरत्तणओ य सा सुहविण्णवणा, सव्वसुहसंपायत्तणओ य सा दुहमोया ।

---

१ गंधाराई, इत्यपि पाठः ।

ते पागतिता खेत्ते खलादिसु कम्मक्खणिया पडिमाण उदंतं ण वहंति, तेण तत्थ कतो वि अवराहो ण णज्जति, ण य तेसिं संतियासु देवद्रोणीसु रक्खवालो भवति, ण वा दारपालो भवति । इतरत्थ त्ति राय-कुडुंबिएसु धुवो दोसो भवइ ॥५१६२॥

तुल्ले मेहुणभावे, णाणत्ताऽऽरोवणा य एमेव ।
जेण णिवे पत्थारो, रागो वि य वत्थुमासज्ज ॥५१६३॥

पागतिय-कुडुंबिय-डंडिएसु तुल्ले मेहुणभावे अवराहणाणत्तणओ चेव पायच्छित्ते णाणत्तं । पायावच्च-परिग्गहातो कोडुंबियपरिग्गहे कालगुरुगा, डंडियपरिग्गहे तवगुरुगा भणिता । अण्णं च कोडुंबिय-डंडिएसु पत्थारदोसतो अधिकतरं पच्छित्तं ।

अहवा – वत्थुविसेसओ रागविसेसो, रागविसेसओ पच्छित्तविसेसो भवइ ॥५१६३॥

जतो भण्णति –

जतिभागगया मत्ता, रागादीणं तहा चयो कम्मे ।
रागादिविधुरता वि हु, पायं वत्थूण विहुरत्ता ॥५१६४॥

जारिसी रागभागमात्रा मंदा मध्या तीव्रा वा तारिसी मात्रा कर्मबंधो भवति ।

अहवा – जावतिया रागविसेसा तावतिया कम्मानुभागविसेसा भवति – तुल्या इत्यर्थः ।

तेण भण्णति – जतियं भागं गता रागमात्रा । मात्राशब्दः परिमाणवाचकः । तन्मात्रः कर्मबन्धो भवतीत्यर्थः । "रागाइ विहुरया वि हु"–रागादिविधुरता नाम विपमत्वं । हु शब्दो यस्मादर्थे । यत्सभुत्थो रागः प्रतिमादिके तस्य यस्मात् प्रतिमादिवस्तुविधुरता तस्माद्रागादिविधुरत्वं भवति ॥५१६४॥

अयमन्यप्रकारः विधुरत्वप्रदर्शने –

रण्णो य इत्थिया खलु, संपत्तीकारणम्मि पारंची ।
अमच्ची अणवट्ठप्पो, मूलं पुण पागयजणम्मि ॥५१६५॥

रण्णो जा इत्थी तीए सह मेहुणसंपत्ती, एतेण मेहुणसंपत्तिकारणेण पारंचियं पायच्छित्तं । अमच्चिए अणवट्ठो । पागतिए मूलं । एयं पच्छित्ते णाणत्तं वत्थुणाणत्ताओ चेव भणियं ॥५१६५॥ दिव्वं गयं ।

इदाणिं माणुस्सं भण्णइ –

माणुस्सगं पि तिविहं, जहण्णयं मज्झिमं च उक्कोसं ।
पायावच्च कुडुंबिय, दंडिगपारिग्गहं चेव ॥५१६६॥

जहण्णादिगं तिविधं पुणो एक्केक्कं पायावच्चातिपरिग्गहे भाणियव्वं ।

उक्कोस माउ-भज्जा, मज्झं पुण भइणि-धूयमादीओ ।
खरियादी य जहण्णा, पगयं सचि (जि) तेतरे देहे ॥५१६७॥

माता अप्पणो अगम्मा, अण्णस्स य तं ण देति, अतो तीए सह जं मेहुणे तिव्वरागज्झवसाणं उप्पज्जति तं उक्कोसं ।

भज्जं अण्णस्स ण देति अतो तम्मि मुच्छितो उक्कोसं ।

छेदो मूलं च तहा, अणवट्ठप्पो य होति पारंची ।
एवं दिट्ठमदिट्ठे, सेवंते पसज्जणं मोत्तुं ॥५१७२॥

पायावच्चपरिग्गहे जहण्णे अदिट्ठे ः ः । दिट्ठे ः ः ः ।

कोटुंविए परिग्गहे जहण्णे अदिट्ठे ः ः ः । दिट्ठे छेदो ।

डंडियपरिग्गहे जहण्णे अदिट्ठे छेदो । दिट्ठे मूलं ।

पायावच्चपरिग्गहे मज्झिमे अदिट्ठे छग्गुरुगा । दिट्ठे छेदो ।

कोडुंवियपरिग्गहे मज्झिमे अदिट्ठे छेदो । दिट्ठे मूलं ।

डंडियपरिग्गहे मज्झिमे अदिट्ठे मूलं । दिट्ठे अणवट्ठो ।

पायावच्चपरिग्गहे उक्कोसए अदिट्ठे छेदो । दिट्ठे मूलं ।

कुडुंबियपरिग्गहे उक्कोसए अदिट्ठे मूलं । दिट्ठे अणवट्ठो ।

डंडियपरिग्गहे उक्कोसए अदिट्ठे अणवट्ठो । दिट्ठे पारंचियं ।

अहवा – पायावच्चे जहण्णमज्झिमुक्कोसे अदिट्ठदिट्ठेसु चउगुरुगादि मूले ठायति ।

कोडुंविए जहण्णादिगे छग्गुरुगादि अणवट्ठे ठायति ।

डंडियपरिग्गहे जहण्णादिगे छेदादि पारंचिए ठाति ॥५१७२॥

चोदगाह –

जम्हा पढमे मूलं, बितिए अणवट्ठ ततिय पारंची ।
तम्हा ठायंतस्सा, मूलं अणवट्ठ पारंची ॥५१७३॥ पूर्ववत्

आचार्य आह –

पडिसेवणाए एवं, पसज्जणा होति तत्थ एक्केक्के ।
चरिमपदे चरिमपदं, तं चिय आणादिणिप्फण्णं ॥५१७४॥ पूर्ववत्

ते चेव तत्थ दोसा, मोरियआणाए जे भणित पुव्विं ।
आलिंगणादि मोत्तुं, माणुस्से सेवमाणस्स ॥५१७५॥

ते चेव पुव्वभणिता अणवत्थादिगा दोसा भवंति । "तत्थ" त्ति माणुस्से ।

चोदगेण चोदितं – "कीस आणाए गुरुतरो डंडो ?" आयरिएण मोरियआणाए दिट्ठंतं काउं तित्थकराणा गुरुतरी कता । एवं जहा पुव्वं भणियं तहा भाणियव्वं ।

दिव्वे लेप्पगे आलिंगणभंगदोसा ते मोत्तुं सेसा दोसा माणुसं सेवमाणस्स सव्वे ते चेव भाणियव्वा ॥५१७५॥

इदमेव फुडतरमाह –

आलिंगंते हत्थादिभंजणे जें तु पच्छकम्मादी ।
ते इह णत्थि इमे पुण, णक्खादिविछेयणे सूया ॥५१७६॥

लेप्पगं आलिंगंतस्स जे हत्थादिभंगे पच्छाकम्मादिया दोसा भवंति ते एत्थ देहजुते ण भवंति । इमे देहजुए दोसा भवंति — इत्थी कामातुरत्तणओ णक्खेहिं ता छिंदेज्ज, दंतेहिं वा छिंदेज्ज, तेहिं सो गुरुअगि सपक्खेण वा परपक्खेण वा जहा एस सेवगो त्ति ॥५१७६॥

माणुसीसु वि इमे चउरो विकप्पा —

सुहविण्णप्पा सुहमोइया य सुहविण्णप्पा य होंति दुहमोया ।
दुहविण्णप्पा य सुहा, दुहविण्णप्पा य दुहमोया ॥५१७७॥

भंगचउक्कं कंठं ।

चउसु वि भंगेसु जहक्कम्मं इमे उदाहरणा —

खरिया महिड्ढिगणिया, अंतेपुरिया य रायमाया य ।
उभयं सुहविण्णवणे, सुमोय दोहिं पि य दुहाओ ॥५१७८॥

खरिया सव्वजणसामण्णं ति सुहविण्णवणा, परिपेलवसुहलवासादत्तणतो सुहमोया पढमभंगिल्ला ।

महिड्ढिगणिया वि गणियत्तणतो चेव सुहविण्णप्पा ओव्वणरूवविब्भमहत्थादिभावजुत्तत्तणतो य भावबंधकारिणि त्ति दुहमोया बितियभंगिल्ली ।

ततियभंगे अंतेपुरिया । तत्थ दुप्पवेसं भयं च, अतो दुहविण्णवणा, अवायबहुलत्तणओ सुहमोया ।

चउत्थे भंगे रण्णो माता । सा गुरुत्तिणया भयं च सव्वस्स य गुरुठाणे पूयणिज्ज त्ति दुहविण्णवणा, सव्वसुहसंपायकारिणी अवाए य रक्खति जम्हा तेण दुहमोया । पच्छद्धे ण एते चेव जहक्कम्मं चउरो भंगा गहिया ॥५१७८॥

चोदगो पुच्छइ —

तिण्ह वि कतरो गुरुओ, पागतिय कुडुंबि डंडिए चेव ।
साहस असमिक्खभए, इतरे पडिपक्ख पभु राया ॥५१७९॥

कंठा पूर्ववत् । गतं माणुस्सगं ।

इदाणि तेरिच्छं —

तेरिच्छं पि य तिविहं, जहण्णयं मज्झिमं च उक्कोसं ।
पायावच्च कुडुंबिय, दंडियपारिग्गहं चेव ॥५१८०॥

जहण्णादियं तिविहं, एक्केक्कं पायावच्चादि[illegible] भाणियव्वं ।

एलिग अमिला जहण्णा, खरि महिसी मज्झिमा वलवमाई ।
गोणि करेणुक्कोसं, पगतं मज्झिमए होति ॥५१८१॥

[illegible]

अधवा – अइयअभिलासु णिरपायत्तणतो सुहपावणियासु ण तिव्वऽज्झवसाओ अतो जहण्णं।
खरि-महिसिमादियासु सावयासु जो परिभोगऽज्झवसाओ स तिव्वतरो अतो मज्झिमं।
गोणि-कणेरुसु, कणेरु त्ति हत्थिणी, लोगगरहियसावयासु जो अज्झवसाओ तिव्वतमो अतो उक्कोसं।
फरिसओ वा विसेसो भाणियव्वो। तिरियाण वि पडिमासु णाधिकारो, देहेण अधिकारो। तं देहं दुविधं – सचेयणं अचेयणं वा ॥५१८१॥

सामण्णतो देहजुए इमं पच्छित्तं ठायमाणस्स –

चत्तारि य उग्घाया, जहण्णिए मज्झिमे अणुग्घाया।
छम्मासा उग्घाया, उक्कोसे ठायमाणस्स ॥५१८२॥

पायावच्चपरिग्गहे जहण्णए ठाति ः ः। मज्झिमए ः ः। उक्कोसए फ्॰। एवं चेव कोडुंबिए डंडिए य ॥५१८२॥

इमो विसेसो –

पढमिल्लुगम्मि ठाणे, दोहि वि लहुगा तवेण कालेणं।
बितियम्मि य कालगुरू, तवगुरुगा होंति तइयम्मि ॥५१८३॥

पढमिल्लुगं ठाणं पागतितं, बितिय ठाणं कोडुंबियं, ततियं डंडियं, सेसं कंठं। ठाणपच्छित्तं गतं तिरिएसु।

इदाणिं तिरिएसु पडिसेवणापच्छित्तं –

चउरो लहुगा गुरुगा, छेदो मूलं जहण्णए होति।
चउगुरुग छेद मूलं, अणवट्ठप्पो य मज्झिमए ॥५१८४॥

छेदो मूलं च तहा, अणवट्ठप्पो य होइ पारंची।
एवं दिट्ठमदिट्ठे, सेवंते पसज्जणं मोत्तुं ॥५१८५॥

पायावच्चपरिग्गहे जहण्णए अदिट्ठे पडिसेवंतस्स ङ्क। दिट्ठे ङ्का।
कोडुंबियपरिग्गहे जहण्णए पडिसेवंतस्स अदिट्ठे चउगुरुं। दिट्ठे सेवंतस्स छेदो।
डंडिए जहण्णए अदिट्ठे छेदो। दिट्ठे मूलं।
पायावच्चपरिग्गहे मज्झिमए अदिट्ठे ण्का। दिट्ठे छेदो।
कोडुंबिए मज्झिमए य अदिट्ठे छेदो। दिट्ठे मूलं।
डंडियपरिग्गहे मज्झिमपरिग्गहे अदिट्ठे मूलं। दिट्ठे अणवट्ठो।
पायावच्चपरिग्गहे उक्कोसे अदिट्ठे छेदो। दिट्ठे मूलं।
कोडुंबिए उक्कोसे अदिट्ठे मूलं। दिट्ठे अणवट्ठो।
दंडिए उक्कोसे अदिट्ठे अणवट्ठो। दिट्ठे पारंचियं। एवं पच्छित्तं पसंगविरहियं भणियं ॥५१८५॥

चोदगाह –

जम्हा पढमे मूलं, बितिए अणवट्ठ तइय पारंची ।
तम्हा ठायंतस्सा, मूलं अणवट्ठ पारंची ॥५१८६॥ कंठा

आचार्याह –

पडिसेवणाए एवं, पसज्जणा तत्थ होइ एक्केक्के ।
चरिमपदे चरिमपदं, तं पि य आणादिणिप्फण्णं ॥५१८७॥ कंठा

तं चेव तत्थ दोसा, सेसियआणाए जे भणित पुव्विं ।
आलवणादी मोत्तुं, तेरिच्छे सेवमाणस्स ॥५१८८॥

पूर्ववत् पुव्वद्धं कंठं । माणुसित्थीसु जहा आलवणादिविब्भमा भवंति तहा तिरिक्खीसु णत्थि । अतो ते आलवणादि तिरिक्खीसु मोत्तुं, सेसा आयसंजमविराहणादिदोसा सव्वे समवतरंति ॥५१८८॥

जह हास-खेड्ड-आकार-विब्भमा होंति मणुयइत्थीसु ।
आलावा य बहुविहा, ते णत्थि तिरिक्खइत्थीसु ॥५१८९॥ कंठा

विण्णवणे इमो चउभंगो –

सुहविण्णप्पा सुहमोइया य, सुहविण्णप्पा य होंति दुहमोया ।
दुहविण्णप्पा य सुहा, दुहविण्णप्पा य दुहमोया ॥५१९०॥

चउभंगरयणा गंठा भावेत्ता ॥५१९०॥

चउभंगे जहसंखं इमे उदाहरणा –

असिलादी उभयसुहा, अरहण्णगमादिमक्कडि दुभोगा ।
गोणादि ततियभंगे, उभयदुहा गोहि-वग्घीया ॥५१९१॥

पढमभंगे सुहसहत्तणे निव्वाणत्तणात् सुहविण्णवणा, भोगसमये [illegible] सुहभोगा ।

बितियभंगे [illegible] सुहविण्णवणा, [illegible] दुहमोया । [illegible] ।

ततियभंगे गोणादि [illegible] । [illegible] दुहविण्णवणा, [illegible] सुहमोया ।

चउत्थभंगे [illegible] दुहविण्णवणा, [illegible] दुहमोया ॥५१९१॥

चोदगो पुच्छति – [illegible] ?

आयरिओ आह –

जति ता सणप्फतीसु, मेहुणसन्नं तु पावती पुरिसो ।
जीवितदोच्चा जहियं, किं पुण सेसासु जातीसु ॥५१९२॥

सव्वे जे [1]णहारा ते सणप्फया भण्णंति, इह सीही घेत्तव्वा । जइ ताव सीहीसु जीवितंतकरीसु पुरिसो मेहुणं पावति, किं पुण सेसासु अमिलादिजातिसु त्ति ।

एत्थ दिट्ठंतो – एक्का सीही खुड्डलिया चेव गहिता, सा वंधणत्था चेव जोव्वणं पत्ता। रितुकाले मेहुणत्थी, सजातिपुरिसं अलभंती अहावत्तीतो एक्केणं पुरिसेणं सागारियठाणे छिक्का, सा य चाडुं काउमाढत्ता, सा य तेण अप्पसागारिए पडिसेविता । तत्थ तेसिं दोण्ह वि संसाराणुभावतो अणुरागो जातो । तेण सा वंधणा मुक्का । सा तं पुरिसं घेत्तुं पलाता अडविं पविट्ठा । तं पुरिसं गुहाए छोढुं आणेउं पोग्गले देति । सो वि तं पडिसेवति ॥५१९२॥ एयं पुरिसाणं भणियं ।

इदाणिं संजतीणं भण्णइ –

एसेव गमो णियमा, णिग्गंथीणं पि होति नायव्वो ।
पुरिसपडिमाओ तासिं, साणम्मि य जं च अणुरागो ॥५१९३॥

संजतीण वि एमेव सव्वं दट्ठव्वं, णवरं – लेप्पगे दिव्वपुरिसपडिमाओ । माणुसे मणुयपुरिसा । तेरिच्छे तिरियपुरिसा य दट्ठव्वा ।

तेरिच्छे साणदिट्ठंतो य कायव्वो –

एक्का अगारी अवाउडा काइयं वोसिरंती विरहे साणेण दिट्ठा । सो य साणो पुच्छं [2]लोलंतो चाडुं करेंतो उवासणाए अल्लीणो । सा अगारी चिंतेइ – "पेच्छामि एस किं करेति" त्ति । सा तस्स पुरतो सागारियं अभिमुहं काउं हत्थेहिं जाणुएहि य अधोमुही ठिता । तेण सा पडिसेविता । तीए अगारीए तत्थेव साणे अणुरागो जातो । एवं मिग-छगल-वाणरादी वि अगारिं अभिलसंति । जम्हा एवमादि दोसा तम्हा सागारिए ण वसियव्वं ॥५१९३॥

इमं वितियपदं –

अद्धाणणिग्गयादी, तिक्खुत्तो मग्गिऊण असतीए ।
गीयत्था जयणाए, वसंति तो दव्वसागरिए ॥५१९४॥

अद्धाणणिग्गय त्ति अद्धाणप्रतिपन्नाः तिक्खुत्तो तिन्नि वारा अण्णं सुद्धं वसहिं मग्गियं । "असति त्ति अलभंता ताहे दव्वसागारियवसधीए जयणाए वसंति ।

का य जयणा ?, गीयसद्दाइसु उच्चेण सद्देण सज्झायं करेंति, झाणलद्धी वा झाणं झायति ॥५१९४॥

इमो भावसागारियस्स अववातो –

अद्धाणणिग्गयादी, वासे सावयभए व तेणभए ।
आवरिया तिविहे वी, वसंति जतणाए गीयत्था ॥५१९५॥

---

[1] णाहरा इत्यपि । [2] चालंतो, इत्यपि पाठः ।

अंतो गामादीण सुद्धवसहिं अलभंता बाहिं गामस्स निवसंति । इमेहिं कारणेहिं – सागं सागारि, अहवा – बाहिं सीहमादिसावयभयं, सरीरोवहितेणगभयं वा, ताहे अंतो चेव भावसागारिए वसंति । तत्थ तिविधा वि पडिमाओ दिव्वा माणुसा तिरिया य वत्थमादिएहिं आवरेंति, अंतरे वा कडगचिलिमिलिं देंति । एवं गीयत्था जयणाए वसंता सुज्झंति ॥५१९५॥

बहुधा दव्वभावसागारियसंभवे इमं भण्णति –

जहिं अप्पतरा दोसा, आभरणादीण दूरतो य ठिता ।
चिलिमिणि णिसि जागरणं, गीते सज्झाय-झाणादी ॥५१९६॥

अप्पतरदोसे गीयत्था ठायंति, आभरणादुज्जभत्तादीण य अगीयत्था दूरतो ठविज्जंति, तं सिग अप्पणा ठायंति, अंतरे वा कडगचिलिमिलिं देंति. रातो य जागरणं करेंति, गीयत्था इत्थिमादिगीतादिसद्देसु य सज्झायं करेंति, झाणं वा झायंति ॥५१९६॥

एसा खलु ओहेणं, वसही सागारिया समक्खाया ।
एत्तो उ विभागेणं, दोण्ह वि वग्गाण वोच्छामि ॥५१९७॥

जं पुरिसइत्थीण सामण्णतो अविभागेण सागारियं एस ओहो भण्णइ । सेसं कंठं ।

इमो कप्पसुत्ते (प्रथमोद्देशके सूत्र २६, २७, २८, २९) विभागो भणितो –

णो कप्पइ णिग्गंथाणं इत्थिसागारिए उवस्सए वत्थए ।

कप्पइ णिग्गंथाणं पुरिससागारिए उवस्सए वत्थए ।

णो कप्पति णिग्गंथीणं पुरिससागारिए उवस्सए वत्थए ।

कप्पइ णिग्गंथीणं इत्थिसागारिए उवस्सए वत्थए ॥५१९८॥

एतेण सुत्तकमो इमो भणितो –

समणाणं इत्थीसुं, ण कप्पति कप्पती य पुरिसेसुं ।
समणीणं पुरिसेसुं, ण कप्पति कप्पती थीसुं ॥५१९८॥

इत्थीसागारिए उवस्सयम्मि सच्चेव इत्थिगा होंति ।
देवी मणुय तिरिक्खी, सच्चेव परज्जणा सव्व ॥५१९९॥

[illegible] इत्थीए सागारिए उवस्सए ण कप्पइ [illegible] ॥५१९९॥

चोदगाह –

जति सच्चेव य इत्थी, सोही य परज्जणा य सच्चेव ।
सुत्तं तु किमारद्धं, चोदग ! सुण कारणं एत्थं ॥५२००॥

[illegible]

आचार्य आह – हे चोदग ! एत्थ कारणं सुणसु –

पुव्वभणितं तु जं एत्थ, भण्णती तत्थ कारणं अत्थि ।
पडिसेहे अणुण्णा, कारणविसेसोवलंभो वा ॥५२०१॥

पुव्वद्धं कंठं । जे पुव्वं अणुजाणंतेण अत्था भणिता ते चेवऽत्ये पडिसेधंतो भणइ, ण दोसो ।

अहवा – जे पुव्वं पडिसेधंतो अत्था भणिता, ते चेव अणुण्णं करेंतो दंसेति, ण दोसो ।

अहवा – "कारणं" ति हेउं दरिसेंतो भणाति, ण दोसो ।

अहवा – विसेसोवलंभं वा दरिसंतो पुव्वभणियं भणाति, ण दोसो ॥५२०१॥

किं च –

ओहे सव्वणिसेहो, सरिसाणुण्णा विभागसुत्तेसु ।
जयणाहेतुं भेदो, तह मज्झत्थादयो वा वि ॥५२०२॥

ओहसुत्ते सामण्णतो सव्वं चेव णिसिद्धं, विभागसुत्ते पुण सपक्खे अणुण्णा, जहा पुरिसाण पुरिससागारिए कप्पति, इत्थीणं इत्थीसु कप्पइ ।

अहवा – जयणा जहा पुरिसेसु इत्थीसु वा कता तं दरिसंतेण विभागसुत्ते भेदो कतो ।

अहवा – पुरिसेसु इत्थीसु य मज्झत्थादयो विसेसा दंसेहामि त्ति विभागसुत्तसमारंभो ।

अथवा – अणंतरसुत्ते सागारियं अत्थओ भणियं । इह पुण त चेव सुत्तेण णियमेंति, विसे – सोवलंभो वा इमो पुरिस-नपुंसग-इत्थीसु ॥५२०२॥

तत्थ पुरिसेसु इमं –

पुरिससागारिए उवस्सयम्मि [1]चउरो मासा हवंति उग्घाया ।
ते वि य पुरिसा दुविहा, सविकारा निव्विकारा य ॥५२०३॥

जइ पुरिससागारिए उवस्सए ठाति तो चउलहुअं । ते य पुरिसा दुविधा—सविकारा निव्विकारा य ॥५२०३॥

तत्थ सविकारा इमे –

रूवं आभरणविहिं, वत्था-ऽलंकार-भोयणे गंधे ।
आओज्ज णट्ट णाडग, गीए य मणोरमे सुणिया ॥५२०४॥

तत्थ रूवं उद्वर्तनस्नानजंघास्वेदकरणणहदंतवालसंठावणादियं, आभरणवत्थाणि वा णाणादेसियाणि विविहाणि परिहेंति, आभरणमल्लादिणा वा अलंकरणेण अलकरेंति, भोयणं वा विभवेण विसिट्ठं भुजंति, मज्जादि वा पिवंति, चंदणकुंकुमकोट्ठपुडादीहिं वा गंधेहिं अप्पाणं आलिपेंति, वासेंति वा, धूवेंति वा, तयादि वा चउव्विहमाउज्जं वादेंति, णच्चंति वा, णाडगं णाडेंति, मणोहारिं वा मणोरमं गेयं करेंति, रूवादि वा दट्ठुं गंधे य मणोहरे अग्घाएत्ता गीयादिए य सद्दे सुणित्ता जत्थ गंधो तत्थ रसो वि । एवमादिएहिं इंदियऽत्थेहिं भुत्तभोगिणो सतिकरणं, अभुत्तभोगिणो कोतुअं, पडिगमणादयो दोसा ॥५२०४॥

---

1 चउरो लहुगा य दोस आणादी, इति बृहत्कल्पे गा० २५५६ ।

एतेसु ठायमाणस्स इमं पच्छित्तं –

एक्केक्कम्मि य ठाणे, चउरो मासा हवंति उग्घाया ।
आणाइणो य दोसा, विराहणा संजमाऽऽताए ॥५२०५॥

एतेसु रूवआभरणादिसु एक्केक्के ठायमाणस्स चउलहुया ॥५२०५॥

एवं ता सविगारे, णिव्वीगारे इमे भवे दोसा ।
संसद्देण विवुद्धे, अहिगरणं सुत्तपरिहाणी ॥५२०६॥

पुव्वद्धं कंठं । साधूणं सज्झयसद्देणं आवस्सियणिसीहियसद्देण वा रातो सुत्तादि बुज्झेज्झा ततो अधिकरणं भवति । अह अधिकरणभया सुत्तत्थपोरिसीओ ण करेंति तो सुत्तत्थपरिहाणी भवति ।

अहवा – "अधिकरणे" त्ति – साधू काइयादि णिप्फिडंता पविसंता वा आवडेज्ज वा पवडेज्ज वा. णिसीहियादिसद्देण वा गिहत्था विवुद्धा रोसं करेज्जा, ततो अधिकरण उत्तरुत्तरतो भवेज्ज । अधिकरणेण वा पिट्टापिट्टिं करेज्ज । ततो आयविराहणा सुत्तादिपरिहाणी य भवति ॥५२०६॥

अधवा – "[1]अधिकरणे" त्ति पदस्य इमा व्याख्या—

आउज्जोवण वणिए, अगणि कुडुंबि कुकम्म कुम्मरिए ।
तेणे मालागारे, उब्भामग पंथिए जंते ॥५२०७॥

जम्हा एते दोसा तम्हा एएसु पुरिसेसु वि ण ठायव्वं ॥५२०७॥

चोदगो भणति –

एवं सुत्तं अफलं सुत्तणिवातो उ असति वसहीए ।
गीयत्था जयणाए, वसंति तो पुरिससागरिए ॥५२०८॥

आयरिओ भणति – सुत्तणिवाओ विसुद्धवसहीए असइ पुरिसाण जं पुरिससागारियं तं दव्वसागारियं, तत्थ गीयत्था जयणाए वसंति ॥५२०८॥

ते वि य पुरिसा दुविहा, सन्नी य असन्निणो य बोधव्वा ।
मज्झत्थाऽऽभरणपिया, कंदप्पा काहिया चेव ॥५२०९॥

ते पुरिसा दुविधा – असण्णिणो सण्णिणो य । जे सण्णिणो ते चउव्विहा – मज्झत्था आभरणपिया [illegible]हिया य । ॥५२०९॥

इमे आभरणपिया –

आभरणपिए जाणसु, अलंकरेंते उ केसमादीणि ।
सइरहसिय-प्पललिया, सरीरकुइणो उ कंदप्पा ॥५२१०॥

पुव्वद्धं कंठं । इमे कदप्पिया – "सइर" पच्छद्धं । सइरं ति गुरुभिरनिवार्यमाणाः स्वेच्छया हसंति, [illegible]ासु अंदोलकादिदप्पललिया घेइणो इव अणेगसरीरकिरियाओ करेंतो कंदप्पा भवंति ॥५२१०॥

[1] ५२०६ ।

इमे य काहिया –

अक्खातिगा उ अक्खाणगाणि गीयाणि छलियकव्वाणि ।
कहयंता उ कहाम्रो, तिसमुत्था काहिया होंति ॥५२११॥

तरंगवतीमादिग्रक्खातियाम्रो अक्खाणगा धुत्तक्खाणगा, पदाणि धुवगादियाणि कहिंति। जे तेसिं वण्णा सेतुमादिया छलियकव्वा, वसुदेवचरियचेडगादिकहाम्रो, धम्मत्थकामेसु य अण्णाम्रो वि कहाम्रो कहेंता काहिया भवंति ॥५२११॥

एएसिं तिण्हं पी, जे उ विगाराण वाहिरा पुरिसा ।
वेरग्गरुई णिहुया, णिसग्गहिरिमं तु मज्झत्था ॥५२१२॥

वेरग्गं रुच्चति जेसिं ते वेरु(र)ग्गरुई, करचरणिंदिएसु जे सत्था अच्छंति ते णिहुया, निसग्गो नाम स्वभावः, हिरिमं जे सलज्जा इत्यर्थः । एवंविहा मज्झत्था ॥५२१२॥

पुणो एतेसिं इमो भेदो –

एक्केक्का ते तिविहा, थेरा तह मज्झिमा य तरुणा य ।
एवं सन्नी वारस, वारस अस्सण्णिणो होंति ॥५२१३॥

मज्झत्था तिविधा – थेरा मज्झिमा तरुणा । एवं आभरणप्पिया वि कंदप्पिया वि कहिया वि तिविधा । एवं एते वारसविधा सण्णिणो । एवं असण्णी वि वारसविधा कायव्वा ॥५२१३॥

पुरिससागारियस्स अलंभे, कदाति णपुंसगसागारिम्रो उवस्सम्रो लभेज्जा, तत्थ वि इमो भेदो –

एमेव वारसविहो, पुरिस-णपुंसाण सण्णिणं भेदो ।
अस्सण्णीण वि एवं, पडिसेवग अपडिसेवीणं ॥५२१४॥

एमेवऽवधारणे, जहा पुरिसाणं भेदो वारसविहो तहा सण्णीणं असण्णीणं च णपुंसगाणं वारसभेदा कायव्वा ।

ते सव्वे वि समासतो दुविधा दट्ठव्वा – इत्थिणेवत्थिगा पुरिसणेवत्थिगा य ।
जे पुरिसणेवत्था ते दुविधा – पडिसेवी य अपडिसेवी य ।
जे इत्थिणेवत्थिया ते णियमा पडिसेवी ॥५२१४॥

एवं विभागेसु विभत्तेसु इमं पच्छित्तं भण्णति –

काहीया तरुणेसुं, चउसु वि चउगुरुग ठायमाणाणं ।
सेसेसु वि चउलहुगा, समणाणं पुरिसवग्गम्मि ॥५२१५॥

सण्णीणं एक्को काहियतरुणो, असण्णीण वि एक्को, एते दोण्णि । जे पुरिसणपुंसा पुरिसणेवत्थं-अपडिसेवगा तेसु वि सण्णिमेदे एक्को काहियतरुणो तेसु चे । असण्णिभेदे वि एक्को, एते वि दो । एते दो दुआ चउरो । एतेसु चउसु काहियतरुणेसु ठायमाणाणं पत्तेयं चउगुरुगा, सेसेसु चोयालीसाए भेदेसु ठायमाणाण पत्तेयं चउलहुगं । एयं पच्छित्तं पुरिसवग्गे भणियं णिक्कारणम्रो ठायमाणाणं ।

कारणे पुण इयाए विधीए ठायमाणा सुज्झंति – "असतिं वसहीए" त्ति ॥५२१५॥

सण्णीसु पढमवग्गे, असति असण्णीसु पढमवग्गम्मि ।
तेण परं सण्णीसुं, कमेण अस्सन्निसू चेव ॥५२१६॥

सण्णीणं पढमवग्गे मज्झत्था ते तिविधा, तत्थ पढमं थेरेसु ठाति, थेरासति मज्झिमेसु, तेसऽसति तरुणेसु ठाइ ।

सण्णीणं पढमवग्गासति ताहे असण्णीणं पढमवग्गे थेर-मज्झिम-तरुणेसु कमेण ठाति ।

तेसिं असतीए सण्णीणं वितियवग्गे थेर-मज्झिम-तरुणेसु ठायंति । तेसिं असइ सण्णीसु चेव तइयवग्गे थेर-मज्झिम-तरुणेसु ठायंति ।

तेसिं असइ सण्णीसु चेव काहिएसु थेर-मज्झिमेसु ठायंति ।

ताहे असति सण्णीणं असण्णीसु वितियवग्गाओ कमेण एवं चेव जाव काहिय-मज्झिमाणं असतीए ताहे सन्नीसु काहिय-तरुणेसु ठायंति, ते पण्णविज्जंति जेण कहाओ ण कहेंति ।

तेसिं असति असण्णीसु वि काहिय-तरुणेसु ठायंति, ते वि पण्णविज्जंति ॥५२१६॥ पुरिसेसु एयं पच्छित्तं ठायव्वं, जयणा य भणिया ।

इदाणि णपुंसगेसु भण्णति–

जह चेव य पुरिसेसू, सोही तह चेव पुरिसवेसेसु ।
तेरासिएसु सुविहित, पडिसेवगअपडिसेवीसु ॥५२१७॥

जह चेव पुरिसेसु सोधी भणिता तह चेव णपुंसेसु पुरिसवेसणेवत्थेसु अपडिसेवगेसु पडिसेवगेसु वा भाणियव्वा । ठायव्वे वि जयणाविधी तह चेव भाणियव्वा ॥५२१७॥

जह कारणम्मि पुरिसे, तह कारणे इत्थियासु वि वसंति ।
अद्धाण-वास-सावय-तेणेसु वि कारणे वसंति ॥५२१८॥

जह पुरिससागारिगे कारणेण ठाइ तहेव कारणं अवलंबिऊण इत्थिसागारिए वि जयणाए ठायंति वसंतीत्यर्थः । अद्धाणादिणिग्गया सुद्धवसहिं अप्पतरदोसवसहिं वा तिक्खुत्तो मग्गिउं अलभंता इत्थिसागारिए वसंति । इमेहिं कारणेहिं पडिबद्धं वासं पडइ, बाहिं वा सावयभयं, उवधिसरीरतेणभयं वा । इत्थिसागारिए वि बारस भेदा जहा पुरिसेसु । असण्णित्थीसु वि बारस, इत्थिवेसणपुंसेसु सण्णीसु वि बारस, तेसु चेव असण्णीसु वि बारस ॥५२१८॥

इमं पच्छित्तं –

काहीता तरुणीसुं, चउसु वि मूलं ठायमाणाणं ।
सेसासु वि चउगुरुगा, समणाणं इत्थिवग्गम्मि ।५२१९॥

सण्णिकाहिकतरुणी, असण्णिकाहिकतरुणी, इत्थिवेसणपुंससण्णिकाधिकतरुणी, सा चेव असण्णिकाहिकतरुणी, एयासु चउसु वि जइ ठायंति तो मूलं । सेसासु सण्णि-असण्णिसु वा वीसाए इत्थीसु चउगुरुगा । एयं समणाणं इत्थिवग्गे ठायंताणं पच्छित्तं ॥५२१९॥

जह चेव य इत्थीसु, सोही तह चेव इत्थिवेसेसु ।
तेरासिएसु सुविहिय, ते पुण णियमा उ पडिसेवी ॥५२२०॥

जहा समणाणं इत्थीसु ठायमाणाणं सोधी भणिया तह चेव इत्थिवेसेसु णपुंसगेसु ठायंताण सोधी भाणियव्वा, जेण ते णियमा पडिसेवी । ५२२०॥

इमा तासु ठायव्वे जयणाविधी –

एमेव होइ इत्थी, बारस सण्णी तहेव अस्सण्णी ।
सण्णीसु पढमवग्गे, असति असण्णीसु पढमंमि ॥५२२१॥

जहा पुरिसेसु भेदा एवं इत्थीसु वि सण्णीसु बारस भेदा, असण्णीसु वि बारस । एयासु ठायव्वे जयणा "सण्णीसु पढमवग्गे" त्ति, मज्झित्थीसु थेरमज्झिमतरुणीसु, असति तेसिं असण्णीसु । पढमवग्गे असति तेसिं सण्णीसु वितियवग्गे । असति तेसिं असण्णीसु तितियवग्गे ॥५२२१॥

एवं एक्केक्क तिगं, वोच्चत्थगमेण होइ विण्णेयं ।
मोत्तूण चरिम सण्णीं, एमेव नपुंसएहिं पि ॥५२२२॥

आहरणप्पियाणं असण्णीण असति सण्णीसु कंदप्पियासु ततियवग्गे ठाति ।

तेसिं असति असण्णीसु कंदप्पियासु, तेसिं असति सण्णीसु काहियासु थेरमज्झिमासु ।

तेसिं असति असण्णीसु काहियासु थेरमज्झिमासु । ततो सण्णीसु तरुणीसु । ततो असण्णीसु तरुणीसु । एवमेव इत्थिणपुंसेसु वि ठायव्वे जयणा भाणियव्वा ॥५२२२॥ एस पुरिसाण पुरिसेसु इत्थीसु य सोधी ठायव्वे जयणा भणिता ।

इदाणिं इत्थीणं पुरिसेसु य सोधी ठायव्वे जयणा भण्णति –

एसेव गमो णियमा, णिग्गंथीणं पि होइ णायव्वो ।
जइ तेसि इत्थियाओ, तह तासि पुमा मुणेयव्वा ॥५२२३॥

पुव्वद्धं कंठं । जहा तेसिं पुरिसाणं इत्थीओ गुरुगाओ तहा तेसिं इत्थियाणं पुरिसा गुरुगा मुणेयव्वा ॥५२२३॥

इत्थियाणं इमं सपक्खे पच्छित्तं –

काहीतातरुणीसुं, चउसु वि चउगुरुग ठायमाणीणं ।
सेसासु वि चउलहुगा, समणीणं इत्थिवग्गम्मि ॥५२२४॥

पूर्ववत् कंठा । णवरं – इत्थियाओ भाणियव्वाओ ॥५२२४॥

इमं पुरिसेसु ठायमाणीणं पच्छित्तं –

काहीगातरुणेसुं, चउसु वि मूलं तु ठायमाणीणं ।
सेसेसु वि चउगुरुगा, समणीणं पुरिसवग्गम्मि ॥५२२५॥

पूर्ववत् कंठा । णवरं – इत्थियाओ पुरिसेसु वत्तव्वा ॥५२२५॥

अधवा – इमो अण्णो पायच्छित्तादेसो, सण्णीसु बारससु असण्णीसु य बारससु –

थेरातितिविह अधवा पंचग पण्णरस मासलहुओ य ।
छेदो मज्झत्थादिसु, काधिगतरुणेसु चउलहुगा ।।५२२६।।

मज्झत्थे थेरे पंच राइंदिया छेदो ।

मज्झत्थे मज्झिमे पण्णरस राइंदिया छेदो ।

मज्झत्थे तरुणे मासलहू छेदो । एवं आभरणकंदप्पेसु वि, काहिएसु वि थेरमज्झिमेसु एवं चेव, णवरं – काहिगतरुणेसु चउलहुछेदो । असण्णीण वि बारस-विकप्पे एवं चेव ।।५२२६।।

सण्णीसु असण्णीसुं, पुरिस-णपुंसेसु एव साहूणं ।
एयासुं चिय थीसुं, गुरुगो समणीण विवरीओ ।।५२२७।।

सण्णिअसण्णीण विकप्पेसु चउवीसा पुरिसणपुंसेसु, एवं चेव इत्थीसु वि, एयासु चेव चउवीसभेदासु इत्थिवेसधारीसु य णपुंसगेसु चउवीसविकप्पेसु एस चेव छेदो एवं चेव दायव्वो, णवरं – गुरुओ कायव्वो । "समणीण विवरीओ" त्ति समणीण समणीपक्खे जहा पुरिसाणं पुरिसपक्खे, तासिं पुरिसपक्खे जहा पुरिसाणं इत्थिपक्खे ।।५२२७।।

जे भिक्खू सउदगं सेज्जं उवागच्छइ, उवागच्छंतं वा सातिज्जति ।।सू०।।२।।

सह उदएण सउदया, उपेत्य गच्छति उपागच्छति, साइज्जणा दुविहा – अणुमोयणा कारावणा य, तिसु वि ङ्क ० ० ।

अह सउदगा उ सेज्जा, जत्थ दगं जा य दगसमीवम्मि ।
एयासिं पत्तेयं, दोण्हं पि परूवणं वोच्छं ।।५२२८।।

अधेत्ययं निपातः, सागारिय अणंतरभेदप्रदर्शने वा निपतति । "जत्थ दगं" ति पाणियघरं प्रपादि, जाए वा सेज्जाए उदगं समीवे वण्णाति । जा उदगसमीवे सा चिट्ठउ ताव जत्थ उदगं तं ताव परूवेमि ।।५२२८।।

जत्थ णाणाविहा उदया अच्छंति इमे –

सीतोदे उसिणोदे, फासुमप्फासुगे य चउभंगो ।
ठायंते लहु लहुगा, कोस अगीयत्थसुत्तं तु ।।५२२९।।

सीतोदगं फासुयं, सीतोदगं अफासुयं ।
उसिणोदगं फासुयं, उसिणोदगं अफासुयं ।
पढमभंगे उसिणोदग सीतीभूतं चाउलोदगादि वा, वितियभंगे सच्चित्तोदगं चेव ।
ततियभंगे उसिणोदगं उव्वत्तडंडं, चउत्थभंगे तावोदगादि ।
पढमततियभंगे ठायंतस्स मासलहुं । वितियचउत्थेसु चउलहुं ।
एयं कस्स पच्छित्तं ?
आयरिओ भणइ – एयं अगीयस्स पच्छित्तं ।।५२२९।।

फासुगस्स इमं वक्खाणं –

सीतितरफासु चउहा, दव्वे संसट्ठमीसगं खेत्ते ।
कालतो पोरिसि परतो, वण्णादी परिणतं भावे ॥५२३०॥

जं सीतोदगं फासुयं, "इयर" ति जं च उण्होदगं फासुयं, तं चउव्विहं – दव्वग्रो खेत्तग्रो कालग्रो भावग्रो य ।

दव्वग्रो जं गोरससंसट्ठे भायणे छूढं, सीतोदगं तं तेण गोरसेण परिणामितं दव्वतो फासुयं ।
खेत्तग्रो जं कूवतलागाइसु ठियं मधुरं लवणेण मीसिज्जति लवणं वा मधुरेण ।
कालतो जं इंधणे छूढे पहरमेत्तेण फासुगं भवति ।
जं वण्णगंधरसफरिसविप्परिणयं भावतो जं (तं) फासुयं वुत्तं ॥५२३०॥
"जो [1]ग्रगीयत्थो भिक्खू ठाति तस्स एयं पच्छित्तं" ।

एत्थ चोदगो चोएति –

णत्थि ग्रगीयत्थो वा, सुत्ते गीग्रो व कोइ णिद्दिट्ठो ।
जा पुण एगाणुण्णा, सा सेच्छा कारणं किं वा ॥५२३१॥

"गीतो ग्रगीतो वा सुत्ते ण भणितो । जं पुण एगस्स गीयत्थपक्खस्स ग्रणुण्णं करेह, ग्रगीयपक्खस्स पडिसेहं करेह, एस (एत्थ) तुज्झं चेव स्वेच्छा, ण तित्थगरभणियं ।

ग्रधवा – किं वा कारणं, जं गीयस्स ग्रणुण्णा, ग्रगीयस्स पडिसेहो ॥५२३१॥

ग्रायरिग्रो भणति –

एतारिसम्मि वासो, ण कप्पती जति वि सुत्तणिद्दिट्ठो ।
ग्रव्वोकडो उ भणितो, ग्रायरिग्रो उवेहती ग्रत्थं ॥५२३२॥

पुव्वद्धं कंठं । जम्हा य ग्रगीतो कारणं ग्रकारणं वा जयणं ग्रजयणं वा ण याणति तेण ग्रगीते पच्छित्तं । ग्रण्णं च सुत्ते ग्रत्थो ग्रव्वोगडो भणिग्रो त्ति, ग्रविसेसितो, तं ग्रविसिट्ठं ग्रत्थं ग्रायरिग्रो "उवेहति" उत्प्रेक्षते विशेषयतीत्यर्थः । जहा एगातो पिंडाग्रो कुलालो ग्रणेगे घडादिरूवे घडेति एवं ग्रायरिग्रो एगाग्रो सुत्ताग्रो ग्रणेगे ग्रत्थविगप्पे दंसेति ।

ग्रधवा – जहा ग्रंधगारे ग्रप्पगासिते संता वि घडादिया ण दिसंति एवं सुत्ते ग्रत्थविसेसा, ते य ग्रायरियपदीवेण जदि पगासिता भवंति तदा उवलब्भंति ॥५२३२॥

किं च –

जं जह सुत्ते भणियं, तहेव तं जति वियारणा णत्थि ।
किं कालियाणुग्रोगो, दिट्ठो दिट्ठिप्पहाणेहिं ॥५२३३॥

जति सुत्ताभिहिते विचारणा ण कज्जति तो कालियसुतस्स ग्रणुग्रोगपोरिसीकरणं किं दिट्ठं दिट्ठिप्पहाणेहिं ?, दिट्ठिप्पहाणा जिणा गणहरा वा । ग्रतो ग्रणुग्रोगकरणग्रो णज्जति – जहा सुत्ते बहू ग्रत्थपदा, ते य ग्रायरिएण निगदिता ति ॥५२३३॥

---

1 गा० ५२२९ ।

किं च –

उस्सग्गसुयं किंची, किंची अववाइयं मुणेयव्वं ।
तदुभयसुत्तं किंची, सुत्तस्स गमा मुणेयव्वा ॥५२३४॥

किं चि उस्सग्गसुत्तं । किं चि अववादसुत्तं । किं चि तदुभयसुत्तं । तं दुविहं, तं जहा – उस्सग्गववादियं, अववादुस्सग्गियं । एते सुत्तगमा – सूत्रप्रकारा इत्यर्थः ।

अधवा – सुत्तगमा द्विरभिहितो गमः, तं जहा – उस्सग्गुस्सग्गियं अववादाववादियं चेति ।

एते वि छ सुत्तप्पगारा आयरिएण बोधिता णज्जंति ॥५२३४॥

इमो वा सुत्ते अत्थपडिवंधो भवति –

[1]णेगेसु एगगहणं, सलोम णिल्लोम अकसिणे अजिणे ।
विहिभिण्णस्स य गहणे, अववादुस्सग्गियं सुत्तं ॥५२३५॥

इमो अणाणुपुव्वीए एतेसिं सुत्ताणं अत्थो दंसिज्जति – "विधिभिण्णस्स य" पच्छद्धं । [1]"कप्पति णिग्गंथीणं पक्के तालपलंबे भिण्णे पडिग्गाहित्तए, से वि य विधिभिण्णे, णो चेव णं अविधिभिण्णे," अववादेण गहणे पत्ते जं अविधिभिण्णस्स पडिसेहं करेइ, एस अववादे उस्सग्गो ॥५२३५॥

अववादाणुण्णायं कहं पुणो पडिसिज्झति ?,

अतो भण्णति –

उस्सग्गठिई सुद्धं, जम्हा दव्वं विवज्जयं लहइ ।
ण य तं होइ विरुद्धं, एमेव इमं पि पासामो ॥५२३६॥

ठाणं ठिती, उस्सग्गस्स ठिई उस्सग्गठिई – उत्सर्गस्थानमित्यर्थः । उस्सग्गठाणेसु जं चेव दव्वं कप्पति तं चेव दव्वं असंथरणे जम्हा विवज्जयं लभति । "विवज्जतो" विवरीयता – असुद्धमित्यर्थः । तं असुद्धं गुणकरेति घेप्पतं ण विरुद्धं भवति । "एमेव इमं पि पासामो" त्ति अववातअणुण्णाए अविधिभिण्णे दोसदंसणं जतो भवति, तेण पुणो पडिसेहो कज्जइ – ण दोष इत्यर्थः ॥५२३६॥

उस्सग्गे गोयरम्मी, णिसिज्जकप्पाऽववायओ तिण्हं ।
मंसं दल मा अट्ठिं, अववाउस्सग्गियं सुत्तं ॥५२३७॥

इमं उस्सग्गसूत्रं – "णो कप्पति णिग्गंथाण वा णिग्गंथीण वा अंतरगिहंसि आसइत्तए वा जाव काउस्सग्गं वा ठाणं ठातित्तए वा" ।

अहवा – "[2]गोयरग्गपविट्ठो उ, ण णिसीएज्झ कत्थति ।
कहं च ण पवंधिज्जा, चिट्ठित्ता ण व संजए" ।

इमं अववादिकं – "[3]अध पुण एवं जाणेज्जा – जुण्णे वाहिए तवस्सि दुव्वले किलंते मुच्छेज्ज वा पवडेज्जवा एव ण्हं कप्पति अंतरगिहंसि आसइत्तए वा जाव उस्सग्गठाणं ठातित्तए" ।

---

१ गा० ५२३५ । २ दश० अ० ५ उ० २ गा० ७ । ३ दश० अ० ६ गा० ६० ।

अहवा – "तिण्हमण्णतरागस्स, णिसेज्जा जस्स कप्पति ।
जराए अभिभूयस्स, वाहिगस्स तवस्सिणो ॥६०॥

इमं अववादुस्सग्गियं – "[1]बहुअट्ठियं पोग्गलं अणिमिसं वा बहुकंटयं ।" एवं अववादतो गिण्हंतो भणाति – "मंसं दल मा अट्ठियं" ति ॥५२३७॥

अववा –

णो कप्पति वाऽभिण्णं, अववाएणं तु कप्पती भिण्णं ।
कप्पइ पक्कं भिण्णं, विहीय अववायउस्सग्गं ॥५२३८॥

"णो कप्पति णिग्गंथाण वा णिग्गंथीण वा आमे तालपलंबे अभिण्णे पडिग्गाहित्तए" (बृह० उ० १ सू० १) एवं उस्सग्गियं । "कप्पति णिग्गंथाण वा णिग्गंथीण वा आमे तालपलंबे भिण्णे पडिग्गाहित्तए", (बृह० उ० १ सू० २) एवं अववादियं । पच्छद्धं कंठं ।

[2]पूर्वोक्तं इमं उस्सग्गाववाइयं – "णो कप्पति णिग्गंथाण वा णिग्गंथीण वा रातो वा वियाले वा सेज्जासंथारए पडिग्गाहित्तए, ॥ णऽण्णत्थेगेणं पुव्वपडिलेहिएणं सेज्जासंथारएणं" । (बृह० उ० ३ सू० ४२, ४३)

इमं उस्सग्गुस्सग्गियं । "जे भिक्खू असणं वा पाणं वा, खाइमं वा, साइमं वा (क्क) पढमाए पोरिसीए पडिग्गाहेत्ता पच्छिमं पोरिसिं उवातिणावेति, उवातिणावेंत वा सातिज्जति; से य आहच्च उवातिणाविते सिया जो तं भुंजति भुंजंतं वा सातिज्जति ।" (बृह० उ० ४ सू० १६)

इमं अववादाववादियं । जेसु अववादो सुत्तेसु निवद्धो तेसु चेव सुत्तेसु अत्यतो पुणो अणुण्णा पवत्तति, ते अववायाववातिय । सुत्ता, जतो सा वितियाणुण्णा सुत्तत्थाणुगता इति ।

इदाणि [3]वितियगाहाए पुव्वद्धस्स इमं वक्खाणं –

अणेगेसु सुत्तत्थेसु घेत्तव्वेसु एगस्स अत्थस्स गहणं करेति, जहा जत्थ सुत्ते पाणातिवातविरतिग्गहणं तत्थ सेसा महव्वया अत्थतो दट्ठव्वा । एवं कसायइंदियआसवेसु वि भाणियव्वं ।

इमे पत्तेयसुत्ता –

णो कप्पति णिग्गंथाणं अलोमाइं चम्माइं धारित्तए वा परिहरित्तए वा । (   )
कप्पइ णिग्गंथाणं सलोमाइं चम्माइं धारित्तए वा परिहित्तए वा । (बृह०उ० ३ सू० ४)
णो कप्पति णिग्गंथीणं सलोमाइं चम्माइं धारित्तए वा परिहरित्तए वा । (बृह०उ० ३ सू० ३)
कप्पति णिग्गंथीणं अलोमाइं चम्माइं धारित्तए वा परिहरित्तए वा । (   )

इमं सामण्णसुत्तं ।

णो कप्पति णिग्गंथाण वा णिग्गंथीण वा कसिणाइं चम्माइं धारित्तए वा परिहित्तए वा ।
कप्पति णिग्गंथाण वा णिग्गंथीण वा अकसिणाइं चम्माइं धारित्तए वा परिहित्तए वा । (बृह० उ० ३ सू० ५–६) ॥५२३८॥

किं चान्यत् –

कत्थइ देसग्गहणं, कत्थइ भण्णंति निरवसेसाइं ।
उक्कम-कमजुत्ताइं, कारणवसतो निउत्ताइं ॥५२३९॥

---

१ दश० अ० ५ उ० १ गा० ७३ । २ गा० ५२३४ । ३ गा० ५२३५ ।

अस्य व्याख्या –

देसग्गहणे बीएहि सूइया मूलमाइणो होंति ।
कोहाति अणिग्गहिया, सिंचंति भवं निरवसेसं ॥५२४०॥

क्वचित् सूत्रे देशग्रहणं करेति, जहा कप्पस्स पढमसुत्ते पलंबग्गहणातो सेसवणस्सइभेदा मूल-कंद-खंध-तया-साह-प्पसाह-पत्त-पुप्फ-बीया य गहिया । बीयग्गहणातो वा सेसा दट्ठव्वा ।

इमं णिरवसेसग्गहणं –

"[४]कोहो य माणो य अणिग्गहीया, माया य लोभो य विवड्ढमाणा ।
चत्तारि एते कसिणा कसाया, सिंचंति मूलाइं पुणब्भवस्स ।" (दश० ८, ४०) ॥५२४०॥

क्वचित् सूत्राणि उत्क्रमेण कृतानि क्वचित् क्रमेण जहा –

सत्थपरिण्णा उक्कमो, गोयरपिंडेसणा कमेणं तु ।
जं पि य उक्कमकरणं, तं पऽहिणवधम्ममायट्ठा ॥५२४१॥

सत्थपरिण्णऽज्झयणे – तेउक्कायस्स उवरि वाउक्कायो भवति, सो य न तत्थ भणितो, तसाणुवरि भणितो, दुःश्रद्धेयत्वात् । जं तं उक्कमकरणं तं अहिणवस्स सेहस्स धम्मप्रतिपत्तिकारणा वाउकातिग-जीवत्वप्रतिपत्तिकारणा वा इत्यर्थः ।

"गोयरपिंडेसणा कमेणं" ति तत्थ गोयरातिमे अभिग्गहविसेसतो जाणियव्वा भवंति, तंजहा – पेला, अद्धपेला, गोमुत्तिया, पयंगवीहिया, अंतोसंवुक्का वट्टा, बाहिं संवुक्का वट्टा, गंतुपच्चागया, उक्खित्तचरगा, उक्खित्तणिक्खित्तचरगा ।

इमाओ सत्त पिंडेसणाओ – असंसट्ठा, संसट्ठा, उद्धडा, अप्पलेवा, उवग्गहिया, पग्गहिया, उज्झियधम्मिया य ।

दायगो असंसट्ठेहिं हत्थमत्तेहिं देति त्ति असंसट्ठदायगो ।

संसट्ठेहिं हत्थमत्तेहिं देति त्ति संसट्ठा ।

जत्थ उवक्खडियं भायणे तातो उद्धरियं छप्पगादिसु, एस उद्धडा ।

जस्स दिज्जमाणस्स दव्वस्स णिप्फाव-चणगादिगस्स लेवो ण भवति, सा अप्पलेवा ।

जं परिवेसगेण परिवेसणाए परस्स कडुच्छुतादिणा उवग्गहियं – आणियंति वुत्तं भवति, तेण य तं पडिसिद्धं तं तहुक्खित्तं चेव साधुस्स देइ । एसा उवग्गहिया ।

जं असणादिगं भोत्तुकामेण कंसादिभायणे गहियं भुंजामि त्ति असंसट्ठिते चेव साधू आगतो तं चेव देति, एस पग्गहिया ।

जं असणादिगं गिही उज्झिउकामो साहू य उवट्ठितो तं तस्स देति, ण य तं कोइ अण्णो दुपदादी अभिलसति, एसा उज्झियधम्मिया ॥५२४१॥

बीएहि कंदमादी, वि सूइया तेहि सव्ववणकायो ।
भोमातिका वणेण तु, सभेदमारोवणा भणिता ॥५२४२॥

कम्हिवि सुत्ते बीयग्गहणं कतं, तेण बीयग्गहणेण मूलकंदादिया सूइता, तेहिं सव्वो परित्ताणंतो सभेदो वणस्सइकाओ सूतितो, तेण वणस्सतिणा भोमादिया पंच काया सूतिता, एवं सप्रभेदा आरोवणा केसुइ सुत्तेसु भाणियव्वा ॥५२४२॥

किं च –

जत्थ तु देसग्गहणं, तत्थ उ सेसाणि सूइयवसेणं ।
मोत्तूण अहीकारं, अणुओगधरा पभासंति ॥५२४३॥

पुव्वद्धं गतार्थं । कम्हिवि सुत्ते अणुओगधरा अधिगतं अत्थं मोत्तूणं सुत्ताणुपायिप्पसंगागयमत्थं ताव भणंति । एवं विचित्ता सुत्ता, विचित्तो य सुत्तत्थो, ण णज्जति जाव सूरिणा ण पागडिओ ॥५२४३॥

उस्सग्गेणं भणिताणि जाणि अववायओ य जाणि भवे ।
कारणजाएण मुणी ! सव्वाणि वि जाणियव्वाणि ॥५२४४॥

उस्सग्गेण भणिताणि जाणि सुत्ताणि अववादेण य जाणि सुत्ताणि भणिताणि, "कारणजातेण मुणि" त्ति पडिसिद्धस्स आयरणहेऊ कारणं, "जायं" ति उप्पण्णं, "मुणि" त्ति आमंतणे, सव्वाणि वि जाणियव्वाणीति ।

कहं ?, उच्यते – अववायसुत्तेसुस्सग्गो अत्थतो भणितो अववादकारणे सुत्तणिबंधो, उस्सग्गसुत्तस्स उस्सग्गसुत्ते णिबंधो, अत्थतो कारणजाते अणुण्णा अतो सव्वसुत्तेसु उस्सग्गो अववादो य दिट्ठो ।

अतो भण्णति – "कारणजातेण मुणी ! सव्वाणि वि जाणियव्वाणि "सूत्राणीत्यर्थः । ते य उस्सग्गऽववादा गुरुणा बोधिता णज्जंति । ते य जाणिऊण अप्पप्पणो ठाणे समायरति । अजाणिए पुण ते कहं समायरंति ?, ॥५२४४॥

अववादट्ठाणे पत्ते –

उस्सग्गेण णिसिद्धाणि जाणि दव्वाणि संथरे मुणिणो ।
कारणजाए जाते, सव्वाणि वि ताणि कप्पंति ॥५२४५॥

जाणि संथरमाणस्स उस्सग्गेण दव्वाणि णिसिद्धाणि ताणि चेव दव्वाणि अववायकारणजाते, "जाय" सद्दो प्रकारवाची. बितिओ "जाय" सद्दो उप्पण्णवाची, अन्यतमे कारणप्रकारे उत्पन्ने इत्यर्थः । जाणि उस्सग्गे पडिसिद्धाणि उप्पण्णे कारणे सव्वाणि वि ताणि कप्पंति ण दोसो ॥५२४५॥

चोदगाह –

जं पुव्वं पडिसिद्धं, जति तं तस्सेव कप्पती भुज्जो ।
एवं होयऽणवत्था, ण य तित्थं णेव सच्चं तु ॥५२४६॥

सुत्तत्थस्स अणवत्था भवति, चरणकरणस्स वा अणवत्थओ य तित्थं ण भवति, पडिसिद्धमणुजाणंतस्स सच्चं ण भवति ॥५२४६॥

उम्मत्तवायसरिसं, खु दंसणं न वि य कप्पऽकप्पं तु ।
अह ते एवं सिद्धी, न होज्ज सिद्धी उ कस्सेवं ॥५२४७॥

"पुव्वावरविरुद्धं सुत्तं पावइ उम्मत्तवचनवत्", "इमं कप्पं, इमं अकप्पं" एयं अण्णहा पावति जतो अकप्पं पि कप्पं भवति। जइ एवं तुज्झं अभिप्पेयत्थसिद्धी भवति तो चरगादियाण वि अप्पप्पणो अभिप्पेयत्थसिद्धी भवेज्ज ॥५२४७॥

आचार्य आह – सुणेहि एत्थ णिच्छियऽत्थं –

ण वि किं चि अणुण्णायं, पडिसिद्धं वा वि जिणवरिंदेहिं।
एसा तेसिं आणा, कज्जे सच्चेण होयव्वं ॥५२४८॥

णिक्कारणे अकप्पणिज्जं ण किं चि अणुण्णायं, अववायकारणे उप्पण्णे अकप्पणिज्जं ण किं चि पडिसिद्धं, णिच्छयववहारतो एस तित्थकराणा, "कज्जे सच्चेण भवियव्वं" कज्जं ति अववादकारणं, तेण जति अकप्पं पडिसेवति तहावि सच्चो भवति, सच्चो त्ति संजमो ॥५२४८॥

अहवा –

कज्जं णाणादीयं, उस्सग्गववायओ भवे सच्चं।
तं तह समायरंतो, तं सफलं होइ सव्वं पि ॥५२४९॥

कज्जं ति णाण-दंसण-चरणा। ते जहा जहा उस्सप्पंति तहा तहा समायरंतस्स संजमो भवति स्यात् ॥५२४९॥

कथं संजमो भवति –

दोसा जेण निरुंभंति, जेण खिज्जंति पुव्वकम्माइं।
सो सो मोक्खोवाओ, रोगावत्थासु समणं व ॥५२५०॥

उस्सग्गे उस्सग्गं, अववादे अववादं करेंतस्स रागादिया दोसा णिरुंभंति, पुव्वोवचियकम्मा य खिज्जंति, एवं जो जो साधुस्स दोसनिरोधकम्मखवणो किरियाजोगो सो सो सव्वो मोक्खोवातो।

इमो दिट्ठंतो – "रोगावत्थासु समणं व", रोगावत्था रोगप्रकारा, तेसिं रोगाणं प्रशमनं अपत्थं पडिसिज्झति, जेण य प्रशमंति तं तस्स दिज्जति।

अधवा – कस्स ति रोगिस्स णिसेहो कज्जति, कस्स वि पुणो तमेव अणुण्णवति।

एवं कम्मरोगखवणे वि समत्थस्स अकप्पपडिसेहो कज्जति। असंथरस्स पुण तमेव अणुण्णवति।

हे चोदक! जं तं तुब्भे भणियं – सुत्ते अगीतो गीतो वा नत्थि कोइ भणितो तं, एयं सुत्ते गीयादीया पवयणातो विण्णेया ॥५२५०॥

अग्गीतस्स ण कप्पति, तिविहं जयणं तु सो न जाणाति।
अणुण्णवणाइ जयणं, सपक्ख-परपक्खजयणं च ॥५२५१॥

चोदको भणति – "अगीयस्स किं कारणं ण कप्पति?

आयरिओ भणइ – "तिविधं जयणं" ति जेण सो न याणइ।

पुणो चोदगो भणति – "कयरा सा तिविधा जयणा"?

आयरिओ भणइ – अणुण्णावणजयणा सपक्खजयणा परपक्खजयणा य।

चोदको भणति – "सुत्ते पढिए अगीतो कहं जयणं न जाणति?"

आयरिओ भणति – हे चोदक ! आयरिसहाया सव्वागमा भवंति जेण पढिज्जति ॥५२५१॥

णिउणो खलु सुत्तत्थो, न हु सक्को अपडिबोहितो नाउं ।
ते सुणह तत्थ दोसा, जे तेसिं तहिं वसंताणं ॥५२५२॥

णिउणो त्ति सुहुमो सुत्तत्थो, सो य आयरिएण पडिबोहितो णज्जति, अण्णह ण णज्जति, जे अगीयत्थाणं तहिं वसंताणं दोसा ते भण्णमाणे सुणसु ॥५२५२॥

अगीया खलु साहू, णवरं दोसा गुणे अजाणंता ।
रमणिज्जभिक्ख गामे, ठायंती उदगसालाए ॥५२५३॥

अगीयसाधू साधुकिरियाए जुत्ता णवरं – सदोसणिद्दोस-वसहिअणुण्णवणे दोसगुणे ण याणंति, अजयणाए अणुण्णवणे दोसा, जयणाणुण्णवणाए य गुणा । सदोसाए य कारणे ठिया जयणं काउं ण याणंति जे य तत्थ दोसा उप्पज्जंति ॥५२५३॥

"रमणिज्ज" पच्छद्धं अस्य व्याख्या –

रमणिज्जभिक्ख गामो, ठायामो इहेव वसहि भोसेह ।
उदगघराणुण्णवणा, जति रक्खह देमि तो भंते ! ॥५२५४॥

अगीयत्थगच्छो दूइज्जंतो एगत्थ गामे वाहिं ठितो, भिक्खा हिंडिया पभूता इट्ठा य लद्धा, ताहे भणंति – "एस रमणिज्जो गामो, भिक्खा य अत्थि, अत्थेव मासकप्पविहारेणऽच्छिहामो, वसहिं भोसेह धम्मकहि" त्ति । तेहिं उदगसाला दिट्ठा, तं अणुण्णवेत्ता उदगघरसामिणा भणिता – "जति उदगं घरं वा रक्खिस्सह तो भे देमि" त्ति ॥५२५४॥

किं च ते गिहत्था भणंति –

वसहीरक्खणवग्गा, कम्मं ण करेमो णेव पवसामो ।
णिच्चिंता होह तुमं, अम्हे रत्तिं पि जग्गामो ॥५२५५॥

"उदयघरादिरक्खवावडा अम्हे किंसिमादि कम्मं पि ण करेमो, ण य आमंतणादिसु गामंतरं पि पवेसामो" । ताहे अगीयत्था भणंति – "णिच्चिंतो होहि तुमं, अम्हे रत्तिं पि जग्गिस्सामो" ॥५२५५॥

इमा वि अणुण्णवणे अविधी चेवं –

जोतिस निमित्तमादी, छंदं गणियं च अम्ह साहित्था ।
अक्खरमादि व डिंभे, [1]गाहेस्सह अजतणा सुणणे ॥५२५६॥

जति अणुण्णविज्जंते वसहिसामी भणति – "जति जोइसं निमित्तं छंदं गणियं वा अम्हं कहेस्सह, "डिंभं" त्ति डिंभरूवं तं अक्खरे गाहिस्सह, आदिसद्दातो अण्णं वा किं चि पावसुत्तं वागरणादि ।"

एत्थ साधू जति पडिसुणेति – "कहेस्सामो सिक्खावेस्सामो वा" तो अणुण्णवणे अजयणा कया भवति ॥५२५६॥

---

१ गाहिज्जह ।

अजयणाऽणुण्णवणाए ठियाणं इमे दोसा –

अणुण्णवण अजयणाए, पउत्थसागारिए घरे चेव ।
तेसिं पि य चीयत्तं, सागारियवज्जियं जातं ॥५२५७॥

अस्य पूर्वार्धस्य व्याख्या –

तेसु ठितेसु पउत्थो, अच्छंतो वा वि ण वहती तत्तिं ।
जइ वि य पविसितुकामो, तह वि य ण चएति अतिगंतु ॥५२५८॥

"तेसु" त्ति – अगीयत्थेसु अजयणाणुण्णवणाए ठियाणं "उदगादिघरं संजता रक्खंति" त्ति सागारिगो णिच्चितो पवसइ, घरे वा अच्छंतो उदगादिभायणाणं वावारं ण वहति, "[1]तेसिं पि" – संजयाणं "चियत्तं" – जं अम्हं तेण सागारिणो णागच्छंति ।

अहवा – जे संजता उदगरसकोउआ तेसिं चियत्तं, अधवा – सो पविसिउकामो तह वि न सक्केइ तत्थ पविसिउं ॥५२५८॥

केण कारणेण ? अतो भण्णति –

संथारएहि य तहिं, समंततो आतिकिण्ण वितिकिण्णं ।
सागारिओ ण इंती, दोसे य तहिं ण जाणाति ॥५२५९॥

अतिकिण्णं आकीर्णं परिवाडीए, वितिकिण्णं विप्रकीर्णं अणाणुपुव्वीए, अड्डवियड्डु त्ति वुत्तं भवति, एतेण कारणेण सो सेज्जातरो ण पविसति । तेसु उदगभायणेसु जे सेवणादिदोसा ते ण याणंति ॥५२५९॥ अणुण्णवण त्ति गता ।

इदाणिं [2]सपक्खे जयणा –

ते तत्थ सण्णिविट्ठा, गहिता संथारगा जहिच्छाए ।
णाणादेसी साहू, कस्सति चिंता समुप्पण्णा ॥५२६०॥

"सण्णिविट्ठ" त्ति ठिता 'जहिच्छ' त्ति जहा इच्छंति, णो गणावच्छेइएणं दिण्णा अहारातिणियाए । ॥५२६०॥

तत्थ कस्स ति साधुस्स इमा चिंता उप्पण्णा –

अणुभूता उदगरसा, णवरं मोत्तूणिमेसिं उदगाणं ।
काहामि कोउहल्लं, पासुत्तेसुं समारद्धो ॥५२६१॥

"केरिसो उदगरसो" त्ति कोतुअं, तं कोउआणुकूलं काहामो त्ति सो सुत्तेसु साधूसु समारद्धो पाउं ॥५२६१॥

इमे उदगे –

धारोदए महासलिलजले संभारिते च दव्वेहिं ।
तण्हाइयस्स व सती, दिया व राओ व उप्पज्झे ॥५२६२॥

---

[1] गा० ५२५७ । [2] गा० ५२५१ ।

धारोदगं जहा सत्तधारादिसु, महासलिलोदगं गंगासिंधुमादीहि दव्वेहिं वा संभारियं, कप्पूरादिपाणियवासेण वासियं, एवमादिउदगेसु तण्हाइयस्स अभिलासो भवति, पुव्वाणुभूतेण वा सती संभरणा भवति, अणणुभूतेण वा कोउएणं सती भवति ।।५२६२।।

ताहे सतीए उप्पण्णाए अप्पणो हिययपच्चक्खं भणति –

इहरा कहासु सुणिमो, इमं खु तं विमलसीतलं तोयं ।
विगतस्स वि णत्थि रसो, इति सेवति धारतोयादी ।।५२६३।।

"इहरे" त्ति – अपच्चक्खं सुतिमेत्तोवलद्धं, "इमं" ति पच्चक्खं, जं पि अम्हे उण्होदगादि विगतजीवं पिवामो तस्स वि सत्थोवहयस्स अणहाभूतस्स रसो णत्थि, इति एवं चिंतेउं धारोदगादि सेवइ ।।५२६३।।

तम्मि पडिसेविते इमे दोसा –

विगयम्मि कोउहल्ले, छव्वयविराहणं ति पडिगमणं ।
वेधाणस ओधाणे, गिलाण-सेहेण वा दिट्ठो ।।५२६४।।

तम्मि उदगे आसेविए विगते उदगरसकोउए छट्ठं रातीभोयणविरति वयं भग्गं, तम्मि भग्गे सेसवयाण वि भंगो, ताहे "भग्गव्वती मि" त्ति स गिहे पडिगमणं करेज्ज, वेहाणसं वा करेज्ज, विहाराओ वा ओहाणं करेज्ज, गिलाणेण सेहेण वा अभिणवधम्मेण दिट्ठो तं पडिसेवंतो ।।५२६४।।

ताहे गिलाणो इमं कुज्जा –

तण्हातिओ गिलाणो, तं दिस्स पिएज्ज जा विराहणया ।
एमेव सेहमादी, पियंति अप्पच्चओ वा सिं ।।५२६५।।

तं दट्ठुं पिवंतं गिलाणो वि तिसितो पिवेज्ज, अतिसितो वा कोउएण पिवेज्जा । तेण पीएण अपत्थेण जा अणागाढादिविराहणा तण्णिप्फण्णं पच्छित्तं तस्स साधुस्स भवति । अह उद्दाति तो चरिमं । एवं सेहेण वि दिट्ठे सेहो वि पिवेज्जा, सेहस्स वा अपच्चओ भवेज्ज, जहेयं मोसं तहऽण्णं पि ।।५२६५।।

अहवा –

उड्डाहं च करेज्जा, विप्परिणामो व होज्ज सेहस्स ।
गेण्हंतेण व तेणं, खंडित भिण्णे व विद्धे वा ।।५२६६।।

सो वा सेहो अण्णमण्णस्स अक्खंतो उड्डाहं करेज्जा ।

अहवा – सेहो अयाणंतो भणेज्ज – "एस तेणो आहरेइ" त्ति उड्डाहं करेज्जा, तं वा दट्ठुं सेहो विपरिणमेज्ज, विपरिणतो सम्मत्तं चरणं लिंगं वा छड्डेज्ज । अगिलाणसाधुणा गिलाणेण वा सेहेण वा एतेसिं अण्णतरेण उदगं गेण्हंतेण तं उदगभायणं खंडियं भिण्णं वा वेहो से वा कतो ।।५२६६।।

अधवा –

फेडितमुद्दा तेणं, कज्जे सागारियस्स अतिगमणं ।
केण इमं तेणेहिं, तेणाणं आगमो कत्तो ।।५२६७।।

मुद्दियस्स वा मुद्दा फेडिया, अप्पणो य कज्जेण सागारितो "अइगतो" त्ति पविट्ठो तेण दिट्ठं। दिट्ठे भणाति – केण इमं खंडियं ? भिण्णं वा ?

साहू भणंति – तेणेहिं।

ताहे सागारितो भणइ – "तेणाणं आगमो कहं जातो ? जो अम्हेहिं ण णातो" ॥५२६७॥

ताहे सागारिगेण चित्तेण अवधारितं – "एतेहिं चेव उदगं पीतं भायणं वा खंडियं भिण्णं वा।" तत्थ सो भद्दो हवेज्ज पंतो वा।

भद्दो इमं भणेज्जा –

इहरह वि ताव अम्हं, भिक्खं च बलिं च गेण्हह ण किंचि।
एण्हिं खु तारिओ मि, गेण्हह छंदेण जेणऽट्ठो ॥५२६८॥

एयं उदगग्गहणं मोत्तुं "इहरह वि" त्ति चरगादिसामण्णं भिक्खग्गहणकाले जं [1]कुटुंबप्पगतं ततो भिक्खं अम्हं घरे ण हिंडह, जं वा देवताणं बलीकयं ततो उव्वरियं पि ण गेण्हह, इण्हिं पुण उदगग्गहणेन अणुग्गहो कतो, संसारातो य तारिता। एत्थ जेण भे अण्णेण वि अट्ठो तं पि तुब्भे छंदेण अप्पणो इच्छाए पज्जत्तियं गेण्हह ॥५२६८॥

इमं भद्दपंतेसु पच्छित्तं –

लहुगा अणुग्गहम्मी, अप्पत्तिय धम्मकंचुगे गुरुगा।
कडुग फरुसं भणंते, छम्मासो करभरे छेओ ॥५२६९॥

जति भद्दगो "अणुग्गहं" ति भणेज्ज तो चउलहुं। पंतो अप्पत्तियं करेज्जा।

अपत्तिओ वा इमं भणेज्ज – "एते धम्मकंचुगपविट्ठा एगलेस्सा लोगं मुसंति", एत्थ से चउगुरुं। कटुगवयणं फरुसवयणं वा भणंति छग्गुरुगा। रायकरभरेहिं भग्गाणं समणकरो वोढव्वो त्ति भणंते छेदो भवति ॥५२६९॥

मूलं सएज्झएसुं, अणवट्ठप्पो तिए चउक्केसु।
रच्छा महापहेसु य, पावति पारंचियं ठाणं ॥५२७०॥

[2]सइज्झा समोसियगा, तेहिं उदगं तेणियं ति एत्थ मूलं, तिगे चउक्के वा पसरिते 'तेणगा वा एते' अणवट्ठो, महापहेसु सेसरत्थासु य तेणियं ति य सुए पारंचियं ॥५२७०॥

"[3]कटुगफरुसं" पच्छद्धस्स इमं वक्खाणं –

चोरो त्ति कडुं दुव्वोडिओ त्ति फरुसं हतो सि पव्वावी।
समणकरो वोढव्वो, जाते मे करभरहताणं ॥५२७१॥

कंठा। सपक्खजयणा एसा गता।

[4]परपक्खजयणा इमा –

परपक्खम्मि य जयणा, दारे पिहितम्मि चउलहू होंति।
पिहिणे वि होंति लहुगा, जं ते तसपाणघातो य ॥५२७२॥

---

१ कुडुंबपागकयं, इत्यपि पाठः। २ सएज्झिया=प्रातिवेश्मिका। ३ गा० ५२६९। ४ गा० ५२५१।

मणुयगोणादी असंजतो सव्वो परपक्खो भाणियव्वो, आवत्तणपेढिआए जीववरोवणभया जति दारं न पिहेति तो चउलहुं। अह पिहेति तहावि आवत्तणपेढियाजते संचारयलूयाउद्देहिगमादीण य तसाणं घातो भवति, एत्थ वि चउलहुं तसणिप्फण्णं च ॥५२७२॥

अपिहिते इमे दोसा –

गोणे य साणमादी, वारणे लहुगा य जं च अहिकरणं।
खरए य तेणए या, गुरुगा य पदोसतो जं च ॥५२७३॥

दुवारे अपिहिते गोणादी पविसेज्जा, ते जति वारेति तो चउलहुं। सो य वारितो वच्चंतो अधिकरणं जेण हरितादि भलेहिति, तण्णिप्फण्णं अंतरायं च से कयं।

अहवा – 'खरए" त्ति तस्सेव संतिओ दासो दासी वा तेणगा वा पविसेज्जा, ते जति वारेति तो चउगुरुगा, ते वारिया समाणा पदुट्ठा जं छोभग-परितावणादि काहिति तण्णिप्फण्णं पावति ॥५२७३॥

तेसि अवारणे लहुगा, गोसे सागारियस्स सिट्ठम्मि।
लहुगा य जं च जत्तो, असिट्ठे संकापदं जं च ॥५२७४॥

गोण साण-खर-खरिय-तेणगा य जति ण वारेति तो पत्तेयं ङ्क। ते य अवारिता उदगं पिएज्जा, हरेज्जा वा, भायणादि वा विणासेज्जा। गोसे त्ति पच्चूसे जइ सागारियस्स साहेति "अमुगेण अमुगीए वा अमुगेण वा तेणेण राओ उदगं पीतं" ति चउलहुगा। कहिते सो रुट्ठो दुवक्खरियादीण जं परितावणादि काहीति, "जत्तो" त्ति बंधणघायण विसेसा, तो तण्णिप्फण्णं सव्वं पावइ। अह ण कहिति तो वि चउलहुगा। साधू य णट्ठे संकेज्जा, संकाए चउलहुं। निस्संकिते चउगुरुं। अणुग्गहादि वा भद्दपंतदोसा हवेज्ज, "जं च" पदुट्ठो णिच्छुभणादि करेज्ज ॥५२७४॥

गोणादियाण सव्वेसि वारणे इमे दोसा –

तिरियनिवारण अभिहणण मारणं जीवघातो नासंते।
खरिया छोभ विसाऽगणि, खरए पंतावणादीया ॥५२७५॥

सव्वे वि गोणादी तिरिया णिवारिज्जंता सिंगादिणा आहणेज्ज, तत्थ परितावणादि जाव मरणं भवे, सो वा णिवारितो जीवघातं करेंतो वच्चेज्जा। खरिया य णिवारिता छोभगं देज – "एस मे समणो पत्थेति", विसगरादि वा देज्ज, वसहिं वा अगणिणा झामेज्ज। खरगो वि पदुट्ठो पंतावणादि करेज्ज, भायणाणि वा विणासेज्ज, सेज्जातरं वा पंतावेज्ज ॥५२७५॥

तेणगा इमेहिं कारणेहिं उदगं हरेज्जा–

आसण्णो य छणूसवो, कज्जं पि य तारिसेण उदएण।
तेणाण य आगमणं, अच्छइ तुण्हिक्कगा तेण ॥५२७६॥

आसण्णे छणे ऊसवे वा, छणो जत्थ विसिट्ठं भत्तपाणं उवसाहिज्जति, ऊसवो जत्थ तं च उवसाधिज्जति, जणो य अलंकिय विभूसितो उज्जाणादिसु मित्तादिजणपरिवुडो खज्जादिणा उवललति। तम्मि छणे ऊसवे वा तारिसेण उदगेण अवस्सं कज्जं।

तम्मि य अप्पणो गिहे अविज्जमाणे उदगतेणणट्ठाए आगता तेणा । ताहे अगीता भणंति – "तेणा आगता, अच्छह भंते ! तुण्हिक्का, ण कप्पति कहेतुं अयं तेणो, अयं उवचरए" त्ति । अधवा – तेणा आगता संजतेहिं दिट्ठा । ते तेणगा भणंति – "तुण्हिक्का अच्छह, मा भे उद्दविस्सामो" ॥५२७६॥

उच्छवच्छणेसु संभारितं दगं ति सितरोगितट्ठा वा ।
दोहल-कुतूहलेण व, हरंति पडिसेवियादीया ॥५२७७॥

तेसु छणूसवेसु तिसिया पीयणट्ठाए उदगं वासवासियं कप्पूरपाडलावासियं वा चउपंचमूलसंभारकयं वा रोगियस्सट्ठाए अवहरंति, गुव्विणीए वा डोहलट्ठाए, कोउगेण वा केरिसो एयस्स साओ ? त्ति, पडिसेविता अण्णे वा अवहरंति ॥५२७७॥

गहितं च तेहि उदगं, घेत्तूण गता जतो सि गंतव्वं ।
सागारितो उ भणती, सउणो वि य रक्खती नेड्डं ॥५२७८॥

तेणगा घेत्तुं उदगं गता जत्थ गंतव्वं । अप्पणो य कज्जेण सागारिओ पभाए आगतो । मुद्दाभेदं दट्ठुं भणाति – "अज्जो ! सउणो वि, "नेड्डं" ति गिहं, सो वि ताव अप्पणो गिहं रक्खति, तुब्भेहिं इमं ण रक्खियं" ॥५२७८॥

दगभाणूणे दट्ठुं, सजलं व हितं दगं च परिसडितं ।
केण हियं ? तेणेहिं, असिट्ठ भद्देतर इमे तू ॥५२७९॥

अहवा – जलेण भरियं भायणं दगं च परिसडियं । तत्थ दट्ठुं सागारिगो पुच्छति – केण हियं । साहू भणंति – तेणेहिंति । तत्थ जति तेणगं वण्णरूवेण कहेंति तो बंधणादिया दोसा, "असिट्ठि" त्ति अकहिते भद्ददोसा, "इतरे" त्ति पंतदोसा य इमे ॥५२७९॥

लहुगा अणुग्गहम्मी, अप्पत्तियधम्मकंचुगे गुरुगा ।
कडुग-फरुसं भणंते, छम्मासो करभरे छेओ ॥५२८०॥ पूर्ववत्

मूलं सएज्झएसुं, अणवट्ठप्पो तिए चउक्केसु ।
रच्छ-महापहेसु य, पावति पारंचियं ठाणं ॥५२८१॥ पूर्ववत्

एगमणेगे छेदो, दिय रातो विणास-गरहमादीया ।
जं पाविहिंति विहणिग्गतादि वसहिं अलभमाणा ॥५२८२॥

पूर्ववत् । एगस्स साधुस्स अणेगाण वा वोच्छेदं करेज्जा । अहवा – तद्दव्वस्स अणेगाण वा । जति दिवसतो णिच्छुभेज्जा ꣸ ꣸, रातो वा ꣸ ꣸ । अण्णं वा वसहिं अलभंता तेणसावयादिएहि विणासं पाविज्जंति, लोगेण वा गरहिज्जंति । एते तेणग त्ति । ततो य णिच्छूढा विहं पडिवण्णा जं सीउण्हखुप्पिवासपरीसहमादी तेणसावयादीहिं वा वसहिं अलभंता जं पावेंति तण्णिप्फण्णं पावेंति ।

अधवा – तस्स दोसेण अण्णे विह-णिग्गतादिया वसहिं अलभंता जं पाविहिंति तण्णिप्फण्णं पावति । एवं अकहिज्जंते तेणे दोसा । अध तेणं कहेज्ज – जं ते तेणगाण काहिति तेणगा वा तस्स साधुस्स वा जं काहिति ॥५२८२॥ एते अगीयत्थस्स दोसा ।

इदाणिं गियत्थस्स विघी भण्णइ –

गीयत्थस्स वि एवं, णिक्कारण कारणे अजतणाए ।
कारणे कडजोगिस्स उ, कप्पति वि तिविहाए जयणाए ॥५२८३॥

गीयत्थो वि जो निक्कारणे उदगसालाए ठाति, कारणे वा ठितो जयणं ण करेति । कडजोगी गीयत्थो । तिविधा जयणा – अणुण्णवणजयणा सपक्खजयणा परपक्खजयणा य ॥५२८३॥

निक्कारणम्मि दोसा, पडिबंधे कारणम्मि णिद्दोसा ।
ते चेव अजयणाए, पुणो वि सो पावती दोसे ॥५२८४॥

जइ निक्कारणे उदगपडिबद्धाए वसहीए ठाति तो ते चेव पुव्वभणिता दोसा भवंति । कारणे पुण ते चेव दोसे पावति जे अजयणट्ठिताणं ॥५२८४॥

किं पुण तं कारणं ?, इमं –

अद्धाणणिग्गयादी, तिक्खुत्तो मग्गिऊण असतीए ।
गीयत्था जयणाए, वसंति तो उदगसालाए ॥५२८५॥

विसुद्धवसहीए असति सेसं कंठं ॥५२८५॥

तत्थ य अणुण्णवणाए जति वसहिसामी भणेज्ज – "जति अम्हं किं चि जोतिसाति कहेस्सह तो मे वसहिं देमो ।"

तत्थ साधूहिं वत्तव्वं –

न वि जोतिसं न गणियं, न चऽक्खरे न वि य किं चि रक्खामो ।
अप्पस्सगा असुणगा, भायणखंभोवमा वसिमो ॥५२८६॥

जोतिसाति ण सिक्खवेमो, ण वा जाणामो त्ति वत्तव्वं, जहा भायणखंभ-कुड्डादिया तुज्झं सुत्थदुत्थेसु वावारं ण वहंति एवं अम्हे विसामो । जति ते किंचि कज्जविवत्तिं पेच्छामो तं पेच्छंता वि अपस्सगा इह अच्छामो । जइ वा कोइ भणेज्जा – इमं सेज्जातरस्स कहेज्जह, असुणंतं वा सुणावेह, तत्थ वि अम्हे असुणगा ॥५२८६॥

णिक्कारणम्मि एवं, कारणदुलभे भणंतिमं वसभा ।
अम्हे ठियल्लग च्चिय, अहापवत्तं वहह तुब्भे ॥५२८७॥

उस्सग्गेणं एवं ठायंति । असिवोमादिदुब्भिक्खकारणेसु अण्णतो अगच्छंता तत्थ य सुद्धवसही दुल्लभा ताहे उदगसालाए ठायंता इमं भणंति साधारणवयणं वसभा "अम्हे ता ठियचित्ता, तुम्हे पुण जं अहापवत्तं वावारवहणं दिवसदेवसियं तं वहेह चेव ॥५२८७॥ गया अणुण्णवणजयणा ।

इमा [1]सपक्खजयणा –

आमं ति अब्भुवगए, भिक्ख-वियारादि णिग्गय मिएसुं ।
भणति गुरू सागरियं, कत्थुदगं जाणणट्ठाए ॥५२८८॥

---

१ गा० ५२८३ ।

सागारिगेण अब्भुवगयं – "णिरुवगारी होउं अच्छह त्ति, अहापवत्तं वावारं वहिस्सामो" त्ति, ताहे तत्थ ठिया, इहरा ण ठायंति । तत्थ ठियाणं इमा विही – जाहे सव्वे मिगा भिक्खादिणिग्गता भवंति ताहे गुरू उदगजाणणट्ठा अण्णावदेसेण सागारियस्स पुरतो ॥५२८८॥

इमं भणति –

चउमूल पंचमूला, तालोदाणं च तावतोयाणं ।
दिट्ठभए सन्निचिया, अण्णादेसे कुडुंबीणं ॥५२८९॥

चउहिं पंचहिं वा अण्णतमेहिं सुरहिमूलेहिं पाणट्ठा संभारकडं तालोदं तोसलीए, तावोदगं रायगिहे ॥५२८९॥

एवं च भणितमेत्तम्मि कारणे सो भणाति आयरिए ।
अत्थि ममं सन्निचिया, पेच्छह णाणाविहे उदए ॥५२९०॥

जाहे एवं भणितो गुरुणा ताहे कमपत्ते कहणकारणे सेज्जातरो पच्छद्धेण भणति – "एत्थ भोयणे तावोदगं, एत्थ तालोदगं", एवं तेण सव्वे कहिता ॥५२९०॥

ते य गुरुणा –

उवलक्खिया य उदगा, संथाराणं जहाविही गहणं ।
जो जस्स उ पाओग्गो, सो तस्स तहिं तु दायव्वो ॥५२९१॥

ताहे संथारगाणं अहाराइणियाए विहिगहणे पत्ते वि तं सामायारिं भेत्तुं गुरवो अप्पत्तियं तत्थ करेंति, जो जस्स जम्मि ठाणे जोग्गो संथारगो तस्स तहिं ठाणं देंति ॥५२९१॥

तत्थिमो विही –

निक्खम-पवेसवज्जण, दूरे य अभाविता उ उदगस्स ।
उदयंतेण परिणता, चिलिमिणि राइंदिय असुण्णं ॥५२९२॥

सागारियस्स उदगादिगहणट्ठा पविसमाणस्स णिक्खमण-पवेसो वज्जेयव्वो। उदगभायणाण य अभाविया अगीया अतिपरिणामगा मंदधम्मा य दूरतो ठविज्जंति । जे पुण धम्मसद्धिया थिरचित्ता ते उदगभायणाण ठाणें य अंतरे कडगो चिलिमिली वा दिज्जति । गीयत्थपरिणामगेहिं य दियारातो य असुण्णं कज्जति ॥५२९२॥

ते तत्थ सन्निविट्ठा, गहिता संथारगा विधीपुव्वं ।
जागरमाण वसंती, सपक्खजयणाए गीयत्था ॥५२९३॥

जहा तत्थ दोसो ण भवति तहा संथारगा घेत्तव्वा, एसेव तत्थ विधी । सपक्खं रक्खंता तत्थ गीयत्था सदा सजागरा सुवंति ॥५२९३॥

अधवा –

ठाणं वा ठायंती, णिसेज्ज अहवा सजागरे सुवति ।
बहुसो अभिद्दवंते, वयणमिणं वायणं देमि ॥५२९४॥

जो वा दढसंघयणो अत्थचिंतगो सो ठाणं ठाति, णिसण्णो वा झायमाणो चिट्ठइ ।

अधवा – गीयत्थो कृतकेन सव्वेसिं पुरतो भणति – "संदिसह भंते ! सव्वराइयं उस्सग्गं करेस्सामि।" पच्छा सुत्तेसु सुवति, अण्णदिणं अण्णो संदिसावेति । एवं रक्खंति । वसभा वा सजागरा सुवंति, जति तत्थ दगाभिलासी दगभायणंतेण आगच्छति तत्थ तहा गुरवो वसभा वा संजीहारं करेंति, जहा सो पडिणीयत्त त्ति ।

अध सो पुणो पुणो अभिद्दवति ताहे गुरू सामण्णतो वयणं भणाति – "उट्ठेह भंते ! वायणं देमि।" तं वा भणाइ "अज्जो ! वायणं वा ते देमि" ॥५२६४॥

फिडितं च दगट्ठिं वा, जतणा वारेंति ण तु फुडं बेंति ।
मा तं सोच्छिति अण्णो, णित्थक्कोऽकज्ज गमणं वा ॥५२६५॥

फुडं रुक्खं ण भणंति, मा तं अण्णो सोउं अण्णेसिं कहेस्सति ।

पच्छा सव्वेहिं णाते गुरुणा वा फुडं भणितें णित्थक्को णिल्लज्जो भवति ।

पच्छा णिल्लज्जीभूतो अकज्जं पि करेति, णातो मि त्ति लज्जितो वा पडिगमणादीणि करेज्जा ॥५२६५॥

"[1]जयणाए वारेंति" त्ति अस्य व्याख्या –

दारं न होति एत्तो, निद्दामत्ताणि पुच्छ अच्छीणि ।
भण जं च संकितं ते, गेण्हह वेरत्तियं भंते ! ॥५२६६॥

कंठा । सपक्खजयणा गता ।

[2]इमा परपक्खजयणा –

परपक्खम्मि वि दारं, ठयंति जयणाए दो वि वारेंति ।
तहवि य अठायमाणे, उवेह पुट्ठा व साहंति ॥५२६७॥

परपक्खेसु दारं ठयंति इमाए जयणाए –

पेहपमज्जणसणियं, उवओगं काउं दारे वट्टेंति ।
तिरिय णर दोण्णि एते, खर-खरि त्थि-पुं णिसिट्ठितरे ॥५२६८॥

चक्खुणा पेहिउं रयोहरणेण पमज्जंति, अचक्खुविसए वा उवओगं काउं ।

अथवा – सचक्खुविसए वि उवओगकरणं ण विरुज्झति । एवं च सणियं जहा जीवविराधणा ण भवति तहा जयणाए दारं ठयंति ।

अहवा – "जयणाए दो वि वारेंति" तिरिया णरा य एते दोण्णि ।

अहवा – दोण्णि – दासो दासी य, अहवा – दोण्णि – इत्थी पुरिसो य ।

अहवा – दोण्णि "निसिट्ठितर" त्ति जेसिं पवेसोऽणुण्णात्तो ते निसिट्ठा, णाणुण्णातो पवेसो जेसिं ते इतर त्ति ।

---

१ गा० ५२६५ । २ गा० ५२८३ ।

अहवा – अक्कंतियतेणा णिसट्ठा इतरे अणिसट्ठा, उवरि वक्खाणिज्जमाणा, जयणाए । तहा य अट्ठायमाणेसु "उवेह" त्ति तुण्हिक्को अच्छति । सागारिणा वा पुट्ठो – "केणुदगं णीयं?" ति ताहे साहेंति "अमुगेण अमुगीए वा" ॥५२९८॥

गेण्हंतेसु य दोसु वि, वयणमिणं तत्थ बेंति गीयत्था ।
बहुगं च णेसि उदगं, किं पगयं होहिती कल्लं ॥५२९९॥

इत्थिपुरिसादिसु दोसु वि गेण्हंतेसु गुरुमादी गीयत्था इमं वयणं (भणंति) पच्छद्धं कंठं ॥५२९९॥

तेणगेसु इमा विही –

नीसट्ठेसु उवेहं, सत्थेणं तासिता तु तुसिणीया ।
बहुसो य भणति महिलं, जह तं वयणं सुणाति अन्नो ॥५३००॥

तेणा दुविधा – णिसट्ठतेणा अणिसट्ठतेणा य । णिसट्ठा अक्कंतिया बला अवहरंति जहा पभवो । तेसु आगतेसु उवेहं करेइ, तुण्हिक्को अच्छइ ।

अहवा – खग्गादिणा सत्थेण तासिता – तुण्हिक्का अच्छह मा भे मारेसं ।
अह महिला उदगं णेति तत्थ इमं वयणं – "बहुसो य पच्छद्धं" ॥५३००॥

अस्य व्याख्या –

साहूणं वसहीए, रत्तिं महिला ण कप्पती एंती ।
बहुगं च नेसि उदगं, किं पाहुणगा वियाले य ॥५३०१॥

तेणेसु णिसट्ठेसुं पुव्वा-ऽवररत्तिमल्लियंतेसु ।
तेणुदयरक्खणट्ठा, वयणमिमं बेंति गीयत्था ॥५३०२॥

"तेणे" त्ति उदगं जे तेणेति, तेसिं रक्खणट्ठा गीयत्था उच्चसद्देण इमं भणंति ॥५३०२॥

जागरह णरा ! णिच्चं, जागरमाणस्स वड्ढती बुद्धी ।
जो सुवति ण सो सुहितो, जो जग्गति सो सया सुहितो ॥५३०३॥ कंठा

सुवति सुवंतस्स सुयं, संकियखलियं भवे पमत्तस्स ।
जागरमाणस्स सुयं, थिरपरिचियमप्पमत्तस्स ॥५३०४॥

"सुवति" त्ति नश्यतीत्यर्थः । अहवा – निद्राप्रमत्तस्य सुत्तत्था संकिता भवंति खलंति वा, णो दरदरस्स आगच्छंति, संभरणेण आगच्छंति, नागच्छंति वेत्यर्थः । विगहादीहिं वा पमत्तस्स सुयं अथिरं भवति ॥५३०४॥

सुवइ य अजगरभूतो, सुयं पि से णासती अमयभूयं ।
होहिति गोणब्भूयो, सुयं पि णट्ठे अमयभूये ॥५३०५॥

अयगरस्स किल महंती निद्दा भवति, जेण जहा निच्चितो सुवइ ।

किं चान्यत् –

जागरिता धम्मीणं, आधम्मीणं च सुत्तगा सेया ।
वच्छाहिवभगिणीए, अकहिंसु जिणो जयंतीए ॥५३०६॥

वच्छजणवए कोसंवी णगरी, तस्स अहिवो संताणितो राया, तस्स भगिणी जयंती। तीए भगवं वद्धमाणो पुच्छिओ। [1]धम्मियाणं किं सुत्तया, सेया ? जागरिया सेया ? भगवया वागरियं – "धम्मियाणं जागरिया सेया, णो सुत्तया। अधम्मियाणं सुत्तया सेया, णो जागरिया।"

"अकहिंसु" त्ति अतीते एवं कहियवान् ॥५३०६॥

किं चान्यत् –

णालस्सेण समं सोक्खं, ण विज्जा सह णिद्या।
ण वेरग्गं ममत्तेणं, णारंभेण दयालुया ॥५३०७॥ कंठा

तासेतूण अवहिते, अवेइएहिं व गोसे साहेंति।
जाणंते वि य तेणं, साहंति न वण्ण-रूवेहिं ॥५३०८॥

अवकंतियतेणेहिं सत्थेणं तासेउं, अणवकंतिएहिं वा अवेइएहिं य, एवं अण्णयरप्पगारेण हरिते, "गोसि" त्ति पच्चूसे सेज्जातरस्स कहेंति, जति वि ते णामगोएणं जाणंति तहावि तं ण कहेंति, अकहिज्जंते वा जति पच्चंगिरा भवति तो कहेंति ॥५३०८॥ "स उदग" त्ति सेज्जा गता।

इदाणिं उदगसमीवे सा भण्णइ –

इति सउदगा तु एसा, उदगसमीवम्मि तिण्णिमे भेदा।
एक्केक्क चिट्ठणादी, आहारुच्चार-झाणादी ॥५३०९॥

जा सा उदगसमीवे तस्स तिण्णि भेदा, तेसु तिसु भेदेसु एक्केक्के चिट्ठणादिया किरियविसेसा करेज्ज ॥५३०९॥

ते य इमे तिण्णि भेदा –

दगतीरचिट्ठणादी, जूवग आतावणा य बोधव्वा।
लहुगो लहुगा लहुगा, तत्थ वि आणादिणो दोसा ॥५३१०॥

[2]चिट्ठणादिया दस वि पदा एक्कं पदं। जूवगं ति वितियं। आयावणं ति ततियं। चिट्ठणादि दस वि उदगसमीवं करेंतस्स पत्तेयं मासलहुं। जूवगे वसहिं गेण्हति ङ्क। आतवेत्ति ङ्क। जूवगं वा संकमेण गच्छति ङ्क। तिसु वि ठाणेसु पत्तेयं आणादिया दोसा भवंति ॥५३१०॥

दगतीरं दगासण्णं दगब्भासं ति वा एगट्ठं। तस्स पमाणे इमे आएसा –

णयणे[1] पूरे[2] दिट्ठे[3], तडि[4] सिंचण[5] वीइ[6]मेव पुट्ठे[7] य।
आगच्छंते आरण्ण, गाम पसु मणुय इत्थीओ ॥५३११॥

चोदगो भणइ—"अहं दगतीरं भणामि, उदगागरातो जत्थ णिज्जति उदगं तं उदगतीरं" ?

---

१ भग० श० १२ उ० २। २ गा० ७ देखो ५३२५।

आयरिओ भणति – दूरं पि णज्जति उदगं, तम्हा ण होइ तं उदगतीरं।
तो जत्तियं णदीपूरेण अक्कमइ तं उदगतीरं।
अधवा – जहिं ठिएहिं जलं दीसइ, अधवा – णदीए तडी उदगतीरं।
अधवा – जहिं ठितो जलट्ठिएण सिंचिज्जइ सिंगगादिणा तं जलतीरं।
अधवा – जावतियं वीति (चि) ओ फुसंति, अधवा – जावतियं जलेण पुट्ठं तं दगतीरं"।
आयरिओ भणइ – 'ण होइ एयं दकतीरं।"

दगतीरलक्खणं इमं भणति – आरण्णा गामेयगा वा दगट्ठिणो आगच्छमाणा पसु मणुस्सा इत्थिगाओ वा साधुं दगतीरट्ठियं दट्ठु थक्कंति – णियत्तंति वा जत्तो तं उदगतीरं ॥५३११॥

पुणरवि आयरिओ भणति –

सिंचण-वीयी-पुट्ठा, दगतीरं होइ ण पुण तम्मत्तं।
ओयरिउत्तरितुमणा, जहि दिस्स तसंति तं तीरं ॥५३१२

णयणादियाणं सत्तण्ह आदेसाणं चरिमा तिण्णि सिंचण, वीति, पुट्ठो य, एते णियमा दगतीरं। सेसा भयणिज्जा। इमं अव्वभिचारि दगतीरं – आरण्णा गामेयगा वा तिरिया वा मणुस्सा वा दगट्ठिणो ओयरिउमणा पाउं वा उत्तरिउमणा जलचरा वा जहिं ठियं साधुं दट्ठूणं चिट्ठंति, त्रसंति वा तं दगतीरं भवति ॥५३१२॥

दगतीरे चिट्ठणादिसु इमे दोसा –

अहिकरणमंतराए, छेदण उस्सास अणहियासे य।
आणा सिंचण जल-थल-खहचरपाणाण वित्तासो ॥५३१३॥

दगतीरे चिट्ठंतस्स अधिकरणं भवति, वहूण य अंतरायं करेति। "छेदणं" ति – साधुस्स चलणा जो उट्ठिय-रओ सो जले णिवडति। "उस्सासे" ति – उस्सासविमुक्कपोग्गला जले निवडंति। जलं वा खोभेंति। दगतीरे ठितो वा तिसितो धितिदुब्बलो अणधियासो जलं पिवेज्जा। तित्थकराणाभंगो य। दगतीरे ठियं वा अणुकंप-पडिणीययाए कोति सिंचेज्जा। दगतीरट्ठिओ य जल-थल-खहचराणं वित्तासं करेति ॥५३१३॥

"अधिकरणं" ति अस्य व्याख्या –

दट्ठूण वा णियत्तण, अभिहणणं वा वि अण्णतूहेणं।
गामा-ऽऽरण्णपसूणं, जा जहि आरोवणा भणिया ॥५३१४

"[१]दट्ठूणं वा नियत्तण" त्ति अस्य व्याख्या –

पडिपहणियत्तमाणम्मि अंतरागं (यं) च तिमरणे चरिमं।
सिग्घगति तन्निमित्तं, अभिघातो काय-आताए ॥५३१५

गामेयगा अरण्णवासिणो वा, गामेयगा ताव ठप्पा। आरण्णा तिसिया तित्थाहिमुहा एंता दगतीरे तं साधुं दट्ठूण पडिपहेण गच्छंतेसु अधिकरणं, छक्काए य वहेंति, उदगं च अपाउं जंति ते पडिपहेणं

---

१ गा० ५३१३।

गच्छंति तो अंतरायं भवति, चसद्दातो परितावणादी दोसा, एगम्मि परितावितं छेदो, दोसु मूलं, तिसु अणवट्ठो।[1]

अह एक्कं तिसाए मरइ तो मूलं, दोसु अणवट्ठो, तिसु पारंचियं।

"[2]अभिहणणं वा वि" अस्य व्याख्या – "सिग्घगति" पच्छद्धं, "तण्णिमित्तं" ति – तं साधुं दट्ठुं भीता सिग्घगती अण्णं अण्णोण्णं वा अभिघायंति, छक्काए वा घाएंति, साहुस्स वा दित्ता वाघातं, करेज्जा, तिसिया वा अणधियासत्तणतो साहुं णोल्लेउं अभिहणेउं गच्छेज्जा ॥५३१५॥

"[3]अण्णतूहेणं" ति अस्य व्याख्या –

अतड-पवातो सो च्चेव य मग्गो अपरिभुत्त हरितादी ।
ओवड कूडे मगरा, जदि घोट्टे तसा य दुहतो वि ॥५३१६॥

तत्थ ठितं साधुं दट्ठुं 'अतड" ति अतित्थं अणोतारं तेण ओयरेज्जा। तत्थ छिण्णटंके प्रपाते आयविराहणा से हवेज्ज।

अहवा – सो चेव अहिणवो मग्गो पयट्टेज्ज, तत्थ अपरिभुत्ते अणाणुपुव्वीए छक्काया विराहिज्जेज्ज। "[4]ओवड" त्ति – खड्डातीते पडेज्ज, अतित्थे वा कूडेण घेप्पेज्ज, अतित्थे वा जलमोइण्णो मगरातिणा सावयेण खज्जेज्ज। साधुनिमित्तं "[5]तित्थेण अतित्थेण वा ओयरित्ता अतसे आउक्काए जति सो घोट्टं करेइ ततिया चउलहुगा, अचित्ते आउक्काए जइ वेंदिये ग्रसति तो छल्लहुगं, तेइंदिए छग्गुरुगं, चउरिंदिए छेदो, पंचेंदिए एक्कम्मि मूलं, दोसु अणवट्ठो, तिसु पारंचियं। 'दुहतो वि" त्ति – जत्थ आउक्काओ सचित्तो सतसो य तत्थ दो वि पच्छित्ता भवंति, चउरिंदिएसु चउसु पारंचिय, तेइंदिएसु पंचसु पारंचियं, वेंदिएसु छसु पारंचियं ॥५३१६॥ एते ताव आरण्णगाणं दोसा भणिता।

इदाणिं [6]गामेयगाणं दोसा भण्णंति –

गामेय कुच्छियमकुच्छिते य एक्केक्क दुट्ठऽदुट्ठा य ।
दुट्ठा जह आरण्णा, दुगुंछित[7]ऽदुगुंछिता णेया ॥५३१७॥

ते गामेयगा तिरिया दुविधा – दुगुंछिता अदुगुंछिता य। दुगुंछिता गद्दभाती, अदुगुंछिता गवादी। दुगुंछिता दुट्ठा अदुट्ठा य। अदुगुंछिया वि एवं। जे दुगुंछिता अदुगुंछिता वा दुट्ठा ते दोवि जहा आरण्णा भणिता तहा भाणियव्वा ॥५३१७॥

जे अदुगुंछिता अदुट्ठा तेसु नत्थि दोसा जहासंभवं भाणियव्वा,

जे ते दुगुंछिया अदुट्ठा तेसु इमे दोसा –

भुत्तेयरदोस कुच्छिते, पडिणीए छोभ गेण्हणादीया ।
आरण्णमणुय-थीसु वि, ते चेव णियत्तणादीया ॥५३१८॥

तिरियंची महासद्दिता दुगुंछिताले, जेण गिहिका भुत्ता तस्स तं दट्ठुं सतिकरणं, "इतरे" त्ति – जेण ण भुत्ता तस्स तं दट्ठुं कोउअं भवति, कुच्छियासु वा आसण्णठियासु पडिणीतो कोइ छोभं देज्ज – "मए

---

१ चतुर्षु परितापितेषु पारांचिकं, इति बृ० वृ० गा० २३८९। २ गा० ५३१४। ३ गा० ५३१४। ४ उवग, इति पूनासत्कताडपत्रप्रतौ। ५ अन्नतित्थेण, इत्यपि पाठः। ६ गा० ५३१४। ७ ऽकुंछिता इत्यपि पाठः।

एस समणगो महासद्दियं पडिसेवंतो दिट्ठो", तत्थ वि गेण्हणादिया दोसा। एवं गामारण्णतिरिएसु दोसा भणिता। जा य जत्थ काए आरोवणा भणिता सा सव्वा उवउंजितूण भाणियव्वा ॥ एते तिरियाणं दोसा भणिता।

इदाणिं मणुस्साणं "आरण्णमणुय" पच्छद्धं।

मणुया दुविधा – आरण्णगा गामेयगा य। तत्थ आरण्णयाणं पुरिसाण य इत्थियाण य ते चेव णियत्तणादिया दोसा जे तिरियाणं भणिया ॥५३१८॥

इमे य अण्णे दोसा –

पावं अवाउडातो, सबरादीतो तहेव णित्थक्का।
आरियपुरिस कुतूहल, आतुभयपुलिंद आसुवधो ॥५३१९॥

पुव्वद्धं कंठं। णित्थक्का णिल्लज्जा। तातो साधुं दट्ठूणं आरियपुरिसो त्ति काउं पुलिंदियादिअणारिया कोउएणं साधुसमीवं एज्जंताओ दट्ठुं आयपरउभयसमुत्था दोसा भवेज्ज। मेहुणपुलिंदो वा तं इत्थियं साधुसगासमागतं दट्ठुं ईसायंतो रुट्ठो "आसु" सिग्घं मारेज्ज ॥५३१९॥

थी-पुरिसअणायारे, खोभो सागारियं ति वा पहणे।
गामित्थी-पुरिसेसु वि, ते चिय दोसा इमे चऽण्णे ॥५३२०॥

अधवा – सो पुलिंदपुरिसो पुलिंदयाए सह अणायारं आयरेज्ज, तत्थ भुत्ताभुत्ताण सतिकरणकोउएहिं चित्तखोहो हवेज्ज। खुभिए य चित्ते पडिगमणादिया दोसा।

अहवा – सो पुलिंदतो अणायारमायरिउकामो सागारियं ति काउं साधुं पहणेज्जा मारेज्ज वा। एते आरण्णयाण दोसा। गामेयकपुरिसइत्थीण वि एते चेव दोसा, इमे य अण्णे दोसा ॥५३२०॥

चंकमणं णिल्लेवण, चिट्ठित्ता चेव तम्मि तूहम्मि।
अच्छंते संकापद, मज्जण दट्ठुं सतीकरणं ॥५३२१॥

"[1]चंकमणे" त्ति अस्य व्याख्या –

अण्णत्थ व चंकमती, [2]मज्जण अण्णत्थ वा वि वोसिरती।
कोनाली चंकमणे, परकूलातो वि तत्थेतिं ॥५३२२॥

कोइ अण्णत्थ चंकमंतो साधुं दगतीरे दट्ठुं तत्थेति एत्थ साधुसमीवे चेव चंकमणं करेस्सामि, किं चि पुच्छिस्सामि वा वोल्लालाव-संकहाए अच्छिस्सामि, साधुं वा दगतीरे चंकमंतं दट्ठुं गिही अण्णथाणाओ तत्थेइ अहं पि एत्थेव चंकमिस्सं, सो य अयगोलसमो विभासा।

अहवा – तत्थ [3]दगतीरे चंकमणं करेस्सामीति आगतो तत्थ साधुं दट्ठूणं चिंतेति – "जामि इतो ठाणातो अण्णत्थ चंकमणं करेस्सामी" ति गच्छति, गच्छंते अधिकरणं। "[4]णिल्लेवणं" ति अस्य व्याख्या – "[5][6]मज्जण अण्णत्थ वा वि वोसिरति"। सण्णं वोसिरितुं अण्णत्थ णिल्लेवेउकामो साधुं दट्ठुं साहुसमीवे एउं निल्लेवेइ। एवं मज्जणंपि, मज्जणं ति ण्हाणं।

अहवा – तत्थ निल्लेविउं कामो साहुं दट्ठुं अण्णत्थ गंतुं णिल्लेवेति एवं मज्जण सण्णवोसिरणं पि।

---

१ गा० ५३२१। २ आयमण''''इत्यपि पाठः। ३ ''''समीवे, इत्यपि पाठः। ४ गा० ५३२१। ५ आयमण''''इत्यपि पाठः। ६ गा० ५३२२।

"[1]चिट्ठिता चेव तम्मि तूहम्मि" अस्य व्याख्या – "कोनाली" पच्छद्धं। गंतुकामो सागारिगो साधुं दगतीरे दट्ठुं तम्मि चेव "तूहम्मि" त्ति तित्थे चिट्ठति।

अहवा–परकूलातो वि साधुसमीवं एति। "कोनालि" त्ति गोट्ठी। गोट्ठीए साधुणा सह वोल्लालाव-संकहेण चंकमणं करेंतो अच्छिस्सं, तत्थ साधुसंलावणिमित्तं अच्छंतो छक्काए ववति ॥५३२२॥

"[2]अच्छंते संकापद" त्ति अस्य व्याख्या –

दग-मेहुणसंकाए, लहुगा गुरुगा य मूल णीसंके।
दगतूर कुंचवीरग, पघंस केसादलंकारे ॥५३२३॥

दगतीरे साधुं अच्छंतं दट्ठुं कोइ संकेज्जा – किं उदगट्ठा अच्छति। अह किं संगारदिण्णतो? तत्थ दगसंकाए चउलहुं, णिस्संके चउगुरुं। मेहुणसंकाए चउगुरुं, णिस्संकिते मूलं।

"[3]मज्जण दट्ठुं सतीकरणं" त्ति अस्य व्याख्या – "दगतूरं" पच्छद्धं। कोति सविगारं मज्जति, दगतूरं करेंतो एरिसं जलं अप्फालेति जेण मुरवसद्दो भवति। एवं पडह-पणव-भेरिमादिया सद्दा करेंति।

अधवा – कुंचवीरगेण जलं आहिंडति। कुंचवीरगो सगडपक्खसारिच्छं जलजाणं कज्जति। सुगंध-दव्वेहि य आघंसमाणं केसवत्थमल्लआभरणालंकारेण य आभरेंते दट्ठुं भुत्तभोगिसतिकरणं, इयराण कोउयं भवइ। पडिगमणादी दोसा ॥५३२३॥ एते पुरिसेसु दोसा।

इमे इत्थीसु–

मज्जण-ण्हाणट्ठाणेसु अच्छती इत्थिणं ति गहणादी।
एमेव कुच्छितेतर-इत्थीसविसेस मिहुणेसु ॥५३२४॥

इत्थीओ दुविहा–अदुगुंछिता दुगुंछिता य। तत्थ अदुगुंछिता बंभणी खत्तिया वेसि सुद्दी य। दुगुंछिता संभोइयदुअक्खरियाओ, अहवा णडवरुडादियाओ असंभोइयइत्थिआओ। एताओ वि दुविधाओ – सपरिग्गहा अपरिग्गहाओ य। एत्थ सपरिग्गहित्थियाणं वसंताइसु अण्णत्थ ऊसवे विभवेण जा जलक्रीडा संमज्जणं, मलडाहोवसमकरणमेत्तं ण्हाणं, जलवहणपहेसु वा अण्णेसु वा णिल्लेवणट्ठाणेसु इत्थीणं अच्छंतस्स आयपरोभय-समुत्था दोसा।

अधवा – तसिं णाययो पासित्ता जत्थऽम्ह इत्थीओ मज्जणादी करेंति तत्थ सो समणो परिभवं – कामेमाणो अच्छति, दुट्ठो त्ति काउ गेण्हणादयो दोसा। जाओ पुण अपरिग्गहाओ कुच्छिया इयर त्ति अकुच्छिया वा इत्थीओ तासु वि एवं चेव आयपरोभयसमुत्था दोसा। "मिहुणं" ति जे सइत्थिया पुरिसा तेसु मिहुणक्रीडासु क्रीडंतेसु सविसेसतरा दोसा भवंति ॥५३२४॥

जम्हा दगसमीवे एवमादिया दोसा तम्हा [4]चिट्ठणादिया पदा इमे तत्थ णो कुज्जा –

चिट्ठण[1] णिसिय[2] तुयट्टे[3], निद्दा[4] पयला[5] तहेव सज्झाए[6]।
झाणा[7]ऽऽहार[8]वियारे[9], काउस्सग्गे[10] य मासलहुं ॥५३२५॥

उद्धट्ठितो चिट्ठइ, णिसीयणं उवविट्ठो चिट्ठइ, तुयट्टो णिव्वण्णो अच्छति ॥५३२५॥

---

१ गा० ५३२१। २ गा० ५३२१। ३ गा० ५३२१। ४ गा० ५३१०।

पयलणिद्दाणं इमं वक्खाणं –

सुहपडिबोहो णिद्दा, दुहपडिबोहो य णिद्द-णिद्दा य ।
पयला होति ठियस्सा, पयलापयला उ चंकमतो ॥५३२६॥

वायणादि पंचविहो सज्झाओ । "[1]झाणि" त्ति धम्मसुक्के झायति, आहारं वा आहारेति, "वियारे" त्ति-उच्चारपासवणं करेतिं, अभिभवस्स काउस्सगं वा करेति । एतेसु ताव दससु पदेसु अविसिट्ठं असामायारि-णिप्फण्णं मासलहुं ।।५३२६।।

इदाणिं विभागओ पच्छित्तं वण्णेउकामो अणाणुपुव्वीचारणियपदसंगहं चारणियविकप्पेसु च जं पच्छित्तं तं भणामि –

संपाइमे असंपाइमे य अदिट्ठे तहेव दिट्ठे य ।
पणगं लहु गुरु लहुगा गुरुग अहालंद पोरिसी अधिका ॥५३२७॥

तं दगतीरं दुविहं संपातिममसंपातिमं वा ।

एतेसिं इमा विभासा –

जलजाओ असंपातिम, संपाइम सेसगा उ पंचेंदी ।
अहवा विहंगवज्जा, होंति असंपाइमा सेसा ॥५३२८॥

अण्णठाणातो आगंतुं जे जले जलचरा वा थलचरा वा पंचेंदिया संपतंति ते संपाइमा, जे पुण जलचरा वा तत्रस्था एव ते असंपातिमा ।

अहवा – खहचरा आगत्य जले संपतंति संपाइमा । सेसा विहंगवज्जा थलचरा सव्वे असंपाइमा । एतेहिं संपाइमऽसंपातिमेहिं जुत्तं दुविधं दगतीरं । एयम्मि दुविधे दगतीरे तेहिं संपातिमेहिं दिट्ठो अच्छति अदिट्ठो वा । जं तं अच्छति कालं तस्सिमे विभागा – अधालंदं पोरिसिं ।

अधिगं च पोरिसिं लंदमिति कालस्तस्य व्याख्या – तरुणित्थीए उदउल्लो करो जावतिएण कालेण सुक्कति जहण्णो लंदकालो । उक्कोसेण पुव्वकोडी । सेसो मज्झो ।

अहवा – जहण्णो सो चेव, उक्कोसो "अहालंद" त्ति जहालंदं, जहा जस्स जुत्तं; जहा – पडिमा-पडिवण्णाणं अहालंदियाण य पंचराइंदिया, परिहारविसुद्धियाणं जिणकप्पियाणं णिक्कारणओ य गच्छवासीण वा उडुबद्धे मासं, वासासु चउमासं, अज्जाणं उडुबद्धे दुमासं, मज्झिमाणं पुव्वकोडी, । एत्य जहण्णेण अहालंद-कालेणं अधिकारो ।।५३२८।।

इदाणिं संपाति-असंपाति-अधालंदियादिसु अदिट्ठ-दिट्ठेसु य पच्छित्तं भणंति –

असंपाति अहालंदे, अदिट्ठे पंच दिट्ठ मासो उ ।
पोरिसि अदिट्ठ दिट्ठे, लहु गुरु अहि गुरुग लहुगा य ॥५३२९॥

असंपातिमे अहालंदं अदिट्ठे अच्छति पंच राइंदिया । दिट्ठे अच्छइ मासलहुं ।

असंपाइमेसु पोरिसिं अदिट्ठे अच्छइ मासलहू । दिट्ठे मासगुरू ।

---

[1] गा० ५३२५ ।

अधियं पोरिसिं अदिट्ठे अच्छति मासगुरुं । दिट्ठे चउलहुगं ।

संपाइमेसु अहालंदं अदिट्ठे मासलहुं । दिट्ठे मासगुरुं ।

पोरिसिं अदिट्ठे मासगुरुं । दिट्ठे चउलहुगं ।

अधियं पोरिसिं अदिट्ठे चउलहुं । दिट्ठे चउगुरुं ॥५३२९॥

संपातिमे वि एवं, मासादी णवरि ठाति चउगुरुए ।
भिक्खु वसहाभिसेगे, आयरिए विसेसिता अहवा ॥५३३०॥

पुव्वद्धं गतार्थं । एवं ओहियं गयं ।

अधवा – एवं चेव भिक्खुस्स वसभस्स अभिसेगस्स आयरियस्स य विसेसियं दिज्जति । भिक्खुस्स उभयलहुं, वसभस्स कालगुरुं, अभिसेगस्स तवगुरुं आयरियस्स, उभयगुरुं । एस वितिओ आदेसो ॥५३३०॥

अहवा भिक्खुस्सेवं, वसभे लहुगाति ठाति छल्लहुगे ।
अभिसेगे गुरुगादी, छग्गुरु लहुगादि छेदंतं ॥५३३१॥

भिक्खुस्स एयं जं वुत्तं । वसभस्स असंपाइम-संपाइमं-अधालंदपोरिसि-अधिय-अदिट्ठदिट्ठेसु पुव्व चारणियविहीते मासलहुगाओ आढत्तं छल्लहुए ठायति ।

उवज्झायस्स असंपाइमेसु मासगुरुगाओ आढत्तं छल्लहुए ठायति, संपातिमेसु चउलहुगातो आढत्तं छग्गुरुए ठायति ।

आयरियस्स चउलहुगाओ आढत्तं छेदे ठायति । एस ततिओ पगारो ॥५३३१॥

अहवा पंचण्हं संजतीण समणाण चेव पंचण्हं ।
पणगादी आरद्धा, णेयव्वा जाव चरिमं तु ॥५३३२॥

पंच संजतीओ इमा – खुड्डी, थेरी, भिक्खुणी, अभिसेगि, पवत्तिणी चेव । समणाण वि एते चेव पंच भेदा । "पणगादि जाव चरिमं" ति ॥५३३२॥

इमे पच्छित्तठाणा –

पण दस पण्णर वीसा, पणवीसा मास चउर छच्चेव ।
लहुगुरुगा सव्वेते, लंदादि असंप-संपदिसुं ॥५३३३॥

पणगादि जाव छम्मासो, सव्वे एते लहुगुरुभेदभिण्णा सोलस भवंति । छेदो मूलं अणवट्ठो पारंचियं च एते चउरो, सव्वे वीसं ठाणा । अहालंदादिया तिण्णि पदा, असंपाइमा दो पदा, अदिट्ठदिट्ठा य दो पदा, चिट्ठणादिया य दसपदा ॥५३३३॥

इदाणिं चारणिया कज्जति –

पणगादि असंपादिमं, संपातिमदिट्ठमेव दिट्ठे य ।
चउगुरुगे ठाति खुड्डी, सेसाणं वुड्ढि एक्केक्कं ॥५३३४॥

खुड्डी चिट्ठति असंपाइमे अहालंदं कालं अदिट्ठे पंचराइंदिया लहुया । दिट्ठे पंच राइंदिया गुरुया ।

खुड्डी चिट्ठति असंपातिमे पोरिसिं अदिट्ठे पंच राइंदिया गुरुया । दिट्ठे दस राइंदिया लहुया ।

खुड्डी चिट्ठइ असंपाइमे अधियं पोरिसिं अदिट्ठे दसराइंदिया लहुया। दिट्ठे दस राइंदिया गुरुया।

एयं असंपातिमे भणियं।

संपाइमे पुण पंचराइंदिएहिं गुरुएहिं आढत्तं पण्णरसराइंदिएहिं लहुए ठाति।

एयं चिट्ठंतीए भणियं णिसीयंतीए पंचराइंदिएहिं गुरुएहिं आढत्तं पण्णरसहिं गुरूहिं ठाति।

तुअट्टंतीए असंपातिम-संपातिमेहिं दससु राइंदिएसु लहुएसु आढत्तं वीसाए राइंदिएहिं लहुएहिं ठाति।

णिद्दायंतीए वीसाए गुरुहिं ठाति।

[1]पयलायंतीए पणुवीसाए लहुएहिं ठाति।

सज्झायं करेंतीए पणुवीसाए राइंदिएहिं गुरुएहिं ठाति।

झाणं झायंतीए मासलहुए ठाति।

आहारं आहारंतीए मासगुरुए ठाति।

वियारं करेंतीए चउलहुए ठाति।

काउस्सग्गं करेंतीए चउगुरुए ठाति।

एयं खुड्डीए भणियं। थेरमादियाण हेट्ठा एक्कं पदं हुसेज्जा उवरिं एक्कं वड्ढेज्जा ॥५३३४॥

छल्लहुगे ठाति थेरी, भिक्खुणि छग्गुरुग छेदो गणिणीए।
मूलं पवित्तिणी पुण, जहभिक्खुणि खुड्डए एवं ॥५३३५॥

थेरीए गुरुपणगातो आढत्तं छल्लहुगे ठाति।

भिक्खुणीए दसण्हं राइंदियाण लहुयाण आढत्तं छग्गुरुए ठाति।

अभिसेयाए दसण्हं इंदियाण गुरुआण आढत्तं छेदे ठाति।

पवित्तिणीए पण्णरस लहुगा आढत्तं मूले ठायति। एवं संजतीण भणियं।

इदाणिं संजयाणं भण्णति – तत्थ अतिदेसो कीरति।

जहा भिक्खुणी भणिता तहा खुड्डो भाणियव्वो।

जहा गणिणी भणिया तहा भिक्खू भाणियव्वो।

उवज्झायस्स गुरूएहिं पण्णरसहिं आढत्तं अणवट्ठे ठाति।

आयरिओ वीसाए लहुएहिं राइंदिएहिं आढत्तं पारंचिए ठाति ॥५३३५॥

गणिणिसरिसो उ थेरो, पवत्तिणीसरिसओ भवे भिक्खू।
अट्ठोक्कंती एवं, सपदं सपदं गणि-गुरूणं ॥५३३६॥

गतार्था। गणिस्स सपदं अणवट्ठं, गुरुस्स सपदं पारंचियं ॥५३३६॥

एमेव चिट्ठणादिसु, सव्वेसु पदेसु जाव उस्सग्गो।
पच्छित्ते आएसा, एक्केक्कपदम्मि चत्तारि ॥५३३७॥

---

१ प्रचलाहारनिहारस्वाध्याय-ध्यानकायोत्सर्गाः, इति क्रमेण प्रायश्चित्तान्युक्तानि, बृ० क० २४०९ गाथा-वृत्तौ।

चिट्ठणादिपदे असंपातिमसंपातिमे य अदिट्ठ-दिट्ठेसु चउरो पच्छित्ता भवंति । एवं णिसीयणादिसु वि एक्केक्के चउरो पच्छित्ता भवंति ।

अहवा – चिट्ठणादिसु एक्केक्के चउरो आदेसा इमे – एक्कं ओहियं, वितियं तं चेव कालविसेसितं, ततियं छेदंतं पच्छित्तं, चउत्थं [1]महल्लं पच्छित्तं ॥५३३७॥ सम्मत्तं दगतीरं ति दारं ।

अधुना [2]जूवकस्यावसरः प्राप्तः । तत्थ गाहा –

संकम जूवे अचले, चले य लहुगो य होंति लहुगा य ।
तम्मि वि सो चेव गमो, नवरि गिलाणे इमं होति ॥५३३८॥

जूवयं णाम विट्टं (वीउं) पाणियपरिक्खित्तं । तत्थ पुण देउलिया घरं वा होज्ज, तत्थ वसतिं गेण्हति चउलहुगा, एयं वसहिगहणणिप्फण्णं । तं जूवगं संकमेण जलेण वा गम्मइ ।

संकमो दुविहो – चलो अचलो य । अचलेण जाति मासलहू ।

चलो दुविहो – सपच्चवाओ अपच्चवाओ य । णिप्पच्चवाएणं जइ जाति तो चउलहुं सपच्चवाएण जाति चउगुरू । जलेण वि सपच्चवाएण गच्छति चउगुरुं । णिप्पच्चवाए चउलहुं । "तम्मि वि सच्चेव" पच्छद्धं – तम्मि वि जूवते सच्चेव वत्तव्वया जा उदगतीरए भणिता । "[3]अधिकरणं अंतराए" त्ति एत्तओ आढत्तं जाव "[4]एक्केक्कपदम्मि चत्तारि" त्ति, णवरि – इमे दोसा अब्भहिता गिलाणं पडुच्च ॥५३३८॥

दट्ठूण व सतिकरणं, ओभासण विरहिते व आतियणं ।
परितावण चउगुरुगा, अकप्प पडिसेव मूलदुगं ॥५३३९॥

गिलाणस्स उदगं दट्ठुं "सतिकरणं" ति एरिसी मती उप्पज्जति पियामि त्ति । ताहे ओभासइ । जइ दिज्जति तो संजमविराहणा । अह ण दिज्जति तो गिलाणो परिच्चत्तो, विरहियं साहूहिं अण्णेहि य ताहे आदिएज्ज । जति सलिंगेणं आदियति तो चउलहुं । अहाऽकप्पं पडिसेवति "दुग" पि गिहिलिंगेणं अण्णतित्थिय-लिंगेण वा तो मूलं ।

अहवा – आदिए आउक्कायणिप्फण्णं चउलहुअं । तसेसु य तसणिप्फण्णं भणियव्वं । पंचिंदिएसु तिसु चरिमं, तेण वा अपत्थेणं परितावणादिणिप्फण्णं ।

अह ओभासेंतस्स ण देंति असंजमो त्ति काउं, तत्थ अणागाढादिणिप्फण्णं ।

अह उद्दातितो चरिमं, जणो य भणइ – "अहो ! णिरणुकंपा मग्गंतस्स वि ण देंति" ।

अहवा – अकप्पं पडिसेवंतो ओहावेज्ज – एगो मूलं, दोसु अणवट्ठं, तिसु चरिमं ॥५३३९॥

आउक्काए लहुगा, पूतरगादीतसेसु जा चरिमं ।
जे गेलण्णे दोसा, धितिदुब्बल-सेहे ते चेव ॥५३४०॥

एत्थ कायणिप्फण्णं पच्छित्तं भाणियव्वं ।

छक्काय चउसु लहुगा, परित्त लहुगा य गुरुगसाहरणे ।
संघट्टण परितावण, लहुगुरुगऽतिवायतो मूलं ॥५३४१॥

---

१ चारणिका प्रायश्चित्तं । २ गा० ५३१६ । ३ गा० ५३१३ । ४ गा ५३३७ ।

कंठा । जे गिलाणदोसा भणिता ते धितिदुब्बले वि दोसा, सेहे वि तच्चेव दोसा ॥५३४१॥ जूवगेत्ति गयं ।

इदाणिं [1]आयावणा –

आतावण तह चेव उ, णवरि इमं तत्थ होति नाणत्तं ।
मज्जण-सिंचण-परिणाम-वित्ति तह देवता पंता ॥५३४२॥

जदि दगसमीवे आयावेति तत्थ तह चेव अधिकरणादि दोसा । जे उदगतीरे भणिया जे जूवगे भणिया संभवंति ते सव्वे अविसेसेण भाणियव्वा । दगसमीवे आयावेंतस्स चउलहुं। आयावणाए इमे अब्भहिया 'मज्जण-सिंचण-परिणाम-वित्तिदेवतापंत" त्ति ॥५३४२॥ मज्जण-सिंचणपरिणामा एते तिण्णि पदा जुगवं एक्कगाहाए वक्खाणेति ।

मज्जंति व सिंचंति व, पडिणीयऽणुकंपया व णं कोई ।
तण्हुण्हपरिणतस्स व, परिणामो ण्हाण-पियणेसु ॥५३४३॥

तं [2]दगतीराातावगं मज्जंति ण्हवंति पडिणीयत्तणतो, घम्मितो पयावणेणं सिंचंति तं सिगच्छडाहिं अंजलीहिं वा, तं पि अणुकंपया पडिणीयतया वा कश्चित् अहभद्रः प्रत्यनीको वा एवं करेति ।

अहवा – तस्स दगतीराातावगस्स "तण्हपरिणतोमि" त्ति तिसिओ उण्हपरिणतो घम्मितो, एयावत्थ-भूयस्स घम्मियस्स ण्हाणपरिणामो उप्पज्जति, तिसियस्स पियणपरिणामो त्ति ॥५३४३॥ दारा तिन्नि गता ।

"[3]वित्ति" अस्य व्याख्या –

आउट्टजणे मरुगाण अदाणे खरि-तिरिक्खिछोभादी ।
पच्चक्ख देवपूयण, खरियाचरणं च खित्तादी ॥५३४४॥

पुव्वद्धस्स इमा विभासा –

आतावण साहुस्सा, अणुकंपंतस्स कुणति गामो तु ।
मरुगाणं च पदोसा, पडिणीयाणं च संका उ ॥५३४५॥

तस्स साहुस्स दगतीरे आयावेंतस्स आउट्टो सो गामजणो अणुकंपतो य पारणगदिणे भत्तादियं सविसेसं देति,–"इमो पच्चक्खदेवो त्ति किं अम्हं अन्नेसिं मरुगादीणं दिन्नेणं होहिति, एयस्स दिण्णं महफलं" त्ति । ताहे मरुगादि अदिज्जंते पदोसं गता । "[4]खरि" त्ति दुक्खखरिता, "तिरिक्खी" महासड्ढियादि, एयासु "छोभगो" त्ति अयसं देंति,–"एस संजतो दुक्खखरियं परिभुंजति, तिरिक्खियं वा" ।

अहवा – दुक्खखरियं दाणसंगहियं काउं महाजणमज्झे बोल्लावेंति, महासड्ढियं वा तत्थ संजतसमीवे नेउं संजयवेसेण गिण्हंति, संजयं च अप्पसागारियं ठवेंति, अन्ने य वोलं करेंति – "एस संजतो एरिसो" त्ति । तत्थ जे पडिणीया तेसिं संका भवति ङ्क । निस्संकिए मूलं । अधवा – जे पडिणीया ते संकंति कीस एसो तित्थठाणे आयवेति, किं तेणट्ठेणं, किं ताव मेहुणट्ठेण । "वित्ति" गतं ।

इदाणिं "[5]तह देवता पंता" अस्य व्याख्या – "[6]पच्चक्खदेव" पच्छद्धं । जत्थ आयावेति तस्स समीवे देवता जत्थ जणो पुव्वं पूयापरो आसीत्, साहुं आयावेंतं दट्ठुं इमो पच्चक्खदेवो त्ति साहुस्स

१ गा० ५३१० । २ ऽऽ ता प कं, इत्यपि पाठः । ३ गा० ५३४२ । ४ गा० ५३४८ । ५ गा० ५३४२ । ६ गा० ५३४८ ।

पूयं काउमारद्धो न देवताए, सा देवया जहा मरुगा पदुट्ठा तहा दुक्खरिग-तिरिक्खिसु करेज्ज, अहवा – सा देवता साहुरूवं आवरेत्ता अन्न च तस्स पडिरूवं करेत्ता दुक्खरिगं तिरिक्खीं वा परिभुंजंतं लोगस्स दंसेति । अहवा – खित्तचित्तादिगं करेज्ज । अन्नाओ वा अकप्पपडिसेवणा अकिरियाओ दरिसेज्ज । जम्हा तत्थ एत्तिया दोसा तम्हा तत्थ दगतीरे न ठाएज्जा ॥५३४५॥

वीयपए ठाएज्ज वि दगतीरे –

पढमे गिलाणकारण, वितिए वसही य असति ठाएज्जा ।
रातिणियकज्जकारण, ततिए वितियपयजयणाए ॥५३४६॥

"पढमं" ति दगतीरं, तत्थ गिलाणकारणेग ठाएज्जा । "वितिय" त्ति जुवगं तत्थ ठायज्जा वसधिनिमित्तं । "ततियं" ति – आयावणा, "राइणिउ" त्ति कुलगणसंघकज्जं तेण राइणो कज्जं हवेज्ज, एते-तिन्निवि वितियपदा ॥५३४६॥

कहं पुण गिलाणट्ठा दगतीराए ठाएज्जा ? –

विज्ज-दवियट्ठाए, णिज्जंतो गिलाणो असति वसतीए ।
जोग्गाए वा असती, चिट्ठे दगतीरणोतारे ॥५३४७॥

वेज्जस्स सगासं निज्जंतो, ओसहट्ठा वा ["असति"] अन्नत्थ निज्जंतो, अन्नत्थ नत्थि वसधी दगतीरे य अत्थि ताहे तत्थ ठाएज्ज, गिलाणजोगा वा वसही अन्नत्थ नत्थि । अहवा – वीसमणट्ठा दगतीरए मुहुत्तमेत्तं ओयारिज्जइ तत्थ वि मणुयतिरियाण ओयरणमग्गे नोतारिज्जति ॥५३४७॥

तत्थ ठियाणं इमा जयणा –

उदगंतेण चिलिमिणी, पडिचरए मोत्तु सेस अण्णत्थ ।
पडिचर पडिसंलीणा, करेज्ज सव्वाणि वि पदाणि ॥५३४८॥

उदगंतेण चिलिमिणी कडगो वा दिज्जइ, जे गिलाणपडियरगा ते परं तत्थ अच्छंति सेसा अन्नत्थ अच्छंति । पडियरगा वि पडिसंलीणा अच्छंति जहा असंपातिसंपातिमाणं सत्ताणं संत्रासो न भवति । एवं ठिया सव्वाणि वि चिट्ठणादिपदाणि करेज्ज ॥५३४८॥ पढमे त्ति गतं ।

इदाणिं [1]वितिय त्ति –

अद्धाणणिग्गयादी, संकम अप्पाबहुं असुण्णं तु ।
गेलण्ण-सेहभावे संसट्ठुसिणं व (सु) निव्वयिं ॥५३४९॥

अद्धाणनिग्गयादी दोसा साहुणो अन्नाए वसहिए सति जूवगे ठायंति । तत्थ जति संकमेण गमणं, तेसु संकमेसु अप्पाबहुअं, जो एगंगिओ अचलो अपरिसाडी णिप्पच्चवातो य तेण गंतव्वं, अण्णेसु वि जो बहुगुणो तेण गंतव्वं । दिया राओ य वसही असुण्णा कायव्वा । तत्थ य ठियाण जति गिलाणस्स सेहस्स वा पाणियं पियामो त्ति असुभो भावो उप्पज्जति ताहे ते पण्णविज्जंति, तहावि अट्ठिते भावे ताहे संसट्ठपाणगं उसिणोदवं वा "सुणिव्ववितं" ति सुसीयलं काउं दिज्जति, अण्णं वा फासुगं ॥५३४९॥ जूवगजयणा गता ।

---

१ गा० ५३४६ ।

इदाणि [1]रातिणियकज्जंति –

उल्लोयण णिग्गमणे, ससहातो दगसमीव आतावे ।
उभयदढो जोगजढे, कज्जे आउट्ट पुच्छणया ॥५३५०॥

चेतियाण वा तद्दव्वविणासे वा संजतिकारणे वा अण्णम्मि वा कम्हि य कज्जे रायाहीणे, सो य राया तं कज्जं ण करेति, सयं वुग्गाहितो वा, तस्साउट्टणाणिमित्तं दगतीरे आतावेज्ज । तं च दगतीरं रण्णो ओलोयणठियं णिग्गमणपहे वा । तत्थ य आतावेंतो ससहाओ आतावेति उभयदढो धितिसंघयणेहिं । तिरियाणं जो अवतरणपहो मणुयाण य ण्हाणादिभोगट्ठाणं तं च वज्जेउं आतावेइ । कज्जे तं महातवजुत्तं दट्ठुं अल्लिएज्ज, राया आउट्टो य पुच्छेज्जा – "किं कज्जं आयाविसि ? अहं ते कज्जं करेमि, भोगे वा पयच्छामि, वरेहि वा वरं जेण ते अट्ठो" । ताहे भणाति साहू – "ण मे कज्जं वरेहिं, इयं संघकज्जं करेहि" ॥५३५०॥

इमेरिसो सो य सहाओ –

भावित करण सहायो, उत्तर-सिंचणपहे य मोत्तूणं ।
मज्जणगाइणिवारण, ण हिंडति पुप्फ वारेंति ॥५३५१॥

धम्मं प्रति भावितो, ईसत्थे धणुवेदादिए कयकरणे संजमकरणे वा कयकरणे, ससमयपरसमयगहियऽत्थत्तणओ उत्तरसमत्थो, अप्पणो वि एरिसो चेव । सो य सहाओ जति कोइ अणुकूलपडिणीयत्तणेणं सिंचति वा मज्जति वा पुप्फाणि वा आलएति तो तं वारेति । तम्मि गामे णगरे वा सो आयावगो भिक्खं ण हिंडइ, मा मरुगादि पदुट्ठा विसगरादि देज्ज ॥५३५१॥

जे भिक्खू सागणियसेज्जं अणुप्पविसइ, अणुप्पविसंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥२॥

सह अगणिणा सागणिया ।

सागणिया तू सेज्जा, होति सजोती य सप्पदीवा य ।
एतेसिं दोण्हं पी, पत्तेय-परूवणं वोच्छं ॥५३५२॥

सागणिसेज्जा दुविधा – जोती दीवो वा । पुणो एक्केक्का दुविधा – असव्वराती सव्वराती य । असव्वरातीए दीवे मासलहुं । सेसेसु तिसु विकप्पेसु चउलहुगा पत्तेयं ॥५३५२॥

दुविहा य होति जोई, असव्वराई य सव्वरादी य ।
ठायंतगाण लहुगा, कीस अगीयत्थ सुत्तं तु ॥५३५३॥

"जोइ" त्ति उद्दियंतं । सेसं कंठं ।

चोदगाह –

[2]णत्थि अगीयत्थो वा, सुत्ते गीओ य कोति णिद्दिट्ठो ।
जा पुण एगाणुण्णा, सा सेच्छा कारणं किं वा ॥५३५४॥

---

१ गा० २५० । २ देखो गा० ५३३१ से ५३५३ ।

आयरियाह –

एयारिसम्मि वासो, ण कप्पती जति वि सुत्तणिद्दिट्ठो ।
अव्वोकडो उ भणितो, आयरिओ उवेहती अत्थं ॥५३५५॥

जं जह सुत्ते भणियं, तहेव तं जति वियारणा णत्थि ।
किं कालियाणुओगो, दिट्ठो दिट्ठि प्पहाणेहिं ॥५३५६॥

उस्सग्गसुतं किंची, किंची अववाइयं मुणेयव्वं ।
तदुभयसुत्तं किंची, सुत्तस्स गमा मुणेयव्वा ॥५३५७॥

णेगेसु एगगहणं, सलोम-णिल्लोम अकसिणे अजिणे ।
विहिभिण्णस्स य गहणे, अववाउस्सग्गियं सुत्तं ॥५३५८॥

उस्सग्गठिई सुद्धं, जम्हा दव्वं विवज्जयं लहइ ।
न य तं होइ विरुद्धं, एमेव इमं पि पासामो ॥५३५९॥

उस्सग्गे गोयरम्मी, णिसिज्जऽकप्पाववायओ तिण्हं ।
मंसं दल मा अट्ठिं, अववाउस्सग्गियं सुत्तं ॥५३६०॥

णो कप्पति वाऽभिण्णं, अववाएणं तु कप्पती भिण्णं ।
कप्पइ पक्कं भिण्णं, विहीय अववायउस्सग्गं ॥५३६१॥

कत्थति देसग्गहणं, कत्थइ भण्णंति निरवसेसाइं ।
उक्कमकमजुत्ताइं, कारणवसतो णिउत्ताइं ॥५३६२॥

देसग्गहणे बीए, हि सूइया मूलमाइणो होंति ।
कोहाति अणिग्गहिया, सिंचंति भवं निरवसेसं ॥५३६३॥

सत्थपरिण्णा उक्कमे, गोयरपिंडेसणा कमेणं तु ।
जं पि य उक्कमकरणं, तं पिऽभिनवधम्ममातट्ठा ॥५३६४॥

बीएहि कंदमादी, विसूइया तेहि सव्ववणकायो ।
भोमातिका वणेण तु, समेदमारोवणा भणिता ॥५३६५॥

जत्थ उ देसग्गहणं, तत्थ उ सेसाणि सूइयवसेणं ।
मोत्तूण अहीकारं, अणुओगधरा पभासेंति ॥५३६६॥

उस्सग्गेणं भणिताणि जाणि अववादओ य जाणि भवे ।
कारणजाएण मुणी !, सव्वाणि वि जाणियव्वाणि ॥५३६७॥

उस्सग्गेण णिसिद्धाणि जाणि दव्वाणि संथरे मुणिणो ।
कारणजाए जाते, सव्वाणि वि ताणि कप्पंति ॥५३६८॥

चोदगाह –

जं पुव्वं पडिसिद्धं, जति तं तस्सेव कप्पती भुज्जो ।
एवं होयऽणवत्था, ण य तित्थं णेव सच्चं तु ॥५३६९॥

उम्मत्तवायसरिसं, खु दंसणं न वि य कप्पऽकप्पं तु ।
अह ते एवं सिद्धी, न होज्ज सिद्धी उ कस्सेवं ॥५३७०॥

आयरिओ –

ण वि किं चि अणुण्णायं, पडिसिद्धं वा वि जिणवरिंदेहिं ।
एसा तेसिं आणा, कज्जे सच्चेण होयव्वं ॥५३७१॥

कज्जं णाणादीयं, उस्सग्गववायओ भवे सच्चं ।
तं तह समायरंतो, तं सफलं होइ सव्वं पि ॥५३७२॥

दोसा जेण णिरुंभंति, जेण खिज्जंति पुव्वकम्माइं ।
सो सो मोक्खोवाओ, रोगावत्थासु समणं व ॥५३७३॥

अग्गीतस्स ण कप्पति, तिविहं जयणं तु सो ण जाणाति ।
अणुण्णवणाइजयणं, सपक्ख-परपक्खजयणं च ॥५३७४॥

णिउणो खलु सुत्तत्थो, न हु सक्को अपडिबोहितो नाउं ।
ते सुणह तत्थ दोसा, जे तेसिं तहिं वसंताणं ॥५३७५॥

अग्गीया खलु साहू, णवरं दोसा गुणे अजाणंता ।
रमणिज्ज भिक्ख गामे, ठायंती जोइसालाए ॥५३७६॥

एत्ततो (५३५४) आढतं जाव 'अग्गीया' गाह (५३७६) ।
एयाओ सव्वाओ गाहाओ जहा उदगसालाए भणिता तहा भाणियव्वा ।
सजोइवसधीए ठियाणं इमे दोसा –

पडिमाए झामियाए, उड्डाहो तणाणि वा तहिं होज्जा ।
साणादि वालणा लाली, मूसए खंभतणाइं पलिप्पेज्जा ॥५३७७॥

तेण जोतिणा पडिमा झामिज्जेज्जा, तत्थ उड्डाहो एतेहिं पडिणीयताए णारायणादिपडिमा झामिता, तत्थ गेण्हणादी दोसा ।

संथारगादिकया वा तणा पलिवेज्ज ।
साणेण वा उम्मुए चालिए पलीवणं होज्ज ।

जत्थ पदीवो तत्थ मूसगो "लाल" त्ति वट्टी तं कट्टति, तत्थ खंभो पलिप्पइ णिवेसणाणि वा पलिप्पंति ॥५३७७॥ बितिय० गाहा (५१५८) अद्धाणनिग्गया०····गाहा (५१६४) ॥५३७८॥ ॥५३७९॥ कंठ्या पूर्ववत् ।

सजोतिवसहीए दव्वतो ठायंतस्स इमे दोसा पच्छित्तं च –

उवकरणेऽपडिलेहा[1], पमज्जणावास[2] पोरिसि[3] मणे[4] य ।
णिक्खमणे य पवेसो, आवडणे चेव पडणे य ॥५३८०॥

चउण्हं दाराणं इमं वक्खाणं –

पेह पमज्जण वासए, अग्गी ताणि अकुव्वतो जा परिहाणी ।
पोरिसिभंगे अभंगे, सजोती होति मणे तु रति अरति वा ॥५३८१॥

जति उवगरणं ण पडिलेहेइ, "मा छेदणेहिं अगणिसंघट्टो भविस्सइ" त्ति तो मासलहुं उवधिणिप्फण्णं वा । ते य अपडिलेहंतस्स संजमपरिहाणी भवति । अह पडिलेहेति तो छेदणेहिं अगणिकायसंघट्टो भवति, तत्थ चउलहुं । सुत्तपोरिसिं ण करेति मासलहुं, अत्थपोरिसिं ण करेति मासगुरुं, सुत्तं णासेइ चउलहुं, अत्थं णासेति चउगुरुं । मणेण य जइ जोइसालाए रती भवति "सजोतीए सुहं अच्छिज्जइ" तो चउगुरुं, अह अरती उप्पज्जइ, जोतीए दोसं भण्णइ तो चउलहुं ॥५३८१॥

[1]आवासए त्ति अस्य व्याख्या –

जति उस्सग्गे ण कुणति, ततिमासा सव्वअकरणे लहुगा ।
वंदण-थुती अकरणे, मासो संडासगादिसु य ॥५३८२॥

"जोति" त्ति काउं जत्तिया काउस्सग्गा ण करेति तत्तिया मासलहुं । सव्वं आवस्सयं ण करेति चउलहुगा । अह सजोइयाए आवस्सयं करेति तहावि जत्तिया उस्सग्गा करेति अगणिविराहण त्ति काउं तत्तिया चउलहुया । सव्वम्मि चउलहुगं चेव । अगणि त्ति काउं वंदणयं न देंति, थुतीतो ण देंति, संडासयं ण पमज्जंति उवसंता, तिसु वि पत्तेयं मासलहुं । अह करेति तह वि मासलहुं । छेदणगेहिं य अगणिविराहणाए चउलहुं ॥५३८२॥

[2]णिक्खमणे य पच्छद्धं अस्य व्याख्या –

आवस्सिया णिसीहिय, पमज्ज आसज्ज अकरणे इमं तु ।
पणगं पणगं लहु लहु, आवडणे लहुग जं चऽण्णं ॥५३८३॥

णिक्खमंता आवासियं ण करेंति तो पणगं, पविसंता णिसीहियं ण करेंति तो पणगं चेव । अधवा– पविसंता णिंता वा ण पमज्जंति, वसहिं वा ण पमज्जंति तो मासलहुं, अह पमज्जंति तो मासलहुं, पमज्जंतस्स य छेदणेहिं अगणिविराहणे चउलहुं । आसज्जं ण करेति मासलहुं । [3]आवडण त्ति उम्मुआदिसु पखलणा तत्थ चउलहुं । "जं चऽनं" ति अणागाढपरितावणाणिप्फण्णं ॥५३८३॥

अधवा – "[4]जं चऽऽण्णं" ति –

सेहस्स विसीयणता, ओसक्कऽहिसक्क अण्णहिं नयणं ।
विज्जविऊण तुयट्टण, अहवा वि भवे पलीवणता ॥५३८४॥

---

१ गा० ५३८० । २ गा० ५३८० । ३ गा० ५३८० । ४ गा० ५३८३ ।

मेहो कोइ सीयतो विसीएज्ज तेण वा उज्जालिते जइ अण्णो तप्पइ तो चउलहुं। जत्तिया वारा हत्था परावत्तेइ ताविइ वा अण्णं वा गायं तत्तिया चउलहुगा। "ओसक्केइ" त्ति उस्सारेइ उम्मुयं "अहिसक्केइ" त्ति अगणिं तेण उत्तुअति, सुयंतो जग्गंतो वा तं अगणिं अण्णत्थ णेति, सुयंतो वा जति विज्झावति-एएसु सव्वेसु पत्तेयं चउलहुआ, पयावमाणस्स पमादेण पलिप्पेज्जा ॥५३८४॥

तत्थिमं पच्छित्तं –

गाउय दुगुणादुगुणं, बत्तीसं जोयणाइ चरिमपदं ।
चत्तारि छच्च लहु गुरु, छेदो मूलं तह दुगं च ॥५३८५॥

जइ गाउयं डज्झति तो ः ः। अद्धजोयणं डज्झति ः ः। जोयणं ः ः ः। दोहिं जोयणेहिं ः ः ः। चउहिं जोयणेहिं छेदो। अट्ठहिं मूलं। सोलसहिं अणवट्ठो। बत्तीसाए चरिमं ॥५३८५॥

गोणे य साणमादी, वारणे लहुगा य जं च अहिकरणं ।
लहुगा अवारणम्मि, खंभतणाइं पलीवेज्जा ॥५३८६॥

अह गोणसाणे वारेति मा पलीवणं करेहि त्ति तो चउलहुगा। वारिया य हरितादी विराहेत्ता वच्चंति, अधिकरणं तत्थ वि चउलहुं, कायणिप्फण्णं वा। अह ण वारेति तत्थ खंभं तणादि वा पलीवेज्जा॥५३८६॥

तत्थ वि –

गाउय दुगुणादुगुणं, बत्तीसं जोयणाइ चरिमपदं ।
चत्तारि छच्च लहु गुरु, छेदो मूलं तह दुगं च ॥५३८७॥ पूर्ववत्

जम्हा एते दोसा तम्हा णो जोतिसालाए ठाएज्जा, कारणे ठायंति –

अद्धाणणिग्गतादी, तिक्खुत्तो मग्गिऊण असतीए ।
गीयत्था जयणाए, वसंति तो जोतिसालाए ॥५३८८॥

पुव्वभणितो अववातो गाममज्झे जा जोतिसाला देवकुलं वा। इमो कुंभकारसालाए अववादो, जेण कुंभकारस्स पंचसालाओ भणिया,

इमाओ –

पणिया य भंडसाला, कम्मे पयणे य वग्घरणसाला ।
इंधणसाला गुरुगा, सेसासु वि होंति चउलहुगा ॥५३८९॥

एतेसिं इमा विभासा –

कोलालियावणा खलु, पणिसाला भंडसाल जहिं भंडं ।
कुंभारसाल कम्मे, पयणे वासासु आवातो ॥५३९०॥
तोसलिए वग्घरणा, अग्गीकुंडं तहिं जलति णिच्चं ।
तत्थ सयंवरहेउं, चेडा चेडी य छुब्भंति ॥५३९१॥

पणियसाला जत्थ भायणाणि विक्केति, वाणिय कुंभकारो वा एसा पणियसाला ।

भंडसाला जहिं भायणाणि संगोवियाणि अच्छंति ।

कम्मसाला जत्थ कम्मं करेति कुंभकारो ।

पयणसाला जहिं पच्चंति भायणाणि ।

इंधणसाला जत्थ तण-करिसभारा अच्छंति ।

वग्घारणसाला तोसलिविसए गाममज्झे साला कीरइ । तत्थ अगणिकुंडं णिच्चमेव अच्छति सयंवरणिमित्तं । तत्थ य बहवे चेडा एक्का य सयंवरा चेडी पविसिज्जति, जो से चेडीए भावति तं वरेति । एयासु सव्वासु इमं पच्छित्तं ङ्क । ।।५३६१।।

णवरं —

इंधणसाला गुरुगा, आलित्ते तत्थ णासिउं दुक्खं ।
दुविहविराहणा झुसिरे, सेसा अगणी उ सागरियं ।।५३६२।।

पुव्वद्धं कंठं । अण्णं च इंधणसालाए झुसिरं, तत्थ दुविधा विराधणा — आयविराहणाए चउगुरुगा, संजमविराधणाए तत्थ संघट्टादिकं जं आवज्जति तं पावति । सेसासु पणियसालादिसु सागारियं पयणसालाए पुण अगणिदोसो ।।५३६२।।

एयासु अववादेण ठायंतस्स इमो कमो —

पढमं तु भंडसाला, तहिं सागारि णत्थि उभयकाले वि ।
कम्माऽऽपणि णिसि णत्थी, सेसक्कमेणिंधणं जाव ।।५३६३।।

अण्णाए वसहीए असति पढमं भंडसालाए ठाति, तत्थ उभयकाले वि सागारियं नत्थि । उभय-कालो — दिया रातो य । ततो पच्छा कम्मसालाए । ततो पच्छा पणियसालाए ।

अहवा — कम्मपणियसालाण कमो णत्थि, तुल्लदोसत्तणतो, । सेसेसु पयण-वग्घरण-इंधणाइसु असति कमेण ठाएज्जा ।।५३६३।।

ते तत्थ सन्निविट्ठा, गहिता संथारगा विही पुव्वं ।
जागरमाणवसंती, सपक्खजयणाए गीयत्था ।।५३६४।। कंठ्या

तत्थ वसंताण इमा जयणा —

पासे तणाण सोहण, ओसक्कऽहिसक्क अन्नहिं नयणं ।
संवरणा लिंपणया, छुक्कार णिवारणोकड्ढी ।।५३६५

पुरातना गाथा । अगणिकायस्स पासे तणाणि विसोहिज्जति, अक्कंतियतेणेसु वा ओसक्किज्जति, पलीवणभएण वा अक्कंतियतेणेसु वा उस्सक्किज्जति, गिलाणट्ठा सावयभएण वा अद्धाणे वा विवित्तासीयं च तेण अइसक्कावेज्जा वि, अण्णहिं वा सोउमणो नेज्जा, बाहिं वा ठवेज्जा, कते वा कज्जे छारेण संवरिज्जति, अक्कमइ त्ति वुत्तं भवति मल्लगेण वा, अहाउअं पालेत्ता विज्झाहित्ति । खंभो छगणादिणा वा लिप्पति । पीलवणभया साणो गोणो तेणो वा तत्थ छुत्ति हडि त्ति वा भन्नइ, तह वि अटंता वारिज्जंति, सहसा वा पलित्ते तत्थतो उक्कड्ढिज्जति एव्वं । तणाणि वा, कडगो वा उदग-धूलीहिं वा विज्झविज्जति, पालं वा कज्जति ।।५३६५।।

सजोतिवसहीए उवकरण-पडिलेहणादिदारेसु इमं जयणं करेंति –

कडओ व चिलिमिली वा, असती सभए व बाहि जं अंतं ।
ठागासति सभयम्मि व, विज्झायऽगणिम्मि पेहंति ॥५३९६॥

जोतीए अंतरे कडओ कज्जति, चिलिमिली वा । असति कडगचिलिमिलीए वा जति य उवहितेणग-भयं अत्थि ताहे अंतोवही बाहिं पडिलेहिज्जति, अहवा – बाहिं पि तेणगभयं ठागो वा णत्थि ताहे विज्झाए अगणिम्मि पेहिंति ॥५३९६॥

णिंता ण पमज्जंति, मूगा वा संतु वंदणगहीणं ।
पोरिसि बाहिं मणेण व, सेहाण व देंति अणुसट्ठिं ॥५३९७॥

णिंता पविसंता वा ण पमज्जंति, आवासगं वाइयजोग-विरहियं मूअं करेंति, वारसावत्तवंदणं ण दिति, पोरिसिं सुत्तत्थाणं बाहिं करिंति । अह बाहिं ठागो णत्थि ताहे "मणे" त्ति मणसा अणुपेहिंति। जत्थ सेहो अण्णो वा उद्दित्ते रागं गच्छति तत्थ अणुसट्ठिं देंति गीयत्था ॥५३९७॥

आवास बाहि असती, ठित वंदण विगड जतण थुतिहीण ।
सुत्तत्थ बाहियंतो, चिलिमिणि काऊण व सरंति ॥५३९८॥

गतार्था । बाहिं असति ठागस्स जो जहिं ठिओ सो तहिं चेव ठिओ पडिक्कमति वंदणहीणं । विगडणा आलोयणा, तं जयणाते करेंति । थुईतो मणसा कढंति । सुत्तत्थं वहि गयत्थं जोतिअंतरेवि चिलिमिलिं काउं अंतो चेव सुत्तत्थे सरंति ॥५३९८॥

इमा अणुसट्ठी सेहादीणं –

नाणुज्जोया साहू, दव्वुज्जोयम्मि मा हु सज्जित्था ।
जस्स वि न एति निद्दा, स पाउया णिमीलियं गिम्हे ॥५३९९॥

सज्जति त्ति रज्जते । जस्स वि सजोतिए णिद्दा ण एइ सोवि पाउओ सुवति । अह गिम्हे घम्मो सो अच्छीणि णिमिल्लेति जाव सुवति ॥५३९९॥

मूगा विसंति णिंति व, उम्मुगमादी कताइ अछिवंता ।
सेहा य जोइ दूरे, जग्गंती जा धरति जोती ॥५४००॥

मूगा विशंति प्रविशंति । मूअत्ति णिसीहियं ण करेति. णितो आवस्सियं ण करेति, आवट्टणादिभया अगणिसंघट्टणभया उम्मुआदि ण च्छिवेति, सेहे अगीता अपरिणता णिद्धम्मा य जोतीए दूरे ठविज्जंति, जे य गीता वसभा ते जग्गंति जाव सो जोतिं धरति ॥५४००॥

अहवा –

विहिणिग्गतादि अतिनिद्दपेल्लितो गीओ सक्किउं सुवति ।
सावयभय उस्सक्कण, तेणभए होति भयणा उ ॥५४०१॥

अद्धाणविवित्ता वा, परकड असती सयं तु जालंति ।
सूलादी व तवेउं, कयकज्जे छारअक्कमणं ॥५४०२॥

विहिणिग्गतो श्रान्तः अतीवनिद्दातितो वा ताहे ओसक्किउं सुवति, गीयत्थो सीहसावयादिभए वा ओसक्कति, तेणभए य भयणा, अक्कंतिएसु विज्झावेति, इयरेसु ण विज्झावेति ।

अद्धाणे विवित्ता मुसिता सीतेण वा अभिभूता ताहे जो परकडो अगणी तत्थ विसीतंति, परकडस्स असति सयं जालेंति, मूलादिसु कज्जं काउं छारेण अक्कमंति णिव्ववेंति वा ॥५४०२॥

सावयभए आणिंति व, सोउमणा वा वि बाहि णीणंति ।
बाहिं पलीवणभया, छारे तस्सासति णिव्वावे ॥५४०३॥

अणगतो वि आणेंति, वसहीतो बाहिं णेंति । सेसं कंठं ॥५४०३॥ जोति त्ति गतं ।

इदाणिं [1]दीवो –

दुविहो य होति दीवो, असव्वराती य सव्वराती य ।
ठायंते लहु लहुगा, करीस अगीतत्थसुत्तं तु ॥५४०४॥

[2]एत्ततो आढत्तं सव्वं भाणियव्वं ।

"[3]णत्थि अगीतत्थो वा" गाहा (५३५४) "एयारिसम्मि" गाहा (५३५५) "जं जह गाहा (५३५६) "उस्सग्गसुयं" गाहा (५३५७) जाव ते "तत्थ सन्निविट्ठा" गाहा (५३६४) ।

पडिमाझामण ओरुभणं, लिंपणा दीवगस्स ओरुभणं ।
उव्वत्तण परियत्तण, छुक्कारण वारणोकड्ढी ॥५४०५॥

जत्थ पडिमाझामणभयं होज्जा तत्थ तओ ओगासाओ पडिमा फेडिज्जति, जति सक्कति फेडेतुं । अह ण सक्केति तो दीवत्तो फेडिज्जति, खंभकडणकुड्डाणि य लिप्पंति । अहवा – संकलदीवगो ण सक्कति उत्तारेउं ताहे वत्ती उवत्तिज्जति, णिपीलिज्जति वा, साणगोणादि वा छुक्कारिज्जति, पविसंता वा साणगोणादी वारिज्जंति, वही वा ओकड्ढिज्जति, तेणगेसु वा उस्सक्किज्जति, सप्पादिभए वा ॥५४०५॥

संकलदीवे वत्ती, उव्वत्ते पीलए य मा डज्झे ।
रूतेण व तं तेल्लं, घेत्तूण दिया विगिंचंति ॥५४०६॥ कंठा

पासे तणाण सोहण, अहिसक्कोसक्क अण्णहिं णयणं ।
आगाढकारणम्मि, ओसक्कऽहिसक्कणं कुज्जा ॥५४०७॥

दीवगस्स जे पासे तणा, दीवगं वा अहिसक्केति । "ओसक्कति" त्ति उस्सक्केति वा अण्णहिं वा णेति । जं तं उस्सक्कण ओसक्कणं करेंति त आगाढे करेंति, णो अणागाढे ॥५४०७॥

मज्झे व देउलादी, बाहिं व ठियाण होति अतिगमणं ।
जे तत्थ सेहदोसा, ते इह आगाढजतणाए ॥५४०८॥

अथवा – ते साधू वियाले आगता देउले ठातेज्ज, मज्झे वा गामदेउलं तद्दिवसतो सागारियाउलं पएवि आगता तत्थ दिवसतो ण ठायंति, बाहिं अच्छंति, विसरिएसु सागारिएसु संझाए पविसंति,

---

[1] गा० ५३५२ । [2] भाष्ये गृहीतत्वात् । [3] अत्र सर्वासु यत्र यत्रोदगसालादि तत्र जोइसालादि उपयुज्य वक्तव्यं भाष्यवचनात् ।

बाहिं वासे तेणसावयादिभयं जाणिऊणं तत्थ सजोतियाए सालाए सदीवए वा जे सेहादिदोसा पुव्वुत्ता ते इह कारणे आगाढे जयणाए कायव्वा ॥५४०८॥

तत्थ जति कहिं वि पलिवेज्जा तो इमा जयणा –

अण्णाते तुसिणीया, णाते दट्ठूण करण सविउलं ।
बाहिं च देउलादी, संसद्दा आगय खरंटो ॥५४०९॥

जति केणइ ण णाता 'एत्थ संजया ठिय' त्ति तो तुसिणीया णासंति । अव णाया लोगेण तो पलित्तं दट्ठुं महता सद्देण सविउलं बोलं करेंति ताव जाव जत्थ बहुजणो मिलिओ, ताहे बहुजणस्स पुरओ भणंति- "केणति पावेण पलीवणं कतं, तुब्भेहिं चेव पलीवितं 'समणा दुज्झंतु' त्ति, 'अम्हं च सव्वं उवकरणं एत्थ दड्ढं", एवं ते खरंटिया ण किंचि उल्लवेंति "अ (तु) म्हेहिं पलीवितं" ति । जत्थ वि बाहिं गामस्स देउलं तत्थ वि एवं चेव, अथवा – देउलातो बाहिं णिग्गंतु ससद्दं कज्जति ॥५४०९॥

जे भिक्खू सचित्तं उच्छुं भुंजइ, भुंजंतं वा सातिज्जइ ॥सू०॥४॥

जे भिक्खू सचित्तं उच्छुं विडसइ, विडसंतं वा सातिज्जइ ॥सू०॥५॥

जे भिक्खू सचित्तपइट्ठियं उच्छुं भुंजइ, भुंजंतं वा सातिज्जइ ॥सू०॥६॥

जे भिक्खू सचित्तपइट्ठियं उच्छुं विडसइ, विडसंतं वा सातिज्जइ ॥सू०॥७॥

"भुंजति जं भुक्खत्तो, लीला पुण विडसण त्ति णायव्वा ।
जीवजुतं सच्चित्तं, अच्चित्तं सचेयण-पतिट्ठं ।"

एतेसिं चेव चउण्हं सुत्ताणं इमो अतिदेसो –

सच्चित्तंबफलेहिं, पण्णरसे जो गमो समक्खातो ।
सो चेव णिरवसेसो, सोलसमे होति इक्खुम्मि ॥५४१०॥ कंठा

आणादिया दोसा चउलहुं पच्छित्तं ।

इमे उच्छुविभागसुत्ता –

जे भिक्खू सचित्तं अंतरुच्छुयं वा उच्छुखंडियं वा उच्छुचोयगं वा उच्छुमेरगं वा उच्छुसालगं वा उच्छुडालगं वा भुंजइ, भुंजंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥८॥

जे भिक्खू सचित्तं अंतरुच्छुयं वा उच्छुखंडियं वा उच्छुचोयगं वा उच्छुमेरगं वा उच्छुसालगं वा उच्छुडालगं वा विडसइ, विडसंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥९॥

जे भिक्खू सचित्तपइट्ठियं अंतरुच्छुयं वा उच्छुखंडियं वा उच्छुचोयगं वा उच्छुमेरगं वा उच्छुसालगं वा उच्छुडालगं वा भुंजइ, भुंजंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥१०॥

जे भिक्खू सचित्तपइट्ठियं अंतरुच्छुयं वा उच्छुखंडियं वा उच्छुचोयगं वा उच्छुमेरगं वा उच्छुसालगं वा उच्छुडालगं वा विडसइ, विडसंतं वा सातिज्जइ ॥सू०॥११॥

पव्वसहितं तु खंडं, तव्वज्जिय अंतरुच्छुयं होइ ।
डगलं चक्कलिछेदो, मोयं पुण छल्लिपरिहीणं ॥५४११॥

पेरु उभयो पव्वदेससहितखंडं पव्वं, उभयो पेरुरहियं अंतरुच्छुयं, चक्कलिछेदछिण्णं डगलं भण्णति, मोयं अब्भंतरो गीरो ॥५४११॥

चोयं तु होति हीरो, सगलं पुण तस्स बाहिरा छल्ली ।
काणं घुण सुक्कं वा, इतरजुतं तप्पइट्ठं तु ॥५४१२॥

वंसहीरसहितो चोयं भण्णति, सगलं बाहिरी छल्ली भण्णति, घुणकाणियं अंगारइयं वा वुत्तयं, सियालादीहिं वा खइयं, उवरि मुक्कं, इयरं ति सचित्तं तम्मि सचित्तविभागे पतिट्ठियं सचित्तपतिट्ठितं भण्णति ॥५४१२॥

जे भिक्खू आरण्णगाणं [1]वण्णंधाणं अडविजत्तासंपइ[2]ट्ठिताणं
असणं वा पाणं वा खाइमं वा साइमं वा पडिग्गाहेइ,
पडिग्गाहेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥१२॥

जे भिक्खू आरण्णगाणं वण्णंधाणं अडविजत्ताओ पडिनियत्ताणं
असणं वा पाणं वा खाइमं वा साइमं वा पडिग्गाहेइ,
पडिग्गाहेंतं वा साइज्जति ॥सू०॥१३॥

अरण्णं गच्छंतीति आरण्णगा, वणं धावंतीति वण्णंधा, आरण्यं वणार्थाय धावंतीत्यर्थः । तेसिं जत्तापट्ठियाणं जो असणादी गेण्हति जत्तापडिनियत्ताणं असणादिसेसं खउरादि वा जो गेण्हति तस्स आणादी दोसा, चउलहुं च पच्छित्तं ।

तणकट्ठहारगादी, आरण्ण वणंधगा उ विण्णेया ।
अडविं पविसंताणं, णियत्तमाणाण तत्तो य ॥५४१३॥

आदिसद्दातो पुप्फफलमूलकंदादीणं, तेसिं वण्णंधाणं अडविं पविसंताणं जं संबलं पकतं, तत्तो णियत्ताणं जं किंचि [3]चुण्णादि । सेसं कंठं ॥५४१३॥

तण-कट्ठ-पुप्फ-फल-मूल-कंद-पत्तादिहारगा चेव ।
पत्थयणं वच्चंता, करेंति पविसंति तस्सेसं ॥५४१४॥

तणादिहारगा अडविं पविसंता अप्पणो पत्थयणं करेंति, सेसं उव्वरियं सिद्धं ।

अडवी पविसंताणं, अहवा तत्तो य पडिनियत्ताणं ।
जे भिक्खू असणादी, पडिच्छते आणमादीणि ॥५४१५॥ कंठा

---

१ वणंवयाणं । २ संपट्ठियाणं इति जिनविजयसंपादित मूल पुस्तके । ३ गा० ५४१८ ।

इमे दोसा –

पच्छाकम्ममतिंते, णियट्टमाणे वि बंधवा तेसिं ।
अच्छिज्जा णु तदा सा, तद्दव्वे अण्णदव्वे य ॥५४१६॥

अडविपविसंतेणं जं संबलं कयं तं साधूण दातुं पच्छा अप्पणो अण्णं करेति । सणियट्टाण वि ण घेत्तव्वं, तेसिं बंधवा तद्दव्वे अण्णदव्वे वा कतासा अच्छेज्जा । तद्दव्वं चेव जं घरातो णीतं, अण्णदव्वं जं अडविए कंदचुण्णादि उप्पज्जति ॥५४१६॥

पत्थयणं दाउं इमं करेति –

कम्मं कीतं पामिच्चियं च अच्छेज्ज अगहण दिगिंछा ।
कंदादीण व घातं, करेंति पंचिंदियाणं च ॥५४१७॥

अप्पणो "कम्मं" ति अण्णं करेंति, अप्पो वा किणाति, "पामिच्चं" ति उच्छिण्णं गेण्हति, अण्णेसिं वा अच्छिंदति, अह ण गेण्हति पत्थयणं तो दिगिंचति, छुहाए जं अणागाढादि परिताविज्जति, अहवा – भुक्खितो कंदादि गेण्हति, अत्थ परित्ताणंतणिप्फण्णं ।

अधवा – भुक्खित्तो जं लावगतित्तिरादि घातिस्सति, परितावणादिणिप्फण्णं तिसु चरिमं ॥५४१७॥

अरण्णातो णिग्गच्छमाणो जो गेण्हति तस्स इमे दोसा –

चुण्णखउरादि दाउं, कप्पट्ठग देह कोव जह गोवो ।
चड्डण अण्णे व वए, खउरादि वऽसंखडे भोयी ॥५४१८॥

चुण्णो बदरादियाण, खोरखदिरमादियाण खउरो, भत्तसेसं वा साधूण दाउं कप्पट्ठिएहिं पुत्तणत्तुभत्तिजगादिएहिं अण्णेहिं य तदासाए अच्छमाणेहिं जातिज्जमाणा–"देह णे कंदे मूले चुण्णखउरभत्तसेसं वा", ते भणंति – "दिण्णा अम्हेहिं साधूणं", एवं भणंते ते परुण्णा रुण्णं करेंताणि ताणि दट्ठूणं पदोसं गच्छेज्ज, जहा गोवो पिंडणिज्जुत्तीए । एतेसु वा चड्डुतेसु अडवीसु अण्णं वा आणेति खउरादि "भोइ" त्ति भारिया तीए सह असंखडं भवति, अंतरायदोसा य । जम्हा एवमादि दोसा तम्हा वणं पविसंताणं णिंताण वा ण घेत्तव्वं ॥५४१८॥

भवे कारणं –

असिवे ओमोयरिए, रायदुट्ठे भए व गेलण्णे ।
अद्धाण रोहए वा, जयणागहणं तु गीयत्थे ॥५४१९॥

जयण त्ति पणगपरिहाणीए जाहे चउलहुं पत्तो ताहे सावसेसं गेण्हंति ॥५४१९॥

जे भिक्खू वसुराइयं अवसुराइयं वयइ, वयंतं वा साहिज्जति ॥सू०॥१३॥

वसूणि रयणाणि, तेसु रातो वसुराती, अधवा – राती दीप्तिमाभ्राजते वा शोभत इत्यर्थः, तं विवरीयं जो भणति तस्स चउलहुं ।

इमा णिज्जुत्ती –

वसुमं ति व वसिमं ति व, वसति व वुसिमं व पज्जया चरणे ।
तेसु रतो वुसिराती, अवुसिम्मि रतो अवुसिराती ॥५४२०॥

वसु त्ति रयणा, ते दुविवा–दव्वे भावे य। दव्वे मणिरयणादिया, भावे णाणादिया। इह भाववसूहिं अधिकारो। ताणि जस्स अत्थि सो वसुमं ति भण्णति।

अथवा – इंदियाणि जस्स वसे वट्टंति सो वसिमं भण्णति।

अधवा – णाणदंसणचरित्तेसु जो वसति णिच्चकालं सो वस (वुसिमं) ति रातिणिओ भण्णति।

अहवा – व्युत्सृजति पापं अन्यपदार्थाख्यानं, चारित्रं वा वुसिमं ति वुच्चति। वसति वा चारित्ते वसुराती भण्णति।

अहवा – "पज्जया चरणे" त्ति एते चारित्तठियस्स पज्जत्ता एगट्ठिता इत्यर्थः। एस वुसिराती भण्णति, पडिपक्खे अवुसिराती ॥५४२०॥

अहवा –

> वुसि संविग्गो भणितो, अवुसि असंविग्ग ते तु वोच्चत्थं।
> जे भिक्खु वएज्जा ही, सो पावति आणमादीणि ॥५४२१॥

कंठा। वोच्चत्थं ति वुसिरातियं अवुसिरातितं भणति त्ति ॥५४२१॥

एत्थ पढमं वुसिरातियं अवुसिरातियं भण्णति इमेहिं कारणेहिं –

> रोसेण पडिणिवेसेण वा वि अकयन्नु मिच्छभावेणं।
> संतगुणे छाएत्ता, भासंति अगुण असंते उ ॥५४२२॥

कोइ कस्सति कारणे अकारणे वा रुट्ठो, पडिनिवेसणं एसो पूतिज्जइ अहं ण पूइज्जामि, एवमादिविभासा। अकयण्णुयाए एतेण तस्स उवयारो कओ ताहे मा एयस्स पडिउवयारो कायव्वो होहिइ त्ति, मिच्छाभावेणं मिच्छत्तेणं उद्दिण्णेणं। सेसं कंठं ॥५४२२॥

असंविग्गा संविग्गजणं इमेण आलंवणेण हीलंति –

> धीरपुरिसपरिहाणी, नाऊणं मंदधम्मिया केई।
> हीलंति विहरमाणं, संविग्गजणं अबुद्धीतो ॥५४२३॥

के पुण धीरपुरिसा ?, इमे –

> केवल-मणोहि-चोद्दस-दस-णवपुव्वीहि विरहिए एण्हिं।
> सुद्धमसुद्धं चरणं, को जाणति कस्स भावं च ॥५४२४॥

एते संपइं णत्थि, जति संपइ एते होंतो तो जाणंता असीदंताणं चरणं सुद्धं इयरेसिं असुद्धं, केवलिमादिणो णाउं पडिचोयंता पच्छित्तं च जहारुहं देंता चिंतंति अब्भंतरगो वि एरिसो चेव भावो, ण य एगंतेण वाहिरकरणजुत्तो अभ्यंतरकरणयुक्तो भवति।

कहं ? उच्यते – जेण विवज्जतो दीसति, जहा उदायिमारयस्स पसण्णचंदस्स य। वाहिर अविसुद्धो वि भरहो विसुद्धो चेव ॥५४२४॥

> वाहिरकरणेण समं, अब्भिंतरयं करेंति अमुणेंता।
> णेगंता तं च भवे, विवज्जओ दिस्सते जेणं ॥५४२५॥

जति वा णिरतीचारा, हवेज्ज तव्वज्जिया य सुज्झेज्जा ।
ण य होंति णिरतिचारा, संघयणधितीण दोव्वल्ला ॥५४२६॥

संघयकालं जति णिरतिचारा हवेज्ज, अहवा – तव्वज्जिया णाम ओहिणाणादीहिं वज्जिते जइ चरित्तसुद्धी हवेज्ज तो जुत्तं वत्तुं – इमे विसुद्धचरणा, इमे अविसुद्धचरणा । संघयणधितीण दुव्वलत्तणतो [1]य – पच्छित्तं करेंति ॥५४२६॥

संघयण-धितिदुव्वलत्तणतो चेव इमं च ओसण्णा भणंति –

को वा तहा समत्थो, जह तेहि कयं तु धीरपुरिसेहिं ।
जहसत्ती पुण कीरति, [जहा] [2]पइण्णा हवइ एवं ॥५४२७॥

धीरपुरिसा तित्थकरादी जहासत्तिए कीरति एवं भणमाणे दढा पइण्णा भवति, अनलियं च भवति जो एवं भणति । जो पुण अण्णहा वदति अण्णहा य करेति, तस्स सच्चपइण्णा ण भवति ॥५४२७॥

आयरिओ भणति –

सव्वेसि एगचरणं, सरणं मोयावगं दुहसयाणं ।
मा रागदोसवसगा, अप्पणो सरणं पलीवेह ॥५४२८॥

सव्वेसिं भवसिद्धियाणं चरणं च सरीरमाणसाणं दुक्खाण विमोक्खणकरं, तं तुब्भे सयं सीयमाणा अप्पणो चरित्तेण रागाणुगता उज्जयचरणाणं चरणदोसमावण्णा मा भणह – "चरणं णत्थि, मा जत्थेव वसह तं चेव सरणं पलीवेह णासहेत्यर्थः" ॥५४२८॥

किं च –

संतगुणणासणा खलु, परपरिवाओ य होति अलियं च ।
धम्मे य अवहुमाणो, साहुपदोसे य संसारो ॥५४२६॥

चरणं णत्थि त्ति एवं भणंतेहिं [3]साधूहिं संतगुणणासो कतो भवति, पवयणस्स परिभवो कतो भवति, अलियवयणं च भवति, चरणधम्मे पलोविज्जंते चरणधम्मे य अवहुमाणो कतो भवति, साधूण य पदोसो कतो भवति, साधुपदोसे य णियमा संसारो वुड्ढितो भवति ॥५४२६॥

किं च –

खय उवसम मीसं पि य, जिणकाले वि तिविहं भवे चरणं ।
मिस्सातो च्चिय पावति, खयउवसमं च णऽण्णत्तो ॥५४३०॥

तित्थकरकाले वि तिविहं चारित्तं – खतियं उवसमियं खओवसमियं च । तम्मि वि तित्थकरकाले मिस्सातो चेव चरित्तातो खतियं उवसमियं वा चरित्तं पावति, नान्यस्मात् । वहुतरा य चरित्तविसेसा खओवसमभावे भवंति ॥५४३०॥

किं च तीर्थकाले वि –

अइयारो वि हु चरणे, ठितस्स मिस्से ण दोसु इतरेसु ।
वत्थातुरदिट्ठंता, पच्छित्तेणं स तु विसुज्झो ॥५४३१॥

---

१ ण य । (ताड़) । २ दढा, इति चूर्णौ । ३ साधूणं, इत्यपि पाठः ।

"इयरेसु" त्ति खतिए उवसमिए य । जहा वत्थं खारादीहिं सुज्झति, आतुरस्स वा रोगो विरेयणओसहपओगेहिं सोहिज्जति, तथा साधुस्स मिस्सचरणादिग्रइयारो पच्छित्तेणं सुज्झति ॥५४३१॥

जं च भणियं – "अतिसयरहिएहिं सुद्धासुद्धचरणं ण णज्जति भावो" ।

तत्थ भण्णति –

दुविहं चेव पमाणं, पच्चक्खं चेव तह परोक्खं च ।
ओधाति तिहा पढमं, अणुमाणोवम्मसुत्तितरं ॥५४३२॥

ओहि मणपज्जव केवलं च एयं तिविधं पच्चक्खं । धूमादग्निज्ञानमनुमानं । यथा गौस्तथा गवय औपम्यं । सुत्तमिति आगमः । इयरंति एयं तिविधं परोक्खं ॥५४३२॥

सुद्धमसुद्धं चरणं, जहा उ जाणंति ओहिणाणादी ।
आगारेहि मणं पि व, जाणंति तहेतरा भावं ॥५४३३॥

पुव्वद्धं कंठं । जहा परस्स भमुहणेत्ति (भमुहाणण) वाहिरागारेहिं अंतरगतो मणो णज्जति तहा "इयर" त्ति परोक्खणाणी आलोयणाविहाणं सोउं पुव्वावरवाहियाहिं गिराहिं आचरणेहिं य जाणंति चरित्तं सुद्धासुद्धं भावं च सुद्धेतरं ॥५४३३॥

चोदगाह – "जइ आगारेण भावो णज्जति तो उदातिमारदिणं किं ण णातो ?"

आचार्याह –

कामं जिणपच्चक्खो, गूढाचाराण दुम्मणो भावो ।
तहऽवि य परोक्खसुद्धी, जुत्तस्स व पण्णवीसाए ॥५४३४॥

काममिति अनुमितार्थे । जइ वि जे उदायिमारगादि गूढायारा तेसिं छउमत्थेणं दुक्खं उवलब्भति भावो, सो जिणाणं पुण पच्चक्खो, तहावि परोक्खणाणी आगमाणुसारेण चरित्तसुद्धिं करेंति चेव ।

कहं ?, उच्यते – "जुत्तस्स व" त्ति जहा सुत्तोवउत्तो "मीसजायज्झोयरो एगो" त्ति पण्णरस उग्गमदोसा, दस एसणादोसा, एते पण्णवीसं जहासुयाणुसारेण सोहंतो चरणं सोहेति, तहा सुत्ताणुसारेण पच्छित्तं देंतो करेंतो य चरित्तं सोधेति ॥५४३४॥

अणुज्जतचरणो इमेहिं कज्जेहिं होज्ज –

होज्ज हु वसणप्पत्तो, सरीरदोव्वल्लताए असमत्थो ।
चरण-करणे असुद्धे, सुद्धं मग्गं परूवेज्जा ॥५४३५॥

वसणं आवती मज्जगीतादितं वा, [1]तम्मि ण उज्जमति, अहवा – सरीरदुव्वलत्तणतो असमत्थो सज्झायपडिलेहणादिकिरियं काउं अकप्पियादिपडिसेहणं च । अधवा – सरीरदोव्वला असमत्था अदढधम्मा एवमादिकारणेहिं चरणकरणं से अविसुद्धं, तहावि अप्पाणं गरिहंतो सुद्धं साहुमग्गं परूवेंतो आराधगो भवति ॥५४३५॥

---

१ तेण, इत्यपि पाठः ।

इमो चेव अत्थो भण्णति –

ओसण्णो वि विहारे, कम्मं सिढिलेति सुलभग्रोही य।
चरणकरणं विसुद्धं, उववूहेंतो परूवेंतो ॥५४३६॥

कंठ्या। जो पुण ओसण्णो होउं ओसण्णमग्गं उववूहइ, सुद्धं चरणकरणमग्गं गूहति इमेहिं कारणेहिं। इमं च से दुल्लभवोहिअत्तं फलं –

परियायपूयहेतुं, ओसण्णाणं च आणुवत्तीए।
चरणकरणं णिगूहति, तं दुल्लभवोहियं जाणे ॥५४३७॥ कंठ्या।

अहवा –

गुणसयसहस्सकलियं, गुणुत्तरतरं च अभिलसंताणं।
चरणकरणाभिलासी, गुणुत्तरतरं तु सो लहति ॥५४३८॥

गुणाणं सतं गुणसतं, गुणसयाणं सहस्सा गुणसयसहस्सा, छंदोभंगभया सकारस्स हुस्सता कता, ते य अट्ठारससीलंगसहस्सा, तेहिं कलियं जुत्तं संखियं वा। किं तं ?, चारित्तं जो तं पसंसति। किं च गुणश्चासौ उत्तरं च गुणोत्तरं, अथवा – अन्येऽपि गुणाः सन्ति क्षमादयस्तेषां उत्तरं तं च गुणोत्तरं सरागचारित्तं, गुणुत्तरतरं पुण अहक्खायं चारित्तं भण्णति, तं च जे अभिलसंति, ते उज्जयचरणा इत्यर्थः। ते य उववूहते जो ओसण्णो अप्पणा य उज्जयचरणो होहति चरणकरणाभिलापी भण्णति स एवंवादी गुणुत्तरतरं लभति अहक्खाय-चारित्रमित्यर्थः। अहवा – गुणुत्तरं भवत्थकेवलिसुहं, गुणुत्तरतरं पुण मोक्खसुहं भण्णति, तं लभति ॥५४३८॥

जो पुणोसण्णो –

जिणवयणभासितेणं, गुणुत्तरतरं तु सो वियाणित्ता।
चरणकरणाभिघाती, गुणुत्तरतरं तु सो हणति ॥५४३९॥

गुणुत्तरतरं चारित्रं साधू वा अप्पणा य चरणकरणोवघाते वट्टति। अहवा – चरणकरणस्स जत्ताण वा निंदापरोवघायं करेइ, स एवंवादी गुणुत्तरं वा चारित्रं मोक्खसुहं वा हणति ण लब्भइ त्ति, जेण सो दीहसंसारित्तणं णिव्वत्तेति ॥५४३९॥

जो ओसण्णं ओसण्णमग्गं वा उववूहति –

सो होती पडिणीतो, पंचण्हं अप्पणो अहितिओ य।
सुहसीलवियत्ताणं, नाणे चरणे य मोक्खे य ॥५४४०॥

पंच पासत्थादि सुहसीला विहारलिंगा ओधाविउकामा अवियत्ता अगीयत्था णाणचरणमोक्खस्स य एतेसिं सव्वेसिं पडिणीतो भवति ॥५४४०॥

इमेहिं पुण कारणेहिं ओसण्णं ओसण्णमग्गं वा उववूहेज्जा –

वितियपदमणप्पज्झे, वएज्ज अविकोविए वि अप्पज्झे।
जाणंते वा वि पुणो, भयसा तव्वाति गच्छट्ठा ॥५४४१॥

राया सिय ओसण्णाणुवत्तियो भया भणेज्जा । तव्वादि त्ति कश्चिद् वादी ब्रूयात् – "तपश्विनं अतपश्विनं ब्रुवतः पापं भवतीति नः प्रतिज्ञा", तत्प्रतिघातकरणे वुसिरातियं अवुसिरातियं भणेज्ज, दुब्भिक्खादिसु वा ओसण्णभाविएसु खेत्तेसु अच्छंतो ओसण्णाणुवत्तियो गच्छपरिपालणट्ठा भणेज्ज ।।५५४१।।

जे भिक्खू अवुसिराइयं वुसिराइयं वयइ, वयंतं वा सातिज्जति ।।सू०।।१४।।

एमेव वितियसुत्ते, अवुसीरातिं वएज्ज वुसिरातिं ।
कह पुण वएज्ज सोऊण अवुसिरातिं तु वुसिरातिं ।।५४४२।।कंठा

एगचरिं मन्नंता, सयं च तेसु य पदेसु वट्टंता ।
सगदोसछायणट्ठा, केइ पसंसंति णिद्धम्मे ।।५४४३।।

कोइ पासत्थादीणं एगचारियं भण्णति – "एस सुंदरो, एयस्स एगागिणो ण केणइ सह रागदोसा उप्पज्जंति", सो वि अप्पणा गच्छपंजरभग्गो तम्मि चेव ठाणे वट्टति, सो य अप्पणिज्जदोसे छाएउकामो तं पासत्थादि एगचारिं णिद्धम्मं पससति ।।५४४३।।

इमं च भणति—

दुक्करयं खु जहुत्तं, जहुत्तवादुट्ठियावि सीदंति ।
एस नितिओ हु मग्गो, जहसत्तीए चरणसुद्धी ।।५४४४।।कंठा

एवं भणंते इमे दोसा –

अब्भक्खाणं णिस्संकया य अस्संजमंमि य थिरत्तं ।
अप्पा सो अवि चत्तो, अवण्णवातो य तित्थस्स ।।५४४५।।

असंतभावुब्भावणं अब्भक्खाणं, अवुसिरातियं वुसिरातियं भणति, सो य सीतंतो पसंसिज्जमाणे णिस्संको भवति, मंदधम्माण वि असंजमे थिरीकरणं करेति, अण्णं च उम्मग्गपसंसणाते अप्पणो य उम्मग्गपट्ठितो चत्तो, तित्थस्स य अन्यपदार्थेन अवर्णवादः कृतो भवति ।।५४४५।।

किं च –

जो जत्थ होइ भग्गो, ओवासं सो परस्स अविदंतो ।
गंतुं तत्थऽचएंतो, इमं पहाणं ति घोसेति ।।५४४६।।

अद्धाणगदिट्ठंतेण ओसण्णो उवसंघारेयव्वो, सेसं कंठं ।।५४४६।।

किं च—

पुव्वगयकालियसुए, संतासंतेहिं केइ खोभेंति ।
ओसण्णचरणकरणा, इमं पहाणं ति घोसेंति ।।५४४७।।

पुव्वगयकालियसुयनिबंधपच्चयतो सीदंति,

तत्थ कालियसुते इमेरिसो आलावगो –
"वहुमोहो वि य णं पुव्वं विहरेत्ता पच्छा संवुडे कालं करेज्जा, किं आराहए विराहए ? गोयमा ! आराहए, णो विराहए" । (.........)

एवं पुव्वगए वि जे के वि आलावगा ते उच्चरिता। परं खोभंति, अप्पणा खोभंति – सीदंतीत्यर्थः। ते य ओसण्णचरणकरणा "इमं" ति अप्पणो चरियं पहाणं घोसेंति ॥५४४७॥

इमेसिं पुरतो –

अबहुस्सुए अगीयत्थे, तरुणे मंदधम्मिए।
परियारपूयहेऊ, सम्मोहेउं निरुंभंति ॥५४४८॥

जेणं आयारपगप्पो ण झातितो एस अबहुस्सुतो, जेण आवस्सगादियाणं अत्थो ण सुतो सो अगीयत्थो, सोलसवरिसाण आढवेत्तु जाव न चत्तालीसवरिसो एस तरुणो, असंविग्गो मंदधम्मो, एते पुरिसे विपरिणामेति, अप्पणो परिवारहेउ, एतेहिं य परिवारितो लोयस्स पूयणिज्जो होहं, कालियदिट्ठिवाए भणितेहिं, अहवा – अभणिएहिं वा सम्मोहेउं अप्पणो पासे णिरुंभति – धरतीत्यर्थः। अथवा – जो एवं पण्णवेति सो चेव अबहुस्सुओ अगीयत्थो वा तरुणो मंदधम्मो वा। सेसं कंठं ॥५४४८॥

जत्तो चुतो विहारा, तं चेव पसंसए सुलभबोही।
ओसण्णविहारं पुण, पसंसए दीहसंसारी ॥५४४९॥

जत्तो चुतो विहारा, संविग्गविहारातो चुओ तं पसंसति जो सो सुलभबोधी। जो पुण ओसण्णविहारं पसंसति सो दीहसंसारी भवति ॥५४४९॥

बितियपदमणप्पज्झे, वएज्ज अविकोविए व अप्पज्झे।
जाणंते वा वि पुणो, भयसा तव्वादिगच्छट्ठा ॥५४५०॥ पूर्ववत्

जे भिक्खू वुसिरातियगणातो अवुसिराइयं गणं संकमइ, संकमंतं वा साइज्जइ ॥१५॥

वुसिरातियागणातो, जे भिक्खू संकमे अवुसिरातिं।
वुसिरातिया वुसिं वा, सो पावति आणमादीणि ॥५४५१॥

वुसिरातियातो वुसिराइयं चउभंगो कायव्वो। चउत्थभंगो अवत्थु। ततियभंगे अणुण्णा। पढम-बितिएसु संकमो पडिसिद्धो। पढमे संकमंतस्स मासलहुं। बितिए चउलहुं।

चोदगाह – "जुत्तं बितिए पडिसेहो, पढमभंगे किं पडिसेहो" ?

आचार्याह – तत्थ णिक्कारणे पडिसेहो, कारणे पुणो पढमभंगे उवसंपदं करेति ॥५४५१॥

सा य उवसंपया कालं पडुच्च तिविहा इमा –

छम्मासे उवसंपद, जहण्ण बारससमा उ मज्झिमिया।
आवकहा उक्कोसे, पडिच्छसीसे तु जाजीवं ॥५४५२॥

उवसंपदा तिविहा – जहण्णा मज्झिमा उक्कोसा। जहण्णा छम्मासे, मज्झिमा बारसवरिसे, उक्कोसा जावज्जीवं। एवं पडिच्छगस्स सीसस्स एगविहो चेव जावज्जीवं आयरिओ ण मोत्तव्वो ॥५४५२॥

छम्मासे अपूरेंतो, गुरुगा बारससमा चउलहुगा।
तेण परं मासियं तू, भणितं पुण आरतो कज्जे ॥५४५३॥

जेण पडिच्छगेणं छम्मासिया उवसंपया कया सो जति छम्मासे अपूरित्ता जाति तस्स चउगुरुगा।

जेण बारसवरिसा कया ते अपूरित्ता जाइ चउलहुं । जेण जावज्जीवं उवसंपदा कता सो जाइ तस्स मासलहुं । छण्हं मासाणं परेण णिक्कारणे गच्छंतस्स मासलहुं ।

जेण बारससमा उवसंपदा कया तस्स वि छम्मासे अपूरेंतस्स चउगुरुगा चेव । बारससमातो परेण णिक्कारणे मासलहुं ।

जेण जावज्जीवोवसंपया कया तस्स छम्मासे अपूरेंतस्स चउगुरुगा चेव, तस्सेव बारससमाओ चउलहुगा ॥५४५३॥ एस सोही गच्छतो णितस्स भणितो ।

गच्छे पुण वसंतस्स इमे गुणा –

भीतावासो[1] रतीधम्मे[2], अणायतणवज्जणं[3] ।
णिग्गहो[4] य कसायाणं, एयं धीराण सासणं ॥५४५४॥

"[1]भीतावासो" त्ति अस्य व्याख्या –

आयरियादीणं भया, पच्छित्तभया ण सेवति अकज्जं ।
वेयावच्चऽज्झयणेसु सज्जते तदुवयोगेणं ॥५४५५॥ कंठा

पुव्वद्धं कंठं । [2]रतीधम्मे अस्य व्याख्या –

"वेयावच्च" पच्छद्धं । आयरियादीणं वेयावच्चं करेति । अज्झयणं ति सज्झायं करेति । तदुवओगो सुत्तत्थोवओगो, तेण सुत्तत्थोवओगेण वेयावच्चज्झयणेसु रज्जति – रतिं करेइ त्ति वुत्तं भवइ ।

अहवा – तदुवओगो अप्पणो आयरियादीहिं य भण्णमाणो वेयावच्चज्झयणादिसु रज्जति ॥५४५५॥

"[3]अणायतणवज्जण" त्ति अस्य व्याख्या –

एगो इत्थीगम्मो, तेणादिभया य [4]अल्लियपगारे ।
कोहादी व उदिण्णे, परिणिव्वावेति से अण्णे ॥५४५६॥ कंठा

"[5]कसायणिग्गहो" अस्य व्याख्या – कोहादी पच्छद्धं । गच्छवासे वसंतस्स अण्णे य आयरियादी परिणिव्वावेंति सकसाए । गच्छवासे वसंतेण एयं वीरसासणे धीर-सासणे वा जं भणियं तं आराहियं भवति ॥५४५६॥

इमे य अण्णे गच्छवासे वसंतस्स गुणा –

णाणस्स होइ भागी, थिरयरतो दंसणे चरित्ते य ।
धण्णा आवकहाए, गुरुकुलवासं न मुंचंति ॥५४५७॥

जम्हा गच्छवासे वसंतस्स एवमादी गुणा तम्हा णिक्कारणे संविग्गेण संविग्गेसु वि संकमो ण कायव्वो ॥५४५७॥

कारणे पुण करेज्ज ते य इमे कारणा –

णाणट्ठ दंसणट्ठा, चरितट्ठा एवमाइसंकमणं ।
संभोगट्ठा व पुणो, आयरियट्ठा व णातव्वं ॥५४५८॥

---

१ गा० ५४५४ । २ गा० ५४५४ । ३ गा० ५४५४ । ४ अल्लियागारे, इत्यपि पाठः । ५ गा० ५४५४ ।

णाणट्ठ त्ति अस्य व्याख्या –

सुत्तस्स व अत्थस्स व, उभयस्स व कारणा तु संकमणं ।
वीसज्जियस्स गमणं, भीओ य णियत्तई कोई ॥५५५६॥

पुव्वद्धं कंठं । तेण अप्पणो आयरियाणं जं सुत्तं अत्थि तं गहियं, अत्थि य से सत्ती अण्णं पि घेत्तुं, ताहे जत्थ अत्थि अधिगसुत्तं संविग्गेसु तत्थ संकमइ विसज्जितो आयरिएणं, अविसज्जिएण ण गंतव्वं । अह गच्छति तो चउलहुगा । विसज्जितो य इमे पदे आयरेज्जा-जइ तेसिं आयरियाणं कक्खडचरियं सोउं कोति भीओ णियत्तेज्ज तो पणगं ॥५४५६॥

चिंतेंतो वइगादी, गामे वा संखडी अपडिसेहो ।
सीसपडिच्छग परिसा, पिसुगादायरियपेसविओ ॥५४६०॥

पणगं च भिण्णमासो, मासो लहुगो य सेसए इमं तु ।
संखडि सेह गुरुगा, पेसविओमि त्ति मासगुरु ॥५४६१॥

पडिसेहगस्स लहुगा, परिसिल्ले छ त्तु चरिमओ सुद्धो ।
तेसिं पि होंति लहुगा, जं वाऽऽभव्वं तु ण लभंति ॥५४६२॥

एतेसिं तिण्ह वि गाहाणं अत्थो सह पच्छित्तेण भण्णति –

चिंतेति-किं वच्चामि ण वच्चामि तत्थ अण्णत्थ वा चिंतेति भिण्णमासो (पणगं) । वच्चंतो वा वइयादिसु [1]पडिवज्जति, दधिखीरट्ठा उव्वत्तति वा मासलहुं । आदिसद्दातो सण्णीसु वा दाणसड्ढेसु भद्देसु वा दीहं वा गोयरं करेज्ज, अप्पत्तं वा देसकालं पडिच्छेज्ज, खद्धादाणियगामे वा पडिवज्जति सव्वेसेतेसु पत्तेयं मासलहुं ।

संखडीए वा पडिवज्जति चउगुरुगा, पडिसेवगस्स वा पासे अंतरा चिट्ठेज्ज तत्थ य तेसिं पविसंताणं चउलहुगा, सेहेण सह चउगुरुगा, गहिओवकरणउवधिणिप्फण्णं ।

पडिसेहगस्स पडिसेहत्तणं करेंतस्स चउलहुं, सेहट्ठा करेंतस्स चउगुरुगा ।

"सीसपडिच्छए" त्ति सो पडिसेहगो सीसपडिच्छए वावारेति तम्मि आगते णिउणं [2]सुत्तं पुच्छेज्ज, परिसिल्लस्स वा पासे अंतरा पविसेज्जा तेसिं तत्थ चउलहुगा, सह सेहेण चउगुरुगा, उवकरणे उवहिणिप्फण्णं । परिसिल्लत्तणं करेंतस्स अप्पणो छल्लहुगा । पिसुया मंकुणाण वा भया णियत्तति, अण्णतो वा गच्छति मासलहुं ।

अहवा – तत्थ संपत्तो भणाइ "आयरिएणाहं तुज्झ समीवं अमुगसुत्तत्थणिमित्तं पेसविओ", एवं भणंतस्स चउगुरु । "चरिमो" त्ति जो भणति – "अहं आयरियविसज्जितो तुज्झ समीवमागतो" सो सुद्धो । "तेसिं पि होति लहुगो" त्ति अण्णं अभिधारेउं अण्णं वदंतस्स चउलहुं, पडिच्छंतस्स वि चउलहुं, जं च सचित्ताचित्तं किं चि तं तेण लभंति, जत्थ पट्ठवितो जो [3]पुव्वधारिउं तस्स तं आभव्वं ॥५४६२॥

एयं चेव अत्थं सिद्धसेणखमासमणो वक्खाणेति ।

---

१ ""वज्झति इत्यपि पाठः । २ सुतत्थं करेज्ज । ३ पुव्वमभिधारिओ ।

"[1]भीओ णियत्तइ" त्ति अस्य व्याख्या –

संसाहगस्स सोतुं, पडिपंथियमाइयस्स वा भीओ ।
आचरणा तत्थ खरा, सयं च नाउं पडिनियत्तो ॥५४६३॥

संसाहग अणुवच्चगो । सेसं कंठ्यं ।

"[2]चिंतेंतो" त्ति अस्य व्याख्या –

पुव्वं चिंतेयव्वं, णिग्गतो चिंतेति किं णु हु करेमि ।
वच्चामि णियत्तामि व, तहिं व अण्णत्थ वा गच्छे ॥५४६४॥

जाव ण णिग्गच्छंति आयरियं वा ण पुच्छंति ताव सुचिंतियं कायव्वं, सेसं कंठं ॥५४६४॥

"[3]वइयगामसंखडिमादिसु" इमा व्याख्या –

उव्वत्तणमप्पत्ते, लहुगो खद्धे सुत्तम्मि होंति चउलहुगा ।
निसट्ठ सुवण्ण लहुगो, संखडि गुरुगा य जं चऽण्णं ॥५४६५॥

पंथातो वइयमादिओ उव्वत्तति। अप्पत्तं वा वेलं पडिक्खति। "जं चऽण्णं" ति संखडीए हत्थेण हत्थे संघट्टियपुव्वे, पाएणं वा पाए अक्कंतपुव्वे, सीसेण वा सीसे आउडियपुव्वे संजमविराहणा वा भायणभंगो वा भवति । सेसं गतार्थं कंठ्यं ॥५४६५॥

इदाणिं "[4]पडिसेह सीसपडिच्छग" अस्य व्याख्या –

अमुगत्थऽमुओ वच्चति, मेहावी तस्स कड्ढणट्ठाए ।
अण्णग्गामे पंथे, उवस्सए वा वि वावारे ॥५४६६॥

अभिलावसुद्धपुच्छा, रोलेणं मा हु ते विणासेज्जा ।
इति कड्ढंते लहुगा, जति सेहट्ठाए तो गुरुगा ॥५४६७॥

अक्खर-वंजणसुद्धं, मं पुच्छह तम्मि आगए संते ।
घोसेहि य परिसुद्धं, पुच्छह णिउणे य सुत्तत्थे ॥५४६८॥

को ति आयरिओ विसुद्धसुत्तत्थो फुडवियडवंजणाभिलावी अपडिसेधितो वि पडिसेहगो चेव भावतो लब्भति, तेण य सुयं जहा अमुगत्थ अमुगो साहू मेधावी, अमुगसुत्तणिमित्तं गच्छति, तेणवि चिंतियं मा मं अतिक्कमेउं, तस्स कड्ढणट्ठाए [5]उड्डावणकं करेति, उवरिएण अण्णगामेण गच्छंतस्स पंथे वा अप्पणो वा उवस्सए सीसे पडिच्छए य वावारेति, जण्णिमित्तं सो वच्चति तम्मि आगते – "तं तुब्भे परियट्टेह, अहिलावसुद्धं अत्थं च गुणेज्जह, अत्थं च से पुच्छिज्जह, ते एवं णिक्काएति, पुणो पुणो मा ते रोलेणं विणासेजह त्ति, अण्णं पि सुयं अक्खरवंजणघोससुद्धं पढेज्जह, तम्मि आगते अण्णं पि णिउणे सुत्तत्थे पुच्छेज्जह" एवं कड्ढिए चउलहुं, सेहट्ठा कड्ढिए चउगुरुं ॥५४६८॥ पविसंतस्स वि एवं चेव ।

---

१ गा० ५४५६ । २ गा० ५४६० । ३ गा० ५४६० । ४ गा० ५४६० । ५ आकर्षणं ।

इदाणिं [1]परिसिल्लस्स व्याख्या –

पाउतमपाउता घट्ट मट्ठ लोय खुर विविहवेसधरा ।
परिसिल्लस्स तु परिसा, थलिए व ण किंचि वारेति ॥५४६९॥
तत्थ पवेसे लहुगा, सच्चित्ते चउगुरुं च नायव्वं ।
उवहिणिप्फण्णं पि य, अचित्त देंते य गिण्हंते ॥५४७०॥

परिसिल्लो सव्वस्स संविग्गासंविग्गस्स परिसणिमित्तं संगहं करेति । घट्टा फेणादिणा जंघाओ, तेल्लेण केसे सरीरं वा मट्ठेति, थलि त्ति देवद्रोणी । सेसं कंठं ॥५४७०॥

इदाणिं "[2]पिसुत गुरुहिं पेसितो मि" त्ति एतेसिं व्याख्या –

ढिंकुण-पिसुगादि तहिं, सोउं नातुं व सन्नियत्तंते ।
अमुग सुतत्थनिमित्ते, तुज्झंति गुरूहि पेसवितो ॥५४७१॥ कंठ्या

चोदगाह – "गुरूहिं पेसिओ मि त्ति भणंतस्स को दोसो" ?

आचार्याह –

आणाए जिणवराणं, न हु बलियतरा उ आयरियआणा ।
जिणआणाए परिभवो, एवं गव्वो अविणओ य ॥५४७२॥

जिणिंदेहिं चेव भणियं णिद्दोसो विधिमागतो पडिच्छियव्वो त्ति, णो आयरियाणुवत्तीए पडिच्छियव्वो, जिणाणा य पराभविता भवति, पेसंतस्स उवसंपज्जंतस्स पडिच्छतस्स वि तिण्हि वि गव्वो भवति, तित्थकराणं सुयस्स य अविणओ कओ भवति ॥५४७२॥

जो जं अभिधारेउं पट्ठितो तत्थ जो अच्चासंगेण गतो सो सुद्धो –

अण्णं अभिधारेतुं, पडिसेह परिसिल्ल अण्णं वा ।
पविसेते कुलातिगुरू, सच्चित्तादिं च से हातुं ॥५४७३॥

जो पुण अण्णं अभिधारेउं अपडिसेहगस्स पडिसेहगस्स परिसिल्लस्स अण्णस्स वा पासे पविसति पच्छा कुलगणसंघथेरेहिं णातो तो जं तेण सचित्ताचित्तादि उवणीयं तं से हरंति ॥५४७३॥

ते दोवुवालभित्ता, अभिधारिज्जंति देंति तं थेरा ।
घट्टण वियारणं ति य, पुच्छा विप्फालणेगट्ठा ॥५४७४॥

कीस तुमं अण्णं अभिधारेत्ता एत्थ ठितो जेण य पडिच्छितो ? सो वि भण्णति – "[3]किं ते एस पडिच्छितो ?" तं सचित्तादिगं थेरा जो पुव्वअभिधारितो तस्स विसज्जंति । सेसं कंठं ॥५४७४॥

घट्टेउं सच्चित्तं, एसा आरोवणा य अविहीए ।
वितियपदमसंविग्गे, जयणाए कयम्मि तो सुद्धो ॥५४७५॥

---

[1] गा० ५४६२ । [2] गा० ५४६० । [3] कीस, इत्यपि पाठः ।

"घट्टण" त्ति पुच्छा, जइ निक्कारणे तत्थ ठितो तो सचित्तादी हरेज्ज, पच्छित्तं च से अविधिपदे दिज्जति, णिक्कारणे त्ति वुत्तं भवति ।

पडिसेहगस्स अववाओ भण्णति – "वितियपद" पच्छद्धं । जं सो अभिधारेति सो असंविग्गे ताहे जयणाए पडिसेहं करेंति ।

का जयणा ?, पढमं सव्वेहि भणावेति, मा तत्थ वच्चाहि, पच्छा अप्पणो वि भणावेज्ज, पुव्वुत्तेण वा सीसपडिच्छगवावारणपयोगेण धरेज्जा, ण दोसो । एवं करेंतो कारणे सुज्झति, णवरं – जं तत्थ सचित्ताचित्तं सव्वं पुव्वाभिधारियस्स पयट्टेयव्वं ॥५४७५॥

इदमेवत्थं भण्णति –

अभिधारेंते पासत्थमादिणो तं च जइ सुतं अत्थि ।
जे अ पडिसेहदोसा, ते कुव्वंता हि णिद्दोसो ॥५४७६॥

जं सो सुतं अभिलसति, जइ सुतं अत्थि तो पडिसेहत्तणं करेंतस्स वि जे दोसा भणिया ते ण भवंति ॥५४७६॥

जं पुण सचित्तादी, तं तेसिं देंति ण वि सयं गेण्हे ।
वितियं वित्तूण पेसे, जावतियं वा असंथरणे ॥५४७७॥

पुव्वद्धं कंठं । जं वत्थादिगं अचित्तं तं कारणे अप्पणा विसूरेंतो असिवादिकारणेहि अण्णं अलभंतो ण पेसेति जावतियं उवउज्जति, जेण असंथरणं वा तावतियं गेण्हति, सेसं विसज्जेति, अहवा – सव्वं पि ण विसज्जेति ॥५४७७॥

कारणे इमो सचित्तस्स अववातो –

णाऊण य वोच्छेयं, पुव्वगए कालियाणुओगे य ।
सयमेव दिसाबंधं, करेज्ज तेसिं ण पेसेज्जा ॥५४७८॥

जो तेण सेहो आणितो सो परममेहावी, अप्पणो गच्छे णत्थि को वि आयरियपदजोग्गो, जं च से पुव्वगतं कालियसुयं च तस्स गाहगो णत्थि, ताहे तेसिं वोच्छेदं जाणिऊणं तं सेहं अप्पणो सीसं णिबंधइ, ण पुव्वाभिधारियस्स पट्ठवेइ ॥५४७८॥

इदाणिं परिसिल्ले अववादो भण्णति –

असहाओ परिसिल्लत्तणं पि कुज्जा उ मंदधम्मेसु ।
पप्प व काल-ऽद्धाणे, सचित्तादी वि गिण्हेज्जा ॥५४७९॥

असहायो आयरियो पलिसिल्लत्तणं पि करेइ, तं संविग्गं असंविग्गं वा सहायं गेण्हति ।
सिस्सा वा मंदधम्मा गुरुस्स वावारं ण वहंति, ताहे अण्णं सहायं गेण्हति ।
सड्ढा वा मंदधम्मा गुरुणो जोग्गं ण देंति ताहे लद्धिसंपण्णं परिगेण्हति ।

दुब्भिक्खादिकाले वा श्रद्धाणं वा पविसंतो – एवमादिकारणेहिं परिसिल्लत्तणं करेंतो सुद्धो । सचित्ताचित्तं पुण पेसेति ण पेसेति वा, पुव्वभणियकारणेहिं ॥५४७९॥

जो सो अभिधारेंतो वच्चति तस्स अववादो भण्णति –

असिवादिकारणेहिं, कालगतं वा वि सो व्व इतरो तु ।
पडिसेहे परिसिल्ले, अण्णं व विसिज्ज बितियपदे ॥५४८०॥

जत्थ गंतुकामो तत्थ असिवं अंतरा वा, अहवा – जो अभिधारितो आयरिओ सो कालगतो, "इयरो" त्ति जो सो पहावितो साधू पडिसेहगपरिसिल्ले अण्णस्स वा आयरियस्स पासं पविसेज्ज, बितियपदेण ण दोसो ॥५४८०॥ एयं अविसेसित्तं भणियं ।

इमं [1]आभव्वाणाभव्वं विसेसियं भण्णति –

वच्चंतो वि य दुविहो, वत्तमवत्तस्स मग्गणा होति ।
वत्तम्मि खेत्तवज्जं, अव्वत्तेणं पि तं जाव ॥५४८१॥

पुव्वद्धस्स इमा विभासा –

सुअ अव्वत्तो अगीओ, वएण जो सोलसण्ह आरेणं ।
तव्विवरीतो वत्तो, वत्तमवत्ते च चउभंगो ॥५४८२॥

सुएण वि अव्वत्तो वएण वि अव्वत्तो चउभंगो कायव्वो। सुएण अगीयो अव्वत्तो । वएण जो सोलसण्हं वासाणं आरतो । तव्विवरीतो वत्तो जाणियव्वो । सो पुण वच्चंतो ससहाओ वच्चति असहाओ वा ॥५४८२॥

वत्तस्स वि दायव्वो, पहुप्पमाणे सहाओ किमु इतरे ।
खेत्तविवज्जं अव्वंतिएसु जं लभति पुरिल्ले ॥५४८३॥

आयरिएण पहुप्पमाणेसु साहुसु वत्तस्स वि सहाओ दायव्वो अवस्सं, किमंग पुण अवत्ते ।

"[2]वत्तम्मि खेत्तवज्जम्मि" अस्य व्याख्या – "खेत्तविवज्जं" पच्छद्धं । वत्तो अव्वत्तो वा अव्वंतिया से सहाया तेणेव सह गंतुकामो परखेत्तं मोत्तुं जं सो य लभंति तं सव्वं पुरिमस्स अभिधारेंतस्स आभवति, परखेत्ते जं पुण लद्धं तं खेत्तियस्स आभवति ॥५४८३॥

जति णेतु एतुमाणा, जं ते मग्गिल्ल वत्तपुरिमस्स ।
नियमऽव्वत्तसहाओ, णेउ णियत्तति जं सो य ॥५४८४॥

अह ते सहाया तं णेउं पराणेत्ता पडियागंतुकामा जं ते सहाया लभंति तं मग्गिल्लस्स अप्पणिज्ज आयरियस्स आभवति । सो पुण वच्चंतो अप्पणा जति वत्तो तो जं सो लभति तं पुरिमस्स अभिधारिज्जंतस्स देति । "[3]अव्वत्तेणं पि जाव" त्ति अस्य व्याख्या – अव्वत्तो पुण नियमा ससहायो भवति, तस्स सहाया जे ते य णेतुं णियत्तिउकामो जं सो ते य लभंति तं सव्वं पुव्विल्लायरियस्स आभवति ॥५४८४॥

बितियं अपहुप्पंते, ण देज्ज वत्तस्स सो सहाओ तु ।
वइयाइ अपडिवज्झंतगस्स उवही विसुद्धो उ ॥५४८५॥

---

१ गा० ५४६२ । २ गा० ५४८१ । ३ गा० ५४८१ ।

वितिय त्ति अववादतो, आयरिओ अपहुप्पंतेसु सहायं न देज्जा, सो य अप्पणा सुय-वएसु वत्तो, तस्स वइगादिसु अप्पडिवज्जंतस्स उवहीए वाघातो ण भवति, अह वइयादिसु पडिवज्जइ तो तण्णिप्फण्णं, उवकरणोवघायट्ठाणेसु व वट्टंतस्स उवही उवहम्मति ॥५४८५॥

एगे तू वच्चंते, उग्गहवज्जं तु लभति सच्चित्तं ।
वच्चंतो उ गिलाणो, अंतरा उवहिमग्गणा होति ॥५४८६॥

जो वत्तो एगागी गच्छति सो जति अण्णस्स आयरियस्स जो उग्गहो तं वज्जेउं अणोग्गहखेत्ते किंचि लभति तं सव्वं अभिधारिज्जंते देति । अहवा – एगागी वच्चंतो दो तिण्णि वा आयरिए अभिधारेज्ज, तस्स य अंतरा गेलण्णं होज्ज, जे अभिधारिता तेहिं आयरिएहिं सुयं जहा अम्हे धारेंतो साधू यंतो गिलाणो जाओ ॥५४८६॥

आयरिय दोण्णि आगत, एक्के एक्के व णागए गुरुगा ।
न य लभती सच्चित्तं, कालगए विप्परिणए य ॥५४८७॥

जे ते अभिधारिता ते जति सव्वे आगता तो तेणं जं अंतराले लद्धं तं तेसिं सव्वेसिं साधारणं ।

अह तत्थ एगो आगतो अवसेसा णागता । जे नागया तेसिं चउगुरुं, तं सचित्ताचित्तं ण लब्भंति । जो गतो गवेसगो तस्स तं सव्वं आभव्वति । कालगते वि एवं चेव ।

अह गिलाणो वि विप्परिणओ जस्स सो ण लभति, जं पुण अभिधारिज्जंते लद्धं पच्छा विपरिणतो जं अविपरिणते भावे लद्धं तं लभंति, विप्परिणए भावे जं लद्धं तं ण लभति ॥५४८७॥ एसा सुअभिधारणे आभवंतमग्गणा भणिया ।

इमा अण्णा वाताहडमग्गणा भण्णति –

पंथसहायमसड्ढो, धम्मं सोऊण पव्वयामि त्ति ।
खेत्ते य बाहि परिणत, सहियं पुण मग्गणा इणमो ॥५४८८॥

एक्को कारणितो विहरति, तस्स पंथे असढो वाताहडो सहाओ मिलितो, सो य तस्स साहुस्स पासे धम्मं सुणेत्ता असुणेत्ता वा पव्वयामि त्ति परिणामो जातो – "दिक्खेह मं" ति । सो परिणामो जति साधुपरिग्गहियखेत्तस्स अंतो जातो तो सो सेहो खेत्तियस्स आभवति, अह बाहिं खेत्तस्स अपरिग्गहे खेत्ते परिणामो होज्ज तो तस्सेव साहुस्स आभव्वो ॥५४८८॥

खित्तम्मि खेत्तियस्सा, खेत्तबहिं परिणते पुरिल्लस्स ।
अंतरपरिणयविप्परिणए य कायव्व मग्गणता ॥५४८९॥

पुव्वद्धं गतार्थं । णवरं – "पुरिल्लस्स" त्ति साधोः पूर्वाचार्यस्येत्यर्थः । एवं अंतरा पव्वज्जापरिणामो पुण विपरिणामो, एवं जत्थ अवट्ठितो परिणामो जाओ सो पमाणं – खेत्ते खित्तियस्स, अखेत्ते तस्सेव । जो पुण सम्मद्दिट्ठी तस्स जइ दंसणपज्जातो णत्थि तो इच्छा, दंसणपज्जायअच्छिण्णे जेण सम्मत्तं गाहितो तस्स भवति । ॥५४८९॥

एस विही तु विसज्जिते, अविसज्जि लहुगमासऽणापुच्छा ।
तेसिं पि होंति लहुगा, जं वाऽऽभव्वं च ण लभंति ॥५४९०॥

अविसज्जितो जइ सीसो गच्छइ ङ्क, पडिच्छगो जइ जाइ तो चउलहुगा।

अह विसज्जितो दोच्चं वारं अणापुच्छाए गच्छइ, सीसो पडिच्छओ वा तो मासलहुं, तेसिं पि पडिच्छंताणं चउलहुगा, जं च सचित्तादिगं तं ते पडिच्छंतगा ण लभंति ॥५४९०॥

आयरिओ पुण इमेहिं कारणेहिं ण विसज्जेति –

परिवार-पूयहेउं, अविसज्जंते ममत्तदोसा वा।
अणुलोमेण गमेज्जा, दुक्खं खु विसज्जिउं गुरुणो ॥५४९१॥

अप्पणो परिवारणिमित्तं, बहूहिं वा परिवारितो पूयणिज्जो भविस्सं, मम सीसो अण्णस्स पासं गच्छति त्ति णेहममत्तेण वा ण विसज्जेति। पच्छद्धं कंठं। जम्हा अविसज्जिते सोही ण भवति, ण य सो गुरू पडिच्छइ तम्हा पुच्छियव्वं ॥५४९१॥

सा य आपुच्छा दुविहा – अविधी विधी य। अविधिआपुच्छणे तं चेव पच्छित्तं जं अपुच्छिए। विधिपुच्छाए पुण सुद्धो।

सा इमा विधी –

नाणम्मि तिण्णि पक्खा, आयरिय-उवज्झाय-सेसगाणं तु।
एक्केक्के पंच दिवसो, अहवा पक्खेण एक्केक्कं ॥५४९२॥

णाणणिमित्तेण जंतो तिण्णि पक्खे आपुच्छं करेति, तत्थ आयरियं आपुच्छति पंच दिणा, जति ण विसज्जेति तो उवज्झायं पंचदिणे, जति सो वि ण विसज्जेति तो गच्छं पंचदिणे, पुणो आयरियउवज्झायगच्छं च पंचपंचदिणे, पुणो एते चेव पंचपंचदिणे, एवं एक्केक्के पक्खो भवति, एवं तिण्णि पक्खा। अहवा – अणुबद्धं आयरियपक्खं, पच्छा उवज्झायं, पच्छा गच्छपक्खं, एवं वा तिण्णि पक्खा। एवं जति ण विसज्जितो तो अविसज्जितो चेव गच्छति ॥५४९२॥

एतविहिमागतं तू, पडिच्छ अपडिच्छणंमि भवे लहुगा।
अहवा इमेहिं आगत, एगादि पडिच्छए गुरुगा ॥५४९३॥ कंठं

अह एगादिकारणेहिं आगयं पडिच्छति तो चउगुरुगा ॥५४९३॥

एगे अपरिणए या, अप्पाहारे य थेरए।
गिलाणे बहुरोगे य, मंदधम्मे य पाहुडे ॥५४९४॥

एगागिं आयरियं छड्डेत्ता आगतो। अपरिणता वा सेहा, आहारवत्थपादादियाण अकप्पिया तेसिं सहियं आयरियं छड्डेत्ता आगतो। अप्पाहारो आयरितो तं चेव पुच्छिता सुत्तत्थे वायणं देति, तं मोत्तुमागतो। थेरं गिलाणं आयरियं छड्डेत्ता आगतो। बहुरोगी णाम जो चिरकालं बहूहिं वा रोगेहिं अभिभूतो तं छड्डेत्ता आगतो। अहवा – सीसो गुरू वा मंदधम्मा, तस्स गुणे ण सामायारी पडिपूरेति तं "छड्डेत्ता" आगतो। "पाहुडे" त्ति आयरिएण सह कलहेत्ता आगतो ॥५४९४॥

एतारिसं विउसज्ज, विप्पवासो ण कप्पती।
सीस-पडिच्छा-ऽऽयरिए, पायच्छित्तं विहिज्जति ॥५४९५॥ कंठं

सिस्सस्स पडिच्छगस्स आयरियस्स य तिण्ह वि पच्छित्तं भण्णति –

एगे गिलाणपाहुड, तिण्ह वि गुरुगा तु सीसमादीणं ।
सेसे सीसे गुरुगा, लहुगपडिच्छे य गुरुसरिसं ॥५४९६।

एगे गिलाणे पाहुडे य तिसु वि दारेसु तिण्ह वि सीसपडिच्छगायरियाणं पत्तेयं गुरुगा भवंति, सेसा जे अपरिणयादी दारा तेसु सीसस्स चउगुरुगा, तेसु चेवं पडिच्छयस्स चउलहुगा, गुरुसरिसं ति जइ सीसं पडिच्छइ तो चउगुरुगा, अह पडिच्छगं तो चउलहुगा ॥५४९६॥

[१]णाणट्ठा तिण्णि पक्खे आपुच्छियव्वं तस्स इमो अववातो –

बितियपदमसंविग्गे, संविग्गे वा वि कारणाऽऽगाढे ।
नाऊण तस्स भावं, कप्पति गमणं चऽणापुच्छा ॥५४९७॥

आयरियादीसु असंविग्गीभूतेसु णापुच्छिज्जा वि । अहवा – संविग्गेसु आयरियादिसु अप्पणो से किंचि इत्थिमादियं चरित्तविणासकारणं आगाढं उप्पण्णं ताहे अणापुच्छिए वि गच्छति । "मा एस गच्छति (त्ति) गुरुमादियाण वा भावे णाते अणाते अणापुच्छाए वि गच्छति ॥५४९७॥

अविसज्जिएण ण गंतव्वं ति एयस्स अववादो –

अज्झयणं वोच्छिज्जति, तस्स य गहणम्मि अत्थि सामत्थं ।
ण य वितरंति चिरेण वि, णातुं अविसज्जितो गच्छे ॥५४९८॥ कंठ्या

एवं अविसज्जिओ गच्छति, ण दोसो । अविधिमागतो आयरिएण ण पडिच्छियव्वो त्ति ।

एयस्स अववादो –

णाऊण य वोच्छेयं, पुव्वगए कालियाणुओगे य ।
सुत्तत्थजाणतो खलु, अविहीय वि आगतं वाए ॥५४९९॥

अणापुच्छविसज्जियं वइयादिपडिवज्झंतगं वा अविधिमागयं वोच्छेदादिकारणे अवलंबिऊण पडिच्छति चोदेति वा ण दोसो ॥५४९९॥

"जो तेण आगंतुगेण सेहो आणितो तस्स अभिधारियस्स अणाभव्वो, सो तेण ण गेण्हियव्वो" त्ति एयस्स अववादो इमो –

णाऊण य वोच्छेयं, पुव्वगए कालियाणुओगे य ।
सुत्तत्थजाणगस्स तु, कारणजाते दिसाबंधो ॥५५००॥

चोदक आह – "अणिबद्धो किं ण वाइज्जति" ?

आचार्य आह – अणिबद्धो गच्छइ स गुरूहिं वातिज्जइ, कालसभावदोसेण वा ममत्तीकतं वाएति, अतो दिसाबंधो अणुण्णातो ।

जो य सो णिवज्झइ सो इमे

ससहायअवत्तेण, ं
दलयंतु नानुबंधति

---

१ गा० ५४९२ ।

अव्वत्तेण ससहायेण वत्तेण वा असहाएण परखेत्ते उवट्ठितो सच्चित्तो सो खेत्तियाण आभव्वो तहावि तं दलयंति परममेहाविणं गुरुपदजोग्गं च, अप्पणो य सो गच्छे आयरियजोग्गो णत्थि त्ति ताहे तस्स अप्पणो दिसाबंधं करेति । "उभयं" ति संजता संजतीओ य । अहवा — तस्स सगच्छिल्लगाण य परोप्परं ममीकारकरणं भवति, अम्हं सज्झंतिउ त्ति, "तं व" त्ति जो पडिच्छगो आगतो तं वा णिवंधइ । जो सो सेहो पडिच्छगो आगतो तं वा णिवंधइ ॥५५०१॥

जो सो सेहो पडिच्छगो वा णिवद्धो सो तत्थ णिम्मातो —

आयरिए कालगते, परियट्टति सो गणं सयं चेव ।
चोदेति व अपढंते, इमा तु तहि मग्गणा होति ॥५५०२॥

आयरिए कालगए सो तं गच्छं ण मुयइ, एत्थ गच्छस्स णिवद्धायरियस्स ववहारो भण्णति, सो तं सयमेव गणं परियट्टेइ, सो य गच्छो ण पढति, अपढतो य तेण चोदेयव्वो, जति चोदिया वि ण पढंति तो इमो आभवंतमग्गणा ॥५५०२॥

साहारणं तु पढमे, बितिए खेत्तम्मि ततिए सुहदुक्खं ।
अणहिज्जंते सेसे, हवंति एक्कारस विभागा ॥५५०३॥

कालगयस्स जाव पढमवरिसं ताव गच्छस्स जो सो ठितो आयरिओ एतेसिं दोण्ह वि साधारणं सचित्तादि सामान्यमित्यर्थः ।

बितिए वरिसे — जं खेत्तोवसंपण्णतो लभति तं ते अपढंता लभंति ।

ततिए वरिसे — जं सुहदुक्खोवसंपण्णतो लभति तं ते लभंति ।

चउत्थे वरिसे — कालगतायरियसीसा अणहिज्जंता ण किं चि लभंति, सव्वं पडिच्छगायरियस्स भवति ॥५५०३॥

सीसो पुच्छइ — "किं खेत्तोवसंपण्णओ सुहदुक्खिओ वा लभइ ?" त्ति ।

उच्यते —

णातीवग्गं दुविहं, मित्ता य वयंसगा य खेत्तम्मि ।
पुरपच्छसंथुता वा, सुहदुक्ख चउत्थए सव्वं ॥५५०४॥

दुविधं णातीवग्गं — पुव्वसंथुता पच्छासंथुता य । सहजायगादि मित्ता, पुव्वुप्पणा वयंसगा, एते सव्वे खेत्तोवसंपण्णतो लभति, सुहदुक्खीतो पुण पुरपच्छसंथुता एव केवला भवंति । जे पुण अहिज्जंति तेसिं [1]एक्कारस विभागा । तस्स य कालगयायरियस्स चउव्विधो गणो — पडिच्छया सिस्सा सिस्सिणीओ पडिच्छिणीओ य । एतेसिं जं तेण आयरिएण जीवंतेण उद्दिट्ठं तं पुव्वुद्दिट्ठं भण्णति, जं पुण तेण पडिच्छगायरिएण उद्दिट्ठं तं पच्छुद्दिट्ठं भण्णति ॥५५०४॥

खेत्तोवसंपयाए, बावीसं संथुया य मित्ता य ।
सुहदुक्खमित्तवज्जा, चउत्थए णालबद्धा य ॥५५०५॥

---

१ गा० ५५०३ ।

पुव्वुद्दिट्ठं तस्स उ, पच्छुद्दिट्ठं पवाततंतस्स ।
संवच्छरम्मि पढमे, पडिच्छए जं तु सच्चित्तं ॥५५०६॥

जं जीवंतेण आयरिएण पडिच्छगस्स उद्दिट्ठं तं चेव पढंतस्स पढमवरिमे जं सचित्ताचित्तं लब्भति तं सव्वं "तस्स" त्ति जेण उद्दिट्ठं तस्स आभव्वं। एस एक्को विभागो। अह इमेण उद्दिट्ठं पडिच्छगस्स पढमवरिसे तो जं सचित्ताचित्तं लब्भति तं सव्वं वा देंतस्स। एस वितिओ विभागो ॥५५०६॥

वितियवरिसे –

पुव्वं पच्छुद्दिट्ठे, पडिच्छए जं तु होइ सच्चित्तं ।
संवच्छरम्मि वितिए, तं सव्वं पवायर्यंतस्स ॥५५०७॥

पडिच्छगो वितियवरिसे पुव्वुद्दिट्ठं वा पच्छुद्दिट्ठं वा पढउ जं तस्स सचित्ताचित्तं सव्वं वाएंतस्स। एस ततिओ विभागो ॥५५०७॥

इदार्णि सीसस्स भण्णति –

पुव्वं पच्छुद्दिट्ठं, सीसम्मी जं तु होइ सच्चित्तं ।
संवच्छरम्मि पढमे, तं सव्वं गुरुस्स आभवति ॥५५०८॥

सीसस्स पढमवरिसे कालगतायरिएण च उद्दिट्ठं इमेण वा पडिच्छगारिएण उद्दिट्ठं पढंतस्स जं सचित्ताचित्तं तं सव्वं कालगतस्स गुरुस्स आभवति। एस चउत्थो विभागो ॥५५०८॥

सीसस्स वितिए वरिसे –

पुव्वुद्दिट्ठंतस्स उ, पच्छुद्दिट्ठं पवायर्यंतस्स ।
संवच्छरम्मि वितिए, सीसम्मी जं तु सच्चित्तं ॥५५०९॥

जहा पडिच्छगस्स पढमवरिसे दो आदेसा तहा सीसस्स वितियवरिसे दो आदेसा भाणियव्वा। एत्थ पंच-छट्ठ विभागा सीसस्स वितीयवरिसे ॥५५०९॥

पुव्वं पच्छुद्दिट्ठं, सीसम्मी जं तु होति सच्चित्तं ।
संवच्छरम्मि तइए, तं सव्वं पवायर्यंतस्स ॥५५१०॥ (छ)

जहा पडिच्छगस्स वितियवरिसे तहा सीसस्स ततियवरिसे। एस सत्तमो विभागो ॥५५१०॥

इदार्णि सिस्सिणी पढम-वितियसंवच्छरेसु भाणियव्वा पडिच्छगतुल्ला –

पुव्वुद्दिट्ठंतस्सा, पच्छुद्दिट्ठं पवायर्यंतस्स ।
संवच्छरम्मि पढमे, सिस्सिणिए जं तु सच्चित्तं ॥५५११॥

पुव्वं पच्छुद्दिट्ठं, सीसिणिए जं तु होति सच्चित्तं ।
संवच्छरम्मि वितिए, तं सव्वं पवायर्यंतस्स ॥५५१२॥

तत्थ तिण्णि विभागा पुव्विल्लेसु जुत्ता दस विभागा।

इदाणिं पडिच्छगा –

पुव्वं पच्छुद्दिट्ठं, पडिच्छए जं तु होति सच्चित्तं ।
संवच्छरम्मि पढमे, तं सव्वं पवाययंतस्स ॥५५१३॥

पडिच्छगाए पढमे चेव संवच्छरे आयरिएण वा उद्दिट्ठं इमेण वा उद्दिट्ठं पढउ जं से सचित्तादि तं सव्वं वाएंतो गेण्हति, एते एक्कारस विभागा ॥५५१३॥ एसो विभागे ओहो, इमो विभागेण पुण अण्णो आदेसो भण्णइ, अहवा – एसो विधि जो सो सेहो अप्पणो णिवद्धो तस्स भणितो ।

जो पुण सो पाडिच्छगो णिवद्धो तस्सिमो विधी –

सो तिविहो होज्ज – कुलिच्चो, गणिच्चो, संघिच्चो वा होज्ज ।

संवच्छराणि तिण्णि उ, सीसम्मि पडिच्छए उ तद्दिवसं ।
एवं कुले गणे या, संवच्छर संघे छम्मासा ॥५५१४॥

जइ सो एगकुलिच्चो तो तिण्णि वरिसे सचित्तादि सिस्साण ण गेण्हति, पडिच्छगाण पुण जद्दिवसं चेव आयरिओ कालगओ तद्दिवसं चेव गेण्हति, एवं कुलिच्चए भणियं ।

अह सो एगगणिच्चो तो संवत्सरं सिस्साण सचित्तादि ण गेण्हति । जो य कुलगणिच्चो [ण] भवति सो णियमा संघिच्चो । सो संघिच्चो छम्मासे सिस्साण सचित्तादि ण गेण्हति, ते पडिच्छगायरिएण तत्थ गच्छे तिण्णि वरिसा अवस्सं अच्छियव्वं, परेण इच्छा ॥५५१४॥

तत्थेव य निम्माए, अणिग्गते णिग्गते इमा मेरा ।
सकुले तिण्णि तिगाइं, गणे दुगं वच्छरं संघे ॥५५१५॥

तत्थेव पडिच्छगायरियस्स समीवे तम्मि अणिग्गए जति कोति तम्मि गच्छे णिम्मातो तो सुंदरं ।

अह ण णिम्माओ सो य तिण्ह वरिसाण परतो णिग्गतो, अहवा – एस अम्ह सचित्तादि हरति त्ति ते वा णिग्गता तेसिं इमा मेरा –

सकुले समवायं काउं कुले थेरेसु वा उवट्ठायंति ताहे तेसिं कुलं वायणायरियं देति, वाएण वा वाएति कुलं, तिण्णि तिया णववरिसे वाएति ण य सचित्तादि गेण्हति, जइ णिम्मातो विहरइ ततो सुंदरं ।

अह एक्को वि ण णिम्मातो ततो परं सचित्तादि गेण्हति, ताहे सगणे उवट्ठाति गणो वायणायरियं देति, सो वि दोण्णि वरिसे वातेति, ण य सचित्तादि गेण्हति; जति णिम्मातो एक्को वि तो विहरंतु, अणिम्माते संघे उवट्ठायंति, संघो वायणायरियं देति, सो य वरिसं वाएति, ण य सचित्तादि गेण्हति, णिम्माए विहरंतु । एते बारस वरिसा ॥५५१५॥

अह एतेसिं एक्को वि णिम्मातो, कहं पुण एवतिएण कालेण णिम्माति ?

उच्यते –

ओमादिकारणेहि व, दुम्मेहत्तेण वा ण णिम्माओ ।
काऊण कुलसमायं, कुल थेरे वा उवट्ठंति ॥५५१६॥

ओमसिवदुब्भिक्खमाइएहिं अडंतो न निम्मातो दुम्मेहत्तणेण वा, ताहे पुणो कुलादिसु कुलादियेरेसु वा उवट्ठायंति तेणेव कमेण, एते वि बारस वरिसे । दो बारस चउव्वीसं । जति एक्को वि णिम्मातो

विहरंतु, अह न निम्मातो तो पुणो कुलादिसु तेणेव कमेण उवट्ठायंति, एते वि बारस वरिसे, सव्वे छत्तीसं जाता। एवं जति छत्तीसाए वरिसेहिं णिम्मातो तो सुंदरं, अह न निम्मातो ताहे अण्णं परममेहाविणं पत्तं उवादाय पव्वावेत्ता उवसंपज्जति ॥५५१६॥

सा य उवसंपदा एतारिसे ठाणे –

पव्वज्जएगपक्खिय, उवसंपद पंचहा सए ठाणे।
छत्तीसाऽतिक्कंते, उवसंपद पत्तुवादाय ॥५५१७॥

पच्छद्धं गतार्थं।

पुव्वद्धस्स इमा विभासा, "पव्वज्ज एगपक्खी" इमे –

गुरुसज्झिलए सज्झंतिए य गुरुगुरु गुरुस्स वा नत्तू।
अहवा कुलिच्चओ ऊ पव्वज्जा एगपक्खी उ ॥५५१८॥

पितृव्यः, भ्राता, पितामहः, पौत्रकः – भ्रातृव्य इत्यर्थः। अहवा – एगकुलिच्चए तेसिं एक्का सव्वा सामाचारी, सुतेण एगपक्खितो जस्स एगवायणियं सुत्तं॥

पव्वज्जाए सुएण य, चउभंगुवसंपया कमेणं तु।
पुव्वाहियविस्सरिए, पढमासति तइयभंगो उ ॥५५१९॥

पुव्वद्धभणियक्कमेण उवसंपदा पढमततियभंगेसु त्ति, जम्हा तेसु पुव्वाहितं विस्सरियं पुणो उज्जुयारे ओसक्कइ।

चोदकाह – "साहम्मियवच्छल्लयाए सव्वस्सेव कायव्वं, किं कुलातिविभागेण उवट्ठवणं कतं"?
उच्यते –

सव्वस्स वि कातव्वं, निच्छयओ किं कुलं व अकुलं वा।
कालसभावममत्ते, गारवलज्जाए काहिंति ॥५५२०॥ कंठा

"[1]उवसंपदं पंचविध" त्ति अस्य व्याख्या –

सुतसुहदुक्खे खेत्ते, मग्गे विणए य होति बोधव्वे।
उवसंपया उ एसा, पंचविहा देसिता सुत्ते ॥५५२१॥

उवसंपदासु इमो आभवंतववहारो –

सुत्तम्मि णालबद्धा, णातीबद्धा व दुविहमित्तादी।
खेत्ते सुहदुक्खे पुण, [2]पुव्वसंथुय मग्गदिट्ठादी ॥५५२२॥

सुत्तोवसंपदा दुविधा – पढंते अभिधारेंते य। दुविधाए वि सुत्तोवसंपदाए छ णालबद्धा इमे – माता पिता भ्राता भगिणी पुत्तो धूता।

---

१ गा० ५५१७। २ पुरे इत्यपि पाठः।

एतेसिं पराविं सोलस इमे –

माउम्माता पिता भ्राता भगिणी, एवं पिउणो वि चउरो, भाउपुत्तो धूया य, एवं भगिणी पुत्त-धूयाण वि दो दो, एते सोलस, छ सोलस य बावीसं, एते णालबद्धा, सुत्तोवसंपण्णो लभति। खेत्तोवसंपण्णो बावीसं पुव्वपच्छसंथुया य मित्ता य लभति। सुहदुक्खी पुण बावीस पुव्वपच्छसंथुया य लभंति। मग्गोवसं-पण्णतो एते सव्वे लभंति दिट्ठा भट्ठा य लभति। विणग्रोवसंपदाते सव्वं लभति, णवरं – विणयाणरिहस्स ण वंदणाविणयं पउंजति।

"[1]सगे ठाण" त्ति – पव्वज्जाए सुतेण य जो एगपक्खी पढमं तत्थ य उवसंपज्जति, पच्छा कुलेण सुएण य जो एगपक्खी, पच्छा सुएण य जो एगपक्खी, पच्छा सुएण गणेण य जो एगपक्खी, तस्स वि पच्छा वितियभंगेसु, पच्छा चउत्थभंगे, एवं उवसंपदाते ठायंति।

अहवा – "[1]सट्ठाणे" त्ति – सुत्तत्थियस्स जस्स सुयं अत्थि तं सट्ठाणं एवं सुहदुक्खियस्स जत्थ वेयावच्चकरा अत्थि, खेत्तोवसंपदत्थियस्स जस्स वत्थभत्तादियं अत्थि, मग्गोवसंपदत्थियस्स जत्थ मग्गं अत्थि, विणयोवसंपदत्थियस्स जत्थ विणयकरणं जुज्जति। एते सट्ठाणा एतेसु उवसंपदा ॥५५२२॥ णाणट्ठोवसंपदा गता।

इदाणिं [2]दंसणट्ठा भण्णति।

कहं वा दंसणट्ठा गम्मति ?, उच्यते –

कालियपुव्वगते वा, णिम्माओ जदि य अत्थि से सत्ती।
दंसणदीवगहेउं, गच्छइ अहवा इमेहिं तू ॥५५२३॥

कालियसुते पुव्वगयसुते वा जं वा जम्मि काले पतरति सुत्तं तम्मि सुत्तत्थतदुभएसु णिम्मातो ताहे जइ से दंसणदीवगेसु गहणधारणसत्ती अत्थि ताहे अप्पणो परस्स य दरिसणं दीवगत्ति दीप्तं करोति हेतुः कारणं तानि दर्शनविशोधनानीत्यर्थः। अहवा – इमेहिं कारणेहिं गच्छति ॥५५२३॥

भिक्खुगा जहि देसे, बोडिय-थलि णिण्हएहि संसग्गी।
तेसिं पण्णवणं असहमाणे वीसज्जिते गमणं ॥५५२४॥

जत्थ गामे णगरे देसे वा भिक्खुग-बोडिय-णिण्हगाण वा थली तत्थ ते आयरिया ठिता, तेहिं सद्धिं आयरियसंसग्गी – प्रीतिरित्यर्थः। ते य भिक्खुमादी अप्पणो सिद्धंतं पण्णवेंति, सो य आयरिओ तेसिं दक्खिण्णेण तुण्हिक्को अच्छति ॥५५२३॥

लोगे वि य परिवाओ, भिक्खुयमादी य गाढ चमढेंति।
विप्परिणमंति सेहा, ओभामिज्जंति सड्ढा य ॥५५२५॥

एते भिक्खूमादी जाणगा, इमे पुण ओदणमुंडा, ते य भिक्खुमादी अम्हं पक्खं गाढं चमढेंति, सेह सड्ढा य विपरिणमंति, भणंति य – एते सेयभिक्खू धम्मवादिणो, जइ सामत्थं अत्थि णं तो अम्हं उत्तरं देंतु, एवं सपक्खेसु सड्ढा ओहाविज्जंति, ॥५५२५॥

अह तेहिं भिक्खुगमाईहिं थलीए वट्टगो णिवद्धो –

रसगिद्धो य थलीए, परतित्थियतज्जणं असहमाणो।
गमणं बहुस्सुयत्तं, आगमणं वादिपरिसाओ ॥५५२६॥

---

[1] गा० ५५१७। [2] गा० ५४५८।

सो य आयरियो रसगिद्धो गोउलपडिहतो, सति वि सामत्थे भण्णमाणो वि ण किं चि उत्तरं देति, एवमादि तेसिं परतित्थियाणं पण्णवणतज्जणं असहमाणो सिस्सो आयरिए विधीए पुच्छति, जाहे विसज्जितो ताहे विहिणा गम्रो, सो य सुणेत्ता बहुस्सुम्रो जाम्रो, आगमणं, आगतेण य पुव्वं आयरिया दट्ठव्वा, अण्णवसहीए सो ठाइ, जे तत्थ पंडिया वादिपरिसं च गेण्हति, ते परिजियायत्ते करेति, ते रण्णो महाजणस्स वा पुरतो णिरुत्तरे करेति ॥५५२६॥

वादपरायणकुविया, जति पडिसेहेंति साहु लट्ठं च ।
अह चिरणुगतो अम्हं, मा से पवत्तं परिहवेह ॥५५२७॥

वादकरणे जिता कुविया जइ ते तं आयरियस्स निवंधं पडिसेहेंति तो सुंदरं, अहवा – तत्थ कोइ तुट्ठो भणिज्ज – "एयस्स को दोसो ? एस अम्हं चिरणुगतो, पुव्ववत्तं वट्टयं मा परिहवेह" ॥५५२७॥

ओहे वत्त अवत्ते, आभव्वे जो गमो तु णाणट्ठा ।
सो चेव दंसणट्ठा, पच्चागते हो इमो वऽण्णो ॥५५२८॥

ओहविभागे नाणट्ठा संजयस्स वत्तस्स अवत्तस्स य जो सचित्तादियाण आभव्वाऽणाभव्वगमो भणिओ सो चेव असेसो दंसणट्ठा गच्छंतस्स भवति, पच्चागते कते वादे जितेसु भिक्खुगादिसु आयरिए भणति–णीह एत्तो तुब्भे ॥५५२८॥

जइ एवं भण्णमाणो णीति तो इमा विधी –

कातूण य पणामं, छेदसुतस्स ददाहि पडिपुच्छं ।
अण्णत्थ वसहि जग्गण, तेसिं च निवेयणं काउं ॥५५२९॥

आयरियस्स पादे पणमित्ता भणति – "छेदसुयस्स ददाहि पडिपुच्छं" ति, अस्य व्याख्या –

सद्दं च हेउसत्थं, चऽहिज्जिओ छेदसुत्त णट्ठं मे ।
एत्थ य मा असुयत्था, सुणेज्ज तो अण्णहिं वसिमो ॥५५३०॥

सद्दे त्ति व्याकरणं, हेतुसत्थं अक्खपादादि, एवमादि अहिज्जतो छेदसुत्तं णिसीहादि णट्ठं सुत्तओ अत्थओ तदुभओ वा, तस्स मे पडिपुच्छं देह ।

"[1]अण्णत्थ वसहि" त्ति अस्य व्याख्या – 'एत्थ य" पच्छद्धं । "एत्थ बहुवसहीए असुयत्था सेहा अगीता अपरिणामगा य, मा ते सुणेज्जा तो अण्णवसहीए ठामो, एवं ववएसेण णीणेति, ॥५५३०॥

अहवा – वसहीओ खेत्तओ वा णो इच्छइ णिग्गंतुं ।

"[2]जग्गण तेसिं णिवेदण" त्ति अस्य व्याख्या –

खेत्तारक्खिनिवेयण, इतरे पुव्वं तु गाहिता समणा ।
जग्गविओ सो य चिरं, जह णिज्जंतो ण चेतेति ॥५५३१॥

आरक्खिगो त्ति दंडवासिगो, तस्स णिवेदिज्जति – "अम्हं मंदो पभू अत्थि, तं अम्हे रयणीए वेज्जमूलं नेहामो ति तुब्भे मा किं चि भणेज्जह", इतरे य अगीता समणा ते गमिया – "अम्हे आयरियं एवं

१ गा० ५५२६ । २ गा० ५५२९ ।

णेहामो तुम्हे मा बोलं करेज्जह।" "जग्गण" त्ति सो य आयरिओ राओ किंचि अक्खाइगादि कहाविज्जति सुचिरं जेण णिसट्ठसुत्तो णिज्जंतो ण किंचि वेदति, ताहे संथारगे छोढूणं णेति, अह चेतेति विलवति वा ताहे "खित्तचित्तो" त्ति लोगस्स कहेयव्वं ॥५५३१॥

णिण्हयसंसग्गीए, बहुसो भण्णंतुवेह सो भणति ।
तुह किं ति वच्चि वच्चसु, गता-ऽऽगते णीणितो विहिणा ॥५५३२॥

अह बोडियाणं णिण्हयाणं वा संसग्गी तेण ण गच्छति, बहुसो वि भणंतो उवेहति – तुण्हिक्को अच्छति। अहवा भणेज्ज – "जति हं णिण्हवगसंसग्गीए अच्छामि तो तुब्भं किं दुक्खति ?, वच्चह तुब्भे जतो भे गतव्वं, अहं ण गच्छामि", एत्थ वि सिस्सेण सिक्खणगतागतेण णिण्हगादि जेउं आयरिओ विहिणा णीणियव्वो ॥५५३२॥

एसा विही विसज्जिते, अविसज्जिए लहुग गुरुगमासो य ।
लहुगुरुग पडिच्छंते, आगतमविही इमो तु विही ॥५५३३॥

पडिच्छगस्स चउलहुअं, सीसस्स चउगुरुगा, दोच्चं आपुच्छणे मासो, अणापुच्छे आगयं जइ पडिच्छगं पडिच्छइ तो चउलहुं, अह सीसं तो चउगुरुगा, एवं अविहिमागयस्स पच्छित्तं।

इमा विही भण्णति ॥५५५३॥

दंसणपक्खे आयरिओवज्झाए चेव सेसगाणं च ।
एक्केक्के पंचदिणे, अहवा पक्खेण सव्वे वि ॥५५३४॥

दंसणप्पभावगाण सत्थाण सिक्खगस्स गच्छंतस्स पक्खं आपुच्छणकालो, तत्थ आयरियं पंचदिणे, सेसा पंचदिणा। "अहवा – "पक्खेण सव्वे" त्ति वितियादेसो, दिणे दिणे सव्वे पुच्छति जाव पक्खो पुण्णो ॥५५३४॥

एतविहिमागतं तू, पडिच्छ अपडिच्छणे भवे लहुगा ।
अहवा इमेहि आगत, एगादिपडिच्छए गुरुगा ॥५५३५॥

एगे अपरिणए या, अप्पाहारे य थेरए ।
गिलाणे बहुरोगे य, मंदधम्मे य पाहुडे ॥५५३६॥

एतारिसे विओसेज्ज, विप्पवासो न कप्पती ।
सीसे आयरिए या, पायच्छित्तं विहिज्जती ॥५५३७॥

वितियपदमसंविग्गे, संविग्गे चेव कारणागाढे ।
णाऊण तस्स भावं, होति तु गमणं अणापुच्छा ॥५५३८॥ गतार्थाः

दंसणट्ठा गयं।

इदाणिं [1]चरित्तट्ठा –

चरितट्ठ देस दुविहा, एसणदोसा य इत्थिदोसा य ।
गच्छम्मि विसीयंते, आतसमुत्थेहि दोसेहिं ॥५५३९॥

---

[1] गा० ५४५८।

चरित्तट्ठगमणं दुविहं – देसदोसेहिं आयसमुत्थदोसेहिं य । देस-दोसा दुविधा – एसणदोसा, इत्थिदोसा य । आयसमुत्था दुविहा – गुरुदोसा, गच्छदोसा य ।

तत्थ गच्छे जति आयसमुत्थेहिं चक्कवालसमारिवितहकरणेहिं सीएज्ज तत्थ पक्खं आपुच्छंतो अच्छति, परतो गच्छइ ॥५५३९॥

इमे संजमोवधायदोसा, एतेसु उवदेसो – न गंतव्वं –

जहियं एसणदोसा, पुरकम्मादी ण तत्थ गंतव्वं ।
उदयपउरो व देसो, जहि तं चरियादिसंकिण्णो ॥५५४०॥

उदयप्रचुरः सिंधुविषयवत्, परिव्राजिका कापालिका तच्चण्णगी भगवी च एवमादिचरगादीहिं जो आइण्णो विसओ तं पि ण गंतव्वं ॥५५४०॥

अह संजमविसए असिवादी कारणा होज्ज ताहे असंजमखेत्तं पविट्ठा –

असिवादीहिं गया पुण, तक्कज्जसमाणिया ततो णिंति ।
आयरिए अणिंते पुण, आपुच्छितु अप्पणा णेंति ॥५५४१॥

आदिसद्दातो दुब्भिक्खपरचक्कादिया । "तक्कज्जसमाणिय" त्ति तम्मि संजमखेत्ते जया ते असिवादिया फिट्टा ताहे तो असंजमखित्ताओ णिग्गंतव्वं । जइ आयरिओ केणइ पडिबंधेण सीयंतो वा णणिग्गच्छति तो जो एगो दो बहू वा असीदंता ते आयरियं विधीए पुच्छित्ता अप्पणा णिग्गच्छंति ॥५५४१॥

णिग्गच्छणे इमा विधी –

दो मासे एसणाए, इत्थिं वज्जेज्ज अट्ठ दिवसाणि ।
आतसमुत्थे दोसे, आगाढे एगदिवसं तु ॥५५४२॥

जत्थ एसणादोसा तत्थ जयणाए अणेसणिज्जं गिण्हंतो वि दो मासे, आयरियं आपुच्छंते वि उदिक्खति सहसा ण परिच्चयति,

अह [1]इत्थिसयज्झिगादि उवसग्गेति, अप्पणो य दढं चित्तं, तो अट्ठदिवसे आपुच्छति । तप्परतो अणितेसु अप्पणा णिग्गच्छति ।

अह – इत्थीए अप्पणा अज्झोववण्णो तो एरिसे आयसमुत्थे आगाढे दोसे एगदिवसं पुच्छित्ता अणितेसु वितियदिवसे अप्पणा णीणेति ॥५५४२॥

सेज्जायरमादि सएज्झिया व अउत्थदोस उभए वा ।
आपुच्छति सण्णिहितं, सण्णातिगतो व तत्तो उ ॥५५४३॥

अह अप्पणा सेज्जातरीए सएज्झिगाए वा अतीव अज्झोववण्णो । "उभयए" त्ति परोप्परओ तो जति सो आयरितो सण्णिहितो आपुच्छति, असण्णिहिते पडिस्सयगओ सण्णादिभूमिगओ वा अहा – सण्णिहितं साधुं पुच्छित्ता ततो चेव गच्छति ॥५५४३॥

---

१ गा० इत्थी सेहमिगादि इत्यपि पाठः ।

एयविहिमागयं तु, पडिच्छ अपडिच्छणे भवे लहुगा ।
अहवा इमेहि आगत, एगादिपडिच्छणे गुरुगा ॥५५४४॥ पूर्ववत्

एगे अपरिणते या, अप्पाहारे य थेरए ।
गिलाणे वहुरोगे य, मंदधम्मे य पाहुडे ॥५५४५॥ पूर्ववत्

एतारिसं विओसज्ज, विप्पवासो ण कप्पति ।
सीसे आयरिए या, पायच्छित्तं विहिज्जती ॥५५४६॥ पूर्ववत्

भवे कारणं ण पुच्छिज्जा वि –

बितियपदमसंविग्गे, संविग्गे चेव कारणागाढे ।
नाऊण तस्स भावं, अप्पणो भावं चऽणापुच्छा ॥५५४७॥

आयरियादी असंविग्गा होज्ज, संविग्गा वा कारणं आगाढं अहिडक्कादि अवलंबित्ता ण पुच्छेज्ज, तस्स वा भावं जाणेति, सुचिरेण वि ण विसज्जेति, अप्पणो वा भावं जाणति – "अम्हं अच्छंतो अवस्सं सि (सी) दामि", एवमादिकारणेहिं अणापुच्छित्ता वच्चेज्जा चरित्तट्ठा ५५४७॥

अह गुरु इत्थिदोसेहिं सीएज्जा –

सेज्जायरकप्पट्ठी, चरित्तठवणाए अभिगया खरिया ।
सारूविओ गिहत्थो, सो वि उवाएण हरियव्वे ॥५५४८॥

सेज्जायरस्स भूणिगा जोव्वणकप्पे ठिया, कप्पट्ठियं पडुच्च आयरिएण चरित्तं ठवियं – तं पडिसेवतीत्यर्थः । अहवा – दुवक्खरिगा अभिगता सम्मद्दिट्ठी तं वा पडिसेवेति, अहवा – अभिगते त्ति – आसक्ता, सो पुण आयरिओ चरित्तवज्जितो वेसधारी वा वाहिकरणजुत्तो होज्जा । लिंगी वा सारूविगो वा सिद्धपुत्तो वा गिहत्थो वा होज्ज ।

लिंगधारी लिंगी ।

वाहिरब्भंतकरणवज्जितो सारूवी ।

मुंडो सुक्किलवासधारी कच्छं ण वंधति अवंभचारी अभज्जगो भिक्खं हिंडइ ।

जो पुण मुंडी ससिहो सुक्कंवरधरो सभज्जगो सो सिद्धपुत्तो, एयण्णयरविकप्पे ठितो ।

"उवाएण हरियव्वो" पुव्वं गुरुं अणुकूलं भण्णति – इमाओ खेत्ताओ वच्चामो, जदा णेच्छति ताहे जत्थ सा पडिवद्धो सा पण्णविज्जति "एसो वहूगं आहारो, एयं विसज्जेहि, तुमं किंच मा महामोहकम्मं पगरेहि" । जति सा ठिया तो सुंदरं, अह ण ठाति तो सा विज्जमंतणिमित्तेहिं आउट्टिज्जति वसीकज्जति या, असति विज्जादियाण अत्थं दाउं मोएंति, गुरू य एगंते य भण्णमाणो सव्वहा अणिच्छंतो पुव्वकमेणं राओ हरियव्वो ॥५५४८॥

सव्वहा ग्रायरिए ग्रणिते ग्रप्पणा ततो णेंति ग्रणेगा एगो वा ।

जा एगस्स विधी सा ग्रणेगाण वि दट्ठव्वा –

एगे तू वच्चंते, उग्गहवज्जं तु लभति सचित्तं ।
चरित्तट्ठं जो तु णेति सच्चित्तं णऽप्पिणे जाव ॥५५४६॥

जो साहू वत्तो एगाणितो वच्चति सो परोवग्गहवज्जं सचित्तादि जं लभति तं ग्रप्पणो [1]समग्गिल्लस्स वा गुरुस्स, चरित्तस्स वा [2]स्वपौरुपलक्षणचरित्तट्ठा पुण जो सहाग्रो णेंत तत्थ सचित्तादि णेंतस्स जं सचित्तादि तं जाव ण समप्पेति ताव पूर्वाचार्यस्य ग्रव्वत्तसहाए वि ण लभति पुरिल्लो, जदा पुण उवसंपण्णो समप्पितो वा तदा लभति, तक्कालाग्रो वा चरित्तपरिचालणा ॥५५४६॥

एमेव गणाग्रच्छे, तिविहो उ गमो उ होति णाणादी ।
ग्रायरिय-उवज्झाए, एसेव य णवरि ते वत्ता ॥५५५०॥

जहा साधुस्स भणियं तहा गणावच्छेइयस्स तिविधो गमो णाणदंसणचरित्तट्ठा गच्छंतस्स, एवं ग्रायरिउवज्झायाण वि । णवरं – ते णियमा वत्ता भवंति ॥५५५०॥

एसेव गमो नियमा, निग्गंथीणं पि होइ नायव्वो ।
णाणट्ठं जो तु णेती, सच्चित्तं नऽप्पणिज्जा वा ॥५५५१॥

णवरं – ताग्रो णियमा ससहायाग्रो जो पुण तातो णेति सचित्तादी तस्स, समप्पिग्रासु वाएंतस्स ॥५५५१॥

को पुण तातो णेति ?,

पंचण्हं एगतरे, उग्गहवज्जं तु लभति सच्चित्तं ।
ग्रापुच्छ ग्रट्ठ पक्खे, इत्थीवग्गेण संविग्गे ॥५५५२॥

संजतीतो णाणट्ठा णेंति ग्रायरिय उवज्झायो वा पवित्ती गणी वा थेरो वा, एएसिं पंचण्हं ग्रण्णतरो णितो उग्गहवज्जं सचित्तादि लभति । इत्थी पुण णाणट्ठा वच्चंती ग्रट्ठपक्खे ग्रापुच्छति ग्रायरियं उवज्झायं वसभं गच्छं वा । एवं संजतिवग्गे वि चउरो इत्थीग्रो सत्थेण णेयव्वाग्रो, संविग्गो गीयत्थो परिणयवयो णेति । चरित्तट्ठा गयं ॥५५५२॥

तिण्हट्ठा संकमणं, एयं संभोइएसु जं भणितं ।
तेसऽसति ग्रण्णसंभोइए वि वच्चेज्ज तिण्हट्ठा ॥५५५३॥

णाणातितिगस्सट्ठा एयं संकमणं संभोइएसु भणियं, संभोइयाण ग्रसती ग्रण्णसंभोइएसु वि णाणातितिगस्सट्ठा संकमति ॥५५५३॥

ग्रहवा – संभोगट्ठा संकमति –

संभोगा ग्रवि हु तिहिं, कारणेहिं तत्थ चरणे इमो भेदो ।
संकमचउक्कभंगो, पढमे गच्छम्मि सीदंते ॥५५५४॥

---

1 सेससिस्सस्स, इत्यपि पाठः । 2 ''''लक्षणस्स ग्रट्ठा चरित्त ट्ठा, इत्यपि पाठः ।

संभोगो वि तिण्हट्ठा इच्छिज्जइ, तं तहा णाणस्स दंसणस्स चरित्तस्स। णाणदंसणट्ठा जस्स उवसंपण्णो तम्मि सीयते ततो णिग्गमो भाणियव्वो, जहा अप्पणो गच्छाओ। चरित्तट्ठा पुण जस्स उवसंपण्णो तस्स चरणं प्रति सीदंतेसु इमो चउव्विहो विगप्पो।

कहं पुण संकमति ?, चउभंगे।

इमो चउभंगो –

गच्छो सीदति, णो आयरिओ। णो गच्छो, आयरिओ।

गच्छो वि, आयरिओ वि। णो गच्छो, णो आयरिओ।

पढमे गच्छो सीदति ॥५५५४॥

सो पुण इमेहिं सीदति –

पडिलेह दियतुयट्टण, णिक्खवणाऽऽयाण विणय सज्झाते।
आलोय-ठवण-भत्तट्ठ-भास-पडलग-सेज्जातरादीसु ॥५५५५॥

पडिलेहणा काले ण पडिलेहेंति, [ण] पडिलेहेति वा विवच्चासेण, [वा] ऊणातिरित्तमादिदोसेहिं वा पडिलेहेति। गुरुपरिण्णगिलाणसेहाण वा न पडिलेहेंति। निक्कारणे वा दिया तुयट्टंति। णिक्खवणे आदाणे वा ण पडिलेहंति, ण पमज्जंति, सत्तभंगा। विणयं अहारिहं ण पयुंजति। सज्झाए सुत्तत्थपोरिसीओ अ ण करेंति, अकाले असज्झाए वा करेंति। पविखयादिसु आलोयणं ण पउंजति, भत्तादि वा ण आलोएंति, दोसेहिं वा आलोएंति, संखडिए वा भत्तं आलोएंति-णिरवखंतीत्यर्थः। ठवणकुलाणि वा ण ठवंति, ठविएसु अणापुच्छाए विसंति भत्तट्ठं। मंडलीए ण भुंजंति, वीसुं भुंजंति, दोसेहि वा भुंजंति, गुरुणो वा अणालोगेण भुंजंति। अगारभासादिहिं भासंति, सावज्जं भासंति। पडलेहिं आणियं अभिहडं भुंजंति। सेज्जायरपिंडं वा भुंजंति। आदिग्गहणेणं उग्गमउप्पादणेसणादोसेहिं य गेण्हंति ॥५५५५॥

एवमादिएहिं गच्छं सीदंतं –

चोदावेति गुरूण व, सीदंतं गणं सयं व चोदेति।
आयरियं सीदंतं, सयं गणेणं व चोदावे ॥५५५६॥

गच्छो सीयंतो गुरुणा चोइज्जति, अप्पणा वा चोएति, जे वा तहिं ण सीदति ते वा चोएति। बीयभंगे आयरियं सीदंतं संतं वा चोएति, गणो वा तं आयरियं चोएति ततियभंगे ॥५५५६॥

दोण्णि वि विसीयमाणे, सयं च जे वा तहिं ण सीदंति।
ठाणं ठाणासज्जतु, अणुलोमादीहि चोदावे ॥५५५७॥

दोण्णि वि जत्थ गच्छो आयरिओ य सीदंति तत्थ य सयं चोएति। जे वा तहिं ण सीयंति तेहिं चोयावेति। "ठाणं ठाणासज्जं" त्ति आयरिय-उवज्झाय-पवत्ति-थेर-गणावच्छे-भिक्खु-खुड्डा य अहवा खर-मज्झ-मउय-कूराकूरा वा. जस्स जारिसी अरुहा चोदणा जो वा जहा चोदणं गेण्हति सो तहा चोदेयव्वो ॥५५५७॥

भणमाण भाणवेंतो, अयाणमाणस्स पक्ख उक्कोसो।
लज्जाए पंच तिण्णि व, तुह किं ति व परिणते विवेगो ॥५५५८॥

गच्छं सीदंतं, आयरियं वा उभयं वा सीदंतं सयं चोदेंतो अण्णेहिं वा चोयावेंतो अच्छति । जत्थ ण जाणति जहा एते भण्णमाणा वि णो उज्जमिउकामा तत्थ उक्कोसेण पक्खं अच्छति गुरुं पुण सीदंतं लज्जाए गारवेण वा जाणंतो वि पंच तिण्णि वा दिवसे अभणंतोवि सुद्धो ।

अह चोदिज्जंतो गच्छो गुरू वा उभयं वा भणेज्जा – "तुम्हं किं दुक्खति ? जइ अम्हे सीदामो, अम्हे चेव दोग्गतिं जाईहामो", एवंभावपरिणए विवेगो गच्छस्स गुरुस्स उभयस्स व कज्जति । अन्नं गणं गच्छइ । सो पुण एगो अणेगा वा असंविग्गगणातो संविग्गगणं संकमेति । एवं चउभंगो ॥५५५८॥

गीयत्थविहारातो, संविग्गा दोण्णि एज्ज अण्णतरे ।
आलोइयम्मि सुद्धा, तिविहुवधीमग्गणा णवरिं ॥५५५६॥

गीयत्थगहणातो उज्जयविहारी गहितो, ततो उज्जयविहारातो संविग्गा, दोण्णि एज्ज ॥५५५६॥

"अण्णतरे" त्ति अस्य व्याख्या –

गीयमगीतागीते, अप्पडिबंधे ण होति उवघातो ।
अग्गीयस्स वि एवं, जेण सुया ओहणिज्जुत्ती ॥५५६०॥

जइ एगो सो गीओ अगीओ वा, अह दुगादी होज्ज ते गीता अगीता वा मिस्सा वा, जति एगो गीतो वइयादिसु अप्पडिवज्झंतो वच्चति तो उवधिउवघातो ण भवति, जो वि अगीतो जहण्णेण जेण सुता ओहणिज्जुत्ती तस्स वि अप्पडिउज्झंतस्स उवही ण उवहम्मति ॥५५६०॥

गीयाण व मीसाण व, दोण्ह वयंताण वइगमादीसु ।
पडिवज्झंताणं पि हु, उवहि ण हम्मे ण वा-ऽऽरुवणा ॥५५६१॥

दोण्हं गीताणं विमिस्साणं वा दोण्हं जइ वि वतियादिसु पडिवज्झंति सेससामायारिं करेंति तेसिं उवही ण उवहम्मति, ण वा पच्छित्तं भवति । भणियविवज्जते उवधिउवघातो चिंतणिज्जो । एवं संविग्गविहारातो एगो अणेगा वा विहीए आगता, जप्पभिति गणातो फिडिया ततो आढवेत्तु आलोयणा दायव्वा, ततो सुद्धा ॥५५६१॥

"[1]तिविधउवहीमग्गणा णवरि" त्ति अस्य व्याख्या –

आगंतु अहाकडयं, वत्थव्व अहाकडस्स असती य ।
मेलेंति मज्झिमेहिं, मा गारवकारणमगीए ॥५५६२॥

"तिविहो" त्ति अहाकडो अप्पपरिकम्मो बहुपरिकम्मो य । एवं वत्थव्वाण वि तिविधो, अहाकडं अहाकडेहिं मेलिज्जति, इतरे वि दो एवं । वत्थव्वाण अहाकडा णत्थि ताहे आगंतुगा अघाकडा वत्थव्वगमज्झिमेहिं मेलिज्जंति, मा सो आगंतु अगीयत्थो गारवं करेस्सति "ममेव उवधी उक्कोसतरो" त्ति ॥५५६२॥

गीयत्थे ण मेलिज्जति, जो पुण गीओ वि गारवं कुणइ ।
तस्सुवही मेलिज्जइ, अहिगरण अपच्चओ इहरा ॥५५६३॥

---

१ गा० ५५५६ ।

गीयत्थो जइ अगारवी वत्थव्वअहाकडअसतीते तहावि अहाकडपरिभोगेणेव भुंजति, अह सेघाणं अण्णाण वा पुरओ भणति ।

"ममोवही उक्कोसो, तुब्भ उवही असुद्धो" एवं भणंतो वारिज्जति । जइ ठितो तो सुंदरं, अह ण ठाति, ताहे अण्णोवहिसमो कज्जति ।

"इहरे" त्ति अमेलिज्जंतो अगीयसेहाण अप्पचयो किं अम्हेहिंतो एस उज्जमंततरो जेण उवधि उक्कोसपरिभोगेण भुंजति । "ममोवही उक्कोसो" त्ति इतरे असहमाणा अधिकरणं करेज्जा, तम्हा मेलिज्जति ॥५५६३॥

एवं खलु संविग्गे, संविग्गे संकमं करेमाणे ।
संविग्गमसंविग्गे, ऽसंविग्गे या वि संविग्गे ॥५५६४॥

पुव्वद्धे पढमभंगो गतो, पच्छद्धे वितिय ततियभंगा ।

तत्थ वितियभंगसंकमे इमे दोसा –

सीहगुहं वग्घगुहं, उदहिं व पलित्तगं व जो पविसे ।
असिवं ओमोयरियं, धुवं से अप्पा परिच्चत्तो ॥५५६५॥

जो संविग्गो असंविग्गेसु संकमति तस्स ङ्क, आणादिया य दोसा, सेसं कंठं ॥५५६५॥

चरण-करणपरिहीणे, पासत्थे जो उ पविसए समणो ।
जयमाणए य जहितुं, जो ठाणे परिच्चए तिण्णि ॥५५६६॥

ओसण्णादी सीहगुहादिसंठाणा, सीहगुहादिपवेसे एगमवि य मरणं पावति । जो पुण पासत्थादी अतीति सो अणेगाइं जाइव्व-मरियव्वाइं पावति ॥५५६६॥

एमेव अहाछंदे, कुसील ओसण्णमेव संसत्ते ।
जं तिण्णि परिच्चयती, णाणं तह दंसण चरित्तं ॥५५६७॥

कंठ्या । गतो वितियभंगो ।

पंचण्हं एगतरे, संविग्गे संकमं करेमाणे ।
आलोइए विवेगो, दोसु असंविग्गे सच्छंदो ॥५५६८॥

पंचविहो असंविग्गो – पासत्थो ओसण्णो कुसीलो संसत्तो अहाछंदो । एतेसिं अण्णयरो संविग्गेसु संकमेज्जा, सो संविग्गमज्झगतो संतो आलोयणं देति, अविसुद्धोवधिस्स विवेगं करेति, अण्णो से विसुद्धोवधी दिज्जति । "दोसु" त्ति असंविग्गो असंविग्गेसु संकमं करेति, एस चउत्थभंगो । एस "सच्छंदो" इच्छा से "अविधि" त्ति काउं अवत्थू चेव ॥५५६८॥

पंचेगतरे गीए, आरुभिय वदे जतंत एमाणे ।
जं उवहिं उप्पाए, संभोइय सेसमुज्झंति ॥५५६९॥

पंचण्हं पासत्थादियाण एगतरो एंतो जइ गीयत्थो आयरियं अभिधारेउं तहिं चेव महव्वयउच्चारणं काउं आगंतव्वं । विधीए अपडिबज्झंतो आगच्छमाणो पंथे जं उवकरणं उप्पाएंतो एति त सव्वं संभोतितं ।

"सेसो" त्ति जो पासत्थोवधी अविसुद्धो तं परिट्ठवेंति, जो पुण अगीयत्थो तस्स वते आयरितो देति, उवधी से पुराणो अहिणवुप्पातितो वा से सव्वो परिठविज्जति, आलोइए जं आवण्णो तं से पच्छित्तं देज्जति ।।५५६९।।

पासत्थादिसु इमं आलोयणाविधाणं –

पासत्थादीमुंडिते, आलोयण होति दिक्खपभितिं तु ।
संविग्ग पुराणे पुण, जप्पिभितिं चेव ओसण्णो ।।५५७०।।

अच्चंतपासत्थो जो तस्स पव्वज्जादी आलोयणा । जो पुण पच्छा पासत्थो जातो सो जतो पासत्थो जातो ततो कालतो आढवेत्तु आलोयणं देति । एयं अहाछंदवज्जाण । अहाछंदो जाहे पडिक्कमति ताहे तस्स छ्ढं । अवसेसं तहेव ।।५५७०।। एवं संभोगट्ठा गयं ।

इमो आयरियट्ठा णियमो भण्णति –

आयरिओ वि हु तिहि कारणेहि णाणट्ठ दंसणचरित्ते ।
णाणे महकप्पसुतं, दंसणजुत्ता इमं चरणे ।।५५७१।।

आयरियादि णाणनिमित्तं उवसंपज्जति । अहवा – "णाणे महाकप्पसुयं" ति –

नाणे महकप्पसुयं, सीसत्ता केइ उवगते देइ ।
तस्सऽट्ठ उद्दिसिज्जा, सेच्छा खलु सा ण जिणआणा ।।५५७२।।

केसिं चि आयरियाणं कुले गणे वा महाकप्पसुयं अत्थि । तेहिं गणसंठिती कया – "जो अम्हं आवकहियसीसत्ताए उवट्ठाइ तस्स महाकप्पसुयं दायव्वं, णो अण्णस्स" । अण्णतो गणे विज्जमाणे अविज्जमाणे वा [1]महाकप्पसुतं उद्दिट्ठे आयरिए तम्मि गहिए सो पुरिल्लाणं चेव, ण वाएंतस्स, जेण तेसिं सा सेच्छा । ण जिणगणहरेहिं भणियं – "आवकहियसीसत्ताए उवगयस्सेव सुयं देयमिति" ।।५५७२।।

दंसणट्ठा –

विज्जा-मंत-णिमित्ते, हेतूसत्थट्ठ दंसणट्ठाए ।
चरितट्ठा पुव्वगमो, अहव इमे होंति आएसा ।।५५७३।।

हेतुसत्थ-गोविंदणिज्जुत्तादियट्ठा उवसंपज्जति ।

चरित्तट्ठा इमो आदेसो –

आयरिय-उवज्झाए, ओसण्णोहाविते व कालगते ।
ओसण्ण छव्विहे खलु, वत्तमवत्तस्स मग्गणता ।।५५७४।।

आयरिओ ओसण्णो जातो, ओधातितो वा गिहत्थो जातो, कालगतो वा । जति ओसण्णो तो छण्हं अण्णतरो – पासत्थो, ओसण्णो, कुसीलो, संसत्तो, णीतितो, अहाच्छंदो य । जो य तस्स सीसो आयरियपदे जोग्गो सो वत्तो अवत्तो वा ।।५५७४।।

---

१ ... सुतट्ठा अदिट्ठे, इत्यपि पाठः ।

वत्ते खलु गीयत्थे, अव्वत्तवएण अहवऽगीयत्थे ।
वत्तिच्छ सार पेसण, अहवा सण्णे सयं गमणं ॥५५७५॥

वत्तो वएण, सुएण वत्तो गीयत्थो । एस पढमभंगो ।

वत्तो वएण, सुएण अवत्तो । एस अत्थतो वितियभंगो ।

अव्वत्तो वएण, सुएण वत्तो । एस अत्थतो ततियभंगो ।

अव्वत्तो वएण अहवा अगीयत्थ त्ति । एस चउत्थो भंगो ।

पढमभंगिल्लो जो वत्तो तस्स इच्छा गणं सारेति वा ण वा । अहवा – तस्स इच्छा अण्णं आयरियं उद्दिसइ वा ण वा, जाव ण उद्दिमति ताव गणं सारवेति । अहवा – तं आयरियं दूरत्थं "सारेति" त्ति – चोदेति साधुसंघाडगपेसणेण । अह आसण्णे सो य आयरितो तो सयमेव गतुं चोदेति ॥५५७५॥

चोदणे इमं कालपरिमाणं –

एगाह पणग पक्खे, चउमासे वरिस जत्थ वा मिलती ।
चोयति चोयावेति य, अणिच्छे वट्टावए सयं तू ॥५५७६॥

अप्पणा चोदेति, सगच्छ-परगच्छिच्चेहिं वा चोतावेति, सव्वहा अणिच्छे समत्थो सयमेव गणं वट्टावेति ॥५५७६॥

अहवा –

अण्णं च उद्दिसावे, पंतावणट्ठा ण संगहट्ठाए ।
जति णाम गारवेण वि, मुएज्जऽणिच्छे सयं ठाति ॥५५७७॥

ण गच्छस्स संगहोवग्गहणिमित्तं आयरियं उद्दिसति, आतावणट्ठा उद्दिसति ।

तत्थ गतो भणति – "अहं अण्णं वा आयरियं उद्दिसावेमि, जइ तुब्भे एत्ततो ठाणातो ण उवरमह" ।

सो चिंतेति "मए जीवंते अण्णं आयरियं पडिवज्जति, मुयामि पासत्यत्तणं", जइउवरतो तो सुंदरं । सव्वहा तम्मि अणिच्छे जइ समत्थो तो अप्पणा गच्छाधिवो ठाति ॥५५७७॥ गतो पढमभंगो ।

इमो वितियभंगो –

सुतवत्तो वयवत्तो, भणति गणं ते ण सारिउं सत्तो ।
सगणं सारेहे तं, अण्णं व वयामो आयरियं ॥५५७८॥

असमत्थो अप्पणो गच्छं वट्टावेउं सो तं आयरियं ताव भणति – "अहं असमत्थो गच्छं वट्टावेउं तुम्हे चेव इमे सीसा, अहं च अण्णेसि सिस्सो होहामि", अहवा – "एते य अहं च अण्णं आयरियं वयामो उद्दिसामो" इत्यर्थः ॥५५७८॥

आयरिय उवज्झाए, अणिच्छंते अप्पणा य असमत्थो ।
तियसंवच्छरमद्धं, कुलगणसंघे दिसाबंधो ॥५५७९॥

एवं पि भणिओ आयरिओ उवज्झाओ वा जाहे ण इच्छति संजमे ठाउं, गणाहिवत्ते वा अप्पणो य असमत्थो य, ताहे कुलिच्चं आयरियं उद्दिसति तिण्णि वासे। ताहे तम्मि ठितो तं परिसारेति चोदेति य। तिण्हं वरिसाणं परओ जं सचित्ताचित्तं सो कुलिच्चायरिओ हरति ताहे गणिच्चं उद्दिसावेति वरिसं, ततो संघिच्चं छम्मासे उद्दिसावेति ॥५५७९॥

कुलातो गणं, गणातो वा संघं संकमंतो आयरियं इमं भणाति –

सच्चित्तादि हरति णे, कुलं पि णेच्छामो जं कुलं तुज्झं।
वच्चामो अण्णगणं, संघं च तुमं जति ण ठासि ॥५५८०॥

एवं भणंते जति अब्भुट्ठितो तो सुंदरं ॥५५८०॥

एवं पि अठायंते, तावेतुं अद्धपंचमे वरिसे।
सयमेव धरेति गणं, अणुलोमेणं च णं सारे ॥५५८१॥

अद्धपंचमवरिसोवरि वएण वत्तीभूतो समत्थो सयमेव गणं धारेति, ठिओ वि तं आयरियं अणुलोमेहिं सारेति ॥५५८१॥

अहवा – वितियभंगिल्लो कुलगणसंघेसु नो उवसंपज्जति।

कहं ?, उच्यते –

अहव जदि अत्थि थेरा, सत्ता परिउट्टिऊण तं गच्छं।
दुहओ वत्तसरिसओ, तस्स उ गमओ मुणेयव्वो ॥५५८२॥

सुयवत्तो अप्पणा सुत्तत्थपोरिसीतो देति, गीयत्था थेरा गच्छंति परियट्टंति, एस पढमभंगतुल्लो चेव भवति। "गमो" त्ति पढमभंगप्रकार एव, एसो वि आयरियं सारेति तावेति य ॥५५८२॥ गतो वितियभंगो।

इमो ततियभंगो –

वत्तवओ उ अगीओ, जति थेरा तत्थ केति गीयत्था।
तेसंतिए पढंतो, चोदे तेसऽसति अण्णत्थ ॥५५८३॥

वत्तवयत्तणेण गणं रक्खेति चोदयति. असति थेराणं गीयत्थाणं अण्णमायरियं पव्वज्जसुएणं एगपक्खियं सह गणेण उवसंपज्जति।

अहवा – ततियभंगिल्लो जइ अगीयत्थवत्तणओ गणं परियट्टिउं असमत्थो थेरा य से गीयत्था तेसंतिए पढंति, अण्णे य थेरा गच्छपरियट्टणे कुसला ते गणं परियट्टंति, एरिसो वि णो अण्णस्स उवसंपज्जति, असति थेराण उवसंपज्जति ॥५५८३॥ गतो ततियभंगो।

इमो चउत्थभंगो –

जो पुण उभयावत्तो, वट्टावग असति तो उ उद्दिसति।
सव्वे वि उद्दिसंता, मोत्तूणमिमे तु उद्दिसती ॥५५८४॥

जति थेरा पाढेंतया अत्थि गणं च वट्टावेंतया तो एसो वि ण उद्दिसति, अण्णं च वट्टावगथेराणं पुण असति उद्दिसति ॥५५८४॥

सव्वे वि आयरियं उद्दिसंता इमेरिसे आयरियं मोत्तुं उद्दिसंति –

संविग्गमगीतत्थं, असंविग्गं खलु तहेव गीयत्थं ।
असंविग्गमगीयत्थं, उद्दिसमाणस्स चउगुरुगा ॥५५८५॥

तिविधं पि उद्दिसंतस्स चउगुरुगा, अहवा – काल-तव-उभएहिं गुरुगा कायव्वा ॥५५८५॥

एतेसु उद्दिट्ठेसु य अणाउट्टंतस्स इमं कालगतं पच्छित्तं –

सत्तरत्तं तवो होति, ततो छेतो पहावती ।
छेदेण छिण्णपरिभाए, ततो मूलं तओ दुगं ॥५५८६॥

सत्तदिवसे चउगुरुगं । अण्णे सत्तदिवसे छल्लहुं । अण्णे सत्तदिणे छग्गुरुं । अण्णे सत्तदिणे छेदो । मूलं एक्कं दिणं, अणवट्ठं एक्कदिणं । एक्कतीसइमे दिणे पारंचियं ।

अहवा – वितितो इमो आदेसो–एक्कवीसं दिवसे तवो पूर्ववत् । तवोवरि सत्तदिवसे चउगुरु छेदो । अण्णे सत्तदिवसे छल्लहुछेदो । अण्णे सत्तदिवसे छग्गुरुछेदो, ततो मूलऽणवट्ठपारंचिया पणयालीसइमे दिवसे ।

अहवा – छेदे ततितो आदेसो – पणगादि सत्त सत्त दिणेहिं णेयव्वो, एत्थ छत्तीसुत्तरसत्तदिवसे पारंचियं च पावति । जम्हा एते दोसा तम्हा संविग्गो गीयत्थो उद्दिसियव्वो ॥५५८६॥

छट्ठाणविरहियं वा, संविग्गं वा वि वयति गीयत्थं ।
चउरो वि अणुग्घाया, तत्थ वि आणादिणो दोसा ॥५५८७॥

एयं पि संविग्गगीयत्थं छट्ठाणविरहयं । जति मामकं काहियं पासणियं संपसारियं उद्दिसावेति तो चउगुरुगा आणादिया दोसा ॥५५८७॥

छट्ठाणा जा णितिओ तव्विरहियकाहिगादिया चउरो ।
ते वि य उद्दिसमाणो, छट्ठाणगताण जे दोसा ॥५५८८॥

गतार्था । एत्थ वि सत्तरत्तादितवच्छेदविसेसा य सव्वे भाणियव्वा ।

एतस्स इमो अववातो – *गीयत्थस्स संविग्गस्स असति गीयत्थं असंविग्गं पव्वज्जगुतेण* एगपक्खियं उद्दिसति, एवं कुलगणसंघिच्चयं पि, एवंपि ता ओसण्णो गतो ॥५५८८॥

ओहावित-कालगते, जाविच्छा ता तह उद्दिसावेंति ।
अव्वत्ते तिविहे वी, णियमा पुण संगहट्ठाए ॥५५८९॥

जो ओहावितो सो सारूवितो लिंगत्थो गिहत्थो वा, सो विऽण्णेणं गवेसियव्वो, अण्णसागारियं न विण्णवियव्वो, जाहे णेच्छति अप्पणा य अण्णं आयरियं इच्छति ताहे उद्दिसावेति । "अव्वत्तो तिविहो" पढमभंगवज्जा ततो भंगा, अहवा – तिविहो अव्वत्तो तिविहे वि कुले गण संघे य उद्दिसावेति । एतेसिं दोण्ह वि पगाराणं उद्दिसावेंतो णियमा संगहणिमित्तं उद्दिसावेति । कालगए वि एस चेव विही, णवरं – चोदण-सावणा णत्थि ॥५५८९॥

वत्तम्मि जो गमो खलु, गणवच्छे सो गमो उ आयरिए ।
णिक्खिवणे तम्मि चत्ता, जमुद्दिसे तम्मि ते पच्छा ॥५५९०॥

जो वत्तस्स भिक्खुस्स गमो सो गमो गणावच्छेइए आयरियाणं । इमं णाणत्तं – जइ णाण-दंसण-णिमित्तं गच्छति अण्णो य से आयरिओ संविग्गो तस्स पासे णिक्खिविउं गच्छं अप्पबितिओ ततिओ वा गच्छति ।

अह से अण्णो आयरिओ असंविग्गो तो ते साहू जति तस्स पासे णिक्खिविउं गच्छति तो तेण ते चत्ता भवंति, तम्हा ण णिक्खिवियव्वा णेयव्वा । तेण ते जेण तेण पगारेण ते य घेत्तुं जत्थ गतो तत्थ पढमं अप्पाणं णिक्खिवति, पच्छा भणति – "जहा मे अहं, तहा मे इमे वि" । "तम्मि ते पच्छा" तस्स सिस्सा भवंति ॥५५९०॥

णिक्खिवणा अप्पाणो परं य संतसु तस्स ते देंति ।
संघाडगं असंते, सो वि ण वावारऽणापुच्छा ॥५५९१॥

जदा अप्पा परो य णिक्खित्तो तदा तस्स वि आयरियस्स किं वा जाया ?, जति से संति ति अप्पणो य सहाया पहुप्पंति ताहे तेण तस्स चेव दायव्वा, असतीसु संघाडगं एगं देंति, अवसेसा अप्पणा गेण्हति । अह सव्वहा असहातो सव्वे वि गेण्हति, तेण वि से कायव्वं, तस्स गुरुस्स अणापुच्छाए सो ते ण वावारेति ॥५५९१॥

आयरियं गिलाणं ओसण्णं वा जत्थ पेच्छति तत्थिमं भणति –

ओहावित-उस्सण्णे, भण्णति अणाहओ विणा वयं तुब्भे ।
कमसीससमागारिए, दुप्पडियरगं जतो तिण्हं ॥५५९२॥

पुव्वद्धं कंठं । ओसण्णस्स पुव्वगुरुस्स कमा पादा सिरेण तेसु णिवडति अत्तागारिए ।

सीसो भणति – "तस्स असंजयस्स कहं चलणेसु णिवडिज्जइ" ।

आयरिओ भणति – "दुप्पडियरयं जतो तिण्हं" दुक्खं उवकारिस्स पच्चुवकारो किज्जति, तं जहा – माता पितुणो, सामिस्स, धम्मायरियस्स । अतो तस्स पादेसु वि पडिज्जति, ण दोसो ॥५५९२॥

किं च –

जो जेण जम्मि ठाणम्मि, ठाविओ दंसणे व चरणे वा ।
सो तं तओ चुयं तम्मि चेव कातुं भवे णिरिणो ॥५५९३॥

सो सीसो तेण आयरिएण णाणादिसु ठविओ, इदाणिं सो आयरिओ ततो णाणादिभावाओ चुतो, तं चुअं सो सीसो तेसु चेव णाणादिसु ठवेंतो णिरिणो भवति ॥५५९३॥

जे भिक्खू वुग्गहवक्कंताणं असणं वा पाणं वा खाइमं वा साइमं वा देइ,
देंतं वा साइज्जइ ॥सू०॥१६॥

जे भिक्खू वुग्गहवक्कंताणं असणं वा पाणं वा खाइमं वा साइमं वा पडिच्छइ,
पडिच्छंतं वा सातिज्जइ ॥सू०॥१७॥

जे भिक्खू वुग्गहवक्कंताणं वत्थं वा पडिग्गहं वा कंबलं वा पायपुंछणं वा देइ,
देंतं वा साइज्जइ ॥सू०॥१८॥

जे भिक्खू वुग्गहवक्कंताणं वत्थं वा पडिग्गहं वा कंबलं वा पायपुंछणं वा
पडिच्छइ, पडिच्छंतं वा साइज्जइ ॥सू०॥१६॥

जे भिक्खू वुग्गहवक्कंताणं वसहिं देइ, देंतं वा साइज्जइ ॥सू०॥२०॥

जे भिक्खू वुग्गहवक्कंताणं वसहिं पडिच्छइ,
पडिच्छंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥२१॥

जे भिक्खू वुग्गहवक्कंताणं वसहिं अणुपविसइ,
अणुपविसंतं वा साइज्जइ ॥सू०॥२२॥

जे भिक्खू वुग्गहवक्कंताणं सज्झायं देइ, देंतं वा साइज्जइ ॥सू०॥२३॥

जे भिक्खू वुग्गहवक्कंताणं सज्झायं पडिच्छइ, पडिच्छंतं वा साइज्जइ ॥सू॥२४॥

सव्वे सुत्ता भाणियव्वा –

वुग्गहवक्कंताणं, जे भिक्खू असणमादि देज्जाहि ।
चउलहुग अट्ठहा पुण, णियमा हि इमं अवक्कमणं ॥५५६४॥

वुग्गहो कलहो, तं काउं अवक्कमति । एकग्गहणा तज्जातीयग्गहणमिति वचनात् अट्ठहिं ठाणेहिं गणाओ अवक्कमणे पण्णत्ते –

अब्भुज्जत ओहाणे, एक्केक्क-दुभेद होज्जऽवक्कमणं ।
णाणादिकारणं वा, वुग्गहो वा इहं पगतं ॥५५६५॥

अब्भुज्जयं दुविधं – अब्भुज्जतमरणेण अब्भुज्जयविहारेण वा । ओहाणं दुविधं – विहारोधावणेण लिंगोधावणेण वा, णाणट्ठा आदिग्गहणातो दंसणचरित्तट्ठा य, वुग्गहेण वा । एते उच्चारितसरिस त्ति काउं इह वुग्गहेण पगतं, वुग्गहेण वुक्कंता । वुग्गहो त्ति कलहो ति वा भंडणं ति वा विवादो त्ति वा एगट्ठं ॥५५६५॥

के पुण ते वुग्गहवक्कंता ?, इमे सत्त –

बहुरयपदेस अव्वत्त समुच्छा दुग तिग अवद्धिया चेव ।
सत्तेते णिण्हगा खलु, वुग्गहो होंत वक्कंता ॥५५६६॥

जेट्ठा सुदंसण जमालिऽणोज्ज सावत्थि-तिंदुगुज्जाणे ।
पंचसया य सहस्सं, ढंकेण जमालि मोत्तूणं ॥५५६७॥

रायगिहे गुणसिलए, वसु चोद्दसपुव्वि तीसगुत्ताओ ।
आमलकप्पा णगरी, मित्तसिरी कूर पिउडाई ॥५५६८॥

सेयविपोलासाढे, जोगे तद्दिवसहिययसूले य ।
सोधम्म-णलिणिगुम्मे, रायगिहे मुरियबलभद्दे ॥५५६६॥

मिहिलाए लच्छिघरे, महगिरि कोडिण्ण आसमित्ते य ।
नेउणियणुप्पवाए, रायगिहे खंडरक्खा य ॥५६००॥
नदिखेडजणवउल्लुग, महगिरि धणगुत्त अज्जगंगे य ।
किरिया दो रायगिहे, महातवो तीरमणिणाए ॥५६०१॥
पुरिमंतरंजि भूयगिह, बलसिरि सिरिगुत्त रोहगुत्ते य ।
परिवायपोट्टसाले घोसणपडिसेहणा वादे ॥५६०२॥
विच्छु य सप्पे मूसग, मिगी वराही य काग पोयाई ।
एयाहिं विज्जाहिं, सो य परिव्वायगो कुसलो ॥५६०३॥
मोरी नउली बिराली, वग्घी सिही य उलुगि ओवाइ ।
एयाओ विज्जाओ, गिण्ह परिव्वाय महणीओ ॥५६०४॥
सिरिगुत्तेणं छलुगो छम्मास विकड्ढिऊण वाए जिओ ।
आहरण कुत्तिआवण, चोयालसएण पुच्छाणं ॥५६०५॥
वाए पराजिओ सो, निव्विसओ कारिओ नरिंदेण ।
घोसावियं च नयरं, जयइ जिणो वद्धमाणो त्ति ॥५६०६॥
दसउर-नगरुच्छुघरे, अज्जरक्खिय पूसमित्ततियगं च ।
गोट्ठा माहिल नवमट्ठमेसु, पुच्छाय विंझस्स ॥५६०७॥
पुट्ठो जहा अबद्धो, कंचुइणं कंचुओ समन्नेइ ।
एवं पुट्ठमबद्धं, जीवं कम्मं समन्नेइ ॥५६०८॥
रहवीरपुरं नगरं, दीवगमुज्जाणमज्जकण्हे य ।
सिवभूइस्सुवहिम्मि, पुच्छा थेराण कहणा य ॥५६०९॥
उहाए पण्णत्तं, बोडिय-सिवभूइ उत्तराहि इमं ।
मिच्छादंसणमिणमो, रहवीरपुरे समुप्पण्णं ॥५६१०॥
चोद्दस वासाणि तया, जिणेण उप्पाडियस्स नाणस्स ।
तो बहुरयाण दिट्ठी, सावत्थीए समुप्पन्ना ॥५६११॥
सोलस वासाणि तया, जिणेण उप्पाडियस्स नाणस्स ।
जिवपएसियदिट्ठी, तो उसभपूरे समुप्पण्णा ॥५६१२॥
चोद्दा दो वाससया, तइया सिद्धिं गयस्स वीरस्स ।
तो अव्वत्तय दिट्ठी, सेयविआए समुप्पण्णा ॥५६१३॥

वीसा दो वाससया, तइया सिद्धिं गयस्स वीरस्स ।
सामुच्छेइयदिट्ठी, मिहिलपुरीए समुप्पन्ना ॥५६१४॥
अट्ठावीसा दो वाससया, तइया सिद्धिं गयस्स वीरस्स ।
दो किरियाणं दिट्ठी, उल्लुगतीरे समुप्पण्णा ॥५६१५॥
पंचसया चोयाला, तइया सिद्धिं गयस्स वीरस्स ।
पुरिमंतरंजियाए, तेरासियदिट्ठि उप्पन्ना ॥५६१६॥
छव्वाससयाइं नवुत्तराइं, तइआ सिद्धिं गयस्स वीरस्स ।
तो बोडियाण दिट्ठी, रहवीरपुरे समुप्पण्णा ॥५६१७॥
चोद्दस सोलस वासा, चोद्दावीसुत्तरा य दोन्नि सया ।
अट्ठावीसा य दुवे, पंचेव सया य चोआला ॥५६१८॥
पंचसया चुलसीया, तइया सिद्धिं गयस्स वीरस्स ।
तो अवद्धियादिट्ठी, दसउरणयरे समुप्पन्ना ॥५६१९॥
बोडियसिवभूइओ, बोडियलिंगस्स होइ उप्पत्ती ।
कोडिन्न कोट्ट वीरा, परंपरा फासमुप्पन्ना ॥५६२०॥
पंचसया चुलसीओ, छच्चेव सया नवुत्तरा हुंति ।
नाणुप्पत्तीए दुवे, उप्पन्ना निव्वुए सेसा ॥५६२१॥
सावत्थी उसभपुर, सेअम्बिआ मिहिल उल्लुगातीरं ।
पुरिमंतरंजि दसपुर रहवीरपुरं च नयराइं ॥५६२२॥
सत्तेया दिट्ठीओ, जाइ-जरा-मरण-गब्भ-वसहीणं ।
मूलं संसारस्स उ, हवंति निग्गंथरूवेणं ॥५६२३॥
मोत्तूण एत्थ एक्कं, सेसाणं जावजीविया दिट्ठी ।
एक्केक्कस्स य एत्तो, दो दो दोसा मुणेयव्वा ॥[1]५६२४॥

बहुरयादी जाव बोडिया –

एएसिं तु परूवण, पुव्विं जा वन्निया उ विहिसुत्ते ।
स च्चेव णिरवसेसा, इहमुद्देसम्मि नायव्वा ॥५६२५॥

एतेसिं परूवणा कायव्वा "विधिसुत्ते" त्ति जहा आवस्सगे सामाइय-णिज्जुत्तीए ॥५६२५॥

एतेसिं असणादी, वत्थादी वसहि-वायणादीणि ।
जे देज्ज पडिच्छेज्ज व, सो पावति आणमादीणि ॥५६२६॥

१— "५६०३"—"५६२४" परिमिताः सर्वाः खलु गाथाः पूर्वासत्कमूलभाष्यप्रतौ मात्र प्रथमपादोल्लेख-रूपेणैव संकेतिता आसन्, अतोऽस्माभिरावश्यक-सामायिकनिर्युक्तितः पूर्णीकृताः ।

तेसिं असणादिं देंते पच्छित्तं सव्वपदेसु चउलहुं, अत्थे चउगुरु, आणादिया य दोसा, अणवत्थपसंगा अण्णो वि दाहिति, सङ्घाग वि मिच्छत्तं जणेति ॥५६२६॥

[१]दाण[२]ग्गहणे [३]संवासओ य [४]वायण [५]पडिच्छणादी य ।
[६]सरिसं पभासमाणा, [७]जुत्तिसुवण्णेण ववहरंति ॥५६२७॥

"[१]दाणे" त्ति अस्य व्याख्या –

गव्वेण ते उद्दिण्णा, अण्णे वा देंते दट्ठु भासंति ।
नूणं एते पहाणा, विसादि संसग्गिए गच्छे ॥५६२८॥

अम्हे एते असणादि देंति गव्वं करेज्ज, तेण गव्वेण उदिण्णेण पलावा भवेज्ज । अण्णो वा दिज्जंतं दट्ठुं भणेज्ज – "णूणं एते चेव पहाणा" । तेसिं वा किं चि अहाभावेण गेलण्णं होज्ज, ते भणेज्ज – "एतेहिं किं चि विसादि दिण्णं", एत्थ गेण्हण-कड्ढणादिया दोसा । एवं दाणसंसग्गीए अणीयसेहादिया चोदिता तेसु चेव वएज्जा ॥५६२८॥

"[२]गहणे त्ति अस्य व्याख्या –

तेसिं पडिच्छणे आणा, उग्गमसविसुद्ध आभिओगं वा ।
पडिणीयया व देज्जा, बहुआगमियस्स विसमादी ॥५६२९॥

तेसिं हत्थातो भत्तादि पडिच्छंतस्स तित्थकराणातिक्कमो, उग्गमादि असुद्धं परिभुंजति, वसीकरणं वा देज्ज "अम्हं एस पडिवज्जो" त्ति पडिणीयत्तणे । अहवा – एस बहु आगमिउ त्ति विसादि देज्ज ।

एगवसहिसंवासेण सेहा मिच्छत्तं सीदंति, तेसिं वा चरियं गेण्हंति ।

सुय-वायण-पडिच्छणादिसु वि संसग्गिमादिदोसा ।

जुत्तिसुवण्णतुल्लेण वा सरिसं चरणकरणं कहेंतो सेहादी हरेंति । जम्हा एवमादि दोसा तम्हा णो किं चि तेसिं देज्जा, पडिच्छेज्ज वा, ण वा संवसेज्जा । एवं संकरेंतेण पुव्वभणिया दोसा परिहरिया भवंति । ॥५६२९॥

भवे कारणं –

असिवे ओमोयरिए रायदुट्ठे भए व गेलण्णे ।
अद्धाण रोहए वा, अयाणमाणे वि बितियपदं ॥५६३०॥

असिवादिकारणेहिं तेसिं दिज्जति पडिच्छति वा ॥५६३०॥

इमं गेलण्णे –

गेलण्णं मे कीरति, न कीरती एत्थ तुज्झ भणियम्मि ।
एस गिलाणो एत्थं, गवेसणा णिण्हओ सो य ॥५६३१॥

---

१ गा० ५६२७ । २ गा० ५६२७ । ३ गा० ५६२७ ।

एगत्थ गामे साघू गच्छंता भणिता – "तुब्भं गिलाणस्स किं वेयावच्चं कीरइ, न कीरइ वा" ।

साघू भणति – "किं वा ते" ।

गिही भणइ – "एस गिलाणो तुब्भसंतिश्रो ।"

एत्थ गामे साहुणा पविसिउं गविट्ठो जाव णिण्हतो सो ॥५६३१॥

जणपुरतो फासुएणं, अप्फासुयमग्गणे असमणो उ ।
पण्णवणपडिक्कामण, अविसेसित णिण्हए वा वि ॥५६३२॥

जणसमक्खं उग्गमुप्पादणेसणासुद्धुंच्छेण करेंति, जाहे सुद्धं ण लभति सो य असुद्धं मग्गति ताहे लोगस्स पुरओ उस्सग्गं पण्णवेंति भणंति य – "एस असमणो" ।

तं पि भणति – "जति तुमं णिण्हगदिट्ठीओ पडिक्कमसि पासत्थादित्तणओ वा तो ते सव्वहा करेमो ।" तहा य पण्णवेंति जहा सो तट्ठाणाओ पडिक्कमति । अहवा – जत्थ साघूणं णिण्हगाण य विसेसो ण णज्जइ किंचि ॥५६३२॥

दुक्खं खु निरणुकंपा, लोए अदेंते य होति उड्डाहो ।
सारूवम्मि य दिस्सति, दिज्जति तेणेवमादीसु ॥५६३३॥

जइ वि सो ओसण्णो निण्हओ वा तहावि अकज्जंते णिरणुकंपया भवति, सा य दुक्खं कज्जइ, लोगो य तत्थ उड्डाहं करेति – "जइ वि पव्वजाए एरिसं अणाहत्तणं ण परोप्परं कतोवकारियाओ अलं पव्वजाए," सारूप्पं सरिसं लिंगं दीसति, एवमादि कारणेहिं करेंतो सुद्धो ॥५६३३॥

जे भिक्खू विहं अणेगाहगमणिज्जं सति लाढे विहाराए संथरमाणेसु जणवएसु विहारपडियाए अभिसंधारेइ, अभिसंधारेंतं वा साइज्जइ ॥सू०॥२५॥

"जे" त्ति – णिद्देसे, भिक्खू पुव्ववण्णितो । विहं णाम अद्धाणं, अणेगेहिं अहेहिं जं गम्मति तं अणेगाहगमणिज्जं, अहो णाम दिवसो । अहवा – अणेगेहिं अहेहिं गमणिज्जं अणेगाहगमणिज्जं ।

अकारणेण गमणं पडिसिद्धं ।

किं कारणं गमणं पडिसेहेति ?, जम्हा एत्थ गम्ममाणे अणेगा संजमाताए दोसा पसज्जंति । जम्मि विसए गुणा तवणियमसंजमसज्झायमादिया तं विसय, "लाढे" त्ति – साहू, जम्हा उग्गमुप्पादणेसणासुद्धेण आहारोवधिणा संजमभारवहणट्ठयाए अप्पणो सरीरगं लाढेतीति लाढो, विहारायेति । दप्पेण देसदंसणाए विहरति । "संथरमाणेसु जणवएसु" त्ति आहारोवहिवसहिमादिएहिं सुलभेहिं जणवए, तं जणवयं विहाय पव्वज्जए तस्स पव्वज्जतो सुद्धं सुद्धेण वि गच्छमाणस्स चउलहुं । एस सुत्तत्थो ।

इमो णिज्जुत्ति-वित्थरो –

विहमद्धाणं भणितं, णेगा य अहा अणेगदिवसा तु ।
सति पुण विज्जंतम्मी, लाढे पुण साहुणो अक्खा ॥५६३४॥

गयत्था । विहं णाम अद्धा ।

अद्धाणं पि य दुविहं, पंथो मग्गो य होइ नायव्वो ।
पंथम्मि णत्थि किंची, मग्ग सगामो तु गुरु आणा ॥५६३५॥

तं दुविधं – पंथो मग्गो य । पुणो पंथो दुविहो – छिण्णो अच्छिण्णो य । छिण्णे णत्थि किंचि, सुण्णं सव्वं । अच्छिण्णे पल्लिवइता वा अत्थि । गामाणुगामि मग्गो । पंथे चउगुरुगा, मग्गे चउलहुं. आणादिया य दोसा ॥५६३५॥

तं पुण गमेज्ज दिवा, रत्तिं वा पंथ गमणमग्गे वा ।
रत्ति आदेसदुगं, दोसु वि गुरुगा य आणादी ॥५६३६॥

तं पंथं मग्गं वा दिवसओ वा राओ गच्छति । राइसद्दे आदेसदुगं – संझाराती, संझावगमो वा राती ।

कहं ?, उच्यते – संझा जेण रायति सोभति दिप्पति तेण संझराती । संझावगमो वियालो । अहवा – संझावगमो राती ।

कहं ?, उच्यते – जम्हा संझावगमे चोर-पारदारिया रमंति तेण संझावगमो राती । संझाए जम्हा एते विरमंति तेण संझा विकालो । पंथं मग्गं वा जइ रातीए विगाले वा गच्छइ तो चउगुरुगा ॥५६३६॥

तत्थ मग्गे ताव इमे दोसा –

मिच्छत्ते उड्डाहो, विराहणं होति संजमाताए ।
इरियाति संजमम्मी, छक्काय अचक्खुविसयम्मी ॥५६३७॥

"मिच्छत्ते उड्डाहो" दोण्हं विभासा –

किं मण्णे णिसिगमणं, जाती ण सोहेंति वा कहं इरियं ।
जतिवेसेण व तेणा, अडंति गहणादि उड्डाहो ॥५६३८॥

इहलोयचत्तकज्जाणं परलोयकज्जुज्जताणं किं रातो गमणं ? किं मण्णे दुट्ठचित्ता एते होज्जा ? कहं वा इरियं सोहेंति, इरिउवउत्ता वा जंति ?, जहा एयं असच्चं तहा अण्णं पि मिच्छत्तं जणेज्जा, जइवेसेण वा तेण त्ति काउं रातो अडंता गहिया कड्ढणववहारादिसु पदेसु उड्डाहो ॥६५३८॥

[1]"विराहण संजमाताए" एसा विभासा –

संजमविराहणाए, महव्वया तत्थ पढमे छक्काया ।
बितिए अतेण तेणे, तइए अदिन्नं तु कंदादी ॥५६३९॥

संजमविराधणा दुविधा – मूलगुणे उत्तरगुणे य । मूलगुणे पंचमहव्वया, पढमे य महव्वए छक्कायविराहणं करेति, बितिए महव्वए अतेणं तेणमिति भासेज्जा, ततिए महव्वए कंदादि अदिण्णा गेण्हेज्ज ॥५६३९॥

अहवा –

दियदिन्ने वि सचित्ते, जिणतेण्णं किमुत सव्वरीविसए ।
जेसिं च ते सरीरा, अविदिण्णा तेहि जीवेहिं ॥५६४०॥

सचित्तं जिणेहिं णाणुण्णायं तेण दिवसतो वि तेण्णं, रात्री रातो वा अदिण्णं, अहवा – जेसिं ते कंदादिया सरीरा जीवाणं तेहिं वा अदिण्णं ति तेण्णं ॥५६४०॥

---

१ गा० ५६३७ ।

पंचमे अणेसणादी, छट्ठे कप्पो व पढम वितिया वा ।
भग्गवओ त्ति मिं जाओ, अपरिणओ मेहुणं पि वए ॥५६४१॥

पंचमे त्ति वते अणेसणिज्जं गेण्हंतस्स परिग्गहो भवति, छट्ठे त्ति रातीभोयणे अद्धाणं कप्पं भुंजंतस्स रातीभोयणभंगो भवति । पढमो त्ति-खुहापरीसहो वितिओ पिवासापरीसहो तेहिं आतुरो रातिं भुंजेज्ज वा पिएज्ज वा, एगव्रतभंगे सव्वव्वयभंगो त्ति काउं मेथुणं पि सेवेज्जा । अहवा – अपरिणतो अबुद्धधम्मत्तणओ दिया रातो सत्थे वच्चमाणे काइयानिमित्तं उसक्को, अगारी ति काइ उसक्का, अप्पसागारिए तं पडिसेवेज्ज ॥५६४१॥

[1]इरिया इति अस्य व्याख्या –

रीयादसोधि रत्तिं, भासाए उच्चसद्दवाहरणं ।
ण य आदाणुस्सग्गे, सोहए काया य ठाणादि ॥५६४२॥

राओ इरियासमिइं न सोहेइ । भासासमिइए वि असमिओ पंथाइविप्पणट्ठे उच्चसद्देण वाहरेज्जा । एसणासमिति ण संभवति, रातो दिवसतो वा अद्धाणे पढमवितियपरीसहाउरो एसणं पेलेज्जा । आदाणणिक्खेव-समितीए ठाणणिसीदणाणि वा करेंतो रातो ण सोहेति । काइयादिपरिट्ठवणं पि करेंतो थंडिल्लं पि ण सोहेति ॥५६४२॥ एसा सव्वा संजमविराहणा ।

इमा आयविराहणा –

वाले तेणे तह सावए य विसमे य खाणु कंटे य ।
अकम्हा भय आतसमुत्थं रत्तिं मग्गे भवे दोसा ॥५६४३॥

सप्पादी वाला तेसु डसिज्जति, उवकरणसरीरतेणा ते उवकरणं संजतं वा हरेज्जा, सीहादिसावएण खज्जति, विसमे पडियस्स अण्णतरगा य विराहणा हवेज्जा, खाणुकंटए वा वि सप्पो हवेज्ज, अकस्माद् भयं अहेतुकं भवति, रात्रो मग्गे वि एते दोसा, किमुत पंथे ॥५६४३॥

इमं वितियपदं –

कप्पति तु गिलाणट्ठा, रत्तिं मग्गो तहेव संभाए ।
पंथो य पुव्वदिट्ठो, आरक्खिओ पुव्वभणितो य ॥५६४४॥

आरक्खिगो त्ति दंडवासिगो, पुव्वामेवं भण्णति अम्हे गिलाणादिकारणेण रातो गमिस्सामो, मा किंचि छलं काहिसि । अणुण्णाते गच्छंति, सेसं कंठं ॥५६४४॥ मग्ग त्ति गतं ।

इदाणिं [2]पंथो भण्णति –

दुविहो य होइ पंथो, छिण्णद्धाणंतरं अछिण्णं च ।
छिण्णे ण होइ किंची, अछिण्णे पल्लीहिं चइगाहिं ॥५६४५॥

इमो विधी –

छिण्णेण अछिण्णेण व, रत्तिं गुरुगा तु दिवसतो लहुगा ।
उद्दद्दरे पवज्जण, सुद्धपदे सेवती जं च ॥५६४६॥

---

१ गा० ५६३८ । २ गा० ५६३५ ।

उद्दद्दरे जइ अद्धाणं पव्वजति तस्य सुद्धंसुद्धेण वि गच्छमाणस्स एयं पच्छित्तं, जं च अकप्पादि किंचि सेवति तं सव्वं पावति ॥५६४६॥

इमा आयविराहणा —

वात खलु वात कंटग, आवडणं विसम-खाणु-कंटेसु ।
वाले सावय तेणे, एमाइ होति आयाए ॥५६४७॥

खलुगा जाणुगादिसंधाणा वातेण घेप्पंति, चम्मकंटगो वातकंटगो अहवा [1]गृद्धिसी हड्डागृद्धिसी वा कायकंटगो वा । सेसं कंठ्यं ॥५६४७॥ एसा आयविराहणा ।

इमा संजमविराहणा —

छक्कायाण विराहण, उवगरणं बालवुड्ढसेहा य ।
पढमेण य बितिएण य, सावय तेणे य मेच्छे य ॥५६४८॥

अथंडिलेसु पुढविमादिछण्हं कायाणं संघट्टणादिविराहणं करेंति, बालवुड्ढसेहा पढमबितियपरीसहेहिं परिताविज्जति, साधू उज्झिउं सावओ सावएण वा खज्जेज्जा । तेणगेहिं मेच्छेहिं वा उवकरणं खुड्डगादि वा हीरेज्जा ॥५६४८॥

[2]उवकरण त्ति एयस्स इमं वक्खाणं —

उवगरण-गेण्हणे भार-वेदणे तेणगम्म अधिकरणं ।
रीयादि अणुवओगो, गोम्मिय भरवाह उड्डाहो ॥५६४९॥

नंदिपडिग्गह-अद्धाणकप्प दुलिंगमादिपंथोवकरणं च जइ गिण्हंति तो भारेण वेयणा भवति, [3]विहडप्फडा य तेणगगम्मा भवति, तेणेहिं वा उवकरणे गहिए अधिकरणं, भारवकंता य इरियोवउत्ता ण भवंति, बहूवकरणा वा गोमिएहिं घेप्पंति, गोमिया य चिंतेंति उल्लावेंति य — "अहो ! बहुलोभा भारवहा य" एवं उड्डाहो भवे । अहवा — एतद्दोसभया उवकरणं उज्झंति तो जं तेण उवकरणेण विणा विराहणं पावेंति तमावज्जंति ॥५६४९॥

इमं पंथोवकरणं —

चम्मकरग सत्थादी, दुलिंगकप्पे य चिलिमिलिऽग्गहणे ।
तस विपरिणमुड्डाहो, कंदादिवहो य कुच्छा य ॥५६५०॥

जइ चम्मकरगो ण घेप्पति सत्थकोसगं वा, "दुल्लिंगं" वा गिहत्थलिंगोवकरणं अण्णपासंडियलिंगोवकरणं वा, "कप्प" त्ति-अद्धाणकप्पं, चिलिमिणि त्ति, एतेसिं अग्गहणे इमे दोसा जहासंखं पच्छद्धं भणिया । चम्मकरग अग्गहणे तसविराहणा, पिप्पलगुलिया गोरस-पोत्तगादि अग्गहणे सेहमादियाण विप्परिणामो भवति, पिप्पलगादिसत्थेण पुण पलंबे तिकरणे काउं आणिज्जंति, दुल्लिंगेण विणा रातो गेण्हंताण पिसियादि वा उड्डाहो भवति । अद्धाणकप्पेण विणा कंदादियाण छण्ह वा कायाण विराहणा भवति, चिलिमिलियं विणा मंडलीए भुंजंताणं जणो दुगंछति ॥५६५०॥

पंथजोग्गोवकरण अग्गहणे अजयकरणे य इमे दोसा —

अपरिणामगमरणं, अतिपरिणामा य होंति णित्थक्का ।
णिग्गत गहणे चोदित, भणंति तइया कहं कप्पे ॥५६५१॥

---

१ कट्यधोभागवर्ती संधिवायुः । २ गा० ५६४८ । ३ व्याकुला, इत्यर्थः ।

"अकप्पियं" ति णाउं अपरिणामगो ण गेण्हति, अगेण्हणे मरति । अद्धाणे अकप्पियगहणं दट्ठुं अतिपरिणामा 'णित्थक्का" णिल्लज्जा भवंति, अद्धाणातो णिग्गया अकप्पं गेण्हता चोदिता – "मा गेण्हह त्ति, ण वट्टति" ते पडिभणंति – "ततिया अद्धाणे कहं कप्पे" ॥५६५१॥

काउडीए विणा इमे दोसा –

तेणभयोदककज्जे, रत्तिं सिग्घगति दूरगमणे य ।
वहणावहणे दोसा, बालादी सल्लविद्धे य ॥५६५२॥

तेणभया रातो सिग्घं गंतव्वं, उदगणिमित्तं जहा मरुविसए रातो सिग्घं दूरं च गंतव्वं । तत्थ कावोडीए बालवुड्ढा असहू सल्लविद्धा उवकरणं च वोढव्वं, अह ण वहंति तो एते परिचत्ता भवंति । उवकरणं पि छड्डेयव्वं । अहवा – "तेण" त्ति-तेणभए डंडचिलिमिली घेप्पति । अकप्पणिज्जकज्जे परतित्थियउवकरणं । उदगकज्जे चम्मकरगो, उदगकज्जे चेव गुलिगगहणं, उदगगहणट्ठया दतिग्गहणं । रातो सिग्घगतिगमणे तलियग्गहणं । दूरं गंतुं सत्थो ठाइस्सति तत्थ बालादिसल्लविद्धवहणट्ठा कावोडी । सल्लुद्धरणादिणिमित्तं सत्थकोसो घेप्पइ । एवमादिउवकरणं वहतो भारमादिया दोसा, अवहंतस्स आयसंजमविराधणादिया दोसा, तम्हा णिक्कारणे अद्धाण णो पवज्जेज्ज ॥५६५२॥

कारणे पवज्जति तत्थ इमो कमो –

वितियपदं गम्ममाणे, मग्गे असतीए पंथजयणाए ।
पडिपुच्छिऊण गमणं, अछिण्णपल्लीहि वतियाहिं ॥५६५३॥

पढमं मग्गेण गंतव्वं । असति मग्गस्स जणवयं पुच्छिउण अछिण्णपंथेण पल्लिवतिगादीहिं गंतव्वं, ततो छिण्णेण ॥५६५३॥

इमेहिं कारणेहिं पंथेण गम्मति –

असिवे ओमोयरिए, रायदुट्ठे भए व आगाढे ।
गेलण्ण उत्तिमट्ठे, णाणे तह दंसण चरित्ते ॥५६५४॥

अण्णतरे वा आगाढे, जहा – सुधम्मसामिगणहरस्स मासकप्पे असंपुण्णे रायगिहे णगरे तणकट्ठधारगो दमगो पव्वइतो । तं भिक्खं हिंडंतं लोगो भणति – "तणकट्ठहारगो" त्ति । तस्स असहणं, सुधम्मस्स अभयाऽऽपुच्छणं ।

अभयस्स पुच्छा, कहणं "सेहस्स सागारियं" ति, तिकोडिपरिच्चागो विभासा –

एएहि कारणेहिं, आगाढेहिं तु गम्ममाणेहिं ।
उवगरण पुव्वपडिलेहिएण सत्थेण गंतव्वं ॥५६५५॥

पंथजोग्गोवकरणपडिलेहा गहणं, अह पुव्वं सत्थं पडिलेहेउं सुद्धे ण तेण सह गमणं ॥५६५५॥

असिवे अगम्ममाणे, गुरुगा दुविहा विराहणा नियमा ।
तम्हा खलु गंतव्वं, विहिणा जो वण्णिओ हेट्ठा ॥५६५६॥

दुविहा विराहणा – आय-संजमेसु । अहवा – अप्पणो परस्स य । हेट्ठा ओहणिज्जुत्तीए जो गमो भणितो, सेसा वि ओमोदरियादओ जहेव ओहणिज्जुत्तीए तहा भाणियव्वा ॥५६५६॥

उवगरण पुव्वभणितं, अप्पडिलेहेंते चउगुरू आणा ।
ओमाण पंथ सत्थिय, अतियत्ति अप्पपत्थयणे ॥५६५७॥

उवकरणं चम्मकरगादी, जं वा वक्खमाणं तं अगेण्हमाणस्स सत्थं वाऽपडिलेहंतस्स चउगुरुगा । अपडिलेहीए दोसा भवंति - ओमाण पेल्लिओ व होज्जा, सत्थवाहो अतियत्ती पासत्थो वा पंतो होज्ज, सत्थो वा अप्पपत्थयणो अप्पसवलो होज्ज, अण्णे वा पंथिया तत्थ पंता होज्ज । तम्हा एयद्दोसपरिहरणत्थं पडिलेहियव्वो सत्थो ॥५६५७॥

सो केरिसो सत्थपडिलेहगो –

रागद्दोसविमुक्को, सत्थं पडिलेहे सो उ पंचविहो ।
भंडी बहिलग भरवह, ओदरिय कप्पडिय सत्थो ५६५८॥

सो सत्थो पंचविहो – भंडि त्ति गंडी, बहिलगा उट्टबलिद्दादी, भारवहा पोट्टलिया वाहगा, उदरिया णाम जहिं गता तहिं चेव रूवगादी छोढुं समुद्दिसंति पच्छा गम्मति, अहवा – गहियसंबला उदरिया, कप्पडिया भिक्खायरा ॥५६५८॥

रागदोसिए इमे दोसा –

गंतव्वदेसरागी, असत्थ सत्थं करेति जे दोसा ।
इयरो सत्थमसत्थं, करेति अच्छंति जे दोसा ॥५५५६॥

जस्स गंतव्वे रागो सो जत्ति सत्थपडिलेहगो सो असत्थं पि सत्थं करेज्जा, तेण कुसत्थेण गच्छंताण जे दोसा तमावज्जति । "इयरे" त्ति जो गंतव्वो दोसी सो सुज्झमाणसत्थं पि असत्थं करेति, तत्थ असिवादिसु अच्छंताण जे दोसा ते पावति ॥५६५६॥

उप्परिवाडी गुरुगा, तिसु कंजिमादि संभवो होज्जा ।
परिवहणं दोसु भवे, बालादी सल्ल-गेलण्णे ॥५६६०॥

भंडीसु विज्जमाणासु जइ बहिलगेसु गच्छति तो चउगुरुगा, एवं सेसेसु वि । आदिल्लेसु तिसु कंजियमादिपाणगसंभवो होज्ज, दोसु भंडिबहिलगेसु परिवहणं होज्ज ।

केसिं परिवहणं ?, उच्यते – बालादीणं, आदिसद्दगहणेणं वुड्ढाणं दुब्बलाणं खयंकियाण य सल्ल-विद्धाण गिलाणाण य ॥५६६०॥ सत्थं पडिलेहंति तम्हा सत्थो पडिलेहियव्वो ।

सत्थे इमं पडिलेहियव्वं –

सत्थं च सत्थवाहं, सत्थविहाणं च आदियत्तं च ।
दव्वं खेत्तं कालं, भावोमाणं च पडिलेहे ॥५६६१॥

पुव्वद्धस्स इमा वक्खा –

सत्थे त्ति पंचभेदा, सत्थाहा अट्ठ आतियत्तीया ।
सत्थस्स विहाणं पुण, गणिमाति चउव्विहेक्केक्कं ॥५६६२॥

सत्थस्स पंच भेदा – भंडीमादि। सत्थवाहो अट्ठविहो। आइयत्तिया वि अट्ठविहा उवरि भणिहिति। सत्थविहाणं पुण गणिमादि चउव्विधं, गणिमं पूगफलादि, धरिमं जं तुलाए दिज्जति खंडसक्करादि, मेज्जं घृततंदुलादि, पारिच्छं रयणमोत्तियादि। "एक्केक्के" त्ति वहिलगेसु वि एयं चउव्विहं। भारवहेसु वि एवं चउव्विहं। उदरियकप्पडिएसु तं भंडं चउव्विहं भाणियव्वं ॥५६६२॥

दव्वादि चउक्कं च पडिलेहेज्ज, तत्थ दव्वे –

अणुरंगादी जाणे, गुंठादी वाहणे अणुण्णवणे।
धम्मो त्ति व भत्ती य व, बालादि अणिच्छे पडिकुट्ठं ॥५६६३॥

अणुरंगा णाम घंसिओ। जाणा सगडिगातो वा वाहणा। गुंठादी – गुंठो घोडगो, आदिसद्दातो अस्सो उट्टो हत्थी वा। ते अणुण्णविज्जंति – जइ अम्हं कोइ बालो आदिसद्दाओ वुड्ढो दुब्बलो गिलाणो वा गंतुं ण सक्केज्जा सो तुब्भेहिं चडावेयव्वो, जइ अणुजाणंति धम्मेण तो तेहिं समं सुद्धं गमणं। अह मुल्लेण विणा णेच्छंति तो तं पि अब्भुवगच्छिज्जति। अह मुल्लेण वि णेच्छति तो तेहिं समं पडिकुट्ठं गमणं, ण तेहिं समं गम्मति ॥५६६३॥

किं च इमेरिसभंडभरितो इच्छिज्जति सत्थो –

दंतिक्क-गोर-तेल्ले, गुल-सप्पिएमातिभंडभरितासु।
अंतरवाघातम्मि उ, देंतेतिधरा उ किं देउ ॥५६६४॥

मोदग-साग-वट्टिमादी दंतखज्जयं बहुविहं दंतिक्कं।

अहवा -- तंदुला दंतिक्का, सव्वं वा दंतखज्जयं दंतिक्कं। गोर त्ति गोधूमा। तहा तेल्लगुलगप्पि-णाणाविधाण य धण्णाण भंडीओ जइ भरियातो तो सो दव्वतो सुद्धो।

किं कारणं ?, अंतरा वाघाए उप्पण्णे तं अप्पणा खंति अम्हाणं वि देंति। "इहरह" त्ति जइ कुंकुम-कत्थूरिय – तगर पत्तचोय-हिंगु-संखलोयमादी अखज्जदव्वभरिए अंतरा वाघाते संबले णिट्ठिए किं दिंतु, तम्हा एरिसभरिएण ण गंतव्वं ॥५६६४॥

अंतरा वाघातो इमो –

वासेण णदीपूरेण वा वि तेणभय हत्थि रोहे वा।
खोभो जत्थ व गम्मति, असिवं एमादि वाघातो ॥५६६५॥

अंतरा गाढं वासमारद्धं, वड्ढमाणवाहिणी वा महानदी पूरेण आगता, अग्गतो वा चोरभयं, दुट्ठहत्थिणा वा पंथो रुद्धो, जत्थ वा सत्थो गंतुकामो तत्थ रोहगो, रज्जखोभो वा तत्थ, असिवं वा तत्थ, एवमादिकज्जेसु अंतरा सण्णिवेसं काउं सत्थो अच्छति ॥५६६५॥ एवं दव्वतो पडिलेहा।

इमा [1]खेत्त-काल-भावेसु –

खेत्तं जं बालादी, अपरिस्संता वतंति अद्धाणं।
काले जो पुव्वण्हे, भावे सपक्ख-परपक्खणादिण्णो ॥५६६६॥

[1] गा० ५६६१।

जत्तियं खेत्तं वालवुड्ढादिगच्छो अपरिश्रांतो गच्छति तत्तियं जति सत्थो जाति तो खेत्तओ सुद्धो। कालो जो उदयवेलाए पत्थित्ते पुव्वण्हे ठाति सो कालतो सुद्धो। भावे जो सपक्ख-परपक्खभिक्खायरेहिं आणाइण्णो सो भावओ सुद्धो॥५६६६॥

एक्केक्को सो दुविहो, सुद्धो ओमाणपेल्लितो चेव।
मिच्छत्तपरिग्गहितो, गमणाऽऽदियणे य ठाणे य॥५६६७॥

"एक्केक्को" त्ति भंडिवहिलगादिसत्थो दुविहो — सुद्धो असुद्धो य। सुद्धो अणोमाणो, ओमाणपेल्लिओ असुद्धो। सत्थवाहो आतियत्ती वा जे वा तत्थ अवप्पहाणा एते मिच्छद्दिट्ठी। एतेहिं सो सत्थो परिग्गहितो होज्ज॥५६६७॥

ओमाणपेल्लिओ इमेहिं होज्ज –

समणा समणि सपक्खो, परपक्खो लिंगिणो गिहत्था य।
आता संजमदोसा, असती य सपक्खवज्जेणं॥५६६८॥

पुव्वद्धं कंठं। बहूसु सपक्ख-परपक्खभिक्खायरेसु अप्फव्वंताणं आयविराहणा, कंदादिग्गहणे वा संजमविराहणा। अणोमाणस्स असतीते सपक्खोमाणं वज्जित्ता परपक्खोमाणेणं गंतव्वं, तत्थ जणो भिक्खग्गहणे विसेसं जाणति॥५६६८॥

"[1]गमणे" त्ति अस्य व्याख्या –

गमणे जो जुत्तगती, वइगापल्लीहिं वा अछिण्णेणं।
थंडिल्लं तत्थ भवे, भिक्खग्गहणे य वसही य॥५६६९॥

जुत्तगती णाम मिदुगती – न शीघ्रं गच्छतीत्यर्थः। अछिण्णपहेण वइयपल्लीमादीहिं वा गच्छति, तत्थ थंडिल्लं भवति, वइयपल्लीहिं य भिक्खं लभइ, वसही य लब्भति॥५६६९॥

"[2]आदियणे" त्ति अस्य व्याख्या –

आतियणे मोत्तूणं, ण चलति अवरण्हे तेण गंतव्वं।
तेण परं भयणा उ, ठाणे थंडिल्लठायीसु॥५६७०॥

आतियणे त्ति जो भुंजणवेलाए ठाति, मोत्तूण य अवरण्हे जो ण चलति तेण गंतव्वं। तेणं परं भयणे त्ति भयणा णाम जइ अवरण्हे भोत्तुं चलए तत्थ जइ सव्वे समत्था गंतुं तो सुद्धो, अह ण सक्केंति तो असुद्धो, ण तेण गंतव्वं। ठाणे त्ति जो सत्थो सण्णिवेसथंडिलेसु ठाति सो सुद्धो, अथंडिले ठाति असुद्धो॥५६७०॥

जं वुत्तं "[3]सत्थहा अट्ठ आयियत्ती य अस्य व्याख्या –

पुराणसावग सम्मद्दिट्ठि अहाभद्द दाणसड्ढे य।
अणभिग्गहिते मिच्छे, अभिग्गहिते अण्णातित्थी य॥५६७१॥

पुराणो, गहिताणुव्वतो सावगो, अविरयसम्मद्दिट्ठी, अहाभद्दगो, दाणसड्ढो, अणभिग्गहियमिच्छो अभिग्गहियमिच्छद्दिट्ठी, अण्णातित्थिओ य, एते सत्थाहिवा अट्ठ। आतियत्तिया वि एते चेव अट्ठ॥५६७१॥

---

१ गा० ५६६७। २ गा० ५६६७। ३ गा० ५६६२।

अद्धाणं पडुच्च भंगदंसणत्थं भण्णति –

सत्थपणए य सुद्धे, य पेल्लिते कालऽकालगम-भोजी ।
कालमकालट्ठाई, सत्थाहऽट्ठाऽऽदियत्ती वा ॥५६७२॥

सत्थपणगं ति पंच सत्था, एयं गुणकारपयं, ते य सत्था सुद्धा ।

कहं ?, उच्यते – सपक्ख-परपक्खतोमाणअपेल्लिय त्ति, कालअकाले गमणं, कालमकाले भोयणं, कालअकालणिवेसो, ठाइ त्ति थंडिलअथंडिलठाई । एते चउरो सपडिपक्खा सोलसभंगकरणपया । अट्ठ सत्थवाहा अतियत्ति ते दो वि गुणकारपया – एत्थ काले गच्छइ, काले भुंजइ, काले निवेसइ, थंडिले ठाइ-एए सुद्धपया, पडिपक्खे असुद्धा । सत्थवाहादिया पढमा चउरो नियमा भद्दा, पच्छिमा चउरो भयणिज्जा भवंति, अइयत्ती वि ॥५६७२॥ एसा भद्दबाहुकया गाहा, एईए अत्थओ सोलस भंगा उत्तरभंगा, उत्तरभंगविगप्पा य सव्वे सूतिया ।

जतो भण्णति –

एतेसिं च पयाणं, भयणाए सयाइ एगपण्णं तु ।
वीसं च गमा णेया, एत्तो य सयग्गसो जतणा ॥५६७३॥

सत्थपणगपदं, चउरो य सोलसभंगपदा, अट्ठ सत्थवाहा, आदियत्ति अट्ठ पदा य, एतेसिं पदाणं संजोगे भयण त्ति भंगा, एतेसिं एक्कावण्णसया भवंति वीसं च भंगा । एत्थ सत्थेसु सुद्धासुद्धेसु सत्थवाहाइयत्तेसु य भद्दपंतेसु अप्पबहुचिंताए सयगेहिं जयणा भवति ॥५६७३॥

एसेवत्थो फुडो कज्जति –

कालुट्ठाई कालनिवेसी, ठाणट्ठाई कालभोई य ।
उग्गयऽणत्थमियथंडिल मज्झण्ह धरंत सूरे वा ॥५६७४॥

कालुट्ठाती उग्गए आइच्चे दिवसतो जो गच्छति, कालनिवेसी जे अणत्थमिए आदिच्चे चक्कति, ठाणट्ठाती थंडिल्ले चक्कइ, कालभोती जो मज्झण्हे भुंजइ, अणत्थमिए वा ॥५६७४॥

एतेसिं तु पयाणं, भयणा सोलसविहा तु कायव्वा ।
सत्थपणएण गुणिता, असीति भंगा उ नायव्वा ॥५६७५॥

एतेसिं चउण्ह पयाणं इमेण विहिणा सोलस भंगा कायव्वा – कालुट्ठाती कालनिवेसी ठाणट्ठाती कालभोती (१), एवं सपडिपक्खेसु सोलस भंगा नायव्वा । एते सोलस भंगा सत्थपणएण गुणिता असीति भंगा भवंति ॥५६७५॥

सत्थाहऽट्ठगगुणिता, असीति चत्ताल छस्सया होंति ।
ते आइयत्तिगुणिता, सत एक्कावण्ण वीसऽहिया ॥५६७६॥

असीति अट्ठहिं सत्थाहिवेहिं गुणिया छस्सया चत्ताला भवंति । ते अट्ठहिं अतियत्तिएहिं गुणिता एक्कावण्णं सता वीसा (५१२०) भवंति । एत्थ अण्णतरे सत्थे भंगविकप्पेण वा सुद्धे मग्गेण आदियत्ता पालेंति सत्थवाहिएहिं ॥५६७६॥

इदाणिं अणुण्णवणा भण्णति –

दोण्ह वि चियत्ते गमणं, एगस्सऽचियत्ते होति भयणा उ।
अप्पत्ताण णिमित्तं, पत्ते सत्थम्मि परिसाओ ॥५६७७॥

जत्थ एगो सत्थवाहो तत्थ तं अणुण्णवेंति, जे य अहप्पधाणा पुरिमा ते वि अणुण्णवेंति, जत्थ दो सत्थाविवा तत्थ दोऽवि अणुण्णवेंति, दोण्ह वि चियत्ते गमणं। अह एगस्स अचियत्तं तो भयणा, जति पेल्लगस्स चियत्तं तो गम्मति, अह पेल्लगस्स अचियत्तं तो ण गम्मति। पंथिता वा जाव ण मिलंति सत्थे ताव सउणादिणिमित्तं गेण्हति, सत्थे पुण पत्ता सत्थस्स चेव सउणेण गच्छंति। अण्णं च सत्थपत्ता तिण्णि परिसा करेंति – पुरतो मिगपरिसा, मज्झे सीहपरिसा, पिट्ठतो वसभपरिसा ॥५६७७॥

दोण्ह वि त्ति अस्य व्याख्या –

दोण्ह वि समागता सत्थिओ य जस्स य वसेण गम्मति उ।
अणणुण्णवणे गुरुगा, एमेव य एगतरपंते ॥५६७८॥

"दोण्ह" वि सत्थी सत्थवाहो य, एते दो वि समागए समगं अणुन्नवेंति। अहवा – सत्थवाहं जस्स य वसेण गम्मइ एते दो वि समागते समगं अणुन्नवेंति। अहवा – सत्थाहिवं चेव एक्कं अणुण्णवे। एवं जइ णो अणुन्नवेंति तो चउगुरुगा, जति दोण्णि अहिवा ते दो वि पेल्लगा तत्थ एक्कं अणुण्णवेंति, एत्थ वि चउगुरुगा। एगतरे वा पंते पेल्लगे जइ गच्छंति तत्थ एमेव चउगुरुगं ॥५६७८॥

जो वा वि पेल्लिओ तं, भणंति तुह बाहुछायसंगहिया।
वच्चामऽणुग्गहो त्ति य, गमणं इहरा गुरू आणा ॥५६७९॥

सत्थाहिवं सत्थं वा जो वा तम्मि सत्थे पेल्लगे तं भण्णति – जति अणुजाणह अम्हं तो तुम्मेहिं समं तुह बाहुच्छायट्ठिता समं वच्चामो।

जइ सो भणेज – 'अणुग्गहो" ततो गम्मति। अह तुण्हिक्को अच्छति भणइ वा – "मा गच्छह." जइ गच्छंति तो चउगुरुगं, आणादिया य दोसा ॥५६७९॥

जति सत्थस्स अचियत्ते सत्थाहिवस्स वा अन्नस्स वा पेल्लगस्स अचियत्ते गम्मति तो इमे दोसा—

पडिसेहण णिच्छुभणं, उवकरणं बालमाति वा हारे।
अतियत्ति गोम्मएहि य, उड्डज्झंते (उद्दुज्जंते) ण वारेंति ॥५६८०॥

अडविमज्झे गयाणं भत्तपाणं पडिसेहेज्ज, सत्थातो वा णिच्छुभेज्ज, उवकरणं वा बालं वा अण्णेण हरावेज्ज, अतियत्तिएहिं "गोमिय" त्ति-गो (या) णइल्लया तेहिं उद्दुज्जंते न वारेंति ॥५६८०॥

ते पंता भद्दगा वा—

भद्दगवयणे गमणं, भिक्खे भत्तट्ठणाए वसहीए।
थंडिल्लासति मत्तग, वसभा य पदेस वोसिरणं ॥५६८१॥

अणुण्णविए भद्दगवयणे गम्मति, इमं भद्दगवयणं – जं तुब्भेहिं संदिसह तं मे सव्वं पडिपावेस्सं सिद्धत्थपुप्फाविव सिरट्ठिता मे पीडं ण करेह । एवं भणंते गंतव्वं ।।५६८१।।

पुव्वभणितो व जयणा, भिक्खे भत्तट्ठ वसहि थंडिल्ले ।
सच्चेव य होति इहं, णाणत्तं णवरि कप्पम्मि ।।५६८२।।

पुव्वं भणिता संवट्टसुत्ते थंडिल्लस्स असति मत्तगेसु वोसिरित्तु वहंति जाव थंडिलं, एवं वसभा जयंति । थंडिलमत्तगासति धम्माधम्मागासप्पदेसेसु वोसिरंति । इह कप्पे णाणत्तं ।।५६८२।।

तस्सिमो विही –

अग्गहणे कप्पस्स उ, गुरुगा दुविहा विराहणा नियमा ।
पुरिसऽद्धाणं सत्थं, णाऊण ण वा वि गिण्हेज्जा ।।५६८३।।

जति छिण्णे अच्छिण्णे वा पंथे अद्धाणकप्पं ण गेण्हंति तो चउगुरुगा, भत्तादिअलंभे खुहियस्स आयविराहणा, खुहत्तो वा कंदादी गेण्हेज्ज संजमविराहणा । अहवा – सव्वे जइ संघयण-धिति-वलिया पुरिसा अद्धाणं वा जति एगदेवसियं दो देवसियं वा, सत्थं त्ति – जति सत्थे अत्थि भिक्खं पभूयं धुवलंभो भद्दगो सत्थगो कालभोईय कालट्ठाती य एवमादिणा णातुं छिण्णद्धाणे वि ण गेण्हेज्ज ।।५६८३।।

सो पुण अद्धाणकप्पो केरिसो घेत्तव्वो –

सक्कर-घय-गुलमीसा, खज्जूर अगंथिमा य तम्मीसा ।
सत्तुअ पिण्णाओ वा, घय-गुलमिस्से खरेणं वा ।।५६८४।।

सक्कराए घएण य, सक्कराभावे गुलेण वा घएण वा, एतेहिं मिस्सिया अगंथिमा घेप्पंति । अगंथिमा णाम कयलया ।

अण्णे भणंति – मरहट्ठविसए फलाण कयलकप्पमाणाओ पेंडीओ एक्कम्मि डाले बहुगिकाओ भवंति. ताणि फलाणि खंडाखंडीण कयाणि घेप्पंति, तेसि असति खज्जूरा घयगुलमिस्सा घिप्पंति, एतेसि असतीए सत्तुआ घयगुलमिस्सा घेप्पंति, असति घयस्स खरसण्हगुलमिस्सो पिण्णाओ घेतव्वो ।।५६८४।।

एतेसिं इमो गुणो –

थोवा वि हणंति खुहं, ण य तण्हं करेंति एते खज्जंता ।
सुक्खोदणोवऽलंभे, समितिम दंतिक्क चुण्णं वा ।।५६८५।।

पुव्वद्धं कंठं । एरिसमद्धाणकप्पस्स अलंभे "सुक्खोदणो" – सुक्खकूरो, "समितिमं" सुहालंडगा, "दंतिक्कं" – मोयगागारं खज्जगं । अहवा – दंतिक्कं चुण्णो तंदुललोट्टो दंतिक्कगहणेण तंदुलचुण्णो, चुण्णगहणातो खज्जगचूरी, एस दंतिक्कचुण्णो खज्जगचूरी वा घयगुलेण मिस्सिज्जति, मा संमुच्छिहिति । जति सुद्धं लभंति तो अद्धाणकप्पं ण भुंजति, अनिएण वा ऊणं सुद्धं तत्तियं अद्धाणकप्पं भुंजति, पच्चुप्पन्नियाए वा दिज्जति अद्धाणकप्पो ।।५६८५।।

इमं च गिण्हंति –

तिविहाऽऽमयभेसज्जे, वणभेसज्जे य सप्पि-महु-पट्टे ।
सुद्धाऽसति तिपरिरए, जा कम्मं णाउमद्धाणं ।।५६८६।।

वात-पित्त-सिंभवसद्दातो सण्णिवातियाण वा रोगातंकाणं भेसज्जा ओसहा व्रण-ओसहाणि य गेण्हंति, वणभंगट्ठा य घतमहु, व्रणवंधट्ठा य खीरपट्टं गेण्हंति। सव्वं पेयं सुद्धं मग्गियव्वं, असति सुद्धस्स तिपरिरयजयणाए पणगपरिहाणीए जाव अहाकम्मं वि गेण्हंति, पमाणतो अद्धाणकप्पं थोवं वहुं वा अद्धाणं णाउं गेण्हंति, गच्छप्रमाणं वा नाउं ॥५६८६॥

सभए सरभेदादी, लिंगविवेगं च कातु गीतत्था।
खरकम्मिया व होउं, करेंति गुत्तिं उभयवग्गे ॥५६८७॥

जत्थ सभयं तत्थ वसभा सरभेयवण्णभेयकारिगुलियाहिं अप्पणो अण्णारिसं सरवण्णभेदं काउं, अहवा–रयोहरणादि दव्वलिंगं मोत्तुं गिहिलिंगं काउं जहा ण णज्जंति एते संजय त्ति खरकम्मिया व सन्नद्धपरियरा जहासंभवगहियाउवा होउं साहुसाहुणीउभयवग्गे गुत्तिरक्खं करेंति ॥५६८७॥

किं च–

जे पुव्वं उवगरणा, गहिता अद्धाण पविसमाणेहिं।
जं जं जोग्गं जत्थ उ, अद्धाणे तस्स परिभोगो ॥५६८८॥

पुव्वद्धं कंठं। जं जोग्गं – जत्थ उदगगलणकाले चम्मकरगो, वहणकाले कावोडी उड्डा, भिक्खायरियकाले सिक्कगा, विकरणकाले पिप्पलगो, एवमादि ॥५६८८॥

सुक्खोदणो समितिमा, कंजुसिणोदेहि उण्हविय भुंजे।
मूलुत्तरे विभासा, जतितूणं णिग्गते विवेगो ॥५६८९॥

जो सुक्खोदणो गहितो, जे य समितिमादी खरा, एते उण्होदणेणं कंजिएण वा उण्हे गाहेत्ता सूईकरेत्ता भोत्तव्वा। "मूलुत्तरे विभास" त्ति अद्धाणकप्पो मूलगुणोवघातो, अहाकम्मं उत्तरगुणोवघाओ।

किं अद्धाणकप्पं भुंजउ ? अह अहाकम्मं लब्भमाणं भुंजउ ?, अत्रोच्यते–"एत्थ दो आदेसा, जम्हा कप्पो मूलगुणघाती, अहाकम्मं उत्तरगुणघाती, तम्हा कम्मं लहुतरं भोत्तव्वं। जम्हा आहाकम्मे छक्कुवघातो, कप्पो पुण फासुओ। एत्थ वरं कप्पो, ण कम्मं" ॥५६८९॥

चोदगाह – "जो कप्पो आहाकम्मिओ तत्थ कहं दुदोसदुट्ठो" ?,

आचार्य आह –

कामं कम्मं पि सो कप्पो, णिसिं च परिवासितो।
तहावि खलु सो सेयो, ण य कम्मं दिणे दिणे ॥५६९०॥

सर्वथा वरं अद्धाणकप्प एव, न चाहाकम्मं, दिने दिने वहुसत्त्वोपघातित्वात् ॥५६९०॥

आहाकम्मं सइं घातो, सयं पुव्वहते सिया।
जे ते तु कम्ममिच्छंति, निग्घीणा ते ण मे मता ॥५६९१॥

अद्धाणकप्पे जं आहाकम्मं तत्र पूर्वहते सकृदेव जीवोवघातः (जे पुण) अद्धाणकप्पं मूलगुणा ण भंजंति। "उत्तरगुणो त्ति" जे पुण आधाकम्मं भुंजंति दिने दिने ते अत्यंतनिर्घृणा सत्त्वेषु, न ते मम सम्मता संयमायतनं प्रति।

"जतिऊणं णिग्गए विवेगो" त्ति एवं श्रद्धाणे जतित्ता जाहे श्रद्धाणातो णिग्गता ताहे श्रभुत्तं भुत्तुद्धरियं वा श्रद्धाणकप्पं विवेगो त्ति परिट्ठवेंति ॥५६६१॥ भद्दगवयणे त्ति गयं ।

इदाणिं "[1]भिक्खित्ति" दारस्स कोति विसेसो भण्णति –

कालुट्ठादीमादिसु, भंगेसु जतंति बितियभंगादी ।
लिंगविवेगोऽक्कंते, चुडलीओ मग्गओ अभए ॥५६६२॥

कालुट्ठाती कालनिवेसी, ठाणठाती कालभोती ।

एत्थ पढमभंगो सुद्धो । एत्थ भंगजयणा णत्थि ।

बितियभंगादिसु जयंति-तत्थ बितियभंगे अकालभोती, तत्थ सलिंगविवेगं काउं राओ परलिंगेण गिण्हंति ।

ततिय-चउत्थभंगेसु अ ठाणट्ठाती तत्थ जयंति, जं गोणादीहिं अक्कंतट्ठाणं आसि तहिं ठायंति । चउत्थभंगे लिंगविवेगेण भत्तादि गेण्हंति, गोणादिअक्कंते य ठायंति ।

पंचमादिभंगेसु चउसु "चुडली" संथारभूमादिसु बिलादि जोइउं ठायंति ।

णवमादिसोलसंतेसु अट्ठभंगेसु अकालट्ठातीसु रातो गमणमग्गतो "अभए" त्ति जति पच्चंताणं 'मग्गतो" त्ति पच्छतो अभयं तो पच्छतो ठिता जयंति । एसा भंगजयणा ॥५६६२॥

पुव्वं भणिता जतणा, भिक्खे भत्तट्ठ वसहि थंडिल्ले ।
सच्चेव य होति इहं, जयणा ततियम्मि भंगम्मि ॥५६६३॥

संवट्टसुत्तमादिसु बहुसो भणिया जयणा ।

अहवा – णयरणिवेसे जहा भिक्खग्गहणं तहा कायव्वं भत्तट्ठाणं, अकालट्ठातिस्स निब्भए पुरतो गंतुं समुद्दिसंति, जेण समुद्दिट्ठे सत्थो अब्भेति, वसहिमज्झे सत्थस्स गिण्हति, अथंडिले मत्तएसु जयंति, मसाणादि पदेसेसु वि । अहवा – ततियभंगे अथंडिलाइम्मि सच्चेव जयणा जा संवट्टसुत्ते सवित्थरा भणिया ॥५६६३॥

सावय अण्णट्ठकडे, अट्ठा सयमेव जोति जतणाए ।
गोउलविउव्वणाए, आसासपरंपरा सुद्धो ॥५६६४॥

सावय त्ति श्रद्धाणे जति सावयभयं होज्ज तो अण्णेहिं सत्थिल्लएहिं जा अप्पकडा मग्गा अगणी तमल्लियंति, तस्स य असति अण्णत्थकडं अगणिं घेत्तूण फासुयदारुएहिं जालंति, अट्ठे त्ति जा सत्थिल्लएहिं संजयट्ठाए कडा तं सेवंति, परकडअसति त्ति सयमेव अगणिं अहुन्नतरेण जलंति जोइजयणाए त्ति – कल्ले कप्पे जोइसालभणियजयणाए विज्झवेंतीत्यर्थः ॥५६६४॥

"[2]गोउल" पश्चार्धं, अस्य व्याख्या –

सावय-तेण-परद्धे, सत्थे फिडिता ततो जति हवेज्जा ।
अंतिमवइया वेंटिय, नियट्टणाय गोउलं कहणा ॥५६६५॥

१ गा० ५६८१ । २ गा० ५६६४ ।

अंतरा महाडवीए सिंघादिसावयतेणेहिं वा सत्थो पण्ठो, सव्वो दिसोदिसिं णट्ठो, साधू वि एक्कतो णट्ठा, सत्थाओ फिडिया ण किं चि मत्थिल्लयं पस्संति, पंथं च अजाणमाणा भीमाडविं पवज्जेज्जा। तत्थ वसभा गणिपुरोगा मेसा सव्वत्थामेण गच्छरक्खणं करेंति जयणाए ताहे दिसाभागममुणेंता सबालवुड्ढगच्छस्स रक्खणट्ठा वणदेवताए उस्सग्गं करेंति, सा आकंपिया दिसिभागं पंथं वा कहेज्ज, सम्मद्दिट्ठिदेवता वा अण्णोवदेसतो वइयाओ विउव्वति, ते साधू तं वइयं पासित्ता आससिया, ते साधू ताए देवताए गोउलपरंपरएण ताव नीया जाव जणवयं पत्ता ताहे सा देवता अतिमवइयाए जाव उवगरणवेंटियं विस्सरावेइ, तीए अट्ठा साहुणो णियत्ता गोउलं न पेच्छंति, वेंटियं घेत्तुं पडिगया। गुरुणो कहेंति – नत्थि सा वइयत्ति, नायं जहा देवयाए कय ति, एत्थ सुद्धा चेव। नत्थि पच्छित्तं ॥५६६५॥

भंडी-वहिलग-भरवाहिएसु एसा व वण्णिया जतणा।
ओदरिय विवित्तेसुं, जयणा इमा तत्थ नायव्वा ॥५६६६॥

विवित्ता कप्पडिया, अहवा-विवित्ता-मुसिता, सेसं कंठं।

ओदरिए पत्थयणा, ऽसति पत्थयणं तेसि कंदमूलफला।
अग्गहणम्मि य रज्जू, वलेंति गहणं तु जयणाए ॥५६६७॥

भंडिवहिलगभरवहाणं असति आगाढे रायदुट्ठादिकज्जे उदरिगादिसु वि सह गम्मेज्ज। तत्थ ओदरिगेहिं सह गम्ममाणे अद्धाणकप्पादि ओदरिगादीण वि पत्थयणामति जाहे ते ओदरिया पत्थयण-खीणा, ताहे तेसि पत्थयणं कंदमूलफलादि, साहूणं ते च्चेव होज्ज ॥५६६७॥

"अग्गहणम्मि" पच्छद्धं, अस्य व्याख्या –

कंदादि अभुंजंते, अपरिणते सत्थियाण कहयंति।
पुच्छा वेहासे पुण, दुक्खिहरा खाइतुं पुरतो ॥५६६८॥

तत्थ जे अपरिणया ते णेच्छंति कंदादि भुंजिउं, ताहे वसभा तेसि सत्थइल्लाणं कहेंति।

ते वसभा सत्थिल्लए भणंति – एते तहा बीहावेह, जहा खायंति।

ताहे ते सत्थिल्लया रज्जूओ वलंति, अपरिणता पुच्छंति। अपरिणयाण वा पुरतो साहू पुच्छंति – किं एयाहि रज्जूहि ?,

ताहे ते सत्थिल्लया भणंति – अम्हे एक्कणावाल्दा। अम्हे कंदादि ण खाइतं, अम्हे एताहि वेहाणसे उल्लंबेहामो, इहरा तेसिं पुरओ दुक्खं खायामो ॥५६६८॥

इहरा वि मरति एसो, अम्हे खायामो सो वि तु भएणं।
कंदादि कज्जगहणे, इमा उ जतणा तहिं होति ॥५६६९॥

सो कंदादि अखायंतो इह अडवीए अवस्स चेव मरइ तम्हा तं मारेत्ता अम्हे सुहं चेव खायामो। सो य अपरिणओ एयं सोच्चा भया खायति, एवमादिकज्जे कंदादिग्गहणे इमा जयणा ॥५६६९॥

फासुगजोणि······गाहा ॥५७००॥

बद्धट्ठिए वि एवं······गाहा ॥५७०१॥

एमेव होइ······गाहा ॥५७०२॥

साहारण······गाहा ॥५७०३॥

तुवरे······गाहा ॥५७०४॥

पासंदण······गाहा ॥५७०५॥

[1]एवं छ गाहाओ भाणियव्वो ।

एयाओ जहा पलंबसूत्ते, पूर्ववत् । असिवे त्ति गतं ।

इदाणिं ओमे त्ति –

ओमे एसण सोही, पजहति परितावितो दिगिंछाए ।
अलभंते वि य मरणं, असमाही तित्थवोच्छेदो ॥५७०६॥

ओमे अद्धाणं पवज्जियव्वं ओमे अच्छंतो दिगिंछाए परिताविओ एसणं पजहति । अहवा – अलभंतो भत्तपाणं मरति, असमाही वा भवति, असमाहिमरणेण वा णाराधइ, अण्णोण्णमरंतेसु य तित्थवोच्छेओ भवति, एते अगमणे दोसा ॥५७००॥

गमणे इमा पंथजयणा –

ओमोयरियागमणे, मग्गे असती य पंथजयणाए ।
परिपुच्छिऊण गमणं चतुव्विहं रायदुट्ठं तु ॥५७०७॥

जया ओमे गम्मति तदा पुव्वं मग्गेण गंतव्वं, असति मग्गस्स पंथेण, तत्थ वि पुव्वं पच्छिण्णेणं, पच्छा अच्छिण्णेण । गमणे विही सच्चेव जो असिवे । ओमे त्ति गतं ।

इदाणिं "रायदुट्ठे", तं चउव्विहं वक्खमाणं ॥५७०७॥

---

१ पूनासत्कमूलभाष्यपुस्तकादर्शे, टाइपअंकितपुस्तकादर्शे च "फासुग जोणि गाहा" तः आरभ्य "एवं छ गाहाओ भाणियव्वाओ" इत्यन्तः पाठः उपरिनिर्दिष्टरूपेण भाष्ये समुपलभ्यते । किन्तु चूर्णिकारेण "एयाओ जहा प्रलंबसूत्रे पूर्ववत्" इति सूचना विहिता, तदनुसारेण प्रलम्बसूत्राधिकारे तु गाथात्रयमेव, न तु गाथा षट्कम् । ताः खलु तिस्रो गाथास्त्वेताः :—

फासुग जोणि परित्ते, एगट्ठि अबद्ध भिण्णऽभिन्ने य ।
बद्धट्ठिए वि एवं, एमेव य होंति बहुबीए ॥४८६७॥
एमेव होंति उवरिं, बद्धट्ठिय तह होंति बहुबीए ।
साहारणस्स भावा, आदीए बहुगुणं जं च ॥४८६८॥
तुवरे फले य पत्ते, रुक्ख-सिला-तुप्प-मद्दणादीसु ।
पासंदणे पवाते, आयवतत्ते वहे अवहे ॥४८७०॥

गाथाऽवलोकनेन स्फुटं प्रतिभाति – यत् "बद्धट्ठिए वि एवं" ५७०१, साहारण ५७०३, पासंदण ५७०५, एतद्भिन्ना गाथाः "फासुगजोणि" ५७००, "एमेवहोइ" ५७०२, "तुवरे" ५७०४, चूर्णिकाराभिमतगाथानामनुसंधानरूपा एव ।

सो पुण राया कहं पदुट्ठो ?, अत उच्यते –

ओरोहधरिसणाए, अब्भरहियसेहदिक्खणाए य ।
अहिमर अणिट्ठदरिसण, वुग्गाहण वा अणायारे ॥५७०८॥

ओरोहओ अंतेपुरं, तं लिंगत्थमादिणा केणइ आधरिसियं ।

अहवा – तस्स रण्णो अब्भरहिओ त्ति आसण्णो कोइ सेहो दिक्खितो । अहवा – साधुवेसेण अहिमरा पविट्ठा ।

अहवा – स्वभावेण कोइ साधू अणिट्ठो, अणिट्ठं वा साधुदंसणं मण्णति, मंतिमादीण वा वुग्गाहितो, वाए वा जितो, संजओ वा अगारीए समं अणायारं पडिसेवंतो दिट्ठो ॥५७०८॥

एवमादिकारणेहिं पदुट्ठो इमं कुज्जा –

णिव्विसओत्ति य पढमो, बितिओ मा देह भत्त-पाणं से ।
ततिओ उवकरणहरो, जीविय-चरित्तस्स वा भेदो ॥५७०९॥

जेण रण्णा णिव्विसया आणत्ता तत्थ जति ण गच्छति तो चउगुरुगं, अण्णं च आणाइक्कमे कज्जमाणे राया गाढयरं रुस्सति । एते पढमभेदे दोसा ॥५७०९॥

गुरुगा आणालोवे, बलियतरं कुप्पे पढमए दोसा ।
गेण्हंत-देंतदोसा, बितिए चरिमे दुविधभेतो ॥५७१०॥

जेण रण्णा रुट्ठेणं गाम-णगरादिसु भत्तपाणं वारितं तत्थ देंताण गेण्हंताण वि दोसा, एते बितिते दोसा । ततिए उवकरणहरो तत्थ वि एते चेव । चरिमो त्ति चउत्थो तत्थ दुविधभेददोसो जीवियभेदं वा करेज्ज, चरणभेयं वा । जम्हा अच्छंताण एवमादी दोसा तम्हा गंतव्वं ॥५७१०॥

णिव्विसयाण ताण तिविहं गमणं इमं –

सच्छंदेण य गमणं, भिक्खे भत्तट्ठणा य वसहीए ।
दारे य ठिओ रुंभति, एगत्थ ठिओ व आणावे ॥५७११॥

"सच्छंदेण य गमणं भिक्खे" अस्य व्याख्या –

सच्छंदेण सयं वा, गमणं सत्थेण वा वि पुव्वुत्तं ।
तत्थुग्गमातिसुद्धं, असंथरे वा पणगहाणी ॥५७१२॥

सच्छंदगमणं अप्पणो इच्छाए, सयं ति विणा सत्थेण वा गच्छति, तं च गमणं पुव्वुत्तं इहेव असिवद्दारे ओहणिज्जुत्तीए वा । तत्थ सच्छंदगमणे उग्गमादिसुद्धं भत्तपाणं गेण्हंतो अच्छतु, सुद्धासति वा असंथरे पणगपरिहाणीए जयंता गेण्हंति ।

[1]"दारे व ठिउ" त्तिएयस्स विभासा – णिव्विसयमाणत्तेसु मा एत्थेव जणवदे णिलुक्का अच्छिहिंति, ताहे पुरिसे साहज्जे देति ।

१ गा० ५७११ ।

ते पुरिसा भिक्खग्गहणकाले भणंति – "तुम्हे पविसह गामं णगरं वा भिक्खं हिंडित्ता ततो चेव भोत्तुं मागच्छह, इह चेव दारट्ठिता उदिक्खामो ।" ते तत्थ ठिया जो जो साधू एति त तं च णिरुंभति जाव सव्वे मिलिया ।

अहवा – ते रायपुरिसा एगत्थ सभाए देउले वा ठिता भणंति – तुब्भे भिक्खं हिंडित्ता इहं आणेह, अम्ह समीवे भुंजह त्ति ॥५७१२॥

तिण्हेगतरे गमणं, एसणमादीसु होइ जइतव्वं ।
भत्तट्ठ ण थंडिल्ले, असति सोही व जा जत्थ ॥५७१३॥

"तिण्हेगयर" त्ति – सच्छंदगमणं एक्को, दारे रुंभति बितिओ, इह आणेह त्ति ततिओ, एयणयरप्पगारेण गच्छमाणा एसणा । आदिसद्दातो उग्गमुप्पायणा य । तेसु विसुद्धं भत्तपाणं गेण्हंति, भत्तट्ठं दोसु विहिणा करेंति । रायपुरिससमीवट्ठितेसु भयणा । थंडिल्लसामायारीं ण हावेंति, रायपुरिससमीवट्ठितेहिं वा कुरुकुयं करेंति । सच्छंदं वसमाणा वसहिसामायारिं न परिहावेंति ।

अह रायपुरिसा भणेज्ज – "अम्हं समीवे वसियव्वं ।" तत्थ वि जहा विरोहतो ण हावेंति । भत्तादिसुद्धस्स असति पणगपरिहाणीए विसोधि अविसोधीए जयतस्स जा जत्थ अप्पतरदोसकोडी तं गेण्हंति ॥५७१३॥

जे भणिया भद्दबाहुकयाए गाहाए सच्छंदगमणाइया तिण्णि पगारा, ते चेव सिद्धसेणखमासमणेहिं फुडतरा करेंतेहिं इमे भणिता –

सच्छंदेण उ एक्कं, बितियं अण्णत्थ भोत्तिहं मिलह ।
ततिओ घेत्तुं भिक्खं, इह भुंजह तीसु वी जतणा ॥५७१४॥

तिसु वि पगारेसु गच्छता तिसु वि उग्गमुप्पायणेसणासु जतंति, सव्वंति ण हावेंति । शेषं गतार्थम् ॥५७१४॥

अहवा – कोइ कम्मघणकक्खडो स्वचित्तनिकृतिवंचनानुमानपरमविजृम्भादिद कुर्यात –

सबितिज्जए व मुंचति, आणावेत्तुं च मोल्लए देंति ।
अम्हुग्गमाइसुद्धं, अणुसट्ठि अणिच्छ जं अंतं ॥५७१५॥

साधूण भिक्खं हिंडंताण रायपुरिसबितिज्जते जइ उत्तमंता अणेसणिज्जं ति णिच्छावेंति तत्थ ते पण्णवेयव्वा – अम्हं उग्गमातिसुद्धं घेप्पति । अहवा – एगत्थ णिरुंभिउं मोल्लए आणावेऊण देंति "एयं भुंजह" त्ति ।

ताहे सो रायपुरिसो भणति – "अम्हे उग्गमाइ सुद्धं भुंजेमो, ण कप्पइ एयं ।" एवं भणिओ जइ उवसंतऽन्नइ ताहे भिक्खं हिंडंति, अणिच्छे अणुसट्ठी, धम्मकहालद्धी तो धम्मं कहेति, निमित्तेण वा आउट्टिज्जति, मंतजोएण वा वसीकज्जति, असति अणिच्छे य जं मोल्लगेसु आणीयं तत्थ जं पंतपंतं तं भुंजति ॥५७१५॥

अहवा –

पुव्वं च उवक्खडियं, खीरादी वा अणिच्छे जं देंति ।
कमढग भुत्ते सन्ना, कुरुकुयदुविहेण वि दवेणं ॥५७१६॥

सो रायपुरिसो भणति – "जं पुव्वरद्धं तं अम्ह चोल्लगेसु आणिज्जउ, दधिक्खीरादि वा आणाविज्जउ।"

अहवा – चोल्लगेसु जं पुव्वरद्धं दहिखीरादि व भुंजति, जइ पुव्वरद्धं दहिखीरादि वा नेच्छति आणावेत्तुं ताहे सुद्धमसुद्धं वा जं सो देति तं भुंजति।

इमा भत्तट्ठजयणा – कमढगेसुं संतरं भुंजति, गिहिभायगेसु वा। मणं च वोसिरित्ता फासुयमट्टियाए बहुदवेण य कुक्कुयं करेंति, दुविधेण वि दवेणं अचित्तेण य सचित्तेण वि, पुव्वं मीसेण पच्छा ववहारसचित्तेण।

"[1]असति सोधी य जा जत्थ" त्ति एयं पदं अण्णहा भणति – जति जयणा संभवे अजयणं ण करेति, विसुद्धाहारे वा लब्भंते असुद्धं भत्तट्ठं, थंडिल्लविहिं वा ण करेंति, तो जा जत्थ सोही तमावज्जति। णिव्विसय त्ति गयं।

[2]इदाणिं वितिओ "मा देह भत्तपाण" त्ति अत्रोच्यते –

वितिए वि होति जयणा, भत्ते पाणे अलब्भमाणे वि।
दोसीण तक्क पिंडी, एसणमादीसु जइयव्वं ॥५७१७॥

पुव्वद्धं कंठं। जाव जणो ण संचरति ताव साणुवेलाए दोसीणं तक्कं वा गेण्हंति, भिक्खवेलाए वा वायसपिंडीओ गेण्हंति, ततो एसणाए जे अप्पतरा दोसा ततो उप्पायणाए ततो उग्गमेण अप्पतरदोसेसु जयंति ॥५७१७॥

अहवा – इमा जयणा –

पुराणादि पण्णवेउं, णिसिं पि गीयत्थे होइ गहणं तु।
अग्गीते दिवा गहणं, सुण्णघरे ओमरादीसु ॥५७१८॥

पुराणो सावगो वा गहियाणुव्वतो खेयण्णो पण्णविज्जति। सो पण्णविओ देवकुले बलिलक्खेण ठवेइ, तं दिवा घेप्पइ, तारिसस्स असइ गीयत्थेसु रातो वि घेप्पति। अगीएसु दिवा गहणं, देवकुले सुण्णघरे वसंतघरे वा अच्चणलक्खेण ओमराईसु ठवियं ॥५७१८॥

उम्भर कोट्टिंबेसु य, देवकुले वा णिवेदणं रण्णो।
कयकरणे करणं वा, असती णंदी दुविधदव्वे ॥५७१९॥

"कोट्टिंबे" त्ति – जत्थ गोभत्तं दिज्जति तत्थ गोभत्तलक्खेण ठवियं गेण्हति, जाव उवसामिज्जति राया ताव एवं जयणजुत्ता अच्छंति। जति सव्वहा उवसामिज्जंतो णोवसमति ताहे जो संजतो कयकरणो ईसत्थे सो तं वंधेउं सासेति, विज्जाबलेण वा सासेति, विउव्विणिड्ढिसंपण्णो वा सासेति। जाहे कयकरणादियाण असति ताहे "नंदि" त्ति णंदी हरिसो, एसो तुट्ठी, जेण दुविधदव्वेण भवति तं गेण्हंति। दुविवदव्वं फासुगमफासुगं वा, परित्तमणंतं वा, असण्णिहिं सण्णिहिं वा, एसणिज्जं अणेसणिज्जं वा। एवमादिभत्तपाणं पडिसेव त्ति ॥५७१९॥ मा देह भत्तपाणंति गयं।

इदाणिं [3]उवकरणहरे त्ति –

ततिए वि होति जयणा, वत्थे पादे अलब्भमाणम्मि।
उच्छुद्ध विप्पइण्णे, एसणमादीसु जतियव्वं ॥५७२०॥

---

1. गा० ५७०९। 2 गा० ५७१२। 3 गा० ५७०९।

रण्णा पडिसिद्धं मा एतेसिं कोइ देज्ज। एवं वत्थपादेसु अलब्भमाणेसु इमा जयणा – जं देवकुलादिसु कप्पडिएसु उच्छड्ढं तं गिण्हंति, विप्पइण्णं जं उक्कुरुडियादिसु ठितं एसणादिसु वा जतंति पूर्ववत् ॥५७२०॥

हितसेसगाण असती, तण अगणी सिक्कगा य वागा य ।
पेहुण-चम्मग्गहणे, भत्तं च पलास पाणिसु वा ॥५७२१॥

रण्णा रुट्ठेण साधूण उवकरणं हरितं, सेसं ति अण्णं णत्थि, ताहे सीताभिभूता तणाणि गेण्हेज्जा, अगणिं गेण्हेज्ज, अगणिं वा सेवेज्ज। पत्तगबंधाभावे सिक्कगट्ठियादे काउं हि(डे)ज्ज, सणादि य (व) क्कतया पाउरणा गेण्हेज्ज, पेहुणं ति मोरंगमया पिच्छया रयहरणट्ठाणे करेज्ज, पत्थरण पाउरणं वा जह बोडियाण, चम्मयं वा पत्थरणपाउरणं गेण्हेज्ज, पलासपत्तिमादिसु भत्तं गेण्हेज्ज, अहवा – भत्तं कुंडगादिसु गेण्हेज्जा पलासपत्तेसु वा भुंजेज्ज। पाणीसु वा गहणं भुंजणं वा ॥५७२१॥

असती य लिंगकरणं, पण्णवणट्ठा सयं व गहणट्ठा ।
आगाढकारणम्मि, जहेव हंसादिणं गहणं ॥५७२२॥

असति रण्णोवसमस्स, उवकरणस्स वा असति, ताहे परलिंगं करेंति। जं रण्णो अणुमतं तेण लिंगेण ठिता ससमय-परसमयविदू वसभा रायाणं पण्णवेंति – उवसामेंतीत्यर्थः। तेन वा परलिंगेन ठिता उवकरणं स्वयमेव गृण्हन्ति, एयं चेव आगाढं। अण्णम्मि वा आगाढे जहेव हंसमादितेल्लाण गहणं दिट्ठं तहा इहं पि आगाढे कारणे वत्थ-पत्तादियाण गहणं कायव्वं। ओसोवण-तालुग्घाडणादिएहिं अन्येन वाहि संप्रयोगेनेत्यर्थः ॥५७२२॥ उवकरणहडे त्ति गयं।

इदाणिं [1]भेदे त्ति –

दुविहम्मि भेरवम्मि, विज्जणिमित्ते य चुण्ण देवीए ।
सेट्ठिम्मि अमच्चम्मि य, एसणमादीसु जइयव्वं ॥५७२३॥

भेरवं भयानकं, तं दुविहं जीवियाओ चारित्ताओ वा ववरोवेति तं रायाणं पदुट्ठं विज्जादीहिं वसीकरेज्जा, णिमित्तेण वा आउट्टिज्जति, चुण्णेहिं वा आयंसणादीहिं वसीकज्जति। "देवी य" त्ति जा य तस्स महादेवी इट्ठा सा वा विज्जादीहिं आउट्टिज्जति, अहवा – णंतगो णंतिगा वा से जो वा रण्णो अणुवत्तणिज्जो, जइ तेहिं भण्णंतो ठितो सुंदरं।

अह ण ठाति ताहे सेट्ठिं भणाति, अमच्चं वा, जइ ते उवसमेज्जा। अहवा – जाव उवसमइ ताव सेट्ठि-अमच्चाणं अवग्गहे अच्छति, जो वा रण्णो अणुवत्तणिज्जो तस्स वा घरे अच्छति, एसणादिसु जयंति पूर्ववत्। पासंजणं (पासंडगणं) वा उवट्ठावेज्जा, जइ णाम ते उवसामेज्ज अण्णतित्थिएहिं अणुसासणादीहिं ॥५७२३॥

आगाढे अण्णलिंगं, कालक्खेवो बहिं निगमणं वा ।
कतकरणे करणं वा, पच्छायण थावरादीसु ॥५७२४॥

अणुवसमंते रण्णे आगाढकारणे अण्णलिंगं करेंति, तेण अण्णलिंगेण कालक्खेवं करेंति, अणज्जमाणा विसयाओ वा णिग्गच्छंति, अहे असहू उवसामेउं ण तीरइ ताहे "कतकरणे करणं व" त्ति सहस्स-जोही सं मारेज्ज, अह सं पि णत्थि ताहे "पच्छायण थावरादीसु" त्ति जाव दसादि [illegible]

[1] गा० ५७०६ ।

अप्पाणं पच्छादेंति, पउमसरादिसु वा लिविक्कया अच्छति, अहवा – दिया एतेसु निलुक्कया अच्छंति, रातो वच्चंति । एवं रायदुट्ठे ऽयंति ॥५७२४॥

इदाणिं [1]भयादिदारा –

बोहिग-मेच्छादिभए, एमेव य गम्ममाण जयणाए ।
दोण्हऽट्ठा य गिलाणे, णाणादट्ठा व गम्मंते ॥५७२५॥

"भयं" ति बोहियभयं, बोहिगा मालवादिमेच्छा, ते पव्वयमालेसु ठिया माणुसाणि हरंति । तेसिं भया गम्ममाणे एवं चेव गमणं, जयणा य जहा असिवादिसु । भयमेवागाढं । अहवा – किंचि उप्पत्तियमागाढं, जहा मातापितिसण्णायगेणं संदिट्ठं –"इमं कुलं पव्वज्जमब्भुवगच्छति जति तुमं आगच्छसि" अहवा–"णागच्छसि तो विप्परिणमंति अण्णम्मि वा सासणे पव्वयंति" एरिसे वा गंतव्वं । गेलण्णवेज्जस्स वा ओसहाण य । उत्तिमट्ठे य पडियरगो विसोहिकामो वा ।

णाणदंसणेसु सुत्तणिमित्तं । अहवा – अत्थस्स । अहवा – उभयस्स । चरित्तट्ठा पुव्वभणिय । एवमादिकारणेसु पुव्वं मग्गेण, पच्छा अच्छिण्णपंथेण, ततो छिण्णपथेण ॥५७२५॥

एत्थ एक्केक्के असिवादिकारणे –

एगापण्णं व सतावीसं च ठाण णिग्गमा णेया ।
एतो एक्केक्कम्मिं, सयग्गसो होइ जयणा उ ॥५७२६॥ पूर्ववत्

जे भिक्खू विरूवरूवाइं दसुयायणाइं अणारियाइं मिलक्खूइं पच्चंतियाइं सति लाढे विहाराए संथरमाणेसु जणवएसु विहारपडियाए अभिसंधारेइ, अभिसंधारेंतं वा सातिज्जति ॥२६॥

इमो सुत्तत्थो –

सग-जवणादिविरूवा, छव्वीसद्धंतवासि पच्चंता ।
कम्माणज्जमणारिय, दसणेहि दसंति तेण दसू ॥५७२७॥

सग-जवणादिअण्णाणंतेसमासादिट्ठिता विविधरूवा विरूवा मगहादियाणं अद्धछव्वीसाए आरिय-जणवयाणं, तेसिं अण्णतरं ठियां जे अणारिया ते पच्चंतिया, आरुट्ठा दंतेहिं दसंति तेण दसू, तेसिं [2]आयतणा विासओ पल्लिमादी वा । हिंसादिअकज्जकम्मकारिणो अणायरिया ॥५७२७॥

मिल्लक्खूऽव्वत्तभासी, संथरणिज्जा उ जणवया सगुणा ।
आहारोवहिसेज्जा, संथारुच्चारसज्झाए ॥५७२८॥

मिलक्खू जे अव्वत्तं अफुडं भासंति ते मिलक्खू । जदा रुट्ठा तदा दुक्खं सण्णविज्जंति दुस्सण्णप्पा । दुक्खं चरणकरणजातमातावत्तिए धम्मे पण्णविज्जंति दुप्पण्णवणिज्जा, रातो सव्वादरेण भुंजंति अकालपरिभोगिणो, रातो चेव पडिबुज्झंति अकालपडिबोही, सद्धम्मे दुक्ख बुज्झंति त्ति दुप्पडिबोहीणि । सति विज्जमाणे "लाढे"

१ गा० ५६३० । २ आयरिय निव्वासओ पल्लिगादी वा इत्यपि पाठः ।

त्ति साधुणो अक्खा, सगुणा जणवया संथरणिज्जा भवंति । ते पुण गुणा आहारो उवही सेज्जा संथारगो, अण्णो य बहुविहो । उवधी सततं अविरुद्धो लब्भति, उच्चारपासवणभूमीओ य संति, सज्झायो सुज्झति । "विहाराए" त्ति दप्पेणं णो असिवादिकारणे, तस्स चउलहुं आणादिया य दोसा ॥५७२८॥

इमो णिज्जुत्तिवित्थारो –

आरियमणारिएसुं, चउक्कभयणा तु संकमे होति ।
पढमततिए अणुण्णा, बितियचउत्थाऽणणुण्णाया ॥५७२९॥

आरितातो जणवयाओ आरियं जणवयं संकमइ, एवं चउभंगो कायव्वो, सेसं कंठं ॥५७२९॥

आरिय-आरियसंकम अद्धछव्वीसं हवंति सेसा तु ।
आरियमणारियसंकम, बोधिगमादी मुणेतव्वा ॥५७३०॥

अद्धछव्वीसाए जणवयाणं अण्णतराओ अण्णतरं चेव आरियं संकमति तस्स पढमभंगो, आरियातो अण्णयरबोहिगविसयं संकमंतस्स बितिओ ॥५७३०॥

अणारियारियसंकम, अंधादमिला य होंति णायव्वा ।
अणारियअणारियसंकम, सग-जवणादी मुणेतव्वा ॥५७३१॥

अंधदमिलादिविसयाओ आरियविसयं संकमंतस्स तइओ, अणारियातो सगविसयाओ अणारियं चेव जवणविसयं संकमंतस्स चउत्थो । एस खित्तं पडुच्च चउभंगो भणितो ॥५७३१॥

इमं लिंगं पडुच्च भण्णति –

भिक्खुसरक्खे तावस, चरगे कावाल गारलिंगं च ।
एते अणारिया खलु, अज्जं आयारभंडणं ॥५७३२॥

भिक्खुमादी अणारिया लिंगा, "अज्जं" ति आरियं, तं पुण आयारभंडय रयोहरण-मुहपोत्तिया-चोलपट्टकप्पा य पडिग्गहो समत्तो य ।

आयारभंडग एत्थ वि चउभंगो कायव्वो ।

आरियलिंगाओ आरियलिंगं एस पढमभंगो । एत्थ थेरकप्पातो जिणकप्पादिसु संकमं करेंति । बितिओ कारणिओ, ततिए भिक्खुमादि उवसंतो, चउत्थे भिक्खुमादी सरक्खादीसु ।

अहवा चउभंगो – आयरिओ आरियलिंगं संकमति भावणा कायव्वा ।

अहवा चउभंगो – आरिएणं लिंगेणं आरियविसयं संकमति, भावणा कायव्वा । जो आरिए त्ति लिंगेणं अणारियविसयं संकमति, एत्थ सुत्तणिवातो । सेसं विकोवणट्ठा भणियं ॥५७३२॥

को पुण आरिओ, को वा अणारिओ ?

अतो भण्णति –

मगहा कोसंबीया, थूणाविसओ कुणालविसओ य ।
एसा विहारभूमी, एत्ता वा आरियं खेत्तं ॥५७३३॥

पुव्वेण मगहविसओ, दक्खिणेण कोसंबी, अवरेण थूणाविसओ, उत्तरेण कुणालाविसओ। एतेसिं मज्झं आरियं, परतो अणारियं ॥५७३३॥

आरियविसयं विहरंताणं के गुणा, अतो भण्णति –

समणगुणविदुऽत्थ जणो, सुलभो उवही सतंत अविरुद्धो ।
आयरियविसयम्मि गुणा, णाण-चरण-गच्छवुड्ढी य ॥५७३४॥

समणाणं गुणा समणगुणा। के गुणा ?, मूलगुण-उत्तरगुणा। पंचमहव्वया मूलगुणा, उग्गमुप्पादेसणा अट्ठारससीलंगसहस्साणि य उत्तरगुणा। "विद-ज्ञाने" श्रमणगुणविदुः।

कश्चासौ ?, उच्यते – जनसुलभो उवधी ओहिओ उवग्गहिओ य।

अस्मिन् तंत्रे – अविरुद्धो एसणिज्जो लब्भति, एवमादि गुणा आरिएसु। किं च णाणदंसण-चरित्ताण विढी, नास्ति व्याघातः, गच्छवुड्ढी य तत्थ पव्वज्जंति सिक्खापदाणि य गिण्हंति ॥५७३४॥

इमं च आरिए जणे भवति –

जम्मण-णिक्खमणेसु य, तित्थकराणं करेंति महिमाओ ।
भवणवति-वाणमंतर- जोतिस-वेमाणिया देवा ॥५७३५॥

तं दट्ठुं भव्वा विबुज्झंति युव्वयंति य, चिरपव्वइया वि थिरतरा भवति ॥५७३५॥

तित्थकरा इमं धर्मोपदेशादिकं आरिए जणे करेंति –

उप्पण्णे णाणवरे, तम्मि अणंते पहीणकम्माणो ।
तो उवदिसंति धम्मं, जगजीवहियाय तित्थगरा ॥५७३६॥

इमो समोसरणातिसओ –

लोगच्छेरयभूयं, उप्पयणं निवयणं च देवाणं ।
संसयवागरणाणि य, पुच्छंति तहिं जिणवरिंदे ॥५७३७॥

सण्णी बहु जुगवं संसए पुच्छंति, तेसिं चेव जिणो जुगवं चेव वागरणं करेति, तेहिं आरियजणवए जिणवरिंदे पुच्छंति ॥५७३७॥

एत्थ किर सन्नि सावग, जाणंति अभिग्गहे सुविहिताणं ।
एएहिं कारणेहिं, बहि गमणे होतऽणुग्घाता ॥५७३८॥

एत्थ किर आरियजणवए, "किर" त्ति परोक्खवयणं, अविरयसम्मद्दिट्ठी सण्णी गहियाणुव्वतो सावगो एते जाणंति "अभिग्गहे" त्ति आहारोवधिसेज्जागहणविहाणं, तं जाणंता तहा देंति। अहवा – अभिग्गहो दव्वखेत्तकालभावेहिं तं जाणंता तहेव पडिपूरेंति। जम्हा एते गुणा आरियजणवए तम्हा "बहिं" ति अणारियविसयं गच्छंताण चउगुरुगा ॥५७३८॥

चोदगाह –

सुत्तस्स विसंवादो, सुत्तनिवातो इहं त संकप्पे ।
चत्तारि छच्च लहुगुरु,

इह सोलसमुद्दे सगे चउलहुगाऽविकारो – तुमं च अणारियविसयसंकमे चउगुरुं देसि, अतो सुत्तविसंवातो ।

आयरिओ भणइ – तुमं सुत्तणिवातं ण याणसि । इह सुत्तणिवातो मग्गसंकप्पे चउलहुं, पदभेदे चउगुरुं, पंथमोइण्णेसु छल्लहुं, अणारियविसयपत्तेसु छग्गुरुं, संजमायविराहणाए मट्ठाणं । तत्थ संजमविराहणाए "छक्काय चउसु लहु" गाहा भावणिज्जा । आयविराहणाए चउगुरुगं परितावणाई वा ॥५७३९॥

आणादिणो य दोसा, विराहणा खंदएण दिट्ठंतो ।
एवं ततियविरोहो, पडुच्चकालं तु पण्णवणा ॥५७४०॥

आयविराहणाए खंदगो दिट्ठंतो –

दोच्चेण आगतो खंदएण वाए पराजिओ कुवितो ।
खंदगदिक्खा पुच्छा णिवारणाऽऽराध तव्वज्जा ॥५७४१॥

चंपा णाम णगरी, तत्थ खंदगो राया । तस्स भगिणी पुरंदरजसा उत्तरापथे 'कुंभाकारकडे णगरे डंडगिस्स रण्णो दिण्णा ।

तस्स पुरोहिओ मरुगो पालगो, सो य अकिरियदिट्ठी । अण्णया सो दूओ आगतो चंपं । खंदगस्स पुरतो जिणसाहुअवण्णं करेति । खंदगेण वादे जिओ, कुविओ, गओ स-णगरं । खंदगस्स वहं चिंतेंतो अच्छइ ।

खंदगो वि पुत्तं रज्जे ठवित्ता मुणिसुव्वयसामिअंतिए पंचसयपरिवारो पव्वतितो अधीतसुयस्स गच्छो अणुण्णाओ ।

अण्णया भगिणीं दिच्छामि त्ति जिणं पुच्छति । सोवसग्गं ते कहियं ।

पुणो पुच्छति – "आराहगो ण व ?" त्ति ।

कहियं जिणेणं – तुमं मोत्तुं आराहगा सेसा । ततो णिवारिज्जंतोऽवि ॥५७४१॥

सुतो पालगेण आगच्छमाणो –

उज्जाणाऽऽउह णूमेण, णिवकहणं कोव जंतगं पुव्वं ।
बंध चिरिक्क णिदाणे, कंबलदाणे रजोहरणं ॥५७४२॥'

पालगेण उज्जाणे पंचसया आयुहाण ठविया । साहवो आगया तत्थ ठिता । पुरंदरजसा दिट्ठा, खंदगो कंबलरयणेन पडिलाभितो । तत्थ णिसिज्जाओ कयाओ ।

पालगेण राया वुग्गाहितो । एस परीसहपराजियो आगओ तुमं मारेउं रज्जं घेच्छिहीति ।

कहं णज्जति ?, आयुहा दंसिया ।

कुविओ राया, पालगो भणितो – मारेहि त्ति । तेण जंतपीलणं कयं ।

खंदगेण भणियं – 'मं पुव्वं मारेहि ।' जंतसमीवे गले बंधिउं ठविओ, साहू पीलिता [illegible] खंदगो भणितो । गुरुणो पायवडियं चिन्तंतो, सो वि पालगेण । [illegible] कतं ॥५७४२॥

अग्गिकुमारुववातो, चिंता देवीए चिण्ह रयहरणं ।
खिज्जण सपरिसदिक्खा, जिण साहर वात डाहो य ॥५७४३॥

अग्गिकुमारेसु उववण्णो ।

पुरंदरजसाए देवीए चिंता उव्वण्णा वट्टति "साधुणो पाणगपढमालियाणिमित्तं णागच्छंति किं होज्ज" ? एत्यंतरे खंदगेण "सण्ण" त्ति – सकुलिकारुवं काउं रयहरणं रुहिरालित्तं पुरंदरजसा-पुरतो पाडियं, दिट्ठं, सहसा अक्कंदं करेंती उट्ठिया, भणिओ राया – पाव ! विणट्ठो सि विणट्ठो सि ।

सा तेण खंदगेण सपरिवारा मुणिसुव्वयस्स समीवं णीया दिक्खिया । खंदगेण संवट्ट-गवायं विउव्वित्ता रायाणं सबलवाहणं पुरं च स कोहाविट्ठो बारसजोयणं खेत्तं णिड्डहति । अज्ज वि डंडगारण्णं ति भण्णति ॥५७४३॥

जम्हा एवमादी दोसा तम्हा आरियातो अणारियं ण गंतव्वं ।

चोदगाह – "[1]एवं ततियविरोहो त्ति – एवं वक्खाणिज्जंते जं गाहासुत्ते ततियभंगो अणुण्णाओ, तं विरुज्झति ।

जइ अणारिएसु गमो णत्थि वम्मो वा, तो भिक्खुस्स अणारियाओ आरिएसु आगमो कहं ?,

आयरिओ भणइ – [2]सुत्ते पणीयणकालं पडुच्च पढमभंगो । ततियभंगो पुण अणागओ मासियसुत्तत्थेण संपइरायकुलं पडुच्च पण्णविज्जति ।

एत्थ संपइस्स उप्पत्ती –

कोसंबाऽऽहारकए, अज्जसुहत्थीण दमगपव्वज्जा ।
अव्वत्तेणं सामाइएण रण्णो घरे जातो ॥५७४४॥

कोसंबीए णगरीए अज्जमहागिरी अज्जसुहत्थी य दोवि समोसढा । तया य [3]अवीयकाले साधूजणो य हिंडमाणो फव्वंति ।

तत्थ एगेण दमएण ते दिट्ठा । ताहे सो भत्तं जायति ।

तेहिं भणियं – अम्हं आयरिया जाणंति ।

ताहे सो आगओ आयरियसगासं । आयरिया उवउत्ता, तेहिं णातं – "एस पवयणउवग्गहे वट्टिहिति" त्ति । ताहे भणिओ – जति पव्वयसि तो दिज्ज भत्तं ।

सो भणइ – पव्वयामि त्ति । ताहे आहारकते सो दमगो पव्वावितो । सामाइयं से कयं, ते अतिसमुद्दिट्ठो । सो य तेण कालगओ । सो य तस्स अव्वत्तसामाइयस्स भावेण कुणालकुमा-रस्स अंधस्स रण्णो पुत्तो जातो ।

को कुणालो ? कहं वा अंधो ? त्ति –

पाडलिपुत्ते असोगसिरी राया, तस्स पुत्तो कुणालो । तस्स कुमारस्स भुत्ती उज्जेणी दिण्णा । सो य अट्ठवरिसो, रण्णा लेहो विसज्जितो – शीघ्रमधीयतां कुमारः । असंवत्तियलेहे रण्णो उट्ठितस्स माइसवत्तीए कतं "अंधीयतां कुमारः" । सयमेव तत्तसलागाए अच्छी अंजिया । सुतं रण्णा । गामो

---

१ गा० ५७४० । २ "रयणा" इत्यपि पाठः । ३ अंचियकालो इति बृहत्कल्प भाष्य चूर्णौ गा० ३२७५ ।

से दिण्णो । गंधव्वकलासिक्खणं । पुत्तस्स रज्जत्थी आगओ पाडलिपुत्तं । असोगसिरिणो जवणियंत-रितो गंधव्वं करेति, आउट्टो राया, मग्गसु जं ते अभिच्छितं ॥५७४४॥

तेण भणियं –

चंदगुत्तपपुत्तो य, बिंदुसारस्स णत्तुओ ।
असोगसिरिणो पुत्तो, अंधो जायति कागिणिं ॥५७४५॥

उवउत्तो राया, णातो किं ते अंधस्स कागिणीए ? कागिणी=रज्जं ।

तेण भणियं – पुत्तस्स मे कज्जं । संपति पुत्तो वि त्ति । आणेहि तं पेच्छामो, आणिओ, संवड्ढिओ, दिण्णं रज्जं । सव्वे पच्चंता विसया तेण उयविया विक्कंतो रज्जं भुंजइ ॥५७४५॥

अण्णया –

अज्जसुहत्थाऽऽगमणं, दट्ठुं सरणं च पुच्छणा कहणं ।
पावयणम्मि य भत्ती, तो जाया संपतीरण्णो ॥५७४६॥

उज्जेणीए समोसरणे अणुजाणे रहपुरतो रायंगणे बहुसिस्सपरिवारो आलोयणठितेण रण्णा अज्जसुहत्थी आलोइओ, तं दट्ठूण जाती संभरिया, आगतो गुरुसमीवं ।

धम्मं सोउं पुच्छति – अहं भे कहिं चि दिट्ठपुव्वो ?, पुच्छति य – इमस्स धम्मस्स किं फलं ?, गुरुणाऽभिहितं सग्गो मोक्खो वा ।

पुणो पुच्छइ – इमस्स सामाइयस्स किं फलं ?,

गुरू भणइ – अव्वत्तस्स सामाइयस्स रज्जं फलं । सो संभंतो भणाति सच्चं ।

ताहे सुहत्थी उवउज्जिऊण भणति – "दिट्ठिल्लओ त्ति ।" सव्वं से परिकहियं । ताहे सो पवयणभत्तो परमसावगो जातो ॥५७४६॥

जवमज्झ मुरियवंसो, दारे वणि-विवणि दाणसंभोगो ।
तसपाणपडिक्कमओ, पभावओ समणसंघस्स ॥५७४७॥

चंदगुत्तातो बिंदुसारो महंततरो, ततो असोगसिरी महंततरो, ततो संपती सव्वमहंतो, ततो हाणी, एवं मुरियवंसो जवागारो, मज्झे संपइ – आसी ।

"दारे" त्ति अस्य व्याख्या –

उदरियमओ चउसु वि, दारेसु महाणसे स कारेति ।
णिंताऽऽणिंते भोयण, पुच्छा सेसे अभुत्ते य ॥५७४८॥

पुव्वभवे ओदरिओ त्ति पिंडोलगो आसि, तं संभरित्ता णगरस्स चउसु वि दारेसु महा-कारमहाणसे कारवेति, णितो पविसंतो वा जो इच्छइ सो सव्वो भुंजति, जं सेसं उव्वरति तं महाणसियाण आभवति ।

१ गा० ५७४५ ।

ताहे राया ते महाणसिए पुच्छति – जं सेसं तेण तुब्भे किं करेह?, ते भणंति – घरे उवउज्जति ॥५७४८॥

ताहे राया भणति – जं सेसं – अभुत्तं तं तुब्भे –

साहूण देह एयं, अह में दाहेमि तत्तियं मोल्लं ।
णेच्छंति घरे घेत्तुं, समणा मम रायपिंडो त्ति ॥५७४९॥

एवं महाणसिता भणिता देंति साधूणं ।

"[1]वणि-विवणि-दाणि" त्ति अस्य व्याख्या –

एमेव तेल्ल-गोलिय,-पूवीय-मोरंड दूसिए चेव ।
जं देह तस्स मोल्लं, दलामि पुच्छा य महगिरिणो ॥५७५०॥

वणित्ति – जे णिच्चट्ठिता ववहरंति, "विवणी" त्ति-जे विणा आवणेण उब्भट्ठिता वाणिज्जं करेंति ।

अहवा – विवणि त्ति अवाणियगा ।

रण्णा भणिया – तेल्लविक्किण्णा साधूणं तेल्लं देज्जह, अहं मे मोल्लं दाहामि । एवं "गो (कु) लिय त्ति" महियविक्कया, पूवलिकादि पूविगा, तिलमोदगा मोरंडविक्कया, वत्थाणि य दोसिया । पच्छद्धं कंठं ।

"[2]संभोगो" त्ति एवं पभूते किमिच्छए लब्भमाणे महागिरी अज्जसुहत्थीं पुच्छति – अज्जो ! जाणसु, मा अणेसणा होज्जा ॥५७५०॥

ताहे –

अज्जसुहत्थि ममत्ते, अणुरायाधम्मतो जणो देति ।
संभोग वीसुकरणं, तक्खण आउंटण-णियत्ती ॥५७५१॥

अज्जसुहत्थी जाणंतो वि अणेसणं अप्पणो सीसममत्तेणं भणइ – अणुराया धम्माओ जणो देति त्ति – रायाणमणुवत्तए जणो, जहा राया भद्दओ तहा जणो वि, राजानुवर्तितो धर्मश्च भविष्यतीत्यतो जनो ददाति" । एवं भणंतो महागिरिणा अज्जसुहत्थीण सह संभोगो वीसुं कओ, त्रिसंभोगकरणमित्यर्थः ।

ताहे अज्जसुहत्थी चिंतेइ – "मए अणेसणा भुत्त" त्ति, तक्खणमेव आउट्टो संभुत्तो, अकप्पसेवणाओ य णियत्ती ॥५७५१॥

सो रायाऽवंतिवती, समणाणं सावओ सुविहियाणं ।
पच्चंतियरायाणो, सव्वे सद्दाविता तेणं ॥५७५२॥ कंठा

अवंतीजणवए उज्जेणीणगरी –

कहितो तेंसि धम्मो, वित्थरतो गाहिता च सम्मत्तं ।
अप्पाहिया य बहुसो, समणाणं सावगा होइ ॥५७५३॥ कंठा

---

१ गा० ५७४७ । २ गा० ५७४७ ।

अणुयाणे अणुयाती, पुप्फारुहणाइ उक्किरणगाइं ।
पूयं च चेतियाणं, ते वि सरज्जेसु कारेंति ॥५७५४॥

अणुजाणं रहजत्ता, तेसु सो राया अणुजाणति, भडचडगरसहितो रहेण सह हिंडति, रहेसु पुप्फारुहणं करेति, रहग्गतो य विविधफले खज्जगे य कवड्डगवत्थमादी य उक्किरणे करेति, अन्नेसिं च चेइयघरट्ठियाणं चेइया पूयं करेंति, ते वि रायाणो एवं चेव सरज्जेसु कारावेंति ॥५७५४॥

इमं च ते पच्चंतियरायाणो भणंति –

जति मं जाणह सामिं, समणाणं पणमधा सुविहियाणं ।
दव्वेण मे ण कज्जं, एयं खु पियं कुणह मज्झं ॥५७५५॥

गच्छह सरज्जेसु, एवं करेह त्ति ॥५७५५॥

वीसज्जिता य तेणं, गमणं घोसावणं सरज्जेसु ।
साहूण सुहविहारा, जाया पच्चंतिया देसा ॥५७५६॥

तेण संपइणा रण्णा विसज्जिता, सरज्जाणि गंतुं अमाघातं घोसंति, चेइयघरे य करेंति, रहजाणे य । अंधदमिलकुडक्कमरहट्ठता एते पच्चंतिया, संपतिकालातो आरब्भ सुहविहारा जाता ।

संपतिणा साधू भणिया – गच्छह एते पच्चंतियविसए, विबोहेंता हिंडह ।

ततो साधूहिं भणियं – एते ण किंचि साधूण कप्पाकप्पं एसणं वा जाणंति, कहं विहरामो ? ॥५७५६॥

ताहे तेण संपतिणा –

समणभडभावितेसुं, तेसुं रज्जेसु एसणादीहिं ।
साहू सुहं पविहरिता, तेणं चिय भद्दगा ते उ ॥५७५७॥

समणवेसधारी भडा विसज्जिया रहं, ते जहा साधूण कप्पाकप्पं तहा तं दरिसंतेहिं एसणसुद्धं च भिक्खग्गहणं करेंतेहिं जाहे सो जणो भावितो ताहे साधू पविट्ठा, तेसि सुहविहारं जात, ते य भद्दगा तप्पभिई जाया ॥५७५७॥

उदिण्णजोहाउलसिद्धसेणो, स पत्थिवो णिज्जितसत्तुसेणो ।
समंततो साहुसुहप्पयारे, अकासि अंधे दमिले य घोरे ॥५७५८॥

उदिण्णा पजायबला, के ते ?, जोहा, तेहिं आउलो–व्याप्त इत्यर्थः । तेण उदिण्णजोहाउलेण सिद्धा सेणा जस्स सो उदिण्णजोहाउलसिद्धसेणो । उदिण्णजोहाउलसिद्धसेणत्तणतो चेव विपक्खभूता सत्तुसेणा ते निज्जिया जेण स पत्थिवो निज्जियसत्तुसेणो सो पंचविसएसु एतानि कृतवान् सुहविहारनिमित्तं ॥५७५८॥

जे भिक्खू दुगुंछियकुलेसु असणं वा पाणं वा खाइमं वा साइमं वा पडिग्गाहेइ,
पडिग्गाहेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥२७॥

जे भिक्खू दुगुंछियकुलेसु वत्थं वा पडिग्गहं वा कंबलं वा पायपुंछणं वा
पडिग्गाहेइ, पडिग्गाहेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥२८॥

जे भिक्खू दुगुंछियकुलेसु वसहिं पडिग्गाहेइ. पडिग्गाहेंतं वा सातिज्जति॥सू॥२९॥

जे भिक्खू दुगुंछियकुलेसु सज्झायं उद्दिसइ, उद्दिसंतं वा सातिज्जति ॥सू॥३०॥

जे भिक्खू दुगुंछियकुलेसु सज्झायं वाएइ, वाएंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥३१॥

जे भिक्खू दुगुंछियकुलेसु सज्झायं पडिच्छइ, पडिच्छंतं वा सातिज्जति ॥सू॥३२॥

चउलहुं, तेसि इमो भेदो सव्वं च –

दुविहा दुगुंछिया खलु, इत्तरिया होंति आवकहिया य ।
एएसिं णाणत्तं, वोच्छामि अहाणुपुव्वीए ॥५७५९॥

"इत्तिरिय" त्ति –

सूयगमतगकुलाइं, इत्तरिया जे य होंति निज्जूढा ।
जे जत्थ जुंगिता खलु, ते होंति य आवकहिया तु ॥५७६०॥

इत्तरियत्ति सूतणिज्जूढा – जे ठप्पा कया । सलागपडिय त्ति आवकहिगा, जे जत्थविसए जात्यादि-जुंगिता जहा दक्खिणावहे लोहकारकल्लाला,लाडेसु णडवरुडचम्मकारादि । एते आवकहिया ॥५७६०॥

इमे य दोसा –

तेसु असणवत्थादी, वसही वा अहव वायणादीणि ।
जे भिक्खू गेण्हेज्जा, विसेज्ज कुज्जा व आणादी ॥५७६१॥

असणवत्थादियाणं गहणं, वसहीए वा विसेज्ज पविसति, वायणादिसज्झायं कुज्जा, तस्स आणादिया दोसा ॥५७६१॥

अयसो पवयणहाणी, विप्परिणामो तहेव कुच्छा य ।
तेसिं वि होति संका, सव्वे एयारिसा मण्णे ॥५७६२॥

सर्वसावद्यो नीचेत्यादि अयसः, अभोज्जसंपर्कं न कश्चित् प्रव्रजतीति एवं परिहाणी, अभोज्जेसु भत्तादिग्गहणं दृष्ट्वा धर्माभिमुखा पूर्वप्रतिपन्नगा वा विपरिणमंते, श्वपाकादिसमाना इति जुगुप्सा, जेसु वि गेण्हइ तेसि वि संका – सव्वे एयलिंगधारिणो एते "एतारिस" त्ति अम्हे सरिसा ॥५७६२॥

इमो अववादो –

असिवे ओमोयरिए, रायदुट्ठे भए व गेलण्णे ।
अद्धाण रोहए वा, अयाणमाणे वि वितियपदं ॥५७६३॥

एतेहिं असिवादिएहिं कारणेहिं जया घेप्पति तदा पणगपरिहाणीए ॥५७६३॥

जाहे चउलहुं पत्तो ताहे इमाए जयणाए गेण्हंति –

अण्णत्थ ठवावेउं, लिंगविवेगं च काउ पविसेज्जा ।
काऊण व उवयोगं, अदिट्ठे मत्ताति संवरितो ॥५७६४॥

सो दुगुंछितो असणवत्थादी अप्पसागारियं अण्णत्थ सुण्णघरादिसु ठवादिज्जति, तम्मि गते पच्छा गेण्हति । अहवा – रओहरणादिउवकरणं अण्णत्थ ठवेतुं सरक्खादिपरलिंगं काउं जहा पवयणादिदोसा ण भवंति तहा पविसिउं गेण्हंति । अहवा – मज्झण्हादी विरलजणकाले दिगावलोयणं काउं अण्णेण अदिस्समतो मत्तयं पत्तं वा वासकप्पमादिणा सुट्ठु आवरेत्ता पविसति गेण्हइ य, वत्थादियं पि जहा अविसुद्धं तहा गेण्हंति, वसहिं अण्णत्थ अलभंतो बाहिं सावयतेणभएसु वसहिं गेण्हेज्ज, जहा ण णज्जति तहा वसति । सज्झायं ण करेति । गामदुट्ठादिसु अभिगमो अप्पसागारिए सज्झायझाणधम्मकहादी वि करेज्ज ॥५७६४॥

जे भिक्खू असणं वा पाणं वा खाइमं वा साइमं वा पुढवीए णिक्खिवइ,
णिक्खिवंतं वा सातिज्जति ॥३३॥

जे भिक्खू असणं वा पाणं वा खाइमं वा साइमं वा संथारए णिक्खिवइ,
णिक्खिवंतं वा सातिज्जति ॥३४॥

जे भिक्खू असणं वा पाणं वा खाइमं वा साइमं वा वेहासे णिक्खिवइ
णिक्खिवंतं वा सातिज्जति ॥३५॥

पुढवि-तण-वत्थमातिसु, संथारे तह य होइ वेहासे ।
जे भिक्खू णिक्खिवती, सो पावति आणमादीणि ॥५७६५॥

पुढविग्गहणातो उवरट्ठगादिभेदा घेत्तव्वा, दब्भादितणसंथारए वा, वत्थे, वत्थसंथारए वा, कंबलादिफलहसंथारए वा, वेहासे वा दोरगेण उल्लंबेउं, एवमादिएगतरप्पगारेण जो निक्खिवइ तस्स चउलहुं, तस्स आणादिया य दोसा, संजमायविराहणा य ॥५७६५॥

तत्थ संजमे –

तक्कंतपरोप्परओ, पलोट्टल्लिण्णे य भेद कायवहो ।
अहि-मूसलाल-विच्छुय, संचयदोसा पसंगो वा ॥५७६६॥

सुण्णे भत्ताणे चउद्दिसाओ पक्कोडगातो तक्केति, तं पि मज्जारा, एवं [illegible] णाणाविधेण वा पलोट्टेति एस कायविराहणा, आयविराहणा य वेहासट्ठितं मूसगादि[illegible] आयविराहणा य । एसा संजमविराहणा ।

इमा आयविराहणा –

[illegible] मूसगस्स वा [illegible] लाला पडेज्ज, [illegible] वा विसं मुंचेज्ज, विच्छुगाइ वा डंकेज्ज, विसं वा मुंचेज्ज, ते वा अणिक्खित्तए दोसा [illegible] ॥५७६६॥

कि च जो भत्तपाणं णिक्खिवइ –

सो समणसुविहियाणं, कप्पाओ अविचितो ति णायव्वो ।
दसरातम्मि य पुण्णे, सो उवही उवहतो होति ॥५७६७॥

समणकप्पो तम्मि अवगओ अपगतः समणकप्पातो वा अवचिओ, एवं णिक्खेवंतस्स दसराते गते जम्मि पादे जं भत्तादि णिक्खिवइ तं उवहतं होइ, जो य उवही णिक्खित्तो अच्छइ दसराइं अपडिलेहिउं सोवि उवहतो भवति ॥५७६७॥

ओबद्धपीढफलयं, तु संजयं ठविय भत्तपाणं तु ।
सुविहियकप्पावचितं, सेयत्थि विवज्जए साहू । ५७६८॥

संथारगादियाणं बंधे जो पक्खस्स ण मुंचति सो बद्धो णिक्खित्तभत्तपाणा य जो सो सुविहियकप्पातो अवगतो, जो सेयत्थी साधू तेण वज्जेयव्वो, ण तेण सह संभोगो कायव्वो ॥५७६८॥

इमो अववाओ –

बितियपयं गेलण्णे, रोहग अद्धाण उत्तिमट्ठे वा ।
एतेहि कारणेहिं, जयणाए णिक्खिवे भिक्खू ॥५७६९॥

गिलाणकज्जवावडो णिक्खिवति, रोहगे वा संकुडवसहीए वेहासे करेति, अद्धाणे वा सागारिए भुंजमाणो उत्तिमट्ठपवण्णस्स वा करणिज्जं करेंतो णिक्खिवति ॥५७६९॥

एवमादिकारणेहि णिक्खिवंतो इमाए जयणाए णिक्खिवति –

दूरगमणे णिसिं वा, वेहासे इहरहा तु संथारे ।
भूमीए ठवेज्ज व णं, वणबंध अभिक्ख उवओगो ॥५७७०॥

दूरं गंतुकामो णिसि वा जं परिवासिज्जति तं वेहासे दोरगेण णिक्खिवति. "इहरह" त्ति आसण्णे गंतुकामो आसण्णे वा किंचि लोयमादिकाउकामो तत्थ संथारे भूमीए वा ठवेति, वकारो विगप्पे, णकारो पादपूरणे । तं पि ठवेंतो वणं चीरेण बंधइ, पिपीलिगभया छगणादीहि वा लिपइ, अभिक्खणं च उवयोगं करेति ॥५७७०॥

जे भिक्खू अण्णतित्थीहिं वा गारत्थीहिं वा सद्धिं भुंजइ, भुंजंतं वा सातिज्जति॥३६॥

जे भिक्खू अण्णतित्थीहिं वा गारत्थीहिं वा सद्धिं आवेढिय परिवेढिय भुंजइ, भुंजंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥३७॥

अण्णउत्थिया तच्चन्नियादि बंभणा, खत्तिया गारत्था, तेहिं सद्धि एगभायणे भोयणं एगदु-तिदिसि-ट्ठिएसु आवेढिउं, सव्वदिसिट्ठितेसु परिवेढिउं, अहवा – आङ् मर्यादया वेष्टितः । दिसिविदिसासु विच्छिण्ण-ट्ठितेसु परिवेष्टितः । अहवा – एगपंतीए समंता ठिएसु आवेष्टितः, दुगातिसु पंतीसु समंता परिट्ठियासु परिवेष्टितः ।

गिहि-अण्णतित्थिएहिं व, सद्धिं परिवेढीए व तम्मज्झे
जे भिक्खू असणादी, भुंजेज्जा आणमादीणि ॥५७७१॥

अण्णउत्थिएहिं समं भुंजति अण्णउत्थियाण वा मज्झे ठितो परिवेढितो भुंजति, पाणादिया दोसा, ओहओ चउलहुं पच्छित्तं ॥५७७१॥

विभागतो इमं –

> पुव्वं पच्छा संथुय, असोयवाई य सोयवादी य ।
> लहुगा चउ जमलपदे, चरिमपदे दोहि वी गुरुगा ॥५७७२॥

पुव्वसंथुया असोय-सोयवाति य, पच्छासंथुया असोय-सोय त्ति । एतेसु चउसु पदेसु लहुगा चउरो त्ति, जमलपदं ति कालतवेहिं विसेसिज्जं ति जाव चरिमपदं । पच्छासंथुतो सोयवादी तस्स चउलहुगं तं कालतवेहिं दोहि वि गुरुगं भवति ॥५७७२॥

> थीसुं ते च्चिय गुरुगा, छल्लहुगा होंति अण्णतित्थीसु ।
> परउत्थिणि छग्गुरुगा, पुव्वावरसमणि सत्तऽट्ठ ॥५७७३॥

एयासु चेव इत्थीसु पुरपच्छअसोयसोयासु चउगुरुगा कालतवेहिं विसेसिता । एतेसु चेव अण्णतित्थियपुरिसेसु चउसु छल्लहुगा कालतवविसिट्ठा । एयासु चेव परतित्थिणीसु छग्गुरुगा । पुव्वसंथुयासु समणीसु छेदो, अवर त्ति पच्छसंथुयासु समणीसु अट्ठमं ति मूलं ॥५७७३॥

अयमपरः कल्पः –

> अहवा वि णालवद्धे, अणुव्वओवासए व चउलहुगा ।
> एयासुं च्चिय थीसुं, णालसम्मे य चउगुरुगा ॥५७७४॥

णालवद्धेण पुरिसेण अणालवद्धेण य गहिताणुव्वतो वा सावगेण, एतेसु दोसु वि चउलहुगा । एयासु च्चिय दोसु इत्थीसु णालवद्धे य अविरयसम्मदिट्ठिम्मि एतेसु वि चउगुरुगा ॥५७७४॥

> अणालदंसणित्थिसु, छल्लहु पुरिसे य दिट्ठआभट्ठे ।
> दिट्ठित्थि पुम अदिट्ठे, मेहुणि भोती य छग्गुरुगा ॥५७७५॥

इत्थीसु अणालवद्धासु अविरयसम्मदिट्ठीसु दिट्ठाभट्ठेसु पुरिसेसु एतेसु दोसु वि छल्लहुगा, इत्थीसु दिट्ठाभट्ठासु पुरिसेसु य अदिट्ठाभट्ठेसु [1]मेहुणि त्ति माउलपिउच्छसुयधूया, भोइय त्ति पुव्वभज्जा, एतेसु चउसु वि छग्गुरुगा ॥५७७५॥

> अद्दिट्ठाभट्ठासुं थीसुं संभोगसंजती छेदो ।
> अमणुण्णसंजतीए मूलं थीकालसंबंधो ॥५७७६॥

इत्थीसु अदिट्ठाभट्ठासु संभोइय-संजतीसु य एतासु दोसु वि छेदो, असंभोइय-संजतीसु मूलं, इत्थीहि सह भुंजमाणस्स [illegible] संबंधो, पायच्छित्तदोसा, दिट्ठे संकादिया य दोसा, [illegible] गहणेणो वा चउलहुं अधिगरणं वा ॥५७७६॥

> पुव्वं पच्छाकम्मे, एगतरदुगुंछ उड्डमुड्डाहो ।
> अण्णोण्णामयगहणं मद्दगहणे य अनियत्तं ॥५७७७॥

१ मेहुणि [illegible] (चूर्णी की टीका) ।

पुरेकम्मं-संजतेण सह भोयव्वं हत्थपादादिसुइं करेइ, संजतो भुंजिस्सइ त्ति अधिकतरं रंधावेति । पच्छाकम्मं "कोवि एसो" त्ति सचेलण्हाणं करेज्ज, पच्छित्तं वा पडिवज्जेज्ज, संजतेण वा भुत्ते अपहुप्पंते अण्णं पि रंधिज्जा, संजतो गिही वा एगतरो दुगुंछं करेज्ज, विलिगभावेण वा उड्डं करेज्जा, अण्णेण दिट्ठे उड्डाहो भवति, कासादिरोगो वा संकमेज्ज, अधिकतरखद्धेण वा अचियत्तं भवेज्ज ॥५७७७॥

एवं तु भुंजमाणं, तेहिं सद्धिं तु वण्णिता दोसा ।
परिवारितमज्झगते, भुज्जंते लहुग दोस इमे ॥५७७८॥

परिवारितो जति भुजइ तो चउलहुं ॥५७७८॥

इमे य दोसा –

परिवारियमज्झगते, भुंजंते सव्व होंति चउलहुगा ।
गिहिमत्तचडुगादिसु, कुरुकुयदोसा य उड्डाहो ॥५७७९॥

मज्झे ठितो जणस्स परिवारिओ जइ भुंजइ, अहवा—समंता परिवारिओ दोण्हं तिण्हं वा जइ मज्झगओ भुंजइ, सव्वप्पगारेहिं चउलहुं, गिहिभायणे य ण भुंजियव्वं तत्थ भुंजंतो आयाराओ भस्सइ ।

"[1]कंसेसु कंसपाएसु" – सिलोगो ।

मत्तगचडुगादिसु य भुंजंतस्स उड्डाहो भवति, कंजियदवेण य उड्डाहो, इयरेण आउक्कायविराहणा, बहुदवेण य कुरुकुयकरणेण उप्पिलावणादि दोसा, जम्हा एवमादिदोसा तम्हा एतेहिं सद्धि परिवेढिएण वा ण भुंजियव्वं ॥५७७९॥

बितियपद सेहसाहारणे य गेलण्ण रायदुट्ठे य ।
आहार तेण अद्धाण रोहए भयलंभे तत्थेव ॥५७८०॥

पुव्वसंथुतो पच्छासंथुतो वा पुव्वं एगभायणो आसी, से तस्स णेहेण आगतो जति ण भुंजति तो विपरिणमति, अतो सेहेण समं भुंजति, परिवेढितोवि तेसागएसु मा एतेसिं संका भविस्सति – "किं एस अप्पसागारियं समुद्दिसति त्ति अम्हे बाहिं करेंति" बाहिभावं गच्छे अतो परिवेढितो भुंजति । साहारणं वा लद्धं तं ण चेव भुंजियव्वं, अह कक्खडं ओमं ताहे घेत्तुं वीसुं भुंजति, अह दाया न देइ, ते वा न देंति, ताहे तेहिं चेव सद्धिं परिवुडो वा भुंजति ।

गिलाणो वा वेज्जस्स पुरतो समुद्दिसेज्जा, जयणाए कुरुकुयं करेज्जा ।

रायदुट्ठे रायपुरिसेहिं णिज्जंतो तेहिं परिवेढितो भुंजेज्जा ।

आहारतेणगेसु तेसिं पुरओ भुंजेज्ज ।

अद्धाणतेणसावयभया सत्थस्स मज्झे चेव भुंजति ।

रोहगे सव्वेसिं एक्का वसही होज्जा, बोहिगादिभए जणेण सह कंदराइसु अच्छति, तत्थ तेसिं पुरतो समुद्दिसेज्ज ।

ओमे कहिंचि सत्तागारे तत्थेव भुंजंताण लब्भति, भायणेसु ण लब्भति तत्थेव भुंजेज्जा ।

सागारिए एक्को परिवेसणं करे चडुगाइसु संतरं संभुंजति, णाउं दुविहदवेण कुरुकुयं करेइ सव्वेसु जहासंभवं । एसा जयणा ॥५७८०॥

---

१ दसवै० अ० ६ गा० ५१ ।

जे भिक्खू आयरिय-उवज्झायाणं सेज्जासंथारगं पाएणं संघट्टेत्ता हत्थेणं अणणुण्णवेत्ता धारयमाणो गच्छति, गच्छंतं वा सातिज्जइ॥सू०॥३८॥

आचार्य एव उपाध्याय आयरिय-उवज्झाओ भण्णति, केसिंचि आयरिओ केसिंचि आयरिय-उवज्झातो। अहवा – जहा आयरियस्स तहा उवज्झायस्स वि न संघट्टेज्जति। पातो सव्वाऽऽकरिसि त्ति भणितो। हत्थेण अणणुण्णवति – न हस्तेन स्पृष्ट्वा नमस्कारयति मिथ्यादुष्कृतं च न भाषते, तस्स चउलहुं।

सेज्जासंथारगहणातो इमे वि गहिया—

आहार उवहि देहं, गुरुणो संघट्टियाण पादेहिं।
जे भिक्खु ण खामेति, सो पावति आणमादीणि ॥५७८१॥

आहारे त्ति – जत्थ मत्तगे भत्तं धारितं, उवहि त्ति – कप्पादी, सेसं कंठं ॥५७८१॥

कहं पुण संघट्टेति?, भण्णति—

पविसंते णिक्खमंते, य चंकमंते व वावरंते वा।
चेट्ठणिवण्णाऽऽउंटण, पसारयंते व संघट्टे ॥५७८२॥

पंथे वा चंकमंतो विस्सामणादिवावारं करेंतो, सेसं कंठं ॥५७८२॥

चोदगाह—"जुत्तं आहारउवधिदेहस्स य असंघट्टणं। संथारगभूमी किं ण संघट्टिज्जति? को वा उव-करणातिसंघट्टिएसु दोसो?,

आचार्य आह –

कमरेणु अबहुमाणो, अविणय परितावणा य हत्थादी।
संथारगहणमत्रा, उच्छुवणस्सेव वति रक्खा ॥५७८३॥

कमेसु त्ति-पदेसु जा रेणू सा संथारगभूमीए परिसडति, उवकरणे वा लग्गति, अबहुमाणो अविणओ य संघट्टिए कओ, अण्णं च उच्छूरणे रक्खिताए वति रक्खति – ण भञ्जणं देति, तस्स रक्खणे उच्छुरणं रक्खितं चेव, एवं संथारगस्स असंघट्टणे गुरुस्स देहातिया दूरातो चेव परिहरिता। संजमायविराहणा य, आयरियं च पयमणंतेण संजमो विराहितो।

कहं? जेण तम्मि चेव णाणदंसणचरित्ताणि अधीणानि –

"[1]जे यावि मंदे त्ति गुरुं०" वृत्तं।

आयविराहणा – जाए देवयाए आयरिया परिग्गहिता सा विराहेज्ज, अण्णो वा कोइ आयरिय-पडिणीओ साहु उड्डेज्जा, तत्थ पसंगादी दोसा ॥५७८३॥

वितियपदमणप्पज्झे, ण खमे अविकोविते व अप्पज्झे।
खित्तादीसण्णं वा, खामे आउट्टिया वा वि ॥५७८४॥

अणप्पज्झो खेत्तो वा [illegible] न खामेति, आयरियं वा सिराहतिए [illegible] दिट्ठो वा होज्ज संघट्टेज्जा, पोग्गले वा "मं एए पोग्गलाणि परिसरंति" त्ति [illegible], एव [illegible] संघट्टेज्जा अप्पत्तं खामेइ ॥५७८४॥

१ दशवै० अ० ९ उ० १।

जे भिक्खू पमाणाइरित्तं वा गणणाइरित्तं वा उवहिं धरेइ,
धरेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥३९॥

गणणाए पमाणेण य, हीणतिरित्तं व जो धरेज्जाहि ।
ओहोवग्गह उवही, सो पावति आणमादीणि ॥५७८५॥

उवधी दुविहो – ओहोवही उवग्गहितो य । एक्केक्को तिविहो – जहण्णो मज्झिमो उक्कोसो य । तत्थ एक्केक्के गणणापमाणं पमाणपमाणं च, तं हीणं अधिकं वा जो धरेति । तत्थ ओहओ – सुत्तभणियं चउलहुं । विभागतो – अण्णअत्थेण उवधिणिप्फण्णं भारभयपरितावणादी दोसा, जम्हा एते दोसा तम्हा ण हीणातिरित्तं धरेयव्वं ॥५७८५॥

जिण-थेराणं गणणातिपमाणेण जाणणत्थं भण्णति –

दव्वप्पमाणगणणाइरेग परिकम्म विभूसणा य मुच्छा य ।
उवहिस्स य प्पमाणं, जिणथेर अधक्कमं वोच्छं ॥५७८६॥

जिणथेराणं इमं पायणिज्जोगपमाणं –

पत्तं पत्ताबंधो पायट्ठवणं च पायकेसरिया ।
पडलाइ रयत्ताणं, च गुच्छओ पायनिज्जोगो ॥५७८७॥ कंठ्या

इमं जिणकप्पियाणं सरीरोवहिप्पमाणं –

तिण्णेव य पच्छागा, रयहरणं चेव होइ मुहपोत्ती ।
एसो दुवालस विहो, उवही जिणकप्पियाणं तु ॥५७८८॥ कंठ्या

इमं जहण्णमज्झिमुक्कोसाण कप्पाण य प्पमाणं–

चत्तारि उ उक्कोसा, मज्झिमगा जहण्णगा वि चत्तारि ।
कप्पाणं तु पमाणं, संडासो दो य रयणीओ ॥५७८९॥

संडासो त्ति कुडंडो, रयणि त्ति दो हत्था, एयं दीहत्तणेण, वित्थरेण दिवड्ढं रयणि । अहवा– जिणकप्पियाणं कप्पपरिमाणं दीहत्तणेण संडासो वित्थारेण दोण्णि रयणीओ, एस आदेसो वक्खमाणो ॥५७८९॥

इमं पत्तगबंधस्स पमाणप्पमाणं–

पत्ताबंधपमाणं, भाणपमाणेण होइ कायव्वं ।
जह गंठिम्मि कयम्मी, कोणा चउरंगुला होंति ॥५७९०॥

जं च समचउरंसं तस्स जा बाहिरतो परिही तेण भायणप्पमाणेण पत्तगबंधो कायव्वो, जं पुण विसमं तस्स जा परिही महंततरी तेणप्पमाणेण पत्तगबंधो कायव्वो, अहवा – गंठीए कयाए जहा पत्तगबंधकण्णा चउरंगुला भवंति – गंठीए अतिरित्ता भवंतीत्यर्थः ॥५७९०॥

इमं रयताणस्स पमाणप्पमाणं –

रयताणपमाणं भाणपमाणेण होइ निप्फण्णं ।
पायाहिणं करंतं, मज्झे चउरंगुलं कमइ ॥५७९१॥

कप्पा कप्पंति। "पेल्लणं" ति अवक्कमणं "दुहओ" त्ति – सिरपादंतेसु दोसु अ पासेसु एवं तस्स सीतं ण भवति। सेहस्स वि अणुच्चिए सुवणविहिम्मि एवं चेव कप्पाण पमाणं कज्जति। अवि य पाणदया कया भवति, न मंडूकप्लुत्या कीडाती पविसंतीति ॥५७९५॥

इमं पडलाण गणणप्पमाणं –

तिविधम्मि कालछेदे, तिविधा पडलाओ होंति पादस्स।
गिम्ह-सिसिर-वासासुं, उक्कोसा मज्झिम जहण्णा ॥५७९६॥

जे दढा ते उक्कोसा, दढदुब्बला मज्झिमा, दुब्बला जहण्णा, सेसं कंठं।

गिम्हासु तिण्णि पडला, चउरो हेमंति पंच वासासु।
उक्कोसगा उ एए, एत्तो पुण मज्झिमे वोच्छं ॥५७९७॥

गिम्हासु चउ पडला, पंच य हेमंति छच्च वासासु।
एए खलु मज्झिमा य, एत्तो उ जहन्नओ वुच्छं ॥५७९८॥

गिम्हासु पंच पडला, छप्पुण हेमंति सत्त वासासु।
तिविहंमि कालछेए, पायावरणा भवे पडला ॥५७९९॥

तिन्नि वि गाहाओ कंठाओ कायव्वाओ।

इमं रयोहरणं –

घणं मूले थिरं मज्झे, अग्गे मद्दवजुत्तयं।
एगंगियं अझुसिरं, पोरायामं तिपासियं ॥५८००॥

हत्थग्गहपदेसे मूल भण्णति, तत्थ घणं वेढिज्जति, मज्झंति रयहरणपट्टगो सो य दढो, गब्भगो वा मज्झंसो दढो, अग्गा दसाओ ताओ मद्दवाओ कायव्वाओ, एगंगियं दुगादिखंडं न भवति, अज्झुसिरं ति रोमबहुलं न भवति, वेढियं अगुट्ठपव्वमेत्तं तिभागे तज्जायदोरेण वद्धं तिपासियं ॥५८००॥

भण्णति –

अप्पोल्लं मिउपम्हं, पडिपुण्णं हत्थपूरिमं।
तिपरियल्लमणिस्सिट्ठं, रयहरणं धारए एगं ॥५८०१॥

अप्पोल्लं-अज्झुसिरमित्यर्थः, मृदुदसं, पडिपुण्णं प्रमाणतः वत्तीसंगुलं सह णिसेज्जाए, हत्थपूरिम-णिसेज्जाए तिपरियलं वेढिज्जति, "अणिसट्ठं" ति उग्गहा अफिट्टं घरिज्जति ॥५८०१॥

उण्णियं उट्टियं वावि, कंबलं पायपुच्छणं।
रयणिप्पमाणमित्तं, कुज्जा पोरपरिग्गहं ॥५८०२॥

उण्णिय-कंबलं उट्टियकंबलं वा पायपुंछणं भवति। रयणि त्ति हत्थो, तप्पमाणो पट्टगो ॥५८०२॥

संथारुत्तरपट्टो, अड्ढाइज्जा य आयया हत्था ।
दोण्हंपि य वित्थारो, हत्थो चउरंगुलं चेव ॥५८०३॥

उण्णिओ संथारपट्टगो, खोमिओ तस्स णो उत्तरपट्टगो, तेसं कंठं ॥५८०३॥

इमो चोलपट्टगो –

दुगुणो चउग्गुणो वा, हत्थो चउरंस चोलपट्टो य ।
थेरजुवाणाणट्ठा, सण्हे थूलंमि य विभासा ॥५८०४॥

दढो जो सो दीहत्तणेण दो हत्था वित्थारेण हत्थो सो दुगुणो कतो समचउरंसो भवति, जो दढ-दुब्बलो सो दीहत्तणेण चउरो हत्था, सो वि चउगुणो कओ हत्थमेत्तो चउरंसो भवति, एगगुणं ति समचउरंसो, उण्णिया एगा णिसिज्जा पमाणप्पमाणेन हत्थप्रमाणा तप्पमाणा चेव तस्स खंधो पच्छादगा खोमिया णिसेज्जा ॥५८०४॥

चउरंगुलं वितत्थी, एयं मुहणंतगस्स उ पमाणं ।
बीओवि य आएसो, मुहप्पमाणेण णिप्फन्नं ॥५८०५॥

वितियप्पमाणं विकण्णकोणगहियं णासिगमुहं पच्छादेति जहा किकाडियाए गंठी भवति ॥५८०५॥

गोच्छयपादट्ठवणं, पडिलेहणिया य होइ णायव्वा ।
तिण्हं पि उ प्पमाणं, वितत्थि चउरंगुलं चेव ॥५८०६॥ कंठ्या

जो वि दुवत्थ तिवत्थो, एगेण अचेलतो व संथरती ।
ण हु ते खिंसंति परं, सव्वेण वि तिण्णि घेत्तव्वा ॥५८०७॥

जिणकप्पियाण गहणं, थेरकप्पियाण परिभोगं प्रति, जो एगेणं संथरति सो एगं गेण्हति परिभुंजति वा । जो दोहिं संथरति सो दो गेण्हति परिभुंजति वा, एवं ततियो वि ।

जिणकप्पियो वा अचेलो जो संथरति सो अचेलो चेव अच्छति, एस अभिग्गहविसेसो भणियो । एतेण अभिग्गहविसेसट्ठितेण सपिडग्गहवत्थो ण हीलियव्वो ।

किं कारणं ? जम्हा जिणाण एसा आणा, सव्वेण वि तिण्णि कप्पा घेत्तव्वा ।
थेरकप्पियाणं जइ एगाइएण संथरति तहावि तिण्णि कप्पा णियमा घेत्तव्वा ॥५८०७॥

तस्साण इमो गुणो –

अप्पा असंथरंतो, णिवारिओ होति तिहि उ वत्थेहिं ।
गिण्हति गुरू विदिण्णे पगासपडिलेहणे सत्त ॥५८०८॥

सीतादिणा असंथरंतस्स सं असंथरणं अप्पपरिभोगेण णिवारियं भवति । जे य सत्त दूसा अपरिभुज्जमाणा गेण्हति, पगासपडिलेहण ति पगासपडिलेहे, गुरुहिं विदिण्णे सत्त गेण्हति ॥५८०८॥

इमं उक्कोसगो, मज्झिमो य जहण्णो –

तिण्णि कसिणे जहण्णे, पंच य दढदुब्बला य गेण्हेज्जा ।
सत्त य परिजुण्णाइं, एयं उक्कोसगं गहणं ॥५८०९॥

कसिग त्ति वण्णतो छुत्तप्पमाणा घणमसिणा, जेहिं सविया अंतरितो न दीसइ तारिसा, जहण्णेण तिण्णि गेण्हति । पंच दड्डुब्बले, परिजुण्णे सत्ता गेण्हइ ॥५८०९॥

भिण्णं गणणाजुत्तं, पमाण-इंगाल-धूमपरिसुद्धं ।
उवहिं धारए भिक्खू, जो गणचिंतं न चिंतेइ ॥५८१०॥

भिण्णं त्ति अदसं सगलं न भवति, गणणप्पमाणेण पमाणप्पमाणेण य जुत्तं गेण्हइ । इंगालो त्ति रागो, धूमो त्ति दोसो, तेहिं परिसुद्धं – न तेहिं परिभुंजतीत्यर्थः ॥५८१०॥ जो सामण्णभिक्खू तस्सेयं वत्थप्पमाणं भणिय ।

जो पुण गणचिंतगो गणावच्छेदगादि तस्सिमं पमाणं –

गणचिंतगस्स एत्तो, उक्कोसो मज्झिमो जहण्णो य ।
सव्वो वि होइ उवही, उवग्गहकरो महा (ज) णस्स ॥५८११॥

गणचिंतगो गणावच्छेइगो तस्स जहण्णमज्झिमुक्कोसो सव्वो वि ओहितो उवग्गहितो वा, महाजणो गच्छो ॥५८११॥

आलंवणे विसुद्धे, दुगुणो तिगुणो चउगुणो वा वि ।
सव्वो वि होइ उवही, उवग्गहकरो महाणस्स ॥५८१२॥

आलंवति जं तं आलंवणं, 'त' दुविवं – दव्वे रज्जुमादी, भावे णाणादी । इह पुण भावे दुल्लभ-वत्थादिदेसे तत्थ जो गणचितगो सो दुगुणं पडोयारं तिगुणं वा चउगुणं वा, अहवा – जो अतिरित्तो ओहितो उवग्गहितो सव्वो गणचिंतगस्स परिग्गहो भवति, महाजणो त्ति गच्छो तस्स आवतिकाले उवग्गहकरो भविस्सइ ॥५८१२॥ गणणप्पमाणेत्ति गयं ।

इदाणिं अइरेगहीणे त्ति –

पेहा-ऽपेहकता दोसा, भारो अहिकरणमेव अतिरित्ते ।
एते हवंति दोसा, कज्जविवत्ती य हीणम्मि ॥५८१३॥

अतिरेगं पडिलेहंतस्स सुत्तादिपलिमंथो, अपेहंतस्स उवहिणिप्फण्णं, अपरिभोगे अनुपभोगत्वात् अधिकरणं भवति, हीणे पुण कज्जविवत्ति विणासो भवति ॥५८१३॥ हीणाइरित्ते त्ति गयं ।

इदाणिं [1]परिकम्मणे त्ति –

परिकम्मणे चउभंगो, कारण विही बितिओ कारणे अविही ।
णिक्कारणम्मि य विही, चउत्थो निक्कारणे अविही ॥५८१४॥
कारण अणुण्ण विहिणा, सुद्धो सेसेसु मासिया तिण्णि ।
तव-कालेहि विसिट्ठा, अंते गुरुगा य दोहिं पि ॥५८१५॥

सुद्धो कारणे विहीए एस पढमभंगो, एत्थ अणुण्णे त्ति परिकम्मे त्ति सुद्धो त्ति ण पच्छित्तं । सेसेसु तिसु भंगेसु पत्तेयं मासलहुं । बितियभंगे कालगुरुं । ततियभंगे तवगुरुं । अंतिल्लो चउत्थभंगो तत्थ तवकालेहिं

1 गा० ५७८६ ।

इदाणिं [1]'मुच्छ' त्ति –

महद्धणे अप्पधणे व वत्थे, मुच्छिज्जती जो अविवित्तभावो ।
सइं पि नो भुंजइ मा हु झिज्झे, वारेति वण्णं कसिणा दुगा दो ॥५८२०॥

बहुमुल्लं अप्पमोल्लं वा अविवित्तभावो त्ति अविसुद्धभावो, अविवित्तो – लोहिल्लमित्यर्थः । तं पहाणवत्थं ण सयं भुंजति, जो अण्णं वारेइ परिभुंजंतं तस्स पच्छित्तं, "कसिणा दुगा दो" त्ति, कसिण त्ति संपुण्णा, दुगा दो चउरो – चउगुरुमित्यर्थः ॥५८२०॥

वत्थे इमाणि मुच्छाकारणाणि –

देसिल्लगं पम्हजयं मणुण्णं, चिरायणं दाइ सिणेहतो वा ।
लब्भं च अण्णं पि इमप्पभावा, मुच्छिज्जती एव भिसं कुसत्तो ॥५८२१॥

देसिल्लगं जहा पोंड्रवर्धनकं, पम्हजुगं जहा पूरवुढपावारगो, सण्हं थूलं सदेस-परदेसं वा, मणस्स जं रुच्चइ तं मणुण्णं, चिरायणं आयरियपरंपरागयं, दाइंति विकारार्थे जेण वा तं दिण्णं तस्स सिणेहतो ण परिभुंजति, इमेण वा अच्छंतेण एयप्पभावाओ अण्णं पि लब्भामो एवं मुच्छाए ण परिभुंजति, एवं त्ति एवं "भिसं" अत्यर्थं कुत्सितं सत्त्वं यस्य भवति स कुसत्वो अल्पसत्व इत्यर्थः, एवं भिसं कुसत्वो लोभं करोतीत्यर्थः ॥५८२१॥ वत्थे त्ति गतं ।

इदाणिं पायं भणामि ; तस्स इमाणि दाराणि –

दव्वप्पमाण[1]अतिरेग[2] हीणदोसा[3] तहेव अववादे[4] ।
लक्खणमलक्खणं[5] तिविह[6] उवहि वोच्चत्थ[7] आणादी ॥५८२२॥
को[8] पोरिसीए[9] काले[10], आकर[11] चाउल[12] जहण्ण[13] जयणाए ।
चोदग[14] असती[15] असिव, प्पमाणउवओग[16] छेदण[17] मुहे[18] य[19] ॥५८२३॥
पमाणाइरेगधरणे, चउरो मासा हवंति उग्घाया ।
आणादिणो य दोसा, विराहणा संजमा-ऽऽयाए ॥५८२४॥

द्रव्यपात्रं, तस्य दुविधं प्रमाणं – गणणप्पमाणं पमाणप्पमाणं च । दुविहस्स वि पमाणस्स अतिरेगधरणे चउलहुगा । सेसं कंठ्यं ।

गणणाते पमाणेण व, गणणाते समत्तओ पडिग्गहओ ।
पलिमंथ भरुडुंडुग, अतिप्पमाणे इमे दोसा ॥५८२५॥

दुविहं पमाणं, तत्थ गणणप्पमाणेण दो पाता – पडिग्गहो मत्तगो य । अह एत्तो तिगादिअतिरित्तं धरेति तो परिकम्मण-रंगण-पडिलेहणादिसु सुत्तत्थपलिमंथो अद्धाणे वहतो भारो उड्डंकरच जनहास्यो भवति – 'अहो ! भारवाहिता इमे' ॥५८२५॥

---

1. गा० ५७८६ ।

[1]दुप्पमाणाइरित्ते वि इमे दोसा –

> भारेण वेयणाते, अभिहणमादी ण पेहए दोसा ।
> रीयादि संजमम्मि य, छक्काया भाणभेदम्मि ॥५८२६॥

भारो भवति, भारक्कंतस्स य वेयणा भवति, वेयणाए य अक्किन्नो गोणादियमाई ण पस्सति, ते अभिहणेज्जा, वडसालवम्माणुमाइ वा न पेहइ, इरिउवउत्तो वा न भवइ, अणुवउत्तो वा छक्काए विराहेज्ज, अणुवउत्तो वा भायणभेयं करेज्जा । ॥५८२६॥

इमे [2]अइरेगदोसा । "अइरेगं" ति पमाणप्पमाणातो –

> भाणऽप्पमाणगहणे, भुंजण गेलण्णऽभुंज उज्झिमिता ।
> एसणपेल्लण भेदो, हाणि अडंते दुविध दोसा ॥५८२७॥

भाजनं अप्रमाणं – भाणऽप्पमाणंति तं, अतिपुहुं गेण्हति । तम्मि भरिए जइ सव्वं भुंजति तो हा(तो)देज्ज वा मारेज्ज वा गेलन्नं वा कुज्जा, अह ण भुंजति तो उज्झियमिता पडिकरणादी दोसा । भायणं भरेमि त्ति अनवमाणं एसणं पेल्लित्ता भरेति, भरिए अतिभारेण पच्चुप्पिडिता भवति, भायणेण विना पच्छा कज्जपरिहाणी, भायणट्ठा अडंतस्स भायणभूमीजंतस्स दुविह त्ति – आयसंजमविराहणा दोसा भवंति ॥५८२७॥

[3]हीणदोस त्ति अस्य व्याख्या –

> हीणप्पमाणधरणे, चउरो मासा हवंति उग्धाता ।
> आणादिया य दोसा, विराहणा संजमा-ऽऽयाए ॥५८२८॥

जं पडिग्गहगमत्तगप्पमाणं भणियं ततो जति हीणं धरेति ततो पडिग्गहगे चउलहुं, मत्तगे मासलहुं ॥५८२८॥

किं चान्यत् –

> ऊणेण ण पूरिस्सं, आकंठा तेण गेण्हती उभयं ।
> मा लेवकडं ति ततो, तत्थुवओगं न भूमीए ॥५८२९॥

ऊणे त्ति अप्पमाणो ऊणेन भरिएण वि ण पूरेस्सामि त्ति संथरिस्सामि त्ति ताहे आकंठभरिय करेति, उभयं ति कूरं कुसणं च, अहवा – भत्तं पाणं वा । तम्मि अतिभरिए मा पगलंतो लेवाडिस्सति त्ति – तदुवओगेण भूमीए उवओगं न करेति ॥५८२९॥

अणुवउत्तस्स य इमे दोसा –

> खाणू कंटग विसमे, अभिहणमादी य पेहती दोसा ।
> रीया पगलित तेणग, भायणभेदे य छक्काया ॥५८३०॥

अणुवउत्तो खाणुगा [illegible] [illegible] [illegible], [illegible] [illegible] [illegible], [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] । [illegible] [illegible] । [illegible] [illegible] [illegible] ॥५८३०॥

१ गा० ५८१७ [illegible] । २ गा० ५८१७ । ३ गा० ५८१७ ।

अहवा इमे दोसा —

[1]हीणप्पमाणधरणे, चउरो मासा हवंति उग्घाया ।
आणादिया य दोसा, विराहणा संजमायाए ॥५८३१॥ कंठ्या

गुरुमाइयाण अदाणे इमं पच्छित्तं —

गुरु पाहुणए दुब्बल, बाले वुड्ढे गिलाण सेहे य ।
लाभा-ऽऽलाभऽद्धाणे, अणुकंपा लाभवोच्छेदो ॥५८३२॥

गुरुगा य गुरु-गिलाणे, पाहुण-खमए य चउलहू होंति ।
सेहम्मि य मासगुरू, दुब्बल जुव (य) ले य मासलहुं ॥५८३३॥ कंठ्या

गुरुमादियाण इमा विभासा —

अप्प-परपरिच्चाओ, गुरुमादीण तु अदेंत-देंतस्स ।
अपरिच्छिते य दोसा, वोच्छेदो णिज्जराऽलाभो ॥५८३४॥

डहरभायणभरियं गुरुमादियाण जति देति तो अप्पा चत्तो, अह ण देति तो गुरुमातिया परिचत्ता । दुब्बलो सभावतो रोगतो वा न तरति हिंडिउं तस्स दायव्वं ।

"[2]लाभाऽऽलोभ" त्ति अस्य व्याख्या — "अपरिच्छिते य दोसा", जस्स हीणप्पमाणं भायणं सो खेत्तपडिलेहगो पयट्टितो. स तेण खुड्डलगेण भाणेण किह लाभं परिक्खउ, ताहे जे अपरिक्खित्ते खेत्ते दोसा, ते मंदपरिक्खिए वि गच्छस्स य आगयस्स अलभंते जं असंथरणं जा य परिहाणी सा सव्वा खुड्डलभाणग्गाहिणो भवति, अद्धाणे वा पवण्णाण संखडी होज्जा तत्थ पज्जत्तियलाभे लब्भमाणे कहिं गेण्हउ ? तं भायणं थेवेणं चेव भरियं ।

अहवा — "[3]अणुकंपलाभवोच्छेतो" त्ति — छिण्णद्धाणे वा कोइ अणुकंपाए वा जं जं अडिज्जति तं भायणं भरेति, तत्थ गच्छसाधारणकरं भायणं उड्डेयव्वं, हीणभायणे पुण अडिज्जंते लाभस्स वोच्छेदो णिज्जराए य अलाभो भवति ।

अहवा — सट्ठाणेऽवि घयादिदव्वे लब्भमाणे खुड्डलभायणेण लाभवोच्छेदं करेज्ज निज्जराए वा अलाभं पावेज्ज ॥५८३४॥

इमे य डहरभायणे दोसा —

लेवकडे वोसट्ठे, सुक्के लग्गेज्ज कोडिए सिहरे ।
एते हवंति दोसा, डहरे भाणे य उड्डाहो ॥५८३५॥

तेण अतीव पाहुडियं ताहे तेण वोसट्ठं, तेण अतिपलोट्टमाणेण लेवाडिज्जति । अहवा — मा थेवं भत्तं देहीति, ताहे सुक्कस्स चप्पाचप्पं भरेउ, तं च सुक्कं भत्तं लग्गेज्ज अजिण्णं हवेज्ज । कोडियं ति चप्पियं चंपिज्जंतं वा भजेज्ज, सुक्कभत्तस्स वा सिहरं करेंतो भरेज्ज, तं जणो दट्टुं भणति — अहो ! असंतुट्ठा । पच्छद्धं कंठं ॥५८३५॥

---

१ गाथेयमधिका प्रतिभाति । २ गा० ५८३२ । ३ गा० ५८३२ ।

धुवणाऽधुवणे दोसा, वोसट्टंते य काय आतुमिणे।
कुच्छे लग्गाऽजीरग कोडित्त सिह भेद उग्गाहो ॥५८३६॥

वोसट्टंतेण जं सेदादियं तं जति धोवति तो उप्लावणादी दोसा, अह ण धोवति तो रातीभोयणभंगो। अहवा – वोसट्टे पगलंते पुढवादी छक्कायविराधणा।

अहवा – वोसट्टंते उत्तिगेण दट्ठे आयविराहणा, पच्छद्धं गतार्थं। पत्तिट्टंते उत्तिगमग्गेणे [illegible] ण वहि फोड त्ति उग्गाहो, जम्हा एवमादी दोसा तम्हा जुत्तपमाणं पादं घेत्तव्वं ॥५८३६॥

केरिसं पुण तं जुत्तपमाणं ?, अत उच्यते –

तिण्णि विहत्थी चउरंगुलं च भाण मज्झिमप्पमाणं।
एत्तो हीण जहण्णं, अतिरेगतरं तु उक्कोसं ॥५८३७॥

उक्कोसतिसामासे, दुगाउअद्धाणमागओ साहू।
चउरंगुलऊणं भायणं तु पज्जत्तियं हेट्ठा ॥५८३८॥

एयं चेव पमाणं, सविसेसतरं अणुग्गहपवत्तं।
कंतारे दुब्भिक्खे, रोहगमादीसु भतियव्वं ॥५८३९॥

एयाओ जहा पज्जुद्देसगे तहेव ॥५८३९॥

"[1]अववाय" त्ति अस्य व्याख्या –

अण्णाणे[1] गारवे[2] लुद्धे[3], असंपत्ती[4] य जाणए[5]।
लहुओ लहुया गुरुगा, चउत्थ सुद्धे उ जाणओ ॥५८४०॥

पच्छा अववायं भणीहामि, जइ इमेहिं धरेति तो इमं पच्छित्तं पच्छद्धगहियं जाणंत – अण्णाणेण मासलहुं, गारवेण चउलहुं, लुद्धस्स चउगुरुगा। असंपत्ती जाणगो दो वि सुद्धा ॥५८४०॥

तत्थ अण्णाणस्स वक्खाणं –

हीणा-ऽतिरेगदोसे, अयाणमाणो उ धरति हीण-ऽहियं।
पगतीए थोवभोई, गति लाभे वा करेतीमं ॥५८४१॥

पुव्वद्धं कंठं। इमं गारवस्स वक्खाणं – पगतीए थोवाहारो, तत्थ [illegible] थोवभोई। अहवा – लाभो वि [illegible] करेति, अहं वि [illegible] ॥५८४१॥

इच्छागनिक्खंतो वा, आयरिओ वा वि एस दाणं।
अनिगारवेण ओमं, पानिप्पमाणं इमेहिं तु ॥५८४२॥

[illegible]

[illegible] ॥५८४२॥

1 गाथा ५८२८।

अतिप्पमाणं इमेण गारवेण धरेइ –

अणिगूहियबलविरिओ, वेयावच्चं करेइ अह समणो ।
बाहुबलं च अती से, पसंसकामी महल्लेणं ॥५८४३॥

महल्लभायणेण वेयावच्च करेइ – एवं मे साधू पसंसिस्संति, अहवा – साहुजणो वा भणिस्सइ – "एयस्स विसिट्ठं बाहुबलं जेण महल्लेण भायणेण भिक्खं हिंडइ" ॥५८४३॥

[1]लुद्धस्स व्याख्या –

अंतं न होइ देयं, थोवासी एस देह से सुद्धं ।
उक्कोसस्स व लभे, कहि घेच्छ महल्ल लोभेणं ॥५८४४॥

खुडलगभायणे गहिए घरंगणे वि ठितं दट्ठुं घरसामी भणति – "एयस्स अंतपंतभत्तं ण देयं" ।

अहवा भणेज्ज – "एस थोवासी, जेण एस खुडुलएणं गेण्हति" ।

अहवा भणेज्ज – "एयस्स सुद्धं देह" । "सुद्धं" ति उक्कोसं, [2]शाल्योदनपढमदोच्चंगादी सुद्धो चेव ।

महल्लं इमेण कारणेण गेण्हति – "उक्कोसं लब्भमाणं पभूतं सामण्णं वा समुद्दाणियं लब्भमाणं कत्थ गेण्हिस्सामि" त्ति एवं लुद्धत्तणेण महल्लं गेण्हति ॥५८४४॥

"[3]असंपत्ति" दारं चउत्थं, तस्स इमं वक्खाणं –

जुत्तपमाणस्सऽसती, हिण-ऽतिरित्तं चउत्थो धारेति ।
लक्खणजुतहीण-ऽहियं, नंदी गच्छट्ठता चरिमो ॥५८४५॥

पुव्वद्धं कंठं । "[4]जाणगे" त्ति अस्य व्याख्या – लक्खणपच्छद्धं, जं लक्खणजुत्तं तं जाणगो हीणं वा अहियं वा धरेति, णाणादिगच्छवृद्धिनिमित्तं ।

अहवा – गच्छस्स उवग्गहकरं णंदीभायणं, "चरिमो" त्ति जाणगो सो धरेति न दोसो ॥५८४५॥ अववाए त्ति गयं ।

इदाणि "[5]लक्खणमलक्खणे" त्ति दारं –

वट्टं समचउरंसं, होति थिरं थावरं च वण्णं च ।
हुंडं वायाइद्धं, भिन्नं च अधारणिज्जाइं ॥५८४६॥

वृत्ताकृति उच्छिन्नकुक्षिपरिधितुल्यं चतुरंसं दृढं स्थिरं स्थावरं अप्रतिहारिकं एतेहिं गुणेहिं जुत्तं वण्णं । अहवा – अण्णेहिं वि वण्णादिगुणेहिं जं जुत्तं तं वण्णं, एयं लक्खणजुत्तं ।

इमं अलक्खणं – विसमसंठियं हुंडं अणिप्फण्णं तुप्पडयं वाताइद्धं जं च भिण्णं, एते अलक्खणा ॥५८४६॥

संठियम्मि भवे लाभो, पतिट्ठा सुपतिट्ठिते ।
निव्वणे कित्तिमारोग्गं, वण्णड्ढे णाणसंपया ॥५८४७॥

---

१ गा० ५८४० द्वा० ३ । २ व्यञ्जनादि । ३ गा० ५८४० द्वा० ४ । ४ गा० ५८४० द्वा० ५ । ५ गा० ५८२० द्वा० ५ ।

बितियदारगाहा आदिद्दारे [1]"को"त्ति अस्य व्याख्या –

को गेण्हति गीयत्थो, असतीए पादकप्पिओ जो उ ।
उस्सग्ग-ऽववातेहिं, कहिज्जती पादगहणं से ॥५८५४॥

को पादं गेण्हति ? जो गीयत्थो सो गेण्हति । गीयत्थस्स असति जेण पादेसणा सुत्तत्थो गहिओ सो पायकप्पिओ गेण्हति । तस्स वि असति जो मेहावी तस्स पादेसणा उस्सग्गववाएहिं कहिज्जति, सो वा गेण्हति ॥५८५४॥

इदाणि "[2]पोरिसि" त्ति –

हुंडादि एगबंधे, सुत्तत्थे करेंतो मग्गणं कुज्जा ।
दुग-तिगबंधे सुत्तं, तिण्हुवरिं दो वि वज्जेज्जा ॥५८५५॥

जं हुंडं आदिसद्दातो दुप्पुतं खीलसंठियं सबलं एगबंधं च, एताणि परिभुंजंतो सुत्तत्थं करेंतो अहाकडादि मग्गेज्ज । जइ पुण दुगबंधगं तिगबंधगं वा पादं से, तो सुत्तपोरिसिं काउं अत्थपोरिसि वज्जेत्ता मग्गति ।

अह पादं से तिगबंधगाओ उवरिं चउसु ठाणेसु बद्धं, एरिसे पादे दो वि सुत्तत्थपोरिसीओ वज्जेत्ता आदिच्चुदयाओ चेव आढवेत्ता मग्गति ॥५८५५॥ पोरिसि त्ति गयं ।

इदाणि "काले" त्ति दारं ।

अहाकडादियाणं कं केत्तियं मग्गियव्वं ?

चत्तारि अहाकडए, दो मासा हुंति अप्पपरिकम्मे ।
तेण परिमग्गिऊणं, असती गहणं सपरिकम्मे ॥५८५६॥

चत्तारि मासा अहाकडं मग्गियव्वं, चउहिं मासेहिं पुण्णेहिं तस्स अलाभे अण्णे दो मासा अप्पपरिकम्मं मग्गति, तेण परिमग्गिऊण त्ति अहाकडकालाओ परतः अप्पपरिकम्मं एत्तियं कालं मग्गति, एते छम्मासे बितियस्स वि अलंभे ताहे सपरिकम्मं मग्गियव्वं ॥५८५६॥

केच्चिरं कालं ?, अत उच्यते –

पणयालीसं दिवसे, मग्गित्ता जा ण लब्भते ततियं ।
तेण परेण ण गेण्हति, मा पक्खेणं रज्जेज्जा ॥५८५७॥

पणयालीसं दिवसे बहुपरिकम्मं गेण्हति, ततो परं न गेण्हति, जेण पण्णरसेहिं दिवसेहिं वरिसाकालो भविस्सति । मा तेण पक्खकालेण परिकम्मणं रंगणं रोहवणं च न परिवारिज्जति ॥५८५७॥ काले त्ति गतं ।

इदाणि "[3]आकरे" त्ति । अहाकडं कहिं मग्गियव्वं ?, अत उच्यते –

कुत्तीय-सिद्ध-णिण्हग,-पवज्जुवासादिसु अहाकडयं ।
कुत्तियवज्जं बितियं, आगरमादीसु वा दो वि ॥५८५८॥

---

१ गा० ५८२१ द्वा० ९ । २ गा० ५८२१ द्वा० १० । ३ गा० ५८२१ द्वा० ११ ।

[1]सेसंति अस्य व्याख्या –

सीतोदगभावितं अविगते तु सीतोदएण गेण्हंति ।
मज्ज-वस-तेल्ल-सप्पी,-महुमातीभावियं भइतं ॥५८६३॥

परिणए पुण सीतोदगे गेण्हति, मज्जादिएसु जति निक्खारेउं सक्कति तो घेप्पइ, इयरहा न घेप्पइ । एस भयणा ।

अहवा –.वियडभावितं जत्थ दुगुंछियं तत्थ न घेप्पइ, अदुगुंछिए घेप्पति॥५८६३॥

ओभासणा य पुच्छा, दिट्ठे रिक्के मुहे वहंते य ।
संसट्ठे णिक्खित्ते, सुक्खे य पगास दट्ठूणं ॥५८६४॥

ओभासण त्ति जहा वत्थस्स "कस्सेयं, किं वासी, किं वा भवस्सति, कत्थ वा आसी ?"–एवं पुच्छा । सुद्धे गहणं ।

पुणो सीसो पुच्छइ – "दिट्ठादिपदे" ।

आयरिओ आह – अदिट्ठातो दिट्ठं खेमतरं ।

कहं ?, उच्यते – अदिट्ठे देये किं काए संघट्टेंतो गेण्हति ण वा ? अहवा – कायाणं उवरि ठवियल्लयं होज्जा, अहवा – बीजाती छूढा होज्ज, दिट्ठे पुण सव्वं दीसइ, एएण कारणेण दिट्ठं वरं, णो अदिट्ठं ।

"किं रिक्कं, अणरिक्कं नं घेप्पतु ?" जं दहिखीरादीहिं अणरिक्कं तं घेप्पइ ।

इयरं आउक्कायादीहिं अणरिक्कं तत्थ कायवहो होज्ज, रिक्के वि कुंथुमाती भवंति ।

' किं कयमुहं घेप्पइ अकयमुहं ?" कय मुहं घेप्पइ ।

"वहंतयं, अवहंतयं ?"

जं तक्कमादि फासुएणं वहंतयं तं घेप्पति, णावि जं आउक्कायादीहिं ।

"किं संसट्ठं, असंसट्ठं गेण्हउ" ? जं फासुदव्वेणं संसट्ठं तं घेप्पइ ।

"उक्खित्तं, णिक्खित्तं" ? एत्थ उक्खित्तं कप्पति ।

"सुक्कं, उल्लं" ? फासुएण उल्लं पसत्थं ।

"पगासमुहं, अपगासमुहं" ? पगासमुहं कप्पति ।

अहवा – "पगासट्ठियं अप्पगासट्ठियं" ? पगासट्ठियं कप्पति । "दट्ठूणं" ति जदा सुद्धं तदा चक्खुणा पडिलेहेति, जदि न पडिलेहेइ ताहे तसबीयादी होज्ज ॥५८६४॥

जइ तसबीयादी होज्ज, ताहे इमं पुणो जयणं करेइ –

ओमंथ पाणमादी, पुच्छा मूलगुण-उत्तरगुणेसुं ।
तिट्ठाणे तिक्खुत्तो, सुद्धो ससणिद्धमादीसु ॥५८६५॥

"ओमत्थ" त्ति पयस्स विभासा –

दाहिणकरेण कण्णे, घेत्तुत्ताणे य वामसणिबंधे ।
वट्टेति तिण्णि वारा, तिण्णि तले तिण्णि भूमीए ॥५८६६॥

---

१ गा० ५८६२ ।

आयुरेहमेत्तेसु वीसं राइंदिया, अंगुट्ठपुव्वमेत्तेसु पणुवीसं, पसतीए मासलहुं, चउसु पसतीसु चउलहुं ॥५८७०॥

एसेव गमो णियमा, थूलेसु वि वितियपव्वमारद्धो ।
अंजलि चउक्क लहुगा, ते च्चिय गुरुगा अणंतेसु ॥५८७१॥

मासमादिसु थूलेसु वितियपव्वमेत्तेसु पणगं, अंगुलिमूले दस, आयुरेहाए पण्णरस, अंगुट्ठमूले वीसा, पसतीए भिण्णमासो, अंजलीए मासलहुं, चउसु अंजलीसु चउलहुं । एते चेव पच्छित्ता सुहुमथूरेसु अणंतेसु गुरुगा कायव्वा ॥५८७१॥

णिक्कारणम्मि एते, पच्छित्ता वण्णिया उ वितिएसु ।
णायव्वऽणुपुव्वीए, एसेव य कारणे जयणा ॥५८७२॥

जा एसा पच्छित्तवुड्ढी भणिया णिक्कारणे, कारणे पुण गेण्हंतस्स सेव जयणा पणगादिगा भवति ।

जइ पुण अहाकडे पढमपव्वप्पमाणा वीया अप्पपरिकम्मं च सुद्धं लब्भति ।

एत्थ अप्पवहुंचिताए कतरं घेत्तव्वं ? भण्णति – अहाकडं घेत्तव्वं, णो अप्पपरिकम्मं । एवं वितियपव्वादिसु वि वत्तव्वं ॥५८७२॥

जाव –

वोसट्ठं पि हु कप्पति, वीयादीणं अहाकडं पायं ।
ण य अप्प सपरिकम्मा, तहेव अप्पं सपरिकम्मा ॥५८७३॥

वोसट्ठं ति भरियं, अहाकडं आगंतुगाण भरियं पि कप्पति, ण य अप्पपरिकम्मं वहुपरिकम्मं वा । एवं अप्पपरिकम्मं पि आगंतुगाण भरियं कप्पति ण य वहुपरिकम्मं सुद्धं ॥५८७३॥

इमं जयणाए णिच्छतो छडेति –

थूले वा सुहुमे वा, अवहंते वा असंथरंतम्मि ।
आगंतुग संकामिय, अप्पवहु असंथरंतम्मि ॥५८७४॥

थूलाण वा चणगादियाण वीयाण सुहुमाण वा सरिसवादियाण भरियं होज्जा तस्स य जति पुव्वभायणं, णवरं–तं ण वहति । "असंथरं" ति अपज्जत्तियं वा भायणं, भायणस्स वा अभावो, ताहे तम्मि असंथरे अप्पवहुअं तुलेत्ता वहुगुणकरे ति काउं अहाकडं, आगंतुगाण वीयाण भरियं ति आगंतुगे संकामेत्ता जयणाए अण्णत्थ, अहाकडं चेव गेण्हति ण दोसो ॥५८७४॥ जयण त्ति गता ।

इदाणिं [1]"चोदगो" त्ति –

थूल-सुहुमेसु वोत्तुं, पच्छित्तं तेसु चेव भरितेसु ।
जं कप्पति त्ति भणियं, ण जुज्जते पुव्वमवरेणं ॥५८७५॥ कंठ्या

आचार्य आह – "[2]असति असिव" त्ति –

चोदग ! दुविधा असती, संताऽसंता य संत असिवादी ।
इयरो उ झामियादी, कप्पति दोसुं पि जा भरिते ॥५८७६॥

---

१ गा० ५८२० द्वा० १४ । २ गा० ५८२० द्वा० १५ ।

अप्पपरिकम्मं वहुपरिकम्मं च कप्पते घेत्तुं, तेसु पुण छेदणादि करेंतो सुट्ठुवउत्तो करेति, मा दुवे दोसा भविस्संति, आयसंजमविराहणादोसा इत्यर्थः ॥५८७९॥

अस्यैवार्थस्य अपरः कल्पः –

अहवा वि कओ णेणं, उवओगो ण वि य लब्भती पढमं ।
हीणऽधियं वा लब्भइ, पमाणओ तेण दो इयरे ॥५८८०॥

उवओगो त्ति मग्गणजोगे पढमं ति अहाकडयं, अहवा – लब्भई अहाकडं तं पमाणतो हीणं अहियं वा लब्भइ, तेण कारणेण "दो इतरे" त्ति, "इतर" ति – अप्पपरिकम्मं सुद्धं पमाणजुत्तं गेण्हति, तस्सासति हीणप्पमाणाइरेगलंभे वा वहुपरिकम्मं सुद्धं जुत्तप्पमाणं घेप्पति ॥५८८०॥

इमं च अप्पपरिकम्मं पडुच्च भण्णइ –

जह सपरिकम्मलंभे, मग्गंते अहाकडं भवे विपुला ।
णिज्जरमेवमलंभे, वितियस्सितरे भवे विपुला ॥५८८१॥

जहा सपरिकम्मे त्ति अप्पपरिकम्मे सुद्धे जुत्तप्पमाणे लब्भमाणे वि अहाकडं मग्गंतस्स णिज्जरा विपुला भवति, तहा पढमस्स त्ति अहाकडस्स अलंभे इयरं ति – अप्पपरिकम्मं मग्गंतस्स विपुला णिज्जरा भवति ।

अहवा – एतीए गाहाए चउत्थं पादं पढंति "वीयस्सितरे भवे विउल" त्ति। वितियं अप्पपरिकम्मं, तस्स अलाभे इयरं ति वहुपरिकम्मं, तं मगंतस्स णिज्जरा विउला भवति, पढमवितियाण अलंभे संतासंतासतीए वा ॥५८८१॥

अहवा – जत्थ ते लब्भंति तत्थिमे कारणा –

असिवे ओमोयरिए, रायदुट्ठे भए व गेलण्णे ।
सेहे चरित्त सावय-भए व ततियं पि गेण्हेज्जा ॥५८८२॥

जत्थ अहाकडं पादं अप्पपरिकम्मं वा लब्भति तत्थ असिवं, अंतरे वा परिरयगमणं च णत्थि, एवं ओमरायदुट्ठं वोहिगादीण वा भयं गिलाणपडिवंघेण वा तत्थ न गम्मइ, सेहस्स वा तत्थ सागारियं चारित्तभेदो त्ति, तत्थंतरा वा चरिताओ उवसग्गंति, सीहादिसावयभयं तत्थ अंतरा वा, एवमादिकारणेहिं अगच्छंतो ततियं । ततियं ति – वहुपरिकम्मं सत्थाणे चेव गेण्हति ॥५८८२॥

गयमत्थं सीहावलोयणेण भणति –

आगंतुगाणि ताणि य, सपरिक्कम्मे य सुत्तपरिहाणी ।
एएण कारणेणं, अहाकडे होति गहणं तु ॥५८८३॥

चरिमं परिकम्मेंतस्स सुत्तत्थपरिहाणी । शेषं गतार्थम् ॥५८८३॥ पमाण उवओगछेयणं ति गतं।

इदाणिं "[1]मुहे" त्ति दारं –

वितिय-ततिएसु नियमा मुहकरणं होज्ज तस्सिमं माणं ।
तं पि य तिविहं पादं, करंडयं दीह वट्टं च ५८८४॥

---

१ गा० ५८२० द्वा० १९ ।

अग्गहणे त्ति अस्य व्याख्या –

मत्तगऽगेण्हणे गुरुगा, मिच्छत्तं अप्प-परपरिच्चाओ ।
संसत्तग्गहणम्मि य, संजमदोसा मुणेयव्वा ॥५८८६॥

मत्तगं अगेण्हंते चउगुरुगा पच्छित्तं, गवसड्ढादि मिच्छत्तं गच्छे ।

कहं ?, उच्यते – तेण चेव पडिग्गहेण णिल्लेवंतं दट्ठुं दुट्ठियम्मे त्ति, जति पडिग्गहे आयरियातीणं गेण्हति अप्पा चत्तो, अह अप्पणो गेण्हति तो आयरियादी पदा चत्ता ।

मत्तगअभावे संसत्तभत्तपाणं कहिं गेण्हउ ?, अहापडिलेहियं पडिग्गहे चेव गेण्हति, तो संजम-विराहणा सवित्थरा भाणियव्वा । [1]छक्काय च० गाहा ॥५८८६॥

"[2]वारत्त" त्ति अस्य व्याख्या –

वारत्तग पव्वज्जा, पुत्तो तप्पडिम देवथलि साहू ।
पडिचरणेगपडिग्गह, आयमणुच्चालणा छेदो ॥५८९०॥

वारत्तपुरं नगरं तत्थ य अभग्गसेणो राया, तस्स अमच्चो वारत्तगो णाम । सो घरसारं पुत्तस्स णिसिउं पव्वइतो । तस्स पुत्तेण पिउभत्तीए देवकुलं करित्तु रयहरणमुहपोत्तियपडिग्गहधारी पिउपडिमा तत्थ ठाविया । तत्थ थलीए सत्तागारो पवत्तितो । तत्थ एगो साधू एगपडिग्गहधारी तत्थ थलीए पडिग्गहए भिक्खं घेत्तुं, तं भोत्तुं, तत्थेव पडिग्गहे पुणो पाणगं घेत्तुं सण्णं वोसिरिउं, तेणेव पडिग्गहेण णिल्लेवेति ।

तेसिं सत्ताकारणिउत्ताणं चिंता – कहं णिल्लेवेइ त्ति, पडियरतो दिट्ठो, तेहिं णिच्छूढो । तेहिं य ताणि भायणाणि अगणिकाइयाणि अण्णाणि छड्डियाणि, तस्स अण्णेसिं च साधूणं वोच्छेओ तत्थ जातो, उड्डाहो य ॥५८९०॥

इमं [3]मत्तगस्स पमाणं –

जो मागहओ पत्थो, सविसेसतरं तु मत्तगपमाणं ।
दोसु वि दव्वग्गहणं, वासावासेसु अहिगारो ॥५८९१॥

मगहाविसए पत्थो त्ति कुलवो । दोसु वि त्ति उडुबद्धे वासासु य । कारणे असणं पाणगदव्वं वा गेण्हति ।

अण्णे पुण भणंति, – दोसु वि त्ति – पडिग्गहे भत्तं, मत्तगे पाणगं । इहं पुण मत्तगेण वासावासासु अधिकारो । वासासु पढमं चेव जत्थ सम्मलाभोत्ति तत्थ पाणगस्स जोगो कायव्वो ।

किं कारणं ?, कयाति वग्घारियवासं पडेज, जेण घराओ घरं न सक्केति संचरिउं, ताहे विणा दव्वेण लेवाडो भवति, तम्हा पढमभिक्खातो चेव पाणगं मग्गियव्वं । अहवा – वासासु संसज्जति त्ति तेण सोहिज्जइ त्ति अतो तेण अधिकारो ॥५८९१॥

अथवा इमं पमाणं –

सुक्खोल्ल ओदणस्सा, दुगाउतद्धाणमागओ साहू ।
भुंजति एगट्ठाणे, एतं खलु मत्तगपमाणं ॥५८९२॥

---

[1] पीठिकायाम् गा० ४६ । [2] गा० ५८८८ । [3] गा० ५८८८ ।

एगदिवसेण जत्तिए वारे मत्तगेण भत्तपाणं आणेति तत्तिया चउलहुगा भवंति, दिवसे दिवसे त्ति वीप्सायां, बितियादिदिवसेसु पच्छित्तवुड्ढी दरिसेति – जत्तियवारा आणेति ततो से बितिएण आरोवणा कज्जति, चउलहुस्स अवितियं चउगुरुगं तं बितियवारे दिज्जति, एवं उवरिं पि णेयव्वं, अट्ठमे दिवसे पारंचियं पावति ॥५८९७॥ सोही गया ।

इदाणिं [1]अववादे त्ति –

अण्णाणे गारवे लुद्धे, असंपत्ती य जाणए ।

लहुओ लहुओ गुरुगा, चउत्थो सुद्धो य जाणओ ॥५८९८॥

एरिसा जहा पडिग्गहे भणिया तहेव मत्तगे वि भाणियव्वा ॥५८९८॥

इदाणिं [2]परिभोगो त्ति दारं ।

मत्तगो णो अप्पणट्ठा परिभुंजइ, आयरियादीणट्ठा परिभुंजइ –

आयरिय बाल वुड्ढा, खमग गिलाणा य सेह आएसा ।

दुल्लभ संसत्त असंथरम्मि अद्धाणकप्पम्मि ॥५८९९॥

आयरियस्स य गिलाणस्स य मत्तगे पाउग्गं घेप्पइ, सेहबालादियाण अणहियंताण मत्तगे भत्तं घेप्पइ पाउग्गं वा । अहवा – बालादिया पडिग्गहगं ण सक्केंति वट्टावेउं, ताहे मत्तगेण हिंडंति । गच्छट्ठा वा दुल्लभदव्वं घतादियं पडुप्पण्णं मत्तगे गेण्हेज्जा । तत्थ वा संसज्जति भत्तपाणं तत्थ मत्तगे गेण्हिज्जति भत्तपाणं, तत्थ मत्तए घेत्तुं सोहेति, पच्छा पडिग्गहे छुब्भइ । ओमादि असंथरणे वा, असंथरणे पडिग्गहे भरिए अण्णम्मि य लब्भंते मत्तगे गेण्हेज्जा । अद्धाणे कप्पो अद्धाणकप्पो अद्धाने विधिरित्यर्थः । अप्पगहणं कारणे विधीए अद्धाणं पडिवज्जेति दंसेति, तत्थ असंथरणे पडिग्गहे भरिए मत्तगे गेण्हति ॥५८९९॥ परिभोगि त्ति गतं ।

"[3]गहणपदबितियपदलक्खणादि मुहं जाव" त्ति – एतेसिं पदाणं अत्थो जहा पडिग्गहे ।

तहावि अक्खरत्थो भण्णति – गहणे ।

मत्तगं को गेण्हति ? बितियपदं असिवादिकारणेहिं सत्थाणे चेव अप्पबहुपरिकम्मा गेण्हति । [4]लक्खणादि दारा जहा पडिग्गहे तहा मत्तगे वि वत्तव्वा, मुहकरणं च, अप्पपरिकम्मं सपरिकम्मं च लेवेयव्वं ।

तत्थ लेवग्गहणे इमा विही –

हरिए बीए चले जुत्ते, वत्थे साणे जलट्ठिते ।

पुढवीऽसंपातिमा सामा, महावाते महिताऽमिते ॥५९००॥

ओहणिज्जुत्तिमादीसु अणेगसो गतत्था । एस उवही अज्झोकडो भणिओ ।

विभागतो पुण उवही दुविहो – ओहिओ उवग्गहितो य । जिणाणं परिहारविसुद्धियाणं अहालंदियाणं पडिमापडिवण्णगाणं, एतेसिं ओहितो चेव उवही ।

जिणकप्पिया दुविहा – पाणिपडिग्गही, पडिग्गहधारी य ।

पाणिपडिग्गही दुविहा – पाउरणवज्जिया, सहिया य ।

---

1 गा० ५८८८ । 2 ० ५८८८ । 3 गा० ५८२१, ५८२१ गाथोक्तानि द्वाराणि ।

जे भिक्खू चित्तमंताए पुढवीए जीवपइट्ठिए सअंडे सपाणे सबीए सहरिए
सओस्से सउदए सउत्तिंग-पणग-दग-मट्टिय-मक्कडासंताणगंसि
दुब्बद्धे, दुन्निखित्ते, अनिकंपे, चलाचले उच्चारपासवणं परिट्ठवेइ,
परिट्ठवेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥४४॥

जे भिक्खू सिलाए जीवपइट्ठिए सअंडे सपाणे सबीए सहरिए
सओस्से सउदए सउत्तिंग-पणग-दग-मट्टिय-मक्कडासंताणगंसि
दुब्बद्धे, दुन्निखित्ते, अनिकंपे, चलाचले उचारपासवणं परिट्ठवेइ,
परिट्ठवेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥४५॥

जे भिक्खू लेलूए जीवपइट्ठिए सअंडे सपाणे सबीए सहरिए
सओस्से सउदए सउत्तिंग-पणग-दग-मट्टिय-मक्कडासंताणगंसि
दुब्बद्धे, दुन्निखित्ते, अनिकंपे, चलाचले उचारपासवणं परिट्ठवेइ,
परिट्ठवेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥४६॥

जे भिक्खू कोलावासंसि वा दारुए जीवपइट्ठिए सअंडे सपाणे सबीए सहरिए
सओस्से सउदए सउत्तिंग-पणग-दग-मट्टिय-मक्कडासंताणगंसि
दुब्बद्धे, दुन्निखित्ते, अनिकंपे, चलाचले उचारपासवणं परिट्ठवेइ,
परिट्ठवेंतं वा साइज्जइ ॥सू०॥४७॥

जे भिक्खू थूणंसि वा गिहेलुयंसि वा उसुयालंसि वा कामजलंसि वा
दुब्बद्धे, दुन्निखित्ते, अनिकंपे, चलाचले उच्चारपासवणं परिट्ठवेइ,
परिट्ठवेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥४८॥

जे भिक्खू कुलियंसि वा भित्तिंसि वा सिलंसि वा लेलुंसि वा
अंतलिक्खजायंसि वा दुब्बद्धे, दुन्निखित्ते, अनिकंपे, चलाचले
उच्चारपासवणं परिट्ठवेइ, परिट्ठवेंतं वा साइज्जइ ॥सू०॥४९॥

जे भिक्खू खंधंसि वा फलहंसि वा मंचंसि वा मंडवंसि वा मालंसि वा पासायंसि वा
दुब्बद्धे, दुन्निखित्ते, अनिकंपे, चलाचले उच्चारपासवणं परिट्ठवेइ,
परिट्ठवेंतं वा सातिज्जति ।
तं सेवमाणे आवज्जइ चाउम्मासियं परिहारट्ठाणं उग्घातियं॥सू०॥५०॥

पुढवीमादी कुलिमादिएसु थूणादिखंधमादीसु ।
तेसुच्चारादीणि; परिट्ठवे आणमादीणि ॥५९०२॥

वितियपदमणप्पज्झे, वंधे अविकोविते व अप्पज्झे ।
जाणंते वा वि पुणो, कज्जेसु वहुप्पगारेसु ॥५९०८॥

वितियपदमणप्पज्झे, मुंचे अविकोविते व अपज्झे ।
जाणंते वा वि पुणो, कज्जेसु वहुप्पगारेसु ॥५९०९॥

उस्सग्गो अववातो य जहा वारसमे उद्देसगे तहा भाणियव्वो ।

जे भिक्खू कोउहल्लपडियाए तणमालियं वा मुंजमालियं वा भेंडमालियं वा मयणमालियं वा पिंछमालियं वा दंतमालियं वा सिंगमालियं वा संखमालियं वा हड्डमालियं वा कट्ठमालियं वा पत्तमालियं वा पुप्फमालियं वा फलमालियं वा बीयमालियं वा हरियमालियं वा करेइ, करेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥३॥

जे भिक्खू कोउहल्लपडियाए तणमालियं वा मुंजमालियं वा भेंडमालियं वा, मयणमालियं वा पिंछमालियं वा दंतमालियं वा सिंगमालियं वा, संखमालियं वा हड्डमालियं वा कट्ठमालियं वा पत्तमालियं वा, पुप्फमालियं वा फलमालियं वा बीयमालियं वा हरियमालियं वा, धरेइ, धरेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥४॥

जे भिक्खू कोउहल्लपडियाए तणमालियं वा मुंजमालियं वा भेंडमालियं वा, मयणमालियं वा पिंछमालियं वा दंतमालियं वा सिंगमालियं वा संखमालियं वा हड्डमालियं वा कट्ठमालियं वा पत्तमालियं वा, पुप्फमालियं वा फलमालियं वा बीयमालियं वा हरियमालियं वा पिणद्धइ, पिणद्धंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥५॥

तणमादिमालियाओ जत्तियमेत्ता उ आहियासुत्ते ।
ताओ कुतूहलेणं, धारेंत आणमादीणि ॥५९१०॥

वितियपदमणप्पज्झे, करेज्ज अविकोविते व अप्पज्झे ।
जाणंते वा वि पुणो, कज्जेसु वहुप्पगारेसु ॥५९११॥

जे भिक्खू कोउहल्लपडियाए अयलोहाणि वा तंबलोहाणि वा तउयलोहाणि वा, सीसलोहाणि वा रुप्पलोहाणि वा सुवण्णलोहाणि वा, करेति, करेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥६॥

अयमादी आगरा खलु, जनियमेणा उ आहिया सुत्ते।
ताइं कुतूहलेणं, मालेंते आणमादीणि ॥५९१२॥

चिंतियपदमणपज्जे, करेज्ज ओसिकोविते व अपज्जे।
जाणंते वा वि पुणो, कज्जेसु बहुप्पगारेसु ॥५९१३॥

जे भिक्खू कोउहल्लपडियाए अयलोहाणि वा तंबलोहाणि वा तउयलोहाणि वा सीसलोहाणि वा रुप्पलोहाणि वा सुवण्णलोहाणि वा धरेइ, धरेंतं वा सातिज्जइ ॥सू०॥७॥

जे भिक्खू कोउहल्लपडियाए अयलोहाणि वा तंबलोहाणि वा तउयलोहाणि वा सीसलोहाणि वा रुप्पलोहाणि वा सुवण्णलोहाणि वा पिणद्धइ, पिणद्धेंतं वा सातिज्जइ ॥सू०॥८॥

* * *

जे भिक्खू कोउहल्लपडियाए हाराणि वा अद्धहाराणि वा एगावलिं वा मुत्तावलिं वा कणगावलिं वा रयणावलिं वा कडगाणि वा तुडियाणि वा केऊराणि वा कुंडलाणि वा पट्टाणि वा मउडाणि वा पलंबसुत्ताणि वा सुवण्णसुत्ताणि वा करेति, करेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥९॥

जे भिक्खू कोउहल्लपडियाए हाराणि वा अद्धहाराणि वा एगावलिं वा मुत्तावलिं वा कणगावलिं वा रयणावलिं वा कडगाणि वा तुडियाणि वा केऊराणि वा कुंडलाणि वा पट्टाणि वा मउडाणि वा पलंबसुत्ताणि वा सुवण्णसुत्ताणि वा धरेइ, धरेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥१०॥

जे भिक्खू कोउहल्लपडियाए हाराणि वा अद्धहाराणि वा एगावलिं वा मुत्तावलिं वा कणगावलिं वा रयणावलिं वा कडगाणि वा तुडियाणि वा केऊराणि वा कुंडलाणि वा पट्टाणि वा मउडाणि वा पलंबसुत्ताणि वा सुवण्णसुत्ताणि वा पिणद्धइ, पिणद्धेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥११॥

कडगादी आभरणा, जनियमेणा उ आहिया सुत्ते।
ताइं कुतूहलेणं, मालेंते आणमादीणि ॥५९१४॥

चिंतियपदमणपज्जे, मालेंते ओसिकोविते व अपज्जे।
जाणंते वा वि पुणो, कज्जेसु बहुप्पगारेसु ॥५९१५॥

[illegible]

जे भिक्खू कोउहल्लपडियाए आईणाणि वा आईणपावराणि वा कंबलाणि वा कंबलपावराणि वा कोयराणि वा कोयरपावराणि वा कालमियाणि वा नीलमियाणि वा सामाणि वा मिहासामाणि वा उट्टाणि वा उट्टलेस्साणि वा वग्घाणि वा विवग्घाणि वा परवंगाणि वा सहिणाणि वा सहिणकल्लाणि वा खोमाणि वा दुगूलाणि वा पणलाणि वा आवरंताणि वा चीणाणि वा अंसुयाणि वा कणगकंताणि वा कणगखंसियाणि वा कणगचित्ताणि वा कणगविचित्ताणि वा आभरणविचित्ताणि वा करेइ, करेंतं वा सातिज्जइ ॥सू०॥१२॥

जे भिक्खू कोउहल्लपडियाए आईणाणि वा आईणपावराणि वा कंबलाणि वा कंबलपावराणि वा कोयराणि वा कोयरपावराणि वा कालमियाणि वा नीलमियाणि वा सामाणि वा मिहासामाणि वा उट्टाणि वा उट्टलेस्साणि वा वग्घाणि वा विवग्घाणि वा परवंगाणि वा सहिणाणि वा सहिणकल्लाणि वा खोमाणि वा दुगूलाणि वा पणलाणि वा आवरंताणि वा चीणाणि वा अंसुयाणि वा कणगकंताणि वा कणगखंसियाणि वा कणगचित्ताणि वा कणगविचित्ताणि वा आभरणविचित्ताणि वा धरेइ, धरेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥१३॥

जे भिक्खू कोउहल्लपडियाए आईणाणि वा आईणपावराणि वा कंबलाणि वा कंबलपावराणि वा कोयराणि वा कोयरपावराणि वा कालमियाणि वा नीलमियाणि वा सामाणि वा मिहासामाणि वा उट्टाणि वा उट्टलेस्साणि वा वग्घाणि वा विवग्घाणि वा परवंगाणि वा सहिणाणि वा सहिणकल्लाणि वा खोमाणि वा दुगूलाणि वा पणलाणि वा आवरंताणि वा चीणाणि वा अंसुयाणि वा कणगकंताणि वा कणगखंसियाणि वा कणगचित्ताणि वा कणगविचित्ताणि वा आभरणविचित्ताणि वा परिभुंजइ, परिभुंजंतं वा सातिज्जति॥सू॥१४॥

अजिणादी वत्था खलु, जत्तियमेत्ता उ आहियासुत्ते ।
ताइं कुतूहलेणं, परिहंते आणमादीणि ॥५९१६॥
बितियपदमणप्पज्झे, परिहे अविकोविते व अप्पज्झे ।
जाणंते वा वि पुणो, कज्जेसु बहुप्पगारेसु ॥५९१७॥

जेभिक्खू इत्यादि । करेति धरेति पिणद्धेति, एयं लोह सुत्ते आभरण सुत्तं, अइणादि जाव वत्थसुत्तं ।

एतेसिं सुत्ताणं [illegible] य अत्थो जहा सत्तमुद्देसगे तहा भाणियव्वो, णवरं – [illegible] मेहुणवडियाए करेति, इह पुण कोउगवडियाए करेति । इह [illegible] पच्छित्तं । सेसं [illegible] सुत्तं, णवरं – [illegible] [illegible] करेति, [illegible] वा [illegible] । एवं [illegible] ॥५९१७॥

जा णिग्गंथी णिग्गंथस्स –

पादे अण्णउत्थिएण वा गारत्थिएण वा

आमज्जावेज्ज वा पमज्जावेज्ज वा

आमज्जावेंतं वा पमज्जावेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥१५॥

जा णिग्गंथी णिग्गंथस्स –

पादे अण्णउत्थिएण वा गारत्थिएण वा

संबाहावेज्ज वा पलिमद्दावेज्ज वा

संबाहावेंतं वा पलिमद्दावेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥१६॥

जा णिग्गंथी णिग्गंथस्स –

पादे अण्णउत्थिएण वा गारत्थिएण वा

तेल्लेण वा घएण वा वसाए वा णवणीएण वा मक्खावेज्ज वा

भिलिंगावेज्ज वा, मक्खावेंतं वा भिलिंगावेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥१७॥

जा णिग्गंथी णिग्गंथस्स –

पादे अण्णउत्थिएण वा गारत्थिएण वा

लोद्धेण वा कक्केण वा उल्लोलावेज्ज वा उव्वट्टावेज्ज वा

उल्लोलावेंतं वा उव्वट्टावेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥१८॥

जा णिग्गंथी णिग्गंथस्स –

पादे अण्णउत्थिएण वा गारत्थिएण वा

सीओदगवियडेण वा उसिणोदगवियडेण वा उच्छोलावेज्ज वा

पधोवावेज्ज वा उच्छोलावेंतं वा पधोवावेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥१९॥

जा णिग्गंथी णिग्गंथस्स –

पादे अण्णउत्थिएण वा गारत्थिएण वा

फूमावेज्ज वा रयावेज्ज वा

फूमावेंतं वा रयावेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥२०॥

जा णिग्गंथी णिग्गंथस्स –

कायं अण्णउत्थिएण वा गारत्थिएण वा
आमज्जावेज्ज वा पमज्जावेज्ज वा
आमज्जावेंतं वा पमज्जावेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥२१॥

जा णिग्गंथी णिग्गंथस्स –

कायं अण्णउत्थिएण वा गारत्थिएण वा
संवाहावेज्ज वा पलिमद्दावेज्ज वा
संवाहावेंतं वा पलिमद्दावेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥२२॥

जा णिग्गंथी णिग्गंथस्स –

कायं अण्णउत्थिएण वा गारत्थिएण वा
तेल्लेण वा घएण वा वसाए वा णवणीएण वा मक्खावेज्ज वा
भिलिंगावेज्ज वा मक्खावेंतं वा भिलिंगावेंतं वा सातिज्जति॥सू०॥२३॥

जा णिग्गंथी णिग्गंथस्स –

कायं अण्णउत्थिएण वा गारत्थिएण वा
लोद्धेण वा कक्केण वा उल्लोलावेज्ज वा उव्वट्टावेज्ज वा
उल्लोलावेंतं वा उव्वट्टावेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥२४॥

जा णिग्गंथी णिग्गंथस्स –

कायं अण्णउत्थिएण वा गारत्थिएण वा
सीओदगवियडेण वा उसिणोदगवियडेण वा उच्छोलावेज्ज वा
पधोयावेज्ज वा उच्छोलावेंतं वा पधोयावेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥२५॥

जा णिग्गंथी णिग्गंथस्स –

कायं अण्णउत्थिएण वा गारत्थिएण वा फूमावेज्ज वा
रयावेज्ज वा फूमावेंतं वा रयावेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥२६॥

❀ ❀ ❀

जा णिग्गंथी णिग्गंथस्स –

कायंसि वणं अण्णउत्थिएण वा गारत्थिएण वा
आमज्जावेज्ज वा पमज्जावेज्ज वा
आमज्जावेंतं वा पमज्जावेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥२७॥

जा णिग्गंथी णिग्गंथस्स –

कायंसि वणं अण्णउत्थिएण वा गारत्थिएण वा

संबाहावेज्ज वा पलिमद्दावेज्ज वा
संबाहावेंतं वा पलिमद्दावेंतं वा सातिज्जति ॥१७॥२८॥

जा णिग्गंथी णिग्गंथस्स –
कायंसि वणं अण्णउत्थिएण वा गारत्थिएण वा तेल्लेण वा घएण वा
वसाए वा णवणीएण वा मक्खावेज्ज वा भिलिंगावेज्ज वा
मक्खावेंतं वा भिलिंगावेंतं वा सातिज्जति ॥१७॥२९॥

जा णिग्गंथी णिग्गंथस्स –
कायंसि वणं अण्णउत्थिएण वा गारत्थिएण वा
लोद्धेण वा कक्केण वा उल्लोलावेज्ज वा उव्वट्टावेज्ज वा
उल्लोलावेंतं वा उव्वट्टावेंतं वा सातिज्जति ॥१७॥३०॥

जा णिग्गंथी णिग्गंथस्स –
कायंसि वणं अण्णउत्थिएण वा गारत्थिएण वा
सीओदगवियडेण वा उसिणोदगवियडेण वा उच्छोलावेज्ज वा
पधोयावेज्ज वा, उच्छोलावेंतं वा पधोयावेंतं वा सातिज्जति ॥१७॥३१॥

जा णिग्गंथी णिग्गंथस्स –
कायंसि वणं अण्णउत्थिएण वा गारत्थिएण वा फुमावेज्ज वा
रयावेज्ज वा, फुमावेंतं वा रयावेंतं वा सातिज्जति ॥१७॥३२॥

जा णिग्गंथी णिग्गंथस्स –
कायंसि गंडं वा पिलगं वा अरइयं वा असियं वा भगंदलं वा
अण्णउत्थिएण वा गारत्थिएण वा अन्नयरेणं तिक्खेणं सत्थजाएणं
अच्छिंदावेज्ज वा विच्छिंदावेज्ज वा
अच्छिंदावेंतं वा विच्छिंदावेंतं वा सातिज्जति ॥१७॥३३॥

जा णिग्गंथी णिग्गंथस्स –
कायंसि गंडं वा पिलगं वा अरइयं वा असियं वा भगंदलं वा
अण्णउत्थिएण वा गारत्थिएण वा
अन्नयरेणं तिक्खेणं सत्थजाएणं अच्छिंदावित्ता विच्छिंदावित्ता
पूयं वा सोणियं वा णीहरावेज्ज वा विसोहावेज्ज वा
णीहरावेंतं वा विसोहावेंतं वा सातिज्जति ॥१७॥३४॥

जा णिग्गंथी णिग्गंथस्स –
कायंसि गंडं वा पिलगं वा अरइयं वा असियं वा भगंदलं वा,

अण्णउत्थिएण वा गारत्थिएण वा
अन्नयरेणं तिक्खेणं सत्थजाएणं अच्छिंदावेत्ता विच्छिंदावेत्ता
पूयं वा सोणियं वा नीहरावेत्ता विसोहावेत्ता सीओदगवियडेण वा
उसिणोदगवियडेण वा उच्छोलावेज्ज वा पधोयावेज्ज वा
उच्छोलावेंतं वा पधोयावेंतं वा सातिज्जति ।।सू०।।३५।।

जा णिग्गंथी णिग्गंथस्स –
कायंसि गंडं वा पिलगं वा अरइयं वा असियं वा भगंदलं वा
अण्णउत्थिएण वा गारत्थिएण वा अन्नयरेणं तिक्खेणं सत्थजाएणं
अच्छिंदावेत्ता विच्छिंदावेत्ता पूयं वा सोणियं वा नीहरावेत्ता विसोहावेत्ता
सीओदगवियडेण वा उसिणोदगवियडेण वा उच्छोलावेत्ता पधोयावेत्ता
अन्नयरेणं आलेवणजाएणं आलिंपावेज्ज वा विलिंपावेज्ज वा
आलिंपावेंतं वा विलिंपावेंतं वा सातिज्जति ।।सू०।।३६।।

जा णिग्गंथी णिग्गंथस्स –
कायंसि गंडं वा पिलगं वा अरइयं वा असियं वा भगंदलं वा,
अण्णउत्थिएण वा गारत्थिएण वा अन्नयरेणं तिक्खेणं सत्थजाएणं
अच्छिंदावेत्ता विच्छिंदावेत्ता पूयं वा सोणियं वा नीहरावेत्ता विसोहावेत्ता
सीओदगवियडेण वा उसिणोदगवियडेण वा उच्छोलावेत्ता पधोयावेत्ता
अन्नयरेणं आलेवणजाएणं आलिंपावेत्ता विलिंपावेत्ता तेल्लेण वा
घएण वा वसाए वा णवणीएण वा अब्भंगावेज्ज वा मक्खावेज्ज वा
अब्भंगावेंतं वा मक्खावेंतं वा सातिज्जति ।।सू०।।३७।।

जा णिग्गंथी णिग्गंथस्स –
कायंसि गंडं वा पिलगं वा अरइयं वा असियं वा भगंदलं वा,
अण्णउत्थिएण वा गारत्थिएण वा अन्नयरेणं तिक्खेणं सत्थजाएणं
अच्छिंदावेत्ता विच्छिंदावेत्ता पूयं वा सोणियं वा नीहरावेत्ता विसोहावेत्ता
सीओदगवियडेण वा उसिणोदगवियडेण वा उच्छोलावेत्ता पधोयावेत्ता
अन्नयरेणं आलेवणजाएणं आलिंपावेत्ता विलिंपावेत्ता तेल्लेण वा
घएण वा वसाए वा णवणीएण वा अब्भंगावेत्ता मक्खावेत्ता
अन्नयरेणं धूवणजाएणं धूवावेज्ज वा पधूवावेज्ज वा
धूवावेंतं वा पधूवावेंतं वा सातिज्जति ।।सू०।।३८।।

❀ ❀ ❀

जा णिग्गंथी णिग्गंथस्स —

पालुकिमियं वा कुच्छिकिमियं वा अण्णउत्थिएण वा गारत्थिएण वा
अंगुलीए निवेसाविय निवेसाविय नीहरावेइ
नीहरावेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥३९॥

जा णिग्गंथी णिग्गंथस्स —

दीहाओ नहसिहाओ अण्णउत्थिएण वा गारत्थिएण वा
कप्पावेज्ज वा संठवावेज्ज वा
कप्पावेंतं वा संठवावेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥४०॥

जा णिग्गंथी णिग्गंथस्स —

दीहाइं जंघरोमाइं अण्णउत्थिएण वा गारत्थिएण वा
कप्पावेज्ज वा संठवावेज्ज वा
कप्पावेंतं वा संठवावेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥४१॥

जा णिग्गंथी णिग्गंथस्स —

दीहाइं कक्खरोमाइं अण्णउत्थिएण वा गारत्थिएण वा
कप्पावेज्ज वा संठवावेज्ज वा
कप्पावेंतं वा संठवावेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥४२॥

जा णिग्गंथी णिग्गंथस्स —

दीहाइं मंसुरोमाइं अण्णउत्थिएण वा गारत्थिएण वा
कप्पावेज्ज वा संठवावेज्ज वा
कप्पावेंतं वा संठवावेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥४३॥

जा णिग्गंथी णिग्गंथस्स —

दीहाइं वत्थिरोमाइं अण्णउत्थिएण वा गारत्थिएण वा
कप्पावेज्ज वा संठवावेज्ज वा
कप्पावेंतं वा संठवावेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥४४॥

जा णिग्गंथी णिग्गंथस्स —

दीहाइं चक्खुरोमाइं अण्णउत्थिएण वा गारत्थिएण वा
कप्पावेज्ज वा संठवावेज्ज वा
कप्पावेंतं वा संठवावेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥४५॥

जा णिग्गंथी णिग्गंथस्स –
दंते अण्णउत्थिएण वा गारत्थिएण वा आघंसावेज्ज वा
पघंसावेज्ज वा, आघंसावेंतं वा पघंसावेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥४६॥

जा णिग्गंथी णिग्गंथस्स –
दंते अण्णउत्थिएण वा गारत्थिएण वा उच्छोलावेज्ज वा
पधोयावेज्ज वा, उच्छोलावेंतं वा पधोयावेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥४७॥

जा णिग्गंथी णिग्गंथस्स –
दंते अण्णउत्थिएण वा गारत्थिएण वा फूमावेज्ज वा
रयावेज्ज वा, फूमावेंतं वा रयावेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥४८॥

❀ ❀ ❀

जा णिग्गंथी णिग्गंथस्स –
उट्ठे अण्णउत्थिएण वा गारत्थिएण वा
आमज्जावेज्ज वा पमज्जावेज्ज वा
आमज्जावेंतं वा पमज्जावेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥४९॥

जा णिग्गंथी णिग्गंथस्स –
उट्ठे अण्णउत्थिएण वा गारत्थिएण वा
संवाहावेज्ज वा पलिमद्दावेज्ज वा
संवाहावेंतं वा पलिमद्दावेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥५०॥

जा णिग्गंथी णिग्गंथस्स –
उट्ठे अण्णउत्थिएण वा गारत्थिएण वा तेल्लेण वा घएण वा
वसाए वा णवणीएण वा मक्खावेज्ज वा भिलिंगावेज्ज वा
मक्खावेंतं वा भिलिंगावेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥५१॥

जा णिग्गंथी णिग्गंथस्स –
उट्ठे अण्णउत्थिएण वा गारत्थिएण वा लोद्धेण वा कक्केण वा
उल्लोलावेज्ज वा उव्वट्टावेज्ज वा
उल्लोलावेंतं वा उव्वट्टावेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥५२॥

जा णिग्गंथी णिग्गंथस्स –
उट्ठे अण्णउत्थिएण वा गारत्थिएण वा अप्पणो सीओदगवियडेण वा
उसिणोदगवियडेण वा उच्छोलावेज्ज वा पधोयावेज्ज वा
उच्छोलावेंतं वा पधोयावेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥५३॥

जा णिग्गंथी णिग्गंथस्स –

उट्ठे अण्णउत्थिएण वा गारत्थिएण वा फुमावेज्ज वा
रयावेज्ज वा, फुमावेंतं वा रयावेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥५४॥

जा णिग्गंथी णिग्गंथस्स –

दीहाइं उत्तरोट्ठाइं अण्णउत्थिएण वा गारत्थिएण वा
कप्पावेज्ज वा संठवावेज्ज वा
कप्पावेंतं वा संठवावेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥५५॥

जा णिग्गंथी णिग्गंथस्स –

दीहाइं अच्छिपत्ताइं अण्णउत्थिएण वा गारत्थिएण वा
कप्पावेज्ज वा संठवावेज्ज वा
कप्पावेंतं वा संठवावेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥५६॥

* * *

जा णिग्गंथी णिग्गंथस्स –

अच्छीणि अण्णउत्थिएण वा गारत्थिएण वा
आमज्जावेज्ज वा पमज्जावेज्ज वा
आमज्जावेंतं वा पमज्जावेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥५७॥

जा णिग्गंथी णिग्गंथस्स –

अच्छीणि अण्णउत्थिएण वा गारत्थिएण वा
संवाहावेज्ज वा पलिमद्दावेज्ज वा
संवाहावेंतं वा पलिमद्दावेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥५८॥

जा णिग्गंथी णिग्गंथस्स –

अच्छीणि अण्णउत्थिएण वा गारत्थिएण वा
तेल्लेण वा घएण वा वसाए वा णवणीएण वा मक्खावेज्ज वा
भिलिंगावेज्ज वा, मक्खावेंतं वा भिलिंगावेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥५९॥

* * *

जा णिग्गंथी णिग्गंथस्स –

अच्छीणि अण्णउत्थिएण वा गारत्थिएण वा
लोद्धेण वा कक्केण वा उल्लोलावेज्ज वा उव्वट्टावेज्ज वा
उल्लोलावेंतं वा उव्वट्टावेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥६०॥

जा णिग्गंथी णिग्गंथस्स –
अच्छीणि अण्णउत्थिएण वा गारत्थिएण वा
सीओदगवियडेण वा उसिणोदगवियडेण वा उच्छोलावेज्ज वा
पधोयावेज्ज वा उच्छोलावेंतं वा पधोयावेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥६१॥

जा णिग्गंथी णिग्गंथस्स –
अच्छीणि अण्णउत्थिएण वा गारत्थिएण वा
फूमावेज्ज वा रयावेज्ज वा
फूमावेंतं वा रयावेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥६२॥

❀ ❀ ❀

जा णिग्गंथी णिग्गंथस्स –
दीहाइं भुमगरोमाइं अण्णउत्थिएण वा गारत्थिएण वा
कप्पावेज्ज वा संठवावेज्ज वा
कप्पावेंतं वा संठवावेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥६३॥

जा णिग्गंथी णिग्गंथस्स –
दीहाइं पासरोमाइं अण्णउत्थिएण वा गारत्थिएण वा
कप्पावेज्ज वा संठवावेज्ज वा
कप्पावेंतं वा संठवावेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥६४॥

जा णिग्गंथी णिग्गंथस्स –
अच्छिमलं वा कण्णमलं वा दंतमलं वा नहमलं वा
अण्णउत्थिएण वा गारत्थिएण वा नीहरावेज्ज वा विसोहावेज्ज वा
नीहरावेंतं वा विसोहावेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥६५॥

जा णिग्गंथी णिग्गंथस्स –
कायाओ सेयं वा जल्लं वा पंकं वा मलं वा
अण्णउत्थिएण वा गारत्थिएण वा नीहरावेज्ज वा विसोहावेज्ज वा
नीहरावेंतं वा विसोहावेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥६६॥

जा णिग्गंथी णिग्गंथस्स –
गामाणुगामं दूइज्जमाणे अण्णउत्थिएण वा गारत्थिएण वा
सीसदुवारियं कारावेइ, कारावेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥६७॥

संपातिमादिघातो, विवज्जओ चेव लोगपरिवाओ ।
गिहिएहि पच्छकम्मं, तम्हा समणेहि कायव्वं ॥५९२३॥

पमज्जमाणी संपातिमे अभिघाएज्जा अजयत्तणेण । "विवज्जतो" त्ति साधुणा विभूसापरिवज्जिएण होयव्वं, भणियं च "[1]विभूसा इत्थिसंगो" सिलोगो, एयस्स विवरीयकरणं विवज्जतो भवति । लोगपरिवादो त्ति, जारिसं सेवेसग्गहणं एरिसेण अनिवृत्तेन भवितव्यं । एवमादि इत्थीसु दोसा । गिहत्थपुरिसेसु वि इत्थिफासादिया मोत्तुं एते चेव दोसा पच्छाकम्मं च ॥५९२३॥

इमे य दोसा –

अयते पप्फोडेंते, पाणा उप्पीलणं च संपादी ।
अतिपेल्लणम्मि आता, फोडण खय अट्ठिभंगादी ॥५९२४॥

संजओ अजयणाए पप्फोडेंतो पाणे अभिहणेज्ज, बहुणा वा दवेण धोवंतो पाणे उप्पिलावेज्ज, खिल्लरबंधे वा संपातिमा पडेज्ज । एस संजमविरावणा ।

आयविरावणा इमा – तेण गिहिणा अतीव पेल्लिओ पादो ताहे संधी विकरेज्ज, फोडगं ति णित्थरभल्लेण णहादिणा वा खयं करेज्ज, अट्ठि वा भंजेज्ज ॥५९२४॥

एते चेव य दोसा, अस्संजतियाहि पच्छकम्मं च ।
गिहिएहि पच्छकम्मं, कुच्छा तम्हा तु समणेहिं ॥५९२५॥

गतार्था । किं चि विसेसो – पुव्वद्धेण गिहत्थी भणिता, पच्छद्धेण गिहत्था । दो वि पाए पप्फोडेंतो कुच्छं करेज्ज, कुच्छंतो य पच्छाकम्मसंभवो । जम्हा एते दोसा तम्हा समणाण समणेहिं कायव्वं, समणीण समणीहिं कायव्वं, णो गिहत्था अण्णतित्थिया वा छंदेयव्वा ॥५९२५॥

बितियपदमणप्पज्झे, अद्धाणुच्चाते अप्पणा उ करे ।
मज्जणमादी तु पदे, जयणाए समायरे भिक्खू ॥५९२६॥

अणप्पज्झो कारवेज्जा, अणप्पज्झस्स वा कारविज्जति, अद्धाणे पडिवण्णो वा अतीव उच्चाओ पमज्जणादिपदे अप्पणो चेव जयणाए करेज्ज, अप्पणो असत्तो संजतेहि कारवेज्जा ॥५९२६॥

असती य संजयाणं, पच्छाकडमादिएहि कारेज्जा ।
गिहि-अण्णतित्थिएहिं, गिहत्थि-परतित्थितिविहाहिं ॥५९२७॥

असति संजयाणं पच्छाकडेहिं कारवेति । तओ साभिग्गहेहिं, ततो णिरभिग्गहेहिं । ततो अहाभद्दएहिं । ततो णियल्लएहि मिच्छद्दिट्ठीहिं । ततो अभिग्गहियमिच्छादिट्ठीहिं । ततो अण्णतित्थिएहिं मिच्छद्दिट्ठिमादिएहिं । पुव्वं असोयवादीहिं, पच्छा सोयवादीहिं । ततो पच्छा "गिहत्थिपरतित्थितिविहाहिं" ति । ततो गिहत्थीहिं णालवद्धाहिं अणालवद्धाहिं, तिविधाहिं थेरमज्झिमतरुणीहिं, एवं परतित्थिणीहिं वि संजतीहिं वि एवं चेव । ॥५९२७॥

एसो चेव अत्थो वित्थरतो भण्णति, ततो पच्छा "गिहत्थिपरतित्थितिविहाहिं" ति, गिहत्थी दुविहा—णालवद्धा अणालवद्धा य ।

---

[1] दसवै० अ० ८ गा० ५७ ।

जे निग्गंथे निग्गंथीए –
पादे अण्णउत्थिएण वा गारत्थिएण वा
सीओदगवियडेण वा उसिणोदगवियडेण वा उच्छोलावेज्ज वा
पधोयावेज्ज वा उच्छोलावेंतं वा पधोयावेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥७२॥

जे निग्गंथे णिग्गंथीए –
पादे अण्णउत्थिएण वा गारत्थिएण वा
फूमावेज्ज वा रयावेज्ज वा
फूमावेंतं वा रयावेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥७३॥

❀ ❀ ❀

जे निग्गंथे निग्गंथीए –
कायं अण्णउत्थिएण वा गारत्थिएण वा
आमज्जावेज्ज वा पमज्जावेज्ज वा
आमज्जावेंतं वा पमज्जावेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥७४॥

जे निग्गंथे निग्गंथीए –
कायं अण्णउत्थिएण वा गारत्थिएण वा
संवाहावेज्ज वा पलिमद्दावेज्ज वा
संवाहावेंतं वा पलिमद्दावेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥७५॥

जे निग्गंथे निग्गंथीए –
कायं अण्णउत्थिएण वा गारत्थिएण वा
तेल्लेण वा घएण वा वसाए वा णवणीएण वा मक्खावेज्ज वा
भिलिंगावेज्ज वा मक्खावेंतं वा भिलिंगावेंतं वा सातिज्जति॥सू०॥७६॥

जे निग्गंथे निग्गंथीए –
कायं अण्णउत्थिएण वा गारत्थिएण वा
लोद्धेण वा कक्केण वा उल्लोलावेज्ज वा उव्वट्टावेज्ज वा
उल्लोलावेंतं वा उव्वट्टावेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥७७॥

जे निग्गंथे निग्गंथीए –
कायं अण्णउत्थिएण वा गारत्थिएण वा
सीओदगवियडेण वा उसिणोदगवियडेण वा उच्छोलावेज्ज वा
पधोयावेज्ज वा उच्छोलावेंतं वा पधोयावेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥७८॥

जे निग्गंथे निग्गंथीए –

कायं अण्णउत्थिएण वा गारत्थिएण वा फुमावेज्ज वा
रयावेज्ज वा फुमावेंतं वा रयावेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥७९॥

जे निग्गंथे निग्गंथीए –

कायंसि वणं अण्णउत्थिएण वा गारत्थिएण वा
आमज्जावेज्ज वा पमज्जावेज्ज वा
आमज्जावेंतं वा पमज्जावेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥८०॥

जे निग्गंथे निग्गंथीए –

कायंसि वणं अण्णउत्थिएण वा गारत्थिएण वा
संबाहावेज्ज वा पलिमद्दावेज्ज वा
संबाहावेंतं वा पलिमद्दावेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥८१॥

जे निग्गंथे निग्गंथीए –

कायंसि वणं अण्णउत्थिएण वा गारत्थिएण वा तेल्लेण वा घएण वा
वसाए वा णवणीएण वा मक्खावेज्ज वा भिलिंगावेज्ज वा
मक्खावेंतं वा भिलिंगावेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥८२॥

जे निग्गंथे निग्गंथीए –

कायंसि वणं अण्णउत्थिएण वा गारत्थिएण वा
लोद्धेण वा कक्केण वा उल्लोलावेज्ज वा उव्वट्टावेज्ज वा
उल्लोलावेंतं वा उव्वट्टावेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥८३॥

जे निग्गंथे निग्गंथीए –

कायंसि वणं अण्णउत्थिएण वा गारत्थिएण वा
सीओदगवियडेण वा उसिणोदगवियडेण वा उच्छोलावेज्ज वा
पधोवावेज्ज वा, उच्छोलावेंतं वा पधोवावेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥८४॥

जे निग्गंथे निग्गंथीए –

कायंसि वणं अण्णउत्थिएण वा गारत्थिएण वा फुमावेज्ज वा
रयावेज्ज वा, फुमावेंतं वा रयावेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥[illegible]॥

जे निग्गंथे निग्गंथीए –

कायंसि गंडं वा पिलगं वा अरइयं वा असियं वा भगंदलं वा

अण्णउत्थिएण वा गारत्थिएण वा अन्नयरेणं तिक्खेणं सत्थजाएणं

अच्छिंदावेज्ज वा विच्छिंदावेज्ज वा

अच्छिंदावेंतं वा विच्छिंदावेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥८६॥

जे निग्गंथे निग्गंथीए –

कायंसि गंडं वा पिलगं वा अरइयं वा असियं वा भगंदलं वा

अण्णउत्थिएण वा गारत्थिएण वा

अन्नयरेणं तिक्खेणं सत्थजाएणं अच्छिंदावित्ता विच्छिंदावित्ता

पूयं वा सोणियं वा नीहरावेज्ज वा विसोहावेज्ज वा

नीहरावेंतं वा विसोहावेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥८७॥

जे निग्गंथे निग्गंथीए –

कायंसि गंडं वा पिलगं वा अरइयं वा असियं वा भगंदलं वा,

अण्णउत्थिएण वा गारत्थिएण वा

अन्नयरेणं तिक्खेणं सत्थजाएणं अच्छिंदावेत्ता विच्छिंदावेत्ता

पूयं वा सोणियं वा नीहरावेत्ता विसोहावेत्ता सीओदगवियडेण वा

उसिणोदगवियडेण वा उच्छोलावेज्ज वा पधोयावेज्ज वा

उच्छोलावेंतं वा पधोयावेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥८८॥

जे निग्गंथे निग्गंथीए –

कायंसि गंडं वा पिलगं वा अरइयं वा असियं वा भगंदलं वा

अण्णउत्थिएण वा गारत्थिएण वा अन्नयरेणं तिक्खेणं सत्थजाएणं

अच्छिंदावेत्ता विच्छिंदावेत्ता पूयं वा सोणियं वा नीहरावेत्ता विसोहावेत्ता

सीओदगवियडेण वा उसिणोदगवियडेण वा उच्छोलावेत्ता पधोयावेत्ता

अन्नयरेणं आलेवणजाएणं आलिंपावेज्ज वा विलिंपावेज्ज वा

आलिंपावेंतं वा विलिंपावेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥८९॥

जे निग्गंथे निग्गंथीए –

कायंसि गंडं वा पिलगं वा अरइयं वा असियं वा भगंदलं वा,

अण्णउत्थिएण वा गारत्थिएण वा अन्नयरेणं तिक्खेणं सत्थजाएणं

अच्छिंदावेत्ता विच्छिंदावेत्ता पूयं वा सोणियं वा नीहरावेत्ता विसोहावेत्ता

सीओदगवियडेण वा उसिणोदगवियडेण वा उच्छोलावेत्ता पधोयावेत्ता
अन्नयरेणं आलेवणजाएणं आलिंपावेत्ता विलिंपावेत्ता तेल्लेण वा
घएण वा वसाए वा णवणीएण वा अब्भंगावेज्ज वा मक्खावेज्ज वा
अब्भंगावेंतं वा मक्खावेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥६०॥

जे निग्गंथे निग्गंथीए –

कायंसि गंडं वा पिलगं वा अरइयं वा असियं वा भगंदलं वा,
अण्णउत्थिएण वा गारत्थिएण वा अन्नयरेणं तिक्खेणं सत्थजाएणं
अच्छिंदावेत्ता विच्छिंदावेत्ता पूयं वा सोणियं वा नीहरावेत्ता विसोहावेत्ता
सीओदगवियडेण वा उसिणोदगवियडेण वा उच्छोलावेत्ता पधोयावेत्ता
अन्नयरेणं आलेवणजाएणं आलिंपावेत्ता विलिंपावेत्ता तेल्लेण वा
घएण वा वसाए वा णवणीएण वा अब्भंगावेत्ता मक्खावेत्ता
अन्नयरेणं धूवणजाएणं धूवावेज्ज वा पधूवावेज्ज वा
धूवावेंतं वा पधूवावेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥६१॥

* * *

जे निग्गंथे निग्गंथीए –

पालुकिमियं वा कुच्छिकिमियं वा अण्णउत्थिएण वा गारत्थिएण वा
अंगुलीए निवेसाविय निवेसाविय नीहरावेइ
नीहरावेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥६२॥

जे निग्गंथे निग्गंथीए –

दीहाओ नहसिहाओ अण्णउत्थिएण वा गारत्थिएण वा
कप्पावेज्ज वा संठवावेज्ज वा
कप्पावेंतं वा संठवावेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥६३॥

जे निग्गंथे निग्गंथीए –

दीहाइं जंघरोमाइं अण्णउत्थिएण वा गारत्थिएण वा
कप्पावेज्ज वा संठवावेज्ज वा
कप्पावेंतं वा संठवावेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥६४॥

जे निग्गंथे निग्गंथीए –

दीहाइं कक्खरोमाइं अण्णउत्थिएण वा गारत्थिएण वा
कप्पावेज्ज वा संठवावेज्ज वा
कप्पावेंतं वा संठवावेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥६५॥

जे निग्गंथे निग्गंथीए –

दीहाइं मंसुरोमाइं अण्णउत्थिएण वा गारत्थिएण वा
कप्पावेज्ज वा संठवावेज्ज वा
कप्पावेंतं वा संठवावेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥९६॥

जे निग्गंथे निग्गंथीए –

दीहाइं वत्थिरोमाइं अण्णउत्थिएण वा गारत्थिएण वा
कप्पावेज्ज वा संठवावेज्ज वा
कप्पावेंतं वा संठवावेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥९७॥

जे निग्गंथे निग्गंथीए –

दीहाइं चक्खुरोमाइं अण्णउत्थिएण वा गारत्थिएण वा
कप्पावेज्ज वा संठवावेज्ज वा
कप्पावेंतं वा संठवावेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥९८॥

卐 卐 卐

जे निग्गंथे निग्गंथीए –

दंते अण्णउत्थिएण वा गारत्थिएण वा आघंसावेज्ज वा
पघंसावेज्ज वा, आघंसावेंतं वा पघंसावेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥९९॥

जे निग्गंथे निग्गंथीए –

दंते अण्णउत्थिएण वा गारत्थिएण वा उच्छोलावेज्ज वा
पधोयावेज्ज वा, उच्छोलावेंतं वा पधोयावेंतं वा सातिज्जति॥सू०॥१००॥

जे निग्गंथे निग्गंथीए –

दंते अण्णउत्थिएण वा गारत्थिएण वा फूमावेज्ज वा
रयावेज्ज वा, फूमावेंतं वा रयावेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥१०१॥

卐 卐 卐

जे निग्गंथे निग्गंथीए –

उट्ठे अण्णउत्थिएण वा गारत्थिएण वा
आमज्जावेज्ज वा पमज्जावेज्ज वा
आमज्जावेंतं वा पमज्जावेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥१०२॥

जे निग्गंथे निग्गंथीए –

उट्ठे अण्णउत्थिएण वा गारत्थिएण वा
संवाहावेज्ज वा पलिमद्दावेज्ज वा
संवाहावेंतं वा पलिमद्दावेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥१०३॥

जे निग्गंथे णिग्गंथीए –

उट्ठे अण्णउत्थिएण वा गारत्थिएण वा तेल्लेण वा घएण वा
वसाए वा णवणीएण वा मक्खावेज्ज वा भिलिंगावेज्ज वा
मक्खावेंतं वा भिलिंगावेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥१०४॥

जे निग्गंथे निग्गंथीए –

उट्ठे अण्णउत्थिएण वा गारत्थिएण वा लोद्धेण वा कक्केण वा
उल्लोलावेज्ज वा उव्वट्टावेज्ज वा
उल्लोलावेंतं वा उव्वट्टावेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥१०५॥

जे निग्गंथे निग्गंथीए –

उट्ठे अण्णउत्थिएण वा गारत्थिएण वा अप्पणो सीओदगवियडेण वा
उसिणोदगवियडेण वा उच्छोलावेज्ज वा पधोयावेज्ज वा
उच्छोलावेंतं वा पधोयावेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥१०६॥

जे निग्गंथे निग्गंथीए –

उट्ठे अण्णउत्थिएण वा गारत्थिएण वा फुमावेज्ज वा
रयावेज्ज वा, फुमावेंतं वा रयावेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥१०७॥

जे निग्गंथे निग्गंथीस्स –

दीहाइं उत्तरोट्ठाइं अण्णउत्थिएण वा गारत्थिएण वा
कप्पावेज्ज वा संठवावेज्ज वा
कप्पावेंतं वा संठवावेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥१०८॥

जे निग्गंथे निग्गंथीए –

दीहाइं अच्छिपत्ताइं अण्णउत्थिएण वा गारत्थिएण वा
कप्पावेज्ज वा संठवावेज्ज वा
कप्पावेंतं वा संठवावेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥१०९॥

❀ ❀ ❀

जे निग्गंथे निग्गंथीए –

अच्छीणि अण्णउत्थिएण वा गारत्थिएण वा
आमज्जावेज्ज वा पमज्जावेज्ज वा
आमज्जावेंतं वा पमज्जावेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥११०॥

जे निग्गंथे णिग्गंथीए –

अच्छीणि अण्णउत्थिएण वा गारत्थिएण वा
संवाहावेज्ज वा पलिमद्दावेज्ज वा
संवाहावेंतं वा पलिमद्दावेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥१११॥

जे निग्गंथे निग्गंथीए –

अच्छीणि अण्णउत्थिएण वा गारत्थिएण वा
तेल्लेण वा घएण वा वसाए वा णवणीएण वा मक्खावेज्ज वा
भिलिंगावेज्ज वा, मक्खावेंतं वा भिलिंगावेंतं वा सातिज्जति॥सू॥११२॥

❀ ❀ ❀

जे निग्गंथे निग्गंथीए –

अच्छीणि अण्णउत्थिएण वा गारत्थिएण वा
लोद्धेण वा कक्केण वा उल्लोलावेज्ज वा उव्वट्टावेज्ज वा
उल्लोलावेंतं वा उव्वट्टावेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥११३॥

जे निग्गंथे निग्गंथीए –

अच्छीणि अण्णउत्थिएण वा गारत्थिएण वा
सीओदगवियडेण वा उसिणोदगवियडेण वा उच्छोलावेज्ज वा
पधोयावेज्ज वा उच्छोलावेंतं वा पधोयावेंतं वा सातिज्जति॥सू॥११४॥

जे निग्गंथे निग्गंथीए –

अच्छीणि अण्णउत्थिएण वा गारत्थिएण वा
फूमावेज्ज वा रयावेज्ज वा
फूमावेंतं वा रयावेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥११५॥

❀ ❀ ❀

जे निग्गंथे निग्गंथीए –

दीहाइं भुमगरोमाइं अण्णउत्थिएण वा गारत्थिएण वा
कप्पावेज्ज वा संठवावेज्ज वा
कप्पावेंतं वा संठवावेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥११६॥

जे निग्गंथे निग्गंथीए –

दीहाइं पासरोमाइं अण्णउत्थिएण वा गारत्थिएण वा
कप्पावेज्ज वा संठवावेज्ज वा
कप्पावेंतं वा संठवावेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥११७॥

जे निग्गंथे निग्गंथीए –

अच्छिमलं वा कण्णमलं वा दंतमलं वा नहमलं वा
अण्णउत्थिएण वा गारत्थिएण वा नीहरावेज्ज वा विसोहावेज्ज वा
नीहरावेंतं वा विसोहावेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥११८॥

जे निग्गंथे निग्गंथीए –

कायाओ सेयं वा जल्लं वा पंकं वा मलं वा
अण्णउत्थिएण वा गारत्थिएण वा नीहरावेज्ज वा विसोहावेज्ज वा
नीहरावेंतं वा विसोहावेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥११९॥

जे निग्गंथे निग्गंथीए –

गामाणुगामं दूइज्जमाणे अण्णउत्थिएण वा गारत्थिएण वा
सीसदुवारियं कारावेइ, कारावेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥१२०॥

सुत्ता एवकारानीमं ततिओरं गमगमेण जाव सीसदुवारेति सुत्तं । अत्थो पूर्ववत् ।

एसेव गमो णियमा, णिग्गंथीणं पि होइ णायव्वो ।
कारावण संजतेहिं, पुव्वे अवरम्मि य पदम्मि ॥५९३१॥

संजतो गारत्थिमादिएहिं संजतीणं पादामज्जणाती कारवेति, उत्तरोट्ठसुत्तं ण संभवति, अलक्खणाए वा संभवति ॥५९२९॥

जे निग्गंथे निग्गंथस्स सरिसगस्स अंते ओवासे संते ओवासे
न देइ, न देंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥१२१॥

णिग्गयगंथो अंतो वसहीए सतसंजमगुणादीहिं तुल्लो सरिसो संतमिति विज्जमाणं ओवासो त्ति – अवगासो – स्थानमित्यर्थः । अदेंतस्स चउलहू ।

इमो सरिसो –

ठितकप्पम्मि दसविहे, ठवणाकप्पे य दुविहमण्णतरे ।
उत्तरगुणकप्पम्मि य, जो सरिसकप्पो स सरिसो उ ॥५९३२॥

दसविहो ठियकप्पो इमो –

आचेलक्कुद्देसिय, सेज्जायर रायपिंड किइकम्मे ।
वय जेट्ठ पडिक्कमणे, मासं पज्जोसवणकप्पे ॥५९३३॥

इमस्स वि [1]अचेलक्को धम्मो, इमस्स वि उद्देसियं ण कप्पइ । एवं सेज्जायरपिंडो रायपिंडो य ।

कितिकम्मं दुविधं – अब्भुट्ठाणं वंदणं च । तं दुविहं पि इमोवि जहारुहं करेति, इमो वि जहारुहं । अधवा – कितिकम्मं सव्वाहिं संजतीहिं अज्जदिक्खियस्स वि संजतस्स कायव्वं दो वि तुल्लमिच्छंति ।

---

[1] आचेलक्को, इत्यपि पाठः ।

इमस्स वि पंच महव्वयाणि। जो पढमं पंचमहव्वयारूढो सो जिट्ठो सामाइए वा ठविओ। इमस्स वि इमस्स वि अइयारो होउ मा वा, उभयसंझं इमस्स वि इमस्स वि पडिक्कमति। उडुबद्धे मासं मासं एगत्थ अच्छंति इमस्स वि इमस्स वि। चत्तारि मासा वासासु पज्जोसवणकप्पे ण विहरंति इमस्स वि इमस्स वि। एसो दसविहो ठियकप्पो ॥५९३३॥

ठवणाकप्पो दुविहो – अकप्पठवणाकप्पो सेहठवणाकप्पो य –

आहार उवहि सेज्जा, अकप्पिएणं तु जो ण गिण्हावे।
ण य दिक्खेति अणट्ठा, अडयालीसं पि पडिकुट्ठे ॥५९३४॥

आहार-उवहि-सेज्जं अकप्पियं ण गिण्हति। एस अकप्पठवणा। सेहठवणाकप्पो – अट्ठारस पुरिसेसुं, वीसं इत्थीसु, दस णपुंसेसु, एते अडयालीसं ण दिक्खेइ णिक्कारणे ॥५९३४॥

सो वि इमो [1]उत्तरगुणकप्पो –

उग्गमविसुद्धिमादिसु, सीलंगेसुं तु समणधम्मेसु।
उत्तरगुणसरिसकप्पो, विसरिसधम्मो विसरिसो उ ॥५९३५॥
पिंडस्स जा विसोही ॥ गाहा ॥

तत्थ उग्गमसुद्धं गेण्हति, आदिसद्दाओ उप्पायणएसणातो, समितीओ पंच, भावणा बारस, तवो दुविहो, पडिमा बारस, अभिग्गहा दव्वादिया, एते सीलंगगहणेण गहिया। अहवा – सीलंगगहणाओ अट्ठारससीलंगसहस्सा। एयम्मि ठितकप्पे उत्तरगुणकप्पे वा जो सरिसकप्पो सो सरिसो भवति, जो पुण एतेसिं ठाणाणं अण्णयरे वि ठाणे सीदति सो विसरिसधम्मो भवति।

अहवा – ठियकप्पे दसविहे, ठवणाकप्पे य दुविहे, णियमा सरिसो। उत्तरगुणे पुण केसु विसरिसो चेव, जहा तवपडिमाभिग्गहेसु ॥५९३५॥

अहवा सरिसो इमो –

अण्णो वि य आएसो, संविग्गो अहव एस संभोगी।
दोसु वि य अगीयारो, कारणे इतरे वि सरिसाओ ॥५९३६॥

जो संविग्गो सो सव्वो चेव सरिसो, अहवा – जो संभोइओ सो सरिसो। अहवा – कारणं पप्प इयरे त्ति – पासत्थअसंभोतिता ते वि सरिसा भवंति ॥५९३६॥

जो तस्स सरिसगस्स तु, संतो वा से ण देति ओवासं।
णिक्कारणम्मि लहुया, कारणे गुरुगा य आणादी ॥५९३७॥

संतमोवासं निक्कारणियमागयस्स जइ ण देति तो चउलहुं। संतमोवासं कारणियमागयस्स जइ न देइ तो चउगुरुं, आणादिया य दोसा ॥५९३७॥

इमे कारणा जेहिं आगओ –

उदगागणितेणोमे, अद्धाण गिलाण सावयपउट्ठे।
एतेहिं कारणिओ, णिक्कारणिओ य विवरीओ ॥५९३८॥

---

[1] गा० ५९२७।

पच्छाणमे गामाने वा छण्णमयीए साधू ठिता, तेसिं सा वसती उदगेण प्लाविता अगणिणा वा दड्ढा से भग्गा, तेण-सावयदुट्ठेहिं वा उवद्दविज्जमाणा गच्छमागया, पच्चाणीगहियवणा वा, वेज्जोसहकज्जेसु वा गिलाणट्ठमागयस्स एवमादिएहिं पयोयणेहिं जो आगतो सो कारणिओ । अतो विवरीओ दप्पतो आगतो णिक्कारणिओ ॥५६३८॥

वसहिं अभावे बहिं वसंतस्स इमे दोसा –

कुयरदंसमसगसीता, सावय-वाल-सतक्करगा वा ।
दोस बहू वसतो बहितो जे, ते सविसेस उविंति अदेंते ॥५६३९॥

पुच्छितनगर कुमरा पारदारियादि तेहिं उवद्दविज्जति, दंसमसगादीहिं वा खज्जति, उस्सादि वा उण्हं सीतं वा पडति, सीहादिसावएण सप्पादिवालेण वा खज्जइ, तक्करे त्ति चोरा तेहिं वा मुसंति हरिज्जंति । एवमादि बहि वसंते बहुदोसा । जे तस्स साधुस्स बहिं वसतो दोसा ते सव्वे उवेंति त्ति – भवति अदेंतस्स । जं तेण पच्छित्तं तं सव्वं अदेंतस्स भवतीत्यर्थः ॥५६३९॥

किं चान्यत् –

एगट्ठा संभोगो, जा कारुवकारिता परोप्परओ ।
अविविचित्ताऽवच्छल्ला, हवंति एवं तु छेदो य ॥५६४०॥

अविविचित्तभावा अदेंतस्स अवच्छलता य भवति, संभोगवोच्छित्ती, साहम्मियवच्छल्लवोच्छित्ती वा, अहवा – पवयणवुच्छित्ती वा, तम्हा साहूणा साहुस्स वउगोहिएण होयव्वं ॥५६४०॥

जति एक्कभाणजिमित्ता, निहिणो वि हु दीहसोहिया होंति ।
जिणवयणबाहिभूया, धम्मं पुण्णं अयाणंता ॥५६४१॥ कंठ्या

किं पुण जगजीवसुहावहेण संभुंजिऊण समणेणं ।
सक्का हु एक्कमेक्के, णिरग्गं पि व रक्खितो देहो ॥५६४२॥

आवत्तीए जहा अप्पं रक्खंति तहा अण्णो वि आवत्तीए रक्खियव्वो ॥५६४२॥

एवं खेत्ते अखेत्ते वा वसधीए वासो दातव्वो । असंथरणे खेत्ते वि अन्नगच्छस्स अवगासो दातव्वो ।

जतो भण्णति –

अत्थि हु वसभग्गामा, कुदेस-णगरोवमा सुहविहारा ।
बहुगच्छुवग्गहकरा, सीमाछेदेण वसियव्वा ॥५६४३॥

अत्थि त्ति-विज्जए वसभग्गामो णाम जत्थ उडुबद्धे आयरिओ अप्पबितिओ गणावच्छेओ अप्पततिओ एस पंच, एतेण पमाणेणं जत्थ तिण्णि गच्छा परिवसंति एयं वसभखेत्तं ।

वासासु आयरिओ अप्पततितो, गणावच्छेतितो अप्पचउत्थो एते सत्त, एतेणं पमाणेणं जत्थ तिण्णि गच्छा परिवसंति एयं वसभखेत्तं । एते एक्कवीसं, एयं वसभखेत्तं । कुच्छिओ देसो कुदेसो उवमिज्जति जो गामो कुदेस-णगरोवमो, सो य सुहविहारो सुलभभत्तपाणं वसधी वत्थं णिरुवद्दवं च मूत्रभूतिबहुत्वं पुव्वभणियं तत्थप्पमाणेण उवग्गहे वट्टति, ते य बहुगच्छा जति समं ठिया तो साधारणं खेत्तं ।

तत्थ सीमच्छेदेण वसियव्वं, इमो सीमच्छेदो –

तुम्ह सचित्तं, अम्ह अचित्तं ।

अहवा–तुम्ह वाहिं, अम्ह अंतो। तुम्ह इत्थी, अम्ह पुरिसा।

अहवा–तुम्ह सग्गामो अम्ह वाताहडा कलेहिं वा वाडगसाहाहिं वा उब्भामगेहिं।

अहवा–जं लब्भति तं सव्वं सामण्णं।

अहवा–जो जं लाही तस्स तं। एवं सीमच्छेदेण वसियव्वं, णो अधिकरणं कायव्वं। परखेत्ते वि खेत्तियवसेण सीमच्छेदो कायव्वो। खित्तएग त्ति अमायाविणा भवियव्वं ॥५६४३॥

भवे कारणं ण देज्जा वि –

बितियपदं पारंचिय, असिव गिलाणे य उत्तमट्ठे य।
अव्वोच्छित्तीवासे, असति णिक्कारणे जतणा ॥५६४४॥

पारंचिय असिवस्स इमा विभासा –

पारंचिओ ण दिज्ज य, दिज्जति व ण तस्सुवस्सए ठाओ।
दुविहे असिवे वाहिं, ठितपडियरणं च ते वा वी ॥५६४५॥

पारंचिओ अण्णेसिं अप्पणो ठाणं ण देज्जा, पारंचियस्स वा ठाओ न दिज्जति, असिवगहियस्स ण दिज्जति, असिवगहिओ वा वसहीए ठाणं ण देज्ज, असिवगहियस्स अण्णवसहिठियस्स वेयावच्चं कायव्वं, अण्णवसहिठितो वा असिवगहियाण वेयावच्चं करेइ। दुविहं पुण असिवं। चउभंगे पच्छिमा जा दो भंगा साहु अभद्दा ॥५६४५॥

इयाणिं [1]गिलाणउत्तिमट्ठाण विभासा –

अतरंतमिगावण्णहि, मिगपरिसा वा तरंतो अण्णत्थ।
एमेव उतिमट्ठे, समाहि पाणादि उभयम्मि ॥५६४६॥

जेसिं अतरंतो अत्थि सो य आगंतुगो मिगो अगीयत्थो होज्ज अपरिणामो वा ताहे सो अण्णवसहीए ठविज्जति, अहवा – गिलाणो आगओ वत्थव्वाण य मिगपरिसा ताहे सो गिलाणो अण्णत्थ ठविज्जति, एवं उत्तिमट्ठपडिवण्णे वि समाहिणिमित्तं पाणगादि दायव्वं। तत्थ "उभयंमि" त्ति जति आगंतुगो मिगो तो अण्ण-वसहीए ठविज्जति। अह वत्थव्वगपरिसा मिगा तो उत्तिमट्ठपडिवण्णो अण्णवसहीए ठविज्जति ॥५६४६॥

[2]अव्वोच्छित्तिविभासा इमा –

छेदसुतणिसीहादी, अत्थो य गतो य छेदसुत्तादी।
मंतनिमित्तोसहिपाहुडे, य गाहेंति अण्णत्थ ॥५६४७॥

णिसीहमादियस्स छेदसुत्तस्स जो अत्थो आगतो सुत्तं वा मोक्कलाणि वा पच्छित्तविहाणाणि मंताणि वा जोणिपाहुडं वा गाहेंतो अण्णत्थ वा गाहेति अण्णत्थ वा ते मिगा ठविज्जंति, जत्थ वसहीए वा दिज्जति तत्थ मिगाण ओवासो ण दिज्जति।

एवं ता णिक्कारणे पारंचियादियाण ओवासो ण दिज्जते ॥५६४७॥

इमो अववादे अववादो – पुणो इमं कारणमविक्खिऊण असिवादिके पारंचियादीण वि ओवासो दिज्जति –

---

१ गा० ५६४२। २ गा० ५६४२।

जा निग्गंथी निग्गंथीए सरिसियाए अंते ओवासे संते ओवासे-
न देइ न देंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥१२२॥

एसेव गमो णियमा, णिग्गंथीणं पि होइ नायव्वो ।
पुव्वे अवरे य पदे, एगं पारंचियं मोत्तुं ॥५६४८॥ कंठ्या

णवरं – अणवट्ठप्पं संजतीए पारंचियं णत्थि ।

जे भिक्खू मालोहडं असणं वा पाणं वा खाइमं वा साइमं वा
देज्जमाणं पडिग्गाहेइ पडिग्गाहेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥१२३॥

मालोहडं पि तिविहं, उड्ढमहो उभयओ य णायव्वं ।
एक्केक्कं पि य दुविहं जहण्णमुक्कोसयं चेव ॥५६४९॥

उड्ढमालोहडं सिक्कगादिसु, अहोमालोहडं भूमिघरादिसु, उभयमालोहडं मंचादिसु, समश्रेणिस्थितः, अहवा – कुंडिमादिसु भूमिट्ठितो अहोणिगो जं गेण्हति । अग्गतलेहिं ठाउं जं उत्तारेइ तं जहण्णं । पीढगादिसु जं आरोढुं उत्तारेइ तं सव्वं उक्कोसं ॥५६४९॥

भिक्खू जहण्णयम्मी, गेरुत उक्कोसयम्मि नायव्वो ।
अहिडसण मालपडणे, एवमादी तहिं दोसा ॥५६५०॥

भिक्खताओ उपारिउकामा साहुणा पडिसिद्धा तच्चन्नियट्ठा गिण्हइ अहिणा डक्का मया । मालाओ उपारिउकामा साहुणा पडिसिद्धा परिव्वायगट्ठा उत्तारेंती पडिया, जंतखीलेण पोट्टं फाडियं मया ॥५६५०॥

इमे उक्कोसे उदाहरणा –

आसंद पीढ मंचग, जंतोदुक्खलपडंत उभयवहो ।
वोच्छेय-पदोसादी, उड्डाहमणा णिवातो य ॥५६५१॥

सेसं पिंडणिज्जुत्ति-अणुसारेण भाणियव्वं ।

इमा सोही –

सुत्तणिवातो उक्कोसयम्मि तं खंधमादिसु हवेज्जा ।
एतेसामण्णतरं, तं सेवंतम्मि आणादी ॥५६५२॥

उक्कोसे चउलहुं, जहण्णे मासलहुं, सेसं कंठं ।

इमं बितियपदं –

असिवे ओमोयरिए, रायदुट्ठे भए व गेलण्णे ।
अद्धाणरोहए वा, जयणागहणं तु गीयत्थे ॥५६५३॥

अणेगसो गतत्था । णवरं-गीयत्थो पणगपरिहाणीए जयणाए गेण्हइ ॥५६५३॥

जे भिक्खू कोट्ठियाउत्तं असणं वा पाणं वा खाइमं वा साइमं वा
उक्कुज्जिय निक्कुज्जिय देज्जमाणं पडिग्गाहेइ
पडिग्गाहेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥१२४॥

पुरिसप्पमाणा हीणाधिया वा चिक्खल्लमती कोट्ठिआ भवति, कलिजो णाम वंसमयो कडवल्लो सट्टी ति भण्णति। अण्णे भणंति – उट्टियाउवरि हुत्तिकरणं उक्कुज्जियं, उड्डुए तिरियहुत्तकरणं अवकुज्जियं, उहरिय त्ति – पेढियमादिसु आरुभिउं ओआरेति। अथवा – कायं उच्चं करेज्जा उक्कुज्जियडंडायतं तद्रद् गृण्हाति, कायं उड्डं कृत्वा गृण्हाति – उण्णमिय इत्यर्थः।

कोट्ठियमादीएसुं, उभओ मालोहडं तु णायव्वं।
ते चेव तत्थ दोसा, तं चेव य होति बितियपयं ॥५९५४॥

एवं उभयमालोहडं दंसियं कं। ते चेव दोसा बितियपयं च।

जे भिक्खू मट्टिओलित्तं असणं वा पाणं वा खाइमं वा साइमं वा
उब्भिंदिय निब्भिंदिय देज्जमाणं पडिग्गाहेइ
पडिग्गाहेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥१२५॥

घयफाणियादिभायणे छूढं तं पिहितं सरावणादिणा मट्टियाए उल्लित्तं तं उब्भिंदियं देंतस्स जो गेण्हइ तस्स चउलहुं।

पिहितुब्भिण्णकवाडे, फासुग अप्फासुगे य बोधव्वे।
अप्फासु पुढविमादी, फासुगछगणादिदद्दरए ॥५९५५॥

उब्भिण्णं दुविधं – पिहुब्भिण्णं वा कवाडुब्भिण्णं च।

पिहुब्भिण्णं दुविधं–फासुयं अफासुयं च। जं तं फासुयं तं अचित्तं वा मीसं वा। अफासुयं पुढविमादि-छसु काएसु जहासंभवं भाणियव्वं। जं फासुअं छगणेण अहवा – वत्थेण चम्मेण वा दद्दरियं। दद्दरपिहि-उब्भिण्णे मासलहुं, सेसपिहुब्भिण्णेसु चउलहुं, अणंतेसु चउगुरुं, परित्तमीसेसु मासलहुं, अणंतमीसेसु मासगुरुं, साहुणिमित्तं उब्भिण्णे कयविक्कतेसु अधिकरणं कवाडपिहितुब्भिण्णे कुंचियवेधे तालए वा आवत्तणपेढियाए वा तसमादिविराधणा। सेसं जहा पिंडणिज्जुत्तीए ॥५९५५॥

एतेसामण्णतरं, पिहितुब्भिण्णं तु गेण्हती जो तु।
सो आणा अणवत्थं, मिच्छत्त-विराहणं पावे ॥५९५६॥ कंठ्या

असिवे ओमोयरिए, रायदुट्ठे भए व गेलण्णे।
अद्धाण रोहए वा, जयणा गहणं तु गीयत्थो ॥५९५७॥ पूर्ववत्

जे भिक्खू असणं वा पाणं वा खाइमं वा साइमं वा पुढविपतिट्ठियं पडिग्गाहेति
पडिग्गाहेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥१२६॥

जे भिक्खू असणं वा पाणं वा खाइमं वा साइमं वा आउपतिट्ठियं पडिग्गाहेति
पडिग्गाहेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥१२७॥

जे भिक्खू असणं वा पाणं वा खाइमं वा साइमं वा तेउपतिट्ठियं पडिग्गाहेति
पडिग्गाहेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥१२८॥

जे भिक्खू असणं वा पाणं वा खाइमं वा साइमं वा वणस्सतिकायपतिट्ठियं पडिग्गाहेति पडिग्गाहेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥१२९॥

सच्चित्तमीसएसुं, काएसु य होंति दुविहनिक्खित्तं ।
अणंतर-परंपरे वि य, विभासियव्वं जहा सुत्ते ॥५६५८॥

पुढवादी काया ते दुविधा – सच्चित्ता मीसा वा । सचित्तेसु अणंतरणिक्खित्तं परंपरणिक्खित्तं वा । मीसेसु वि अणंतरणिक्खित्तं परंपरणिक्खित्तं वा । पिंडणिज्जुत्तिगाहासुत्ते जहा तहा सवित्थरं भाणियव्वं । आयारबितियसुयक्खंधे वा जहा सत्तमे पिंडेसणासुत्ते तहा भाणियव्वं ॥५६५८॥

सुत्तणिवातो सच्चित्तऽणंतरे तं तु गेण्हती जो उ ।
सो आणा अणवत्थं, मिच्छत्त-विराधणं पावे ॥५६५९॥

परित्तसचित्तेसु अणंतरणिक्खित्ते चउलहुं, एत्थ सुत्तं णिवयति । सचित्तपरंपरे मासलहुं, मीसअणंतरे मासलहुं, परंपरे पणगं, अणंते एते चेव गुरुगा पच्छित्ता ॥५६५९॥

चोदगाह –

तत्थ भवे णणु एवं, उक्खिप्पंतम्मि तेसि आसासो ।
संजतिणिमित्तं घट्टण, थेरुवमाए ण तं जुत्तं ॥५६६०॥

पुढवादिकायाण उवरि ठियं जं तम्मि उक्खिप्पंते णणु तेसिं आसासो भवति ?

आचार्याह – तम्मि उक्खिप्पंते जा संघट्टणा सा संजयणिमित्तं, ताण य अप्पसंघयणाण संघट्टणाए महंती वेदणा भवति ॥५६६०॥

एत्थ थेरुवमा –

जरजज्जरो उ थेरो, तरुणेणं जमलपाणिमुद्धहतो ।
जारिसवेदण देहे, एगिंदियघट्टिते तह उ ॥५६६१॥

जहा जराजुण्णदेहो थेरो वलवता तरुणेण जमलपाणिणा मुद्धे आहते जारिसं वेयणं वेयति, ततो अधिकतरं ते संघट्टिता वेयणं अणुहवंति, तम्हा ण जुत्तं जं तुमं भणसि ॥५६६१॥

इमं बितियपदं –

असिवे ओमोयरिए, रायदुट्ठे भए व गेलण्णे ।
अद्धाण रोहए वा, जयणा गहणं तु गीयत्थे ॥५६६२॥

पूर्ववत् । गीयत्थो इमाए जयणाए गहणं करेति – पुव्वं मीसे परंपरट्ठितो गेण्हति, ततो मीसे अणंतरो, ततो सच्चित्ते परंपरे, ततो सच्चित्ते अणंतरे, एवं अणंतकाए वि, एस परित्ताणंतेसु कमो दरिसिओ ॥५६६२॥

गहणे पुण इमा जयणा –

पुव्वं मीसपरंपर, मीसे तत्तो अणंतरे गहणं ।
सच्चित्त परंपरऽणंतरे य एमेव य अणंते ॥५६६३॥

पुव्वं परित्ते मीसे परंपरट्ठितो गेण्हति, ततो मीसअणंतपरंपरं, ततो सचित्तपरित्तपरंपरं, ततो अणंतमीसअणंतरं, ततो अणंतसचित्तपरंपरं, ततो परित्तसचित्तअणंतरं, ततो अणंतसचित्तअणंतरं आहारे भणियं ॥५९६३॥

आहारे जो उ गमो, णियमा सो चेव होइ उवहिम्मि ।
णायव्वो तु मतिमता, पुव्वे अवरम्मि य पदम्मि ॥५९६४॥ कंठ्या

जे भिक्खू अच्चुसिणं असणं वा पाणं वा खाइमं वा साइमं वा सुप्पेण वा विहुणेण वा तालियंटेण वा पत्तेण वा पत्तभंगेण वा साहाए वा साहाभंगेण वा पेहुणेण वा पेहुणहत्थेण वा चेलेण वा चेलकण्णेण वा हत्थेण वा मुहेण वा फुमित्ता वीइत्ता आहट्टु देज्जमाणं पडिग्गाहेइ पडिग्गाहेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥१३०॥

जे भिक्खू असणं वा पाणं वा खाइमं वा साइमं वा उसिणुसिणं पडिग्गाहेइ पडिग्गाहेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥१३१॥

जे भिक्खू असणादी, उसिणं णिव्वविय संजयट्ठाए ।
विहुवणमाईएहिं, पडिच्छए आणमादीणि ॥५९६५॥

"णिव्वाविय" त्ति उल्लवेऊण, सेसं कंठ्यं ।

उसिणे घेप्पंते इमे दोसा—

दायग-गाहगडाहो, परिसडणे काय-लेव-णासो य ।
डज्झति करोति पादस्स छड्डणे हाणि उड्डाहो ॥५९६६॥

परिसडंते वा भूमीते छक्कायवहो, अच्चुसिणेण वा भाणस्स लेवो डज्झति, उसिणे दिज्जमाणे वा करे डज्झमाणो पायं तं छड्डेज्ज, तम्मि भग्गे असति भायणस्स अप्पणो हाणी, बहु असणादि परिट्ठवियं दट्ठुं "वहि फोड" त्ति उड्डाहो । जणो वा पुच्छति – "कहं डड्ढो" ? त्ति । संजयस्स भिक्खं देज्जमाणो जणे फुसंते उड्डाहो त्ति ॥५९६६॥

इमो अववादो –

असिवे ओमोयरिए, रायदुट्ठे भए व गेलण्णे ।
अद्धाण रोहए वा, काले वा अतिच्छमाणम्मि ॥५९६७॥ पूर्ववत्

काले अतिच्छमाणे त्ति जाव तं परिक्कमेण सीतीभवति ताव आइच्चो उवत्थमं गच्छति । अतो मूगादीहि तुरियं सीयलिज्जति, ण दोसो ॥५९६७॥

उसिणे पुण कारणे घेप्पंते इमा जयणा –

गिण्हति णिसीतितुं वा, सज्झाए महीय वा ठवेऊणं ।
पत्ताबंधगते वा, घोलणगहिते व जतणाए ॥५९६८॥

उवयरिता पदसपियं जहा ण उज्झति तहा गेण्हति । अहवा – मंचगे मंचिकाए वा मज्झे भूमीए वा पादं ठवेत्ता गेण्हति। पत्तगबंधगतो वा गेण्हति। अच्चुसिणं च पादट्ठितं घोलेइ, मा लेवो उज्झिहिति । एयाए जयणाए कारणे गेण्हतो अदोसो ॥५९६८॥

जे भिक्खू उस्सेइमं वा संसेइमं वा चाउलोदगं वा वालोदगं वा तिलोदगं वा तुसोदगं वा जवोदगं वा आयामं वा सोवीरं वा अंबकंजियं वा सुद्धवियडं वा अहुणा धोयं अणंबिलं अपरिणयं अवक्कंतजीवं अविद्धत्थं पडिग्गाहेइ पडिग्गाहेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥१३२॥

उस्सेतिममादीया, पाणा वुत्ता उ जत्तिया सुत्ते ।
तेसिं अण्णतरायं, गेण्हंते आणमादीणि ॥५९६९॥

उसिणं सीतोदगे छुब्भति तं उस्सेइमपाणयं । जं पुण उसिणं चेव उवरि सीतोदगेण चेव सिंचियं तं संसेइमं। अहवा–संसेतिमं, तिला उण्हपाणिएण सिण्णा जति सीतोदगा धोवंति तो संसेतिमं भण्णति। चाउलाण धोवणं चाउलोदगं। अहुणा धोतं अचिरकालधोतं। रसतो अणंबीभूयं। जं जीवेण विप्पमुक्कं तं वक्कतं, ण वक्कंतं अवक्कंतं, सचेतनं मिश्रं वा इत्यर्थः। जमवण्णसंजातं तं परिणयं, न परिणयं अपरिणयं – स्वभाववर्णस्थमित्यर्थः। जं वण्णगंधरसफासेहिं सव्वेहिं ध्वस्तं तं विध्वस्तं, अणेगधा वा ध्वस्तं विध्वस्तं, ण विद्धत्थं अविद्धत्थं, सर्वथा स्वभावस्थमित्यर्थः। अहवा – एए एगट्ठिया । अपरिणयं गेण्हंतस्स चउलहु, आणादिया य दोसा ॥५९६९॥

उस्सेइमस्स इमं वक्खाणं –

सीतोदगम्मि छुब्भति, दीवगमादी उसेइमं पिट्ठं ।
संसेइमं पुण तिला, सिण्णा छुब्भंति जत्थुदए ॥५९७०॥

मरहट्ठविसए उस्सेदया दीवगा सीओदगे । छुब्भंति । उस्सेइमे उदाहरणं, जहा-पिट्ठं । अहवा – पिट्ठस्स उस्सेज्जमाणस्स हेट्ठजं पाणियं तं उसेइमं । पच्छद्धं गतार्थम् ॥५९७०॥

पढमुस्सेतिममुदयं, अकप्पकप्पं च होति केसिंचि ।
तं तु ण जुज्जति जम्हा, उसिणं मीसं ति जा दंडो ॥५९७१॥

ते दीवगादी उस्सेतिमा, एकम्मि पाणिए दोसु तिसु वा णिच्चलिज्जंति तत्थ वितियततिज्जा य सव्वेसि चेव अकप्पा, पढमं पाणियं तं पि अकप्पं चेव । केसिं चि आयरियाणं कप्पं, तं ण घडति ।

कम्हा ? जम्हा उसिणोदगमवि अणुव्वत्ते डंडे मीसं भवति, तं पुण कहिं उस्सेतिमेसु छूढेसु अचित्तं भविष्यतीत्यर्थः ? ॥५९७१॥

इमो चाउलोदे विही –

पढमं वितियं ततियं, चाउलउदगं तु होति सम्मिस्सं ।
तेण परं तु चउत्थे, सुत्तणिवातो इहं भणितो ॥५९७२॥

पढम-वितिय-ततिय-चाउलोदगा एते णियमा मिस्सा भवंति, तेण परं चउत्थादि सचित्ता । एत्थ सुत्तणिवातो चउलहुगमित्यर्थः । आदिल्लेसु तिसु वि मासलहुं ।

अण्णे पुण – ततिए वा चाउलसोधणे सुत्तणिवायमिच्छति, जेण तत्थ बहुं अपरिणयं, थोवं परिणयमिति ॥५९७२॥

जं उस्सेतिमादि मिस्सं तस्सिमो गहणविही –

कालेणं पुण कप्पति, अंबरसं वण्णगंधपरिणामं ।
वण्णातिविगतलिंगं, णज्जति वुक्कंतजीवं ति ॥५९७३॥

तं उस्सेतिमं चिरकालं अच्छंतं जया रसतो अंबरसं, वण्णतो विवण्णं, गंधओ अण्णगंधं, फासतो चिक्खिल्लं, एवं तं उदगं वण्णादिविगतलिंगं दट्ठुं णज्जति जहा विगयजीवं ति तहा घेप्पति ।

चोदगाह – "जेसिं फुडं गमणादिकं जीवलिंगं ते णज्जंति, जहा विगयजीवा त्ति। पुढवादी पुण अव्वत्तजीवलिंगे कहं णाता, जहा विगतजीवं ?" ति ॥५९७३॥

आचार्याह –

कामं खलु चेतण्णं, सव्वेसेगिंदियाण अव्वत्तं ।
परिणामो पुण तेसिं, वण्णादि इंधणासज्ज ॥५९७४॥

पुव्वद्धं कंठं । पच्छद्धे इमो अत्थो–बहुमज्झत्थो चिंधणेण जहासंखं अप्पमज्झ चिरकालोवलक्खिता जहा वण्णादी तहा तेसिं अव्वभिचारी अजीवत्ते परिणामो लक्खिज्जति ॥५९७४॥

एमेव चाउलोदे, पढमे बिति-ततिय तिण्णि आएसा ।
तेण परं चिरधोतं, जहि सुत्तं मीसयं सेसं ॥५९७५॥

चाउलोदगे वि जे पढमबितितिता चाउलोदगा ते अहुणा धोता मीसा ।"तेण परं चिर धोयं जहिं सुत्तं" ति तेण परं चउत्थादि चाउलोदगं तं चिरधोयं पि सचित्तं, जहिं सुत्तं णिवयति तस्याग्रहणमेव । जं पुण "मीसयं सेसं" ति तम्मि इमे तिण्णि अणागमिगा आदेसा –

तत्थेगो भणति – चाउला धोवित्ता जत्थ तं चाउलोदगं छुब्भति तत्थ जातो कण्णे फुसिताओ लग्गाओ ताओ ण जाव सुक्कंति ताव तं मीसं, "तेण परं" ति – तासु सुक्कासु तं अचित्तं भवतीत्यर्थः । १ ।

अवरो भणति – चाउला जाव सिज्झंति ताव त मीसं, तेण परं अचित्तं पूर्ववत् । २ ।

अवरो भणति – तम्मि चाउलोदगे जे बुब्बुआ ते जाव अच्छति ताव मीसं, तेण परं अचित्तं पूर्ववत् । ३ ।

आचार्याह–"तेण परं चिरधोयं' ति एते अक्खरा पुणो चारिज्जंति, जेण फुसिताओ सि(सी)यकाले चिरं पि अच्छंति । गिम्हकाले लहुं सुसंति, चाउला वि लहुं चिरेण वा सिज्झंति, बुब्बुआ वि चिरं नीवाए अच्छंति, पवाए लहुं विणस्संति, "तेणं" ति तेण कारणेण एते अणादेसा । "परं" ति एतेसिं आएसाणं इमं वरं प्रधानं आगमितं आदेसंतरं– "[1]जं जाणेज्ज चिराधोतं" सिलोगो । बहुप्पसण्णं च मतीए दंसणेण य अचित्तं जाणेत्ता गेण्हति । जत्थ "[2]वालधोवणं" ति आलावगो-चमरिवाला धोव्वंति तक्कादीहिं, पच्छा ते चमरा सुद्धोदगेण धोवंति । तत्थवि पढमवितियततिया मीसा, जं च पच्छिमं तं सचित्तं, तत्थ सुत्तनिवातो । अहवा वालधोवणं सुरा गालिज्जति जाए कंबलीए सा पच्छा उदएण धोवइ, तत्थ वि पढमाति धोवणा मीसा,

१ दशवै० अ० ५ उ० १ गा० ७६ । २ गा० सूत्र १३२ ।

पच्छिमा सचित्ता, तम्मि सुत्तणिवातो। अहवा – नालघोलणं रलयोरेकत्वात् वारागागदुगो, सो तक्कवियडादि-भावितो घोव्वइ, तत्थ वि पढमादी भीसा, पच्छिमा सचित्ता, तम्मि सुत्तणिवातो। सव्वेसु मीसं कालेण परिणयं गेज्झं ॥५९७५॥

इमं वितियपदं –

> असिवे ओमोयरिए, रायदुट्ठे भए व गेलण्णे।
> अद्धाण रोहए वा, जयणा गहणं तु गीयत्थे ॥५९७६॥ पूर्ववत्

जे भिक्खू अप्पणो आयरियत्ताए लक्खणाइं वागरेइ
वागरेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥१३३॥

जहा मे करपादेसु लेहा णिव्वणिता, चंदचक्कंकुसादी दीसंति सुसंठाणे, सुपमाणता य देहस्स, तहा मे अवस्सं आयरिएण भवियव्वं,-जो एवं वागरेइ तस्स चउलहुं आणादिया य।

ते लक्खणा इमे –

> माणुम्माणपमाणं, लेहसत्तवपुअंगमंगाइं।
> जे भिक्खू वागरेति, आयरियत्तादि आणादी ॥५९७७॥

माणस्स उम्माणस्स य इमा विभासा –

> छड्डेति तो य दोणं, छूढो दोणीए जो तु पुण्णाए।
> सो माणजुतो पुरिसो, ओमाणे अद्धभारगुरू ॥५९७८॥

माणं नाम पुरिसप्पमाणातो ईसिअतिरित्ता उट्टिया कीरइ सा पाणियस्स समणिवद्धा भरिज्जति, पच्छा तत्थ पुरिसो पविसप्पति, जति द्रोणो पाणियस्स छड्डेति तो माणजुत्तो पुरिसो, अहवा – पुरिसं छोढूण पच्छा पाणियस्स भरिज्जति तम्मि पुरिसे ओसित्ते जइ सा कुंडी द्रोणं पाणियस्स पडिच्छइ तो माणजुत्तो। उम्माणे त्ति जति तुलाए आरोविओ अद्धभारं तुलति तो उम्माणजुत्तो भवति ॥५९७८॥

> अट्ठसतमंगुलुच्चो, समुहाइं वा समुस्सितो णवओ।
> सो होति पमाणजुतो, संपुण्णंगो व जो होति ॥५९७९॥ कंठ्या

[1]लेह त्ति अस्य व्याख्या –

> मणिवंधाओ पवत्ता, अंगुट्ठे जस्स परिगता लेहा।
> सा कुणति धणसमिद्धं, लोगपहाणं च आयरियं ॥५९८०॥ कंठ्या

सत्तवपुअंगमगाणं इमा विभासा –

> सत्तं अदीणता खलु, वपुतेओ जस्स ऊ भवइ देहे।
> अंगा वा सुपइट्ठा, लक्खण सिरिवच्छमा इतरे ॥५९८१॥

सत्वं प्रधानं महंतीए वि आवदीए जो अदीणो भवति सो सत्वमंतो। वपू णाम तेयो, सो जस्स अत्थि देहो सो वपुमंतो। अट्ठअंगा ताणि जस्स सुपतिट्ठसुसंठाणाणि, [2]अंगाणि त्ति उवंगाणि ताणि वि जस्स

---

१ गा० ५९७७। २ गा० ५९७७।

सुपइट्ठुसुसंठियाणि, अण्णाणि य सिरिवच्छमादीणि लक्खणाणि, "इयरे" त्ति वंजणा ते य मसतिलगादी। अहवा – सह जायं लक्खणं, पच्छा जायं वंजणं, ॥५९८१॥

अहवा भणेज्ज –

अमुगायरियसरिच्छाइं लक्खणाइं ण पासह महं ति।
एरिसलक्खणजुत्तो, य होति अचिरेण आयरिओ ॥५९८२॥

अमुगस्स आयरियस्स जारिसा हत्थपादादिसु लक्खणा, जारिसं पि वा देहं, ममं पि तारिसं चेव। पच्छद्धं कंठं ॥५९८२॥

इमे दोसा –

गारवकारणखेत्ताइणो य सच्चमलियं च होज्जा हि।
विदरीयं एंति जदो, केति णिमित्ता ण सव्वे उ ॥५९८३॥

अहं आयरिओ भविस्सामि त्ति गारवकारणे खित्तादिचित्तो भवेज्जा, सायवाहणो इव। अहवा – छउमत्थोवलक्खिया लक्खणा सच्चा वा हवेज्जा अलिता व होज्ज। पच्छद्धं कंठं। अहवा – इमो आयरिओ होहिइ त्ति कोइ पडिणीओ जीविताओ ववरोविज्ज ॥५९८३॥

एयस्स इमो अववातो –

वितियपदमणप्पज्झे, वागरे अविकोविते य अप्पज्झे।
[1]कज्जे [2]अण्णपभावण, [3]वियाणणट्ठा य [4]जाणमवि ॥५९८४॥

पडिणीयपुच्छणे को, गुरु मे किं सो हं ति पेच्छ मे अंगं।
गिहि-अण्णतित्थिपुट्ठे, य जुंगिते जो अणोतप्पे ॥५९८५॥

खित्तादिगो अणप्पज्झो देहो अजाणंतो अप्पणो लक्खणो पगासेज्ज। अप्पज्झो वा "कज्जे" त्ति कोइ पडिणीतो पुच्छेज्जा – कतमो मे गुरु ?

ताहे जो आरोहपरिणाहजुत्तो सो भणति – किं तेण ? अहं सो।

पडिणीओ भणति – कहं णायं ?

साहू भणति – पिच्छ मे अंगं लक्खणजुत्तं।

"[2]अण्णपभावणं" ति अस्य व्याख्या – गिहिअण्णतित्थिएण वा पुच्छियं – को मे गुरु ? त्ति।

आयरिओ जति सरीरजुंगितो ताहे जो अण्णो साहू अजुंगितदेहो अलज्जणिज्जो, आगमेसु य कयागमो, एवं सो अण्णो पभाविज्जति, अप्पणा वा पभावेति ॥५९८५॥

[3]वियाणणट्ठाए त्ति अस्य व्याख्या –

अट्ठवितगणहरे वा, कालगते गुरुम्मि भणतऽहं जोग्गो।
देहस्स संपदं मे, आरोहादी पलोएह ॥५९८६॥

---

1 गा० ५९८४ द्वा० १। 2 गा० ५९८४ द्वा० २। 3 गा० ५९८४ द्वा० ३।

अट्ठविते गणधरे आयरिया कालगया । तत्थ जे वसभा अण्णं अलक्खणजुत्तं ठवेउंकामा, ताहे सो लक्खणजुत्तो अप्पाणं भणावेति –

अप्पणो वा भणति – आयरियपदजोग्गो देहसंपदं मे पेच्छह । अह आयरियो वि अलक्खणजुत्तं ठवेउकामो, तत्थ वि एवं चेव अप्पाणं वण्णेति - समागमओ जारिसो गुणे भणिओ तारिसं ठवेह, सरीरसंपदाते आरोहादिजुत्तो ठवेयव्वो । एवं [1]जाणंतो वि भणेज्जा ॥५९८६॥

जे भिक्खू गाएज्ज वा हसेज्ज वा वाएज्ज वा णच्चेज्ज वा अभिणवेज्ज वा
हयहेसियं हत्थिगुलगुलाइयं उक्कुट्ठसीहनायं वा करेइ
करेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥१३४॥

सरकरणं सरसंचारो वा गेयं, मुहं विप्फालिय सविकारकहक्कहं हसणं, संखमादि आओज्जं वा वाएज्ज, पाद-जंघा-ऊरु-कडि-उदर-बाहु-अंगुलि-वदण-णयण-भमुहादिविकारकरणं नृत्यं, पुक्कारकरणं, उक्किट्ठसंघयणसत्ति-संपन्नो रुट्ठो तुट्ठो वा भूमी अप्फालेत्ता सीहस्सेव णायं करेति, हयस्स सरिसं णायं करेइ हयहेसियं । वाणरस्स सरिसं किलिकिलितं करेति, अण्णं वा मयगज्जिआदिजीवरुतं करेंतस्स चउलहुं आणादिया य दोसा ।

जे भिक्खू गाएज्जा, णच्चे वाएज्ज अभिणवेज्जा वा ।
उक्किट्ठहेसियं वा, कुज्जा वग्गेज्ज वीणादी ॥५९८७॥

अहिणओ परस्स सिक्खावणा, नृत्यविकार एव वलितं डिंडिकवत्, जावतिया मुहं विप्फालेत्ता गीयउक्कुट्ठिमादिया करेंति ॥५९८७॥

तेसु इमे दोसा –

पुव्वामयप्पकोवो, अभिणवसूलं व अण्णगहणं वा ।
असंपुडणं च भवे, गायणउक्किट्ठिमादीसु ॥५९८८॥

आमयो त्ति रोगो सो उवसंतो पकुप्पति, अहिणवं वा सूलं उप्पज्जइ, "अन्नगहण" त्ति गलगस्स उभओ [1]कण्णचूंचेसु सरणीतो मता तो तासु वातमेंभगहितासु य अणायतं मुहजंतं हवेज्ज, अहवा – अण्णगहणं गंधव्विउ त्ति काउं रायादिणा घेप्पेज्जा, मुहं वा असंपुडं वातसिभदोसेण अच्छेज्जा ॥५९८८॥

एते चेव य दोसा, असंपुडणं मुइत्तु सेसेसु ।
अण्णतरइंदियस्स व, विराहणा कायमुड्डाहो ॥५९८९॥

सेसा जे णच्चणादिता पदा तेसु वि एते चेव दोसा । मुहस्सवि असंपुडणं एक्कं मोत्तुं अण्णतरं वा हत्थपादादि सोतादि वा उप्फिडेंतो लुसेज्जा, एवमादिया आयविराहणा । गायणादिसु वा पाणजातिमुहप्पवेसे संजमविराहणा । णच्चणादिसु उप्फिडंतो पाणविराहणं करेज्ज अभिहणेज्ज वा । एवं कायविराहणा । एयासु आयसंजमविराहणासु सट्ठाणपच्छित्तं, गेय-णच्चणादिसु सविगारो अणिहुतो वा म जतो त्ति जणो भणेज्जा, उड्डाहं वा करेज्जा ॥५९८९॥

बितियपदमणप्पज्झे, पसत्थजोगे य अतिसयप्पमत्ते ।
अद्धाण वसण अभियोग बोहिए तेणमादिसु वा ॥५९९०॥

खित्तादिअणप्पज्झो सेहो वा अजाणंतो गीतादि करेज्ज ॥५९९०॥

---

[1] गा० ५९८४ द्वा० ४ ।

"[1]पसत्थजोए" त्ति अस्य व्याख्या –

एस पसत्थो जोगो, सद्दप्पडिबद्धे वाए गाए वा ।
अण्णो वि य आएसो, धम्मकहं पवत्तयंतो उ ॥५९९१॥

कारणट्ठिया सद्दपडिबद्धाए वसहीए तत्थ गेयं करेंति, आओज्जं वा वाएंति, मा अप्पणो अण्णेसिं मोहुब्भवेण विसोत्ति हवेज्ज ।

अहवा – समोसरणादिसु पुच्छगवायणं करेंतो गंधव्वेण कज्जंति ॥५९९१॥

"[2]अतिसय पत्ते" त्ति अस्य व्याख्या –

केवलवज्जेसु तु अतिसएसु हरिसेण सीहणायादी ।
उक्किट्ठ मेलण विहे, पुव्वव्वसणं व गीतादि ॥५९९२॥

वीतरागत्वात् न करोति, तेन केवलातिसउप्पत्ति वज्जेत्ता सेसेसु अवधिलंभादिएसु अतिसएसु उप्पण्णेसु हरिसितं सीहणायं करेज्ज । अण्णत्थ वा [3]पडिणियत्तेण स वेइयासु आरूढो सीहनायं करिज्जा । [4]अद्धाणपडिवण्णा महल्लसत्थेण परोप्परं फिडित्ता मिलणट्ठा उक्किट्ठसद्दं संकरिज्जा । "[5]वसण" त्ति कस्स ति पुव्वं गिहिकाले गीतादिगं आसि, तं स पव्वतितोवि वसणाओ करेज्जा, रायादिअभिओगेण वा ॥५९९२॥

अहवा –

[6]अभिओगे कविलज्जो, उज्जेणीए उ रोधसीसो तु ।
बोहियतेणे महुरा, खमएणं सीहणादादी ॥५९९३॥

सगारअभिओगओ जहा कविलेण कयं तहा करिज्ज । अहवा – जहा रोहसीसेण उज्जेणीए रायपुरोहियसुयाभिओगतो कयं । बोहिगतेणेसु जहा महुराए खमएण सीहणा दो कओ तहा करेज्ज ॥५९९३॥

जे भिक्खू भेरि-सद्दाणि वा पडह-सद्दाणि वा मुरव-सद्दाणि वा मुइंग-सद्दाणि वा
नंदि-सद्दाणि वा झल्लरि-सद्दाणि वा वल्लरि-सद्दाणि वा
डमरुग-सद्दाणि वा मड्डय-सद्दाणि वा सडुय-सद्दाणि वा पएस-सद्दाणि वा
गोलुइ-सद्दाणि वा अन्नयराणि वा तहप्पगाराणि वितयाणि सद्दाणि
कण्णसोयपडियाए अभिसंधारेइ अभिसंधारेंतं वा सातिज्जति ।सू।१३५।

जे भिक्खू वीणा-सद्दाणि वा विवंचि-सद्दाणि वा तुण-सद्दाणि वा
वव्वीसग-सद्दाणि वा वीणाइय-सद्दाणि वा तुंबवीणा-सद्दाणि वा
झोडय-सद्दाणि वा ढंकुण-सद्दाणि वा अन्नयराणि वा तहप्पगाराणि वा
तयाणि सद्दाणि कण्णसोयपडियाए अभिसंधारेइ
अभिसंधारेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥१३६॥

---

१ गा० ५९९० । २ गा० ५९९० । ३ पडिणियत्तगेण सावयाइसु आरूढो इत्यपि पाठः । ४ गा० ५९९० । ५ कुक्कुडिय, इत्यपि पाठः । ६ गा० ५९९० ।

जे भिक्खू ताल-सद्दाणि वा कंसताल-सद्दाणि वा लित्तिय-सद्दाणि वा गोहिय-सद्दाणि वा मकरिय-सद्दाणि वा कच्छभि-सद्दाणि वा महइ-सद्दाणि वा सणालिया-सद्दाणि वा वलिया-सद्दाणि वा अन्नयराणि वा तहप्पगाराणि वा झुसिराणि कण्णसोयपडियाए अभिसंधारेइ, अभिसंधारेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥१३७॥

जे भिक्खू संख-सद्दाणि वा वंस-सद्दाणि वा वेणु-सद्दाणि वा खरमुहि-सद्दाणि वा परिलिस-सद्दाणि वा वेवा-सद्दाणि वा अन्नयराणि वा तहप्पगाराणि वा झुसिराणि कण्णसोयपडियाए अभिसंधारेइ, अभिसंधारेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥१३८॥

शंखं शृंगं, वृत्तः शंखः, दीर्घाकृति स्वल्पा न संलिगा। खरमुखी काहला, तस्स मुहत्थाणे खरमुहाकारं कट्ठमयं मुहं कज्जति। पिरिपिरित्ता तनतोणसलागातो सु (झु) सिराओ जमलाओ संगा (वा) तिज्जंति। मुहमूले एगमुहा वा संखागारेण वाइज्जमाणी जुगवं तिण्णि सद्दे पिरिपिरिती करेति।

अण्णे भणंति – गुंजापणवो मंठाण भवति। झंझा मायंगाण भवति। भेरिआगारसंकुडमुही दुदुंभी। महत्प्रमाणो मुरजो। सेसा पसिद्धा।

ततवितते घणझुसिरे, तव्विवरीते य बहुविहे सद्दे।
सद्दपडियाइ पदमवि, अभिधारे आणमादीणि ॥५६६४॥

पाणविणीयमादि ततं, वीणातिसरिसं बहुतंतीहिं विततं। अहवा–तंतीहि ततं, मुहमउदादि विततं। घणं उअउलकुडा, झुसिरं वंसादिया। तव्विवरीया कंसिग-कंसालग-भल-तालजल-यादिआ, जीवरुतादयश्च बहवो तव्विवरीया ॥५६६४॥

बितियपदमणप्पज्झे, अभिधारऽविकोविते व अप्पज्झे।
जाणंते वा वि पुणो, कज्जेसु बहुप्पगारेसु ॥५६६५॥

कज्जेसु बहुप्पगारेसु त्ति जहा जे असिवोवसमणपयुत्ता संखसद्दातिया तेसिं सवणट्ठाते अभिसंधारेज्जा गमणाए वारवतीए, जहा भेरिसद्दस्स ॥५६६५॥

जे भिक्खू वप्पाणि वा फलिहाणि वा उप्फलाणि वा पल्ललाणि वा उज्झराणि वा निज्झराणि वा वावीणि वा पोक्खराणि वा दीहियाणि वा सराणि वा सरपंतियाणि वा सरसरपंतियाणि वा कण्णसोयपडियाए अभिसंधारेइ, अभिसंधारेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥१३९॥

जे भिक्खू कच्छाणि वा गहणाणि वा नूमाणि वा वणाणि वा वणविदुग्गाणि वा पव्वयाणि वा पव्वयविदुग्गाणि वा कण्णसोयपडियाए अभिसंधारेइ, अभिसंधारेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥१४०॥

❀　❀　❀

जे भिक्खू गामाणि वा नगराणि वा खेडाणि वा कब्बडाणि वा मडंबाणि वा दोणमुहाणि वा पट्टणाणि वा आगराणि वा संबाहाणि वा सन्निवेसाणि वा कण्णसोयपडियाए अभिसंधारेइ, अभिसंधारेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥१४१॥

जे भिक्खू गाम-महाणि वा नगर-महाणि वा खेड-महाणि वा कब्बड-महाणि वा मडंब-महाणि वा दोणमुह-महाणि वा पट्टण-महाणि वा आगार-महाणि वा संबाह-महाणि वा सन्निवेस-महाणि वा कण्णसोयपडियाए अभिसंधारेइ, अभिसंधारेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥१४२॥

※ ※ ※

जे भिक्खू गाम-वहाणि वा नगर-वहाणि वा खेड-वहाणि वा कब्बड-वहाणि वा मडंब-वहाणि वा दोणमुह-वहाणि वा पट्टण-वहाणि वा आगार-वहाणि वा संबाह-वहाणि वा सन्निवेस-वहाणि वा कण्णसोयपडियाए अभिसंधारेइ, अभिसंधारेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥१४३॥

जे भिक्खू गाम-पहाणि वा नगर-पहाणि वा खेड-पहाणि वा कब्बड-पहाणि वा मडंब-पहाणि वा दोणमुह-पहाणि वा पट्टण-पहाणि वा आगार-पहाणि वा संबाह-पहाणि वा सन्निवेस-पहाणि वा कण्णसोयपडियाए अभिसंधारेइ, अभिसंधारेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥१४४॥

जे भिक्खू आस-करणाणि वा हत्थि-करणाणि वा उट्ट-करणाणि वा गोण-करणाणि वा महिस-करणाणि वा सूयर-करणाणि वा कण्णसोय-पडियाए अभिसंधारेइ, अभिसंधारेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥१४५॥

जे भिक्खू आस-जुद्धाणि वा हत्थि-जुद्धाणि वा उट्ट-जुद्धाणि वा गोण-जुद्धाणि वा महिस-जुद्धाणि वा कण्णसोयपडियाए अभिसंधारेइ, अभिसंधारेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥१४६॥

जे भिक्खू उज्जूहियट्ठाणाणि वा हय-जूहियट्ठाणाणि वा गय-जूहियट्ठाणाणि वा कण्णसोयपडियाए अभिसंधारेइ, अभिसंधारेंतं वा सातिज्जति ।सू।१४७।

जे भिक्खू अभिसेय-ट्ठाणाणि वा अक्खाइय-ट्ठाणाणि वा माणुम्माण-ट्ठाणाणि वा महया हय-नट्ट-गीय-वाइय-तंती-तल-ताल-तुडिय-पडुप्पवाइय-ट्ठाणाणि वा कण्णसोयपडियाए अभिसंधारेइ, अभिसंधारेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥१४८॥

जे भिक्खू डिंबराणि वा डमराणि वा खाराणि वा वेराणि वा महाजुद्धाणि वा महासंगामाणि वा कलहाणि वा बोलाणि वा कण्णसोयपडियाए अभिसंधारेइ, अभिसंधारेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥१४९॥

जे भिक्खू विरूवरूवेसु महुस्सवेसु इत्थीणि वा पुरिसाणि वा थेराणि वा मज्झिमाणि वा डहराणि वा अलंकियाणि वा सुअलंकियाणि वा गायंताणि वा वायंताणि वा नच्चंताणि वा हसंताणि वा रमंताणि वा मोहंताणि वा विउलं असणं वा पाणं वा खाइमं वा साइमं वा परिभायंताणि वा परिभुंजंताणि वा कण्णसोयपडियाए अभिसंधारेइ, अभिसंधारेंतं वा सातिज्जति ॥१५०॥

जे भिक्खू इहलोइएसु वा रूवेसु, परलोइएसु वा रूवेसु, दिट्ठेसु वा रूवेसु, अदिट्ठेसु वा रूवेसु, सुएसु वा रूवेसु, असुएसु वा रूवेसु, विन्नाएसु वा रूवेसु, अविन्नाएसु वा रूवेसु सज्जइ रज्जइ गिज्झइ अज्झोववज्जइ सज्जंतं रज्जंतं गिज्झंतं अज्झोववज्जंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥१५१॥

॥ तं सेवमाणे आवज्जइ चाउम्मासियं परिहारट्ठाणं उग्घाइयं ॥

एते चोद्दससुत्ता जहा बारसमे उद्देसगे भणिता तहा इहं पि सत्तरसमे उद्देसगे भाणियव्वा।

वप्पादी जा विह लोइयादि सद्दादि जो तु अभिधारे।
तं चेव तत्थ दोसा, तं चेव य होति वितियपदं ॥५९९६॥

विसेसो तत्थ चक्खुदंसणप्रतिज्ञया, इहं पुण कण्णसवणपडियाए गच्छति, वप्पादिएसु ठाणेसु जे सद्दा ते अभिधारेउं गच्छति ॥५९९६॥

॥ इति विसेस-णिसीहचुण्णीए सत्तरसमो उदेसओ सम्मत्तो ॥

अष्टादश उद्देशकः

भणिओ सत्तरसमो । इदाणिं अट्ठारसमो इमो भण्णति । तस्सिमो संबंधो—

सद्दे पुण धारेउं, गच्छति तं पुण जलेण य थलेणं ।
जलपगतं अट्ठारे तं च अणट्ठा णिवारेति ॥५९९७॥

संखादिसद्दे अभिधारेंतो गच्छंतो जलेण वा गच्छति थलेन वा गच्छति । इह जलगमणेण अधिगारो, अधवा – जलेण गमणं अणाट्ठए ण गंतव्वं । एयं अट्ठारसमे णिवारेति । एस संबंधो ॥५९९७॥

अणेण संबंधेणागयस्स इमं पढमसुत्तं –

जे भिक्खू अणट्ठाए णावं दुरुहइ दुरुहंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥१॥

णो अट्ठाए, अणट्ठाए । दुरुहइ त्ति विलग्गइ त्ति आरुभति त्ति एगट्ठं । आणादिया दोसा चउलहुं ।

बारसमे उद्देसे, नावासंतारिमम्मि जे दोसा ।
ते चेव अणट्ठाए, अट्ठारसमे निरवसेसा ॥५९९८॥

अणट्ठं दंसेति—

अंतो मणे किरिसिया, णावारूढेहिं वच्चइ कहं वा ।
अहवा णाणातिजढं, दुरूहणं होतऽणट्ठाए ॥५९९९॥

केरिसि अब्भंतर त्ति चक्खुदंसणपडियाए आरुभति, गमणकुतूहलेण वा दुरुहति, अहवा – नाणाति-जढं दुरुहंतस्स सेसं सव्वं अणट्ठा ॥५९९९॥

अववादेण आगाढे कारणे दुरुहेज्जा ।

थलपहेण संघट्टादिजलेण वा जइ इमे दोसा हवेज्ज –

वितियपद तेण सावय, भिक्खे वा कारणे व आगाढे ।
कज्जुवहिमगरवुज्झण, णावोदग तं पि जयणाए ॥६०००॥

एस बारसमुद्देसगे जहा, तहा भाणियव्वा । सुत्तं दिट्ठं, कारणेण विलग्गियव्वं ।

केरिसं पुण णावं विलग्गति ? केरिसं वा ण विलग्गति ?
अतो सुत्तं भण्णति –

जे भिक्खू नावं किणइ किणावेइ, कीयं आहट्टु देज्जमाणं दुरुहइ दुरुहंतं वा सातिज्जति ।।सू०।।२।।

जे भिक्खू नावं पामिच्चेइ पामिच्चावेइ, पामिच्चं आहट्टु देज्जमाणं दुरुहइ दुरुहंतं वा सातिज्जति ।।सू०।।३।।

जे भिक्खू नावं परियट्टेइ परियट्टावेइ, परियट्टं आहट्टु देज्जमाणं दुरुहेइ दुरुहेंतं वा सातिज्जति ।।सू०।।४।।

जे भिक्खू नावं अच्छेज्जं अनिसिट्ठं अभिहडं आहट्टु देज्जमाणं दुरुहेइ दुरुहेंतं वा सातिज्जति ।।सू०।।५।।

जे अप्पणा कीणइ, अण्णेण वा कीणावेइ, किणंतं अणुमोदति वा ङ्क ।

पामिच्चेति पामिच्चावेति पामिच्चंतं अणुमोदेति ङ्क। पामिच्चं णाम उच्छिण्णं । जे णावं परियट्टेति ३, ङ्क । डहरियणावाए महल्लं णावं परिणावेति — परिवर्तयतीत्यर्थः । महल्लाए वा डहरं परावर्तयति ।

अण्णस्स वा बला अच्छेत्तु साहूण णेति ङ्क । अणिसट्ठा पडिहारिया गहिता अप्पणो कए कज्जे तं साधूण समप्पेति साधूण वा णेति ङ्क ।

एतेहिं सुत्तपदेहिं सव्वे उग्गम-उप्पादण-एसणादोसा य सूचिता ।

तेण णावणिज्जुत्ति भण्णइ –

नावा उग्गमउप्पायणेसणा संजोयणा पमाणे य ।
इंगालधूमकारण, अट्ठविहा णावणिज्जुत्ती ।।६००१।।

उग्गमदोसेसु जे चउलहू ते जहा संभवं, णावं णडुच्च वा ।

उच्चत्तभत्तिए वा, दुविहा किणणा उ होति णावाए ।
हीणाहियणावाए, भंडगुरुए य पामिच्चे ।।६००२।।

साधुअट्ठाए उच्चताए नावं किणाति सर्वथा आत्मीकरोतीत्यर्थः । भत्तीए त्ति – भाडएणं गेण्हति । अप्पणा से णावा हीणप्पमाणा अहियप्पमाणा वा । अहवा – भंडगुरु त्ति – जं तत्थ भंडभारो विज्जति तं गुरुं साहू य णो खमिहितित्ति, ता एवमादिकज्जेहिं णावं पामिच्चेति । अहवा – सा णावा स्वयमेव गुरुत्वान्न शीघ्रगामिनीत्यर्थः ।।६००२।।

दोण्ह वि उवट्ठियाए, जत्ताए हीण अहिय सिग्घट्ठा ।
णावापरिणामं पुण, परियट्टियमाहु आयरिया ।।६००३।।

दो वणिया जत्ताए णावाहिं उवट्ठिता, तत्थ य एगस्स हीणा, एगस्स अहिया, तो परोप्परं णावा-परिणामं करेति — नावा नावं परावर्त्तयतीत्यर्थः । अहवा – मंदगामिनी शीघ्रगामिन्या परावर्तयति । एवं साध्वर्थमपि ।।६००३।।

एमेव सेसएसु वि, उप्पायण-एसणाए दोसेसुं ।
जं जं जुज्जति सुत्ते, विभासियव्वं दुचत्ताए ॥६००४॥

कीयगडादीणावासुत्तेसु जं जं जुज्जति तं तं पिंडणिज्जुत्तिए भाणियव्वं–दुचत्ता बायालीसा, सोलस उग्गमदोसा, सोलस उप्पायणदोसा, दस एसणदोसा, एते मिलिया बाताला उग्गमउप्पायणेसणा तिण्णि दारा गता ।

¹संजोगादियाण चउण्हं इमा विभासा ।

संजोए रणमादी, जले य णावाए होति माणं तु ।
सुहगमणित्तिंगालं, छड्डीखोभादिसुं धूमो ॥६००५॥

साधुअट्ठाए रणमादि किं चि कट्टुं संजोएति, आसण्णमज्झदूरगमणा जलप्पमाणं साधुप्पमाणाओ य हीणं जुत्तमधियप्पमाणेण वा होज्ज । सुहगमणि त्ति रागेणं इंगालसरिसं चरणं करेति, णावागमणे छड्डी हवइ, दुट्ठा वाहया वा नावाभएणं सरीरसंखोहो भवति । कंपो, मुच्छा, सिरत्ती य । एवमादी दोसा चरणं धूमिधणेण समं करेति ॥६००५॥

कारणे विलग्गियव्वं, अकारणे चउलहू मुणेयव्वं ।
किं पुण कारण होज्जा, असिवादि थलासती दुरुहे ॥६००६॥

णाणाइकारणेण य दुरुहियव्वं, निक्कारणे चउलहुं, असिवाइकारणे वा गच्छंतस्स ॥६००६॥

तं नावातारिमं चउव्विहं–

नावासंतारपहो, चउव्विहो वण्णितो उ जो पुव्विं ।
णिज्जुत्तीए सुविहिय, सो चेव इहं पि णायव्वो ॥६००७॥

निज्जुत्तीपेढं इमस्सेव जहा पेढया आउक्कायाधिगारेण भाणिया तहा भाणियव्वा ॥६००७॥

तिरिओ याणुज्जाणे, समुद्दगामी य चेव नावाए ।
चउलहुगा अंतगुरू, जोयणमद्धद्ध जा सपदं ॥६००८॥

तत्र इव ।६००८॥

वीयपय तेण सावय, भिक्खे वा कारणे व आगाढे ।
कज्जुवहिमगर वुज्झण, नावोदग तं पि जयणाए ॥६००९॥

बारसमे पूर्ववत् ॥६००९॥

जे भिक्खू थलाओ नावं जले ओकसावेइ ओकसावेंतं वा सातिज्जति॥सू०॥६॥

थलस्थं जले करेति ।

जे भिक्खू जलाओ नावं थले उक्कसावेइ उक्कसावेंतं वा सातिज्जति ॥सू॥७॥

जलस्थं थले करेति ।

---

१ गा० ६००१ ।

जे भिक्खू पुण्णं णावं उस्सिंचइ उस्सिंचंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥८॥

जे भिक्खू सण्णं णावं उप्पिलावेइ उप्पिलावेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥९॥

"सण्णा" त्ति – कद्दमे खुत्ता, उप्पिलावेइ त्ति – ततो उक्खणति ।

गाहेइ जलाओ थलं, जो व थलाओ जलं समोगाढे ।
सण्णं व उप्पिलावे, दोसा ते तं च बितियपदं ॥६०१०॥

दोसा जे बारसमे भणिता ते भवंति, बितियपदं च जं तत्थेव भणियं तं चेव भाणियव्वं ॥६०१०॥

जे भिक्खू उवद्धियं णावं उत्तिंगं वा उदगं वा आसिंचमाणिं वा उवरुवरि वा कज्जलावेमाणिं पेहाए हत्थेण वा पाएण वा असिपत्तेण वा कुसपत्तेण वा मट्टियाए वा चेलेण वा पडिपिहेइ पडिपिहेंतं वा साइज्जति ॥सू०॥१०॥

जे भिक्खू पडिणावियं कट्टु णावाए दुरुहइ दुरुहंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥११॥

जे भिक्खू उड्ढगामिणिं वा नावं अहो गामिणिं वा नावं दुरुहइ दुरुहंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥१२॥

जे भिक्खू जोयणवेलागामिणिं वा अद्धजोयणवेलागामिणिं वा नावं दुरुहइ दुरुहंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥१३॥

जलनावा बलाए हीरति, दीहरज्जुए तडंसि रुक्खे वा कीलगे वा बद्धं वा मुत्तित्ता वाहेज्ज, खुब्भमाणिं वा बंधेज्ज, उत्तिंगेण वा भरितं भरज्जमाणीं वा जो उवसिंचति, सबलपाणियस्स वा भरेति रित्तं वा, थिमितीं गच्छउ त्ति पाणियस्स भरेति, । तस्स चउलहुं ।

उव्वद्धपवाहेती, बंधइ मुञ्चइ य भरिय उस्सिंचे ।
रित्तं वा पूरेति, ते दोसा तं च बितियपदं ॥६०११॥ कंठ्या

जे भिक्खू नावं आकसइ आकसावेइ आकसावेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥१४॥

जे भिक्खू नावं खेवेइ खेवावेइ खेवावेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥१५॥

जे भिक्खू णावं रज्जुणा वा कट्ठेण वा कड्ढइ, कड्ढंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥१६॥

जे भिक्खू णावं अलित्तएण वा पप्फिडएण वा वंसेण वा वलेण वा वाहेइ, वाहेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥१७॥

जे भिक्खू नावाओ उदगं भायणेण वा पडिग्गहणेण वा मत्तेण वा नावाउस्सिंचणेण वा उस्सिंचइ उस्सिंचंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥१८॥

णावाए उत्तिंगं जाव पिहितं सातिज्जति ।

एतेसिं सुत्ताणं पदा सुत्तसिद्धा चेव तहावि केइपदे सुत्तफासिया फुसति –

नावाए खिवण वाहण, उस्सिंचण पिहण साहणं वा वि ।
जे भिक्खू कुज्जा ही, सो पावति आणमादीणि ॥६०१२॥

अण्णणावट्ठितो जलट्ठितो तडट्ठितो वा णावं पराहुत्तं खिवति, णावण्णतरणयणप्पगारेण, णयणं वाहणं भण्णति । उत्तिगादिणावाए निट्ठमुदगं अण्णयरेण कव्वादिणा उस्सिंचणएण उस्सिंचइ । उतिंगादिणा उदगं पविसमाणं हत्थादिणा पिहेति । एवमप्पणा करेति, अण्णस्स वा कहेति, आणादि चउलहुं च ॥६०१२॥

एतेसु अण्णेसु य सुत्तपदेसु इमं बितियपदं –

बितियपद तेण सावय, भिक्खे वा कारणे व आगाढे ।
कज्जोवहिमगरवुज्झण, णावोदग तं पि जयणाए ॥६०१३॥ पूर्ववत्

आकड्ढणमाकसणं, उक्कसणं पेल्लणं जओ उदगं ।
उड्ढमहतिरियकड्ढण, रज्जू कट्ठम्मि वा घेत्तुं ॥६०१४॥

अप्पणो तेण आकड्ढणमागमणं उदगं तेण प्रेरणं उक्कसणं, "उड्ढ" ति णदीए समुद्दे वा वेला पाणियस्स प्रतिकूलं उड्ढं, "अह" त्ति तस्सेव उदगस्स श्रोतोऽनुकूलं अहो भण्णति, नो प्रतिकूलं नो अनुकूलं वितिरिच्छं तिरियं भण्णति, एयं उड्ढं अह तिरियं वा रज्जुए कट्ठम्मि वा घेत्तुं कड्ढंति ॥६०१४॥

तणुयमलित्तं आसत्थपत्तसरिसो पिहो हवति रुंदो ।
वंसेण थाहि गम्मति, चलएण वलिज्जती णावा ॥६०१५॥

तणुतरं दीहं अलित्ताणिती [1]अलित्तं, आसत्थो पिप्पलो तस्स पत्तस्स सरिसो रुंदो पिहो भवति, वंसो वेणू तस्स अवट्ठंभेण पादेहिं पेरिता णावा गच्छति, जेण वामं दक्खिणं वा वालिज्जति सो चलगो रण्णं पि भण्णति ॥६०१५॥

मूले रुंद अकण्णा, अंते तणुगा हवंति णायव्वा ।
दव्वी तणुगी लहुगी, दोणी वाहिज्जती तीए ॥६०१६॥

पुव्वद्धं कंठं । लहुगी जा दोणी सा तीए दव्वीए वाहिज्जति. णावाउस्सिंचणगं च दुगं (उसं चलगं) दव्वगादि वा भवति, उत्तिगं णाम छिद्दं तं हत्थमादीहिं पिहेति ॥६०१६॥

सरतिसिगा वा विप्पिय, होंति उ उसुमंत्तिया य तम्मिस्सा ।
मोयतिमाइ दुमाणं, वातो छल्ली कुविंदो उ ॥६०१७॥

अहवा – सरस्स छल्ली ईसिगि त्ति तस्सेव उवरिं तस्स छल्ली सो य मुंजो दब्भो वा, एते वि विप्पित त्ति कुट्टिया पुणो मट्टियाए सह कुट्टिज्जंति एस उसुमट्टिया, कुसुमट्टिया वा, मोदती गुलवंजणी, आदिसद्दाओ वड-पिप्पल-आसत्थयमादियाण वक्को मट्टियाए सह कुट्टिज्जंति सो कुट्टविंदो भण्णति, अहवा – चेलेण सह मट्टिया कुट्टिया चेलमट्टिया भण्णति ।

एवमाईएहिं तं उत्तिगं पिहेति जो, तस्स चउलहुं आणादिया य दोसा ॥६०१७॥

---

१ नौकादंड ।

जे भिक्खू नावं उत्तिंगेण उदगं आसवमाणं उवरुवरिं कज्जलमाणं पलोय हत्थेण वा पाएण वा आसत्थपत्तेण वा कुसपत्तेण वा मट्टियाए वा चेलकण्णेण वा पडिपेहेइ पडिपेहेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥१६॥

उत्तिंगेण णावाए उदगं आसवति पेहे त्ति प्रेक्ष्य उवरुवरि कज्जलमाणि ति भरिज्जमाणं पेक्खित्ता परस्स दाएंति आणादिया चउलहुं च ।

उत्तिंगो पुण छिड्डं, तेणासव उवरिएण कज्जलणं ।
बितियपदेण दुरूढो, णावाए भंडभूतो वा ॥६०१८॥

पुव्वद्धं गतार्थं । असिवादिगाणादिकारणेहिं दुरूढो णावं जहा भंडं निव्वावारं तहा णिव्वावारभूतेण भवियव्वं । सव्वसुत्तेसु जाणि [वा] पडिसिद्धाणि ताणि कारणारूढो सव्वाणि सयं करेज्ज वा कारवेज्ज वा, ते तत्थ साधुणो णिव्वावारं दट्ठुं कोइ पडिणीओ जले पक्खिवेज्ज ॥६०१८॥

अहवा –

नावादोसे सव्वे, तारेयव्वा गुणेहि वा अधिओ ।
पवयणपभावओ वा, एगे पुण बेंति णिग्गंथी ॥६०१९॥

एवं वच्चंतस्स णावाए संभवो हवेज्ज जहा तेसिं माकंदियदाराणं णावाए दोसो त्ति, भिण्णा सा णावा ।

इयदुद्धराति गाढे, आवइवत्तो सबालवुड्ढो उ ।
सहसा णिव्वुडमाणो, उद्धरियव्वो समत्थेणं ॥
एस जिणाणं आणा, एसुवदेसो उ गणवराणं च ।
एस पइण्णा तस्स वि, जं उद्धरते दुविहगच्छं ॥

जो अतिसेसविसेससंपण्णो तेण सव्वो नित्थारियव्वो, अतिसेसअभावे सारीरबलसमत्थेण वा ते सव्वे णित्थारियव्वा । अह सव्वे ण सक्केति ताहे एक्केक्कं हावंतेण, जो पवयणप्पभावगो सो पुव्वं तारेयव्वो ।

अण्णे पुण भणंति जहा – णिग्गंथी पुव्वं तारेयव्वा ॥६०१९॥

इमा पुरिसेसु केवलेसु जयणा –

आयरिए अभिसेगे, भिक्खू खुड्डे तहेव थेरे य ।
गहणं तेसिं इणमो, संजोगकमं तु वोच्छामि ॥६०२०॥

जइ समत्थो एते चेव सव्वे वि तारेउं तो सव्वे तारेति ।

अह ण सक्केति ताहे थेरवज्जा चउरो ।

अह ण तरति ताहे थेरखुड्डगवज्जा तिण्णि ।

अह ण तरति ताहे आयरिय अभिसेगा दोण्णि ।

अह ण तरति ताहे आयरियं ॥६०२०॥

दो आयरिया होज्ज, दो वि नित्थारेतु ।

अह न तरइ ताहे इमं भण्णति–

तरुणे निप्फण्ण परिवारे, सलद्धिए जे य होति अब्भासे ।
अभिसेगम्मी चउरो, सेसाणं पंच चेव गमा ॥६०२१॥

आयरिओ एगो तरुणो, एगो थेरो । जो तरुणो सो नित्थारेयव्वो ।

दोवि तरुण थेरा वा एक्को सुत्तत्थे निप्फण्णो, एक्को अनिप्फण्णो । जो निप्फण्णो सो नित्थारिज्जति ।

दोवि णिप्फन्ना अणिफन्ना वा । एक्को सपरिवारो, एक्को अपरिवारो । जो सपरिवारो सो नित्थारिज्जति ।

दोवि सपरिवारा तो उक्कोसलद्धीतो जो भत्तवत्थसिस्सादिएहिं सहितो सो णित्थारिज्जति । दोवि सलद्धिया वा तत्थ जो अब्भासतरो सो णित्थारिज्जति, मा दूरत्थं । समीवं जं तं जाव जाहिति ताव सो हडो । इयरो वि जाव पावेहिति ताव हडो । दोण्ह वि चुक्को तम्हा जो आसण्णो सो तारेयव्वो ।

अभिसेगे पुण चउरो गमा भवंति – तरुणो सपरिवारो सलद्धी आसण्णो य, जम्हा सो णियमा निप्फण्णो तम्हा तस्स निप्फण्णानिप्फण्णं इति न कर्तव्यं ।

सेसाणि भिक्खूथेरखुड्डाणं जहा आयरियस्स तरुणादिया पंच गमा तहा कायव्वा ।

अण्णे पंच गमा एवं करेंति – तरुणे णिप्फण्ण परिवारे सलद्धिए अब्भासे ।

अहवा पंच गमा – तरुणे निप्फण्ण परिवारे सलद्धीए अब्भासे थलवासी । जो थलविसयवासी तं नित्थारेति; सो अतारगो । जलविसयवासी पुण तारगो भवति, ण सहसा जलस्स वीहेति ॥६०२१॥

इदाणि णिग्गंथीण पत्तेयं भण्णति –

पवत्तिणि अभिसेगपत्त थेरि तह भिक्खुणी य खुड्डी य ।
अभिसेगाए चउरो, जलथलवासीसु संजोगा ॥६०२२॥

जहा साहूण भणियं तहा साहुणीण वि भाणियव्वं ॥६०२२॥ एस पत्तेयाणं विधी ।

इमा मीसाणं –

सव्वत्थ वि आयरिओ, आयरियाओ पवत्तिणी होति ।
तो अभिसेगप्पत्तो, सेसेसु इत्थिया पढमं ॥६०२३॥

दोसु वि वग्गेसु जुगवं आवइपत्तेसु इमा जयणा – जति समत्थो सव्वाणि वि तारेउं तो सव्वे तारेति । अह असमत्थो ताहे एगदुगातिपरिहाणीए, जाहे दोण्ह वि असमत्थो ताहे सव्वे अच्छंतु आयरियं पढमं णित्थारेइ, ततो पवित्तिणीं, ततो अभिसेगं, सेसेसु इत्थिया पढमं, ति भिक्खुणिं पढमं ततो भिक्खुं, खुड्डिं ततो खुड्डं, थेरिं ततो थेरं । एत्थऽप्पबहूचिंता कायव्वा – सुणिपुणो होऊणं लंघेऊणुत्तविहिं बहुगुणवेड्डं (वड्ढं) करेज्जा ।

भणियं च –

"बहुवित्थरमुस्सग्गं, बहुतरमववायवित्थरं णाउं ।
जह जह संजमवुड्ढी, तह जयसू णिज्जरा जह य" ॥

आयरियवज्जाणं को परिवारो ? भण्णति – माया पिया पुत्तो भाया भगिणी सुण्हा धूया, अण्णो य संबंधिणो मित्ता तव्वुवसमणिवसंता य ।

जे भिक्खू नावाओ नावागयस्स असणं वा पाणं वा खाइमं वा साइमं वा पडिग्गाहेति, पडिग्गाहेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥२०॥

जे भिक्खू नावाओ जलगयस्स असणं वा पाणं वा खाइमं वा साइमं वा पडिग्गाहेइ, पडिग्गाहेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥२१॥

जे भिक्खू नावाओ पंकगयस्स असणं वा पाणं वा खाइमं वा साइमं वा पडिग्गाहेइ, पडिग्गाहेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥२२॥

जे भिक्खू नावाओ थलगयस्स असणं वा पाणं वा खाइमं वा साइमं वा पडिग्गाहेइ, पडिग्गाहेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥२३॥

णावागयस्सेव दायगस्स हत्थातो पडिग्गाहेति तस्स चउलहुं ।

अण्णेसु तिसु भंगेसु भिक्खू णावागतो चेव, दायगो जल-पंक-थलगतो । एतेसु चउरो भंगा ।

अण्णेसु चउभंगेसु भिक्खू जलगतो, दायगो णावा-जल पंक-थलगतो ।

अण्णेसु चउसु भिक्खू पंकगओ, दायगो णावा-जल-पंक-थलगओ ।

अण्णेसु चउसु भिक्खू थलगतो, दायगो णावा-जल-पंक-थलगतो ।

एते सव्वे सोलससु वि पत्तेयं चउलहुं । णावागते दायगे पडिसेहो, जेणं सो सचित्तआउकाय-परंपरपतिट्ठो जलपंकथला सचित्ता मीसा वा, तो पडिसेहो ।

तत्थ कमं दरिसेइ –

नावजले पंकथले, संजोगा एत्थ होंति णायव्वा ।
तत्थ गएणं एक्को गमणागमणेण बितिओ उ ॥६०२४॥

एतेसु णाव-जल-पंक-थलपदेसु ठितो भिक्खू दायगस्स सट्ठाण-परट्ठाणसंजोगेण ठियस्स हत्थाओ गेण्हंतस्स दुगसंजोगाभिलावं अमुंचतेण सोलस भंगा कायव्वा पूर्ववत् ।

"तत्थ गएणं एक्को" त्ति णावारूढो णावागयस्स हत्थातो गेण्हति एस पढमभंगो, णावागतो जलगयस्स हत्थदायगस्स अच्छमाणस्स जलट्ठियस्स हत्थातो गेण्हति, एवं पंकथलेसु वि गमणागमणेण ततिय-चउत्थ भंगा, एवं सेसभंगा वि बारस उवउज्ज भाणियव्वा ॥६०२४॥

एत्तो एगतरेणं, संजोगेणं तु जो उ पडिगाहे ।
सो आणा अणवत्थं, मिच्छत्त विराधणं पावे ॥६०२५॥

कंठ्या । सोलसमो भंगो थलगओ, थलगतस्स समुद्दस्स अंतरदीवे संभवति, सा पुढवी सचित्ता मीसा वा ससणिद्धा वा तेण पडिसिज्झति ॥६०२५॥

इमं वितियपदं –

> असिवे ओमोयरिए, रायदुट्ठे भए व गेलण्णे ।
> अद्धाण रोहए वा, जयणा गहणं तु गीयत्थे ॥६०२६॥

जयणा पणगपरिहाणी, मीसपरंपरठितादि वा जयणा भाणिज्जा ।

जे भिक्खू वत्थं किणइ किणावेइ कीयं आहट्टु देज्जमाणं पडिग्गाहेइ,
पडिग्गाहेंतं वा सातिज्जसि ॥सू०॥२४॥

जे भिक्खू वत्थं पामिच्चेति, पामिचावेति पामिचमाहट्टु दिज्जमाणं
पडिग्गाहेति, पडिग्गाहेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥२५॥

जे भिक्खू वत्थं परियट्टेइ, परियट्टावेइ, परियट्टियमाहट्टु दिज्जमाणं
पडिग्गाहेति, पडिग्गाहेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥२६॥

जे भिक्खू वत्थं अच्छेज्जं अनिसिट्ठं अभिहडमाहट्टु देज्जमाणं पडिग्गाहेइ,
पडिग्गाहेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥२७॥

जे भिक्खू अतिरेग-वत्थं गणिं उद्दिसिय गणिं समुद्दिसिय
तं गणिं अणापुच्छिय अणामंतिय अण्णमण्णस्स वियरइ,
वियरंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥२८॥

जे भिक्खू अइरेगं वत्थं खुड्डगस्स वा खुड्डियाए वा थेरगस्स वा थेरियाए वा
अहत्थच्छिण्णस्स अपायच्छिण्णस्स अनासच्छिण्णस्स अकण्णच्छिण्णस्स
अणोट्ठच्छिण्णस्स सत्तस्स देइ, देंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥२९॥

जे भिक्खू अइरेगं वत्थं, खुड्डगस्स वा खुड्डियाए वा थेरगस्स वा थेरियाए वा
हत्थच्छिण्णस्स पायच्छिण्णस्स नासच्छिण्णस्स कण्णच्छिण्णस्स
ओट्ठच्छिण्णस्स असक्कस्स न देइ, न देंतं वा सातिज्जति ॥सू॥३०॥

जे भिक्खू वत्थं अणलं अथिरं अधुवं अधारणिज्जं धरेइ,
धरेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥३१॥

जे भिक्खू वत्थं अलं थिरं धुवं धारणिज्जं न धरेइ,
न धरेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥३२॥

जे भिक्खू वण्णमंतं वत्थं विवण्णं करेइ, करेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥३३॥

जे भिक्खू विवण्णं वत्थं वण्णमंतं करेइ, करेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥३४॥

जे भिक्खू "नो नवए मे वत्थे लद्धे" त्ति कट्टु तेल्लेण वा घएण वा
णवणीएण वा वसाए वा मक्खेज्ज वा भिलिंगेज्ज वा
मक्खेंतं वा भिलिंगेंतं वा सातिज्जति ।।सू०।।३५।।

जे भिक्खू "नो नवए मे वत्थे लद्धे" त्ति कट्टु लोद्धेण वा कक्केण वा
चुण्णेण वा वण्णेण वा उल्लोलेज्ज वा [1]उव्वलेज्ज वा
उल्लोलेंतं वा [2]उव्वलेंतं वा सातिज्जति ।।सू०।।३६।।

जे भिक्खू "नो नवए मे वत्थे लद्धे" त्ति कट्टु सीओदगवियडेण वा
उसिणोदगवियडेण वा उच्छोल्लेज्ज वा पधोएज्ज वा,
उच्छोल्लेंतं वा पधोएंतं वा सातिज्जति ।।सू०।।३७।।

जे भिक्खू "नो नवए मे वत्थे लद्धे" त्ति कट्टु बहुदेवसिएण तेल्लेण वा
घएण वा णवणीएण वा वसाए वा मक्खेज्ज वा भिलिंगेज्ज वा
मक्खेंतं वा भिलिंगेंतं वा सातिज्जति ।।सू०।।३८।।

जे भिक्खू "नो नवए मे वत्थे लद्धे" त्ति कट्टु बहुदेवसिएण लोद्धेण वा
कक्केण वा चुण्णेण वा वण्णेण वा उल्लोलेज्ज वा उव्वलेज्ज वा
उल्लोलेंतं वा उव्वलेंतं वा सातिज्जति ।।सू०।।३९।।

जे भिक्खू "नो नवए मे वत्थे लद्धे" त्ति कट्टु बहुदेवसिएण सीओदगविय-
डेण वा उसिणोदगवियडेण वा उच्छोलेज्ज वा पधोएज्ज वा
उच्छोलेंतं वा पधोएंतं वा सातिज्जति ।।सू०।।४०।।

जे भिक्खू "दुब्भिगंधे मे वत्थे लद्धे" त्ति कट्टु तेल्लेण वा घएण वा
नवणीएण वा वसाए वा मक्खेज्ज वा भिलिंगेज्ज वा
मक्खेंतं वा भिलिंगेंतं वा सातिज्जति ।।सू०।।४१।।

जे भिक्खू "दुब्भिगंधे मे वत्थे लद्धे" त्ति कट्टु लोद्धेण वा कक्केण वा
चुण्णेण वा वण्णेण वा उल्लोलज्ज वा उव्वलेज्ज वा
उल्लोलेंतं वा उव्वलेंतं वा सातिज्जति ।।सू०।।४२।।

जे भिक्खू "दुब्भिगंधे मे वत्थे लद्धे" त्ति कट्टु सीओदगवियडेण वा
उसिणोदगवियडेण वा उच्छोलेज्ज वा पधोएज्ज वा
उच्छोलेंतं वा पधोएंतं वा सातिज्जति ।।सू०।।४३।।

---

१ पवोवेज्ज इत्यपि पाठः । २ पवोवेज्जंतं इत्यपि पाठः ।

जे भिक्खू "दुब्भिगंधे मे वत्थे लद्धे" त्ति कट्टु बहुदेवसिएण तेल्लेण वा घएण वा नवणीएण वा वसाए वा मक्खेज्ज वा भिलिंगेज्ज वा मक्खेंतं वा भिलिंगेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥४४॥

जे भिक्खू "दुब्भिगंधे मे वत्थं लद्धे" त्ति कट्टु बहुदेवसिएण लोद्धेण वा कक्केण वा चुण्णेण वा वण्णेण वा उल्लोलेज्ज वा उव्वलेज्ज वा उल्लोलेंतं वा उव्वलेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥४५॥

जे भिक्खू "दुब्भिगंधे मे वत्थं लद्धे" त्ति कट्टु बहुदेवसिएण सीओदग-वियडेण वा उसिणोदगवियडेण वा उच्छोलेज्ज वा पधोएज्ज वा उच्छोलेंतं वा पधोएंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥४६॥

❁ ❁ ❁

जे भिक्खू "नो नवए मे सुब्भिगंधे वत्थे लद्धे" त्ति कट्टु तेल्लेण वा घएण वा नवणीएण वा वसाए वा मक्खेज्ज वा भिलिंगेज्ज वा मक्खेंतं वा भिलिंगेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥४७॥

जे भिक्खू "नो नवए मे सुब्भिगंधे वत्थे लद्धे" त्ति कट्टु लोद्धेण वा कक्केण वा चुण्णेण वा वण्णेण वा उल्लोलेज्ज वा उव्वलेज्ज वा उल्लोलेंतं वा उव्वलेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥४८॥

जे भिक्खू "नो नवए मे सुब्भिगंधे वत्थे लद्धे" त्ति कट्टु सीओदगवियडेण वा उसिणोदगवियडेण वा उच्छोलेज्ज वा पधोएज्ज वा उच्छोलेंतं वा पधोएंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥४९॥

जे भिक्खू "नो नवए मे सुब्भिगंधे वत्थे लद्धे" त्ति कट्टु बहुदेवसिएण तेल्लेण वा घएण वा नवणीएण वा वसाए वा मक्खेज्ज वा भिलिंगेज्ज वा मक्खेंतं वा भिलिंगेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥५०॥

जे भिक्खू "नो नवए मे सुब्भिगंधे वत्थे लद्धे" त्ति कट्टु बहुदेवसिएण लोद्धेण वा कक्केण वा चुण्णेण वा वण्णेण वा उल्लोलेज्ज वा उव्वलेज्ज वा उल्लोलेंतं वा उव्वलेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥५१॥

जे भिक्खू "नो नवए मे सुब्भिगंधे वत्थे लद्धे" त्ति कट्टु बहुदेवसिएण सीओदगवियडेण वा उसिणोदगवियडेण वा उच्छोलेज्ज वा पधोएज्ज वा उच्छोलेंतं वा पधोएंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥५२॥

जे भिक्खू अणंतरहियाए पुढवीए दुब्बद्धे दुन्निखित्ते अनिकंपे चलाचले
वत्थं आयावेज्ज वा पयावेज्ज वा,
आयावेंतं वा पयावेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥५३॥

जे भिक्खू ससणिद्धाए पुढवीए दुब्बद्धे दुन्निखित्ते अनिकंपे चलाचले
वत्थं आयावेज्ज वा पयावेज्ज वा,
आयावेंतं वा पयावेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥५४॥

जे भिक्खू ससरक्खाए पुढवीए दुब्बंधे दुन्निखित्ते अनिकंपे चलाचले
वत्थं आयावेज्ज वा पयावेज्ज वा,
आयावेंतं वा पयावेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥५५॥

जे भिक्खू मट्टियाकडाए पुढवीए दुब्बंधे दुन्निखित्ते अनिकंपे चलाचले
वत्थं आयावेज्ज वा पयावेज्ज वा,
आयावेंतं वा पयावेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥५६॥

जे भिक्खू चित्तमंताए पुढवीए दुब्बंधे दुन्निखित्ते अनिकंपे चलाचले
वत्थं आयावेज्ज वा पयावेज्ज वा,
आयावेंतं वा पयावेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥५७॥

जे भिक्खू चित्तमंताए सिलाए दुब्बंधे दुन्निखित्ते अनिकंपे चलाचले
वत्थं आयावेज्ज वा पयावेज्ज वा,
आयावेंतं वा पयावेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥५८॥

जे भिक्खू चित्तमंताए लेलूए दुब्बंधे दुन्निखित्ते अनिकंपे चलाचले
वत्थं आयावेज्ज वा पयावेज्ज वा,
आयावेंतं वा पयावेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥५९॥

जे भिक्खू कोलावासंसि वा दारुए जीवपइट्ठिए सअंडे सपाणे सबीए सहरिए
सओस्से सउदए सउत्तिंग-पणग-दग-मट्टिय-मक्कडासंताणगंसि
दुब्बंधे दुन्निखित्ते अनिकंपे चलाचले वत्थं आयावेज्ज वा
पयावेज्ज वा आयावेंतं वा पयावेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥६०॥

जे भिक्खू थूणंसि वा गिहेलुयंसि वा उसुयालंसि वा कामजलंसि वा दुब्बंधे
दुन्निखित्ते अनिकंपे चलाचले वत्थं आयावेज्ज वा पयावेज्ज वा
आयावेंतं वा पयावेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥६१॥

जे भिक्खू कुलियंसि वा भित्तिंसि वा सिलंसि वा लेलुंसि वा अंतलिक्ख-
जायंसि वा दुब्बद्धे दुन्निखित्ते अनिकंपे चलाचले वत्थं आयावेज्ज वा
पयावेज्ज वा आयावेंतं वा पयावेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥६२॥

जे भिक्खू खंधंसि वा फलहंसि वा मंचंसि वा मंडवंसि वा मालंसि वा
पासायंसि वा दुब्बंधे दुन्निखित्ते अनिकंपे चलाचले वत्थं आयावेज्ज वा
पयावेज्ज वा आयावेंतं वा पयावेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥६३॥

जे भिक्खू वत्थातो पुढविकायं नीहरइ, नीहरावेइ, नीहरियं आहट्टु
देज्जमाणं पडिग्गाहेइ, पडिग्गाहेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥६४॥

जे भिक्खू वत्थाओ आउक्कायं नीहरइ, नीहरावेइ, नीहरियं आहट्टु
देज्जमाणं पडिग्गाहेइ, पडिग्गाहेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥६५॥

जे भिक्खू वत्थातो तेउकायं नीहरइ, नीहरावेइ, नीहरियं आहट्टु
देज्जमाणं पडिग्गाहेइ, पडिग्गाहेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥६६॥

जे भिक्खू वत्थातो कंदाणि वा मूलाणि वा पत्ताणि वा पुप्फाणि वा
फलाणि वा नीहरइ, नीहरावेइ, नीहरियं आहट्टु देज्जमाणं
पडिग्गाहेइ, पडिग्गाहेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥६७॥

जे भिक्खू वत्थातो ओसहि-बीयाणि नीहरइ, नीहरावेइ, नीहरियं आहट्टु
देज्जमाणं पडिग्गाहेइ, पडिग्गाहेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥६८॥

जे भिक्खू वत्थातो तसपाणजाइं नीहरइ, नीहरावेइ, नीहरियं आहट्टु
देज्जमाणं पडिग्गाहेइ, पडिग्गाहेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥६९॥

जे भिक्खू वत्थं कोरेइ, कोरावेइ, कोरियं आहट्टु
देज्जमाणं पडिग्गाहेइ, पडिग्गाहेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥७०॥

जे भिक्खू णायगं वा अणायगं वा उवासगं वा अणुवासगं वा गामंतरंसि वा
गामपहंतरंसि वा वत्थं ओभासिय ओभासिय जायइ
जायंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥७१॥

जे भिक्खू णायगं वा अणायगं वा उवासगं वा अणुवासगं वा परिसामज्झाओ
उट्ठवेत्ता वत्थं ओभासिय ओभासिय जायइ
जायंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥७२॥

ज भिक्खू वत्थनीसाए उडुबद्धं वसइ, वसंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥७३॥

जे भिक्खू वत्थनीसाए वासावासं वसइ, वसंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥७४॥

॥ तं सेवमाणे आवज्जइ चाउम्मासियं परिहारट्ठाणं उग्घाइयं ॥

चोद्दसमे उद्देसे, पातम्मि उ जो गमो समक्खाओ ।
सो चेव निरवसेसो, वत्थम्मि वि होति अट्ठारे ॥६०२७॥

सुत्ताणि [1]पणुवीसं उच्चारेयव्वाणि जाव समत्तो उद्देसगो । एतेसिं अत्थो चोद्दसमे, जहा चोद्दसमे पादं भणितं तहा अट्ठारसमे वत्थं भाणियव्वं ।

॥ इति विसेस-णिसीहचुण्णीए अट्ठारसमो उद्देसओ समत्तो ॥

---

१ चतुर्दशमोद्देशकानुसारेण तु पञ्चचत्वारिंशत्सूत्राणि भवन्ति ।

एकोनविंशतितम उद्देशकः

भणिओ अट्ठारसमो । इदाणिं एक्कोणवीसइमो भण्णति । तस्सिमो संबंधो –

वत्थत्था वसमाणो, जयणाजुत्तो वि होति तु पमत्तो ।
अन्नो वि जो पमाओ, पडिसिद्धो एस एक्कूणे ॥६०२८॥

जो उडुबद्धे वासावासे वा वत्थट्ठा वसति, सो जति जयणाजुत्तो तहावि सो पमत्तो लब्भति । एवं अट्ठारसमस्स अंतसुत्ते पमातो दिट्ठो । इहावि एगूणवीसईमस्स आदिसुत्ते पमाओ चेव पडिसिज्झति । एस अट्ठारसमाओ एगूणवीसइमस्स संबंधो ॥६०२८॥

अहवा चिरं वसंतो, संथवणेहेहि किणति तं वत्थं ।
अक्कीतं पि ण कप्पति, वियडं किमु कीयसंबंधो ॥६०२९॥

चिरं ति वारिसितो चउरो मासे, सेसं कंठं ।

इमं पढमसुत्तं –

जे भिक्खू वियडं किणइ, किणावेइ, कीयं आहट्टु देज्जमाणं पडिग्गाहेइ पडिग्गाहेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥१॥

कीय किणाविय अणुमोदितं च वियडं जमाहियं सुत्ते ।
एक्केक्कं तं दुविहं, दव्वे भावे य णायव्वं ॥६०३०॥

अप्पणा किणति, अण्णेण वा किणावेइ, साहुअट्ठा वा कीयं परिभोगओ अणुजाणति, अण्णं वा अणुमोएइ, आणादिया दोसा चउलहुं च । सो कीओ दुविधो – अप्पणा परेण च । एक्केक्को पुणो दुविहो – दव्वे भावे य । सेसं पूर्ववत् । परभावकीए मासलहुं । जं अप्पणा किणति, एस उप्पायणा । जं परेण किणावेइ, एस उग्गमो ॥६०३०॥

एएसामण्णतरं, वियडं कीतं तु जो पडिग्गाहे ।
सो आणा अणवत्थं, मिच्छत्तविराधणं पावे ॥६०३१॥

कंठा । वियडग्गहणे परिभोगो वा अकप्पग्गहणं अकप्पपडिसेवा य संजमविराहणा य ।

जतो भण्णति –

इहरह वि ता न कप्पइ, किमु वियडं कीतमादि अविसुद्धं ।
असमितिऽगुत्ति गेही, उड्डाह महव्वया आता ॥६०३२॥

इहरहा अकीतं । किं पुण कीयं ?, उग्गमदोसजुत्तं सुदुत्तरं ण कप्पइ । वियडत्ते पंचसु वि समितीसु असमितो भवति, गुत्तीसु वि अगुत्तो, तम्मि लद्धसायस्स अपरिच्चागो गेही, जणेण णाते उड्डाहो, पराधीणो वा मत्तत्तए भंजेज ॥६०३२॥

कहं ? उच्यते –

वियडत्तो छक्काए, विराहए भासती तु सावज्जं ।
अगडागणिउदएसु अ, पडणं वा तेसु वा घेप्पे ॥६०३३॥

पराहीणत्तणओ छक्काए विराहेज्ज, मोसं वा भासेज्ज, अदत्तं वा गेण्हेज्ज, मेहुणं वा सेवेज्ज, हिरण्णादिपरिग्गहं वा करेज्ज । आयविराहणा इमा – अगडे त्ति कूवे पडेज्ज, पलित्ते वा डज्झेज्ज, उदगेण वा धरेज्ज, तेण वा कसाएण वा णिक्कासति तो वा तेहिं घेप्पइ ॥६०३३॥

अहवा – कारणे पत्ते गेण्हेज्जा –

बितियपदं गेलण्णे, विज्जुवदेसे तहेव सिक्खाए ।
एतेहिं कारणेहिं, जयणाए कप्पती घेत्तुं ॥६०३४॥

वेज्जोवएसेण गिलाणट्ठा घेप्पेज्ज, कस्सति कोति वाही तेणेव उवसमति त्ति ण दोसो । गिलाणट्ठा वा वेज्जो आणितो, तस्सट्ठा वा घिप्पेज्ज, पकप्पं वा सिक्खंतो गहणं करेज्ज ॥६०३४॥

कहं ? उच्यते –

संभोइयमण्णसंभोइयाण असतीते लिंगमादीणं ।
पकप्पं अहिज्जमाणो, सुद्धासति कीयमादीणि ॥६०३५॥

पकप्पो सिक्खियव्वो सुत्ततो अत्थतो वि सगुरुस्स पासे, असति सगुरुस्स ताहे सगणे, सगणस्स वि असति ताहे संभोतिताण सगासे सिक्खति । असति संभोतितांण ताहे अण्णसंभोतियाण सगासे, तेसिं पि असतीए लिंगत्थादियाण पासे पकप्पं अधिज्जति । तस्स य लिंगत्थस्स तं वियडवसणं हवेज्जा, सो अप्पणा चेव उप्पाएउ । अह सो उप्पाएउं मुत्तत्थे ण तरति दाउं ताहे स साधू उप्पाएउं सुद्धं, जति सुद्धं ण लब्भइ ताहे कीयमादि गेण्हेज्जा ॥६०३५॥

जे भिक्खू वियडं पामिच्चेइ पामिच्चावेइ पामिच्चं आहट्टु देज्जमाणं पडिग्गाहेइ, पडिग्गाहेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥२॥

जे भिक्खू वियडं परियट्टेति परियट्टावेइ परियट्टियं आहट्टु देज्जमाणं पडिग्गाहेति, पडिग्गाहेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥३॥

जे भिक्खू वियडं अच्छेज्जं अणिसिट्ठं अभिहडं आहट्टु देज्जमाणं पडिग्गाहेइ, पडिग्गाहेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥४॥

एतेसिं सव्वं पूर्ववत् जहा पिंडणिज्जुत्तीए, एतेसु पच्छित्तं चउलहू, जं च दुगुंछियपडिग्गहणे पच्छित्तं भवति, छ्क ।

एमेव तिविहकरणं, पामिच्चे तह य परियट्टे ।
अच्छिज्जे अणिसिट्ठे, तिविहं करणं णवरि णत्थि ॥६०३६॥

तिविहं करणं कृतं कारितं अनुमोदितं च, अच्छेज्जऽणिसिट्ठेसु तिविहं करणं भवति, सेसं सव्वं वितियपदं च पूर्ववत् ॥६०३६॥

जे भिक्खू गिलाणस्सऽट्ठाए परं तिण्हं वियडदत्तीणं पडिग्गाहेइ,
पडिग्गाहेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥५॥

दत्तीए पमाणं पसती, तिण्हं पसतीणं परेण चउत्था पसती गिलाणकज्जे वि ण घेत्तव्वो, जो गेण्हति तस्स चउलहुं ।

जे भिक्खू गिलाणस्सा, परेण तिण्हं तु वियडदत्तीणं ।
गिण्हेज्ज आदिएज्ज व, सो पावति आणमादीणि ॥६०३७॥

तिण्हं दत्तीणं परतो गहणे वि चउलहुं । "आदिएज्ज" त्ति पिवंतस्स वि चउलहुं ॥६०३७॥

तिण्हं दत्तीणं परतो गहणे आदियणे वा इमे दोसा –

अप्पच्चओ य गरहा, मददोसा गेहिवड्ढणं खिंसा ।
तिण्ह परं गेण्हंते, परेण तिण्हाइयंते य ॥६०३८॥

अपच्चओ त्ति जहा एस पव्वइओ होउं वियडं गिण्हति आदियति वा तहा एस अण्णं पि करेति मेहुणादियं । "गरह" त्ति एस णूणं णियकुलजातितो त्ति । मददोसा–पीते पलवति वग्गइ वा । पुणो पुणो गहणे वा वियडे गेही वड्ढति । खिंसा–धिरत्थु ते एरिसपव्वज्जाए त्ति ॥६०३८॥

दिट्ठं कारणगहणं, तस्स पमाणं तु तिण्णि दत्तीओ ।
पातुं व असागरिए, सेहादि असंलवंतो य ॥६०३९॥

तिण्णि दत्तीओ तिण्णि पसतीओ सकारणिओ ताओ पाउं असागरिगे अच्छति, [1]णिहुतो त्ति णग्गायते पलवति णच्चइ वा । अभावियसेह अपरिणामगेहिं सद्धिं उल्लावणं न करेति गिहीहिं वा ॥६०३९॥

वियडत्तस्स उ वाहिं, णिग्गंतु ण देंति अह वला णीति ।
जयणाए पत्तवासे, गायणे व लवंते आसमवि ॥६०४०॥

जइ जुत्तमेत्तपीएण अतिरित्तेण वा मत्तो वियडत्तगो जति मत्तो पराधीणओ वाहिं णिग्गच्छेज्ज तो ण देंति से णिग्गंतुं, वला णिंतो "जयण" त्ति जहा ण पीडिज्जति तहा "पत्तवासे" त्ति-वज्झइ । अह पत्तवासितो मोक्कलो वा गाएज्जा पलवेज्ज वा तो "आसमवि" त्ति आसं मुहं तं पि सिविज्जति ॥६०४०॥

अववादतो तिण्हं दत्तीणं अतिरित्तमवि गिण्हेज्ज –

वितियपदं गेलण्णे, विज्जुवदेसे तहेव सिक्खाते ।
गहणं अतिरित्तस्सा, वेज्जुवदेसे य आइयणं ॥६०४१॥

---

[1] उन्मत्तः ।

गेलण्णट्ठा वेज्जुवदेसेण सिक्खाए वा एतेहिं कारणेहिं गहणं अतिरित्तस्स आतियणं पि, अतिरित्तस्स गेलण्णसिक्खाहिं विसेसतो वेज्जुवदेसेण ।

तं पुण इमेसु ठाणेसु कमेण गेण्हेज्जा –

"गहणं पुराणसावग, सम्म अहाभद्द दाणसड्ढे य ।
भावियकुलेसु ततो, जयणाए तत्तु परलिंगे" ॥१॥

जे भिक्खू वियडं गहाय गामाणुगामं दूइज्जइ, दूइज्जंतं वा सातिज्जति॥सू०॥६॥

वियडेण हत्थगतेण जो गामाणुगामं दूइज्जइ गच्छइ, तस्स आणादी चउलहुं च ।

कारणओ सग्गामे, सइलाभे गंतु जो परग्गामे ।
आणिज्जा ही वियडं, णिज्जा वा आणमादीणि ॥६०४२॥

कारणओ वियडं घेत्तव्वं, तं पि सग्गामे "सति" त्ति लब्भमाणे जो परगामतो आणति, सग्गामाओ वा परगामं णेज्जा, तस्स आणादिया दोसा ॥६०४२॥

इमे य –

परिगलण पवडणे वा, अणुपंथियगंधमादि उड्डाहो ।
आहारेतरतेणा, किं लद्ध कुतूहले चेव ॥६०४३॥

परिगलंते पुढवातिछक्काया विराहिज्जंति, पडियस्स वा भायणभग्गे य छक्कायविराहणा, अहवा – परिगलंते पडियस्स वा छड्डिते अणुपंथिओ वा पडिपंथिओ वा गंधमाघाएज्ज, सो य उड्डाहं करेज्ज, अंतरा वा आहारतेणा भायणं उग्घाडेज्जति, दट्ठुं आदिएज्ज उड्डाहं वा करेज्ज । इयरे त्ति उवकरण-तेणा ते वा कुतूलहेण भायणं उग्घाडेज्जा, किं लद्धं ति ? ते वा उड्डाहं करेज्ज ॥६०४३॥

जम्हा एवमादिया दोसा –

तम्हा खलु सग्गामे, घेत्तुणं बंधणं घणं कुज्जा ।
एत्तो च्चिय उवउत्तो, गिहीण दूरेण संवरितो ॥६०४४॥

खलुसद्दो सग्गामावधारणे, स्वग्राम एव गृहीतव्यं, सग्गामासति परगामातो आणियव्वं, कारणे वा परगामं णेयव्वं इमेण विहिणा – संकुडमुहभायणे ओमंथियं सरावं घणचीरबंधणं कुज्जा, पंथं उवउत्तो गच्छति, जहा णो परिगलति पक्खलति वा । गिहीण य एयंतजंताण हेट्ठोवाएण दूरतो गच्छति, तं पि भायणं वास-कप्पादिणा सुसंवृतं करेति ॥६०४४॥

अववादकारणेण परगामे णेति, आणवेति वा –

बितियपदं गेलण्णे, वेज्जुवएसे तहेव सिक्खाए ।
एतेहि कारणेहिं, जयण इमा तत्थ कायव्वा ॥६०४५॥ पूर्ववत्

एवमादिकारणेहिं गेण्हंतस्स इमा जयणा –

पुराणेसु सावतेसु, व सण्णि-अहाभद्द-दाणसड्ढेसु ।
मज्झत्थकुलीणेसुं, किरियावादीसु गहणं तु ॥६०४६॥

पुव्वं पुराणस्स हत्थातो घेप्पइ, तस्स असति गहिताणुव्वतसावगस्स, ततो अविरयसम्मद्दिट्ठिस्स, ततो अहाभद्दगस्स, ततो दाणसड्ढस्स । मज्झत्था जे णो अम्हं सासणं पडिवण्णा णो अण्णेसिं, ते य जातिकुलीणा। एत्थ कुलीणो सभावट्ठितो दिट्ठे य सद्दशेत्यर्थः । क्रियां वदति क्रियावादीति वेज्जेत्यर्थः ॥६०४६॥

खेत्ततो पुण इमेसु गहणं –

गिहि-कुल-पाणागारे, गहणं पुण तस्स दोहि ठाणेहिं ।
सागारियमादीहि उ, आगाढे अन्नलिंगेणं ॥६०४७॥

दोहि ठाणेहिं गहणं, गिहेत्ति पुराणादियाण गिहेसु, "पाणागार" त्ति-कल्लालावणे, गिहासइ पच्छा कल्लालावणे । "गिहे" त्ति पुव्वं सेज्जातरगिहातो आणिज्जति जे दूराणयणे दोसा ते परिहरिया भवंति, सेज्जातरगिहासति पच्छा णिवेसणतो वाडग-साहि-सग्गाम-परगामातो य । जत्थ सलिंगेण उड्डाहो तत्थ परलिंगेण गहणं करेंति ॥६०४७॥

अदिट्ठमस्सुतेसु, परलिंगेणेतरे सलिंगेणं ।
आसज्ज वा विदेसं, अदिट्ठपुव्वे वि लिंगेणं ॥६०४८॥

जत्थ णगरे गामे वा सो साधू ण केणइ दिट्ठो वण्णागारेहिं वा सुतो तत्थ परलिंगेण ठितो गेण्हइ । "इतरे" त्ति – जत्थ पुण सो परलिंगट्ठितो वि पच्चभिण्णज्जति तत्थ सलिंगेण वा गेण्हति । अहवा – "आसज्ज वा वि देसं" – ति जत्थ देसे ण णज्जति किं एतेसिं वियडं कप्पं अकप्पं ति, ण वा लोगो गरहति, तत्थ सलिंगेण गेण्हति । "अदिट्ठपुव्वे" ति-जत्थ गाम-णगरादिसु ण दिट्ठपुव्वो तत्थ वा सलिंगेण गेण्हति ॥६०४८॥

जे भिक्खू वियडं गालेइ, गालावेइ, गालियं आहट्टु देज्जमाणं पडिग्गाहेति पडिग्गाहेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥७॥

परिपूणगादीहिं गालेति तस्स चउलहुं आणादीया य दोसा ।

जे भिक्खू वियडं तू, गालिज्जा तिविहकरणजोगेणं ।
सो आणा अणवत्थं, मिच्छत्त विराधणं पावे ॥६०४९॥

अप्पणो गालेइ, अण्णेण वा गालावेइ, गालेंतमणुमोदेति एवं तिविहकरणं, सेसं कंठं ।

इमे दोसा –

इहरह वि ताव गंधो, किमु गालेतम्मि जं उज्झिमिया ।
खोलेसु पक्कसम्मिय,-पाणादिविराधणा चेव ॥६०५०॥

"इहरह" त्ति-अगालिज्जंतस्स वि गंधो, गालिज्जंते पुण सुट्ठुतरं गंधो खोलपक्कसेसु उज्झिज्झमाणेसु उज्झिमिता भवति, मज्जस्स हेट्ठा घोयगिमादिकिट्टिसंखेलो सुराए किण्णिमादिकिट्टिसंपक्कसं अण्णं च खोलपक्केसु छड्डिज्जमाणेसु मक्खिगपिपीलिगा विराधणा, मधुबिंदोवक्खाणओ य प्राणिविराहणा ॥६०५०॥

बितियपदं गेलण्णे, वेज्जुवएसे तहेव सिक्खाए ।
एतेहिं कारणेहिं, जयण इमा तत्थ कातव्वा ॥६०५१॥

कारणे इमाए जयणाए गेण्हेज्जा –

पुव्वपरिगालियस्स उ, गवेसणा पढमताए कायव्वा ।
पुव्वपरिगालियस्स य, असतीते अप्पणा गाले ॥६०५२॥

रिजु पुव्वपरित्ति कंठ्या ॥६०५२॥

सव्वे वियडसत्ता जहा णिद्दोस-सदोसा भवंति तहा आह –

कारणगहणे जयणा, दत्ती दूतिज्जगालणं चेव ।
कीतादी पुण दप्पे, कज्जे वा जोगमकरेंता ॥६०५३॥

दत्तीजुत्तं दूइज्जगाजुत्तं गालणाजुत्तं च एते जुत्ता कारणिया, एतेसु कारणेसु वियडं घेप्पइ, गहणे णिद्दोसो जयणं करेंतोऽजयणं करेंतस्स दोसा भवंति । कीयगड-पामिच्च-परियट्टि-अच्छेज्जादिया पुण सुत्ता दप्पतो पडिसिद्धा, दप्पतो गेण्हंतो सदोसो, कज्जे अववादतो गेण्हंतो जति तिण्णि वारा सुद्धस्स जोगं ण पउंजति पणगपरिहाणी वा न पउंजति तो सदोसो ॥६०५३॥

जे भिक्खू चउहिं संझाहिं सज्झायं करेइ करेंतं वा साइज्जइ, तं जहा
पुव्वाए संझाए, पच्छिमाए संज्झाए, अवरण्हे, अड्ढरत्ते ॥सू०॥८॥

तासु जो सज्झायं करेइ तस्स चउलहुं आणादिया य दोसा ।

पुव्वावरसंझाए, मज्झण्हे तह य अद्धरत्तम्मि ।
चतुसंझासज्झायं, जो कुणती आणमादीणि ॥६०५४॥

संझासु अपाढे इमं कारणं –

लोए वि होति गरहा, संझासु तु गुज्झगा पवियरंति ।
आवासग उवओगो, आसासो चेव खिन्नाणं ॥६०५५॥

लोइयवेइसामादियाणा य संझासु पाढो गरहियो, अन्नं संझासु गुज्झग त्ति देवा ते विचरंति ते पमत्तं छलेज्ज, संझाए सज्झायविणियट्टचित्तो आवासगो उवउत्तो भवति, सज्झायखिण्णस्स य तं वेलं आसासो भवति, णाणायारो य विराहितो, णाणविराहणं करेंतेण संजमो विराहितो, जम्हा एत्तिया दोसा तम्हा णो करेज्जा ॥६०५५॥

कारणे वा करेज्ज –

वितियाऽऽगाढे सागारियादि कालगत असति वोच्छेदे ।
एतेहि कारणेहिं, जयणाए कप्पती कातुं ॥६०५६॥

आगाढजोगो महाकप्पसुयाइउद्दिट्ठं पडिसुणावणणिमित्तं संझासु कड्ढिज्जेज्जा, अहवा – आगाढकारणा सागारियादि ॥६०५६॥

तेसिं इमा विभासा –

जं जस्स जियं सागारियम्मि णिसिमरणे जेण जग्गंति ।
अहिणवगहितम्मि मते, पडिपुच्छं नत्थि उभयस्सं ॥६०५७॥

"सागारिग" त्ति-सद्दपडिबद्धाए वसधीए ठिता तत्थ जस्स जं सुयं कालिगं उक्कालिगं वाएइ त्ति सो तं संझाए परियट्टेति। "[1]कालगतो" त्ति – कोइ साधू निसीए मम्रो तदट्ठा राम्रो जग्गियव्वं, तत्थ जेण सुत्तेण रसिएण णायमादिणा कढिज्जतेण जग्गंति तं संझासु वि कड्ढिज्जति, गिलाणो वा ओसही पीओ जेण जग्गति तं कढिज्जति। "[2]असति" त्ति किंचि अज्झयणं कस्सइ गुरुणो समीवाओ गहितं सो गुरू कालगतो, तस्स व अहिणवगहियस्स सुत्तत्थस्स अण्णतो पडिपुच्छं पि णत्थि अतो तं संझासु वि परियट्टेति ॥६०५७॥

"[3]वोच्छेदि" त्ति अस्य व्याख्या –

> वोच्छेदे तस्सेव उ, तदत्थि सेसेसु तं समुच्छिण्णे।
> अणुपेहाए अवलिओ, घोसतु यं वा वि सद्देणं ॥६०५८॥

कस्स इ आयरियस्स किंचि अज्झयणं अत्थि, अण्णेसु तं वोच्छिण्णं, सो संझासु असंझाकाले वा परियट्टेति, मा ममं पि वोच्छिज्जिहिति। अहवा – तस्स समीवातो पढंतो लहुं पढामित्ति संझासु वि पढति, मा वोच्छिज्जिहिति त्ति। संझासु कारणे अणुप्पेहियव्वं। जो पुण अणुपेहाए ण सक्केति सो सद्देण वि पढेज्जा। अहवा – तं घोससद्देण घोसेयव्वं, तं पि जयणाए, जहा अण्णो अपरिणामगो ण जाणति ॥६०५८॥

जे भिक्खू कालियसुयस्स परं तिण्हं पुच्छाणं पुच्छइ पुच्छंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥९॥

जे भिक्खू दिट्ठिवायस्स परं सत्तण्हं पुच्छाणं पुच्छइ पुच्छंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥१०॥

कालियसुयस्स उक्काले संझासु वा असज्झाए वा तिण्हं पुच्छाणं परेण पुच्छइ तस्स चउलहुं। दिट्ठिवायस्स संझासु असज्झाए वा सत्तण्हं परेणं पुच्छंतस्स ङ्क।

> तिण्हुवरि कालियस्सा, सत्तण्ह परेण दिट्ठिवायस्स।
> जे भिक्खू पुच्छाणं, चउसंझं पुच्छ आणादी ॥६०५९॥

चउसु संझासु अण्णयरीए वा तस्स आणादी ॥६०५९॥

पुच्छाते पुण किं पमाणं ?, अतो भण्णति –

> पुच्छाणं परिमाणं, जावतियं पुच्छति अपुणरुत्तं।
> पुच्छेज्जा ही भिक्खू, पुच्छ णिसज्झाए चउभंगो ॥६०६०॥

अपुणरुत्तं जावतियं कड्ढिउं पुच्छंति सा एगा पुच्छा।

एत्थ चउभंगो –

एक्का णिसेज्जा एक्का पुच्छा, एत्थ सुद्धो।

एक्का णिसेज्जा अणेगाओ पुच्छाओ, एत्थ तिण्हं वा सत्तण्हं वा परेण चउलहुगा।

अणेगा णिसिज्जा एक्का पुच्छा, एत्थ वि सुद्धो।

अणेगा णिसिज्जा अणेगा पुच्छा, एत्थ वि तिण्हं सत्तण्हं वा परेणं पुच्छंतस्स चउलहुगा ॥६०६०॥

---

१ गा० ६०५६। २ गा० ६०५६। ३ गा० ६०५६।

अहवा तिण्णि सिलोगा, ते तिसु णव कालिएतरे तिगा सत्त ।
जत्थ य पगयसमत्ती, जावतियं वाचिओ गिण्हे ॥६०६१॥

तिहिं सिलोगेहिं एगा पुच्छा, तिहिं पुच्छाहिं णव सिलोगा भवंति, एवं कालियसुयस्स एगतरं। दिट्ठिवाए सत्तसु पुच्छासु एगवीसं सिलोगा भवंति । अहवा – जत्थ पगतं समप्पति थोवं बहुं वा सा एगा पुच्छा । अहवा – जत्तियं आयरिएण तरइ उच्चारितं घेत्तुं सा एगा पुच्छा ॥६०६१॥

बितियागाढे सागारियादि कालगत असति वोच्छेदे ।
एतेहिं कारणेहिं, तिण्हं सत्तण्ह व परेणं ॥६०६२॥

कम्हा दिट्ठिवाए सत्त पुच्छातो ?, अतो भण्णति –

नयवातसुहुमयाए, गणिते भंगसुहुमे णिमित्ते य ।
गंथस्स य बाहुल्ला, सत्त कया दिट्ठिवातम्मि ॥६०६३॥

णेगमादि सत्तणया, एक्केक्को य सयविहो, तेहिं समेहिं जाव दव्वपरूवणा दिट्ठिवाए कज्जंति सा णयवादसुहुमया भण्णति । तह परिकम्मसुत्तेसु गणियसुहुमया, तहा परमाणुमादीसु वण्णगंधरसफासेसु एगगुण-कालगादिपज्जवभंगसुहुमता । तहा अट्ठंगमादिणिमित्तं, बहुवित्थरत्तणतो दिट्ठिवायगंथस्स य बहुअत्तणतो सत्त पुच्छाओ कताओ ॥६०६३॥

जे भिक्खू चउसु महामहेसु सज्झायं करेइ करेंतं वा साइज्जइ, तं जहा –
इंदमहे खंदमहे जक्खमहे भूयमहे ॥सू०॥११॥

रंधण-पयण-खाण-पाण-नृत्य-गेय-प्रमोदे च महता महामहा तेसु जो सज्झायं करेइ तस्स चउलहुं ।

जे भिक्खू चउसु महापडिवएसु सज्झायं करेइ करेंतं वा साइज्जइ, तं जहा –
सुगिम्हयपाडिवए आसाढीपाडिवए
आसोयपाडिवए कत्तियपाडिवए वा ॥सू०॥१२॥

एतेसिं चेव महामहाणं जे चउरो पडिवयदिवसा, एतेसु वि करेंतस्स चउलहुं ।

चतुसुं महामहेसुं, चतुपाडिवदे तहेव तेसिं च ।
जो कुज्जा सज्झायं, सो पावति आणमादीणि ॥६०६४॥ कंठ्या

के पुण ते महामहा ?, उच्यंते –

आसाढी इंदमहो, कत्तिय-सुगिम्हओ य बोधव्वो ।
एते महामहा खलु, एतेसिं चेव पाडिवया ॥६०६५॥

आसाढी – आसाढपोण्णिमाए, [1]इह लाडेसु सावणपोण्णिमाए भवति इंदमहो, आसोयपुण्णिमाए कत्तियपुण्णिमाए चेव, सुगिम्हातो चेत्तपुण्णिमाए । एते अंतदिवसा गहिया । आदितो पुण जत्थ विसए

---

१ 'इह' अनेन ज्ञायते लाटदेशीयोऽयं-चूर्णिकार इति ।

जतो दिवसातो महामहो पयत्तति ततो दिवसातो आरब्भ जाव अंतदिवसो ताव सज्झातो ण कायव्वो । एएसिं चेव पुण्णिमाणं अणंतरं जे बहुलपडिवगा चउरो तेवि वज्जेयव्वा ॥६०६५॥

पडिसिद्धकाले करेंतस्स इमे दोसा –

अन्नतरपमादजुत्तं, छलेज्ज अप्पिड्ढिओ ण पुण जुत्तं ।
अद्धोदहिट्ठिती पुण, छलेज्ज जयणोवउत्तं पि ॥६०६६॥

सरागसंजतो सरागत्तणतो इंदियविसयादि अण्णतरे पमादजुत्तो हवेज्ज, विसेसतो महामहेसु तं पमायजुत्तं पडिणीयदेवता अप्पिड्ढिया खित्तादि छलणं करेज्ज । जयणाजुत्तं पुण साहुं जो अप्पिड्ढितो देवो अद्धोदधीओ ऊणट्ठिइत्ति सो ण सक्केति छलेउं – अद्धसागरोवमठितितो पुण जयणाजुत्तं पि छलेति, अत्थि से सामत्थं, तं पि पुव्ववेरसंबंधसरणतो कोति छलेज्ज ॥६०६६॥

चोदगाह – "बारसविहम्मिवि तवे, सब्भिंतर बाहिरे कुसलदिट्ठे ।
ण वि अत्थि ण वि य होही, सज्झायसमो तवोकम्मं ॥"

किं महेसु संझासु वा पडिसिज्झति ?, आचार्याह –

कामं सुओवओगो, तवोवहाणं अणुत्तरं भणितं ।
पडिसेहितम्मि काले, तहावि खलु कम्मबंधाय ॥६०६७॥

दिट्ठं महेसु सज्झायस्स पडिसेहकारणं ।

पाडिवएसु किं पडिसिज्झइ ?, उच्यते –

छणियाऽवसेसएणं, पाडिवएसु वि छणाऽणुसज्जंति ।
महवाउलत्तणेणं, असारिताणं च सम्माणो ॥६०६८॥

छणस्स उवसाहियं जं मज्जपाणादिगं तं सव्वं णोवभुत्तं, तं पडिवयासु उवभुंजंति, अतो पडिवतासु वि छणो अणुसज्जति । अण्णं च महदिणेसु वाउलत्तणतो जे य मित्तादि ण सारिता ते पडिवयासु संभारिज्जंति त्ति छणो वट्टति, तेसु वि ते चेव दोसा, तम्हा तेसु वि णो करेज्जा ॥६०६८॥

बितियागाढे सागारियादि कालगत असति वोच्छेदे ।
एतेहि कारणेहिं, जयणाए कप्पती कातुं ॥६०६९॥ कंठ्या

जे भिक्खू पोरिसिं सज्झायं उवाइणावेइ उवाइणावेंतं वा साइज्जति॥सू०॥१३॥

जे भिक्खू चउकालं सज्झायं न करेइ न करेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥१४॥

कालियसुतस्स चउरो सज्झायकाला, ते य चउपोरिसिणिप्फण्णा, ते उवातिणावेति त्ति – जो तेसु सज्झायं न करेइ तस्स चउलहुं आणादिणो य दोसा ।

अंतो अहोरत्तस्स उ, चउरो सज्झायपोरिसीओ उ ।
जे भिक्खू उवायणति, सो पावति आणमादीणि ॥६०७०॥

अहोरत्तस्स अंतो अब्भंतरे, सेसं कंठ्यं ॥६०७०॥

चाउक्कालं सज्झायं अकरेंतस्स इमे दोसा ।

पुव्वगहितं च नासति, अपुव्वगहणं कओ सि विकहाहिं ।
दिवस-निसि-आदि-चरिमासु चतुसु सेसासु भइयव्वं ॥६०७१॥

सुत्तत्थे मोत्तुं देस-भत्त-राय-इत्थिकहादिसु पमत्तो अच्छति अगुणेंतस्स पुव्वगहितं णासति, विकहा-पमत्तस्स य अपुव्वं गहणं णत्थि, तम्हा णो विकहासु रमेज्जा ।

दिवसस्स पढमचरिमासु णिसीए य पढमचरिमासु य–एयासु चउसु वि कालियसुयस्स गहणं गुणणं च करेज्ज । सेसासु त्ति दिवसस्स वितियाए उक्कालियसुयस्स गहणं करेति अत्थं वा सुणेति, एसा चेव भयणा । ततियाए वा भिक्खं हिंडइ, अह ण हिंडति तो उक्कालियं पढति, पुव्वगहियमुक्कालियं वा गुणेति, अत्थं वा सुणेइ । णिसिस्स बिइयाए एसा चेव भयणा सुवइ वा । णिसिस्स ततियाए णिद्दाविमोक्खं करेइ, उक्कालियं गेण्हति गुणेति वा, कालियं वा सुत्तमत्थं वा करेति । एवं सेसासु भयणा भावेयव्वा ॥६०७१॥

चाउक्कालियसज्झायस्स वा अकरणे इमे कारणा –

असिवे ओमोयरिए, रायदुट्ठे भए व गेलण्णे ।
अद्धाण रोहए वा, कालं च पडुच्च नो कुज्जा ॥६०७२॥

अस्य व्याख्या –

सज्झायवज्जमसिवे, रायदुट्ठे भय रोहग असुद्धे ।
इतरमवि रोहमसिवे, भइतं इतरे अलं भयसु ॥६०७३॥

"सज्झायवज्जमसिवे" त्ति – लोगे असिवं वा साधू अप्पणा वा गहितो तत्थ सज्झायं ण पट्ठवेंति आवस्सगादि उक्कालियं करेंति । रायदुट्ठे बोहिगभए य तुण्हिक्का अच्छंति, मा णज्जिहामो, तत्थ कालिग-मुक्कालिगं वा ण करेंति । अहवा – "रायदुट्ठे भय" त्ति-णिव्विसया भत्तपाणे पडिसेहे य ण करेंति सज्झायं । उवकरण (सरीर) हरे दुविधभेरवे य ण करेंति, मा णज्जीहामो त्ति । रोघगे असुद्धे काले वा ण करेंति । इयरमवि आवस्सगादि उक्कालियं, जत्थ रोधगे अचियत्तं असिवेण य गहिया तत्थ तं पि ण करेंति । इयरे त्ति – ओमोदरिया तत्थ भयणा – जइ वितियजामादिसु वेलासु ण करेंति सज्झायं, अह ण फव्वंति पच्चूसियवेलातो आदिच्चोदयाओ आरद्धा ताव हिंडंति जाव अवरण्हो त्ति । गेलण्णद्धाणेसु 'अलं भयसु" त्ति-जइ गिलाणो सत्तो अद्धाणिगेण वा न खिण्णो तो करेंति, अह असत्ता तो ण करेंति । अहवा – गिलाण-पडियरगा वा ण करेंति, कालं वा पडुच्च णो कुज्जति । असुद्धे वा काले ण करेंति । अणुपेहा सव्वत्थ अविरुद्धा ॥६०७३॥

जे भिक्खू असज्झाइए सज्झायं करेइ, करेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥१५॥

जम्मि जम्मि कारणे सज्झाओ ण कीरति तं सव्वं असज्झाइयं, तं च बहुविहं वक्खमाणं, तत्थ जो करेइ तस्स चउलहुं आणाभंगो अणवत्था मिच्छत्तं आयसंजमविराहणा य ।

तस्सिमे भेदा –

असज्झायं च दुविहं, आतसमुत्थं च परसमुत्थं च ।
जं तत्थ परसमुत्थं, तं पंचविहं तु नायव्वं ॥६०७४॥

आयसमुत्थं निट्ठउ ताव उवरिं भणिहिति अणंतरसुत्ते, जं परसमुत्थं तं इमं पंचविहं ॥६०७४॥

संजमघाउप्पाते, सा दिव्वे वुग्गहे य सारीरे ।
घोसणयमेच्छरण्णो, कोइ छलिओ पमाएणं ॥६०७५॥

एयम्मि पंचविहे असज्झाइए जो सज्झायं करेति तस्सिमा आयसंजमविराहणा । दिट्ठंतो-घोसणय मेच्छरण्णो त्ति ॥६०७५॥

अस्य व्याख्या –

मेच्छभयघोसणणिवे, हियसेसा ते तु डंडिया रण्णा ।
एवं दुहओ डंडो, सुर पच्छित्ते इह परे य ॥६०७६॥

खिइपतिट्ठितं णगरं, जियसत्तू राया । तेण सविसए घोसावितं जहा – मेच्छो राया आगच्छति, तं गामणगराणि मोत्तुं समासण्णे दुग्गेसु ठायह, मा विणस्सिहिह । जे ठिया रण्णो वयणेण दुग्गादिसु ते ण विणट्ठा । जे पुण न ठिता ते मेच्छेसु विलुत्ता, ते पुण रण्णा आणाभंगो मम कओ त्ति जं किंचि हियसेसं पि तं पि डंडिता । एवं असज्झाइए सज्झायं करेंतस्स दुहतो डंडो इह भवे "सुर" त्ति देवताए छलिज्जति, परभवं पडुच्च णाणादिविराहणा पच्छित्तं च ॥६०७६॥

इमो दिट्ठंतोवणओ –

राया इव तित्थकरो, जाणवता साधु घोसणं सुत्तं ।
मेच्छो य असज्झाओ, रतणधणाइं च णाणादी ॥६०७७॥

जह राया तहा तित्थकरो, जहा जणवदजणा तहा साधू, जहा आघोसणं तहा सुत्तपोरिसिकरणं, जारिसा मेच्छा तारिसा असज्झाया, जहा रयणघणावहारो तहा णाणदंसणचरणविणासो । तं पि सव्वं उवसंघारेयव्वं ॥६०७७॥

"[1]कोति छलिओ, पमादेणं" ति अस्य विभासा –

थोवाऽवसेसपोरिसि, अज्झयणं वा वि जो कुणति सोच्चा ।
णाणादिसारहीणस्स तस्स छलणा तु संसारे ॥६०७८॥

सज्झातं करेंतस्स थोवावसेसगो उद्देसगो अज्झयणं वा, तो पोरिसी आगय त्ति सुता, अहवा – असज्झाइयं कालवेला वा सोच्चा वि जो आउट्टियाए सज्झायं करोति सो णाणादिसारहीणो भवति । पणायारत्थो य देवयाए छलिज्जति, संसारे य दीहकालं परियट्टेति, पमादेण वि कारेंतो छलिज्जति चेव, दुक्खं संसारे अणुभवति ॥६०७८॥

जं तं संजमोवघाति तं इमं तिविहं –

महिया य भिण्णवासे, सचित्तरजो य संजमे तिविहे ।
दव्वे खेत्ते काले, जहियं वा जच्चिरं भव्वं ॥६०७९॥

---

१ गा० ६०७५ ।

पंचविहसज्झायस्स किं कहं परिहरियव्वमिति तप्पसाहगो इमो दिट्ठंतो –

दुग्गादि तोसियणिवो, पंचण्हं देति इच्छियपयारं ।
गहिए य देति मोल्लं, जणस्स आहारवत्थादी ॥६०८०॥

एगस्स रण्णो पंच पुरिसा, ते बहुसमरलद्धविजया । अण्णया तेहिं अच्चंतविसमं दुग्गं गहितं । तेसिं तुट्ठो राया । इच्छियं णगरे पयारं देति, जं ते किंचि असणादिगं वत्थादिगं वा जणस्स गेण्हंति तस्स वेणइयं (वेयणियं) सव्वं राया पयच्छति ॥६०८०॥

एगेण तोसिततरो, गिहमगिहे तस्स सव्वहिं पयारो ।
रत्थादीसु चउण्हं, एवं पढमं तु सव्वत्थ ॥६०८१॥

तेसिं पंचण्हं पुरिसाणं एक्केणं राया तोसिततरो, तस्स गिहाण रत्थासु सव्वत्थ इच्छिय-पयारं पयच्छति । चउण्हं रच्छासु चेव इच्छियपयारं पयच्छइ । जो एते दिण्णप्पयारे आसाएज्ज तस्स राया डंडं करेति । एस दिट्ठंतो ।

इमो उवसंघारो – जहा पंच पुरिसा तहा पंचविहमसज्झायं, जहा सो एगो अब्भरहिततरो पुरिसो एवं पढमं संजमोवघातितं सव्वहा णासतिज्जति, तम्मि वट्टमाणे ण सज्झाओ ण पडिलेहणादिका काइ चिट्ठा कीरइ, इतरेसु चउसु असज्झ इएसु जहा ते चउरो पुरिसा रच्छासु चेव अणासायणिज्जा तहा तेसु सज्झाओ चेव ण कीरइ, सेसा सव्वा चिट्ठा कीरइ, आवस्सगादिउक्कालियं पढिज्जति ॥६०८१॥

[1]महियादितिविहस्स संजमोवघातिस्स इमं वक्खाणं –

महिया तु गब्भमासे, सच्चित्तरयो तु ईसिआयंबो ।
वासे तिण्णि पगारा, बुब्बुय तव्वज्ज फुसिता य ॥६०८२॥

महियत्ति धूमिया, सा य कत्तियमग्गसिरादिसु गब्भमासेसु भवति, सा य पडणसमकालं चेव सुहुम-त्तणओ सव्वं आउक्कायभावितं करेति, तत्थ तक्कालसमयं चेव सव्वचेट्ठा णिरुज्झति । ववहारसच्चित्तो पुढविकाओ आरण्णो वा उद्धओ आगतो सच्चित्तरओ भवति, तस्स लक्खणं — वण्णतो ईसिं आयंबो दिसंतरेसु दीसति, सोवि णिरंतरपाएण तिण्हं दिणाणं परतो सव्वं पुढविकायभावितं करेति, तत्पाताशंकासंभवश्च । भिन्नवासं तिविहं – बुब्बुयाइ, जत्थ वासे पडमाणे उदगबुब्बुया भवंति तं बुब्बुयवरिसं, तेहिं वज्जितं तव्वज्जियं । सुहुमफुसारेहिं पडमाणेहिं फुसियं वरिसं, एतेसु जहासंखं तिण्णि-पंच-सत्तदिणपरओ सव्वं आउक्कायभावियं भवइ ॥६०८२॥

संजमघायस्स सव्वभेदाणं इमो चउव्विहो परिहारो – "[2]दव्वे खेत्ते" पच्छद्धं अस्य व्याख्या –

दव्वे तं चिय दव्वं, खेत्ते जहि पडति जच्चिरं कालं ।
ठाणभासादिभावे, मोत्तुं उस्सास उम्मेसं ॥६०८३॥

दव्वतो तं चेव दव्वं ति महिया सच्चित्तरयो भिन्नवासं च परिहरिज्जति । "[3]जहियं व" त्ति – जहिं खेत्ते महियादी पडंति तेहिं चेव परिहरिज्जति । "[4]जच्चिरं" ति – पडणकालातो आरब्भ जच्चिरं

---

[1] गा० ६०७९ । [2] गा० ६०७९ । [3] गा० ६०७९ । [4] गा० ६०७९ ।

कालं पडति तच्चिरं परिहारो। "भव्वं" ति—भावतो "ठाणमासादि" त्ति—काउस्सग्गं ण करेंति, ण य भासंति। आदिसद्दाओ गमणागमणं पडिलेहणसज्झायादि ण करेंति। "मोत्तुं उस्सासउम्मेसे" मोत्तुं ति णो पडिसिज्झंति उस्सासादिया अशक्यत्वात् जीवितव्याघातकत्वाच्च, शेषा क्रिया सर्वा निषिद्धयते। एस उस्सग्गपरिहारो। आतिण्णं पुण सच्चित्तरए तिण्णि भिण्णवासे तिण्णि पंच सत्त, अतो परं सज्झायादि ण करेंति।

अन्ने भणंति—बुब्बुयावरिसे अहोरत्तं, तव्वज्जे दो अहोरत्ता, फुसियवरिसे सत्त, अतो परं आउक्कायभाविते सव्वचेट्ठा णिरुज्झति ॥६०८३॥

वासत्ताणाऽऽवरिया, णिक्कारणे ठंति कज्जे जतणाए।
हत्थऽच्छिंगुलिसण्णा, [1]पोत्तावरिया व भासंति ॥६०८४॥

णिक्कारणे वा सकप्पकंबलीए पाउया [2]णिहुया सव्वब्भंतरे चिट्ठंति, अवस्सकायव्वे वा कज्जे वत्तव्वे वा इमा जतणा हत्थेण भूमादिअच्छिविकारेण वा अंगुलीए वा सण्णेति—"इमं करेहि, मा वा करेहि" त्ति। अहवा—एवं णावगच्छति मुहपोत्तिय अंतरिया जयणाए भासंति, गिलाणादिकज्जेसु वा सकप्पपाउआ गच्छंति ॥६०८४॥ संजमघाति त्ति गत्तं।

इदाणिं—"[3]उप्पाए" त्ति दारं—अब्भादिविकारवत् विश्रसा परिणामतो उत्पातो पांसुमादी भवति।

पंसू य मंस रुहिरे, केस-सिल-वुट्ठि तह रयुग्घाए।
मंसरुहिरऽहोरत्तं, अवसेसे जच्चिरं सुत्तं ॥६०८५॥

पंसुवरिसं मंसवरिसं रुधिरवरिसं, केसत्ति—वालवरिसं, करगादिं वा सिलावरिसं, रयुग्घायपयडणं च। तेसिं इमो परिहारो—मंसरुहिर अहोरत्तं सज्झाओ ण कीरइ, अवसेसा पंसुमादिया जच्चिरं-कालं पडंति तत्तियं कालं सुत्तं णंदिमादियं ण पढंति ॥६०८५॥

पंसुरउग्घातणे इमं वक्खाणं—

पंसू अच्चित्तरयो रयुग्घातो धूलिपडणसव्वत्तो।
तत्थ सवाए णिव्वायए य सुत्तं परिहरंति ॥६०८६॥

धूमागारो आपंडुरो रयो अच्चित्तो य पंसू भण्णइ, महास्कन्धावारगमनसमुद्धता इव विश्रसा-परिणामतो समंता रेणुपतनं रयुग्घातो भण्णइ, अहवा—एस रओ, उग्घातो पुण पंसुरता भण्णति, एतेसु वातसहितेसु असहितेसु वा सुत्तपोरिसिं ण करेंति ॥६०८६॥

किं चान्यत्—

साभाविते तिण्णि दिणा, सुगिम्हते निक्खिवंति जति जोग्गं।
तो तम्मि पडंते वी, कुणंति संवच्छरज्झायं ॥६०८७॥

एते पंसुरयुग्घाता साभाविगा हवेज्ज, असाभाविका वा। तत्थ असाभाविगा जे णिग्घायभूमिकंपं चंदोपरागादिदिव्वसहिता, एरिसेसु असाभाविगेसु कले वि उस्सग्गे ण करेंति सज्झायं। "सुगिम्हए" त्ति—

---

१ पोत्तंतरिया इति चूर्णि। २ निर्व्यापाराः। ३ गा० ६०७१।

जइ पुण चेत्तसुद्धपक्खदसमीए अवरण्हे जोगं णिक्खिवंति दसमीओ परेण जाव पुण्णिमाए एत्थंतरे तिण्णि दिणा उवरुवरिं अचित्तरउग्घाडावणं काउस्सग्ग करेति, तेरसिमादिसु वा तिसु दिणेसु तो साभाविके पडंते वि सज्झायं संवत्सरं करेंति, अह तं उस्सग्गं ण करेंति तो साभाविगे वि पडंते सज्झायं ण करेंति ॥६०८७॥ उप्पाय त्ति गय।

इदाणिं "[1]सादेव्वे" त्ति – स दिव्वेण सादिव्वं दिव्वकृतमित्यर्थः।

गंधव्व दिसा विज्जुग, गज्जिते जूव जक्ख आलित्ते ।
एक्केक्कपोरिसी गज्जियं तु दो पोरिसी हणति ॥६०८८॥

गंधव्वणगरविउव्वणं दिसाडाहकरणं विज्जुब्भवणं उक्कापडणं गज्जियकरणं जूवगो वक्खमाणो जक्खालित्तं जक्खदित्तं आगासे भवति, तत्थ गंधव्वणगरं जक्खदित्तं च एते णियमा दिव्वकया, सेसा भयणिज्जा, जतो फुडं ण णज्जति । तेण तेसिं परिहारो । एते गंधव्वादिया सव्वे एक्कं पोरिसिं उवहणंति, गज्जियं तु पोरिसिं दुगं हणइ ॥६०८८॥

दिसिदाहो छिण्णमूलो, उक्क सरेहा पगासजुत्ता वा ।
संझा छेदावरणो, तु जूवओ सुक्के दिण तिण्णि ॥६०८९॥

अन्यतमदिगंतरविभागे महाणगरप्रदीप्तमिवोद्योतः किन्तु उवरि प्रकाशमधस्तादंधकार ईदृग् छिण्णमूला दिग्दाहाः। उक्कालक्खणं सदेहवण्णं रेहं करेंती जा पडइ सा उक्का, रेहविरहिता वा उज्जोयं करेंती पडति सा वि उक्का। "जूवगो" त्ति संझप्पभा य चंदप्पभा जेण जुगवं भवति तेण जूवगो, सा य संझप्पभा चंदप्पभावरिया फिट्टंती ण णज्जति सुक्कपक्खपडिवयादिसु दिणेसु, संझोच्छेदे य अणज्जमाणे कालवेलं ण मुणंति, अतो तिण्णि दिणे पातोसियं कालं ण गेण्हंति, तेसु तिसुवि दिणेसु पादोसियसुत्तपोरिसिं ण करेंति ॥६०८९॥

केसिं चि होतऽमोहा, उ जूयओ ताव होंति आइण्णा ।
जेसिं तु अणाइण्णा, [2]तेसिं दो पोरिसी हणति ॥६०९०॥

जगस्स सुभासुभमत्थणिमित्तुप्पादो अवितधो आदिच्चकिरणविकारजणिओ आइच्चमुदयत्थमे आयंवो किण्ह सामो वा सगडुद्धिसंठितो डंडो अ मोह त्ति एस जूवगो, सेसं कंठ्यं ॥६०९०॥

किं चान्यत् –

चंदिमसूरुवरागे, णिग्घाए गुंजिते अहोरत्तं ।
संझाचतुपाडिवए, जं जहि सुगिम्हए नियमा ॥६०९१॥

चंदसूरुवरागो गहणं भण्णति, एवं वक्खमाणं साभ्रे निरभ्रे वा व्यंतरकृतो महागर्जितसमो ध्वनिर्निर्घातः, तस्सेव विकारो गुंजमानो महाध्वनिः, गुंजितं सामण्णतो, एतेसु चउसु वि अहोरत्तं सज्झाओ ण कीरइ । णिग्घातगुंजितेसु विसेसो – वितियदिणे जाव सा वेला विज्जति, णो अहोरत्तछेदेण छिज्जति, जहा अण्णेसु असज्झाईएसु ॥६०९१॥

---

१ गा० ६०७५ । २ तेसिं किर पोरिसी तिन्नि । (आ० नि०) । ३ आताम्रः ।

सब्भावश्रो त्ति श्रणुदिते सूरिए, मज्झण्हे, श्रत्थमाणे, श्रद्धरत्ते य – एयासु चउसु सज्झायं ण करेंति। दोसा पुव्वुत्ता। चउण्हं महामहेसु चउसु पाडिवएसु सज्झायं ण करेति पुव्वुत्तं, एवं श्रण्णं पि जत्तियं जाणंति "[1]जं" ति महं जाणेज्जा। "जहिं" ति गामणगरादिसु तं पि तत्थ वज्जेज्ज। सुगिम्हगो पुण सव्वत्थ णियमा भवइ। एत्थ श्रणागाढजोग णियमा णिक्खिवति। श्रागाढं ण णिक्खिवति णपढंति पुण ॥६०९१॥

[2]चंदिम-सूरिमग त्ति श्रस्य व्याख्या –

उक्कोसेण दुवालस, श्रट्ठ जहण्णेण पोरिसी चंदे।
सूरो जहण्ण बारस, पोरिसि उक्कोस दो श्रट्ठा ॥६०९२॥

चंदोदयकाले चेव गहिश्रो, संदूसियरातीए चउरो, श्रण्णं च श्रहोरत्तं एवं दुवालस। श्रहवा – उप्पायगहणे सव्वरातीयं गहणं सग्गहो चेव णिव्वुडो, संदूसियरातीए चउरो, श्रण्णं च श्रहोरत्तं एवं बारस। श्रहवा – श्रजाणया श्रब्भच्छण्णे संकाते ण नज्जति किं वेलं गहणं ?, परिहरिता राती पभाए दिट्ठं सग्गहो निव्वुडो, श्रण्णं च श्रहोरत्तं, एवं दुवालस। एवं चंदस्स सूरस्स श्रत्थमणगहणे सग्गहनिव्वुडो उवहयरातीए चउरो, श्रण्णं च श्रहोरत्तं परिहरति, एवं बारस।

श्रह उदेंतो गहितो तो संदूसियमहोरत्तस्स श्रट्ठ, श्रण्णं च श्रहोरत्तं परिहरंति एवं सोलस। श्रहवा – उदयवेलागहिश्रो उप्पादियगहणे सव्वदिणे गहणं होउं सग्गहो चेव णिव्वुडो संदूसियश्रहोरत्तस्स श्रट्ठ, श्रण्णं च श्रहोरत्तं एवं सोलस। श्रहवा – श्रब्भच्छण्णे ण णज्जति किं वेलं होहिति गहणं, दिवसतो संकाए ण पढियं, श्रत्थमणवेलाए दिट्ठं गहणं सग्गहो णिव्वुडो संदूसियस्स श्रट्ठ, श्रण्णं च श्रहोरत्तं, एवं सोलस ॥६०९२॥

सग्गहणिव्वुड एवं, सूरादी जेण होंतऽहोरत्ता।
श्राइण्णं दिणमुक्के, सोच्चिय दिवसो य रादी य ॥६०९३॥

सग्गहणिव्वुडे तं श्रहोरत्तं उवहतं। कहं ? उच्यते "सूरादी जेण श्रहोरत्ता," सूरुदयकालाश्रो जेण श्रहोरत्तस्स श्रादी भवति तं परिहरितुं संदूसितं श्रण्णं पि श्रहोरत्तं परिहरियव्वं। इमं पुण श्रादिण्णं चंदो गहितो रातीए चेव मुक्को, तीसे चेव राईए सेसं चेव वज्जणिज्जं, जम्हा श्रागामिसूरुदए श्रहोरत्तसमत्ती। सूरस्स वि दिया गहितो दिया चेव मुक्को, तस्सेव दिवसस्स सेसं राती य वज्जणिज्जा। श्रहवा–सग्गहणिव्वुडे विधी भणितो।

ततो सीसो पुच्छति – "कहं चंदे दुवालस, सूरे सोलस जामा ?"

श्राचार्याह – "सूराती जेण होंति श्रहोरत्ता", चंदस्स णियमा श्रहोरत्तद्धे गते गहणसंभवो श्रण्णं च श्रहोरत्तं एवं दुवालस, सूरस्स पुणो श्रहोरत्तातीए संदूसियश्रहोरत्तं परिहरियं, श्रन्नं पि श्रहोरत्तं परिहरिव्वं, एवं सोलस ॥६०९३॥ सादेव्वेत्ति गतं।

इदाणिं [3]वुग्गहे त्ति दारं –

वुग्गहडंडियमादी, संखोभे डंडिए व कालगते।
श्रणरायए व सभए, जच्चिर णिद्दोच्चऽहोरत्तं ॥६०९४॥

"वुग्गहडंडियमादि" त्ति श्रस्य व्याख्या –

सेणाहिव भोइ महयर, पुंसित्थीणं च मल्लजुद्धे वा।
लोट्ठादि-भंडणे वा, गुज्झगुड्डाहमचियत्तं ॥६०९५॥

---

[1] गा० ६०९१। [2] गा० ६०९१। [3] गा० ६०७५।

डंडियस्स डंडियस्स य वुग्गहो, आदिसद्दातो सेणाहिवस्स सेणाहिवस्स य । एवं दोण्हं भोइयाणं, दोण्हं महत्तराणं, दोण्हं पुरिसाणं, दोण्हं इत्थीणं, मल्लाण वा जुद्धं पिट्टायगलोट्ठभंडणेण वा । आदिसद्दातो विसयपसिद्धासु [1]संसुरुलासु । विग्गहा प्रायो व्यंतरबहुला, तत्थ पमत्तं देवया छलेज्ज । "[2]उड्डाहो" हा निदुक्ख त्ति, जणो भणेज्ज – अम्हे आवइपत्ताणं इमे सज्झायं करेंति त्ति अचियत्तं हवेज्ज । विसयसंखोभो परचक्कागमे । डंडिए वा कालगए भवति । "[3]अणराए" त्ति रण्णो कालगते णिब्भएवि जाव अण्णो राया न ठविज्जति । "[4]सभए" त्ति जीवंतस्स वि रण्णो वोहिगेहिं समंततो अभिदुद्दुयं जच्चिरं सभयं तत्तियं कालं सज्झायं ण करेंति । जद्दिवसं सुग्रं णिद्दोच्चं तस्स पुरतो अहोरत्तं परिहरंति ॥६०६५॥ एस डंडिए कालगते विधी ।

सेसेसु इमा विधी –

तद्दिवसभोयगादी, अंतो सत्तण्ह जाव सज्झाओ ।
अणाहस्स य हत्थसयं, दिट्ठविवित्तम्मि सुद्धं तु ॥६०६६॥

गामभोइए कालगते तद्दिवसं ति अहोरत्तं परिहरंति ।

आदिसद्दातो –

महतरपगते बहुपक्खिते, व सत्तघर अंतरमते वा ।
णिद्दुक्ख त्ति य गरहा, ण करेंति सणीयगं वा वि ॥६०६७॥

गामरट्ठमहत्तरे अधिकारणिजुत्तो बहुसम्मतो य पगतो "बहुपक्खिते" त्ति बहुसयणो वाडगसाधिः अधिवो सेज्जातरो य अण्णम्मि वा अणंतरघरातो आरब्भ जाव सत्तमघर, एतेसु मएसु अहोरत्तं सज्झाओ ण कीरति । अह करेंति तो णिद्दुक्ख त्ति काउं जणो गरहति, अक्कोसेज्ज वा णिच्छुमेज्ज वा । अप्पसद्देण वा सणियं सणियं करेंति अणुपेहंति वा । जो पुण अणाहो मतो तं जति उब्भिण्णं हत्थसयं वज्जेयव्वं, अणुब्भिण्णं असज्झायं ण भवति, तह वि कुच्छियं ति काउं आयरणओ य दिट्ठं हत्थसयं वज्जिज्जति ॥६०६७॥

जइ तस्स णत्थि कोइ परिट्ठवेंतो ताहे –

सागारियादिकहणं, अणिच्छे रत्तिं वसभा विगिंचंति ।
विक्खिण्णे व समंता, जं दिट्ठं सढेतरे सुद्धा ॥६०६८॥

सागारियस्स आदिसद्दातो पुराणस्स सड्ढस्स अहाभद्दस्स वा कहिज्जति–"इमं छड्डेह, अम्हं सज्झाओ ण सुज्झइ ।" जति तेहिं छड्डियं तो सुद्धं । अह ते णेच्छंति ताहे अण्णं वसहिं [5]गम्मति । अह अण्णा वसही ण लब्भति ताहे वसभा अप्पसागारियं परिट्ठवेंति । एस अभिण्णे विधी ।

अह भिण्णं काकसाणादिएहिं समंता विक्खिण्णं तम्मि दिट्ठिविवित्तम्मि सुद्धासुद्धं असढभावं गवेसंतेहिं जं दिट्ठं तं सव्वं विवित्तं छड्डियं । "इयरं" ति अदिट्ठं तम्मि तत्थत्थे विसुद्धा सज्झायं करेंताण वि ण पच्छित्तं । एत्थ एयं पसंगतोऽभिहितं ॥६०६८॥

इयाणि [6]सारीरं –

सारीरं पि य दुविहं, माणुस-तेरिच्छगं समासेणं ।
तेरिच्छं पि य तिविहं, जल-थल-खयरं चउद्धा तु ॥६०६९॥

---

१ भंसलासु (आ० वृ०) भंसुभलामसु इत्यपि पाठः । २ गा० ६०९४ । ३ गा० ६०९४ । ४ गा० ६०९४ । ५ मग्गति इत्यपि पाठः । ६ गा० ६०७५ ।

एत्थ माणुसं ताव चिट्ठउ, तेरिच्छं ताव भणामि — तं तिविधं मच्छादियाण जलजं, गवादियाण थलजं, मयूरादियाण खहचरं । एतेसिं एक्केक्कं दव्वादि चउव्विहं ॥६०९९॥

एक्केक्कस्स वा दव्वादिओ इमो चउहा परिहारो —

पंचेंदियाण दव्वे, खेत्ते सट्ठिहत्थ पोग्गलाइण्णं ।
तिकुरत्थ महंतेगा, णगरे वाहिं तु गामस्स ॥६१००॥

दव्वतो पंचेंदियाण रुहिरादि दव्वं असज्झाइयं । खेत्तओ सट्ठिहत्थऽब्भंतरे असज्झाइयं, परतो ण भवति । अहवा — खेत्ततो पोग्गलाइण्णं पोग्गलं मंसं तेण सव्वं आकिण्णं व्याप्तं तस्सिमो परिहारो, तिहिं कुरत्थाहिं अंतरियं सुज्झति, आरतो ण सुज्झति । महंतरत्थाए एक्काए वि अंतरियं सुज्झति, अणंतरियं दूरट्ठितं ण सुज्झति । महंतरत्था रायमग्गो जेण राया बलसमग्गो गच्छति देवजाणरहो वा विविधा संवहणा गच्छंति, सेसा कुरत्था । एसा णगरविधी ।

गामस्स णियमा वाहिं, एत्थ गामो अविसुद्धणेगमणयदरिसणेण सीमापज्जंतो, परग्गामसीमाए सुज्झतीत्यर्थः ॥६१००॥

काले तिपोरिसऽट्ठव, भावे सुत्तं तु नंदिमादीयं ।
सोणिय मंसं चम्मं, अट्ठीणि य होंति चत्तारि ॥६१०१॥

तिरियं च असज्झाइयं संभवकालातो जाव ततिय पोरिसी ताव असज्झाइयं, परतो सुज्झइ । अहवा अट्ठजामा असज्झाइयं, ते जत्थ घायणं तत्थ भवंति ।

भावतो पुण परिहरंति सुत्तं, तं च णंदिमणुओगदारं तंदुलवेयालियं चंदगवेज्झगं पोरिसी-मंडलमादी । अहवा — "[2]चउद्धा उ" त्ति — असज्झाइतं चउव्विहं, मंसं सोणियं चम्मं अट्ठिं च ॥६१०१॥

मंस-सोणिउक्खित्तमंसे इमा विधी —

अंतो बहिं च धोतं, सट्ठी हत्थाण पोरिसी तिण्णि ।
महकाये अहोरत्तं, रद्धे वूढे य सुद्धं तु ॥६१०२॥

साधुवसही सट्ठीहत्थाणं अंतो वहिं च धोवति । भंगदर्शनमेतत् — अंतो धोतं अंतो पक्कं, अंतो धोतं वाहिं पक्कं, वाहिं धोतं वा अंतो पक्कं । अंतग्गहणाओ पढमबितिया भंगा, बहिग्गहणातो ततियभंगो, एतेसु तिसु वि असज्झायं । जम्मि पदेसे धोतं आणेउं वा रद्धं सो पदेसो सट्ठीए हत्थेहिं परिहरियव्वो । कालतो तिण्णि पोरिसीओ ॥६१०२॥

बहिधोतरद्ध सुद्धो, अंतो धोयम्मि अवयवा होंति ।
महाकाए बिरालादी, अविभिण्णं के इ णेच्छंति ॥६१०३॥

एस चउत्थो भंगो । एरिसं जति सट्ठीए हत्थाणं अब्भंतरे आणियं तहावि तं असज्झायं ण भवति, पढम-बितियभंगेसु अंतो धोवित्तु णीए रद्धे वा तम्मि धोतट्ठाणे अवयवा पडंति तेण असज्झायं । ततियभंगे बहिं धोवित्तु अंतो व णीए मंसमेव असज्झाइयं ति । तं च उक्खित्तमंसं आइण्णपोग्गलं न भवइ । जं काकसाणादीहिं अणिवारियविप्पकिण्णं णिज्जति तं आतिण्णपोग्गलं भाणियव्वं । महाकातो पंचिदिओ जत्थ हतो तं आघायणं

[2] गा० ६०९९ ।

वज्जेयव्वं । खेत्तओ सट्ठि हत्था, कालतो अहोरत्तं, एत्थ अहोरत्तच्छेदो। सूरुदए रद्धं पक्कं मंसं असज्झाइयं ण भवति, जत्थ असज्झाइयं पडितं तेण पदेसेण उदगवाहो [1]वूढो, तम्मि पोरिसिकाले अपुण्णे विसुद्धं आघायणं ण सुज्झति। "[2]महाकाए" त्ति अस्य व्याख्या – महकाए पच्छद्धं, मूसगादी महाकायो स विरालादिणा हतो, जति तं अभिण्णं चेव गिलिउं घेत्तुं वा सट्ठीए हत्थाणं वाहिं गच्छति तो के इ आयरियाऽसज्झायं णेच्छंति, थितपक्खो पुण असज्झाइयं चेव ॥६१०३॥

ठियपक्खो पलाए सुज्झति, अस्य व्याख्या –

मूसादि महाकायं, मज्जारादी हताऽऽवयण केती ।
अविभिण्णे गेण्हेतुं, पढंति एगे जति पलाति ॥६१०४॥ गतार्था

तिरियं च असज्झायाधिकार एवं इमं भण्णति–

अंतो वहिं च भिण्णं, अंडय विंदू तहा विआता य ।
रायपह वूढ सुद्धे, परवयणं साणमादीणि ॥६१०५॥

अंतो वहिं च भिण्णं अंडयं ति अस्य व्याख्या –

अंडयमुज्झिय कप्पे, ण य भूमि खणंति इहरहा तिण्णि ।
असज्झाइयप्पमाणं, मच्छियपादो [3]जहिं वुड्डे ॥६१०६॥

साधुवसधीतो सट्ठीहत्थाणं अंतो भिण्णे अंडए असज्झायं, वाहिभिण्णे ण भवति। अहवा – साहुवसहीए अंतो वाहिं वा अंडयं भिन्नं ति वा उज्झियं ति वा एगट्ठं, तं च कप्पे वा उज्झितं भूमीए वा, जति कप्पे तो तं कप्पं सट्ठीए हत्थाणं वाहिं णेउं धोवति ततो सुद्धं। अह भूमीए भिण्णं तो भूमीए खणित्तु ण छड्डिज्जति, ण सुज्झतीत्यर्थः। इहरह त्ति तत्थत्थे सट्ठिं हत्था तिण्णि य पोरिसीओ परिहरिज्जंति ।

इदाणिं "[4]विंदु" त्ति असज्झाइयस्स किं विदुप्पमाणमेत्तेण हीणेण अधिकतरेण वा असज्झाओ भवति ? त्ति पुच्छा ।

उच्यते – मच्छिताए पादो जहिं वुड्डति तं असज्झाइयप्पमाणं ॥६१०६॥

इदाणिं "[5]वियाय" त्ति –

अजरायु तिण्णि पोरिसि, जराउगाणं जरे चुते तिण्णि ।
रायपह विंदु गलिते, कप्पति अण्णत्थ पुण वूढे ॥६१०७॥

जरा जेसिं ण भवति ताणं पसूताणं वग्गुलिमादियाणं तासिं पसूइकालाओ आरब्भ तिण्णि पोरिसीओ असज्झातो मोत्तुं अहोरत्तछेदं आसण्णपसूयाएवि अहोरत्तच्छेदेण सुज्झति। गोमादिजरायुजाणं पुण जाव जरं लंबति ताव असज्झाइयं, जरे चुते तिण्णि। जाहे जरु पडितं ततो पडणकालातो आरब्भ तिण्णि पहरा परिहरिज्जंति। "[6]रायपह वूढसुद्ध" त्ति अस्य व्याख्या – "रायपह विंदु" पच्छद्धं, साधूवसहीए आसण्णेण गच्छमाणस्स तिरियंचस्स जइ रुहिरविंदू गलिता ते जइ रायपहंतरिता तो सुद्धो, अह रायपहे चेव विंदू गलिता तहावि कप्पति सज्झाओ काउं। अह अण्णम्मि पहे अण्णत्थ वा पडितं तं जइ उदगवुड्डिवाहेण वाहरियं तो सुद्धं, पुण त्ति विशेषार्थप्रदर्शने, पलीवणगेण वा दड्ढं सुज्झति ॥६१०७॥

---

१ गा० ६१०२। २ गा० ६१०२। ३ जहिं न वुड्डे (आ० नि०)। ४ गा० ६१०५। ५ गा० ६१०५। ६ गा० ६१०५।

"[1]परवयणं" साणमादीणि त्ति परो त्ति चोदगो, तस्स इमं वयणं, "जइ साणो पोग्गलं समुद्दिसित्ता जाव [2]वसहिसमीवे चिट्ठइ ताव असज्झाइयं । आदिसद्दातो मज्जाराती" ।.

आचार्याह –

जति फुसति तहिं तुंडं, जति वा लेच्छारिएण संचिक्खे ।
इहरा ण होति चोदग !, वंतं वा परिणतं जम्हा ॥६१०८॥

साणो भोत्तुं मंसं लेच्छारिएण तुंडेण वसहिआसण्णेण गच्छंतो, तस्स गच्छंतस्स जइ तुंडं रुहिरमादी-लित्तं खोडादिसु फुसति, तो असज्झायं । अहवा – लेच्छारियतुंडो वसहि-आसण्णे चिट्ठइ तहवि असज्झाइयं ।

"इहरह" त्ति – आहारिएण हे चोदग ! असज्झातियं ण भवति, जम्हा तं आहारियं वंतं अवंतं वा आहारपरिणामेन परिणयं, आहारपरिणयं च असज्झाइयं ण भवति, अण्णं परिणामतो मुत्त-पुरिसादि वा ॥६१०८॥ तेरिच्छं गतं ।

इदाणिं [3]माणुस्सयं –

माणुस्सयं चतुद्धा, अट्ठिं मोत्तूण सत्तमहोरत्तं ।
परियावण्णविवण्णे, सेसे तिग सत्त अट्ठेव ॥६१०९॥

तं माणुस्सयं असज्झायं चउव्विहं – चम्मं मंसं रुहिरं अट्ठि च । अट्ठि मोत्तुं सेसस्स तिविधस्स इमो परिहारो – खेत्ततो हत्थसतं, कालतो अहोरत्तं, जं पुण सरीरातो चेव वणादिसु आगच्छति परियावण्णं विवण्णं वा तं असज्झाइयं ण भवइ । 'परियावण्णं' जहा रुहिरं चेव पूयपरिणामेन ठियं, विवण्णं खदिर-कल्लसमाणं रसगादिगं च, सेसं असज्झाइयं भवति । अहवा – सेसं अगारी रिउसंभवं तिण्णि दिणा, वीयायाणे वा – जो सावो सो सत्त वा अट्ठ वा दिणे असज्झाइयं भवति ॥६१०९॥

वीयायाणे कहं सत्त अट्ठ वा ?, उच्यते –

रत्तुक्कडाओ इत्थी, अट्ठदिणे तेण सुक्कऽहिते ।
तिण्ह दिणाण परेणं, अणोउतं तं महारत्तं ॥६११०॥

णिसेगकाले रत्तुकडयाए इत्थियं पसवेइ तेण तस्स अट्ठ दिणा परिहरियव्वा, सुक्काधिगत्तणतो पुरिसं पसवति तेण तस्स सत्त दिणा । जं पुण इत्थीए तिण्हं रिउदिणाणं परेण भवति तं सरोगजोणित्थीए महारत्तं भवति । तस्सुस्सग्गं काउं सज्झायं करेंति । एस रुहिरे विही ॥६११०॥

जं वुत्तं [4]अट्ठि मोत्तूणं ति, तस्स इदाणिं विधी इमो भण्णति –

दंते दिट्ठे विगिंचण, सेसट्ठी बारसेव वरिसाणि ।
झामितसुद्धे सीयाण पाणमादी य रुदघरे ॥६१११॥

जति दंतो पडितो सो पयत्ततो गवेसियव्वो, जइ दिट्ठो तो हत्थसतातो परं विगिंचयव्वो । अह ण दिट्ठो तो उग्घाडकाउस्सग्गं काउं सज्झायं करेंति । सेसट्ठितेसु जीवमुक्कदिणारंभातो हत्थसतऽब्भंतरट्ठितेसु बारस वरिसे असज्झातियं ॥६१११॥

---

१ गा० ६१०५ । २ साधु इत्यपि पाठः । ३ गा० ६०९९ । ४ गा० ६१०९ ।

"[1]झामितसुद्धे सीताण" त्ति अस्य व्याख्या –

सीताणे जं दड्ढं, ण तं तु मोत्तुं अणाह णिहताइं ।
आडंबरे य रुद्दे, मादिसु हेट्ठट्ठिया बारा ॥६११२॥

पुव्वद्धं, "सीयाणि" त्ति सुसाणे जाणि चियगारोविय दड्ढाणि ण तं तु अट्ठितं असज्झायं करेंति, जाणि पुण तत्थ अण्णत्थ वा अणाहकलेवराणि परिट्ठवियाणि, सणाहाणि वा इंधणादिअभावे "णिहय" त्ति-णिक्खिया ते असज्झातियं करेंति, "बारा" त्ति – मातंगा तेसिं आडंबरो जक्खो हिरिमिक्को वि भण्णति तस्स हेट्ठा सज्जोमतअट्ठीणि ठविज्जंति, एवं रुद्दघरे, मातिघरे। कालतो बारस वरिसा। खेत्ततो हत्थसतं परिहरणिज्जा ॥६११२॥

आवासितं व वूढं, सेसे दिट्ठम्मि मग्गण विवेगो ।
सारीरगामपाडग, साहीउ ण णीणियं जाव ॥६११३॥

एतीए पुव्वद्धस्स इमा विभासा –

असिवोमाघयणेसुं, बारस अविसोहितम्मि ण करेंति ।
झामियवूढे कीरति, आवासितमग्गिते चेव ॥६११४॥

जं सीयाणट्ठाणं जत्थ वा असिवओममताणि बहूणि छड्डियाणि। आघयणं ति – जत्थ वा महासंगाम-मता बहू, एतेसु ठाणेसु अविसोधीए कालतो बारस वरिसा, खेत्तओ हत्थसतं परिहरंति सज्झायं ण करेंतीत्यर्थः अह एते ठाणा दवग्गिमादिणा दड्ढा। उदगवाहो वा तेण वूढो, गामणयरे वा आवासंतेण अप्पणो घरट्ठाणा सोधिता। "सेसं" त्ति जं गिहीहिं न सोधितं पच्छा तत्थ साधू ठिता अप्पणो वसही समंतेण मग्गिता जं दिट्ठं तं विगिंचित्ता अदिट्ठे वा तिण्णि दिणे उग्घाड-उस्सग्गं करेता असढभावा सज्झायं करेइ ॥६११४॥

"[2]सारीरगाम" पच्छद्धं इमा विभासा –

डहरगामम्मि मते, ण करेंती जा ण णीणियं होइ ।
पुरगामे व महंते, वाडगसाही परिहरंति ॥६११५॥

"सारीरं" ति मयसरीरं तं जाव डहरमाणे ण णिप्फेडियं ताव सज्झायं ण करेंति। अह णगरे महंते वा गामे तत्थ वाडगसाधीतो वा जाव ण णिप्फेडितं ताव सज्झायं परिहरेंति। मा लोगो निद्दुक्खेत्ति उड्डाहं करेज्जा ॥६११५॥

चोदगाह – "साहुवसहिसमीवेण मतसरीरस्स जइ पुप्फवत्थादि किंचि पडति तं असज्झायं ?"
आचार्य आह –

णिज्जंतं मोत्तूणं, परवयणे पुप्फमादिपडिसेहो ।
जम्हा चउप्पगारं, सारीरमओ ण वज्जेंति ॥६११६॥

मतसरीरं उभओ वसधीए हत्थसयब्भंतरत्थं जाव णिज्जइ ताव तं असज्झाइयं, सेसा परवयण-भणिया पुप्फाइं पडिसेहेयव्वा ते असज्झाइयं न भवंति। जम्हा सारीरमसज्झाइयं चउव्विहं – सोणियं मंसं अट्ठियं चम्मं च। अओ तेसु सज्झाओ न वज्जणिज्जो ॥६११६॥

१ गा० ६१११। २ गा० ६११३। ३ गा० ६११३।

एसो उ असज्झाओ, तव्वज्जियझातो तत्थिमा मेरा ।
कालपडिलेहणाए, गंडगमरुएण दिट्ठंतो ॥६११७॥

एसो संजमघातादितो पंचविहो असज्झाओ भणितो, तेहिं चेव पंचहिं वज्जितो सज्झाओ भवति । तत्थ त्ति तम्मि सज्झायकाले इमा वक्खमाणा मेर त्ति समाचारी – पडिक्कमित्तु जाव वेला ण भवति ताव कालपडिलेहणाए कयाए गहणकाले पत्ते गंडगदिट्ठंतो भविस्सति । गहिते सुद्धे काले पट्ठवणवेलाए मरुगदिट्ठंतो भविस्सति ॥६११७॥

स्याद्बुद्धिः किमर्थं कालग्रहणं ?, अत्रोच्यते –

पंचविहमसज्झायस्स जाणणट्ठाए पेहए कालं ।
चरिमा चउभागवसे, सियाइ भूमिं ततो पेहे ॥६११८॥

पंचविहं संजमघायाइगं [1]जइ कालं अघेत्तु सज्झायं करेति तो चउलहुगा, तम्हा कालपडिलेहणाए इमा सामाचारी-दिवसचरिमपोरिसीए चउभागावसेसाते कालग्गहणभूमीओ ततो पडिलेहेयव्वा । अहवा – ततो उच्चारपासवणकालभूमी य ॥६११८॥

अहियासिया तु अंतो, आसण्णे मज्झ दूर तिण्णि भवे ।
तिण्णेव अणहियासिय, अंतो [2]छच्छच्च बाहिरतो ॥६११९॥

अंतो णिवेसणस्स तिण्णि उच्चारअधियासियथंडिले आसण्ण-मज्झ-दूरे पडिलेहेति, अणधियासिय-थंडिल्ले वि अंतो एवं चेव तिण्णि पडिलेहेति, एवं अंतो थंडिल्ला । बाहिं पि णिवेसणस्स एवं चेव छ भवंति एत्थ अधियासियदूरत्तरे अणधियासिया आसण्णतरे कायव्वा ॥६११९॥

एमेव य पासवणे, बारस चउवीसतिं तु पेहित्ता ।
कालस्स य तिण्णि भवे, अह सूरो अत्थमुवयाति ॥६१२०॥

पासवणे वि एतेणेव कमेणं बारस, एते सव्वे चउव्वीसं । अतुरियमसंभंतं उवउत्तो पडिलेहित्ता पच्छा तिण्णि कालग्गहणथंडिले पडिलेहेति । जहण्णेणं हत्थंतरिते । "अह" त्ति अणंतरं थंडिलपडिलेहजोगाणंतर-मेव सूरो अत्थमेति, ततो आवस्सगं करेंति ॥६१२०॥

तस्सिमो विधी –

अह पुण णिव्वाघायं, आवासंतो करेंति सव्वे वि ।
सड्ढादिकहणवाघाततो य पच्छा गुरू ठंति ॥६१२१॥

अहमित्यनंतरे सूरत्थमणाणंतरमेव आवस्सगं करेंति, पुनर्विशेषणे दुविधमावस्सगकरणं विसेसेति-णिव्वाघातिमं वाघातिमं च । जइ णिव्वाघातं तो सव्वे गुरुसहिता आवस्सयं करेंति । अह गुरू सड्ढेसु धम्मं कहेंति तो आवस्सगस्स साहूहिं सह करणिज्जस्स वाघातो भवति, जम्मि वा काले तं करणिज्जं आसितस्स वाघातो भवति, ततो गुरू णिसज्जधरो य पच्छा चरित्ताइयारजाणट्ठा उस्सग्गं ठायंति ॥६१२१॥

सेसा उ जहासत्ती, आपुच्छित्ताण ठंति सट्ठाणे ।
सुत्तत्थसरणहेतुं, आयरिए ठितम्मि देवसियं ॥६१२२॥

---

१ असज्झाइयजाणणट्ठाए कालं पेहए, – इइ संवज्झइ । २ छच्चद्ध इत्यपि पाठः ।

सेसा साधू गुरुं आपुच्छित्ता गुरुट्ठाणस्स मग्गतो णासण्णदूरे अहारातिणिए जं जस्स ठाणं तत्थ पडिक्कमंताण इमा ठवणा।

गुरू पच्छा ठायंतो मज्झेण गंतुं सट्ठाणे ठायति।

जे वामतो ते अणंतर सव्वेण गंतुं सट्ठाणे ठायंति।

जे दाहिणतो अणंतरं सव्वेण तं च अणागयं ठायंति।

सुत्तत्थसग्गहेउं तत्थ य पुव्वामेव ठायंता करेमि भंते सामातियमिति सुत्तं करेंति।

जाहे गुरु पच्छा सामाइयं करेंता वोसिरामि त्ति भणेत्ता ठिता उस्सग्गं ताहे पुव्वट्ठिया देवसिया-इयारे चिंतेंति।

अण्णे भणंति – जाहे गुरू सामाइयं करेंति, ताहे पुव्वट्ठिता वि तं सामाइतं करेंति। सेसं कण्ठ्यं ॥६१२२॥

जो होज्ज उ असमत्थो, बालो वुड्ढो गिलाण परितंतो।
सो विकहाए विरहिओ, ठाएज्जा जा गुरू ठंति ॥६१२३॥

परिसंतो पाहुणगादि सो वि सज्झायज्झाणपरो अच्छइ, जाहे गुरू ठंति ताहे ते वि बालादिया ठंति ॥६१२३॥

एतेण विहिणा –

आवासग कातूणं, जिणोवदिट्ठं गुरूवएसेणं।
तिण्णि थुई पडिलेहा, कालस्स इमो विही तत्थ ॥६१२४॥

जिणेहिं गणधराणं उवदिट्ठं, ततो परंपरएण जाव अम्हं गुरुवएसेण आगतं, तं काउं आवस्सगं अंते तिण्णि थुतीतो करेंति। अहवा – एगा एगसिलोइया, वितिया विसिलोइया, ततिया तिसिलोइया, तेसिं समत्तीए कालपडिलेहणविधी इमा कायव्वा ॥६१२४॥

अच्छउ ताव विधी, इमो कालभेदो ताव वुच्चति –

दुविहो य होति कालो, वाघातिम एतरो य णायव्वो।
वाघाओ घंघसालाए घट्टणं सड्ढकहणं वा ॥६१२५॥

पुव्वद्धं कंठं। जो अतिरित्तवसही वहुकप्पपडिसेविता य सा घंघसाला, एत्तो णितअतिंताणं घट्टणे पडणादिवाघातदोसा सड्ढकहणेण वेलातिक्कमदोसा ॥६१२५॥

एवमादि –

वाघाते ततिओ सिं, दिज्जति तस्सेव ते णिवेदेंति।
णिव्वाघाते दोण्णि उ, पुच्छंति उ काल घेच्छामो ॥६१२६॥

तम्मि वाघातिते दोण्णि जे कालपडिलेहगा णिग्गच्छंति तेसिं ततिओ उवज्झायादि दिज्जति। ते कालगाहिणो आपुच्छण संदिसावण कालपवेयणं च सव्वं तस्सेव करेंति, एत्थ गंडगदिट्ठंतो न भवति। इयरे उवउत्ता चिट्ठंति। सुद्धे काले तत्थेव उवज्झायस्स पवेयंति, ताहे डंडधरे वाहिं कालपडियरगो चिट्ठइ, इयरे – दुयगावि अंतो पविसंति, ताहे उवज्झायस्स समीवे सव्वे जुगवं पट्ठवेंति, पच्छा एगो डंडधरो अतीति, तेण पट्ठविते सज्झायं करेंति ॥६१२६॥

निव्वाघातो पच्छद्धं अस्यार्थः –

आपुच्छण कितिकम्मे, आवासित खलिय पडिय वाघाते ।
इंदिय दिसाए तारा, वासमसज्झाइयं चेव ॥६१२७॥

णिव्वाघाए दोण्णि जणा गुरुं पुच्छंति – कालं घेच्छामो, गुरुणा अब्भणुण्णा, कितिकम्मं ति वंदणं दाउं डंडगं घेत्तुं उवउत्ता आवस्सियमासज्जं करेत्ता पमज्जंता य णिग्गच्छंति । अंतरे य जइ पक्खलंति पडंति वा वत्थादि वा विलग्गति कितिकम्मादि किंचि वितहं करेति, गुरू वा किंचि पडिच्छंतो वितहं करेति तो कालवाघातो । इमा कालभूमीए पडियरणविधी – इंदिएहिं उवउत्ता पडियरंता । "दिसं" ति जत्थ चउरोवि दिसाओ दिस्संति, उडुम्मि तिण्णि तारा जति दीसंति । जइ पुण अणुवउत्ता अणिट्ठो वा इंदियविसयो । दिस त्ति दिसामोहो दिसाओ तारगाओ वा ण दीसंति, वासं वा पडति असज्झाइयं च जातं, तो कालवधो ॥६१२७॥

किंच –

जति पुण गच्छंताणं, छीतं जोतिं च तो णियत्तेति ।
णिव्वाघाते दोण्णि उ, अच्छंति दिसा णिरिक्खंता ॥६१२८॥

तेसिं चेव गुरुसमिवातो कालभूमी गच्छंताणं जं अंतरे जति छीयं जोती वा फुसइ तो णियत्तंति, एवमादि कारणेहिं अव्वाहता ते णिव्वाघातेण दो वि कालभूमीए गता संडासगादि विधीए पमज्जिता णिसण्णा उवट्ठिया वा एक्केक्को दो दिसाओ णिरिक्खंता अच्छंति ॥६१२८॥

किं च तत्थ कालभूमीए ठिता –

सज्झायमचिंतेता, कणगं दट्ठूण तो नियट्टंति ।
पत्तेय डंडधारी, मा बोलं गंडए उवमा ॥६१२९॥

तत्थ सज्झायं अकरेंता अच्छंति, कालवेलं च पडियरंता । जइ गिम्हे तिण्णि, सिसिरे पंच, वासासु सत्त कणगा पिक्खेज्जा तहा वि नियत्तंति । अह निव्वाघाएण पत्ता कालग्गहणवेलाए ताहे जो डंडधारी सो अंतो पविसित्ता साहुसमीवे भणाति—बहुपडिपुण्णा कालवेला, मा बोलं करेह । तत्थ [1]गंडगोवमा पुव्वभणिया कज्जति ॥६१२९॥

[2]गंडघोसिते बहुएहि सुतम्मी सेसगाण दंडो उ ।
अह तं बहूहिं न सुयं, तो डंडो गंडए होति ॥६१३०॥

जहा लोगे गोमादिगंडगेणाघोसिए बहूहिं सुए थेवेसु असुए गोमादि किच्चं अकरेंतो सुदंडो भवति, बहूहिं असुए गंडगस्स डंडो भवति । तहा इहं पि उपसंहारेयव्वं ॥६१३०॥

ततो डंडधरे णिग्गते कालग्गाही उट्ठेइ, सो कालग्गाही इमेरिसो –

पियधम्मो दढधम्मो, संविग्गो चेव वज्जभीरू य ।
खेयण्णो य अभीरू, कालं पडिलेहए साहू ॥६१३१॥

पियधम्मो दढधम्मो य । एत्थ चउभंगो,तत्थ इमो पढमो भंगो – णिच्चं संसारभउव्विगचित्तो संविग्गो,

१ गा० ६११७ । २ आघोसिते (आव० वृ०) ।

वज्जं-पावं तस्स भीरू वज्जभीरू, जहा तं ण भवति तहा जयति, एत्थ कालविहिजाणगो खेयण्णो, सत्तमंतो अभीरू एरिसो साधू कालं पडिलेहेइ, पडिजग्गति – गृण्हातीत्यर्थः ॥६१३१॥

ते य तं वेलं पडियरेंता इमेरिसं कालं त्ति –

कालो संझा य तहा, दो वि समप्पेंति जह समं चेव ।
तह तं तुलेति कालं, चरिमदिसिं वा असज्झायं ॥६१३२॥

संझाए धरेंतीए कालग्गहणमाढत्तं, तं कालग्गहणं संझाए जं सेसं एते दो वि जहा समं समप्पेंति तहा तं कालवेलं तुलेंति, अहवा – तिसु उत्तरादियासु संझं गेण्हंति । "चरिम" त्ति अवरा तीए ववगय-संझाते वि गिण्हंति न दोसो ॥६१३२॥

सो कालग्गाही वेलं तुलेत्ता कालभूमीओ संदिसावणनिमित्तं गुरुपादमूलं गच्छति ।

तत्थ इमा विधी –

आउत्तपुव्वभणिते, अणपुच्छा खलिय पडिय वाघाते ।
भासंतमूढसंकिय, इंदियविसए य अमणुण्णे ॥६१३३॥

जहा णिगच्छमाणो आउत्तो णिग्गतो तहा पविसंतो वि आउत्तो पविसति, पुव्वनिग्गतो चेव जइ अणापुच्छाए कालं गेण्हति पविसंतो वि जति खलति पडति वा . एत्थ वि कालुवघातो । अहवा "वाघाए" त्ति किरियासु वा मूढो अभिघातो लेट्ठुइट्टालादिणा । भासंतमूढपच्छद्धं – सांन्यासिकं उवरि वक्ष्यमाणं, अहवा – एत्थ वि इमो अत्थो भाणियव्वो – वंदणं देंतो अण्णं भासंतो देति वंदणं दुओ ण ददाति, किरियासु वा मूढो, आवत्तादिसु वा संका – "कया ण कय" त्ति, वंदणं देंतस्स इंदियविसओ वा अमणुण्णमागओ ॥६१३३॥

णिसीहिया णमोक्कारे, काउस्सग्गे य पंचमंगलए ।
कितिकम्मं च करेत्ता, बितिओ कालं च पडियरती ॥६१३४॥

पविसंतो तिण्णि णिसीहियाओ करेति, णमो खमासमणाणं ति णमोक्कारं करेति, इरियावहियाए पंच उस्सासकालियं उस्सग्गं करेति, उस्सारिए णमो अरहंताणं ति पंचमंगलं चेव कड्ढति, ताहे कितिकम्मं बारसावत्तं वंदणं देति, भणति य – संदिसह पादोसियं कालं गेण्हामो, गुरुवयणं गेण्हह त्ति । एवं जाव कालग्गाही संदिसावेत्ता आगच्छति । ताव बितिउ त्ति डंडधरो सो कालं पडियरेति ॥६१३४॥

पुणो पुव्वुत्तेण विधिणा णिग्गतो कालग्गाही –

थोवावसेसियाए, संझाए ठाति उत्तराहुत्तो ।
चउवीसग दुमपुप्फिय, पुव्वि य एक्केक्क य दिसाए ॥६१३५॥

उत्तराहुत्तो उत्तराभिमुखो डंडधारीवि वामपासे रिजु तिरियं डंडधारी पुव्वाभिमुहो ठायति कालग्गहणणिमित्तं च अट्ठुस्सास काउस्सग्गं करेति, अण्णे पंचूसासियं करेति, उस्सारिए चउवीसत्थ दुमपुप्फियं सामण्णपुव्वयं च, एए तिण्णि अक्खलिए अणुपेहेत्ता पच्छा पुव्वा एए चेव तिण्णि अणुपेहेइ, एवं दक्खिणाए ॥६१३५॥

अवराए य गेण्हंतस्स इमे उवघाया जाणियव्वा –

बिंदू य छीय परिणय, सगणे वा संकिए भवे तिण्हं ।
भासंत मूढ संकिय, इंदियविसए य अमणुण्णे ॥६१३६॥

गेण्हंतस्स जइ अंगे उदग बिंदू पडेज्ज, अप्पणा परेण वा जति छीतं, अज्झयणं कड्ढंतस्स जति अण्णो भावो परिणतो अनुपयुक्तेत्यर्थः। सगणे सगच्छे तिण्हं साधूणं गज्जिए संका एवं विज्जुतादिसु ॥६१३६॥

[1]भासंत पच्छद्धस्स पूर्वन्यस्तस्य इमस्य च विभासा –

मूढो य दिसज्झयणे, भासंतो वा वि गेण्हति न सुज्झे।
अण्णं च दिसज्झयणं, संकंतोऽणिट्ठविसए य ॥६१३७॥

दिसामोहो संजातो। अहवा – मूढो दिसं पडुच्च अज्झयणं वा। कहं?, उच्यते – पढमे उत्तराहुत्तेण ठायव्वं सो पुण पुव्वहुत्तो पढमं ठायति। अज्झयणेसु वि पढमं चउवीसत्थओ सो पुण मूढत्तणओ दुमपुप्फियं सामन्नपुव्वियं वा कड्ढति, फुडमेवं जणाभिलावेण भासंतो कड्ढइ, बुड्बुडेतो वा गेण्हइ, एवं ण सुज्झइ। "संकंतो" त्ति पुव्वं उत्तराहुत्तेण ठाउं ततो पुव्वाहुत्तेण ठायव्वं, सो पुण उत्तराओ अवराहुत्तो ठायति, अज्झयणेसु वि चउवीसत्थयाओ अण्णं चेव खुड्डियायारकहादि अज्झयणं संकमति, अहवा – संकति किं अमुगीए दिसाए ठितो "ण व" त्ति?, अज्झयणे वि किं कड्ढियं ण व त्ति? "[2]इंदियविसए य अमणुण्णे" त्ति अणिट्ठो पत्तो, जहा सोइंदिएण रुदितं वंतरेण वा अट्टट्टहासं कतं, रूवे विभीसगादिविकृते रूवं दिट्ठं, गंधे कलेवरादिगंधो, रसस्तत्रैव, स्पर्शे अग्गिज्वालादि, अहवा – इट्ठेसु रागं गच्छइ, अणिट्ठेसु इंदियविसएसु दोसं, एवमादि उवघायवज्जियं कालं घेत्तुं कालणिवेदणाए गुरुसमीवं गच्छंति ॥६१३७॥

तस्स इमं भणति –

जो वच्चंतम्मि विधी, आगच्छंतम्मि होति सो चेव।
जं एत्थं णाणत्तं, तमहं वोच्छं समासेणं ॥६१३८॥

एसा गाहा भद्दबाहुकया।

एईए अतिदेसे कए वि सिद्धसेणखमासमणो पुव्वद्धस्स भणियं अतिदेसं वक्खाणेति –

आवस्सिया णिसीहिय, अकरण आवडण पडणजोतिक्खे।
अपमज्जिते य भीते, छीए छिण्णे व कालवहो ॥६१३९॥

जति णिंतो आवस्सियं ण करेति पविसंतो वा णिसीहियं, अहवा – अकरणमिति आसज्जं न करेति कालभूमीतो गुरुसमीवं पट्ठियस्स जति अंतरेण साणमज्जारादी छिंदति, सेसा पदा पुव्वभणिता। एतेसु सव्वेसु कालवधो भवति ॥६१३९॥

गोणादिकालभूमी, व होज्ज संसप्पगा व उट्ठेज्जा।
कविहसिय विज्जु गज्जिय, जक्खालित्ते य कालवहो ॥६१४०॥

पढमयाए गुरुं आपुच्छित्ता कालभूमिं गतो, जति कालभूमीए गोणं णिसण्णं संसप्पगा वा उट्ठिता पेक्खेज्ज तो णियत्तए, जइ कालं पडिलेहेंतस्स गेण्हंतस्स वा णिवेदणाए वा गच्छंतस्स कविहसियादी, एएहिं कालवधो भवति, कविहसितं णाम आगासे विकृतरूपं मुखं वाणरसरिसं हासं करेज्ज, सेसा पदा गयत्था ॥६१४०॥

कालग्गाही णिव्वाघाएण गुरुसमीवमागओ –

इरियावहिया हत्थंतरे वि मंगलनिवेदणं दारे।
सव्वेहि वि पट्ठविए, पच्छा करणं अकरणं वा ॥६१४१॥

---

1 गा० ६१३३। 2 गा० ६१३६।

जइ वि गुरुस्स हत्थंतरमित्ते कालो गहितो तहावि कालपवेदणाए इरियावहिया पडिक्कमियव्वा, पंचुस्सासमेत्तं कालं उस्सग्गं करेइ, उस्सारिए वि पंचमंगलं ठियाण कड्ढइ, ताहे वदणं दाउं कालं निवेदेति। सुद्धो पाउसिगकाले त्ति ताहे डंडधरं मोत्तुं सेसा सव्वे जुगवं पट्ठवेंति ॥६१४१॥

किं कारणं?, उच्यते पुव्वं [1]जम्मरुगदिट्ठंतो त्ति—

सन्निहिताण वडारो, पट्ठवित पमादि णो दए कालं।
वाहिट्ठिते पडिचरए, पविसति ताहे य दंडधरो ॥६१४२॥

वडो वंटगो विभागो एगट्ठं। आरिओ आगारितो सारितो वा एगट्ठं। वडेण आरितो वडारो, जहा सो वडारो सण्णिहियाण मरुताण लब्भति न परोक्खस्स तहा देसकहादिपमादिस्स पच्छा कालं ण देंति॥६१४२॥

"वाहिट्ठिते" पच्छद्धं कंठं। "[2]सव्वेहि वि" पच्छद्धं, अस्य व्याख्या—

पट्ठवित वंदिते ताहे पुच्छति केण किं सुतं भंते!।
ते वि य कहंति सव्वं, जं जेण सुतं च दिट्ठं वा ॥६१४३॥

डंडधरेणं पट्ठविते वंदिए एवं सव्वेहि वि पट्ठविते पुच्छा भवति—"अज्जो केण किं सुयं दिट्ठं वा?" दंडधरो पुच्छति—अण्णो वा। ते वि सव्वं कहेंति, जति सव्वेहिं भणियं—'ण किंचि दिट्ठं सुयं वा" तो सुद्धं, करेंति सज्झायं। अह एगेण वि फुडं ति विज्जमादि दिट्ठं, गज्जितादि वा सुतं, ततो असुद्धे ण करेंति॥६१४३॥

अह संकितो—

एक्कस्स दोण्ह वा संकितम्मि कीरइ ण कीरई तिण्हं।
सगणम्मि संकिते पर-गणम्मि गंतुं न पुच्छंति ॥६१४४॥

जति एगेण संदिद्धं सुतं वा तो कीरति सज्झाओ, दोण्ह वि संदिद्धे कीरइ, तिण्हं विज्जुमादिसंदेहे ण कीरइ सज्झातो, तिण्हं अण्णोण्णसंदेहे कीरइ, सगणसंकिते परगणवयणतो सज्झाओ ण कायव्वो। खेत्तविभागेण तेसिं चेव असज्झाइयसंभवो ॥६१४४॥

"जं [3]एत्थ णाणत्तं तमहं वोच्छं समासेणं" ति अस्यार्थः—

कालचउक्के णाणत्तगं तु पादोसियाए सव्वे वि।
समयं पट्ठवयंती, सेसेसु समं व विसमं वा ॥६१४५॥

एयं सव्वं पादोसिकाले भणियं। इदाणिं चउसु कालेसु किंचि सामण्णं, किं चि विसेसियं भणामि-पादोसिए डंडधरं एक्कं मोत्तुं सेसा सव्वे जुगवं पट्ठवेंति। सेसेसु तिसु अड्ढरत्त वेरत्तिय पाभातिए य समं वा विसमं वा पट्ठवेंति ॥६१४५॥

किं चान्यत्—

इंदियमाउत्ताणं, हणंति कणगा उ तिण्णि उक्कोसं।
वासासु य तिण्णि दिसा, उदुबद्धे तारगा तिण्णि ॥६१४६॥

---

१ गा० ६११७। २ गा० ६१४१। ३ गा० ६१३८।

सुट्ठु इंदियउवत्तेहिं सव्वकाले पडिजागरियव्वा घेतव्वा । कणगेसु कालसंखाकग्रो विसेसग्रो ? भण्णति – तिण्णि [1]सिग्घमुवहणंति त्ति तेण उक्कोसं भण्णति, चिरेण उवघातो त्ति तेण सत्त जहण्णे, सेसं मज्झिमं ॥६१४६॥

ग्रस्य व्याख्या –

कणगा हणंति कालं, ति पंच सत्तेव घिंसिसिरवासे ।
उक्का उ सरेहागा, पगासजुत्ताव नायव्वा ॥६१४७॥

कणगा गिम्हे सिसिरे पंच वासासु सत्त उवहणंति, उक्का एक्का चेव उवहणति कालं कणगो सण्हरेहो पगासविरहितो य, उक्का महंतरेहा पगासकारिणी य, ग्रहवा – रेहविरहितोवि फुलिंगो पहासकारो उक्का चेव ॥६१४७॥

"[2]वासासु य तिण्णि दिसा" ग्रस्य व्याख्या –

वासासु व तिण्णि दिसा, हवंति पाभातियम्मि कालम्मि ।
सेसेसु तिसु वि चउरो, उडुम्मि चतुरो चतुदिसिं पि ॥६१४८॥

जत्थ ठितो वासकाले तिण्णि विदिसा पेक्खइ, तत्थ ठितो पभातियं कालं गेण्हति, सेसेसु तिसु वि कालेसु वासासु चेव । जत्थ ठितो चउरो दिसाविभागे पेच्छति तत्थ ठितो गेण्हइ ॥६१४८॥

"[3]उदुवद्धे तारगा तिण्णि" ति ग्रस्य व्याख्या –

तिसु तिण्णि तारगाग्रो, उडुम्मि पाभाइए ग्रदिट्ठे वि ।
वासासु ग्रतारागा, चउरो छन्ने निविट्ठो वि ॥६१४९॥

तिसु कालेसु पाउसिते ग्रड्ढरत्तिए य जहण्णेण जति तिण्णि तारगा पेक्खंति तो गेण्हंति, उडुबद्धे चेव ग्रब्भादिसंथडे जति वि एक्कं पि तारं ण पेक्खंति तहा वि पभातियं कालं गेण्हंति, वासाकाले पुण चउरो वि काला ग्रब्भसंथडे तारासु ग्रद्दीसंतीसु गिण्हंति ॥६१४८॥

"[4]छण्णे णिविट्ठो वि" त्ति ग्रस्य व्याख्या –

ठागासति बिंदूसु व, गेण्हति विट्ठो वि पच्छिमं कालं ।
पडियरति बहिं एक्को, गेण्हति ग्रंतठिग्रो एक्को ॥६१५०॥

जति वसहिस्स बाहिं कालगाहिस्स ठागो णऽत्थि ताहे ग्रंतो छण्णे उद्धट्ठितो गेण्हति, ग्रह उद्धट्ठियस्स वि ग्रंतो ठाग्रो णत्थि, ताहे ग्रंतो छण्णे चेव णिविट्ठो गेण्हति । बाहिं ठितो य एक्को पडियरति, वासबिंदूसु पडंतीसु णियमा ग्रंतो ठिग्रो गिण्हइ, तत्थ वि उद्धट्ठिग्रो निसण्णो वा, नवरं – पडियरगो त्ति चेव ठिग्रो पडियरइ । एस पाभाइए गच्छुवग्गहट्ठा ग्रववायविही, सेसा काला ठागासति न घेत्तव्वा, ग्राइण्णग्रो वा जाणियव्वं ॥६१५०॥

कस्स कालस्स कं दिसं ग्रभिमुहेहिं पुव्वं ठायव्वमिति भण्णति –

पादोसिय ग्रड्ढरत्ते, उत्तरदिसि पुव्वपेहए कालं ।
वेरत्तियम्मि भयणा, पुव्वदिसा पच्छिमे काले ॥६१५१॥

---

१ गा० गिम्हेउ, इत्यपि पाठः । २ गा० ६१४६ । ३ गा० ६१४६ । ४ गा० ६१४६ ।

पादोसिए अड्ढरत्तिए णियमा उत्तरमुहो ठाति, वेरत्तिए भयणि त्ति इच्छा, उत्तरमुहो पुव्वमुहो वा, पाभातिए पुव्वं – णिग्रमा पुव्वमुहो ॥६१५१॥

इदाणि कालग्गहणं पमाणं भण्णति –

कालचउक्कं उक्कोसएण जहण्णेण तिगं तु ग्रोधव्वं ।
बितियपदम्मि दुगं तु, मातिट्ठाणा विमुक्काणं ॥६१५२॥

उस्सग्गे उक्कोसेण चउरो काला घेप्पंति, उस्सग्गे चेव – जहण्णेण तिगं भण्णति । "बितियपदं" ति – अववादो, तेण कालदुगं भवति, अमायाविनः कारणे अगृण्हानस्येत्यर्थः । अहवा – उक्कोसेण चउक्कं भण्णति । अहवा – जहण्णे हाणिपदे तिगं भवति, एक्कम्मि अगहिते इत्यर्थः । बितिए हाणिपदे दुगं भवति, द्वयोरग्रहणादित्यर्थः । एवं अमायाविणो तिण्णि वा अगेण्हंतस्स एक्को भवति । अहवा – मायाविमुक्तस्य कारणे एकमपि कालं अ गृण्हतः न दोषः, प्रायश्चित्तं वा न भवति ॥६१५२॥

कहं पुण कालचउक्कं ?, उच्यते –

फिडितम्मि अद्धरत्ते, कालं घेत्तुं सुवंति जागरिता ।
ताहे गुरू गुणंती, चउत्थे सव्वे गुरू सुवति ॥६१५३॥

पादोसियं कालं घेत्तुं पोरिसिं काउं पुण्णपोरिसीए सुत्तपाढी सुवंति, अत्थचिंतगा उक्कालियपाढिणो य जागरंति जाव अड्ढरत्तो । ततो फिडिए अड्ढरत्ते कालं घेत्तुं ते जागरिता सुवंति, ताहे गुरू उट्ठित्ता गुणंति जाव चरिमो जामो पत्तो । चरिमे जामे सव्वे उट्ठित्ता वेरत्तियं घेत्तुं सज्झयं करेंति ताहे गुरू सुवंति । पत्ते पाभातिते काले जो पभातियकालं घेच्छिहिति सो कालस्स पडिक्कमिउं पाभाइयकालं गेण्हइ, सेसा कालवेलाए कालस्स पडिक्कमंति, तम्रो आवस्सयं करेंति । एवं चउरो काला भवंति ॥६१५३॥

तिण्णि कहं ?, उच्यते – पाभातिते अगहिते सेसा तिण्णि भवे ।

अहवा –

गहितम्मि अद्धरत्ते, वेरत्तिय अगहिते भवे तिण्णि ।
वेरत्तिय अद्धरत्ते, अतिउवओगा भवे दुन्नि ॥६१५४॥

वेरत्तिए अग्गहिए सेसेसु गहितेसु तिण्णि, अड्ढरत्तिए वा अगहिते तिण्णि, पादोसिए वा अग्गहिते तिण्णि ।

दोण्णि कहं ?, उच्यते ।

पादोसियअड्ढरत्तिएसु गहिएसु सेसेसु अगहिएसु दोण्णि भवे ।

अहवा – पादोसिए वेरत्तिए य गहिते दोण्णि ।

अहवा – पादोसितपभातितेसु गहिएसु सेसेसु अगहिएसु दोण्णि, एस कप्पो विकप्पे । पादोसिएण चेव अणुवहतेण उवओगतो सुपडिजग्गिएण सव्वकाले पढंति ण दोसो ।

अहवा – अड्ढरत्तियवेरत्तियगहिते दोण्णि ।

अववा – अढरत्तियपभातिएसु गहितेसु दोण्णि ।

अहवा – वेरत्तियपभातिएसु दोण्णि । जया एक्को ततो अण्णतरो गेण्हति ।

कालचउक्ककारणा इमे – कालचउक्कग्गहणं उस्सग्गतो विही चेव ।

अहवा – पाओसिए गहिए उवहते अड्डरत्तं घेत्तुं सज्झायं करेंति, तम्मि वि उवहते वेरत्तियं घेत्तुं सज्झायं करेंति, पाभातितो दिवसट्ठा घेत्तव्वो चेव एवं कालचउक्कं दिट्ठं। अणुवहते पुण पाउसिते सुपडिजग्गिते सव्वरातिं पढंति, अड्डरत्तिएण वि वेरत्तियं पढंति, वेरत्तिएण अणुवहते सुपडिजग्गितेण पाभातियमसुद्धे दिट्ठं दिवसतो वि पढंति।

कालचउक्के अग्गहणकारणा इमे—पादोसियं ण गेण्हति, असिवादिकारणतो ण सुज्झति वा, पादोसिएण वा सुप्पडिजग्गितेण पढंति त्ति ण गेण्हइ, वेरत्तिय कारणतो ण सुज्झति वा पादोसिय अड्डरत्तिएण वा पढति त्ति ण गेण्हति, पाभातितं ण गेण्हति, कारणतो ण सुज्झति वा ॥६१५४॥

इदाणिं पाभातितकालग्गहणे विधिपत्तेयं भणामि—

पाभाइतम्मि काले, संचिक्खे तिण्णि छीयरुण्णाइं।
परवयणे खरमादी, पाओसिय एवमादीणि ॥६१५५॥

पाभातियम्मि काले गहणविधी य।

तत्थ गहणविधी इमा—

णवकालवेलसेसे, उवग्गहिय [1]अट्ठया पडिक्कमते।
ण पडिक्कमते वेगो, नववारहते धुवमसज्झाओ ॥६१५६॥

दिवसतो सज्झायविरहियाण देसादिकहासंभवे वज्जणट्ठा, मेहावीतराण य पलिभंगवज्जणट्ठा, एवं सव्वेसिमणुग्गहट्ठा णवकालग्गहणकाला पाभातिए अब्भणुण्णाया, अतो णवकालग्गहवेलाहिं पाभातियकालग्गाही कालस्स पडिक्कमति, सेसा वि तं वेलं उवउत्ता चिट्ठंति कालस्स तं वेलं पडिक्कमंति वा ण वा। एगो णियमा ण पडिक्कमइ, जइ छीयरुयादीहिं न सुज्झिहिति तो सो चेव वेरत्तिओ पडिग्गहिओ होहिति त्ति, सो वि पडिक्कंतेसु गुरुस्स कालं वेदित्ता अणुदिए सूरिए कालस्स पडिक्कमते, जति य घेप्पमाणो णववारा उवहओ कालो तो णज्जति जहा धुवमसज्झाइयमत्थि, न करेंति सज्झायं ॥६१५६॥

नववारग्गहणविधी इमो।

"संचिक्ख तिण्णि छीयरुण्णाणि" त्ति अस्य व्याख्या –

एक्केक्को तिण्णि वारा, छीतादिहतम्मि गेण्हती कालं।
चोदेति खरो बारस, अणिट्ठविसए व कालवहो ॥६१५७॥

एक्कस्स गेण्हतो छीयरुयादिहते संचिक्खति त्ति गहणा विरमतीत्यर्थः, पुणो गेण्हइ, एवं तिण्णि वारा। ततो परं अण्णो अण्णम्मि थंडिले तिण्णि वारा। तस्स वि उवहते अण्णो अण्णम्मि थंडिले तिण्णि वारा। तिण्हं असतीते दोण्णि जणा णववाराओ पूरेंति। दोण्ह वि असतीए एक्को चेव णववाराओ पूरेति। थंडिलेसु वि असवातो तिसु दोसु वा एक्कम्मि वा गेण्हति।

"[2]परवयणे खरमादि" त्ति अस्य व्याख्या – "चोदेति खरो पच्छद्धं।

चोदगाह –

"जइ रुदितमणिट्ठे कालवहो ततो खरेण रडिते बारस वरिसे उवहम्मउ। अण्णेसु वि अणिट्ठइंदियविसएसु एवं चेव कालवहो भवति ॥६१५७॥

---

१ उवगहितट्ठयाए इत्यपि पाठः। २ गा० ६१५५।

आचार्याह–

चोदग माणुसणिट्ठे, कालवहो सेसगाण तु पहारे ।
पाग्रासियाए पुव्वं, पण्णवणमणिच्छे उग्घाडे ।।६१५८।।

माणुससरे अणिट्ठे कालवहो, सेसगतिरिया तेसिं जति अणिट्ठो पहारसद्दो सुणिज्जति तो कालवहो ।

"[1]पावासिय" अस्य व्याख्या – पावासिया पच्छद्धं, जति पभातियकालग्गहणवेलाए पवासिय-भज्जा पतिणो गुणे संभरंती दिणे दिणे रुवेज्जा तो तीए रुवणवेलाए पुव्वतरो कालो घेत्तव्वो । अह सा वि पच्चूसे रुवेज्ज ताहे दिवा गंतुं पण्णविज्जति, पण्णवणमणिच्छाए उग्घाडणकाउस्सग्गो कीरंति ।।६१५८।।

[2]एवमादीणि त्ति अस्य व्याख्या –

वीसरसद्दरुवंते, अव्वत्तग-डिंभगम्मि मा गिण्हे ।
गोसे दरपट्ठविते, [3]तिगुण च्छीयऽण्णहिं पेहे ।।६१५९।।

अच्चायासेण रुवणं तं वीसरस्सरं भण्णति, तं उवहणते । जं पुण महुरसद्दं घोलमाणं च नोवहणइ । जाव अजंपिरं ताव अव्वत्तं, तं अण्णेणवि विस्सरसरेणं उवहणति, महंतउस्संभररोवणेण वि उवहणति । पाभातिगकालगहणविधी गया, इयाणिं पाभातियट्ठवण विधी –

"गोसे दर" पच्छद्धं, गोसि त्ति उदिते आदिच्चे दिसावलोयं करेत्ता पट्ठवेंति । दरपट्ठविति त्ति अद्ध पट्ठविते जति छीयादिणा भग्गं पट्ठवणं अण्णो दिसावलोगं करेत्ता तत्थेव पट्ठवेंति, एवं तितियवाराए वि ।।६१५९।।

दिसावलोयकरणे इमं कारणं –

आइण्णपिसित महिगा, पेहंता तिण्णि तिण्णि ठाणाइं ।
णववार खुते कालो, हतो त्ति पढमाए ण करेंति ।।६१६०।।

आइण्णपिसियं आतिण्णपोग्गलं तं काकमादीहिं आणियं होज्ज, महिया वा पडिउमारद्धा, एवमादि एगट्ठाणे तयो वारा उवहते हत्थसयब्भाहिं अण्णं ठाणं गंतुं पेहति पडिलेहंति पट्ठवेंति त्ति वुत्तं भवति, तत्थ वि पुव्वुत्तविहाणेण तिण्णि वारा पट्ठवेंति । एवं वितियट्ठाणे वि असुद्धे ततो वि हत्थसयं अण्णं ठाणं गंतुं तिण्णि वारा पुव्वुत्तविहाणेण पट्ठवेंति, जइ सुद्धं तो करेंति सज्झायं णववारा । खुत्तादिणा हते णियमा हतो कालो, पढमाए पोरिसीए ण करेंति सज्झायं ।।६१६०।।

पट्ठवितम्मि सिलोगे, छीते पडिलेह तिण्णि अण्णत्थ ।
सोणित मुत्त पुरीसे, घाणालोगं परिहरिज्जा ।।६१६१।।

जया पट्ठवणातो तिण्णि दु अज्झयणा सम्मत्ता तदा उवरिं एगो सिलोगो कड्ढियव्वो, तम्मि समत्ते पट्ठवणे समप्पति ।।६१६१।। "[4]तव्वज्जो झातो" वितियपादो गतत्थो ।

[5]सोणिय त्ति अस्य व्याख्या –

आलोगम्मि चिलिमिली, गंधे अण्णत्थ गंतु पकरेंति ।
वाघातिम कालम्मी, गंडगमरुगा णवरि णत्थि ।।६१६२।।

---

१ गा० ६१५५ । २ गा० ६१५५ । ३ छीए छीए तिगी पेहे (आव०वृ०) । ४ गा० ६१६१ ।
५ गा० ६११७ ।

जत्थ मज्झातियं करेंतेहिं सोणियचिरिक्का दिस्संति तत्थ ण करेंति सज्झायं, कडगं चिलिमिली वा अंतरे दाउं करेंति। जत्थ पुण सज्झायं चेव करेंताण मुत्तपुरीसकलेवरादियाण य गंधो, अण्णम्मि वा असुभगंधे आगच्छंते तत्थ सज्झायं ण करेंति, अण्णत्थ गंतुं करेंति। अण्णं पि बंधणसेहणादि आलोगं परिहरिज्जा। एयं सव्वं णिव्वाघातकाले भणितं। वाघातिमकाले वि एवं चेव। णवरं – गंडगमरुअदिट्ठंता ण भवंति ॥६१६२॥

एतेसामण्णतरे, असज्झाते जो करेइ सज्झायं।
सो आणा अणवत्थं, मिच्छत्त विराधणं पावे ॥६१६३॥

बितियागाढे सागारियादि कालगत अहव वोच्छेदे।
एतेहि कारणेहिं, जयणाए कप्पती काउं ॥६१६४॥

दो वि कंठाओ ॥६१६३, ६४॥

जे भिक्खू अप्पणो असज्झाइए सज्झायं करेइ, करेंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥१६॥

अप्पणो सरीरसमुत्थे असज्झातिते सज्झाओ अप्पणा ण कायव्वो, परस्स पुण कायव्वो, परस्स पुण वायणा दायव्वा। महंतेसु गच्छेसु अव्वाउलत्तणओ समणीण य णिच्चोउयसंभवो मा सज्झाओ ण भविस्सति, तेण वायणसुत्ते विही भण्णति।

आयसमुत्थमसज्झाइयस्स इमे भेदा –

अव्वाउलाण णिच्चोउयाण मा होज्ज णिचऽसज्झाओ।
अदिसा भगंदलादिसु, इति वायणसुत्तसंबंधो ॥६१६५॥

आतसमुत्थमसज्झाइयं तु एगविहं होति दुविहं वा।
एगविहं समणाणं, दुविहं पुण होति समणीणं ॥६१६६॥

एगविहं समणाणं· तं च व्रणे भवति, समणीणं दुविहं व्रणे उदुसंभवे च ॥६१६६॥

इमं व्रणे विहाणं –

धोतम्मि य निप्पगले, बंधा तिण्णेव होंति उक्कोसा।
परिगलमाणे जयणा, दुविहम्मि य होति कायव्वा ॥६१६७॥

पढमं विय व्रणो हत्थसयस्स बाहिरतो धोविउं णिप्पगलो कतो ततो परिगलंते तिण्णि बंधा उक्कोसेण करेंतो वाएति। दुविहं व्रणसंभवं उउयं च, दुविहे वि एवं पट्टगजयणा कायव्वा ॥६१६७॥

समणो उ वणे व भगंदले व बंधेक्कका उ वाएति।
तह वि गलंते छारं, दाउं दो तिण्णि वा बंधे ॥६१६८॥

"व्रणे धोयणिप्पगले हत्थसयबाहिरतो पट्टगं दाउं वाएइ, परिगलमाणेण भिण्णे तम्मि पट्टगे तस्सेव उवरिं छारं दाउं पुणो पट्टगं देति वातेति य, एवं ततियं पि पट्टगं बंधेज्जा वायणं च देज, ततो परं परिगलमाणे हत्थसयबाहिरं गंतुं व्रणं पट्टगे य धोविउं पुणो एतेणेव क्रमेण वाएति। अहवा – अण्णत्थ गंतुं पढंति ॥६१६८॥

एमेव य समणीणं, वणम्मि इतरम्मि सत्तबंधा उ ।
तह वि य अठायमाणे, धोऊणं अहव अण्णत्थ ॥६१६९॥

इयरंति उडुग्रं एवं चेव, णवरं – सत्तबंधा उक्कोसेण कायव्वा, तह वि अट्ठंते हत्थसयबाहिरतो धोविउं पुणो वाएति, अहवा – अण्णत्थ पढंति ॥६१६९।

एतेसामण्णतरे, असज्झाए अप्पणो व सज्झायं ।
जो कुणति अजयणाए, सो पावति आणमादीणि ॥६१७०॥

आणादिया य दोसा भवंति ।

इमे य –

सुयनाणम्मि य भत्ती, लोगविरुद्धं पमत्तछलणा य ।
विज्जासाहण वइगुण्ण धम्मयाए य मा कुणसु ॥६१७१॥

सुयणाणे अणुवचारतो अभत्ती भवति । अहवा – सुयणाणभत्तिरागेण असज्झातिते सज्झायं मा कुणसु, उवदेसो एस-जं लोगधम्मविरुद्धं च तं ण कायव्वं । अविहीए पमत्तो लब्भति तं देवया छलेज्ज । जहा विज्जासाहणवइगुण्णयाए विद्या न सिज्झति तहा इहं पि कम्मखओ न भवइ । वैगुण्यं वैधर्मता – विपरीतभावेत्यर्थः । "धम्मयाए य" सुयधम्मस्स एस धम्मो जं असज्झाइए सज्झायवज्जणं ण करेंतो सुयणाणायारं विराहेइ, तम्हा मा कुणसु ॥६१७१॥

चोदकाह – "जति दंतअट्ठिमंससोणियादी असज्झाया, णणु देहो एयमतो चेव, कहं तेण सज्झायं करेह ?"

आचार्याह –

कामं देहावयवा, दंतादी अवजुता तह विवज्जा ।
अणवजुता उ ण वज्जा, इति लोगे उत्तरे चेवं ॥६१७२॥

कामं चोदगाभिप्पायअणुमयत्थे सच्चं, तम्मयो देहोवि । सरीराओ अवजुत त्ति पृथग्भावा ते वज्जणिज्जा, जे पुण अणवजुया तत्थत्था ते ण वज्जणिज्जा, इति उपप्रदर्शने । एवं लोके दृष्टं, लोकोत्तरेऽप्येवमित्यर्थः ॥६१७२॥

किं चान्यत् –

अब्भंतरमललित्तो, वि कुणति देवाण अच्चणं लोए ।
बाहिरमललित्तो पुण, ण कुणइ अवणेइ य ततो णं ॥६१७३॥

अब्भंतरा मुत्तपुरीपादी, तेहिं चेव बाहिरे उवलित्तो कुणइ तो अवण्णं करेइ ॥६१७३॥

किं चान्यत् –

आउट्टियावराहं, सन्निहिता ण खमए जहा पडिमा ।
इय परलोए दंडो, पमत्तछलणा य इति आणा ॥६१७४॥

जा य पडिमा सण्णिहिय त्ति-देवयाअधिट्ठिता, सा जति कोइ अणाढिएण आउट्टित त्ति जाणंतो वाहिरमललित्तो तं पडिमं छिवति, अच्चणं वा से कुणइ तो ण खमइ, खेत्तादि करेइ, रोगं च जणेइ, मारेइ वा। इय त्ति – एवं जो असज्झाइए सज्झायं करेति तस्स णाणायारविराहणाए कम्मबंधो, एस से परलोइओ दंडो, इह लोए पमत्तं देवता छलेज्ज स्यात् । आणादिविराधणा वा ध्रुवा चेव ॥६१७४॥

कोइ इमेहिं अप्पसत्थकारणेहिं असज्झाइए सज्झायं करेज्ज –

रागा दोसा मोहा, असज्झाए जो करेज्ज सज्झायं ।
आसायणा तु का से, को वा भणितो अणायारो ॥६१७५॥

रागेण दोसेण वा करेज्ज। अहवा – दरिसणमोहमोहितो भणेज्ज – का अमुत्तस्स णाणस्स आसायणा ? को वा तस्स अणायारो ? – नास्तीत्यर्थः ॥६१७५॥

एतेसिं इमा विभासा –

गणिसद्दमाइमहितो, रागे दोसेण ण सहती सद्दं ।
सव्वमसज्झायमयं, एमादी होति मोहाओ ॥६१७६॥

महिओ त्ति हृष्टतुष्टनंदितो, परेण गणिवायगो वाहरिज्जंतो भवति, तदभिलासी असज्झातिए एवं सज्झायं करेइ, एवं रागे । दोसेण – किं वा गणी वाहरिज्जति वायगो ? अहं पि अधिज्जामि जेण एयस्स पडिसवत्तिभूतो भवामि, जम्हा जीवसरीरावयवो – असज्झायमयं न श्रद्दधातीत्यर्थः ॥६१७६॥

इमे दोसा –

उम्मायं च लभेज्जा, रोगायंकं च पाउणे दीहं ।
तित्थकरभासियाओ, खिप्पं धम्माओ भंसेज्जा ॥६१७७॥

खित्तादिगो उम्मातो, चिरकालिगो रोगो, आसुघाती आयंको – एस वा पावेज्ज, धम्माओ भंसो, मिच्छादिट्ठी वा भवति, चरित्ताओ वा परिवडति ॥६१७७॥

इह लोए फलमेयं, परलोए फलं न देंति विज्जाओ ।
आसायणा सुयस्स य, कुव्वति दीहं तु संसारं ॥६१७८॥

सुयणाणायारविवरीयकारी जो सो णाणावरणिज्जं कम्मं वंधति, तदुदयाओ य विज्जाओ कयोवचाराओ वि फलं ण देंति-ण सिद्धयंतीत्यर्थः, विधीए अकरणं परिभवो एवं सुतासादणा, अविधीए वट्टंतो णियमा अट्ठ कम्मपगतीओ वंधइ, हस्सट्ठितियाओ दीहठिईओ करेइ, मंदाणुभावा य तिव्वाणुभावाओ करेइ, अप्पपदेसाओ य बहुपदेसाओ करेति, एवंकारी य णियमा दीहं संसारं णिव्वत्तेति। अहवा – णाणायारविराहणाए दंसणविराहणा, णाणदंसणविराहणाहिं णियमा चरणविराहणा । एवं तिण्हं विराहणाए अमोक्खो, अमोक्खे णियमा संसारो ॥६१७८॥

बितियागाढे सागारियादि कालगत असति वोच्छेदे ।
एएहिं कारणेहिं, कप्पति जयणाए काउं जे ॥६१७९॥ पूर्ववत्

सव्वत्थ अणुप्पेहा, अप्रतिसिद्धादित्यर्थः ।

जे भिक्खू हेट्ठिल्लाइं समोसरणाइं अवाएत्ता उवरिल्लाइं समोसरणाइं वाएइ,
वाएंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥१७॥

आवासगमादीयं, सुयणाणं जाव विंदुसाराओ ।
उक्कमओ वादेंतो, पावति आणाइणो दोसा ॥६१८०॥

जं जस्स आदीए तं तस्स हिट्ठिल्लं, जं जस्स उवरिल्लं तं तस्स उवरिल्लं, जहा दसवेयालिस्सावस्सगं हेट्ठिल्लं, उत्तरज्झयणाण दसवेयालियं हेट्ठिल्लं, एवं णेयं जाव विंदुसारेति ॥६१८०॥

सुत्तत्थ तदुभयाणं, ओसरणं अहव भावमादीणं ।
तं पुण नियमा अंगं, सुयखंधो अहव अज्झयणं ॥६१८१॥

समोसरणं णाम मेलओ, सो य सुत्तत्थाणं, अहवा – जीवादि णवपदत्थभावाणं । अहवा – दव्वखेत्तकालभावा, एए जत्थ समोसढा सव्वे अत्थित्तिवुत्तं भवति, तं समोसरणं भण्णति ।

तं पुण किं होज्ज ? उच्यते–अंगं, सुयक्खंधो, अज्झयणं, उद्देसगो । अंगं जहा आयारो तं अवाएत्ता सुयगडंगं वाएति । सुयक्खंधो–जहा आवस्सयं तं अवाएत्ता दसवेयालियसुयखंधं वाएति । अज्झयणं जहा सामातितं अवाएत्ता चउवीसत्थयं वाएति, अहवा – सत्थपरिण्णं अवाएत्ता लोगविजयं वाएति । उद्देसगेसु जहा सत्थपरिण्णाए पढमं सामन्नउद्देसियं अवाएत्ता पुढविक्काउद्देसियं वितियं वाएति । एवं सुत्तेसु वि दट्ठव्वं । अहवा – दोसु सुअक्खंधेसु जहा बंभचेरे अवाएत्ता आयारग्गे वाएति । सव्वत्थ उक्कमतो । एवं तस्स आणादिया दोसा चउलहुगा य, अत्थे चउगुरू भणति, पमत्तं देवया छलेज्ज ॥६१८१॥

इमो य दोसो –

उवरिसुयमसद्दहणं, हेट्ठिल्लेहि य अभावितमतिस्स ।
ण य तं भुज्जो गेण्हति, हाणी अण्णेसु वि अवण्णो ॥६१८२॥

हेट्ठिल्ला उस्सग्गसुता तेहिं अभाविस्स उवरिल्ला अववादसुया ते ण सद्दहति अतिपरिणामगो भवति, पच्छा वा उस्सग्गं न रोचेइ अतिवकामेय त्ति काउं तं ण गेण्हति । अण्णं उवरिं गेण्हति एवं आदिसुत्तस्स हाणी नासमित्यर्थः । आदिसुत्तवज्जितो उवरिसु अट्ठाणेण य पयत्तेण वहुस्सुतो भण्णति, पुच्छिज्जमाणो य पुच्छं ण णिव्वहति, जारिसो एस अणायगो तारिसा अण्णे वि एवं अण्णेसिं पि अवण्णो भवति, जम्हा एवमादी दोसा तम्हा परिवाडीए दायव्वं ॥६१८२॥

इमो अववातो –

णाऊण य वोच्छेदं, पुव्वगते कालियाणुजोगे य ।
सुत्तत्थ तदुभए वा, उक्कमओ वा वि वाएज्जा ॥६१८३॥

पियधम्म-दढधम्मस्स, निस्सग्गतो परिणामगस्स, संविग्गसभावस्स, विणीयस्स परममेहाविणो – एरिसस्स कालियसुत्ते पुव्वगए च मा वोच्छिज्जउत्ति उक्कमेण वि देज्ज ॥६१८३॥

जे भिक्खू णवबंभचेराइं अवाएत्ता उवरियसुयं वाएइ
वाएंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥१८॥

णववंभचेरग्गहणेणं सव्वो आयारो गहितो, अहवा – सव्वो चरणाणुओगो तं अवाएत्ता उत्तमसुतं वाएति, तस्स आणादिया दोसा चउलहुं च ॥६१८२॥

किं पुण तं उत्तमसुतं ? उच्यते –

छेयसुयमुत्तमसुयं, अहवा वी दिट्ठिवाओ भण्णइ उ ।
जं तहि सुत्ते सुत्ते, वण्णिज्जइ चउह अणुओगो ॥६१८४॥

पुव्वद्धं कंठं । अहवा – वंभचेरादी आयारं अवाएत्ता धम्माणुओगं इसिभासियादि वाएति, अहवा – सूरपण्णत्तियाइगणियाणुओगं वाएति, अहवा – दिट्ठिवातं दवियाणुओगं वाएति, अहवा – जदा चरणाणुओगो वातितो तदा धम्माणुयोगं अवाएत्ता गणियाणुयोगं वाएति, एवं उक्कमो चारणियाए सव्वो वि भासियव्वो, एवं सुत्ते ।

अत्थे वि चरणाणुओगस्स अत्थं अकहेत्ता धम्मादियाण अत्थं कहेति ꞉ ꞉ । आदेसओ वा चउगुरुं ।

छेदसुयं कम्हा उत्तमसुत्तं ?, भण्णति – जम्हा एत्थ सपायच्छित्तो विधी भण्णति, जम्हा य तेण चरणविसुद्धी करेति, तम्हा तं उत्तमसुतं ।

दिट्ठिवाओ कम्हा ?, उच्यते – जम्हा तत्थ सुत्ते चउरो अणुओगा वण्णिज्जंति, सव्वाहि णयविहीहिं दव्वा दंसिज्जंति, विविधा य इड्डीओ अतिसता य उप्पज्जंति, तम्हा तं उत्तमसुतं । एवं सुत्तस्स उक्कमवायणा वज्जिया ॥६१८३॥

अत्थस्स कहं भाणियव्वं ?, उच्यते –

अपुहुत्ते अणुओगो, चत्तारि दुवार भासई एगो ।
पुहुत्ताणुओगकरणे, ते अत्थ तओ उ वुच्छिन्ना ॥६१८५॥ कंठ्या

अहवा – सुत्तवायणं पडुच्च कमो भण्णति, णो अट्ठं पट्ठवणं ।

कम्हा ?, जम्हा सुत्ते सुत्ते चउरो अणुओगा दंसिज्जंति ।

उक्तं च –

अपुहुत्ते व कहेंते, पुहुत्ते वुक्कमेण वाययंतम्मि ।
पुव्वभणिता उ दोसा, वोच्छेदादी मुणेयव्वा ॥६१८६॥ कंठ्या

णवरं – वोच्छिज्जंति एगसुत्ते चउण्हमणुओगाणं जा कहणविधी सा पुहत्तकरणेण वोच्छिण्णा, ण संपयं पवत्तइ णज्जइ वा, अहवा – तेसिं अत्थाण कहणसरूवेण एगसुत्ते ववत्थाणं वोच्छिण्णं पृथक् स्थापितमित्यर्थः ॥६१८५॥

केण पुहत्तीकयं ?, उच्यते –

वलवुड्ढिमेहाधारणाहाणीं णाउं विज्झं दुब्बलियपूसमित्तं च पडुच्च –

देविंदवंदिएहिं, महाणुभागेहि रक्खिअज्जेहिं ।
जुगमासज्ज विभत्तो, अणुओगो तो कओ चउहा ॥६१८७॥ कंठ्या

के पुण ते चउरो अणुओगा ?, उच्यते –

कालियसुयं च इसिभासियाणि तइयाए सूरपण्णत्ती ।
जुगमासज्ज विभत्तो, अणुओगो तो कओ चउहा ॥६१८८॥ कंठ्या

अहवा – किं कारणं णयवज्जितो चरणाणुओगो पढमं दारठवियं ?, उच्यते –

णयवज्जिओ वि हु अलं, दुक्खक्खयकारओ सुविहियाणं ।
चरणकरणाणुओगो, तेण कयमिणं पढमदारं ॥६१८९॥ कंठ्या

शिष्याह – "कालियसुयं आयारादि एक्कारस अंगा, तत्थ पकप्पो आयारगतो ।
जे पुण अंगवाहिरा छेयसुयज्झयणा ते कत्थ अणुओगे वत्तव्वा ? उच्यते –

जं च महाकप्पसुयं, जाणि य सेसाइं छेदसुत्ताइं ।
चरणकरणाणुयोगो, त्ति कालियछेओवगयाणि य ॥६१९०॥

आवस्सयं दसवेयालियं चरणधम्मगणियदवियाण पुहत्ताणुओगे ।

कमठवे कारण इमं –

अपुहत्ते वि हु चरणं, पढमं वणिज्जते ततो धम्मो ।
गणित दवियाणि वि ततो, सो चेव गमो पुहत्ते वी ॥३१९१॥ कंठ्या

तेसु पुण जुगवं वण्णिज्जमाणेसु इमा विधी –

एक्केक्कम्मिउ सुत्ते, चउण्ह दाराण आसि तु विभासा ।
दारे दारे य नया, गाहगगेण्हंतए पप्प ॥६१९२॥

सुत्ते सुत्ते चउरो दार त्ति अणुओगा, पुणो एक्केक्को अणुओगो णएहिं चिंतिज्जंति, ते य नया गाहगं पडुच्च गिण्हंतगं वा संखेववित्थरेहिं दट्ठव्वा –

जइ गाहगो णातुं समत्थो गिण्हंतगो वि समत्थो तो सव्वणएहिं वित्थरेणवि भासियव्वं, वितियभंगे गेण्हंतगवसेण वत्तव्वं, ततियभंगे जत्तियं वुत्तं तस्स धारणसमत्थो तत्तियं भासति, चरिमे दोण्णि वि जं सुत्ताणुरूवं अपुहत्ते पुहत्ते वा ॥६१९२॥

ते चउरो अणुओगा कहं विभासिज्जंति ?, उच्यते –

समत त्ति होति चरणं, समभावम्मि य ठितस्स धम्मो उ ।
काले तिकालविसयं, दविए वि गुणो णु दव्वण्णू ॥६१९३॥

तुलाचरणं व समभावकरणं । चरणसमभावट्ठियस्स णियमा विसुद्धिसरूवो धम्मो भवति । काले णियमा तिकालविसयं चरणं, जम्हा समयखेत्ते कालविरहितं न किंचिमत्थि । अहवा – तिकालविसयं ति पंचत्थिकाया जहा धुवे णितियया सासती तहा चरणं भुवि च भवति भविस्सति य । दव्वाणुओगे चरणचिंता ।

किं दव्वो गुणो त्ति ? दव्वट्ठिताभिप्पाएण चरणं दव्वं, पज्जवट्ठिताभिप्पाएण चरणं गुणे, अहवा – पढमतो सामाइयगुणे पडिवत्तीतो पुव्वमेव चरणं लब्भति, चरणट्ठितस्स धम्माणुओगो लभति, चरणधम्मट्ठियस्स गणियाणुओगो दिज्जति, ततो तिअणुओगभावितथिरमतिस्स दव्वाणुओगो य णयविधीहिं दंसिज्जति ॥६१९३॥

इदं च वर्ण्यते –

एत्थं पुण एक्केक्के, दारम्मि गुणा य होंतऽवाया य ।
गुणदोसदिट्ठसारो, णियत्तत्ति सुहं पवत्तत्ति य ॥६१९४॥

एत्थ त्ति एतेसिं अणुओगाण-अत्थकहणे, पुण विसेसणे ।

किं विसेसेति ?, एक्केक्के अणुओगे गुणा दरिसिज्जंति ।

आवाय त्ति – दोसा य कहं ?, उच्यते – पडिसिद्धं आयरंतस्स विहिं अकरेंतस्स य इहपर-लोइयदोसा, पडिसिद्धवज्जेंतस्स विहिं करेंतस्स इहपरलोइया गुणा । चरणाणुअचयभवणं गुणसारो, चरण-विघातो कम्मुवचयभवणं च दोससारो, एवं गुणदोसदिट्ठसारो दोसट्ठाणेसु सुहं णिवत्तति, गुणठाणेसु य सुहं पवत्तते । अहवा – णयवादेसु एगंतग्गाहे दिट्ठदोसो सुहं णिवत्तेति, अणेगंतगाहे य दिट्ठगुणो सुहं पवत्तति ॥६१९४॥

अतो भण्णइ –

अपुहुत्ते य कहेंते, पुहुत्ते वुक्कमेण वाययंतम्मि ।
पुव्वभणिता उ दोसा, वोच्छेदादी मुणेयव्वा ॥६१९५॥

अणुओगाणं अपुहुत्तकाले पुहुत्तं विणा कारणे ण कायव्वं, पुहुत्ते णाकारणेण उक्कमकरणं कायव्वं । अहवा – करेति पडिसिद्ध तो इमातो आदिसुत्ते जे वोच्छेदादिया दोसा वुत्ता ते भवंति ॥६१९५॥

आयारे अणहीए, चउण्ह दाराण अण्णतरगं तु ।
जे भिक्खू वाएती, सो पावति आणमादीणि ॥६१९६॥

सुयकडादी चरणाणुओगे दट्ठव्वो, सेसं कंठं ।

णाऊण य वोच्छेयं, पुव्वगए कालियाणुओगे य ।
सुत्तत्थजाणएणं, अप्पा बहुयं तु णायव्वं ॥६१९७॥ पूर्ववत्

जे भिक्खू अपत्तं वाएइ वाएंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥१९॥
जे भिक्खू पत्तं ण वाएइ वाएंतं ण वा सातिज्जति ॥सू०॥२०॥

अपात्रं अयोग्यं अभाजनमित्यर्थः, तप्पडिपक्खो पत्तं ।

जे भिक्खू अपत्तं वाएइ वाएतं वा सातिज्जति ॥सू०॥२१॥
जे भिक्खू पत्तं ण वाएति ण वाएंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥२२॥

अप्राप्तकं क्रमानधीतश्रुतमित्यर्थः, पडिपक्खो पत्तं, आणादी चउलहुं वा । एते चउरो वि सुत्ता एगट्ठा वक्खाणिज्जंति ।

केरिसं अपात्रं ? उच्यते –

तिंतिणिए चलचित्ते, गाणंगणिए य दुब्बलचरित्ते ।
आयरिय पारिभासी, वामावट्टे य पिसुणे य ॥६१९८॥

तिंतिणीइ त्ति अस्य व्याख्या – दुविधो तिंतिणो दव्वे भावे य ।

तेंदुरुयदारुयं पिव, अग्गिहितं तिडितिडेति दिवसं पि ।
अह दव्वतिंतिणो भावतो य आहारुवहिसेज्जासु ॥६१९९॥

जं अग्गीए छूढं तिडीतिडेति तं दव्वतिंतिणं । भावतिंतिणो दुविहो वयणे रसे य, वयणे तिंतिणो कयाकएसु किंचि भणितो चोदितो वा दिवसं पि तिडितिडेंतो अच्छति । रसतिंतिणो तिविहो – आहार उवहि सेज्जासु ॥६१९९॥

तत्थ आहारे इमो–

अंतोवहिसंजोयण, आहारे वाहि खीरदहिमादी ।
अंतो तु होति तिविहा, भायण हत्थे मुहे चेव ॥६२००॥

आहारो दुविधो – वाहिं अंतो य । तत्थ वाहिं खीरं दधिं वा लंभित्ता हिंडंतो चेव तं खीरं कलमसालिओदणं उप्पाएंतो खंडमादि वा संजोएंतो वाहिं संजोयणं करेति ।

अंतो त्ति वसहीए, सा तिविधा – भायणे हत्थे मुहे त्ति वा । तत्थ भायणे – जत्थ कलमसालिओदणो तत्थ खीरं दधिं वा पक्खिवति, हत्थे तलाहणादिणा पिंडविगतिमादियं हत्थट्ठियं वेढेत्ता मुहे पक्खिवति, पुव्वं मुहे तलाहणादि पक्खिवित्ता पच्छा पिंडविगतिं पक्खिवति ॥६२००॥

एमेव उवहिसेज्जा, गुणोवगारी य जस्स जो होति ।
सो तेण जो अतंतो, तदभावे तिंतिणो णाम ॥६२०१॥

उक्कोसं अंतरकप्पं लद्धुं उक्कोसं चेव चोलपट्टकं उप्पाएत्ता तेण सह परिभोगेण संजोएति । एवं सेसोवहिं पि, एवं सेज्जं अकवाडं लद्धुं कवाडेण सह संजोएति ।

जं जस्स आहारादि तस्स गुणोवकारी अलभंतो तिंतिणो भवति ॥६२०१॥

इदाणिं [१]चलचित्ते त्ति अस्य व्याख्या –

गति ठाण भास भावे, लहुओ मासो य होति एक्केक्के ।
आणाइणो य दोसा विराहणा संजमायाए ॥६२०२॥

चपलो गतिमादितो चउव्विहो, चउसु वि पत्तेयं मासलहुं पच्छित्तं ॥६१०२॥

तत्थ गतिट्ठाणचवलाण इमा विभासा –

दावद्दविओ गतिचवलो उ थाणचवलो इमो तिविहो ।
कुड्डादसइं फुसती, भमति व पादे व णिच्छुभति ॥६२०३॥

गतिचवलो दुयं गच्छति – तुरितगामीत्यर्थः । णिसण्णो पट्टिबाहुऊरुकरचरणादिएहिं कुड्डथंभादिएहिं णेगसो फुसइ, णिसण्णो य हत्थो आसणं अमुंचतो समंता भमति । हत्थपादाण पुणो पुणो य संकोयणं विक्खेवं वा करेति, गायस्स वा कंपं ॥६२०३॥

[१]भासाचवलो इमो –

भासचवलो चउद्धा, असत्ति अलियं असोहणं वा वि ।
असभाजोग्गमसब्भं, अणूहितं तु असमिक्खं ॥६२०४॥

---

१ गा० १६६७ ।

असब्भप्पलावी असमिक्खियप्पलावी अदेसकालप्पलावी। असत्ति, अलियं जहा गो अश्वं ब्रवीति, अथवा - असत्ति असोभणं च असब्भावत्थं, जहा श्यामाकतंदुलमात्रोऽयमात्मा। अपंडिता जे ते असब्भा तेसिं जं जं जोग्गं तं तं असब्भं।

अहवा - जा विदुसभा न भवति सा असब्भा, तीए जं जोग्गं तं असब्भं, तं च ग्राम्यवचनं कर्कशं कटुकं निष्ठुरं जकारादिकं वा।

बुद्धीए अणूहियं पुव्वावरं इहपरलोयगुणदोसं वा जो सहसा भणइ, सो असमिक्खियप्पलावी॥६२०४॥

अदेसकालप्पलावी इमो -

कज्जविवत्तिं दट्ठूण भणति पुव्वं मते तु विण्णातं।
एवमिणं ति भविस्सति, अदेसकालप्पलावी तु॥६२०५॥

अदेसकालप्पलावी-जहा भायणं पडिक्कमियं अट्टकरणं पि से कयं लेवितं रूढं, ततो पमाएण तं भग्गं ताहे सो अदेसकालप्पलावी - "मए पुव्वं चेव णायं, जहा एयं भज्जिहिति" ॥६२०५॥

इमो [2]भावचवलो -

जं जं सुयमत्थो वा, उद्दिट्ठं तस्स पारमप्पत्तो।
अण्णोण्णसुतदुमाणं, पल्लवगाही उ भावचलो॥६२०६॥ कंठ्या

इदाणिं [3]गाणंगणितो -

छम्मासे अपूरेत्ता, गुरुगा बारससमा तु चतुलहुगा।
तेण परं मासो उ, गाणंगणि कारणे भइतो॥६२०७॥

णिक्कारणे गणातो अण्णं गणं संकमंतो गाणंगणिओ, सो य उवसंपण्णो छम्मासे अपूरित्ता गच्छति तो चउगुरुं, बारसवरिसे अपूरित्ता गच्छइ तो चउलहुगा, बारसण्हं वरिसाणं परतो गच्छंतस्स मासलहुं। एवं णिक्कारणे गाणंगणितो। कारणे भतितो, अत्र भयणा सेवाए गाणंगणियत्तं कारणिज्जं। दारं॥६२०७॥

इदाणिं [4]दुब्बलचरणो -

मूलगुण उत्तरगुणे, पडिसेवति पणगमादि जा चरिमं।
धितिबलपरिहीणो खलु, दुब्बलचरणो अणट्ठाए॥६२०८॥

सव्वजहण्णो चरणावराहो जहन्न पणगं भवति, तदादी जाव चरिमं ति पारंचितावराहं पडिसेवितो अणट्ठा चरणदुब्बले॥६२०८॥

किं च -

पंचमहव्वयभेदो, छक्कायवहो तु तेणऽणुण्णातो।
सुहसीलवियत्ताणं, कहेति जो पवयणरहस्सं॥६२०९॥

सुहे सीलं व्यक्तं येषां ते सुहसीलवियत्ता, ते पासत्थादी मंदधम्मा। अहवा - मोक्खसुहे सीलं जं तम्मि विगतो आया जेसिं ते सुहसीलवियत्ता॥६२०९॥

---

१ गा० ६२०२। २ गा० ६२०२। ३ गा० ६१९७। ४ गा० ६१९७।

[1] आयरियपारिभासी इमो—

डहरो अकुलीणो त्ति य, दुम्मेहो दमग मंदबुद्धी य ।
अवि यऽप्पलाभलद्धी, सीसो परिभवति आयरियं ॥६२१०॥

इमे डहरादिपदभावेसु जुत्तं आयरियं कोइ आयवद्धो सूयाए असूयाए वा भणति । तत्थ सूया पर-भावं अत्तववदेसेण भणंति-जहा अज्ज वि डहरा अम्हे, के आयरियत्तस्स जोग्गा ? असूया परं हीणभावजुत्तं फुडमेव भणति । जहा को वि वयपरिणतो वि पक्कबुद्धी डहरं गुरुं भणाति—अज्ज वि तुमं थणदुद्धगंधियमुहो रुवंतो भत्तं मग्गसि, केरिसमायरियत्तं ते ? एवं उत्तमकुलो हीणाहियकुलं, मेहावी मंदमेहं, ईसरो पव्वतिओ दरिद्दपव्वतियं, बुद्धिसंपण्णो मंदबुद्धिं, लद्धिसंपण्णो मंदलद्धिं । दारं ॥६२१०॥

इदाणिं [2] वामावट्टो—

एहि भणितो त्ति वच्चति, वच्चसु भणिओ त्ति तो समुल्लियति ।
जं जह भणितो तं तह, अकरेंतो वामवट्टो उ ॥६२११॥

वामं विवट्टति त्ति वामवट्टो, विवरीयकारीत्यर्थः । दारं ॥६२११॥

इदाणिं [3] पिसुणो—

पीतीसुण्णो पिसुणो, गुरुगादि चउण्ह जाव लहुओ य ।
अहवा संतासंते, लहुओ लहुगा गिहं गुरुगा ॥६२१२॥

अलिएतराणि अक्खंते पीतिसुण्णं करेति त्ति पिसुणो, प्रीतिविच्छेदं करेतीत्यर्थः । तत्थ जइ आयरिओ पिसुणत्तं करेइ तो चउगुरुं, उवज्झायस्स चउलहुं, भिक्खुस्स मासगुरुं, खुड्डस्स मासलहुं । अहवा—सामण्णतो जति संजतो संजएसु पिसुणत्तं करेइ तत्थ संतेण करेंतस्स मासलहुं, असंतेण चउलहुगा । अह संजतो गिहत्थेसु पिसुणत्तं करेइ एते चेव पच्छित्ता गुरुगा भाणियव्वा, मासगुरुं संते, असंते ꣹ ꣹ ॥६२१२॥

अहवा—इमे अपात्रा अप्राप्ताश्च इहं भण्णंति, किंचि अव्वत्तस्स वि एत्थेव भण्णति—

आदीअदिट्ठभावे, अकडसमायारिए तरुणधम्मे ।
गव्वित पइण्ण णिण्हयि, छेदसुते वज्जिते अत्थं ॥६२१३॥

"[4]आदीअदिट्ठभाव" त्ति अस्य व्याख्या—

आवासगमादीया, सूयकडा जाव आदिमा भावा ।
ते जेण होंतऽदिट्ठा, अदिट्ठभावो भवति एसो ॥६२१४॥ कंख्या

"[5]अकडसामायारि" त्ति अस्य व्याख्या—

दुविहा सामायारी, उवसंपद मंडली य बोधव्वा ।
अणलोइतम्मि गुरुणा, मंडलिसामायारिं अओ वोच्छं ॥६२१५॥

---

१ गा० ६१९७ । २ गा० ६१९७ । ३ गा० ६१९७ । ४ गा० ६२०७ । ५ गा० ६२१३ ।

उपसंपदाए तिविधा — णाणोवसंपदा दंसणे य चरणे य। तं अण्णगणातो आगयं अणालोयावेत्ता अणुवसंपण्णं वा जं परिभुंजंति वाएइ वा तस्स चउगुरुं। मंडलिसामायारी दुविधा — सुत्तमंडली अत्थमंडली य ॥६२१५॥

तेसु इमा विधी —

सुत्तम्मि होति भयणा, पमाणतो या वि होइ भयणाओ।
अत्थम्मि तु जावतिया, सुणेंति थोवेसु अन्ने वि ॥६२१६॥

दो चेव निसिज्जाओ, अक्खाणक्का वितिज्जिया गुरुणो।
दो चेव मत्तया खलु, गुरुणो खेले य पासवणे ॥६२१७॥

मज्जण निसेज्ज अक्खा, कितिकम्मुस्सग्गवंदणं जेट्ठे।
परियागजातिसु य सुणण समत्ते भासती जो तु ॥६२१८॥

सुत्तमंडलीए णिसेज्जा कज्जति वा ण वा, वसभाणुगो एगकप्पे चिट्ठितो वाएय त्ति। अहवा — भयणा सद्दे कंवलाओ देंति वा न वा। अधवा — पमाणतो भयणा, जाहे गुरू णिसण्णो ताहे तस्स विहिणा कितिकम्मं बारसावत्तं देंति, पच्छा अणुओगस्स पाठवण उस्सग्गं करेंति, तं उस्सग्गं पारेत्ता ततो गुरुं दिट्ठुविहिं अरवखेसु करेत्ता पच्छा जेट्ठस्स वंदणयं देति, जहा जेट्ठो परियागजाईसु ण घेत्तव्वो। सुणेत्ताण जो गहणधारणाजुत्तो समत्ते वक्खाणे जो भासती — पडिभणतीत्यर्थः सो जेट्ठो, ततो सुणेत्ता कालवेलाए अणुओगं विसज्जेत्ता गुरुस्स वंदणं देंति, पुणो वंदित्ता कालस्स पडिक्कमंति ॥६२१८॥

अवितहकरणे सुद्धा, वितहकरेंताण मासियं लहुगं।
अक्खनिसिज्जा लहुगा, सेसेसु वि मासियं लहुगं ॥६२१९॥

जं सदोसं तं वितहकरणं, तत्थ मासलहुं, अक्खणिसिज्जाए विणा अत्थं कहेंतस्स सुणेंताण चउलहुं, सेसेसु वि पमज्जणादि अकरणे मासलहुं चेव, एवं सव्वं अवितहं सामायारिं जो न करइ सो अकडसामायारी।

इदाणिं "[1]तरुणधम्मे" त्ति —

तिण्हारेण समाणं, होति पकप्पम्मि तरुणधम्मो तु।
पंचण्ह दसाकप्पे, जस्स व जो जत्तिओ कालो ॥६२२०॥

"सम" त्ति वरिसा, पकप्पो णिसीहज्झयणं। तरुणो अविपक्वः, जस्स वा सुत्तस्स जो कालो भणितो तं अपूरेंतो तरुणधम्मो भवति। दारं ॥६२२०॥

इदाणिं "[2]गव्विय" त्ति, अविणीतो णियमा गव्वितो त्ति।

अतो भणति —

पुरिसम्मि दुव्विणीए, विणयविहाणं ण किंचि आइक्खे।
न वि दिज्जति आभरणं, पलियत्तियकण्णहत्थस्स ॥६२२१॥

विणयविहाणं सुत्तं, पलियत्ति तं छिण्णं। सेसं कंठ्यं।

---

१ गा० ६२१३। २ गा० ६२१३।

मद्दवकरणं णाणं, तेणेव य जे मदं समुचियंति ।
ऊणगभायणसरिसा, अगदो वि विसायते तेसिं ॥६२२२॥ कंठ्या

इदाणि "[1]पइण्णो त्ति, सो दुविहो-पइण्णपण्हो पइण्णविज्जो य –

सोतुं अणभिगयाणं, कहेति अमुगं कहिज्जए अत्थं ।
एस तु पइण्णपण्हो, पइण्णविज्जो उ सव्वं पि ॥६२२३॥

गुरुसमीवे सुणेत्ता अणभिगताणं कहेति । अगवीयसुओ अगीतो अपरिणामगो य – एतेसिं उद्देसुद्देसं कधितो पइण्णपण्णो भणइ । जो पुण आदिरंतेण सव्वं कहेति सो पइण्णविज्जो ॥६२२३॥

तेसिं कहंतस्स इमे दोसा –

अप्पच्चओ अकित्ती, जिणाण ओवातमइलणा चेव ।
दुल्लभबोहीयत्तं, पावंति पइण्णवागरणा ॥६२२४॥

सो अपात्रः अप्राप्तः, अव्यक्तानां च काले अविधीए छेदसुतादि अणरुहस्स तं कहिज्जंतं अप्पच्चयं करेति । कहं ? उच्यते – एते च्चिय पुव्वं उस्सग्गे पडिसेहे कधिता इह अववादे अणुण्णं कहेंति, एवं अप्पच्चओ अविस्सासो भवति, एते वि धम्मकारिणो ण भवंतीत्यर्थः । पडिसिद्धसमायरेण व्रतभंगो व्रतभंगकारिणो त्ति अकित्ती । जिणाण आणा ओवातो भण्णति, तस्स मतिलणा पडिसिद्धस्स अण्णं कहंतेण पुव्वावरविरुद्धं उम्मत्तवयणं च दंसियं । सुयधम्मं च विराहेंतो दुल्लभबोधिं णिव्वत्तेइ पइण्णपण्हो पइण्णविज्जो वा ॥ दारं ॥६२२४॥

इयाणि [2]णिण्हयि त्ति –

सुत्तत्थतदुभयाइं, जो घेत्तुं णिण्हवे तमायरियं ।
लहु गुरुग सुत्त अत्थे, गेरुयनायं अबोही य ॥६२२५॥

सुत्तस्स वायणायरियं णिण्हवति ꞉ ꞉ । अत्थस्स वायणायरियं णिण्हवति ꞉ ꞉ । "गेरुय" त्ति परिव्राजको, जहा तेण सो ण्हाविओ णिण्हविओ पडिओ य असण्णातो । एवं इह णिण्हवेंतस्स छलणा, परलोगे अबोधिलाभो । एते सव्वे तिंतिणिगादिगा अदिट्ठभावादिगा य अप्पत्तभूता काउं अवायणिज्जा ॥६२२५॥

किं अकज्जं ?, उच्यते –

उवहम्मति विण्णाणे, न कहेयव्वं सुतं च अत्थं वा ।
न मणी सतसाहस्सो, आवज्जति कोच्छुभासस्स ॥६२२६॥

उवहयं त्ति – सदोसं स्वसमुत्था मति, गुरुवदेसेण जा मती तं विण्णाणं । अहवा – मती चेव विण्णाणं । भासो त्ति – संकुंतो । कोच्छुभो मणी सतसाहस्सो कोच्छुभासस्स अयोग्यत्वात् णो विज्जइ, ॥६२२६॥

एवं जम्हा तिंतिणिगादि अजोग्गा –

तम्हा ण कहेयव्वं, आयरिएणं तु पवयणरहस्सं ।
खेत्तं कालं पुरिसं, नाऊण पगासए गुज्झं ॥६२२७॥

---

१ गा० ६२१३ । २ गा० ६२१३ ।

पवयणरहस्सं अववादपदं सव्वं वा छेदसुत्तं। अववायतो खेत्तकालपुरिसभावं च णाउं अपात्रं पि वाएज्ज। खेत्तओ अद्धाणे लद्धिसंपण्णो समत्थो गच्छुवग्गहकरोत्ति काउं अपात्रं तं पि वाएज्जति। एवं काले वि ओमादिसु परिणामपुरिसो वा वाइज्जति। भावे गिलाणादियाण उवग्गहकरो गुरुस्स वाऽसहायस्स सहाओ। वोच्छेते वा असइ पत्ते अपत्ते वि वाएज्जा। एवमादिकारणेसु अरत्तदुट्ठो पवयणरहस्सं पवाएज्ज ॥६२२७॥

एते होंति अपत्ता, तव्विवरीता हवंति पत्ता उ।
वाएंते य अपत्तं, पत्तमवाएंते आणादी ॥६२२८॥

जे एते तितिणिगादी अपत्ता, एतेसिं पडिपक्खभूता सव्वे पात्राणि भवंति। जम्हा अपात्रे बहू दोसा तम्हा ण वाएयव्वं, पात्र वाएयव्वं, अण्णहा करणे आणाइया दोसा ॥६२२८॥

तेसु विसतेसु इमं पच्छित्तं—

अव्वत्ते य अपत्ते, लहुगा लहुगा य होंति अप्पत्ते।
लहुगा य दव्वतितिणे, रसतिंतिणे होंतऽणुग्घाया ॥६२२९॥

वयसा अव्वत्तं अपात्तं अप्राप्तं उवकरणं तितिणि च एते वाएंतस्स चउलहुगा। रसत्ति आहारतितिणे चउगुरुगा भवति, मा उस्सग्गणिच्छिउं ॥६२२९॥

मरेज्ज सह विज्जाए, कालेणं आगते विदू।
अप्पत्तं च ण वातेज्जा, पत्तं च ण विमाणए ॥६२३०॥

कालेण आगए त्ति आधानकालादारभ्य प्रतिसमयं कालेनागतः यावन्मरणसमयः, अत्रान्तरे अपात्रं न वाचयेत्, पात्र च न विमानयेदिति ॥६२३०॥

अपात्रस्य इमो अववातो—

वितियपदं गेलण्णे, अद्धाणसहाय असति वोच्छेदे।
एतेहि कारणेहिं, वाएज्ज विदू अपत्तं पि ॥६२३१॥

जहा पूर्वं तहा वक्तव्यं।

अहवा—अपात्रे अण्णं इमं अववादकरणं—

वाएंतस्स परिजितं, अण्णं पडिपुच्छगं च मे णत्थि।
मा वोच्छिज्जतु सव्वं, वोच्छेदे पदीवदिट्ठंतो ॥६२३२॥

जस्स समीवातो गहियं सो मतो, अण्णओ तस्स पडिपुच्छगं पि णत्थि, अतो परिजयट्ठा अपात्रं पि वाएज्जा। सयं वा मरंतो वत्तस्स अभावे मा सव्वं सव्वहा वोच्छिज्जउत्ति, वोच्छिण्णे पदीवदिट्ठंतो ण भवति, तम्हा अपत्तं वाएज। अपत्ताओ पत्तेसु संचरिस्संति पदीवदिट्ठंतेण—जह दीवा दीवसयं० कंठ्या ॥६२३२॥

जो पात्रं ण वाएति तस्सिमे दोसा—

अयसो पवयणहाणी, सुत्तत्थाणं तहेव वोच्छेदो।
पत्तं तु अवाएंते, मच्छरिवाते सपक्खे वा ॥६२३३॥

अवाएंतस्स अयसो त्ति – एस दुट्ठादी ईहति वा किंचि, मुहा वा सव्वं कितिकम्मं कारवेति, भावसंगहेणं वा अकज्जं तेणं गच्छो से सयहा फुट्टो, एवमादि अयसो। पवयणं वा उव्वणगो, तस्स हाणी। कहं ?, आगममुणे तित्थे ण पव्वयति कोति। सेसं कंठं ॥६२३३॥

कारणेन पात्रमपि न वाचयेत् –

दव्वं खेत्तं कालं, भावं पुरिसं तहा समासज्ज ।
एतेहिं कारणेहिं, पत्तमवि विदू ण वाएज्जा ॥६२३४॥

"दव्वे खेत्ते य" त्ति अस्य व्याख्या –

आहारादीणऽसती, अहवा आयंबिलस्स तिविहस्स ।
खेत्ते अद्धाणादी, जत्थ सज्झाओ ण सुज्झेज्जा ॥६२३५॥

आयंबिलवारए आयंबिलस्स असति ण वाएति, तिविहं – ओदणकुम्मासत्तुगा वा। खेत्तओ अद्धाणपडिवण्णो ण वाएति, जत्थ वा खेत्ते सज्झाओ ण सुज्झति, जहा वड्डोसभगवती ण सुज्झति ॥६२३५॥

कालभावपुरिसे य इमा विभासा –

असिवोमाईकाले, असुद्धकाले व भावगेलण्णे ।
आतगत परगतं वा पुरिसो पुण जोगमसमत्थो ॥६२३६॥

असिवकाले ओमकाले य सुद्धे वा काले असज्झाइए ण वाएज्जा। भावे अप्पणा गिलाणो "परगयं व" त्ति वाइज्जमाणे वा गेलण्णं णाउं, अहवा – परगिलाणवेयावच्चवावडे पुरिसो वा जोगस्स असमत्थो ण वाइज्जइ, एवमादिकारणेहिं पत्तो वि ण वाइज्जइ ॥६२३६॥

जे भिक्खू अव्वत्तं वाएइ, वाएंतं वा सातिज्जइ ॥सू०॥२३॥

जे भिक्खू वत्तं न वाएइ, न वाएंतं वा सातिज्जइ ॥सू०॥२४॥

अव्वंजणजातो खलु, अव्वत्तो सोलसण्ह वरिसेणं ।
तव्विवरीतो वत्तो, वातेतियरेण आणादी ॥६२३७॥

जाव कक्खादिसु रोमसंभवो न भवति ताव अव्वत्तो, तस्संभवे वत्तो। अहवा – जाव सोलसवरिसो ताव अव्वत्तो, परतो वत्तो। जइ अव्वत्तं वाएति, इयरं त्ति वत्तं न वाएति। तो आणादिया दोसा चउलहुं च ॥६२३७॥

अव्वत्ते इमो अववादो –

णाऊण य वोच्छेदं, पुव्वगते कालियाणुयोगे य ।
सुत्तत्थ जाणएणं, अप्पाबहुयं मुणेयव्वं ॥६२३८॥

अववादे वत्तो इमेहिं कारणेहिं न वाएज्जा –

दव्वं खेत्तं कालं, भावं पुरिसं तहा समासज्ज ।
"एतेहिं कारणेहिं, वत्तमवि विदू ण वाएज्जा ॥६२३९॥ पूर्ववत्

जे भिक्खू अपत्तं वाएइ, वाएंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥२५॥

जे भिक्खू पत्तं न वाएइ न वाएंतं वा सातिज्जइ ॥सू०॥२६॥

अप्राप्तं एयस्स अत्थो अपात्रसूत्रे गत एव, "[1]अदिट्ठ भावे" त्ति । तहा वि इह असुण्णत्थं भण्णति अव्वत्तसुत्तस्स ।

अप्राप्तसूत्रे चउभंगो भाणियव्वो –

परियाएण सुतेण य, वत्तमवत्ते चउक्क भयणा उ ।
अव्वत्तं वाएंते, वत्तमवाएंति आणादी ॥६२४०॥

परियाओ दुविहो – जम्मणओ पवज्जाए य । जम्मणओ सोलसण्हं वरिसाणं आरतो अव्वत्तो, पव्वज्जाए तिण्हं वरिसाणं पकप्पस्स अव्वत्तो । जो वा जस्स सुत्तस्स कालो वुत्तो तं अपावेंतो अव्वत्तो, सुएण आवस्सगे अणधीए दसवेयालीए अव्वत्तो, दसवेयालीए अणधीए उत्तरज्झयणाणं अव्वत्तो, एवं सर्वत्र ।

एत्थ परियायसुत्ते चउभंगो कायव्वो । पढमभगो दोसु वि वत्तो, बितिओ सुएण अव्वत्तो, ततिओ वएण अव्वत्तो, चरिमो दोहिं वि । अव्वत्ते वाएंतस्स पढमभंगिल्लं अवाएंतस्स आणादिया य दोसा चउलहुं च ॥६२४०॥

अप्राप्तो पि वाएयव्वो इमेहिं कारणेहिं –

णाऊण य वोच्छेदं, पुव्वगए कालियाणुयोगे य ।
एएहिं कारणेहिं, अव्वत्तमवि पवाएज्जा ॥६२४१॥ पूर्ववत्

प्राप्तं पि न वाएइ, इमेहिं कारणेहिं –

दव्वं खेत्तं कालं, भावं पुरिसं तहा समासज्ज ।
एएहि कारणेहिं, पत्तमवि विदू ण वाएज्जा ॥६२४२॥ पूर्ववत्

अव्वत्ते अप्राप्तछेदसुतं वाएज्जमाणे इदं दोसदंसगं उदाहरणं –

आमे घडे निहित्तं, जहा जलं तं घडं विणासेति ।
इय सिद्धंतरहस्सं, अप्पाहारं विणासेइ ॥६२४३॥

णिहितं पक्खित्तं, सिट्ठं कहियं । अप्पा आहारता जत्थ तं अप्पाहारं, अप्पधारणसामर्थ्यमित्यर्थः ।

जे भिक्खू दोण्हं सरिसगाणं एक्कं संचिक्खावेइ, एक्कं न संचिक्खावेइ, एक्कं वाएइ, एक्कं न वाएइ, तं करंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥२७॥

सरिस त्ति तुल्ला, तेसिं उ तुल्लत्तणं वक्खमाणं । तं सरिसं एक्कं वाएइ, एक्कं न संचिक्खावेति, तस्स आणादिया दोसा चउलहुं च ।

एगं संचिक्खाए, एगं तु तहिं पवायए जो उ ।
दोण्हं तु सरिसयाणं, सो पावति आणमादीणि ॥६२४४॥ गतार्था

---

[1] गा० ६२१३ ।

सादृश्यं इमेहिं—

संविग्गा समणुण्णा, परिणामग दुविह भूमिपत्ता य ।
सरिस अदाणे रागो, वाहिरयं णिज्जरा लाभो ॥६२४५॥

दो वि संविग्गा सति संविग्गते समणुण्णत्ति, दो वि संभोइता सति संविग्गसमणुण्णाते, दोवि परिणामगा सति संविग्गसमणुण्णापरिणामगत्ते । दो वि दुविधभूमीपत्ता । दुविधभूमी – वएण सुएण य । वएण वंजणजातका, सुएण जस्स सुत्तस्स जावइए परियाए वायणा वुत्ता तं दो वि पत्ता, जहा आयारस्स तिण्णि संवच्छराणि, सूयगडदसाण पंचसंवत्सराणि, एवमादिसरिसाणं एक्कं संचिक्खावेइ, एवकं वाएइ सुत्ते ०० । अत्थे ०० । सरिसाण चेव एक्कस्स अदाणे दोसो लब्भति, वितियस्स दाणे रागो लब्भति । जस्स ण दिज्जति सो बाहिरभावं गच्छइ, तप्पच्चयं च णिज्जरं ण लब्भति, अण्णं च सो पदोसं गच्छति, पदुट्ठो वा जं काहिति तण्णिप्फण्णं ॥६२४५॥

भवे कारणं जेण एक्कं संचिक्खावेज्ज—

दव्वं खेत्तं कालं, भावं पुरिसं तहा समासज्ज ।
एएहि कारणेहिं, संचिक्खाए पवाए वा ॥६२४६॥

दव्वखेत्तकालभावाण इमा विभासा—

आयंबिलणिव्वितियं, एगस्स सिया ण होज्ज वितियस्स ।
एमेव खेत्तकाले, भावेण ण तिण्ण हट्ठेक्को ॥६२४७॥

दव्वं आयंबिलं णिव्वितियं वा असणादि दोण्ह वि ण पहुप्पति, एवं कक्खडखेत्ते वि असणादिगं ण पहुप्पति, ओमकाले वि दोण्हं ण लब्भति, भावे एक्को ण तिण्णो त्ति गिलाणो, हट्ठे त्ति अगिलाणो, तं वादेति गिलाणं संचिक्खावेइ ॥६२४७॥

अहवा सयं गिलाणो, असमत्थो दोण्ह वायणं दाउं ।
संविग्गादिगुणजुओ, असहु पुरिसो य रायादी ॥६२४८॥

पुव्वद्धं कंठं । अहवा – भावतो संविग्गादिगुणजुत्ताण वि तत्थेक्को असहू । असहु त्ति सभावतो चेव जोगस्स असमत्थो राया च रायमंती, एवमादी पुरिसो कुस्सुयभावितो जाव भाविज्जति ताव संचिक्खाविज्जति ॥६२४८॥

जो वरिज्जति, सो इमं वुत्तं धारिज्जति –

अण्णत्थ वा वि णिज्जति, भण्णति समत्ते वि तुज्झ वि दलिस्सं ।
अण्णे ण वि वाइज्जति, परिकम्म सहं तु कारेंति ॥६२४९॥

जइ वा असहू तो तं परिकम्मणेण सहू करेंति जाव, ताव धरेंति । इयरं पुण वाएइ, सेसं कंठं ।

जे भिक्खू आयरिय-उवज्झाएहिं अविदिन्नं गिरं आइयइ,
आइयंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥२८॥

गिर त्ति वाणी वयणं, तं पुण सुत्ते चरणे वा। जो तं आयरिय-उवज्झाएहिं अदत्तं गेण्हति तत्थ सुत्ते ङ्क। अत्थे ङ्का। चरणे मूलुत्तरगुणेसु अणेगविहं पच्छित्तं ।।६२४९।।

दुविहमदत्ता उ गिरा, सुत्त पडुच्चा तहेव य चरित्तम्मि ।
सुत्तत्थेसु सुतम्मि, भासादोसे चरित्तम्मि ।।६२५०।।

जा सुत्ते गिरा सा दुविधा – सुत्ते अत्थे वा। चरणे सावज्जदोसजुत्ता भासा ।।६२५०।।

कहं पुण सो अदिण्णं आइयत्ति ?, उच्यते –

रातिणियगारवेणं, बहुस्सुतमतेण अन्नतो वा वि ।
गंतुं अपुच्छमाणो, उभयं पऽण्णाववदेसेणं ।।६२५१।।

तस्स किंचि सुयत्थसंदिट्ठं, सो सव्वरातिणिओ हं ति गारवेण ओमे ण पुच्छति, सीसत्तं वा न करेइ, सव्वबहुसुओ वा हं भणामि, कहमण्णं पुच्छिस्सं एवमादिगारवट्ठितो अण्णतो वि ण गच्छति, गतो वा ण पुच्छति, ताहे जत्थ सुत्तत्थाणि वाइज्जंति तत्थ चिलिमिलिकुडकडंतरिओ वा ठिओ अण्णावदेसेण वा गतागतं करेंतो सुणेति, उभयं पि अण्णावदेसेणं ।।६२५१।।

एसा सुत्त अदत्ता, होति चरित्ते तु जा ससावज्जा ।
गारत्थियभासा वा, ढड्ढर पलिकुंचिता वा वि ।।६२५२।।

चरित्ते ढड्ढरसरं करेति, आलोयणकाले पलिउंचेति, कताकते वा अत्थे पलिकुंचति। सेसं कंठं ।।६२५२।।

बितिओ वि य आएसो, तवतेणादीणि पंच तु पदाणि ।
जे भिक्खू आतियती, सो पावति आणमादीणि ।।६२५३।।

तवतेणे वतितेणे, रूवतेणे य जे नरे ।
आयारभावतेणे य, कुव्वई देवकिव्विसं ।। (दश० अ० ५ गा० ४६)

एतेसिं इमा विभासा—

खमओ सि ? आम मोणं, करेति को वा वि पुच्छति जतीणं ।
धम्मकहि-वादि-वयणे, रूवे णीयल्लपडिमा वा ।।६२५४।।

सभावदुब्बलो भिक्खागओ अण्णत्थ वा पुच्छिओ "तुमं सो खमओ त्ति भंते ?" ताहे सो भणति-आमं, मोणेण वा अच्छति। अहवा भणति – को जतीसु खमणं पुच्छ। वइतेणे त्ति "तुमं सो धम्मकही वादी णेमित्तिओ गणी वायगो वा ?" एत्थ वि भणति – आमं, तुण्हिक्को वा अच्छति त्ति। भणाति रूवे – "तुमं अम्हं सयणो सि ?" अहवा – "तुमं सो पडिमं पडिवण्णमासी ?" एत्थेव तहेव तुण्हिक्कादी अच्छति।।६२५४।।

बाहिरठवणावलिओ, परपच्चयकारणाओ आयारे ।
महुराहरणं तु तहिं, भावे गोविंदपव्वज्जा ।।६२५५।।

आयारतेणे मथुरा कोंडयइल्ला उदाहरणं ते भावसुण्णा। परप्पईतिणिमित्तं बाहिरकिरियासु सुट्ठु उज्जता जे ते आयारतेणा। भावतेणो जहा गोविंदवायगो वादे णिज्जिओ सिद्धंतहरणट्ठयाए पव्वज्जम-

ब्भुवगतो, पच्छा सम्मत्तं पडिवण्णो। एवमादि गिराणं अदित्ताणं णो गहणं कायव्वं। एक्कं ताव णियब्भंसो कतो भवति। मुसावादादिया च चरणब्भंसदोसा ॥६२५५॥

एतेसामण्णतरं, गिरं अदत्तं तु आतिए जो तु।
सो आणा अणवत्थं, मिच्छत्त विराधणं पावे ॥६२५६॥ कंठ्या

आवण्णसङ्ढाण पच्छित्तं च ॥

भवे कारणं ते अदत्तं पि आदिएज्जा –

वितियपदमणप्पज्झे, आतिए अविकोविते व अप्पज्झे।
दुद्दाइ संजमट्ठा, दुल्लभदव्वे य जाणमवी ॥६२५७॥

खित्तादिचितो वा आइएज्ज, सेहो वा अजाणंतो, "दुद्दाइ" त्ति उवसंपन्नाण वि न देइ तस्स, उवसंपण्णो अणुवसंपण्णो वा जत्थ गुणेइ वक्खाणेइ वा कस्सति तत्थ कुड्डंतरिओ सुणति गयागयं व करेंतो। "संजमहेउं व" त्ति अच्छितो कइ मिया दिट्ठ त्ति पुच्छिओ, दिट्ठा वि न दिट्ठ त्ति भणेज्ज। जत्थ वा संजय-भासाते भासिज्जमाणा सागारिका संजयभासाओ गेण्हेज्जा तत्थ अविदिण्णाते गारत्थियभासाए भासेज्जा। आयरियस्स गिलाणस्स वा सयपागेण वा सहस्सपागेण वा दुल्लभदव्वेणं कज्जं तदट्ठा णिमित्तं पउंजेज्ज, अण्णं वा किंचि संयवत्रयणं भणेज्ज, तदट्ठा चेव तेगादि वा पंचपदे भणेज्ज ॥६२५७॥

जे भिक्खू अन्नउत्थियं वा गारत्थियं वा वाएइ,
वाएंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥२९॥

जे भिक्खू अण्णउत्थियं वा गारत्थियं वा पडिच्छइ
पडिच्छंतं वा सातिज्जइ ॥सू०॥३०॥

जे भिक्खू पासत्थं वाएइ, वाएंतं वा सातिज्जइ ॥सू०॥३१॥

जे भिक्खू पासत्थं पडिच्छइ, पडिच्छंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥३२॥

जे भिक्खू ओसन्नं वाएइ, वाएंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥३३॥

जे भिक्खू ओसन्नं पडिच्छइ, पडिच्छंतं वा सातिज्जइ ॥सू०॥३४॥

जे भिक्खू कुसीलं वाएइ, वाएंतं वा सातिज्जइ ॥सू०॥३५॥

जे भिक्खू कुसीलं पडिच्छइ पडिच्छंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥३६॥

जे भिक्खू नितियं वाएइ, वाएंतं वा सातिज्जति ॥सू०॥३७॥

जे भिक्खू नितियं पडिच्छइ, पडिच्छंतं वा सातिज्जइ ॥सू०॥३८॥

जे भिक्खू संसत्तं वाएइ, वाएंतं वा सातिज्जइ ॥सू०॥३९॥

जे भिक्खू संसत्तं पडिच्छइ, पडिच्छंतं वा साइज्जइ ॥सू०॥४०॥

तं सेवमाणे आवज्जति चाउम्मासियं परिहारट्ठाणं उग्घातियं।

एतेसिं वायणं देति पडिच्छति । भावतेणो वा सव्वेसु अहाच्छंदवज्जिएसु चउलहुं, अहवा – अत्थे ङ्क । अहाच्छंदे चउगुरुं सुत्ते, अत्थे ङ्कुं ।

अण्णपासंडी य गिही, सुहसीलं वा वि जो पवाएज्जा ।
अहव पडिच्छति तेसिं, चाउम्मासाओ पोरिसिं ॥६२५८॥

पोरिसि त्ति सुत्तपोरिसिं अत्थपोरिसिं वादेंतस्स, तेसिं वा समीवातो पोरिसिं करेंतस्स, अहवा – एक्को पोरिसिं वाएंतस्स ।

अणेगासु इमं –

सत्तरत्तं तवो होति, ततो छेदो पहावती ।
छेदेण छिण्णपरियाए, ततो मूलं ततो दुगं ॥६२५९॥

सत्तदिवसे चउलहुं तवो, ततो एक्कं दिवसं चउलहुच्छेदो, ततो एक्केक्कदिवसं मूलणवट्ठपारंचिया । अहवा – तवो तहेव चउलहुं छेदो सत्तदिवसे । सेसा एक्केक्कदिवसं । अहवा – तवो तहेव छग्गुरुछेदो सत्तदिवसे, सेसा एक्केक्कं । अहवा – चउलहु तवो सत्तदिवसे, ततो चउगुरू तवो सत्तदिवसे ?, ततो छल्लहू तवो सत्तदिवसे, ततो छग्गुरू तवो सत्तदिवसे, ततो एते चेव छेदो सत्त सत्त दिवसे, ततो मूलऽणवट्ठपारंचिया एक्केक्कदिणं । अहवा – ते च्चेव चउलहुगादि वा सत्त दिवसिगा, ततो छेदा लहुपणगादिगा सत्त सत्त दिवसिगा सत्त दिवसे णेयव्वा जाव छग्गुरू, ततो मूलऽणवट्ठपारंचिया एक्केक्कदिवसं ॥६२५९॥

गिहिअण्णतित्थिएसु इमे दोसा –

मिच्छत्तथिरीकरणं, तित्थस्सोभावणा य गेण्हंते ।
देंते पवंचकरणं, तेणेवऽक्खेवकरणं च ॥६२६०॥

कहं मिच्छत्तं थिरतरं ?, उच्यते – ते तं दट्ठुं तेसिं समीवे गच्छंतं मिच्छद्दिट्ठी चिंतेति – इमे च्चेव पहाणतरा जाता, एते वि एतेसिं समीवे सिक्खंति । लोगो दठ्ठुं भणाति – एतेसिं अप्पणो आगमो णत्थि, परसंतिताणि सिक्खंति । निस्सारं पवयणंति ओभावणा । अह तेसिं देति तो ते सहसत्थादिभाविता महाजणमज्झे वट्टं चोरं खुज्जाविलियासणए करीसए पिलुअए त्ति एवमादिपवंचणं करेंति उड्डाहं च । अहवा – तेणेव सिक्खिएण अवखेवे त्ति चोयणं करेज्ज दूसेज्ज वा ॥६२६०॥

गिहिअण्णतित्थियाणं, एए दोसा उ देंत गेण्हंते ।
गहण-पडिच्छणदोसा, पासत्थादीण पुव्वुत्ता ॥६२६१॥

कंठ्या । णवरं – पासत्थादिसु गहणपडिच्छणदोसा जे ते पण्णरसमे उद्देसगे वुत्ता ते दट्ठव्वा । वंदण-पसंसणादिया तेरसमे । जम्हा एते दोसा तम्हा गिहिअण्णतित्थिया वा ण वाएयव्वा ॥६२६१॥ परपासंडिलक्खणं – जो अण्णाणं मिच्छत्तं कुव्वंतो कुतित्थिए वाएति, जिणवयणं च णाभिगच्छति सो परपासंडी ।

जो पुण गिहि-अण्णतित्थिओ वा इमेरिसो –

णाणे चरणे परूवणं, कुणति गिही अहव अण्णपासंडी ।
एएहि संपउत्तो, जिणवयणं सो सपासंडी ॥६२६२॥

णाणदंसणचरित्ताणि परूवेति, जिणवयणं च रोएति सो सपासंडी चेव, सो वाइज्जइ जं तस्स जोग्गं ।

एएहि संपउत्तो, जिणवयणमएण सोग्गतिं जाति ।
एएहि विप्पमुक्को, गच्छति गति अण्णतित्थीणं ॥६२६३॥

जो अण्णतित्थियाणुरूवाणिती तं गच्छति । सेसं कंठ्यं ।

भवे कारणं वाएज्जा वि –

पव्वज्जाए अभिमुहं, वाएति गिही अहव अण्णपासंडी ।
अववायविहारं वा ओसण्णुवगंतुकामं वा ॥६२६४॥

गिहिं अण्णपासंडिं वा पव्वज्जाभिमुहं सावगं वा छज्जीवणिय त्ति जाव सुत्ततो, अत्थतो जाव पिंडेसणा, एस गिहत्थादिसु अववादो । इमो पासत्थादिसु अववादो त्ति उवसपदा उज्जयविहारीणं उवसंपण्णो जो पासत्थादी सो अववादविहारठितो तं वा वाएज्ज । अहवा – पासत्थादिगाण जो संविग्गविहारं उवगंतुकामो – अब्भुट्ठिउकाम इत्यर्थः । तं वा पासत्थादिभावरहितं चेव वाएज्जा, जाव अब्भुट्ठेति ॥६२६४॥

एवं वायणा दिट्ठा, तेसिं समीवातो गहणं कहं होज्ज ?, उच्यते –

वितियपद समुच्छेदे, देसाहीते तहा पकप्पम्मि ।
अण्णस्स व असतीए, पडिक्कमंते व जयणाए ॥६२६५॥

जस्स भिक्खुस्स णिरुद्धपरियाओ वट्टति, णिरुद्धपरियागो णाम जस्स तिण्णि वरिसाणि परियायस्स संपुण्णाणि, तस्स य आयारपकप्पो अधिज्जियव्वो । आयरिया य कालगता, एसेव समुच्छेदो, अहवा – कस्सइ साहुस्स आयारपकप्पस्स देसेण अणधीते समुच्छेदो य जातो, एतेसिं सव्वो आयारपकप्पो पढमस्स वितियस्स देसो अवस्सं अहिज्जियव्वो ॥६२६५॥

सो कस्स पासे अहिज्जियव्वो ?, उच्यते –

संविग्गमसंविग्गे, पच्छाकड सिद्धपुत्त सारूवी ।
पडिक्कंते अब्भुठिते, असती अण्णत्थ तत्थेव ॥६२६६॥

सगच्छे चेव जे गीयत्था, तेसिं असति परगच्छे संविग्गमणुन्नसगासे, तस्स असति ताहे अण्णस्स, "[1]अण्णस्स वि असतीए" त्ति अण्णसंभोइयस्स वि असति णिआदिउक्कमेणं असंविग्गेसु । तेसु वि णितियादिट्ठाणाओ आवकहाए पडिक्कमावितो, अणिच्छे जाव अहिज्जइ ताव पडिक्कमावित्ता तहावि अणिच्छे तस्स व सगासे अहिज्जइ । सव्वत्थ वंदणादीणि ण हावेइ । एसेव जयणा । तेसिं असतीए पच्छाकडो त्ति जेण चारित्तं पच्छाकडं उन्निक्खंतो भिक्खं हिंडइ वा न वा ।

सारूविगो पुण सुक्किल्लवत्थपरिहिओ मुंडमसिहं धरेइ अभज्जगो अ पत्तादिसु भिक्खं हिंडइ ।

अण्णे भणंति – पच्छाकडा सिद्धपुत्ता चेव, जे असिहा ते सारूविगा । एएसिं सगासे सारूविगाइ पच्छाणुलोमेण अधिज्जति, तेसु सारूविगादिसु पडिक्कंते अब्भुट्ठिए त्ति सामातियकडो वतारोपिता अब्भुट्ठिओ, अहवा – पच्छाकडादिएसु पडिक्कंतेसु । एते सव्वे पासत्थादिया पच्छाकडादिया य अण्णं खेत्तं णेउं पडिक्कमाविज्जति, अणिच्छेसु तत्थेव त्ति ॥६२६६॥

"[2]देसाहीते" त्ति अस्य व्याख्या –

देसो सुत्तमहीयं, न तु अत्थतो व असमत्ती ।
असति मणुण्णमणुण्णे, इतरेतरपक्खियमपक्खी ॥६२६७॥

---

१ गा० ६२६५ । २ गा० ६२६५ ।

पुव्वद्धं कंठं। "असति मणुण्णमणुण्णे" त्ति पयं गयत्थं ति। "इतरेतर" त्ति असति णितियाण इतरे संसत्ता, तेसिं असति इतरे कुसीला एयं णेयव्वं, एसो वि अत्थो गतो चेव। तेसु वि जे पुव्वं संविग्गपक्खिता पच्छा संविग्गपक्खिएसु इमेरिसा जे पच्छाकडादिया मुंडगा ते। पच्छाकडादिया जावज्जीवाए पडिक्कमाविज्जति, जावज्जीवमणिच्छेसु जाव अहिज्जति ॥६२६७॥

तहवि अणिच्छेसु –

मुंडं च धरेमाणे, सिहं च फेडंत णिच्छ ससिहे वी।
लिंगेण असागरिए, ण वंदणादीणि हावेति ॥६२६८॥

जति मुंडं धरेति तो रयोहरणादी दव्वलिगं दिज्जति जाव उद्देसाती करेइ, ससिहस्स वि सिहं फेडेतुं एमेव दव्वलिगं दिज्जति, सिहं वा णो इच्छति फेडेउं तो ससिहस्सेव पासे अधिज्जति, सलिंगे ठिओ चेव असागारिए पदेसे सुयपूय ति काउं वंदणाइ सव्वं ण हावेइ, तेण विचारेयव्वं ॥६२६८॥

पच्छाकडयस्स पासत्थादियस्स वा जस्स पासे अधिज्जति।

तत्थ वेयावच्चकरणे इमो विही –

आहार उवहि सेज्जा, एसणमादीसु होति जतियव्वं।
अणुमोयण कारावण, सिक्खति पदम्मि सो सुद्धो ॥६२६९॥

जति तस्स आहारादिया अत्थि तो पहाणं। अह णत्थि ताहे सव्वं अप्पणा एसणिज्जं आहाराति उप्पाएव्वं ॥६२६९॥

अप्पणा असमत्थो –

चोदेति से परिवारं, अकरेमाणे भणाति वा सड्ढे।
अव्वोच्छित्तिकरस्स उ, सुयभत्तीए कुणह पूयं ॥६२७०॥

दुविहासती य तेसिं, आहारादी करेंति सव्वं तो।
पणहाणी य जयंतो, अत्तट्ठाए वि एमेव ॥६२७१॥

जो तस्स परिवारो, पासत्थादियाण वा सीसपरिवारो, सड्ढा वि संता ण करेंति, असंता वा णत्थि सड्ढा, एवं असतीए सो सिक्खगो आहारादी सव्वं पणगपरिहाणीते जयणाते तस्स विसोहिकोडीहिं सयं करेंतो सुज्झति। अप्पणो वि एमेव पुव्वं सुद्धं गेण्हति, असति सुद्धस्स पच्छा विसोहिकोडीहिं गेण्हंतो सिक्खइ। अववादपदेण विसुज्झइ ॥६२७१॥

॥ इति विसेस-णिसीहचुण्णीए एगूणवीसइमो उद्देसओ समत्तो ॥

विंशतितम उद्देशकः

भणिओ एगूणवीसइमो उद्देसओ । इदाणिं वीसइमो भण्णइ । तस्सिमो संबंधो –

हत्थादि-वायणंते, पडिसेहे वितहमायरंतस्स ।
वीसे दाणाऽऽरोवण, मासादी जाव छम्मासा ॥६२७२॥

पगप्पस्स हत्थकम्मसुत्तं जाव वायणंतं सुत्तं, एत्थ वितहमायरंतस्स दिट्ठमेयं एगूणविसाए वि उद्देसेसु आवज्जणपच्छित्तं, तेसिं आवण्णाणं वीसतिमउद्देसे दाणपच्छित्तेणं ववहारो भण्णति – दाणत्तेण पच्छित्तस्स आरोवणा दाणारोवणा । आरोवणत्ति – चडावणा, अहवा – जं दव्वादिपुरिसविभागेण दाणं सा आरोवणा । तं च कस्स ? कहं ? आयरियमुवज्झायाणं कताकतकरणाणं, भिक्खूण वि गीतमगीताण, थिरकयकरणसंघयण-संपण्णाणेयराण य गच्छंगताणं च सव्वेसिं तेसिं इह दाणपच्छित्तं भण्णइ, तं च इह सुत्ततो मासादी जाव छम्मासा, णो पणगादिभिण्णमासंता, ते वि अत्थतो भाणियव्वा ॥६२७२॥

एतेण संबंधेणागयस्स इमं पढमसुत्तं –

जे भिक्खू मासियं परिहारट्ठाणं पडिसेवित्ता आलोएज्जा-
अपलिउंचिय आलोएमाणस्स मासियं,
पलिउंचिय आलोएमाणस्स दोमासियं ॥सू०॥१॥

जे णिद्देसे, भिदिर् विदारणे, क्षुध इति कर्मणः आख्या, तं भिनत्तीति भिक्षुः, भिक्षणशीलो वा भिक्षुः, भिक्षाभोगी वा भिक्खू । मासान्निष्फन्नं मासिकं, यथा – कौशिकं, द्रौणिकं । अहवा – माणेसणातो वा मासो, जम्हा समयादिकालमाणाई असति तम्हा मासे समयावलियमुहुत्ता माणा तत्रान्तर्गतादित्यर्थः । अहवा – दव्वखेत्तकालभावमाणा असतीति मासो । दव्वतो जत्तिया दव्वा मासेणं असति, खेत्तओ जावत्तियं खेत्तं मासेण असति । कालतो तीसं दिवसा, भावतो जावतिया सुत्तत्थादिया भावा मासेणं गेण्हति । परिहरणं – परिहारो वज्जणं ति वुत्तं भवति । अहवा – परिहारो वहणं त्ति वुत्तं भवति, तं प्रायश्चित्तं । ष्ठा गतिनिवृत्तौ, तिष्ठन्त्य-स्मिन्निति स्थानं, इह प्रायश्चित्तमेव ठाणं, तं प्रायश्चित्तठाणं अणेगप्पगारं मूलुत्तरदप्पकप्पजयाजय भेदप्रभेदभिण्णं भवति । आङ्-मर्यादा वचने, लोकृ-दर्शने, आलोयणा णाम जहा अप्पणो जाणति तहा परस्स पागडं करेइ । परि सव्वतो भावे कुच-कौटिल्ये, तस्स पलिकुंचणे त्ति रूवं भवति, रलयोरैक्यम् इति कृत्वा, न पलिकुंचणा अपलिकुंचणा, तस्सेवं अपलिकुंचियं आलोएमाणस्स मासियं लहुगं गुरुगं वा पडिसेवणा-णिप्फण्णं दिज्जति । जो पुण पलिकुंचियं आलोएइ तस्स जं दिज्जति पलिउंचणमासो य मायाणिप्फण्णो गुरुगो दिज्जति । एस सुत्तत्थो ।

इदाणिं एसेवत्थो सुत्तफासियणिज्जुत्तीए वित्थरेणं भण्णति –

जे त्ति व से त्ति व के त्ति व, णिद्देसा होंति एवमादीया ।
भिक्खुस्स परूवणया, जे त्ति कओ होति णिद्देसो ॥६२७३॥

जे त्ति वा, से त्ति वा, के त्ति वा एवमादी । णिद्देसवायगा भवंति । जे-कारस्स णिद्देसदरिसणं – "जे असंतएणं अभक्खाणेणं अभक्खाइ" इत्यादि । से-गारो जहा – "से गामंसि वा" इत्यादि । के-कारो जहा – "कयरे आगच्छति दित्ते रूवे" इत्यादि ।

चोदगाह – किं कारणं सेसणिद्देसे मोत्तुं जेकारेणं निद्देसं करेइ ?

आचार्याह – एत्थ कारणं भण्णइ – सेगारस्स णिद्देसो पुव्वपगतापेक्खी जहा – 'भिक्खू वा" इत्यादि । ककारो संसयपुच्छाए वा भवति, जहा – "किं कस्स केण व कहं केवचिर कइविहे" इत्यादि । जेगारो पुण अणिद्दिट्ठवायगुद्देसे जहा – "जेणेव जं पडुच्च" इत्यादि, अहवा – जहा इमो चेव जेगारो उस्सग्गववायट्ठिएण पडिसेवियं व त्ति न निद्दिट्ठं गुरुं लहुं वा जयणाजयणाहिं वा तेण जेगारेण निद्देसो कृतेत्यर्थः अहवा – जेकारेण अनिद्दिट्ठभिक्खुस्सट्ठा निद्देसो ॥६२७३॥

सो भिक्खू चउव्विहो इमो –

नामं ठवणा भिक्खू, दव्वभिक्खू य भावभिक्खू य ।
दव्वे सरीरभविओ, भावेण उ संजतो भिक्खू ॥६२७४॥

नाम भिक्खू, जस्स भिक्खूत्ति नामं कयं ।

ठवणा भिक्खू चित्रकर्म लिहितो ।

दव्व भिक्खू दुविधो, आगमतो नो आगमतो य । आगमतो जाणए अणुवओगो दव्वमिति वचनात् । नोआगमओ जाणगादितिविधो, दोण्णि वि भासित्ता तव्वतिरित्तो एगभवियादितिविधो, एगभविओ णाम जो णेरइयतिरिए य – मणुयदेवेसु वा अणंतरं उव्वट्टित्ता जत्थ भिक्खू भविस्सति तत्थ उव्वज्जिहिति, वद्धाउओ णाम जत्थ भिक्खू भविस्सइ तत्थ आउयं बद्धं, अभिमुहणामगोत्तो णाम जत्थ भिक्खू भविस्सति जत्थ उववज्जिउकामो समोहतो पदेसा णिच्छूढा । अहवा – सयणधणादिपरिच्चइयं पव्वजाभिमुहो गच्छमाणो । एओ दव्वभिक्खू ।

इदाणिं भावभिक्खू । सो दुविधो – आगमतो णो आगमतो य । आगमतो जाणए भिक्खुसद्दोपयुत्ते, णो आगमतो इहलोगणिप्पिवासो संवेगभावितमती संजमकरणुज्जतो भावभिक्खू ॥६२७४॥

चोदगाह – त्वयोक्तम् –

भिक्खणसीलो भिक्खू, अण्णे वि ण ते अणऽण्णवित्तित्ता ।
णिप्पिसिएणं णातं, पिसितालंभेण सेसाउ ॥६२७५॥

"भिक्खाहारो वा भिक्खू", एवमन्ये रक्तपटादयोऽपि – भिक्षवो भवन्ति" ।

आचार्याह – न ते भिक्षवः । कुतः ?, येन तेषां भिक्षावृत्तिर्निरुपधा न भवति । आहूतमपि आधाकर्मदोषयुक्ता च तेषां वृत्तिः प्रलंबादि, अन्यान्यवृत्तयश्च नेन ते भिक्षवो न भवन्ति । तस्माद् साधव एव भिक्षवो भवन्ति, । नामाधाकर्मादिदोषवर्जिता .पधा वृत्तिः । "अणण्णवितित्ता" – अणण्ण-

वृत्तयश्च, भिक्षां मुक्त्वा नास्त्यन्या साधूनां वृत्तिः। एत्थ आयरिओ णिप्पिसिएण दिट्ठंतं करेति, सपिसियं जो भुंजति सो सपिसिओ, जो ण भुंजति सो णिप्पिसिओ। "पिसियालंभेण सेसा य" त्ति – जे पुण भणंति – "णिव्वि(प्पि)सा वयं जाव पिसियस्स अलाभो" त्ति, एवं भणंता सेसा न निप्पिसिया भवंतीत्यर्थः ॥६२७५॥

इमे वि एयस्सेव अत्थस्स पसाहगा दिट्ठंता–

अविहिंस बंभचारी, पोसहिय अमज्जमंसियाऽचोरा।
सति लंभ परिच्चाती, होंति तदक्खा ण पुण सेसा ॥६२७६॥

अहवा कोइ भणेज्जा – अहिंसगोऽहं जाव मिए ण पस्सामि।

अण्णो कोति भणेज्ज – बंभचारी अहं जाव मे इत्थी ण पडुप्पज्जति।

अहवा एवं भणेज्ज – आहारपोसही हं जाव मे आहारो ण पडुप्पज्जइ।

अहवा कोति भणेज्ज – अमज्जमंसवृत्ती हं जाव मज्जमंसे ण लहामि।

अहवा कोति भणेज्ज – अचोरक्कवृत्ती हं जाव परच्छिद्रं न लभामि।

एते असतिलंभपरिच्चागिणोवि णो तदक्खा भवंति, तेण अत्थेण अक्खा जेसिं भवति ते तदक्खा अहिंसगा इत्यर्थः, सेसा अनिवृत्तचित्तास्तदाख्या न भवंति, ते उ रक्तपटादयो न भवंति भिक्षवः, ससावद्य-भिक्षामतिलंभपरित्यागिनः साधव एव भिक्षवो भवन्ति। "सेसे" त्ति भिक्खग्गहणे वा साधूण चरगादियाण इमो विसेसो ॥६२७६॥

भण्णति –

अहवा एसणासुद्धं, जहा गेण्हंति भिक्खुणो।
भिक्खं णेवं कुलिंगत्था, भिक्खजीवी वि ते जती ॥६२७७॥

"एसणासुद्धं" ति – उग्गमादिसुद्धं, पच्छाणुपुव्विग्गहणं वा एयं, सेसं कंठं। अहवा – ते चरगादि-कुलिंगी न केवलं भिक्षुवृत्त्युपजीवी ॥६२७७॥

जाव इमाणि य भुंजति –

दगमुद्देसियं चेव, कंदमूलफलाणि य।
सयं गाहा परत्तो य, गेण्हंता कह भिक्खुणो ॥६२७८॥

"दगं ति – उदगं, "उद्देसियं" ति तमुद्दिश्य कृतं, "कंद" इति मूल-कंदादी, पद्मिन्यादि मूला, आम्रादि फला, एयाणि स्वयं गेण्हंता कहं भिक्खुणो भवंति ? इत्युक्तं भवति ॥६२७८॥

जो पुण सण्णिच्छियभिक्खू इमेरिसी वृत्ती भवति –

अच्चित्ता एसणिज्जा य, मिता काले परिक्खिता।
जहालद्धविसुद्धा य, एसा वित्ती उ भिक्खुणो ॥६२७९॥

अगरहिता अगरहियकुलेसु वा भत्तिबहुमाणपुव्वं वा दिज्जमाणी अ त्ता वातालीसदोसविसुद्धा एसणिज्जा भत्तट्ठप्पमाणजुत्ता मिता। "काले" त्ति दिवा। अहवा – गामणगरदेसकाले। अहवा ततियापोरिसीए

दायगादिदोसविसुद्धा। परिक्खिता "जहालद्धा" णाम संजोयणादिदोसवज्जिता, एरिसवृत्तिणो भिक्खू भवंति ॥६२७९॥ "भिक्खणसीले" त्ति गतं।

इदाणि "[1]भिनत्ति" त्ति भिक्षु—"भिदिर्" विदारणे, "क्षुध" इति कर्मणः आख्यानं, तं भिनत्तीति भिक्षुः, एष भेदको गृहीतः सो दुविहस्स भवति—दव्वस्स य भावस्स य। भेदकग्रहणाच्च तज्जातीय-द्वयं सूचितं—भेदगं भेत्तव्वं च।

जतो भण्णति—"दव्वे य भाव" गाहा।

तत्थ—

> दव्वे य भाव भेयग, भेदण भेत्तव्वगं च तिविहं तु।
> णाणाति भाव-भेयण, कम्म खुहेगट्ठतं भेज्जं ॥६२८०॥

दव्वे तिविहो—दव्वभेदको दव्वभेयणाणि दव्वभेयव्वं। दव्वभेदको रहकारादि, दव्वभेदणाणि परसुमादीणि, दव्वतो भेत्तव्वं कट्ठमादियं। भावे भावभेदको भिक्षुः, भावभेदणाणि णाणादीणि, भावभेत्तव्वं कम्मं ति वा, खुहं ति वा, वोण्णं ति वा, कलुसं ति वा, वज्जं ति वा, वेरं ति वा, पंको ति वा, मलो ति वा, एते एगट्ठिता। एवं जाव भेज्जं भवति ॥६२८०॥

इमानि भिक्षोरेकार्थिकानि शक्रेन्द्रपुरन्दरवत् भिक्खु त्ति वा जति त्ति वा खमग त्ति वा तवस्सि त्ति वा भवंते त्ति वा।

एतेसिं इमा व्याख्या—

> भिंदंतो वा वि खुधं, भिक्खू जयमाणओ जई होइ।
> तवसंजमे तवस्सी, भवं खवेंतो भवंतो त्ति ॥६२८१॥

भिनत्तीति भिक्षुः। यती प्रयत्ने। तपः सन्तापे, तप अस्याःस्तीति तपस्वी। अहवा—अविकरणाभि-धानादिदं सूचितं—तपसि भवः तापसः। अहवा—तपः संयमासना तवस्सी नारकादिभवाणमंतं करेंतो भवंतो। नारकादिभवे वा क्षपयतीति क्षपकः, एत्थ भावभिक्षुणा अधिकारो ॥६२८१॥ भिक्खु त्ति गयं।

इदाणि मासो तस्स णामादिछक्कओ णिक्खेवो—

> नामं ठवणा दविए, खेत्ते काले तहेव भावे य।
> मासस्स परूवणया, पगतं पुण कालमासेणं ॥६२८२॥

णामठवणाओ गताओ, दव्वमासो दुविहो—आगमओ णोआगमओ। आगमओ जाणओ अणुवउत्तो। णो आगमतो जाणगसरीयं भवियसरीरं, जाणगभवियअइरित्तो इमो—

> दव्वे भविओ णिव्वित्तिओ य खेत्तम्मि जम्मि वण्णणया।
> काले जहिं वण्णिज्जइ, णक्खत्तादी व पंचविहो ॥६२८३॥

भविओ त्ति एगभविओ बद्धाउ अभिमुहणामगोत्तो य। अहवा—ज्ञशरीर भव्यशरीर व्यतिरिक्तः। "णिव्वित्तिओ" त्ति—मूलगुणणिव्वित्तितो उत्तरगुणणिव्वित्तिओ य। तत्थ मूलगुणणिव्वित्ती जेहिं जीवेहिं तप्पढमताए णामगोत्तस्स कम्मस्स उदएण मासदव्वस्स उदएणं मासदव्वपाउग्गाइं दव्वाइं गहियाइं।

---

[1] सू० १ चू०।

उत्तरगुणणिव्वत्तणाणिव्वत्तितो चित्रकर्मणि मासत्थं वा लिहितो। जम्मि खेत्ते मासकप्पो कीरइ, जम्मि वा खेत्ते ठविज्जइ जम्मि वा खेत्ते वण्णिज्जइ, सो खेत्तमासो। कालमासो जम्मि वा कालमासो ठाविज्जइ। अहवा – कालमासो सावणभद्दवयादी। अहवा – सलक्खणणिप्फण्णो णक्खत्तादी पंचविहो इमो – णक्खत्तो चंदो उडु आइच्चो अभिवड्ढिओ य ॥६२८३॥

तत्थ णक्खत्तचंदा इमे –

अहोरत्ते सत्तवीसं, तिसत्तसत्तट्ठिभाग णक्खत्तो।
चंदो अउणत्तीसं विसट्ठि भागा य बत्तीसं ॥६२८४॥

णक्खत्तमासो सत्तावीसं अहोरत्तो, "तिसत्त" त्ति एक्कवीसं च सत्तसट्ठिभागा – एस लक्खणओ य परिमाणओ य णक्खत्तमासो। चंदमासो अउणत्तीसं अहोरत्ते बत्तीसं च बिसट्ठिभागे ॥६२८४॥

उडुमासो तीसदिणो, आइच्चो तीस होइ अद्धं च।
अभिवड्ढितो य मासो, पगतं पुण कम्ममासेणं ॥६२८५॥

उडुमासो तीसं चेव पुण्णा दिणा। आदिच्चमासो तीसं दिणा दिणद्धं च। अभिवड्ढितो अहिमासगो भण्णति। एतेसिं पंचण्हं पदाणं इह पगतं ति अधिकारो कम्ममासेणं, कम्ममासो त्ति उडुमासो ॥६२८५॥

अभिवड्ढियस्स इमं पमाणं –

एक्कत्तीसं च दिणा, दिणभागसयं तहेक्कवीसं च।
अभिवड्ढिओ उ मासो, चउवीससतेण छेदेणं ॥६२८६॥

एगत्तीसं दिवसा, दिवसस्स चउवीससयखंडियस्स इगवीसुत्तरं ३१ $\frac{121}{124}$ च भागसतं एयं अधिमासगप्पमाणं ति। एतेसिं च णक्खत्तादीयाण मासाणं उप्पत्ती इमा भण्णति –

अभीइमादी चंदो चारं चरमाणो जाव उत्तरासाढाण अंतं गओ ताव अट्ठारससता तीसुत्तरा सत्तसट्ठी भागाणं भवंति, एतावता सव्वणक्खत्तमंडलं भवति ॥ $\frac{1830}{67}$। एतेसिं सत्तसट्ठीए चेव भागो, भागलद्धं सत्तावीसं अहोरत्ता अहो रत्तस्स य इगवीसं सत्तसट्ठिभागा २७ $\frac{21}{67}$ एस णक्खत्तमासो परिमाणलक्खणओ। अहवा – एयं चेव फुडतरं भण्णति – अभियस्स चंदयोगो इगवीसं सत्तसट्ठिभागा। अवरे छण्णक्खत्ता पण्णरस मुहुत्ता भोगाओ एतेसिं छण्हं सतभिसा भरणी अद्दा अस्सेसा साती जेट्ठा य। एतेसिं छण्हं तिण्णि अहोरत्ता।

अण्णे छण्णक्खत्ता पणयालमुहुत्तभोगी तं जहा – तिण्णि उत्तरा, पुणव्वसु, रोहिणी, विसाहा य। एते णव अहोरत्ता। तिण्हं मज्झे मेलित्ता बारस जाता।

अण्णे पण्णरस णक्खत्ता तीसमुहुत्तभोगी, तं जहा – अस्सिणी, कित्तिया, मिगसिर, पुस्स, मघा तिन्नि पुव्वा, हत्थ, चित्ता, अणुराहा, मूल, सवण, धणिट्ठा, रेवती य, एते पण्णरस अहोरत्ता। बारस मिलिता जाया सत्तावीस सव्वे। रुक्खमंडलपरिभोगकालो णक्खत्तमासो भण्णति।

इदाणिं चंदमासो, तस्स णिदरसणं, तंजहा – सावण बहुलपडिवयातातो आरब्भ जाव सावणपोण्णिमा समत्तो – एस परिमाणतो चंदमासो। एवं भद्दवतादितो वि सेसा दट्ठव्वा। लक्खणओ पुण आसाढपोण्णिमाए वतिक्कंताए सावणबहुलपडिवयाए रुद्दमुहुत्तसमयपढमाओ अभितिस्स भोगो पवत्तति चंदेण सह। इमो णव मुहुत्ते चउवीसं बिसट्ठिभागे छावट्ठिं सत्तसट्ठिं चोण्णियाओ य।

एते इमेंण विहिणा भवंति–जे अभीयस्स इगवीसं सत्तसट्ठी भागा ते सह च्छेदेण वासट्ठीए गुणिता जाता तेरससया विउत्तरा, अंसाणं छेदो इगतालीसं सत्ता चउप्पण्णा ($\frac{२१}{६७}$ + ६२ = $\frac{१३०२}{४१५४}$) तेण भागे ण देइ त्ति अंसा तीसगुणा कायव्वा, $\frac{१३०२ + ३० = ३९०६०}{४१५४}$

$$९ \frac{१६७४}{४१५४} + ६२ = \frac{१०३७८८}{४१५४} \quad ६२ = \frac{१६७४}{५७} = २४\frac{६६}{६७}$$

तेहिं भागेहिते लद्धं नव मुहुत्ता, ९ सेसं वासट्ठीए गुणेयव्वं, एत्थ उ वट्टो (छेदो) कज्जति-वासट्ठिभागेणं, एक्कतालीसताणं चउप्पण्णाण वासट्ठिभागेण सत्तसट्ठी $\frac{६२}{६७}$ भवंति, एक्केण गुणितं एत्तियं ९ चेव सत्त सट्ठीए ६७ भागे हिते लद्धं चउवीसं वासट्ठिभागा $\frac{२४}{६२}$ छावट्ठं च सेसचुण्णीया भागा $\frac{६६}{६७}$। एत्थ अभीतिं – भोगे सवणादिया सव्वे णक्खत्तभोगा छोढव्वा जाव उत्तरासाढाणं असंपत्तो, तत्थ इमा रासी जाता अट्ठसया एगूणविसुत्तरा ८१९ मुहुत्ताणं, चउव्वीसं च वासट्ठिभागे $\frac{२४}{६२}$ छावट्ठिं चुण्णीया भागा। ६६ एत्थ पुणो अभीतिभोगो य छोढव्वो, सवणभोगो य सम्मत्तो ३०, धणिट्ठाण य छव्वीसं २६ मुहुत्ता बायालीसं वावट्ठिभागा दो य चुण्णिया ४२, ६२, २ भागा, ताहे इमो रासी, एयम्मि ८८४, ९०, ६२, १३२, ६७ भुत्तै। सावणपोण्णिमा सम्मत्ता।

एत्थ चउतीसुत्तरसयस्स सत्तसट्ठीए भागो हायव्वो, दो लद्धा, ते उवरिं पक्खित्ता, जाता बाणउतीए वावट्ठिभाग त्ति काउं बावट्ठिए भातिता एक्को लद्धो सो उवरि पक्खित्तो, सेसा तीसं वावट्ठिभागा ठिता ८८५ जे पंचासीया अट्ठसया मुहुत्ताणं तेसिं ३० तीसाए भागा लद्धा एगूणतीसं अहोरत्ता, जे सेसा पण्णरसा मुहुत्ता ते ६२ वासट्ठीए गुणिता जाता णवसया तीसुत्तरा, एत्थ जे ते सेसा तीसं वावट्ठिभागा ते पक्खित्ता जाया णवसया सट्ठी ९६०। एयस्स भागो तीसाए, लद्धा वत्तीसं, विसट्ठिभागा एते अउणत्तीसाए अहोरत्ताणं हेट्ठा ठविया विसट्ठित्ता छेदसंहिता। एवं एसो चंदमासो अउणत्तीसं दिवसा विसट्ठिभागा य वत्तीसं भवंति।

इदाणिं उडुमासो भण्णति – एक्कं अहोरत्तं वुड्ढीए वावट्ठिं भागे छेत्ता तस्स एक्कसट्ठी भागा चंदगतीए तेहिं समत्ती भवति।

कहं पुण ?, उच्यते – जति अट्ठारसहिं अहोरत्तसएहिं सट्ठेहिं अट्ठारसतीसुत्तरासया लब्भंति तो एक्केण अहोरत्तेण किं लब्भामो। एवं तेरासियकम्मे कते आगयं एगसट्ठिहं वावट्ठिभागा $\frac{६१}{६२}$ अहो रत्तस्स, एसा एक्कसट्ठी तीसाए तिहीहिं मासो भवति त्ति तीसाए गुणेयव्वा, ताहे इमो रासी जातो १८३०। एयस्स एगसट्ठीए भागो हायव्वो लद्धा तीसं तिही, एसो एवं उडुमासो णिप्फण्णो, एस चेव कम्ममासो, सहाणमासो य भण्णति। एस चेव रासी वावट्ठिहितो चंदमासो वि लब्भति।

इदाणिं आइच्चमासो भण्णइ। सो इमेण विहिणा आणेयव्वो – आदिच्चो पुस्सभागे चउसु अहोरत्तेसु अट्ठारससु य मुहुत्तेसु दक्षिणायणं पवत्तति, सो य अप्पणो चारेण सव्वणक्खत्त-मंडलचारं चरित्ता जाव पुणो पुस्सस्स अट्ठ अहोरत्ता चउव्वीसं मुहुत्ता भुत्ता।

एस सव्वो आइच्चस्स णक्खत्तभोगकालो पिंडेयव्वो, इमेण विहिणा –

सयभिसयभरणीओ, अद्दा अस्सेस साति जेट्ठा य।
वच्चंति मुहुत्ते एक्कवीसंति छच्च अहोरत्ते॥
तिण्णुत्तरा विसाहा, पुणव्वसू रोहिणी य बोधव्वा।
गच्छंति मुहुत्ते तिण्णि चेव वीसं च अहोरत्ते॥

अवसेसा णक्खत्ता, पण्णरस वि सूरसहगया जंति ।
बारस चेव मुहुत्ते, तेरसय समे अहोरत्ते ॥
अभिति छच्च मुहुत्ते, चत्तारि य केवले अहोरत्ते ।
सूरेण समं गच्छइ, एत्तो करणं च वोच्छामि ॥

एयं सव्वं मेलियं इमो अहोरत्तरासी भवति ॥३६६॥

एयं आदिच्चं वरिसं । एयस्स बारसहिं भागो भागलद्धं आदिच्चमासो । अहवा – पंचगुणस्स सट्ठीए भागो भागलद्धं तीसं अहोरत्ता, अहोरत्तस्स य अद्धं, एस आदिच्चमासो पमाणओ लक्खणतो य । एत्थ वि सव्वमासा अप्पणो भागहारेहिं उप्पज्जंति ।

इदाणिं अभिवड्ढिओ –

छच्चेव अतीरित्ता, हवंति चंदम्मि वासम्मि ।
बारसमासेणेते, अड्डाइज्जेहिं पूरितो मासो ॥
एवमभिवड्ढितो खलु, तेरसमासो उ बोधव्वो ॥

वर्षमिति वाक्यशेषः ।

सट्ठीए अतीताए, होति तु अधिमासगो जुगद्धम्मि ।
बावीसे पक्खसते, होई बितिओ जुगंतम्मि ॥

अहवा – णक्खत्तादीमासाण दिणाण य णं इमातो पंचविहातो पमाणवरिसदिवसरासीतो अट्ठारस-सततीसुत्तराओ आणिज्जति । तेसु पंचप्पमाणा वरिसा इमे – चंदं चंदं अभिवड्ढियं पुणो चंदं अभिवड्ढियं । तेसिमं करणं – चंदमासो एगूणतीसं २९ दिवसे, दिवसस्स य बासट्ठिभागा बत्तीसं $\frac{३२}{६२}$, एस चंद मासो ।

बारमासवरिसं ति – एस बारसगुणो कज्जति, ताहे इमं भवति अडयाला तिण्णिसया दिवसाणं, बिसट्ठिभागाण य तिण्णिसया चुलसीया, ते बावट्ठी भइया लद्धा छद्दिवसा, ते उवरिं पक्खित्ता जाता तिण्णि सता चउप्पण्णा, ३५४ सेसा बारस, ते छेयंसा अद्धेण उवट्टिता जाया एगतीसं भागा $\frac{६}{३१}$, एयं चंदवरिसपमाणं । "तिण्णि चंदवरिस त्ति तो तिगुणं कज्जति, तिगुणकयं इमं भवति बासट्ठहियं दिणसहस्सं, एगतीसविभागा य अट्ठारस[1] । एयं तिण्ह चंदवरिसाणं पमाणं । एत्तो अभिवड्ढियकरणं भण्णति सो एक्कतीसं दिणाति एक्कवीससयं चउवीससयं भागाणं, एरिस "बारस मासा वरिस" त्ति काउं बारसहिं गुणेयव्वा, गुणिए इमो रासी, तिण्णि सया बोहत्तरा दिणाणं चउवीससया भागा चोदससया बावण्णा[2], छेदेण भातिते लद्धा एक्कारस, ते उवरिं छूढा जाता तिण्णिसया दिवसाणं तेसीया हिट्ठा अट्ठासीति सेसगा, ते सच्छेया चउहिं उवट्टिता जाया एक्कती-सभागा बावीसं, एयं अभिविड्ढियवरिसप्पमाणं ।

"दो अभिवड्ढियवरिस" त्ति [3]एस रासी दोहिं गुणेयव्वो, दोहिं गुणिए इमो रासी सत्तसया छावट्ठा दिवसाण इगतीस भागा य चवोयाला ए एक्कतीसभातियालद्धो तत्थेक्को, सो उवरिं छूढो, जाया सत्तसया सत्तट्ठा एक्कतीसतिभागा य तेरसा । ७६७, $\frac{१३}{३१}$ । एस अभिवड्ढियवरिसरासी पुव्वभणियचंदवरिसरासिस्स मेलितो । कहं ?, उच्यते – दिवसा दिवसेसु, भागा भागेसु । ताहे पंचवरिसरासी "सरत्तविसुद्धो भवइ उ" अट्ठारससया तीसुत्तरा ॥१८३०॥ एस धुवरासी ठाविज्जति । एयाओ धुवरासीओ सव्वमासा णक्खत्तादिया उप्पाइज्जंति अप्पप्पणो भागहारेहिं ।

१–१०६२ $\frac{१८}{३१}$ । २– ३१ $\frac{१२१}{१२४}$ ३७२ $\frac{१४५२}{१२४}$ । ३–३८३ $\frac{२२}{३१}$ ।

जओ भणितं –

भा-ससि-रितु-सूरमासा, सत्तट्ठि वि एगसट्ठि सट्ठी य ।
अभिवड्ढियस्स तेरस, भागाणं सत्त चोयाला ॥६२८७॥

सत्तट्ठिं णक्खत्ते, छेदे बावट्ठिमेव चंदम्मि ।
एगट्ठि अ उडुम्मि सट्ठीं पुण होइ आइच्चे ॥६२८८॥

सत्तसया चोयाला, तेरसभागाण होंति नायव्वा ।
अभिवड्ढियस्स एसो, नियमा छेदो मुणेयव्वो ॥६२८९॥

अट्ठारसया तीसुत्तरा उ ते तेरसेसु संगुणिता ।
चोयाल सत्तभइया, छावट्ठनिगिवट्टिया य फलं ॥६२९०॥

भा इति णक्खत्तमासो, ससि त्ति चंदमासो, रिउ त्ति वा कम्ममासो वा एगट्ठं, सूरमासो य, एतेसि मासाणं जहासंखं भागहारा इमेरिसा – सत्तसट्ठी विसट्ठि एगसट्ठी सट्ठी य अभिवड्ढिय मासस्स भागहारो सत्तसया चोयाला तेरसभागेणं । एतेसि इमा उप्पत्ती जइ तेरसेहिं चंदमासेहिं बारस अभिवड्ढियमासा लब्भंति तो बावट्ठीए चंदमासेहिं कति अभिवड्ढियमासा लभिस्सामो एवं तेरासिए कते आगतं सत्तावण्णमासो मासस्स य तिण्णि तेरसभागा, एते पुणो सवण्णिया जाता सत्तसया चोयाला तेरसभागाणं ति, एतेहिं अट्ठारसण्हं सयाणं तीसुत्तराणं तेरसगुणिताण २३७९० भागो हायव्वो, लद्धं एक्कतीसं दिणा, सेसं सत्तसया छव्विसा ते दोहिं उवट्टिया जाया सयं एक्कवीसुत्तरं अंसाणं, छेदे वि सयं चउवीसुत्तरं, एस अभिवड्ढियवरिसबारसभागो अधिमासगो । जो पुण ससिसूरगतिविसेसणिप्फण्णो अधिमासगो सो अउणत्तीसं दिणा विसट्ठिभागा य बत्तीसं भवंति ।

कहं ?, उच्यते – "ससिणो य जो विसेसो आइच्चस्स य हवेज्ज मासस्स तीसाए संगुणितो अधिमासओ चदो । आइच्चमासो तीसं दिणा तीसा य सट्ठिभागा, चंदमासो अउणत्तीसं दिणा विसट्ठिभागा य बत्तीसं । एतेसि विसेसे कते सेसमुद्धरितं एक्कतीसं बासट्ठिभागा अण्णे तीसं चेव बासट्ठिभागा, एते उवट्टिया परोप्परं छेदगुणकाउं एगस्स सरिसच्छेदो नेट्ठो अंसेसु पक्खित्ता तेसु वि च्छेयं सवट्टिएसु एगसट्ठि बासट्ठि भागा (उ) जाया अहोरत्तस्स, एस एक्को तिही सोमगतीए सो तीसगुणितो विसट्ठिभातिओ चंदमासपरिमाणणिप्फण्णो अहिमासगो भवति ।

अहवा – इमेण विहिणा कायव्वं – जइ एक्केण आइच्चमासेण एक्का सोमतिही लब्भति तो तीसाए आदिच्चमासेहिं कतितिही लब्भामो. आगतं तीसं सोमतिहीओ, एस आदिच्चचंदवरिसअभिवड्ढियछम्मासे य प्रतिदिनं प्रतिमासं च कला वड्ढमाणी तीसाए मासेतु मासो पूरति ति, एसो अधिमासगो चंदमासप्पमाणो चंदो अधिमासगो भण्णति, एयं चेव अभिवड्ढि पडुच्च अभिवड्ढियवरिसं भण्णति ।

भणियं च सूरपण्णत्तीए – "तेरस य चंदमासो, एसो अभिवड्ढिओ त्ति णायव्वो" वर्षमिति वाक्यशेषः । तस्स बारसभागो अधिमासगो अभिवड्ढियवर्षमासेत्यर्थः । अथवा – अधिमासगप्पमाणं इमं एगतीसं दिणा अउणतीस मुहुत्ता बिसट्ठि भागा एस सतरसा, एते कहं भवंति ? उच्यते – जं एगवीसउत्तरसयं अंसाणं तीसगुणं कायव्वं तस्स भागो सयेण चउवीसउत्तरेण भागलद्धं अउणतीसं मुहुत्ता, सेसस्स अद्धे ताव दो, तत्थ विसट्ठि भागा सत्तरस भवंति, एवं वा एकतीसदिणसहियं अधिकमासपमाणं । एसो पंचविहो कालमासो भण्णति ॥६२९०॥

इदाणिं भावमासो सो दुविहो आगमतो णो आगमतो य –

मूलादिवेदओ खलु, भावे जो वा वियाणतो तस्स ।
न हि अग्गिणाणओऽग्गी-णाणं भावो ततोऽणण्णो ॥६२९१॥

जो जीवो धण्ण-मास-मूल-कंद-पत्त-पुप्फ-फलादि वेदेति सो भावमासो, जो वा आगमतो उवउत्तो मास इति पदत्थजाणओ ।

चोदगाह – "ण हि अग्गिणाणओ अग्गि" त्ति नत्वग्निज्ञानोपयोगतः आत्मा अग्न्याख्यो भवति ।

एवमुक्ते चोदकेनाचार्याह – "णाणं भावो ततो णऽण्णो" त्ति णाणं ति ज्ञानं, भावः अधिगमः उपयोग इत्यनर्थान्तरमिति कृत्वा अग्निद्रव्योपयुक्त आत्मा तस्मादग्निद्रव्यभावादन्यो न भवति ॥६२९१॥

एत्थ छव्विहो मासणिक्खेवो, कालमासेण अधिकारो, तत्थ वि उडुमासेण, सेसा सीसस्स विकोवणट्ठा भणिया. मासे त्ति गयं ।

इदाणिं "[1]परिहारे" त्ति, तस्स इमो णिक्खेवो –

णामं[1] ठवणा[2] दविए[3], परिगम[4] परिहरण[5] वज्जणो[6]ग्गहे[7] चेव ।
भावा[8]वण्णे[9] सुद्धे[10], णव परिहारस्स नामाइं ॥६२९२॥

भावपरिहारो दुविधो कज्जति (आवण्णपरिहारो सुद्धो य) आवण्णपरिहारितो एस चरित्ताइयारो । अहवा – भावपरिहारितो दुविधो पसत्थो अप्पसत्थो य । पसत्थे जो अण्णाणमिच्छादि परिहरति, अपसत्थो जो णाणदंसणचरित्ताणि परिहरति । एवं भावे तिविहे कज्जमाणे दसविहो परिहारनिक्खेवो भवति[2] ॥६२९२॥

एतेसिं इमा व्याख्या – णामठवणातो गतातो, वतिरित्तो दव्वपरिहारो ।

कंटगमादी दव्वे, गिरिनदिमादीसु परिरओ होति ।
परिहरण धरण भोगे, लोउत्तर वज्ज इत्तरिए ॥६२९३॥

लोगे जह माता ऊ, पुत्तं परिहरति एवमादी उ ।
लोउत्तरपरिहारो, दुविहो परिभोग धरणे य ॥६२९४॥

जो कंटगादीणि परिहरति आदिग्गहणेणं खाणू विससप्पादी । परिगमपरिहारो णाम जो गिरिं नदिं वा परिहरंतो जाति, आदिग्गहणातो समुद्दमडविं वा । परिगमो त्ति वा पज्जहारो त्ति वा परिरओ त्ति वा एगट्ठं । परिहरणं परिहारो दुविहो लोइओ लोउत्तरो य । तत्थ लोगे इमो – "लोगे जह" पुव्वद्धं कंठं ।

लोउत्तरपरिहारो दुविहो – परिभोगे धरणे य । परिभोगे परिभुंजति पाउणिज्जतीत्यर्थः । धारणपरिहारो नाम जं संगोविज्जति पडिलेहिज्जति य, ण य परिभुंजति ।

---

१ सू० १ । "[2]भावपरिहारो दुविहो य पसत्थो । अपसत्थो जो अन्नाणमिच्छिद्दिट्ठी परिहरति आवण्णपरिहारितो एवं नवविधोभवति, भावसामान्यतो अट्ठविधो भवति । अहवा – सुद्ध परिहारितो एस अणइआरो, आवन्न परिहारितो एस चरित्तायारो ।" अयं पाठ स्तावत् टाइपअंकितप्रतौ टिप्पणीरूपेण सूचितः ।

दुविहो – लोइओ लोउत्तरिओ य । लोइओ इत्तरितो आवकहिओ य । इत्तरिओ सूयगमतगादिदसदिवसवज्जणं, आवकहितो जहा णड-वरुड-छिंपग-चम्मार-डुंबादि । लोउत्तरिओ दुविहो – इत्तरिओ आवकहितो य । तत्थ इत्तरिओ सेज्जायरदाणअभिगमसड्ढादि, आवकहितो रायपिंडो । अहवा - "अट्ठारस पुरिसेसु ।"

अणुग्गहपरिहारो –

खोडादिभंगऽणुग्गह, भावे आवण्णसुद्धपरिहारे ।
मासादी आवण्णो, तेण तु पगतं न अन्नेहिं ॥६२९५॥

"खोडभंगो" त्ति वा, "उक्कोडभंगो" त्ति वा, "अक्खोडभंगो" त्ति वा एगट्ठं, आङ् मर्यादायां । खोडं णाम जं रायकुलस्स हिरण्णादि दव्वं दायव्वं वेट्ठिकरणं परं परिणयणं चोरभडादियाण य चोल्लगादिप्पदाणं तस्स भंगो खोडभंगो, तं रायणुग्गहेणं मज्जायाए भंजंतो एक्कं दो तिण्णि वा सेवति जावतियं अणुग्गहो से कज्जति तत्तियं कालं सो दव्वादिसु परिहरिज्जति तावत् कालं न दाप्यतेत्यर्थः । एस अणुग्गह परिहारो । भावपरिहारो दुविहो – आवण्णपरिहारो सुद्धपरिहारो य । तत्थ सुद्धपरिहारो जो वि सुद्धा पंचयामं अणुत्तरं धम्मं परिहरइ – करोतीत्यर्थः । विसुद्धपरिहारकप्पो वा घेप्पइ । आवण्णपरिहारो पुण जो मासियं वा जाव छम्मासियं वा पायच्छित्तं आवण्णो तेण सो सपच्छित्ती असुद्धो अ विसुद्धचरणेहिं साहूहिं परिहरिज्जति । इह तेण अहिकारो ण सेसेहिं (अधिकारो) [1]विकोवणट्ठा पुण परूविया ॥६२९६॥

इदाणिं [1]ठाणं, तस्सिमो चोद्दसविहो निक्खेवो –

नामं[1] ठवणा[2] दविए[3], खेत्त[4]द्धा[5] उड्ढओ[6] विरति[7] वसही[8] ।
संजम[9] पग्गह[10] जोहो[11], अचल[12] गणण[13] संधणा[14] भावे ॥६२९६॥

णामठवणातो गयाओ, जाणगसरीर भवियवइरित्तं दव्वट्ठाणं इमं –

सच्चित्तादी दव्वे, खेत्ते गामादि अद्धदुविहा उ ।
तिरियनरे कायठिती, भवठिति चेवावसेसाण ॥६२९७॥

सच्चितदव्वट्ठाणं अचित्तं मीसं । सचित्तदव्वट्ठाणं तिविधं – दुपयं चउप्पयं अपयं । दुपयट्ठाणं दिणे जत्थ मणूसा उवविसंति तत्थ ठाणं जायति, चउप्पदाणं पि एवं चेव, अपदाणं पि जत्थ गरुयं फलं निक्खिप्पइ तत्थ ठाणं संजायति । अचित्तं जत्थ फलगाणि साहजंतादि णो निक्खिप्पंति तत्थ ठाणं । एतेसिं चेव दुपदादियाण समलंकिताण पूर्ववत् घडस्स वा जलभरियस्स ठाणं (मीसं) । खेत्तं गामणगरादियं तेसिं ठाणं खेत्तट्ठाणं, अहवा – खेत्तो गामणगरादियाण ठाणं ।

अद्धा काल इत्यर्थः, सो दुविधो उवलक्खितो जीवेसु अजीवेसु य । अजीवेसु जा जस्स ठिई । संसारिजीवेसु दुविधा ठिई – कायठिई भवठिती य, तत्थ तिरियणरेसु अणेगभवग्गहणसंभवातो कायठिई, सेसाणं ति – देवनारगाणं एगभवसंचिट्ठणा भवठिई, अहवा – कालट्ठाणं समयावलियादि णेयं ॥६२९८॥

---

[1] सू० १ ।

ठाण निसीय तुअट्टण, उड्डाती विरति सव्व देसे य ।
संजमठाणमसंखा, पग्गह लोगीतर दो पणगा ॥६२६८॥

"[1]उड्ड" ति तज्जातीयग्गहणातो निसीयणतुयट्टणा वि गहिता, तेसिं उद्धट्ठाणं आदि तं पुण काउस्सग्गं णिसीयणं उवविसणं तुअट्टणं संपिहणं उ । "विरति" ठाणं दुविधं—देसे सव्वे य, तत्थ देसे सावयाणं अणुव्वया पंच, सव्वे साधूण महव्वया पंच । [2]वसहिट्ठाणं उवस्सओ जस्स वा जं आवस्सहट्ठाणं । "[3]संजमठाणं" ति वा अज्झवसायठाणं ति वा परिणामठाणं ति वा एगट्ठं । एत्थ पढमसंजमट्ठाणे पज्जय-परिमाणं सव्वागासपदेसग्गं, सव्वागासपदेसेहिं अणंतगुणितं पढमं संजमट्ठाणं पज्जवग्गेण भवति । ततो बितियादि-संजमट्ठाणा उवरुवरिविसुद्धीए अणंतभागाहिगा णेया, एवं लक्खणा सामण्णतो संजमठाणा असंखेज्जा । विभागतो सामातियछेदसंजमठाणा दो वि सरिसा असंखेज्जे ठाणे गच्छंति, ततो परिहारसहिता ते चेव असंखेज्जठाणे गच्छंति, ताहे परिहारितो वोच्छिज्जंति । तदुपरि सामातियछेदोवट्ठावणिया अण्णे असंखेज्जठाणे गच्छंति, ताहे ते वोच्छिज्जंति । तदुवरि सुहुमसंपरायसंजमठाणा केवलकालतो अंतोमुहुत्तिया असंखेज्जा भवंति, ततो अणंतगुणं एगं अहक्खायं संजमट्ठाणं भवति । इमा ठवणा । "पग्गहठाणं" दुविहं – लोइयं, इतरं लोउत्तरं । "दो पणग" त्ति लोइयं पंचविहं ॥६२६८॥

तं जहा –

रायाऽमच्च पुरोहिय, सेट्ठी सेणावती य लोगम्मि ।
आयरियादी उत्तरे, पग्गहणं होइ उ निरोहो ॥६२६९॥

राया जुवराया अमच्चो सेट्ठी पुरोहितो । उत्तरे पग्गहे ठाणं पंचविहं – आयरिए उवज्झाए पवत्ति थेरो गणावच्छेइ । प्रकर्षेण ग्रहः, प्रकृष्टो वा ग्रहः, प्रधानस्य वा ग्रहणं प्रग्रह इत्यर्थः ॥६२६९॥

इदाणिं जोहट्ठाणं पंचविहं इमं—

आलीढ पच्चलीढे, वेसाहे मंडले समपदे य ।
अचले य निरेयकाले, गणणे एगादि जा कोडी ॥६३००॥

वामुरुअं अग्गओ काउं दाहिणं पिट्ठतो वामहत्थेण धणुं घेत्तूण दाहीणेण [4]अपगच्छइ त्ति आलीढं । तं चिय विवरीयं पच्चालीढं । आलीढं अंतो पण्हितातो काउं अग्गतले बाहि जं रहट्ठिओ वा जुज्झइ तं वइसाहं । जाणूरुजंघे य मंडले काउं जं जुज्झइ तं मंडलं । जं पुण तेसु चेव जाणूरुसु आयतेसु समपादट्ठितो जुज्झति तं समपादं । अण्णे भणंति—जं एतेसिं चेव ठाणाणं जहासंभवं चलियठितो पासतो पिट्ठतो वा जुज्झति तं छट्ठं चलियणाम ठाणं ।

"[5]अचलट्ठाणं" णाम जहा – परमाणुपोग्गलेणं भंते ! निरेए कालतो केवच्चिरं होति ?, जहण्णेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं असंखेज्ज कालं, असंखेज्जा उस्सप्पिणि ओसप्पिणीओ । निरेया निश्चल इत्यर्थः । एवं दुपदेसादियाण वि वत्तव्वं । "[6]गणण" त्ति गणियं, तस्स ठाणा अणेगविहा, जहा एक्कं दहं सतं सहस्सं दससहस्साइं सयसहस्सं दहशतसहस्साइं कोडी । उवरिं पि जहासंभवं भाणियव्वं ॥६२६९॥

---

१ गा० ६२९५ । २ गा० ६२९५ । ३ गा० ६२९५ । ४ पश्चान्मुखमपसरति । ५ गा० ६२९५ । ६ गा० ६२९५ ।

इदाणि "संवणा" सा दुविहा – दव्वे भावे य ।

पुणो एक्केक्का दुविहा—छिण्णसंवाणा अछिण्णसंवाणा य ।

तत्थ दव्वे "छिण्णमछिण्णसंवणा" इमा—

रज्जूमादि अछिण्णं, कंचुगमादीण छिण्णसंघणया ।
सेढिदुगं अच्छिण्णं, अपुव्वगहणं तु भावम्मि ॥६३०१॥
सीसाओ ओदइयं, गयस्स मीसगमणे पुणो छिण्णं ।
अपसत्थं पसत्थं वा भावे पगतं तु छिन्नेणं ॥६३०२॥

जं सूत्रं वा मुंजं वा रज्जुं अच्छिण्णं संवेति सा अच्छिण्णसंवणा । अण्णोण्णखंडाणं इमा छिण्णसंघणा जहा कंचुगादीणं । भावसंवणा दुविहा— छिण्णा अच्छिण्णा य, तत्थ अच्छिण्णसंवणाए सेढिदुगं उवसामग-सेढी खवगसेढी य । उवसामगसेढीए पविट्ठो अणंताणुबंधिपमिइ आढत्तो उवसामेउं न थक्कइ ताव जाव सव्वं मोहणिज्जं उवसामितं । खवगसेढीए वि एवं चेव अपुव्वभावग्गहणं करेंतो न थक्कइ ताव जाव सव्वं मोहं खवियं। एसा अच्छिण्णसंवणा । एवं अपसत्थाओ वि पसत्थसम्मत्तभावं संकंतस्स जं पुणो अप्पसत्थमिच्छत्ता-दिभावं संकमति । एसा अपसत्थछिण्णभावसंघणा ।

अहवा – भावट्ठाणं ओदइय-उवसमिय-खइय-खओवसमिय-परिणामिय-सन्निवाइयाणं अप्पप्पणो भाव-सरूवठाणं भण्णइ । एत्थ अधिकारो भावट्ठाणेण, तत्थ वि छिण्णभावसंवणाए ।

कहं ? उच्यते – जेण सो पसत्थभावाओ अपसत्थं भावं गओ, तत्थ य मासियादि आवण्णो, पुणो आलोयणापरिणओ पसत्थं चेव भावं संधेति ॥६३०२॥

इयाणि पडिसेवणा, सा इमा दुविहा –

मूलुत्तर पडिसेवण, मूले पंचविह उत्तरे दसहा ।
एक्केक्का वि य दुविहा, दप्पे कप्पे य नायव्वा ॥६३०३॥

मूलगुणातियारपडिसेवणा उत्तरगुणाइयारपडिसेवणा य । मूलगुणातियारे पाणातिवायादि पंचविहा । उत्तरगुणेसु दसविहा इमा – पिंडस्स जा विसोही, समितीतो ६, भावणाओ य ७, तवो दुविहो ८, पडिमा ९, अभिग्गहा १० ।

अहवा – अणागयमतिक्कंतं कोडिसहियं णियट्टियं चेव सागारमणागारं परिमाणकडं णिरवसेसं संकेयं अद्धापच्चक्खाणं चेति ।

अहवा – उत्तरगुणेसु अणेगविहा पडिसेवणा कोहातिया । मूलुत्तरेसु दुविहा पडिसेवणा । सा पुणो एक्केक्का दुविहा – दप्पेण कप्पेण वा ॥६३०३॥ दप्पकप्पा पुव्वभणिता ।

सीसो पुच्छति –

किह भिक्खू जयमाणो, आवज्जति मासियं तु परिहारं ।
कंटगपहे व छलणा, भिक्खू वि तहा विहरमाणो ॥६३०४॥

पुव्वद्धं कंठं आयरियो भणति – कंटगपहे व पच्छद्धं कंठं ॥६३०४॥

किं चान्यत् —

तिक्खम्मि उदगवेगे, विसमम्मि वि विज्जलम्मि वच्चंतो ।
कुणमाणो वि पयत्तं, अवसो जह पावती पडणं ॥६३०५॥ पूर्ववत्

दृष्टान्तोपसंहार —

तह समणसुविहियाणं, सव्वपयत्तेण वी जयंताणं ।
कम्मोदयपच्चतिया, विराहणा कस्सइ हवेज्जा ॥६३०६॥

अण्णा वि हु पडिसेवा, सा उण कम्मोदएण जा जतणा ।
सा कम्मक्खयकरणी, दप्पाऽजय कम्मजणणी उ ॥६३०७॥ पूर्ववत्

पुणरप्याह चोदक — किमेकान्तेनैव कर्मोदयप्रत्यया प्रतिसेवना उतान्योऽपि कश्चित्प्रतिसेवनाया अस्ति भेदः ? उच्यते, अस्तीति ब्रूमः । यतमानस्य या कल्पिका प्रतिसेवना सा कर्मोदयप्रत्यया न भवति, ण य तत्थ कम्मबंधो, जतो तं पडिसेवंतस्स वि कम्मखओ भवति । जो पुण दप्पेण कप्पेण वा पत्ते अजयणाए पडिसेवणा सा कम्मं जणेति — कर्मबंधं करोतीत्यर्थः ।

यतश्चैवं ततः इदं सिद्धं भवति —

पडिसेवणा वि कम्मोदएण कम्ममवि तं निमित्तागं ।
अण्णोण्णहेउसिद्धी, तेसिं बीयंकुराणं व ॥६३०८॥

कंठ्या । पडिसेवणाए हेऊ (कम्मोदयो, कम्मोदयहेऊ) पडिसेवणा, एवमेपामन्योन्यहेतुत्वं, तस्यापि प्रसाधको दृष्टान्तः — यथा बीजांकुरयोः ॥६३०८॥

दिट्ठा पडिसेवणा कम्महेतू पमादमूला या, सा य खेत्तओ कहं हुज्जा ?, उवस्सये बहि वा वियारादि-णिग्गयस्स । कालतो दिया वा रातो वा । भावओ दप्पेण वा कप्पेण वा अजयणाए पडिसेवति । मासातिअति-चारपत्तेण संवेगमुवगएण आलोयणा पउंजियव्वा । इमं च चिंतंतेण णज्जति केवलं जीवितघातो भविस्सति, ससल्लमरणेण दीहसंसारी भवति त्ति काउं भण्णति —

तं ण खमं खु पमादो, मुहुत्तमवि अच्छितुं ससल्लेणं ।
आयरियपादमूले, गंतूणं उद्धरे सल्लं ॥६३०९॥

आलोयणाविहाणेण पच्छित्तकरणेण य अतियारसल्लं उद्धरति विसोधयतीत्यर्थः, ॥६३०९॥

जम्हा ससल्लो न सिज्झति, उद्धरियसल्लो य सिज्झइ ।

तम्हा तेण इमं चिंतियव्वं —

अहयं च सावराही, आसो इव पत्थिओ गुरुसगासं ।
वइतग्गामे संखडिपत्ते आलोयणा तिविहा ॥६३१०॥

अप्पाणं अतियारसल्लसल्लियं णाउं तस्स विसोहणट्ठं गुरुसमीवे प्रस्थितो । कहं च ?, उच्यते अश्ववत् । तं च गुरुसमीवं गच्छंतो वइयाए खद्धादाणियगामे वा संखडीए वा अपडिवज्झंतो गच्छइ, गुरुसमीवं पत्तो आलोयणं देति, सा य आलोयणा तिविहा इमा — विहारालोयणा, उवसंपयालोयणा, अवराहालोयणा य ॥६३१०॥

आसे इव औपम्ये अस्य व्याख्या –

सिग्घुज्जुगती आसो, अणुवत्तति सारहिं ण अत्ताणं ।
इय संजममणुवत्तति, वइयाइ अवंकिओ साहू ॥६३११॥

सिग्घं मंदं वा उज्जुवक्कं वा वक्कं वा सारहिस्स छंदमणुवत्तमाणो गच्छति, णो य अप्पछंदेणं चारि पाणियं वा अणुयत्तइ। एवं साधू वि जहा जहा संजमो भवति तहा तहा संजममणुवत्तमाणो गच्छइ, णो वइयादिसु सायासोक्खट्ठया पडिवज्भंतो वइयादिसु वा ण वक्केण पहेण गच्छति। आलोयणपरिणओ जति वि अणालोतिए कालं करेति तहावि आराहगो विसुद्धत्वात् ॥६३११॥

तत्थ विहारालोयणा इमा –

आलोयणापरिणओ, सम्मं संपट्ठिओ गुरुसगासे ।
जइ अंतरा उ कालं, करेज्ज आराहओ तहऽवि ॥६३१२॥

पक्खिय चउ संवच्छर, उक्कोसं बारसण्ह वरिसाणं ।
समणुण्णा आयरिया, फड्डगपतिया वि विगडेंति ॥६३१३॥

संभोतिया आयरिया पक्खिए आलोएंति, रायणियस्स ।

राइणितो वि ओमरातिणियस्स आलोएति ।

जति पुण राइणिओ ओमो वाऽगीयत्थो चाउम्मासिए आलोएति । तत्थ वि असतीते संवच्छरिए आलोएति । तत्थ वि असतीते जत्थ मिलति गीयत्थस्स उक्कोसेणं बारसहिं वरिसेहिं दूरातो वि गीयत्थसमीवं गंतुं आलोएयव्वं । फड्डगवतिया वि आगंतुं पक्खियादिसु मूलायरियस्स आलोएंति ॥६३१३॥

तं पुण ओहविभागे, दरभुत्ते ओह जाव भिण्णो उ ।
तेण परेण विभाओ, संभमसत्थादिसुं भइतं ॥६३१४॥

तं विहारालोयणं ओहेण विभागेण वा देंति । तत्थ ओहेण जे साधू समणुण्णा "दरभुत्ते" त्ति भोत्तुं आढत्ताणं पाहुणता आगता ते आगंतुगा ओहेण आलोएंति, जइ य अतियारो पणगं दस पण्णरस वीस भिण्णमासो य तो ओहालोयणं दाउं भुंजति । अह भिण्णमासातो परेण अइयारो मासादितो भवति तो वीसुं समुद्दिसित्ता विभागेण आलोएंति । "संभमसत्थादिसु भतियं" ति संभमो अग्गिसंभमादि सत्थेण वा समं गताणं अंतरा सत्थसण्णिवेसे पाहुणया आगया होज्ज, सत्थो य चलिउकामो, ते य मासादिआवण्णा, भायणाणि य णत्थि जेसु वीसुं समुद्दिसिस्संति, ताहे ओहेणं आलोएत्ता एक्कट्ठ समुद्दिसित्ता पच्छा विभागेणं आलोयव्वं विस्तारेणेत्यर्थः ॥६३१४॥

इदाणि आलोयणाए कालनियमो भण्णति –

ओहे एगदिवसिया, विभागतो एगऽणेगदिवसा तु ।
रत्तिं पि दिवसओ वा, विभागओ ओहओ दिवसे ॥६३१५॥

ओहालोयणा णियमा एक्कदिवसता, अप्पावराहत्तणओ आसण्णभोयणकालत्तणओ य । विभागालोयणा एगदिवसिया वा होज्ज, अणेगदिवसिया वा होज्ज ।

कहं पुण अणेगदिवसिया वा होज्ज ? बहुग्रवराहत्तणश्रो । बहुं ग्रालोएयव्वं ग्रायरिया वावडा होज्जा, ण बहुं वेलं पडिच्छंति । ग्रालावगो वा वावडो होज्ज । एवं ग्रणेगदिवसिता भवति । विभागालोयणा नियमा दिवसतो रत्ति वा भवति । ग्रोहालोयणा णियमा दिवसतो, जेण रातो ण भुंजति ॥६३१५॥

ग्रोहालोयणाए इमं विहाणं—

अप्पा मूलगुणेसुं, विराहणा अप्पउत्तरगुणेसुं ।

अप्पा पासत्थाइसु, दाणग्गह संपग्रोगोहा ॥६३१६॥

कंठ्या, एवं ग्रालोएत्ता मंडलीए एक्कट्ठं समुद्दिसंति ॥६३१६॥

विहारविभागालोयणाए इमं कालविहाणं –

भिक्खाति-णिग्गएसुं, रहिते विगडेति फड्डगवती उ ।

सव्वसमक्खं केती, ते वीसरियं तु कहयंति ॥६३१७॥

ग्रादिग्गहणेणं वियारभूमिं विहारभूमिं वा जाहे सीसपडिच्छया णिग्गया ताहे फड्डगपती एगाणियस्स ग्रायरियस्स ग्रालोएति ।

केइ ग्रायरिया भणंति—जह फड्डगपती सेहादियाणं सव्वसमिक्खं ग्रालोएंति ।

किं कारणं ?, उच्यते – जं किंचि विस्सरियं पदं होज्ज तं ते सारेंहिति – कहयंतीत्यर्थः ।

तं पुण केरिस ग्रालोएति ? काए वा परिवाडीए ? ग्रत उच्यते –

मूलगुण पढमकाया, तेसु वि पढमं तु पंथमादीसु ।

पादप्पमज्जणादी, बितियं उल्लादि पंथे वा ॥६३१८॥

दुविहो ग्रवराहो—मूलगुणावराहो उत्तरगुणावराहो य । एत्थ पढमं मूलगुणा ग्रालोएयव्वा, तेसु वि मूलगुणेसु पढमं पाणातिवातो, तत्थ वि पढमं पुढविक्कायविराधणे जा पंथे वच्चंतेण विराहणा कया, थंडिल्लाग्रो ग्रथंडिल्लं ग्रथंडिल्लाग्रो वा थंडिल्लं संकमंतेण पदा ण पमज्जिता, ससरक्खे मट्टियादिहत्थमत्तेहिं वा भिक्खग्गहणं कतं, एवमादि पुढविकायविराहणं ग्रालोएंति । ततो ग्राउक्काए उदउल्लेहिं हत्थेहिं मत्तेहिं भिक्खग्गहणं कयं, पंथे वा ग्रजयणाए उदगमुत्तिण्णो, एवमादि ग्राउक्काए ॥६३१८॥

ततिए पतिट्ठियादी, अभिधारणवीयणादि वायुम्मि ।

बीतादिघट्ट पंचमे, इंदिय अणुवातिग्रो छट्ठे ॥६३१९॥

ततिए त्ति-तेउक्काए परंपरादिपतिट्ठियगहियं सजोतिवसहीए वा ठितो एवमादि तेउक्काए । वाउकाए जं घम्मत्तेण वाहिं णिग्गंतुं वातो ग्रभिधारेउं भत्तादि सरीरं वा वीयणादिणा वीवियं, एवमादि वाउक्काए । पंचमे वणस्सतिकाए बीयादिसंघट्टणा कया, भिक्खादि वा गहिता, एवमादि वणस्सतिकाए । "छट्ठे" त्ति तसकाए, तत्थ इंदियाणुवाएण ग्रालोए, पुव्वं बेइंदियाइयारं ततो तेइंदि-चउरिंदि-पंचेंदियाइयारं । एवमादि पाणातिवाग्रो ॥६३१९॥

दुब्भासियहसितादी, बितिए ततिए अजाइतो गहणे ।

घट्टण-पुव्वरतादी, इंदिय आलोग मेहुणे ॥६३२०॥

बिनिए मुसावाए, तत्थ किंचि दुब्भासितं भणितं, हासेण मुसावाओ भासिओ, एवमादि मुसावाए। ततिए त्ति अदत्तादाणे, तत्थ अयाचियं तणडगलादि गहियं होज्जा, उग्गहं वा अणणुण्णवेत्ता कातियादि वोसिरितं होज्ज, एवमादि अदिण्णादाणे। मेहुणे, चेतिते महिमादिसु जणसम्मद्दे इत्थिसंघट्टणफासो सातिज्जिओ होज्ज, पुव्वरयकीलियादि वा अणुसरियं होज्ज, इत्थीण वा वयणाणि मणोहराणि इंदियाणि दट्ठु ईसि त्ति रागं गतो होज्ज, एवमादि मेहुणे ॥६३२०॥

मुच्छातिरित्त पंचमे, छट्ठे लेवाड अगय सुंठादि।
उत्तरभिक्खऽविसोही, असमितत्तं च समितीसु ॥६३२१॥

परिग्गहे उवकरणादिसु मुच्छा कया होज्ज, अतिरित्तोवही वा गहितो होज्ज। "पंचमे" त्ति परिग्गहे एवमादि। 'छट्ठं" त्ति राईभोयणे, तत्थ लेवाडगपरिवासो कओ होज्ज, अगतं किंचि सुंठमादि वा सण्णिहियं किंचि परिभुत्तं होज्ज, एवमादि रातीभोयणे। एवमादि मूलगुणेसु आलोयणा। उत्तरगुणेसु अविसुद्धभिक्खग्गहणं कयं होज्ज, समितीसु वा असमितो होज्ज, गुत्तीसु वा अगुत्तो ॥६३२१॥

संतम्मि य बलविरिए, तवोवहाणम्मि जं न उज्जमियं।
एस विहारवियडणा, वोच्छं उवसंपणाणत्तं ॥६३२२॥

कंठ्या। गता विहारालोयणा।

इदाणि उवसंपदालोयणा भण्णति –

एगमणेगा दिवसेसु होति ओहेण पदविभागो य।
उवसंपयावराहे, णायमणायं परिच्छंति ॥६३२३॥

सा उवसंपदालोयणा समणुण्णाण वा असमणुण्णाण वा, तत्थ समणुण्णाण सगासे समणुण्णो उवसंपज्जंतो दुगणिमित्तं उवसंपज्जति ॥६३२३॥

जतो भण्णति –

समणुण्णदुगणिमित्तं, उवसंपज्जंते होइ एमेव।
अमणुण्णेणं णवरिं, विभागतो कारणे भइतं ॥६३२४॥

सुत्तट्ठा दंसणचरित्तट्ठा जेण ते चरणं प्रति सरिसा चेव। "एमेव" त्ति जहा विहारालोयणा तहा उवसंपदालोयणं देंतो एगदिवसेण वा अणेगदिवसेसु वा ओहेण वा पदविभागेण वा एवं समणुण्णे उवसंपदालोयणं देति। "अण्ण" इति अण्णसंभोइओ अमणुण्णो वा असंविग्गो तेसु अण्णत्थ उवसंपज्जंतेसु तिगनिमित्तं उवसंपदा णाणदंसणचरित्तट्ठा, विभागालोयणा य, ण ओहतो। संभमसत्थादिसु वा कारणेसु ओहेण वि देति एस भयणा। अवराहे वि एवं जो विसेसो भण्णिहिति सो उवसंपज्जमाणो दुविहो — णाओ अणाओ वा, जत्थ जो णज्जति सो ण परिक्खिज्जति, जो ण णज्जति सो आवस्सगाईहिं पएहिं परिक्खिज्जति। एयं उवरि वक्खमाणं ॥६३२४॥

दियरातो उवसंपय, अवराहे दिवसओ पसत्थम्मि।
उव्वाते तद्दिवसं, तिण्हं तु वइक्कमे गुरुगा ॥६३२५॥

उवसंपदालोयणा सा (ओहेण) विभागेण वा (ओहेण) सा दिवसतो, न राओ। जा पुण अवराहाऽऽलोयणा सा विभागेण दिवसतो, न रातो। दिवसतो वि विट्ठिवति वातादिदोसवज्जिते "पसत्थे" दव्वातिसु य पसत्थेसु, एयं पि वक्खमाणं, अवराहे वि ओहालोयणा अववादकारणे भतियव्वा ॥६३२५॥

"उव्वातो" त्ति पच्छद्धं अस्य व्याख्या –

पढमदिणे म विफाले, लहुओ बितिय गुरु ततियए लहुगा।
तस्स विकहणे ते च्चिय, सुद्धमसुद्धो इमेहिं तु ॥६३२६॥

अमणुण्णो जो उवसंपज्जणट्ठयाए आगओ आयरिओ तं जति पढमदिवसे ण विफालेति न पृच्छतीत्यर्थः। कुतो आगतो ? कहिं वा गच्छति ? किं णिमित्तं वा आगतो ?" एवं अपुच्छमाणस्स तद्दिवसं मासलहुं, बितियदिवसे जति ण पुच्छति चउलहुं, "तिण्हं तु वइक्कमे गुरुगा" इति चउत्थदिवसे जति ण पुच्छति ङ्क।

सो वि पुच्छिओ भणति – "कहेहामि" मासलहुं, बितियदिवसे मासलहुं, ततियदिवसे ४ (ल), चउत्थदिवसे अकहेंतस्स चउगुरुगा। अहवा – "तद्दिवसे" त्ति पढमदिवसे "उव्वाते" श्रान्ता इति कृत्वा ण पुच्छितो आयरिओ सुद्धो। अह बितियदिवसे ण पुच्छति तो मासगुरुं। ततिए ण पुच्छति चउलहुं, चउत्थे दिवसे चउगुरुं। एवं तेण पुच्छिएण वा अक्खायं जेण कज्जेण आगओ। तस्स पुण आगंतुगस्स आगमो सुद्धो असुद्धो वा हवेज्ज, एत्थ चत्तारि भंगा। इमेण विहुणा भंगा कायव्वा – णिग्गमणं पि आगमणं पि असुद्धं। एवं चउरो भंगा कायव्वा। तत्थ णिग्गमो इमेहिं कारणेहिं असुद्धो भवति ॥६३२६॥

अहिकरण[1] विगति[2] जोए[3], पडिणीए[4] थद्ध[5] लुद्ध[6] णिद्धम्मे[7]।
अलसा[8]णुबद्ध[9]वेरो[10], सच्छंदमती परिहियव्वे ॥६३२७॥

"[1]अहिकरणे" त्ति अस्य व्याख्या –

गिहिसंजयअहिकरणे, लहुगा गुरुगा तस्स अप्पणो छेदो।
विगती ण देति घेत्तुं, भोत्तुद्धरितं च गहिते वि ॥६३२८॥

जति गिहत्थेण समं अहिकरणं काउं आगओ तं आयरिओ संगिण्हइ तो चउलहुगा। अह संजएण समं अहिकरणं काउं आगतं संगिण्हइ तो चउगुरुगा, तस्स पुण आगंतुगस्स पंचराइंदिओ छेदो। अहवा – पुट्ठो अपुट्ठो वा इमं भणेज्ज – "विगति" त्ति "विगती ण" पच्छद्धं ॥६३२८॥

किं च –

ण य वज्जिया य देहो, पगतीए दुब्बलो अहं भंते !।
तब्भावितस्स एण्हिं, ण य गहणं धारणं कत्तो ॥६३२९॥

सो य आयरिओ विगतिगिण्हणाए ण देति जोगवाहीणं। "[2]गहियं" ति अण्णेहि भुत्तुद्धरियं तं पि नाणुजाणइ, किं वा भगवं अम्हे ण पव्वजितवसभस्स तुल्ला, अण्णं च अम्हे सभावेणेव दुब्बला विगतीए बलामो अण्णं च अम्हे विगतिभावियदेहा इदाणिं तस्स अभावे ण बलामो, ण य सुत्तत्थे घेत्तुं समत्था, पुव्वगहिए वि धरितुं समत्था ण भवामो ॥६३२९॥

---

१ गा० ६३२७। २ गा० ६३२८।

"जोगे पडिणीए" त्ति दो दारे जुगवं वक्खाणेति –

एगंतरणिव्विगती, जोगो पच्चत्थिको त्र तहि साहू ।
चुक्कखलितेसु गेण्हति, छिड्डाणि कहेति तं गुरुणं ॥६३३०॥

पुच्छिओ भणाति – तस्स आयरियस्स एगंतरउववासेण जोगो वुज्झइ. एगंतर आयंबिलेण वा, जोगवाहिस्स वा ते आयरिया विगतिं ण विसज्जंति, एवमादि कक्खडो जोगो त्ति तेण आगओ । पुच्छिओ वा भणेज – तम्मि गच्छे एगो साधू मम "पच्चत्थिगो" त्ति – पडिणीओ । कहं चि सामायारिजोगे चुक्केति, वीसरिए खलिए वि दुप्पडिलेहादिके गेण्हति, अच्चत्थं खरंटेति, चुक्कखलिताणि वा अवराहपदच्छिद्दाणि गेण्हति, से य गुरुणं कहेति, पच्छा ते गुरवो मे खरंटेति । अहवा – अणाभोगा चुक्कखलिताणि भण्णंति, जं पुण आभोगओ असामायारि करेइ तं छिद्दं भण्णति ।:६३३०॥

इदाणि "थद्ध-लुद्ध" दो वि भण्णति –

चंकमणादी उट्ठण, कडिगहणे झाओ णत्थि थद्धेवं ।
उक्कोस सयं भुंजति, देंतऽण्णेसिं तु लुद्धेवं ॥६३३१॥

आयरिया जइ वि चक्रमणं करेंति तहावि अब्भुट्ठेयव्वा, आदिग्गहणातो जइ वि काइयभूमि गच्छंति आगच्छंति वा, एवमादि तत्थ अब्भुट्ठंताणं अम्हं कडीओ वाएण गहिताओ, अब्भुट्ठाणपलिमंथेण य अम्ह सज्झाओ तत्थ ण सरति । अह ण अब्भुट्ठेमो तो पच्छित्तं देंति खरंटेति वा, एवं थद्धो भणाति ।

जो लुद्धो सो भणाति – जं उक्कसयं किंचि वि सिहरिणिलड्डुगादि लब्भति तं अप्पणा भुंजंति, अण्णेसि वा बाल-वुड्ढ-दुब्बल-पाहुण्णगाण वा देंति, अम्हे ण लब्भामो, लुद्धो एवं भणाति ॥६३३१॥

"णिद्धम्म अलसे" दो वि जुगवं भणाति –

आवासियमज्जणया, अकरण अति उग्गदंड णिद्धम्मे ।
बालादट्ठा दीहा, भिक्खाऽलसिओ य उब्भामं ॥६३३२॥

जो णिद्धमो सो पुच्छिओ भणति – जइ कहिं चि आवसिता निसीहिया वा ण कज्जति ण पमज्जति वा, णितो पविसंतो वा । डंडगादि वा णिक्खिवंतो ण पमज्जति, तो आयरिया "उग्गो" – दुट्ठत्ति वुत्तं भवति, पच्छित्तं देंति, अहवा – उग्गं पच्छित्तडंडं देंति, णिरणुकंपा इत्यर्थः ।

जो आलस्सिओ सो भणाति – अप्पणो पज्जत्ते वि बालवुड्ढाणं अट्ठाए दीहा भिक्खायरिया तम्मि गच्छे हिंडिज्जइ, खुड्डलकं कक्खडं वा तं खेत्तं दिणे दिणे "उब्भामं" ति भिक्खायरियं गम्मइ प्रतिदिनं ग्रामान्तरं गम्यत इत्यर्थः ।

अपज्जत्ते आगया गुरु भणंति – "किमिह वसहीए महाणसो जं अपज्जत्ते आगता ? वच्चह पुणो, हिंडह खेत्तं, कालो भायणं च पहुप्पह," एवमादि दीहभिक्खायरियाए [1]भत्थितो आगतोमित्ति ॥६३३२॥

अणुवद्धवेरो य सच्छंदो य दो वि जुगवं भणाति –

पाणसुणगा य भुंजंति, एक्कउ असंखडेवमणुबद्धो ।
एक्कल्लस्स ण लब्भा, चलितुं पेवं तु सच्छंदो ॥६३३३॥

---

१ भर्त्सितः ।

अणुबद्धवेरो भणाति – थेवं वा बहुं वा असंखडं काउं जहा सुणगा पाणा वा परोप्परं तक्खणादेव – एक्कभायणे भुंजंति एवं तत्थ संजया वि, णवरं – मिच्छादुक्कडं दाविज्जंति । अम्हे उ ण सक्केमो हियत्थेणं सल्लेणं तेहिं समं समुद्दिसिउं । एवं आगओ अणुवद्धवेरो भणाति ।

जो सच्छंदो सो भणाति – सण्णाभूमिं पि एगाणियस्स गंतुं ण देति, णियमा संघाडसहिएहिं गंतव्वं । तं असहमाणो आगओ हं । एते अधिकरणादिए पदे आयरितो सोउं परिच्चयइ, न संगृण्हातीत्यर्थः ॥६३३३॥

अधिकरणादिएहिं पदेहिं आगयस्स इमं पच्छित्तं –

समणऽधिकरणे पडिणीय लुद्ध अणुबद्धवेरे चउगुरुगा ।
सेसाण होंति लहुगा, एमेव पडिच्छमाणस्स ॥६३३४॥

जो समणेहिं सममधिकरणं काउं आगतो, जो य भणाति–तत्थ मे पडिणीतो साहू, जो य लुद्धो, जो अणुबद्धवेरो, एतेसु चउसु चउगुरुगा, सेसेसु छसु गिहिअहिकरणे य चउलहुगा । जो य आयरिओ एते पडिच्छति तस्स वि एवं चेव पच्छित्ता ॥६३३४॥

अहवा – जे एते दोसा वुत्ता एतेसिं एक्केण वि णागओ होज्ज ।

इमेहिं दोसेहिं आगओ होज्ज –

अहवा एगेऽपरिणते, अप्पाहारे य थेरए ।
गिलाणे बहुरोगे य, मंदधम्मे य पाहुडे ॥६३३५॥

एस सोलसमे व्याख्यातो, तथापि इहोच्यते –

एक्कल्लं मोत्तूणं वत्थादिअकप्पिएहि सहितं वा ।
सो उ परिसा व थेरा, अहऽण्णसेहादि वट्टावे ॥६३३६॥

आयरियं एगागिं मोत्तुं ण गंतव्वं, असणवत्थादिअकप्पिया सेहसहियं च मोत्तुं ण गंतव्वं । "अप्पाहारो" णाम जो आयरिओ संकियसुत्तत्था, तं चेव पुच्छिउं वायणं देति, तारिसं वि मोत्तुं ण गंतव्वं । "थेरं" ति अजंगमं गुरुं, परिसा वा से थेरा, तेसिं सेहाण थेराण य अहं चेव वट्टावगो आसि ॥६३३६॥

तत्थ गिलाणो एगो, जप्पसरीरो तु होति बहुरोगी ।
णिद्धम्मा गुरु-आणं, न करेंति ममं पमोत्तूणं ॥६३३७॥

तत्थ वा गच्छे एगो जरादिणा गिलाणो, तस्स अहं चेव वट्टावगो आसी । बहूहिं साहारणरोगेहिं जप्पसरीरो भणति तस्सवि अहं चेव वट्टावगो आसी । मंदधम्मा गुरु आणं न करेंति मम पुण एगस्स करेंति । संजय गिहीहिं वा सह अधिकरणं काउं आगतो, गुरुस्स वा केणइ सह अहिकरणं वट्टति ॥६३३७॥

एतारिसं विउसज्ज, विप्पवासो ण कप्पती ।
सीसपडिच्छायरिए, पायच्छित्तं विहिज्जती ॥६३३८॥

पुव्वद्धं कंठं । एरिसं मोत्तुं जइ सीसो आगओ पडिच्छओ वा, जो य पडिच्छइ आयरिओ तेसिं इमं पच्छित्तं ॥६३३८॥

एगो गिलाणपाहुड, तिण्ह वि गुरुगा उ सीसगादीणं ।
सेसे सीसे गुरुगा, लहुय पडिच्छे गुरू सरिसं ॥६३३९॥

जो एगागि गुरुं मोत्तुं आगओ, गिलाणं वा मोत्तुं, अधिकरणं वा काउं आगओ, एतेसु सीसस्स पडिच्छगस्स पडिच्छमाणस्स य आयरियस्स तिण्हवि चउगुरुगा। जेण अण्णे सेसा अपरिणय अप्पाहार थेर बहुरोग मंदधम्मा य-एतेसु जइ सीसो आगओ चउगुरुगा, अह पडिच्छतो तो चउलहुगा, गुरुस्स भयणा। "सरिसं व" त्ति जइ सीसं गेण्हति तो चउगुरुगा, पडिच्छगे चउलहुगा. ॥६३३९॥

अहवा पाहुडे इमं –

सीसपडिच्छे पाहुड, छेदो राइंदियाणि पंचेव।
आयरियस्स उ गुरुगा, दो चेव पडिच्छमाणस्स ॥६३४०॥

सीसस्स पडिच्छगस्स वा अहिकरणं काउं अण्णगच्छे संवसंतस्स पंचराइंदिअ छेदो भवति, गुरुस्स पडिच्छमाणस्स चउगुरुगा। एते पढमभंगे णिग्गम-दोसा भणिता, आगमो वि से असुद्धो भवति, वइयादिसु पडिवज्जंतो आगतो तत्थ वि पच्छित्तं वत्तव्वं ॥६३४०॥ एस पढमभंगो गतो, वितियभंगो वि एरिसो चेव, णवरं आगमो सुद्धो।

इमे उक्कमेण ततिय-चउत्थभंगा –

एतद्दोसविमुक्कं, वतियादी अपडिबद्धमायायं।
दाऊण व पच्छित्तं, पडिवद्धं वी पडिच्छेज्जा ॥६३४१॥

इमो चउत्थो भंगो। एतेसु जे अधिकरणादी णिग्गमदोसा तेसु वज्जितो आगमणदोसेसु य वइयादिसु अपडिवज्झंतमागओ जो, एस चउत्थभंगिल्लो सुद्धो।

ततियभंगे णिग्गमदोसेसु सुद्धो आगमणदोसेसु वइयादिसु जो पडिवज्झंतो आगओ तं ण पडिच्छति। अववादतो वा तस्स पच्छित्तं दाउं पडिच्छंति, ण दोषेत्यर्थः ॥६३४१॥

सुद्धं पडिच्छिऊणं, अपरिच्छिण्णे लहुग तिण्णि दिवसाइं।
सीसे आयरिए वा, पारिच्छा तत्थिमा होति ॥६३४२॥

यथोक्तदोषरहितं सुद्धं पडिच्छित्ता तिण्णि दिवसाणि परिक्खियव्वो-किं धम्मसहितो ण व त्ति, जइ ण परिक्खंति तो चउलहुगा, अण्णायरियाभिप्रायेण वा मासलहुं। सा पुण परिक्खा उभयो पि भवति ॥६३४२॥

एत्थ पढमं ताव तस्स परिक्खा भण्णति –

आवासग सज्झाए, पडिलेहण भुंजणे य भासाए।
वीयारे गेलन्ने, भिक्खग्गहणे परिच्छंति ॥६३४३॥

केई पुव्वणिसिद्धा, केई सारेंति तं न सारेंति।
संविग्गो सिक्खमग्गति, मुत्तावलिमो अणाहोऽहं ॥६३४४॥

केइ त्ति साहू अवराहपदा वा संवज्झंति, तस्स उवसंपदकालाओ पुव्वणिसिद्धा "अज्जो! इमं इमं च न कायव्वं", जत्थ जइ पमादेंति ते सारिज्जंति त्ति वुत्तं भवति, णो उवसंपज्जमाणं तेसु णिसिद्धपदेसु वट्टमाणं सारेंति ॥६३४४॥

तत्थ आवस्सए ताव इमेण विहिणा परिक्खिज्जइ –

हीणाहियविवरीए, सति च बले पुव्वगते चोदेति ।

अप्पणए चोदेती, न ममं ति इहं सुहं वसितुं ॥६३४५॥

हीणं णाम काउस्सग्गसुत्ताणि दरकड्ढिताणि करेत्ता अण्णेहिं साधूहिं चिरवोसट्ठेहिं वोसिरइ, अधिकं नाम काउस्सग्गसुत्ताणि अतितुरितं कड्ढेत्ता अणुपेहणट्ठाए पुव्वमेव वोसिरइ, उस्सारिए वि रायणिएणं पच्छा उस्सारेति, विवरीए त्ति पाओसियकाउस्सग्गा पभातिए जहा करेति, पभाइए वि पादोसिए जं करेति ।

अहवा – सूरे अत्थमिते चेव णिव्वाघाते सह आयरिएण सव्वसाहूहिं पडिक्कमियव्वं, अह आयरियाणं सड्ढातिधम्मकहा वाघातो होज्ज तो बालवुड्ढगिलाणअसहु णिसेज्जधरं च मोत्तुं सेसा सुत्तत्थ-ज्झरणट्ठता काउस्सग्गेण ठायंति, जे पुण सति बले पुव्वं काउस्सग्गे णोट्ठंति थेरा तेसु अप्पणाए चोदेंति, जो पुण परिक्खिज्जइ सो ण चोइज्जइ पमादेंतो । ताहे जइ सो एवं च सति "सुट्ठु जं मे ण पडिचोदेति, सुहं अच्छामि" सो पंजरभग्गो णायव्वो, ण पडिच्छियव्वो ॥६३४५॥

अह पुण मं ते ण पचोदेति त्ति काउं "[1]संविग्गो सिक्खं मग्गति" पच्छद्धं अस्य व्याख्या –

जो पुण चोइज्जंतो, दट्ठूण ततो नियत्तती ठाणा ।

भणति अहं भे चत्तो, चोदेह ममं पि सीदंतं ॥६३४६॥

जति पुण सो भण्णति जेसुठाणेसु अहं पमादेमि तेसु चेव ठाणेसु अप्पणो सीसा पमादेमाणा पडिचो-इज्जंति, अहं तु ण पडिचोइज्जामि "अणाहोऽहं" – परिचत्तो, ताहे संविग्गविहारं इच्छंतो आसेवणभिक्खं मग्गंतो अप्पणो चेव ततो ठाणाओ णियत्तति, अहवा – छिण्णमुत्तावलिपगासाणि अंसूणि विणिमुयमाणे आयरियाणं पादेसु पडिओ भणाति – मा मं सरणमुवगयं पडिच्चयह, ममं पि सीदंतं चोएह ॥६३४६॥ एसा ताव आवस्सयं पडुच्च, परिक्खा गता ।

इदाणिं सज्झाय-पडिलेहण-भुंजण-भासदारा पडुच्च परिक्खा भण्णति –

पडिलेहणसज्झाए, एमेव य हीण अहिय विवरीए ।

दोसेहि वा वि भुंजति, गारत्थियढड्ढरा भासा ॥६३४७॥

पडिलेहणकालतो हीणं अहियं वा करेंति अहवा – खोडगादीहं हीणं अहियं वा करेति, विवरीयं णाम मुहपोत्तियादी पडिलेहेति, अहवा – पए रयहरणं त्ति पच्छिमं पडिलेहेति, अवरण्हे पढमं अप्पणो – पडिलेहेत्ता सेहगिलाणपरिण्णि पच्छा आयरियस्स एवं वा विवरीयं । सज्झाए वि हीणं – अणागताए कालवेलाए कालस्स पडिक्कमति, अहियं अतिच्छिताए कालवेलाए कालस्स पडिक्कमति, वंदणातिकिरियं हीणातिरित्तं करेइ, विवरीयं पोरिसिपाढं उग्घाडकालियपोरिसीए परियट्टंति, वा विवरीयं करेइ, [2]सत्तविह-आलोवगविहीते ण भुंजति, कायसिगालक्खतियादिदोसेहिं वा भुंजति, सुरसरादिदोसेहिं वा भुंजति, सावज्जादि भासा वा भासति, एतेसु चोदणा तहेव भाणियव्वा जहा आवस्सए भणिता ॥६३४७॥

सेसाणि तिण्णि दाराणि एगगाहाए वक्खाणेति –

थंडिल्लसमायारी, हावेति अतरंतगं न पडिजग्गे ।

अभणिओ भिक्ख ण हिंडइ, अणेसणादी व पेल्लेति ॥६३४८॥

---

१ गा० ६३४४ । २ गा० आलोकादिविधिना सूत्रोक्तेन न भुंक्ते ।

थंडिल्ले पादपमज्जणा उग्गहणा दिसालोगादिसामायारिं परिहावेति, गिलाणं ण पडिजग्गइ, गिलाणस्स वा खेलमल्लादि वेयावच्चं ण करेति, भिक्खं ण हिंडइ, दरहिंडतो वा सण्णियट्टइ, कोंटलेण वा उप्पाएति, अणेसणाए वा गेण्हति ॥६३४८॥

तस्स पुण इमाओ ठाणाओ आगमो होज्ज –

जयमाणपरिहवेंते, आगमणं तस्स दोहि ठाणेहिं ।
पंजरभग्गअभिमुहे, आवासयमादि आयरिए ॥६३४९॥

सो जयमाणसाधूण मूलाओ आगमो होज्ज, परिहवेंताण वा मूलाओ आगओ होज्ज, परिहविंता नाम पासत्थादी, तत्थ जो जयमाणगाणं मूलातो आगतो सो णाणदंसणट्ठाए वा आगतो, पंजरभग्गो वा आगतो। जो पुण परिहवेंताण मूलातो आगतो सो चरित्तट्ठाए उज्जमिउकामो। अहवा – अणुज्जमिउकामो वि णाणदंसणट्ठाए। अहवा – जो जयमाणेहिंतो आगओ सो पंजरभग्गो, जो पुण परिहवेंतेहिंतो आगतो सो पंजराभिमुहो। एतेसु दोसु वि आगएसु आयरिएण आवस्सयादिपरिच्छा कायव्वा ॥६३४९॥

आह पंजर इति कोऽर्थः ? अतः उच्यते –

पणगादि संगहो होति पंजरो जाय सारणऽण्णोण्णं ।
पच्छित्तचमढणादी, णिवारणा सउणिदिट्ठंतो ॥६३५०॥

आयरिओ उवज्झातो पवत्ती थेरो गणावच्छेतितो एतेहिं पंचहिं परिग्गहितो गच्छो पंजरो भण्णति, आदिग्गहणाओ भिक्खु-वसह-वुड्ढ-खुड्डगा य घेप्पंति। अहवा – जं आयरियादी परोप्परं चोदेंति मितं मधुरं सोवालंभं वा खरफरुसादीहिं वा चमढेत्ता पच्छित्तदाणेण य असामायारीओ णियत्ति त्ति एसो वा पंजरो। पंजरभग्गो पुण एयं चेव असहंतो गच्छओ णीति। "गच्छम्मि केई पुरिसा कारग गाहा कंठा।

"जह सउण पंजरे दुक्खं अच्छति तहा" –

एत्थ सउणदिट्ठंतो कज्जति – जहा पंजरत्थस्स सउणस्स सलागादीहिं सच्छंदगमणं णिवारिज्जति एवं आयरियादि पुरिसगच्छपंजरे सारणसलागादियं सामायारिं उम्मग्गगमणं णिवारिज्जति। एत्थ जे संविग्गाणं मूलाओ णाणदंसणट्ठाए आगता, जे य परिहवेंतेण मूलाओ आगया चरित्तट्ठा एते संगेण्हियव्वा। जे पुण पंजरभग्गा णाणदंसणट्ठाए आगता, जे परिहवेंताण मूलाओ णाणदंसणट्ठाए आगया, एते न संगिण्हियव्वा ॥६३५०॥

एत्थ जे संगिण्हियव्वा ते एगो वा होज्ज, अणेगा वा।

जतो भणति –

ते [1]पुण एगमणेगाणेगाणं सारणं जहा कप्पे ।
उवसंपद आउट्टे, अविउट्टे अण्णहिं गच्छे ॥६३५१॥

तत्थ जे अणेगा तेसिं सीदंताणं सारणा जहा कप्पे भणिता "उवदेसो सारणा चेव तितिता पडिसारणा" इत्यादि, "घट्टिज्जंतं वत्थं अतिरुच्चणकुंकुमसिली जता" इत्यादि। जो पुण एगो सो असामायारिं करेंतो चोदितो जइ आउट्टितो तस्स उवसंपदा भवति, "अविउट्टे" त्ति – जति ण आउट्टो, भण्णति "अण्णहिं गच्छे" ति ॥६३५१॥ एसा आगयाणं परिच्छा गता।

---

१ 'जे पुण' इति चूर्णौ।

अहवा – एयं पच्छद्धं – अण्णहा भण्णति – तेण वि आगंतुणा गच्छो परिच्छियव्वो आवस्सगमादीहिं पुव्वभणियदारेहिं । गच्छिल्लगाणं जति किंचि आवस्सगदारेहिं सीदंतं पस्सइ तो आयरियातीणं कहेति, जति सो कहिए सम्मं आउट्टति त्ति तं साधुं चोदेति पच्छित्तं च से देति तो तत्थ उवसंपदा । अह कहिते सो आयरिओ तुसिणीओ अच्छति भणति वा – किं तुज्झं, णो सम्मं आउट्टति ? तो अविउट्टे आयरिए अण्णहिं गच्छति अन्यत्रोपसंक्रमतेत्यर्थः, ॥६३५१॥

ततियभंगिल्ले इमा पडिच्छणविही –

णिग्गमणे परिसुद्धो, आगमणे असुद्धे देंति पच्छित्तं ।
णिग्गमण अपरिसुद्धे, इमा उ जयणा तहिं होति ॥६३५२॥

ततियभंगिल्लस्स वइयादिसु पडिबद्धस्स सुद्धस्स जं आवण्णो तं पच्छित्तं दाउं पडिच्छंति । जति पुण पढमबितिज्जेण वा भंगेण अहिकरणादीहिं एगे अपरिणयादीहिं वा आगता, जे य पंजरभग्गा, जे परिहावेंतेसु णाणदंसणट्ठाते आगता ते ण संगिण्हियव्वा, न य फुडं पडिसेहिज्जंति ॥६३५२॥

तेसिं इमा पडिसेहणजयणा –

णत्थि संकियसंघाडमंडली भिक्ख बाहिराणयणे ।
पच्छित्त विओसग्गे, णिग्गयसुत्तस्स छण्णेणं ॥६३५३॥

"[1]णत्थि संकिय" अस्य व्याख्या –

णत्थेयं मे जमिच्छह, सुत्तं मए आम संकियं तं तु ।
न य संकियं तु दिज्जइ, णिस्संकसुते गवेसाहि ॥६३५४॥

जं एतं सुत्तत्थं तुब्भे इच्छह एयं मम णत्थि । अह सो भणाति – अण्णसमीवे सुतं मए जहा तुब्भं एयं अत्थि, अहवा भणाति – मए चेव तुमं वायणं देंता सुत्ता । आयरिओ भणाति – आमं ति सच्चं, इदाणिं तं मे संकितं जातं, ण य दाणजोग्गं, ण य संकियसुत्तत्थं दिज्जति, आगमे पडिसिद्धं, गच्छ अण्णतो जत्थ णिस्संकं सुतं ॥६३५४॥

तं [2]संघाडए त्ति जो संघाडयस्स उव्वयाति सो भण्णति –

एक्कल्लेण ण लब्भा, वीयारादी वि जयण सच्छंदे ।
भोयणसुत्ते मंडलि, अपढंते वी णिओअंति ॥६३५५॥

अम्हं एरिसा सामायारी णो संघाडएणं विणा लब्भति सण्णाभूमिमादि णिग्गंतुं, एसा सच्छंदेण जयणा । "[3]मंडलि" त्ति जो सो अणुबद्धवेरत्तणेण आगतो सो इमाए जयणाए पडिसेहिज्जति । जो य सुत्तमंडलीए उव्वियाति, "भोयण" पच्छद्धं, अम्हं सामायारी अवस्सं मंडलीते समुद्दिसियव्वं, सुत्तत्थमंडलीसु जति ण पढति ण सुणेति वा तहावि मंडलीए उवविट्ठो अच्छति, ण सच्छंदेण अच्छिउं लब्भति ॥६३५५॥

अलसं भणंति बाहिं, जति हिंडसि अम्ह एत्थ बालाती ।
पच्छित्तं हाडहडं, अवि उस्सग्गं तहा विगती ॥६३५६॥

---

१ गा० ६३५३ । २ गा० ६३५३ । ३ गा० ६३५३ ।

"[1]आहिराणयणे" त्ति जो आलस्सियत्तणेणं आगतो सो इमाए पडिसेहिज्जति, अलसितो भणति – अम्हं एत्थ सखेत्ते बाल-गिलाण-वुड्ढावि हिंडंति, जति दिणे दिणे भिक्खायरियं करेसि तो अत्थ पच्छित्तंति। जो निधम्मो "अइउग्गदंडो आयरिओत्ति" एतेहिं कारणेहिं आगतो सो इमाए जयणाए पडिसेहिज्जति सो अम्हं सामायारी जइ दुप्पमज्जियादीणि करेति तो वि अम्हं हाडहडं पच्छित्तं दिज्जति, हाडहडं णाम तक्कालं चेव दिज्जति ण कालहरणं कज्जति। "[2]अविउस्सग्गे" त्ति जो सो अविगती णाणुजाणति त्ति आगओ, सो भणति-अम्हं सामायारी जोगवाहिणा विगतिकाउस्सग्गं अकरेतेण पडियव्वं। "तह" त्ति –

किं चान्यत् – अम्हं सामाचारी जोगवाहिणाऽजोगवाहिणा वा विगती न गृहीतव्या इत्यर्थः। अहवा – "तह" त्ति जं सो कारणं दीवेति तस्स तहेव प्रतिलोमं उवण्णसिज्जति ॥६३५६॥

एत्थ चोदग आह –

तत्थ भवे मायमोसो, एवं तु भवे अणज्जवजुतस्स।
वुत्तं च उज्जुभूते, सोही तेलोक्कदंसीहिं ॥६३५७॥

तत्रेति या एषा णिग्गमे असुद्धे उवाएणं पडिसेहणा भणिता। अत्र कस्यचिन्मतिः स्यात् – एवं पडिसेहंतस्स माया भवति मुसावायं च भासति, जेण विज्जमाणं सुत्तं णत्थि त्ति भणति संकियं वा, एवं संघाडगादिसु अणज्जवं अरिजुत्तं करेमाणो मायामुसावाएण य जुत्तो भवति अवज्जवयणजुत्तो वा, उक्तं च – "[3]सोही उज्जुअभूतस्स य" कारणं – तिलोकोऽयं, तं च अज्जवं अकरेम णस्स संजमसोही ण भवति।

आचार्याह – ण मायामुसावाओ य, जतो कारणे मायामुसावातो य अणुण्णाओ। इमं च कारणं-णिग्गमणं से असुद्धं, तेण उवायपडिसेहो कओ ॥६३५७॥

किं च –

एसा उ अगीयत्थे, जयणा गीते वि जुज्जती जं तु।
विद्देसकरं इहरा, मच्छरिवादो य फुडरुक्खे ॥६३५८॥

एवं अगीयत्था पडिसेविज्जंति, गीयत्था पुण फुडं चेव भण्णंति, ते सामायारीं जाणंता किह अप्पत्तियं दोसं वा करेंति, तेसु वि य जं मातामुसावादकारणं जुज्जति तं च कायव्वं। अगीयत्थाणं पुण "इहर" त्ति फुडं भणंताणं विद्देसकरं भवति, चिंतंति य, एते मच्छरभावेण ण देंति सुत्तत्थे। सपक्खजणे य न एवं पदाणेण मच्छरभावो भवति। सब्भूयदोसुच्चरणं फुडं, णेहवज्जियं रुक्खं, अहवा – फुडमेव रुक्खं तं च अधिकरणादि रागादिणा वा दोसेण आगतो त्ति ण पडिच्छामो, एत्थ मच्छरभाव अयसो संपज्जति ॥६३५८॥

एतेसिं पडिच्छाण इमो अववातो –

णिग्गमसुद्धमुवाए ण वारितं गेण्हती समाउट्टं।
अहिकरण पडिणिअऽणुबद्धे, एगागि जढं ण संगिण्हे ॥६३५९॥

अत्र अकारलोपो दृष्टव्यः, एवं णिग्गमो असुद्धो जस्स सो उवाएणं जयणाए वारिओ ण पडिच्छत इत्यर्थः। अहवा – दोसा जहा वारणाओ ण उप्पज्जंति तहा उवाएण वारितो प्रतिषिद्ध इत्यर्थः। पडिसिद्धो जइ सो भणइ "मिच्छामि दुक्कडं, ण पुणो एवं काहं, जं वा भणइ तं करेमि, मुक्को मे पावभावो दुग्गइवट्टणो इहलोए वि गरहितो" एवं आउट्टो गेण्हियव्वो। तत्थ वि इमो ण गेण्हियव्वो-जो अधिकरणं काउमागतो, जो य पडिणीओ त्ति भणंतो, जो य अणुबद्धरोसो जेण आयरिओ एगादि भावेण जढो ॥६३५९॥

---

१ गा० ६३५३। २ गा० ६३५३। ३ उत्त० अ० ३ गा० १२।

पडिणीए इमो अववादो –

पडिणीयम्मि वि भयणा, गिहम्मि आयरियमादिदुट्ठम्मि ।
संजयपडिणीए पुण, ण होति तं खाम भयणा वा ॥६३६०॥

इमा भयणा, कोति गीयत्थो आयरियस्स पदुट्ठो, आदिग्गहणेणं उवज्झाय-पवत्ति-थेर-गणावच्छेदग-भिक्खूण, सो उवसामिज्जंते वि णोवसमति, तस्स भएण आगतो सं गिण्हियव्वो । जइ पुण संजतो मे पदुट्ठो पडिणीय त्ति भणेज्जा तो ण होइ उवसंपदा, ण पडिच्छिज्जति त्ति वुत्तं भवति। अहवा सो भण्णति – गच्छ, तं खामेउं आगच्छ । जइ वुत्तो गतुं तं ण खामेति तो ण पडिच्छिज्जति, गयस्स वा सो ण खमति तो पच्छागतो पडिच्छिज्जति । अहवा सो भणेज्ज – मए आगच्छमाणेण खामितो ण खमति तो पडिच्छियव्वो चेव, एसा भयणा ॥६३६०॥

इदाणिं जे अविसुद्धणिग्गमा – उवाएण वारिता वि ण गच्छंति, जे य विसुद्धणिग्गमा पडिच्छिता वि सीदंति, तेसिं वोसिरणविही इमो ।

"णिग्गयसुत्तस्स छण्णेण" ति वयणा, जया भिक्खादिगतो होति तदा छड्डेत्ता गच्छति । सुत्तस्स वि आयरिया दिवसतो सोऊणं पव्वइए वि रातो पढमपोरिसीए सोवेत्ता तस्स पुण अक्खेवणा कहा कहिज्जति ताव जाव णिद्दावसंगतो ज हे पासुत्तो ताहे संजता उट्ठावेत्ता तं सुत्तं छड्डेत्ता वच्चंति । छण्णेणं ति अप्पसागारियं मंतं मंतेति, नो अपरिणयाणं तप्पक्खियाणं। वच्चतो ण य कहेंति जहा णस्सियव्वं, मा रहस्स भेदं काहिति। जति सो चेव पच्छा समाउट्टो आगतो जो य सुद्धणिग्गमो य एते दंसणाइयाणं ति एगट्ठा आगता पडिच्छियव्वा ।

तत्थ दंसण-णाणेसु पुव्वद्धगहितो इमो विधी –

वत्तणा संधणा चेव, गहणं सुत्तत्थ तदुभए ।
वेयावच्चे खमणे, काले आवकहादि य ॥६३६१॥

एते वत्तणादिपदा सगच्छे असतीए वक्खेवेण वा णत्थि परगच्छे पुण जत्थ वत्तणादिया णियमा अत्थि तत्थ उवसंपदा । पुव्वगहियस्स पुणो पुणो अब्भस्सणा वत्तणा, पुव्वगहियविसरियस्स मुक्कसारणा संधणा, अपुव्वस्स गहणं, एते तिण्णि विगप्पा सुत्ते, अत्थे वि तिण्णि, उभए वि तिण्णि, एए णव विगप्पा । उत्तरचरणोवसंपदट्ठा उवसंपज्जतो वेयावच्चकरणखमगकरणट्ठया वा उपसंपज्जति, ते पुण वेयावच्चखमणे कालतो आवकहाते त्ति जावज्जीवं करेइ, आदिग्गहणाओ इत्तरियं वा कालं करेज्ज ॥६३६१॥

तत्थ दंसणणाणा इमे, इमा य तेसु विही –

दंसणणाणे सुत्तत्थ तदुभए वत्तणादि एक्केक्के ।
उवसंपदा चरित्ते, वेयावच्चे य खमणे य ॥६३६२॥

दंसणविसोहया जे सुत्ता सत्थाणि वा तेसु सुत्तेसु वत्तणा संधणा गहणं, एवं अत्थे तिगं, तदुभए तिगं, "एक्केक्के" त्ति – एवं दंसणे णवविगप्पा, आयारादिए य णाणे एवं चेव विगप्पा । चरित्तोवसंपया इमा दुविहा – वेयावच्चट्ठता खमणट्ठा वा ॥६३६२॥

सुद्धं पुण अपडिच्छंतस्स इमं पच्छित्तं –

सुद्धपडिच्छणे लहुगा, अकरेंते सारणा अणापुच्छा ।
तीसु वि मासो लहुओ, वत्तणादीसु ठाणेसु ॥६३६३॥

मील्यते राशे ३४२, रित्यस्य जात ३६६, कारणं तु वुच्छामि त्ति – अत्र करणराशीना मीलनमेवाभिप्रेत, अस्य राशे: ३६६, भागे १२, हृते लब्धं ३०, ततोऽपवर्तन द्वादशाना पड्भागे द्विक', पण्णा षड्भागे एकक ½, इति दिनार्धे लब्ध, स्था० ३० ½ यद्वा अय ३६६, पचगुणा १८३०, तत पड्भागे हृते लब्ध ३०, तत· पण्णा तृतीयभागे द्वौ, त्रयाणा च तृतीयभागे एकैक एव, इत्यपवर्त कार्य । एत्थ वि त्ति अत्र एतस्मिन् राशौ १८३०, अपेर्भिन्नक्रमत्वात् सर्वमासा अपीत्यर्थ , अभिवड्ढिउ त्ति इत्यादि ऋतुसवत्सरो हि ३६०, एतावद्दिनप्रमाणस्तदापेक्षया चन्द्रादित्यसवत्सरयोन्यू्नाधिक्य व्यवस्थापयन्नाह –

छच्चेव य (२० उ० पृष्ठ २२७)

आदित्यसवत्सर ३६६, एतावद्दिनप्रमाण , चद्रसवत्सर ३५५, ¹²⁄₆₂ एतावत्प्रमाण', तत्रादित्यसवत्सरे पड्दिनानि ऋतुसवत्सरापेक्षयाऽधिकानि चन्द्रसवत्सरे ऋतुवर्पापेक्षयैव न्यूनानि, ओमरत्त त्ति अवमराशे पडेव न्यूनानि दिनानीत्यर्थ । बारसवासेणए त्ति द्वादश दिनानि, एतानि वर्पेणाधिकानि, पडवमरात्राश्चन्द्रसवत्सरसत्का पड् वाऽऽदित्यवत्सरसत्का इति द्वादश एकस्मिन् वर्पे दिवसा अधिका भवति, एव द्वितीयवर्पेऽपि द्वादश पडभिर्मासैस्तृतीयसवत्सरसत्कै· पड्दिवसा लभ्यते, ततस्त्रिशद्दिनानि भवति अर्धतृतीयवर्पैरतिक्रान्तै ,अत एवोक्त अड्ढाइज्जेहि पूरमासो त्ति –

सट्ठीए (२० उ० गा० ६२८७)

युग हि पचसवत्सरैर्निष्पद्यते, पचसवत्सरेषु च मासा पष्टिसख्या, पक्षद्वयनिष्पन्नत्वाच्च मासस्य पक्षाणा विंशत्यधिक शत युगे भवति, युगस्य च मध्ये अन्ते वाधिकमासो भवति । अद्धं च मध्यमे व भवति इति मध्ये अधिमासक । पष्टिपक्षाणामतिक्रान्ताना भवति–त्रिशन्मासैरतिक्रान्तैरित्यर्थ । वावीसे पक्खसए त्ति युगान्ते हि विंश शत पक्षाणा भवति । परमार्थे युगस्य पक्षद्वय यदतिक्रान्त तत्प्रक्षेपे द्वाविंश शत मुक्त इति द्वितीयाधिकमासक्षेपे युगान्ते – पक्षाणा १२५, भवति । युगान्ते चाधिकमासो भवन् आपाढान्ते भवत्यापाढद्वय भवतीत्यर्थ । अहव त्ति प्रमाणवर्पस्य दिवसराशि १८३०, तस्मान्नक्षत्रादिमासदिनसख्या आनीयते, सेसा वारस त्ति अशा छेदाश्च द्वापष्टि, ते छेदा अशाश्चार्धेनापवर्त्यन्ते द्वाषष्टेरर्धे ३१, द्वादशानामर्धे पट्, ⁶⁄₃₁ । छेएण भाइए लद्ध त्ति–छेद १२५, इत्येपस्तेन भाजित इत्यय राशि १४५२, लब्धा ११, उद्धरिता ८८, एकादशसु एतस्मिन् ३२७ राशिमध्ये क्षिप्तेपु ३०३, छेदा १२४, अशा ८८, उभयोश्चतुर्भिरपवर्तनेऽष्टाशीते , २२, चतुरधिक विंशतिशतस्य च ३१, दिवसा । दिवसेसु त्ति – चन्द्रवर्पत्रयराशि १०६२, अभिवर्धितवर्पद्वयराशिश्च ६६७, ⁵³⁄₁₂₄ दिवसाना मीलने १८२९ । भागा भागेसु त्ति ¹⁶⁄₁₅₃, एवरूपा मिलिता ३१, एतेपामेकत्रिंशता भागे हृते लब्ध एककस्तस्मिन् पूर्वराशिमध्ये क्षिप्ते १८३० । ज ए तेरसेहि चदमासेहि इत्यादि स्थापना १३ । १२ । ३१, १२१, १२४, ६२ । द्वादशाभिर्वर्धितमासा अन्त्ये द्वापष्टचा गुण्यन्ते जात १४४, त्रयोदशभिश्चादिमे भागे हृते लब्ध मासा ६२, ५७–³⁄₁₃ एए पुणो सवन्निय त्ति त्रयोदशभिरेव गुण्यन्ते सतपचाशन्मासा, जात १४१, त्रयोदशभागत्रयप्रक्षेपे १४८, तेरसगुणियाण ति लब्ध ३१ ।

²³⁷⁹¹⁄₇₄₄ शेप ⁷²⁶⁄₇₄₄ द्वयोरपि पड्भिरपवर्तनेऽधस्तनराशौ १२४, उपरितने च १२१, दिन । एवप्रमाणो अभिवड्ढियवरिसस्स भागरूवोऽधिकमासक , यद्वाऽनयोराश्यो ²³⁷⁹⁶⁰⁄₇₄₄ अर्धयोरपि पड्भिरपवर्तनप्रथमतो विहिते जात ³⁹⁶⁶⁰⁄₁₂₄ अस्याधस्तनराशिभागे हृते लब्धैकत्रिंशद्दिनरूपोऽधिकमासक समागच्छति, एकत्रिंशदुपरि छेदाशयोर्न्यस्यते ।

ससिणो य गाहा २० –

शशिनश्चन्द्रमासस्यादित्यमासस्य च य कश्चिद्विश्लेष उद्धरित किञ्चित्तस्य त्रिशता गुणने द्विपष्टिभक्ते च यल्लब्ध तच्चन्द्रमासोऽभिवर्धितो भवति । एतदेव विवृणोति – एएसि विसेसे एक त्ति – विश्लेपेऽपसारणे कृते सति तच्चन्द्रमाससज्ञितराशेरादित्यराशिमध्यात् आदित्यराशेश्च यद्दिनमेक तस्य मध्यात् द्वापष्ठिभागा ३२, अपसार्यन्ते त्रिशच्च द्वाषष्टिभागा अवतिष्ठन्ते त्रिशच्च स्वगता पष्टिभागा ३०/६० । ३०/६२, एए वट्टिय त्ति आद्यस्य दशकेनापवर्तने शून्यद्वय गत, द्वितीयस्य चार्धेनापवर्तने जात १५/३१ ।

परोप्परं छेयगुण त्ति कोऽर्थ ? एकत्रिशच्छेदा षष्टित्रिशद्भागा स्थाप्या, अपरे वेतरस्याधस्तत इत्थ न्यास ३ ६/३१ । १५ २/६१ । एकत्रिशता च गुणने चाद्यराशौ जात ९३/६२ द्वितीयस्य च पड्भिर्गुणने ९० एकत्रिशतश्च पड्गुणने १८६, अय च सदृशच्छेदो नष्ट उत्सार्यो गतार्थत्वात् असा असा असेसु पक्खित्ता जात १८३, ततो अशा १८३ अशाना त्रिभिरपवर्तने लब्ध ६१, छेदाना त्रिभिरपवर्तने लब्ध ६२, न्यास ६१/६२ । एस तीसगुण त्ति – एकपष्टिद्वाषष्टिभागरूप एकस्तिथि-स्त्रिगद्गुण १८३०, द्वाषष्टिविभक्त २९ ३२/६२ चन्द्रमासप्रमाणोऽधिकमासको भवति। अहवे त्ति – १ । १ । ३० । त्रिशता मध्यभूत एकको गुणितस्त्रिशद् भवति । एककेन वाद्येन त्रिशतो भागेहृते लब्धे त्रिशदेव लभ्यते । एसा आइदुचद त्ति एसा एकषष्टिभागरूपा सोमतिथि: मासस्यान्ते एका तिथिर्वर्धते, एयं चेव अभिवड्ढि पडुच्च त्ति – एता पूर्वेक्ता – त्रिशत्तिथिरूपा यद्वा २९ ३२/६२ एतद्रूपा अभिवर्धितवर्ष-मास ३१ १२१/१२४ एतावत्प्रमाण । सेसस्स त्ति – उद्धरितस्स ३४, एव रूपस्यार्धे भवति चतुर्विशत्यधि-कगतस्य चार्धे द्वाषष्टि, स्थापना ३१, २९, १७, ६२ । नक्षत्रादिमासपचकव्याख्यानमिद समाप्तम् ।

तिपरिरयाइजयणाजुत्तस्स जा पडिसेवणा सा कम्मोदयप्रत्यया न भवति, क्रोधादिभावस्थो यतोऽसावशुद्ध न गृहीतवान्, कि च म्हे भयव ! न य वज्जीपावसस्सतुल्ल त्ति न च वर्जका विकृतेर्वयं वृपस्य तुल्यास्सन्त इति भाव । वालामो त्ति वर्तयाम । भिन्नं सत् कुड्डुसेस भिन्नकुंडसेस छक्कायगेसु त्ति – कायकेषु, अणिच्छिय त्ति अनिश्चितालोचनया पण्णरसचेत्तु मासो दिज्जइ त्ति द्वयोरपि मासयो पचदश पचदश गृह्यन्ते, ततो मास इति उग्घाइमाणुग्घाइममिश्रभगकेषु इत्थ विन्यस्स भगकाश्चारणीया १, २, ३, ४, ५, उग्घा । १, २, ३, ४, ५ । नु ६ ।

पच दग दश पच एकद्वचादिसयोगाना सख्याना –

उभयमुहराशिदुग उवरिल्ल आइमेण गुणिऊण ।
हेट्ठिल्लभागलद्धे उवरि ठिए हु ति सजोगा ॥

इत्यनेन करणेनागच्छतस्तत एककादिसयोगत्वेनोद्घातिमाना यानि सयोगस्थानानि पचाइग त्ति – पचकादी तान्यनुद्घातिमाना एककादिसयोगत्वेन ये पचकादयो गुणकारकास्तैर्गुणनीयानि, तत. पचविशत्यादिक सख्यान जायते । वहुससुत्तेसु वि मीसगसुत्तसजोग त्ति – उग्घाइयअणुग्घाइय-मीलकेन मिश्रत्वं ज्ञेय ।

ननु वहुससुत्तावत्तीसु इत्यादि एकमपि मासिकयोग्यमतिचारजात यदा बव्हीर्वारा आसेवते तदा वाहुल्यासेवनतो वहुससूत्रविपयता तस्या च वहुवारासेवनलब्धो द्विमासाद्यापत्तिसम्भवो-ऽप्यस्मीति भाव ।

सव्वे वि हुँति लहुगा इत्यादि एकोत्तरवृद्धया वृद्धा एकापेक्षया द्वित्र्यादयो मासास्ते च नववो मासा सर्वेऽपि प्राप्यन्ते, अतो द्वितीयतृतीयपचममासा अनुक्ता अपि सन्तो गुरवोऽपि

द्रष्टव्या । अयमर्थ – सूत्रे किल मासलघु मासगुरु तथा इत्येवमेवोक्त, द्वयादिमासाना च न चिन्ता कृता, तथाऽपि लघवो मासा पडपि सूचिता सूत्रे, अतो गुरवो पि मासा द्वयादयो द्रष्टव्या, एकोत्तरवृद्ध्या वृद्धत्वात् ।

जे भिक्खू मासिए मासियमित्यादि एव सामान्येन चतुर्भंगीय विशेपतश्च चिन्त्यमाना. पचदश भवन्तीत्याह – एव मासस्सेत्यादि चारणिका, यथा मासिए मासिय १ मासिए दोमासिय २ दोमासिए मासिय, दोमासिए दोमासियमित्येका ११, १२, २१, २२।

एव शेपा अपि अकतो दर्श्यन्ते, यथा – ११ ११ ११ ११
१३ १४ १५ १६
३१ ४१ ५१ ६१
३३ ४४ ५५ ६६

इत्येव मासस्य द्विकादिमासै सह चतुर्भंगिकापचक लब्ध । एव द्वित्र्यादिमासानामपि स्वस्थानपरस्थानै सह चारणे चतुर्भंगिका भवति, तत्र द्विकचतुर्भंगिकाया द्विक स्वस्थानम्। त्रिकादिचतुर्भंगिकासु स्वस्वाकरूप स्वस्थानम्, तद्विसदृश तु परस्थानम् । अकत स्थापना चेय – २२ २२ २२ २२
२३ २४ २५ २६
३२ ४२ ५२ ६२
३३ ४४ ५५ ६६

दुमासिए दुमासिय । दुमासिए तिमासियमित्यादि चारणिका कार्या, एव द्विकचतुर्भंगिकाश्चतस्र त्रिकभगिकास्त्रिसः – ३३ ३३ ३३
३४ ३५ ३६
४३ ५३ ६३
४४ ५५ ६६

चतुर्भंगिकाद्वितय,
४४ ४४
४५ ४६
५४ ६४
५५ ६६

पचकचतुर्भंगिका ५५, ५६, ६५, ६६ । मिलिता सर्वा १५ ।

जहमन्ने २० उ० गा० (६४२३) –

"एव" ति – अमुना प्रकारेण बुड्डिहाणिनिष्पन्न, "च" त्ति – वाऽर्थ जे सुत्तनिबद्धा मासिय त्ति—प्रतिपद सूत्रेण यानि प्रायश्चित्तानि निरूपितानि जहा – सेज्जायरपिडे मासो इत्यादि,

तानि सूत्रनिबद्धानि मासिकानि, किमुक्त भवति ? एकस्मिन् अपि बहुदोपदुष्टत्वेन यका मासिकादिबहुत्वापत्ति, सा न सूत्रनिबद्धे ति न तदाश्रित बहुत्व त्रेधा, किन्तु एकैकदोपदुष्टासेवनेन यद् बहुत्व तत् त्रिविधमिति । तत्थ – जहन्नमित्यादि, अयमर्थ – पढमुद्दे सए अणुग्घाइयमासपच्छित्ता २५२, । बिइयतइयचउत्थपचमुद्दे सएसु मासलहुयपच्छित्ता ३३२। एएसि उग्घाइयाणुग्घाइयमासाण इक्कओ सखित्ताण ५८४ । एव सति मासिकपायच्छित्ततिगसेवणे जहन्नओ बहुत्व तिन्नि मासा तु

प्रतिवहुत्व यत शेप सुगमम्। अहवा – ठवणासेवणाहीत्यादि इद व्यापक लक्षणं। संचयमास त्ति – प्रायश्चित्तापत्तितो यावन्तो मासा. शिष्येणासेवितास्ते सचयमासा इति तात्पर्यम्।

चउभगविगप्पेण त्ति – मासिए मासिय। मासिए अणेगमासिय।

अणेगमासिए मासिय। अणेगमासिए अणेगमासिय। उवड्ढीइ त्ति अपवृद्धया ह्रासेन।

ठवणा वीसिगपक्खिव २० उ० गा० (६४३२) –

वीसाए अद्धमासं २० उ० गा० (६४३३) –

आभ्या गाथाभ्या स्थापनारोपणाभ्या स्थानरचनाऽभिहिता, साचेय पढमा ठवणारोवण-पतीए ठवणा – २०, २५, ३०, ३५, ४०, ४५। इत्येव पचकवृद्धया स्थानानि तावन्ने यानि यावदन्त्य त्रिशतसख्य स्थान, पचपष्ट्यधिक शतमिति १५५, आरोपणास्त्वत्र पचदशाद्या. १५, २०, २५, ३०, ३५, ४०, ४५, ५० ५५। इत्येवमत्रापि पचकपचक०वृद्धया तावन्ने य यावत् त्रिशतसख्य स्थानं पष्ट्यधिक शतमिति १६०।

द्वितीयस्थापनारोपणपक्तौ ठवणा पंचदशाद्या १५, २०, २५, ३०, ३५। इत्येव पचोत्तरया वृद्ध्या तावन्नेय यावत् त्रिशत्सख्य स्थान पचसतत्यधिक शतमिति १७५। आरोपणास्त्वत्र पचाद्या ५, १०. १५, २०, २५, ३०। इत्येव पचोत्तरया वृद्धया तावन्नेय यावत् त्रयस्त्रिशत्सख्य स्थान पचषष्ट्यधिक शतमिति १६५।

तृतीयस्थापनारोपणपक्तौ ठवणा पचकाद्या ५, १०, १५. २०, २५, ३०, ३५। इत्येव पचकवृद्धया तावन्नेय यावत् पचत्रिशत्सख्य स्थान पचसतत्यधिक शतमिति १७५, अत्रारोपणा अपि पचाद्या ५, १०, १५ इत्यादि पचसप्तत्यधिकशताना ता स्थापनास्थानानामधोद्दश्या।

चतुर्थस्थापनारोपणङ्क्तौ ठवणा एकाद्या १, २, ३, ४, ५, ६, । इत्येवमेकोत्तरवृद्धया तावन्नेय यावदेकोनाशीत्यधिकशतसख्य स्थानमेतदेव १७६, अत्रारोपणा अप्येकाद्या १, २, ३, ४, ५। एकोत्तरवृद्धया तावन्नेय यावदेकोनाशीत्यधिक शतमिति १७६। दोहि वि पक्खे चउ पच त्ति भाष्यपद द्वयोरपि स्थापनारोपणयो पचाना प्रक्षेपत उत्कृष्ट ठवणारोवणाठाण पावेयव्व। यदुपरि यस्य प्रभवति तदुत्कृष्ट, पच्छिमठवणारोवणाउ त्ति पश्चिमाश्चतस्रोऽपि स्थापनारोपणा उत्कृष्टा-अन्त्या इति यावत्, एव तीसियासु त्ति – ठवणासु इति द्रष्टव्य वीसिया से जहन्न त्ति – वीसिया ठवणा से त्ति – पक्खियारोपणयो जघन्या। एव बीए आरोवणा- ठाणे त्ति – विशतिरूपे अतिल्ल तीसइम ठाण "फिट्टइ" त्ति – ठवणाया सत्कमन्य त्रिशत्तमं स्थान पंचषष्ट्यधिकशतरूप न तद्योग्यं भवति, अशीत्यधिकशतस्याधिक्यात् ठवणाठाण उवड्ढिए त्ति– अपवृद्धया पाश्चात्यगत्या आरोपणस्थानवृद्धौ ठवणास्थानस्य ह्रास कार्यं। आरोवणावुड्ढीए त्ति ठवणास्थानवृद्धौ आरोपणास्थानस्यापवृद्धि ह्रास। ठवणारोवणसवेहस्स त्ति – एगम्मि एगम्मि ठवणारोवणठाणे कइ कइ आरोवणाठाणाणि भवति सवेहो, गणियकरण व त्ति – सकलितगणितानयनोपाय जम्हा पढमा ठवण त्ति– १६५, एतद्रूपा पढमारोवणाठाण १६०, एतद्रूप इक्क लब्भइ त्ति। कोर्थ ?

पचकपचकनिष्पन्न एकैकस्थानवृद्ध्या निष्पन्नत्वादनयो तदूर्ध्वं पचकपचकनि-ष्पन्नस्य स्थानस्याभावाच्चरिमयोरप्यनयो प्राथम्य विवक्ष्यते, जम्हा एगुत्तरवुड्ढीए त्ति – पचकपंचकनिप्पन्न एकैकस्थानवृद्ध्या द्वितीयादीनि च तानि आरोपणास्थानानि पचदशकापेक्षया विंशत्यादीनीति भाव। सव्वे त्ति – उत्तरत पढमठवणा १६५ उत्तर पि एक्को चेव त्ति – पचदश-

रूपस्तदूर्ध्व उत्तरस्यापरस्याभावात् पचदशरूपमेव, यत आद्य स्थान पढमठवणाया स्थान-वृद्धिस्तथा —

गच्छुत्तरसंवग्गे उत्तरहीणम्मि (२० उ० गा० ६४४०) –

व्याख्या – गच्छो पढमठवणाठाणे तीस, बिईए गच्छो तित्तीस, तइए ३५, चउत्थे १७६, गच्छस्य उत्तरेण सवर्ग – गुणन कार्य । अत्र चोत्तर एककरूपस्तेन हीन कार्यो राशि, तत आदि: प्रक्षेप्य, स चात्रैककरूप एव, एतच्च यदागत तदन्त्यधन चतसृष्वपि पक्तिषु प्रथमे प्रथमे ठवणा-ठाणे एतावत्सख्यान्यारोपणस्थानानि भवति, तदप्यादियुत प्रस्तुते एककयुक्त कार्य तस्यार्ध कार्य, ततश्च य कश्चिद् गच्छो न्यस्तस्तस्यार्धेनार्धीकृतेन राशिना गुणन्तु त्ति गुणन कार्य । तस्मिश्च कृते ठवणारोवणठाणाण सवेहेण सर्वसख्यान भवति । तत्थ पढमे ठवणारोवणठाणे सवेहतो सर्वाग्र ४६५, द्वितीये ५६१, तृतीये ६३०, चतुर्थे १६११० ।

ठवणारोवणविज्जय ।। गाहा ।। २० –

स्थापनारोपणसख्यानेन वियुता रहिता विधेया, षण्मासदिनराशि तस्य पचभिर्भागो हार्य, भागे हृते ये लब्धा मासास्ते रूपयुता कार्या । स चैतावान् ठवणारोवणाण गच्छो होइ पचभिर्भागो हार्य इत्येवरूपश्च प्रकार आद्यासु तिसृषु ठवणारोवणासु विन्नेओ। चरिमे ठवणे एक्केण भागो हार्य । इत्ययमादेश उपदेश इत्यर्थ ।

अय भावार्थ –प्रथमतीर्थंकरकाले उत्कृष्ट प्रायश्चित्तदान द्वादशमासा, मध्यमतीर्थ-कृत्काले चाष्टौ मासा, चरमस्य पण्मासा इति । अतस्तीर्थमाश्रित्य षण्मासा इत्युक्तम्, तत् तिसृ-णामपि पचकपचकनिष्पन्नस्थानवृद्धया निष्पन्नत्वादुक्त रूपयुतत्वं यदुक्त तत् सर्वास्वपि स्थापना-रोपणास्वाद्यपदस्य पचकादिवृद्धयाऽनिष्पन्नत्वात् तस्य प्रक्षेपसूचनार्थम् ।

इयाणि गणियकरणमित्यादि वीसियाए ठवणाए अतधण ति सर्वाग्र आरोपणापदाना भवतीत्यर्थ ।

सह आइल्लेहि ति अन्त्यस्यारोपणापदस्य १६०, एतद्रूपस्यापेक्षया आदिमा पचदश-प्रभृतय पचपचाशदधिकशतान्ता सख्याविशेषा एकोनत्रिशत्सख्यास्तै सह त्रिशत्सर्वाग्रमारोपणा-पदाना विशे स्थापनापदे भवतीत्यर्थ । वीसियठवणादीना दिवसा इति विग्रह । एव सेसासु त्ति पचविसियाइसु ।

दिवसा पंचहिं भइया (२० उ० गा० ६४४०) –

व्याख्या – यस्या स्थापनायामारोपणाया वा यावतो दिवसास्ते पचभिर्भजनीयास्ततो यल्लब्ध तद् द्विरूपहीन विधेय, स राशि. मासप्रमाण ब्रूते, तस्मिन् ठवणापदे आरोपणापदे च अकसिणरूवणाए ओसग्ग ति झोषनिष्पन्ना अकसिणा, झोषरहिता तु कसिणारोवणा ।

जइ मासा तइएहिं गुण करिज्ज २० –

व्याख्या – दिवसा पचहि भइया इत्यादि करणतो द्विरूपहीनत्वेनारोपणाया यावन्तो मासा लब्धास्तैर्भागलब्धान् गुणयेत्, तत स्थापनारोपणासु यावन्तो लब्धा मासास्तत्समासा गाहा तत्तियभागं करे त्ति तावत्प्रमाणैर्भागै. त पूर्व राशि कुर्यात् । तिपचगुण ति – पचदशगुण कार्य आद्यो भागसेस ति – शेषाश्च तद्व्यतिरिक्ता द्वितीयाद्या भागा एकत्र सम्मील्य पचगुणा कार्यास्ततो

गुणाकारगुणिता राशीनेकत्र सम्मील्य स्थापनारोपणदिवससमन्विता विधेयास्तत षण्मासप्रमाणो राशि १८०, भवति। तेहि एक्कारस गुणिय त्ति – एक्कारसमासाण पन्नरसदिवसमासाग्रो गिज्भति त्ति काउ एए मासा त्ति दसहि ग्रद्धमासेहि पचमासाए भवति पच भोसो कग्रो त्ति पचाना प्रक्षिप्ताना भोषउत्सारणं कर्त्तव्यम् ।

जइमि भवे ग्रारुवणा, तइभाग तस्स पन्नरसहि गुणये ।

सेस पचहि गुणिय, ठवणदिणजुया उ छम्मासा ।। (२० उ० गा० ६४८५)

एसा गाहा पढमठवणाए पडिसमणाणस्स षण्मासप्रमाणदिनराशेरानयनस्याकारणलक्षणं रुवणाए जइ मासा तइ भाग त करे इत्यादि ।

का च सर्वसामान्येति पाश्चात्यगाथाया व्याख्यानमाह – ग्रारोवणभागलद्धमास त्ति एतस्मात् १८०, राशे पर्चात्रिशत उत्सारणे १४५ पचप्रक्षेपे १५०, ग्रारोपणा १५, ग्रनया भागे हृते लव्वा मासा १०, एते पचदशगुणा कार्या । पुव्वकरणेण तिदिवसा पच भइया इत्यादिकेन ग्रट्ठारसण्ह मासाण सज्भाग्रो इत्यादि, एवकारो ग्रत्र दृश्यस्ततो दुन्नि ठवणामासा व सोहीय त्ति योज्यम् ।

ग्रन्नेहि सत्तगपु जेहि पचराइदिया गहिय त्ति सर्वे दिवसा ७०। तइयभागलद्ध त्ति तावत्प्रमाणैर्मासैर्भागलव्धान् गुणयेत् । ग्रय प्राचीन वीसियाए ठवणाए पगारो भणिग्रो, पुण वीसियाए वि तहेव नेग्रो । ग्रत एवाह–एव पुण वीसियाए इत्यादि, द्वितीयतृतीयेत्यादि, द्वितीय तृतीये चतुर्थे च स्थापनारोपणस्थानेऽय विशेपो, यथा –

जत्थ उ दुरूवहीणा, न होज्ज भाग च पच हि न हुज्जा ।
एक्काग्रो मासाग्रो, ते दिवसा तत्थ नायव्वा ।।

व्याख्या – पचिकायामारोपणाया पचभिर्भागे हृते द्विरूपहीनत्व मासस्य न प्राप्यते खड वा भवति । चतुर्थे च ठवणारोवणठाणे एकद्विकादिके ग्रारोपणास्थाने पचभिर्भागो न घटते, ततश्च तत्राप्येको मासो द्रष्टव्य । कुत इत्याह – यत एकस्मान्मासात् ते ठवणारोवणदिवसा निष्पन्नास्तत्र द्वितीयादिके ठवणारोवणठाणा ज्ञातव्या । ग्रत एवाह–"जत्थ उ दुरूवहीण न होइ" इत्यादि, ग्रागास वा शून्यमित्यर्थं । तथात्राम्नायात् भोष प्रक्षिप्यते यदा तदारोपणराशे भोषो हीन समो वा प्रक्षेप्तव्यो न त्वधिक ।ग्रत्र सर्वत्र तथा तथा कर्तव्य स्थापनारोपणयोर्मीलन यथाऽशीत्यधिक शतमुत्पद्यते, सेस पन्नास सयमित्यादि ग्रारोवणा एक्काउ त्ति मासद्वयोत्सारणे सत्येकमास एवावशिष्यते ।

क प्रत्यय ? इत्यादि एत्थ सव्वत्थे त्ति इत्थ पचदसियाठवणारोवणाए सर्वमासेषु ठवणामासे ग्रारोवणामासे मासदशके पक्ष पक्षो ग्रहीतव्यो न न्यूनमधिक वा । सव्वत्थ जइहि मासेहीत्यादि तत्र ५, १०, १५, एतास्तिस्रो मासनिष्पन्ना यतस्तिसृष्वपि मासो लभ्यते । पचभिर्भागे हृते सति विंशतिपचविंशत्यादिकाश्चारोपणा द्विमासत्रिमासनिष्पन्ना ग्रतस्तासु द्विमासादयो लभ्यन्ते तत. ग्रारोपणामासैस्तावदभिर्भागलव्ध गुणितव्यम् । छ सय तीसुत्तर त्ति ठवणारोवणाण सवेहणमग्गाणमेय सभोग त्ति, वेयणाउ त्ति स्वाभाविक मास एवेत्यर्थ ।

इयाणि चउत्थमित्यादि इक्कियाए ग्रारोवणाए भागो त्ति एकोत्तरवृद्धया वृद्धत्वात् ग्रारोपणपदानामत्रैकेन भागो हार्य । तहेव काउ जावेत्यादि ठवणारोवणदिवसानुत्सार्य एकक भोपक्षेपेऽस्य १७७, राशेस्त्रिभिर्भागे हृते लव्ध ५६, ठवणारोवणमासद्विकप्रक्षेपे ६१ लव्धम् । एव

दुतिगाइठवणासु वि त्रिचतुर्थठवणारोवणपक्त्या द्वित्र्यादिस्थापनापदेष्वप्येकादय आरोपणा ज्ञेया । पुव्वकयविहिण त्ति एकैकारोपणस्थानवृद्धया एकैकस्थापनापदस्य ह्रास तथा विहीए आरोवणाठाणे आढत्ते इद १७८, ठवणाठाण न भवइ । एव एक्के आरोवणाठाणे उवरि उवरि वड्ढीए एक्किक्क ठवणाठाण उवट्टिए हुसिज्जा इत्येव पूर्वकृते विधि । इह च एगाइसु चउदसतेसु एक्को चेव मासो घेत्तव्वो । पन्नरसोवरि विकलत्ति पन्नरस १५ १८ १६ इत्येते विगता कला पचमरूपा यत्र ते विकला ।

इक्काओ मासाओ निप्फन्न त्ति उद्धरितायामपि कलायामेक एव लभ्यते, न त्वधिक तद्वसेन किंचिल्लभत इति भाव । एवमेकविंशत्यादिषु चतुर्विंशत्यन्तेषु केवल त्ति केवला अनुद्धरितकलाराशय शुद्धा पचकपचनिष्पन्ना इति यावत्, ते पचकभागविशुद्धा द्विरूपहीनत्वकृता ये मासास्तै प्रमाण येपा दिवसाना ते तथा तेभ्य दिनेभ्य इति शेष मासभागा यत्रानेतुमिष्यन्ते यकाभिस्ता स्थापनारोपणा, इय च पोडशिकाप्रभृत्येवाभवति, नार्वाक् इत्याह इक्कियेन्यादि, ते ठविय त्ति एकादश स्थाप्यन्ते सकलश्च छेद तेन सहिता ११, एसि त्ति मासस्स पचमो भागो स विन्नेओ । कोऽर्थ ? मासो पचगुणो सो पक्खित्तो त्ति ।

इदाणिं आरोवणाभागलद्ध ति आरोपणाया भागस्तेन यल्लब्ध एकादशमासाख्य वस्तु सेसा सेस ति यदुद्धरित प्रतिक्रियाजात आरोपणाभागश्च ते परावर्तिताश्च तै, कोऽर्थ ? छेदाशयोर्विपर्यास, कार्य पट्कोऽधपचकाश्चोपरि अत्र पचकेन गुण्यते द्वासततति,जात ३६०, पट्केन पचकगुणने ३०, त्रिंशता भागे हृतेऽस्य ३६० राशेर्लब्धा १२, यद्वा छेदाशकयोर्विपर्यये कृते द्वासप्तत्यधोवर्तिन पचकस्य पट्कोपरिवर्तिनश्चापवर्तन विधेय–अपनयन तयो कार्यमित्यर्थ । तत पट्केन द्वासप्तेतेर्भागे लब्धा १२ । एव सत्तरसाऽसु छेदाशरूपयो पचकयोरुभयोरपि उत्सारण कृत्वा शेषेण छेदेन इतराशे सचयमासभागाभिधायकस्य भागो हरणीय इति, यद्वा अशानशैर्गुणयित्वा छेदाश्च छेदैर्गुणयित्वा भागो हार्य इति, प्रक्रियाद्वयेऽपि न वस्तुक्षतिरिति ततो लब्धा १२, अत्र स्थानद्वये स्थाप्यन्ते एको द्वादशक. पचदशगुण १८० । आरोवणाए जइ विगला दिवस त्ति आरोपणाया पचभिर्भागे हृते शेष यदुद्धरितमित्यर्थ । तेन द्वितीयो राशिर्गुणनीय, अत्रैको विकलो दिवस उद्धरित इत्यर्थ । एक्केण गुणिय तत्तिय चेव स्थापनादिवसेन युक्तश्च द्वादशकस्त्रयोदशकीभूत प्रक्षिप्त पचदशगुणकृतपूर्वराशौ स च राशि झोपरहित सन् अशीत्यधिक शत भवति । एगवीसिया वी इत्यादिठवणा १ आरोवणा २१, असीयसयाओ अवणीए १५१, एयस्स एक्कवीसाए भागो, भाग सुद्ध न देइ इति दस पक्खित्ता १६८, भागे लब्ध ८, ते ठविया सगलच्छेदसहिता, आरोवणाभागे हिए लद्ध ४ दुरूवहीणत्वे कृते मास २, मासस्स य एक्को पचभागो मासदुगे पचगुणे असपक्खेवे कए जाता ११, एक्कियाए वि ठवणाए हेट्ठा पचगो छेओ दिन्नो, तओ आरोवणाभागलब्ध ८, त आरोवणामासगुण कायव्व ति काउ असो असगुणो छेओ छेयगुणो एक्कारसहि अट्ठ गुणिया पचहि एक्को गुणिओ जाया अट्ठासी पचभागा ८८ ठवणारोवणमाससहिय त्ति कायव्वा, एत्थ एक्को ठवणाभागो फेडियव्वो, एव कृते सत्याह "नवरमित्यादि – ज सेस ति ६६ एतच्चारोपणभागाश्च ते परावर्तिताश्च इत्थ तैर्गुणित कार्य पर न गुण्यते प्रक्रियात् (?) किन्त्वपवर्तन पचकयोर्विधेयम्, ततो भागहियलद्धि त्ति – एकादशभिर्नवनवतिभागे हृते लब्ध ६, तिसु ठाणेसु स्थाप्य तत एकनवकः पचदशगुण १३५, द्वितीयस्य विकला दिवसस्यात्रैकरूपत्वात् तेन गुणितो नवक एव भवति, तृतीयश्च पचगुण (पचगुण) सर्वे मिलिता १८६, ठवणादिणजुया दशकझोपरहिता इद १८०, भवति ।

एगतीसेत्यादि ठवणा १, आरोवणा ३१, एतयोरेतस्मात् १८०, उस्सारणे जात १४८, सत्तज्झोपपक्खेवे १५५, आरोपणाए भागे हिते लब्धा ५, ते ठविया सगलछेयसहिता ५, आरोवणाए पचहि भागे दुरूवहीणे कए जाता ४, उद्धरितपचमासस्स एक्को पचभागो, तओ मासचउक्क पचगुणियं असजुय २१, एविकयठवणाए हेट्ठा पचको छेओ दिन्नो १, तओ आरोवणाभागलब्ध पचमासक आरोवणामासगुणं कायव्व ति असो असगुणो छेओ छेअगुणो एकवीसाए पच ५, गुणिया पचहि एक्को गुणिय जाय १०५, पचभागाण ते उ ठवणामाससहिय त्ति कायव्वाए छक्को ठवणापचभागो फेडिओ सेस आरोवणा पचभागा पक्खित्ता जाया सचयमासाण सत्तावीस सय पचभागाणं १२७।

कत्तो कि गहियं ति एक्को ठवणाभागो फेडिओ सेस १२६, तत आरोपणाछेदाशयो. $\frac{२}{५}$ इत्थं परावृत्ति कृत्वा पंचकयोरपवर्तने कृते एकविंशत्या भागे हृतेऽस्य १२६, राशेर्लब्ध ६, एव कृते नवरमित्यादिकस्य चूर्णिवाक्यस्यावसर। एगतीसारोवणा पचहि भागे हृते द्विरूपहीन-कृतमासापेक्षया विगलदिन पचममाससत्क लब्ध वर्तते ततश्चारोपणाशै परावर्तितैर्यल्लब्ध तत् तावत् स्थानस्थ स्थाप्यमान पचषट्का न्यस्यन्त इति।

तत्थिक्को रासी पन्नरसगुणो ९० बिइओ विगलदिवसगुणो ठवणदिवससुत्तो ७, तृतीयादय एकत्र मीलिता १८, ते पचगुणा ९०, नवतिद्वय अशीत्यधिकशत सतकझोषरहितश्च कार्य., अत ऊर्ध्व सामान्यलक्षणमाह आरोवणेत्यादि, ठवणासचयभाग त्ति सचयमासभागान्तर्वर्तित्वात् स्थापनामासभागा अपि सचया भागा उच्यन्ते, स्थापनामासभागा अपनेतव्या इत्यर्थ। पक्खिवतेण-मित्यादिना च ठवणादिणजुया य छम्मासा इति यत् क्रिया तदुक्त, तेइसगल त्ति – परिपूर्णदिन-तया न तु खडरूपतयेति मास चेत्यादिवाक्ये नवमासा दुरूवसहिया पचगुणा ते भवे दिवसा इतीय प्रक्रिया उक्ता, उवउज्ज कायव्वाउ त्ति – भिन्निय ठवणारोवण इच्छतेण ति शेष.।

रासि त्ति हेतुसख्या, ते खंडा सववहारिए इत्यादि, तउ त्ति तेभ्य व्यावहारिकपरमाणु-मात्रकृतखडेभ्य आनत्यादि निश्चयपरमाणुमात्राणि खडान्येकैकस्मिन् वालग्रेऽनन्तानि भवन्त्यसयम स्थानानामपि तत्प्रमाणत्वात् तावतीष्यन्ते कैश्चिदिति पराभ्युपगमार्थ, सहन्नमाण ति कस्मादपि मासात् पचदशपचकदशकादि-कियद्दिनग्रहणरूपतया शेपमुत्सार्यमाणमित्यर्थ। भिन्नेसु उवड्ढी त्ति अपवृद्धि, पाश्चात्यगत्या हानिर्द्रष्टव्या, नवमपूर्वकस्यापि स्तोकेनोन अन्यस्य तदपि बहुतरेणेत्यादिना तावद् यावद् नवमपूर्वस्य तृतीयमाचाराख्य वस्त्विति भद्रबाहुकृता निर्युक्तिगाथा एव सूत्र, तद्धरतीति विग्रह, निशीथकल्पव्यवहारयोर्ये पीठे ते एव गाथासूत्र, तद्धरन्तीति। अथवा निर्युक्ति-धरा सूत्रधरा पीठिकाधराश्चेति त्रितय व्याख्येय। किति या सिद्ध तीत्यत्र सिद्धशब्दो निष्पन्नार्थ, ननु ण एसेवेत्यादि प्रथमस्थापनारोपणपंक्तौ एक्का जहन्न त्ति उत्कृष्ट स्थापनास्थान ५४(१६५)तत्प्रतीत्य जघन्यारोपणाऽग्र १५ द्वितीयादीना तत्र भावात्। तीसं उक्कोस त्ति विंशतिरूपस्थापनास्थानमाद्य प्रतीत्य त्रिंशत् संख्या अप्यारोपणा भवन्तीति, त्रिंशत उत्कृष्टत्व अतिल्ला आरोपणा। उक्कोसिय त्ति जाव ठवणा उद्दिट्ठा छम्मासा ऊणया भवे ताए आरोवणा उक्कोसा तीसे ठवणाए नायव्वा। इत्यनेन लक्षणेन यस्या याऽन्त्या सा तस्य उत्कृष्टा भवति, एयासि मज्झेत्ति पच पच निष्पन्न त्रिंशत् स्थानसख्याना मज्झे त्ति मध्ये वर्तिन्य', तत्र उत्कृष्टास्त्रिंशत् शेषाश्चत्वारिंशदिति सततति वीसिय-ठवणाए उ त्ति भाष्यगाथापद, अस्यार्थ –विंशत्या उपलक्षित आदिभूतया यत् स्थापनारोपणस्थान तत्रैता भवन्तीत्यर्थ। अन्नोन्नवेहओ भवति त्ति अन्यस्यामन्यस्या वेध सम्बन्धोऽन्योऽन्यवेधस्तस्मात्

पचदशाद्यारोपणा एकैकस्मिन् स्थापने सयुज्यत इत्यर्थ । तथाहि—पंचदशात्रिंशत् स्थापनारोपणा विंशतौ सयुज्यन्ते, भूयोऽपि ता एवैकस्थानन्यूना पचविंशत्या सह सयुज्यन्ते इत्येवमन्योऽन्यानुवेध सभाव्यते । होण त्ति विसमग्रहणमिति काउ वि मासाओ कत्थ कय ति दिणाणि गिज्झति पच-पचदशेत्यादिक्रमित्यर्थ । समग्गहण णाम सव्वमासेसु विकत्थइ तुल्यान्येव दिनानि गृह्यन्ते इत्येव-रूप एव कम्म ति एतत् कर्मठवणाठाण पक्तित्रिक प्रतीत्य पचदशाद्यारोपणासु कर्तव्यम् ।

चतुर्थेष्वपि विशेषमाह एगा इत्यादि यथा ठवणा १ आरो० १२, आसीयसयाओ तेरस ऊसारिऊण एककझोपप्रक्षेपे – १६८, वारसहिं भागहृते लब्धमास १४, ततश्च आरोपणामासेन एकलक्षणेन गुणने एतदेव, ततो ठवणारोवणामासद्वयप्रक्षेपे १६, एतावन्त सचया मासा ।

कत्तो कि गहिय ? ति पट्ठवणा माससोहीए १४, तओ आरुवणा जइ मासा तइभाग त कारेइ त्ति क्रियते, अत्रारोपणमास १ इति चतुर्दश एवावतिष्ठन्ते, एव कृते प्रस्तुतचूर्णि वाक्यस्यावसर., एको पि सन्नय भागोनपचदशगुण. क्रियते किन्त्वारोपणाराशिदिनैरिति ततो द्वादशभिर्गुणनेऽस्य १४ जात १६८, ठवणारोवणदिनत्रयोदशप्रक्षेपे एककझोपोत्सारणे च जात १८०, एवमन्या-स्वप्येकाद्यास्वारोपणासु चतुर्दशान्तासु निजनिजदिनैरेव गुणनमिति ।

जइमि भवे गाह त्ति, प्राचीनगाथोक्त एवार्थोऽनया सामान्येनाभिहित , जइत्थी आरोवण त्ति पढमठवणारोवणठाणपतीए इति शेप । अणेग भागत्थ त्ति द्वित्र्यादिभागस्था इत्यर्थ । क्वचिदेवमिति प्रथमस्थापनारोपणस्थानपक्तावित्यर्थ । अहवा – ठवणादिणसजुत्त त्ति अथवा-शब्द होउ त्ति पद श तृ ञ त सयोज्य भूयोऽपि त्याद्यन्त कृत्वा योज्यत इत्याचष्टे, यद्वा शतृऽन्त स्वत एव गम्यते, होइऊण ति क्रियापदमेव कृत्वा योज्यमिति कथयति । ठवणा-दिणसजुत्त त्ति पद च उभयपक्षेऽपि समान, तदय वाक्यार्थ येन गुणकारेणारोपणा गुणिता ठवणादिणयुता सती पण्मासप्रमाणदिनराश्यपेक्षया ऊनाधिका वा भवति स गुणकारस्तस्या-रोपणपदस्य न भवति । एएसि ति एतयो विंशयठवणापचदशकारोवणपदयो एते द्वे आश्रित्येति । कोऽर्थ ? विंशतिं प्रतीत्य पचदशारोपणाया समकरणत्वमाश्रित्य दशकाख्यो गुणकारको न भवति, त्रिशद्रूप च ठवणाठाण प्रतीत्य भवति, इह च दशकगुणकारभणन पाक्षिकारोपणा प्रतीत्य तस्या अप्येकद्विकादिगुणकारपरिहारेण यदुक्त तद् दशस्थापना-स्थानानि प्रतीत्य पाक्षिकारोपणा कृत्स्ना प्राप्यते इति ज्ञापनार्थ । किमपि स्थापनास्थान प्रतीत्य दशगुणाकारपरिहारेण य सती पाक्षिकारोवणा कृत्स्नोच्यते, किमपि च नवगुणा तावद् यावदेक-गुणाऽपि सती कुत्रापि कृत्स्नाऽपि भवति, स्थापनास्थानानि – १६५ । १५० । १३५ । १२० । १०५ ९० । ७५ । ६० । ४८ । ३० । एतेपु एकद्वित्र्यादिगुणा सती यथाक्रम पण्मासप्रमाणदिनराशिपूर्वक-त्वात् पाक्षिकारोपणा कृत्स्ना भवति दशकगुणा नवगुणेत्यादि तावद् यावदेकगुणेति, यदा ओमत्थगपरिहाणीए त्ति पाश्चात्यगत्या योज्यते तदा पूर्वोक्तानि स्थापनास्थानान्यपि पाश्चात्यगत्या योज्यमानानि त्रिंशतादीनि वेदितव्यानि तेन पाक्षिकारोपणा दश कृत्स्ना भवन्ति, नाधिक्या इत्यावेदित भवति, एव वीसिएत्यादि विंशत्यारोपणा अष्टौ स्थापनास्थानानि प्रतीत्य कृत्स्ना भवति, अन्यानि वाऽऽश्रित्य विंशतेर्गुणकारेण गुणिताया अपि पण्मासराश्यपेक्षया हीनाधिकत्व-सभवान्न कृत्स्नत्वसम्भव , तानि चाष्टौ यथा – १६० । १४० । १२० । १०० । ८० । ६० । ४० । २० । एतेपु विंशतिरेकद्व्यादिगुणासती यथाक्रम अशीत्यधिकशतपूरकत्वात् कृत्स्ना भवति, वियाले यथा उ त्ति विचारयितव्या ।

अहवेत्यादि अत्र प्रथमे गाथाव्याख्यानपक्षे प्राधान्य गुणकारगुणितस्य स्थापनापदस्य गौणता गुणकारगुणिते यत् क्षमा तस्य स्थापनास्थापनपदस्य न्यसनात्, द्वितीयव्याख्याने तु प्राधान्य स्थापनापदस्य, गुणकारगुणितस्य च गौणत्व स्थापनापद नियत कृत्वारोपणापदविपये स गुणकार कश्चित् मृग्यो येन गुणिताऽशीत्यधिकशतपूरिका भवतीति कृत्वा तदुपरि माइ त्ति तस्य द्विकस्योपरि त्र्यादयो ये गुणकारास्तै तदुवरि माई इत्यादिवाक्येन तस्मुवरि जेण गुणा इत्यादि गाथोत्तरार्धं व्याख्यात । जइ गुण त्ति येन गुणन यस्या सा यद्गुणा, प्राचीनो गाथोक्त एवार्थोऽनया भग्यन्तरेणोक्त । जेण गुणा आरोवणेत्यादि पण्मासप्रमाणदिनराश्यपेक्षया येन गुणकारेण गुणित्तारोपणास्थापनादिनसयुक्ता विहिता सती यावता ऊना भवत्यधिका वा सा ता व्यवस्थापना प्रतीत्य कृत्स्ना ज्ञातव्या झोषसद्भावात् ।

कियान् पुनस्तत्र झोष ? इत्याह – त चेव तत्थज्झोसण ति यावदून यावदधिकं वा तावत् प्रमाण एतत् स्थापनास्थान प्रतीत्य तस्या झोपो भवति । यथा वीसिय ठवण पडुच्च पक्खियारोवणाए पचओ ज्झोसो लब्भइ तओ तेरससचयामासा निष्पन्ना लब्भति । इति सरिसाभिलावाओ त्ति भाष्यपद । अस्यार्थ –एकद्वित्र्यादिसख्याभिरारोपणा पचदशाद्या गुणिता सत्य. स्थापनादिनयुक्ता यावत्योऽशीत्यधिकशतपूरिका भवति तावत्यस्ता सर्वा सदृशाभिलापा भवति – कृत्स्ना भवतीत्यर्थ ।

कि चेत्यादि जाए ठवणाए त्ति यया स्थापनारोपणयो स्थापनया, अट्ठावीसारोवणमासत्ति व त्ति आरोपणाया १५० पचभिर्भागे हृते लब्धा मासा ३० मासद्विकोत्सारणे सत्यष्टाविंशतिरिति जइ पुण न सुज्झइत्यादि तत्थ जावइएण चेव विणा न सुज्झइ त्ति योज्य । ठवणारोवणामासे नाऊणमित्युक्त प्राग् यतोऽत स्थापनारोपणदिनैर्मासोत्पादनकारणमाह – आगास भवतीत्यादि तत्तिया चेव ते इति यत्सख्या पूर्वमासान् तावन्त एव दिवसास्ते इत्यर्थ । तेहि ति आरोवणदिणेहि इगाइसभावभेदभिन्नाविति ये स्वभावभिन्ना किल भवन्ति तेषु किल नानारूपमासप्रतिपत्ति प्राप्नोतीत्यभिप्राय । पचदशकादिषु मासत्रय यत प्राप्यते ततो द्विरूपहीनत्वसभव ।

कह पुणेत्यादि काओ ठवणमासाओ, कियंतो दिणा गिज्झति, कियंतो वाऽऽरोवणमासाओ सचयमासेहितो वा, कियतो गिज्झति त्ति वितर्कोर्थ । दिवसमाणो समि त्ति सदृश्या स्थापनाया सदृग्या चारोपणायामित्यर्थ । पुव्वकरणेण ति ठवणारोवणदिवसमाणाओ विसोहइत्तु इत्यादिकेन जे पुणेत्यादि आरोपणया भागे हृतेऽस्य १६६ राशेर्ये लब्धा २४ इत्यर्थ । अन्नासु कत्थइ त्ति पूर्वासु तिसृषु स्थापनारोपणपक्तिषु न पुव्वकरण कर्तव्यमित्यर्थ । समदिवसग्गहण न कर्तव्यमित्यर्थ । यथा वीस ठ० २०, वीस आरो० २०, इत्थ ठवणारोवणदिवसे इत्यादिना करणेन तावत् कृत यावत् वरुणोए जइ मासा तइ भागमित्यादि करणेन षोडशसु द्विधाऽष्टाष्टतया व्यवस्थितेषु एक पचदशगुण १२०, अन्यस्य पचगुण ४०, ठवणादिणक्षेपे भवति १८० भवति । अत्र च पढमाणो अट्ठगाओ पक्खो पक्खो गहिओ, पन्नरसगुण त्ति काउ बिइयाओ अट्ठगाओ पच पच राइदिया पचगुणिय त्ति काउ ठवणामासेहि दो दस दस राइदिया इत्येवमत्र समेऽपि ठवणारोवणदिवसमाणेन समदिनग्रहण दृष्ट, तह वि य पडिसेवणाओ णाऊण हीणं वा अहियं व त्ति एक वाक्य यथाप्रतिसेवनमासाश्च ज्ञात्वा हीनत्वेनाधिकत्वेन वा ठवणारोवणासु तथा कथचिद्दिनग्रहण कर्तव्य । यथा – पण्मासा पूर्यन्ते, ते य जे आरोवणाए त्ति अशीत्यधिकशतात् स्थापनारोपणदिनरहितात् ययाऽऽरोपणया तद्रहित कृत तयैव तस्य भागे इत्यर्थ । वीसियठवण

वीसियारोवण च पडुच्च ठवणाए दो मासा आरोवणाए वि दो, तन्नैकस्मिन् ठवणामासे ये दश दिवसा गृह्यन्ते ते पचदशदिनप्रमाणस्थापनामासापेक्षया न्यूना । पचाना दशापेक्षया हीनत्वात्, दशकस्य च पचापेक्षयाधिकत्वाद्, एतदेवाह—कत्थ इ ठवणाए हीणमित्यादि, आरोवणामासेसु दुहा विभत्तेसु त्ति अष्टाष्टतया द्विधा व्यवस्थापितेषु पन्नरस गहिय त्ति पचदशकेनाष्टकस्य गुणनात् तत्र चारोपणामासो वर्तते । द्वितीयश्चाष्टक पचभिगुं ण्यते, विशतिस्थापना प्रतीत्य पाक्षिकस्थापनारोपणाया सर्वत्र पक्ष पक्षो मासा गृह्यन्ते, ततः सचयमासा दश, पचदशगुणा १५०, ठवणारोवणदिनयुता १८०, एवमित्यादि पचियठवणारोवणाए ठवणारोवणदिवसे माणाओ वि विसोहइत्तु इत्यादि करणेन पट्त्रिंशत् सचय। मासा लब्धास्तत स्थापनामासोऽपनीयते ३५, तत प्रतिमासात् पचदिनग्रहणात् पचकेन गुणिते पचत्रिशति स्थापनादिनयुताया १८० । एक्कियाए वि ठवणारोवणाए असीइसचयमासेहितो ठवणामासे फेडिए मास १७६, इत्थ एक्केक्काओ मासाओ एक्केक्को दिणो गहिओ । ठवणादिणजुओ १८० । एव एगियठवणा पंचियाइ आरोवणासु वि. तहा हि – ठवणा १, आरो० ५, असीयसयाओ अवणीए १७४, एक्को झोसो पचभिर्भागे हृते लब्धा ३५, ठवणारोवणामासयुता ३७, ठवणामासे फेडिए ३६, एक्केक्कमासाओ पच पच दिणा गहिय त्ति काउ पचभिगुं णने एकझोपापनयने १८० । तहा ठवणा २, आरो० २ असीयसयाओ अवणीए १७६, दुगुणैर्भागे हृते मासा लब्धा ८८, ठवणारोवणामाससहिया सचया मासा ९०, ठवणामासे फेडिए ८९, तओ मासेहिंतो पत्तेय दो दो दिणा गहिय त्ति काउ दुगेण गुणिए ठवणादिणजुए जात १८० ।

विसमा गाहाए पादत्रिकेण एको वाक्यार्थ' । द्वितीयश्चतुर्थपादेनेति तानु(?)य मासविसमत्तणओ इत्यादि यथा ठव० ३०, आरोव० १५, असियसयाओ अवणीए १३५, पचदशभिर्भागे हृते लब्धा ९, ठवणाए मास ४, आरोवणा एक्को मिलिया सचया मासा १४, ठवणामासापनयने १०, एव कृते प्रस्तुतचूर्णिवाक्यस्यावसरो यथा – स्थापनामासानामत्र विपमदिनैर्निष्पन्नत्वेन मासवैपम्यम् ।

कोऽर्थो ? न पूर्णदिननिष्पन्ना मासा लभ्यन्ते किन्तु दिनाशयुक्ता इति । तथाहि – मासो दिनसप्तकेन दिनार्धेन चात्र निष्पन्न इति, स्थापनामासेपु वि दिनसप्तकस्यार्धस्य च ग्रहणमत्र शेपमासेभ्यश्च पक्षपक्षो गृह्यते इति पचदशगुणिता दश जात १५० । ठवणादिनप्रक्षेपे १८० । एवमन्यास्वपि विपमदशासु कसिणासु ठवणारोवणासु ठवणामासेसु विपमदिनग्रहण द्रष्टव्य, कृत्स्नास्वपि विपमदिवसासु यदि स्थापनामासेसु न पूर्णदिनग्रहण भवति किन्तु दिनाशयुक्तमपि भवति तथापि तत् तथा गृह्यमान तथा कार्य यथा झोपविशुद्ध तद्गृहीत भवति, यथा ठव० २५, आरो० १५, असीयसयाओ अवणीए १४०, झोपदशकक्षेपे कृते दशभिर्भागे हृते लब्धा १०, ठवणारोवणमासयुता सचयमासा १४, ठवणामासोत्सारणे ११, पचदशभिगुं णने १६५, ठवणादिणयुते झोपविसुद्धे १८०, अत्र स्थापनामासेष्वष्टौ अष्टौ दिनानि दिनाशयुक्तानि शेपमासेभ्यश्च पक्ष पक्षो ग्रहीत इति झोपविपमार्थेति झोपात् ३ विपमार्थस्य ठवणामासेपु विपम ग्रहणस्य रूपस्य विशेपप्रदर्शन झोपविशुद्धदिनग्रहणरूपमर्थोऽस्येति विग्रह ।

एवं खलु० गाहा ६४९३ ।

ठवणामासैरुत्सारिते शुद्धा ये झोपमासा आरोपणाया यावन्तो मासास्तत्समैर्भागैः कृता आरोवणादिणेहि व त्ति चतुर्थीस्थापनारोपणपक्तिमाश्रित्य उद्धरितविकलदिनैरित्यर्थ । यथा–शतादिप्रक्षेपेण सहस्र' पूर्यते विसेसिज्जतीत्यर्थः । इति आरोपणामासेभ्य स्थापनामासा विशेष्यन्ते, विशिष्टा क्रियन्ते, पृथक् क्रियन्ते इति यावत्, पण्मासदिनराशिपूरकत्वात्तेपामिति भाव. ।

एगदुतिमाइयाहिं इत्यादि अनेन व्याख्यानेनारोपणाना कृत्स्नाना मध्ये एकस्या आरोपणाया प्रतिनियत सख्यानमाह अहवा – जत्थ सखित्तितरमित्यादि, ते चेव त्ति आलोचकमुखश्रुता यथा-अष्टादशमासा श्रुता तैरशीत्यधिकशताद् भागे हृते लब्धा १० सर्वविशुद्धिसद्भावात् कृत्स्नं चैतत्, अत्रैकैकस्मान्मासादिनदशक गृहीत, अष्टादशमासैर्दशकस्य गुणनेऽशीत्यधिकशतभवनात्, किंचि तत्थ विकल भवइ त्ति किंचिदुद्धरति, परिपूर्णतया यदि स राशिर्न शुद्धचतीत्यर्थ. । तदा तद्भागलब्ध भागहारकस्य यका सख्या तत्प्रमाणै. स्थानैस्तावत्यो वारा न्यसनीयमित्यर्थः । जावइय त्ति विकलयुक्तभागाच्छेपा ये अन्ये भागास्ते यावत् स्थानसख्याकास्तावन्मात्रो राशिर्भागहारगुणो त्ति भागहारेण यो लब्धो राशि स भागहार उक्तस्तेन गुण्यते य. स वा गुणो गुणकारो यस्य स तथा यद्वा साध्याहार योज्यते, यथा विकलयुक्तभागाद् येऽन्ये भागास्ते यावन्तः यावत्स्थानसख्याका स गुणकारो दृश्यस्तेन भागहारलब्धो राशिर्भागहारस्तस्य गुणन गुण्यते वाऽसौ तेनेति विग्रह । यथा – सचया मासा १३ श्रुता, अशीत्यधिकशताद् भागे हृते लब्धा १३, उद्धरिता ११, लब्ध त्रयोदशभि स्थानैर्न्यस्यते, एकश्च भागो विकलयुक्त. कार्य, जात २४। अपरे च द्वादशत्रयोदशभागास्ततो द्वादशसंख्यया त्रयोदशको गुणित. जात १५६, चतुर्विशतेः प्रक्षेपे जात १८०, तथा सचया मासा २५, श्रुता । असीयसयाओ भागे हिए लद्ध ७, उद्धरिता ५, सप्तक पचविशतिस्थानेषु न्यस्यते, एको विकलयुक्त १२, अपरे चतुर्विशतिस्ततः सप्तकेन चतुर्विंशतिर्गुणिता १६८, द्वादशप्रक्षेपे १८० । एवमन्यत्रापि अधुना यदा स्थापनारोपणप्रकारेणाशीत्यधिकशतमुत्पद्यते तदा अकसिणारोपणाया सत्या झोषप्रक्षेपे कृते भागो हर्तव्य इत्युक्त प्राक् इति विकलप्रस्तावादेव यस्या यावत्प्रमाणो झोषो भवति तत्परिज्ञानार्थमाह – "नायव्व तहेव झोसो य" त्ति, तथा यस्य मासस्य यद्दिनप्रमाण गृह्यते इत्येतत् ज्ञात तथा ···झोषो अपि यस्या यावत्प्रमाणो झोप इत्येतदपि ज्ञातव्यमित्यर्थ ।

कथ ? इत्याह – आरोवणा इत्यादि चूर्णिवाक्य, यथा वीसियठवणा पणुवीसारोवणा तयोरशीत्यधिकशतादुत्सारणे कृते जात १३५, आरोपणया भागे हृते लब्धा ५, उद्धरिता १०, एव कृते चूर्णिवाक्यस्यावसर असुज्झमाणो त्ति सर्वथा निर्लोपमध्याल्लघुराशौ यच्छेदाशविशेप. । छेदोऽत्र पचविशतिरूप उद्धरितदशकस्त्वशस्तयोर्विशेषो यस्मात् पतति स तस्मात् पात्यते इत्येव न्यायेन बृहद्राशिमध्याल्लघुराशेरुत्सारणे कृते उद्धरितरूप । अत्र हि दशकपचविशत्योर्मध्ये पचविंशतिर् बृहद्राशि, दशकस्तु लघु, तस्य लघोरुत्सारणे कृते पचविशतेर्मध्यादुद्धरिता. पचदश, एतावत्प्रमाणो झोपोऽत्रारोपणाया भवति, तथा ठ० २०, आरो० २५, अशीत्यधिकशतादुत्सारणे १४५, अत्रारोपणया भागे हृते लब्धा ६, उद्धरिता दश, पचदशभ्यो मध्याद्दशानामुत्सारणे उद्धरिता. पचकपचकरूपो झोपोऽत्रेत्येवमन्यास्वपि छेदाशयोर्विशेपो झोसो विज्ञेय । ततो झोषमित्थं प्रथमत एव विज्ञाय ठवणारोवणदिवसरहितराशिमध्ये प्रक्षिप्यारोपणाया भागो हर्तव्यस्ततो यल्लभ्यते तदारोपणामासैर्गुण्यत इत्यादि प्रागदर्शितप्रकारस्तदूर्ध्वं कार्य ।

कसिणा० २० गा० ६४१६ ।

तेसु भागत्थेसुत्ति यथा ठव० ३०, आरो० १५, असीयसयाओ अवणीए १३५, पचदशभिर्भागे हृते मास ६, ठवणामास ४, आरो० १ ठवणारोवणमाससहिया संचया मासा १४, ठवणामासे फेडिए जाया १०, आरोपणाया एकत्वात् एकभागस्थो दशक पचदशकेन गुणित १५०, अत्र दसस्वपि मासेपु पक्खो पक्खो गहिओ, ठवणादिणजुया १८० ।

अह दुगाइभागत्थ त्ति यथा ठव० ३०, आरो० २५, असीयसयाओ अवणीए १२५, आरोवणया भागे हृते लब्धा ५, आरोवणामासा ३, तैर्गुणित पचक १५, ठवणामास ४, आरोवणमासयुत २२, ठवणामासोत्सारणे १८, आरोपणाया मासत्रयसद्भावात् त्रिभि स्थानै षट् स्थितान् मीलयित्वाऽष्टादश ध्रियन्तेऽत्रैकस्मिन् भागो पचदश दिवसा गृह्यन्ते, अपरयोश्च द्वयोभागयो पच पच इति प्रत्येक भागेषु समदिनग्रहण, ततो भागाना पचदशभि आरोपणामास ३ सहिया सचया मासा पचकेन गुणने ठवणादिनक्षेपे १८० ।

अह कसिणत्ति यथा ठव० २५, आरो० २०, असीयसयाओ अवणीए १३५, पचदशक्षेपे कृते १५०, आरोपणया भागे हृते लब्धा ६, आरोपणास्त्रिभि षड् गुणिता १८०, ठवणामास २, आरोपणामास ३०, सहिया सचया मासा ३३ ठवणामासोत्सारणे आरोपणाया मासत्रयसद्भावात् त्रय सप्तका न्यसनीया, एक पचदशगुण, अपरौ च पचगुणाविति ७०, क्षेपस्य पचदशकस्योत्सारणे पचदशभिर्गुणिते सप्तके त्रयोदश त्रयोदश दिनानि किचिन् न्यूनानि मासाद् गृह्यन्ते, इत्यायाता त्रयोदशसप्तका एकनवतिर्यत स्यात्, अत आह- ता नियमा तेसु मासेसु विसमग्गहणमिति ।

जइ इच्छसि नाऊण० गाहा [१ पृ० ३३७ चतुर्थ भाग]

कस्मात् कियन्ति कियन्ति दिनानि गृह्यन्ते ? इति दिनग्रहणगाथेय, अस्यार्थ –यदीच्छसि ज्ञातु कि तद् ? इत्याह – किं गहियं मासेहि तो त्ति सम्बन्ध , कस्मान्मासाच्च कियद् गृहीतमित्यर्थ । तदा ठवणारुवणा जहाहि त्ति असीयसयाओ ठवणारोवणदिणा उत्सारेहि, मासेहि ति सचयामासेभ्यश्च ठवणामासानारोपणामासाश्चोरय तदूर्ध्वं तु मासेहि ति विभक्तिव्यत्ययात् मासै सचयमासै ठवणारोवणामासैश्च भाग हरेदिति योग ।

केभ्य ? इत्याह – तद्दिवस त्ति विभक्तिपरिणामात् तेभ्य स्थापनामासै स्थापनादिनेभ्य आरोपणामासैरारोपणादिनेभ्य सचयमासैश्च ठवणारोवणमासरहितै असीयसयाओ ठवणारोवणदिणरहियाओ भाग हरेदित्यक्षरार्थ । यथा – ठव २०, आरो० १५, असीयसयाओ उत्सारणे १४५, एत्थ ठवणारोवणठाणे सचया मासा १३, ठवणारोवणमासतिगुत्सारणे स्थिता. १०, तैर्भागो हार्य, अस्या राशेर्लब्धा दिन १४, उद्धरितदिनपचकस्य भागहारकस्य च दशकाख्यस्यापवर्तना देशाना पचमे भागे १ न्यास $\frac{1}{2}$ इति दिनार्धं लब्ध इति सचया मासेपु मासा ३२, दिन १४, दिनार्धं च गृहीत, अर्धं च दशकेन गुण्यते जाता १०, अधस्तनद्विकेन भागे हृते लब्ध दिनपचकम् ।

क प्रत्यय. ? चउदसगुणिया १४०, पचकप्रक्षेपे इत्येव सचयमासैर्भागे हृते सचयदिनप्रमाण यावद्गृह्यते तावदनया गाथायोक्त अधुना ठवणारोवणमासेहितो यावन्तो दिवसा गृह्यन्ते स्वसमासकैर्भागे हृते तत्प्रदर्शनाय गाथामाह –

ठवणारुवणा दिवसा ण० गाहा [२ पृ० ३३७ चतुर्थ भाग]

व्याख्या – ठवणारुवणादिवसाना भागो हार्य , कै ? सतमासै , स्वकीयस्वकीयमासैरित्यर्थ , तत्र च ठवणारोवणदिवसराशे पचभिर्भागे हृते यल्लब्ध तद्द्विरूपेन (?) तत्समासतया भवति, भागे च हृते यल्लब्ध तद्दिवसान् जानीहि, शेप चोद्धरित दिनभागानेव जानीहि, न पुन पूर्णदिनानि इति, यथा ठव० २५ आरो० १५, अत्र च सचया मासा १०, तैर्भागे हृतेऽस्य १४० राशेर्लब्धदिन १४

मासान् गृह्यते, दशकेन गुणिता जात १४०, आरोपणामासेनैकेन भागे हृते आरोपणदिनराशे र्लब्धदिन १५, ठवणमासै त्रिभिर्भागे हृतेऽस्य २५ राशेर्लब्धदिना, मासान् गृह्यन्ते इति २४, उद्धरितश्चैकक स चाष्टकेन गुणितो जाता ८, भागे अष्टकेन हृते लब्धदिन १, मिलित सर्व १८०, ठवणारोवणदिवसा ज्ञानसद्भावे इत्थमुक्त, यदा तु ठवणारोवणराशिर्न ज्ञायते तदा कस्मान्मासात् कियद्दिनानि गृह्यन्त इति कथनार्थमाह—

जइ नत्थि० गाहा [३ पृ० ३३७ चतुर्थ भाग]

व्याख्या – ठवणारोवणराशिर्न ज्ञायते विस्मृतत्वादिकारणतो यदा तदा शिष्यमुखात् श्रुता ये सेविता मासास्तैरशीत्यधिक शत विभजेत्, भागे हृते यल्लब्ध तत ओगहिय ति अवग्रहीतमेकैक स्मान्मासाद्दिनमानमित्यर्थ । इहापि यदुद्धरित तद्दिनभागा अवबोद्धव्यास्ते च लब्धदिनराशिना गुणयित्वा तेनैव लब्धदिनराशिना भाग हृत्वा दिनानि कार्याणि।

क प्रत्यय ? सेवितमासैर्लब्धस्य गुणने तस्य च मध्ये उद्धरितस्य दिनीकृतस्य शत प्रक्षेपे अशीत्यधिकशत वि भवति, यथा श्रुतमासा· १३, एभिरस्मात् १८०, राशेर्भागे हृते लब्ध उद्धरितं ११, त्रयोदश-त्रयोदशभिर्गुणिता १६९, एकादश दिनप्रक्षेपे जात ॥१८०॥ इयाणिमित्यादि अतिक्रमादिषु यथाक्रम प्रायश्चित्त यथा – तप कालाभ्या लघु, द्वितीये तवगुरु, तृतीये कालगुरु, चतुर्थे ङ्का उभयगुरु, प्राभृतवदित्यादि, यद्वा प्राभृत अर्थाधिकारस्तथा प्राभृतच्छेदा अपि, तथा सकलबहुससूत्रेषु ये पदविधय पच ताश्च प्रत्येक दर्शयित्वा तओ वि गय ति तत सम्यग् ज्ञानात् ॥छ॥

गुरुय एक्क ओहाडण ति लघुप्रायश्चित्ताना स्थगनकारित्वात् तस्य पिधानकल्प तत् वृहन्मध्ये लघूनि प्रतिविशती ति भाव । अहवा – साहूणमित्यादि गुरूण अणेगानि सिज्ज त्ति – आलोचकसाधुवहुत्वात् साहूण अणेगालोचणाउ त्ति एपोऽप्यगीतार्थोऽपि सन् जे सेसा मास त्ति उद्धरितरूप पडिसेवओ चेव हाय त्ति प्रतिसेवनादेवेत्यर्थ ।

असचए तेरस पया सचए एगारस पया तिण्णि दिणा छेओ दिज्जइ त्ति दिनत्रय यावदासेवने छेदोऽपि, मास ४, ६ रूपोदय आयतरपरतरपदाभ्या चतुर्भगके चतुर्थशून्य.। अन्ये अन्यतरतरं चतुर्थभं-गक व्रुवते, उभयोर्मध्येऽन्तर तु किंच न कर्तु तरति – शक्नोति अन्यतरतर' जइ इच्छिय करेइ त्ति ईप्सित तप प्रभृतिभेयविकप्पोवलभाउ त्ति दोसु वि सामत्थे सतेऽन्यतरकारत्वात् पुरुपभेदविगप्प सलद्धित्तणउ त्ति गुरुयोग्य भक्ताद्यानय त्ति पच्छित्ते निक्खित्ते कज्जइ त्ति, प्रायश्चित्त तस्य स्थाप्य क्रियत इत्यर्थ', ज वहइ त्ति यत् करोति तत्थ थोवं पणगाइ इत्यादि लघुमाससमापन्नत्वात् तस्य, तथाहि लघुमासलक्षणापन्नस्वस्थानापेक्षया यत् तदधोवर्ति य पंचकादिभिन्नमासान्त तत् स्तोक, तदुपरि च लघुद्विमासादिपारचिकान्तं यत् तपस्तत् बहुलघुमासापेक्षया तस्य वृद्धत्वात् एव लघुद्विमासादिष्वपि हिट्ठिलठाणा थोव ति पणगादि लघुमासात थोव तिगमासियाइ पारचियतं वहू एस अविसिट्ठो त्ति लघुपणगादिमासादिसकीर्णतया प्राप्त अविशिष्ट लघुपचकच्छेदो लघुमासादि छेद इति प्रतिनियतविशेपविशिष्ट. प्रातो विशिष्टच्छेद । अहवेत्यादि यन्नामकैर्मासैस्तप आपन्न छेदोऽपि तन्नामक मासप्रमाण आपद्यते । तवतिय पि तपस्त्रिक, तदेव दर्शयति – मासब्भतरमित्यादिना मासान्तर्वर्तिलघुपचकादिभिन्नमास लघुमास इति ज्ञेयमित्येक तप ., द्वित्रिमासचतुर्मासरूप तपः सर्वं चतुर्मासान्तर्वर्तित्वाच्चतुर्मासाभ्यन्तरमिति द्वितीय, पचमास-

षण्मासरूप षण्मासाभ्यन्तर तृतीय, एव छेदोऽपि योज्यमानोऽत्र पक्षे इत्थ योज्य – यथा पंचमासियाश्रो उवरि छल्लहुय एक्कवारा दिन्न, तश्रो उवरि जइ इक्क वार श्रावज्जइ पुणो वि बीय वार, एव ताव जाव वीसवारा, ताव भिन्नमासछेश्रो पणमाइ पचविशतिपर्यन्तरूपो दातव्य, भूयोऽपि वीसाश्रो परेण श्रावज्जमाणे जाव सत्तरसवारा ताव लघुमासछेश्रो कज्जइ, लघुमासप्रमाणपर्यायोऽपनीयत इत्यर्थ । सत्तरसलहुमासियाण उवरि पुणो एकैकवारासेवनेन श्रावन्ने जाव सत्तरस वारा ताव लघुद्विमासद्विक छेदो दातव्य, पुणो वि श्रावन्ने तदुवरि जाव सत्तरसवारा ताव चउलहुच्छेद कर्तव्य । तदुवरि श्रावन्ने जाव पचवारा ताव लहुपचमासिश्रो छेद कार्य । तदुवरि एक वार सेविए छल्लहु छेदो दिज्जइ, एव सति तप समाननामक मासाभ्यन्तरादिरूप छेदत्रिक प्रदर्शितरीत्याऽतिक्रान्त भवति, एतदेवाह – जम्हा एवमित्यादि सुगम, एतच्च प्राचीनग्रन्थानुसारेण अत्रैव निगमनवाक्ये भिन्नमासाइ-छम्मासतेसु त्ति भणनाच्च सेवनावारासख्यानमनुक्तमपि दृश्यमिति सभाव्यते । तत्त्व तु बहुश्रुता विदति । उद्घातानुद्घातयोरापत्तिस्थानानि, तेषा लक्षणम् ।

अहवा छहिं० गाहा ।

छण्ह मासाण श्रारोवियाण छद्दिवसा गया, ताहे अन्नो छम्मासो श्रावन्नो, ताहे ज तेण अद्धवूढ त सेसिज्जइ, ज पच्छा श्रावन्न छम्मासिय त वहइ, इत्थभूतेन पचमासा चउवीस च दिवसा सोसिज्जति. त पि त्ति नूतन, अह छसु इत्यादि अन्न छम्मासिय परिपूर्ण यदि वहतीत्यर्थ, श्राइमते वा नत्थि त्ति मासचउमासलक्षणा अधरोत्तराभ्या काष्ठाभ्या पातितो जइ तम्मि त्ति अग्नौ, डहिउ ति दग्ध, सहिण त्ति श्लक्ष्णानि, अप्पाण न सधारेइ त्ति असमर्थ स्यात् उग्घायाणुग्घाए पट्ठविए त्ति वहत सत नत्थि एगखधाइ त्ति भाष्यपद एकस्कन्धेन कपोतिद्वयमुद्वोढु न शक्यते – यत्नेचेत्यर्थ (?) । अणवट्ठपारचियतवाणि वत्ति अनवस्थाप्य तप पारचिक वाऽतिक्रान्त समात इति, ते यदा ये न विहिते भवत इत्यर्थ । छम्मासिश्रो छेश्रो छम्मासिश्रो वि जस्स परियाश्रो अश्रो तस्स वि मूल दिज्जइ ।

जहमन्ने० गाहा ।

पर श्राह – अह एव मन्ये यथा यदुतमास सेवित्ता मासप्रायश्चित्तेनैव शुद्ध्यति तथा मास सेवित्वैव द्विमासादि पारचिकान्तप्रायश्चित्तेनाप्यसौ शुद्ध्यतीति तदप्यह मन्ये । श्राचार्योऽप्याह – श्राम ति एतदभ्युपगम्यत एवास्माभिर्नात्र काचिन्नो बाधाक व्येति (?) । यदुक्त चूर्णौ तत् पराभिप्राय सुगम एवेत्यपेक्षया श्राचार्याभिप्राययोजना तु दर्शयति – एस मासिय पडुच्चेत्यादिना भाष्यगाथया हि मासोपेक्षयैव द्विमासादिपारचिक ताव सा न शुद्धिरुक्ता, एतेन सेसा वि गमा सूइय त्ति द्विमास सेवित्वा द्विमासादिना शुद्ध्यतीत्याद्यपि पाप द्विमासादिकदृश्यतम एव चूर्णिकृता दर्शित । थोवे वा बहु चेव त्ति अपराधे इति शेष, श्रावत्ति सुत्ता नाम शिष्यगतप्रतिसवनाद्वारेणापन्नप्रायश्चित्ताभिधायीनि, श्रालोचनाविधिसुत्ता नाम गुरुशिष्ययोर्मध्ये शिष्येण गुरोर्निवेदिते गुरुणा प्रायश्चित्तपर्यालोचनविषयाणि प्रायश्चित्तारोपण गुरुणा यत् क्रियते एतावत् त्वया कर्तव्यमित्येव दानरूपाण्यारोपणासूत्राणि, च उरो सूत्रेणैव भणिय त्ति यथा – प्रत्येकसगलसुत्त प्रत्येकबहुससुत्त सगलसजोगसुत्त बहुसजोगसुत्तमिति, तत्थ जे भिक्खू मासिय परिहारट्ठाण पडिसेवित्ता श्रालोएज्जा, जे दोमासिय, तेमासिय चाउम्मासिय पचमासिय पडिसेवित्ता श्रालोएज्जा इति प्रत्येक सूत्र प्रतिसेवनाया सत्या प्रायश्चित्तापत्ति स्यात् इत्यापत्तिसूत्राण्युच्यन्ते ।

जे भिक्खू बहुसो मासिय पडिसेवित्ता आलोइज्जा, बहुसो दोमासिय,० बहुसो तेमासिय०, बहुसो चउम्मासिय,० बहुसो पचमासिय पडिसेवित्ता आलोइज्जा इति प्रत्येकबहुससूत्र, जे मासिय च दोमासिय च तेमासिय च इत्यादि सगलसयोगसूत्र, जे बहुसो मासियं बहुसो दोमासिय तेमासिय-मित्यादि बहुसयोगसूत्र, एतत् सूत्रचतुष्टयमेतावता ग्रथेन सूत्रोपात्त व्याख्यात, इमे अत्यओ त्ति अर्थो व्याख्यान भाष्यादिक, तस्मात् षड् बोद्धव्यानि, तं जहेत्यादि जे भिक्खू मासाइरेग-दोमासियमित्यादि बहुससातिरेगसूत्र ।

जे भिक्खू साइरेगमासिय च साइरेगदोमासियं च एव सातिरेगमासिय सातिरेगमा-साइणा सह धारेयव्वमित्यादि सातिरेगसजोगसूत्र ।

जे बहुसो सातिरेगदोमासिय बहुसो साइरेगदोमासिय चेत्यादि बहुससातिरेकसयोगसूत्र मासिय सातिरेकमासिय ।

जे भिक्खू दुमासिय सातिरेकदुमासिय चेत्यादि सकलस्य सातिरेकस्य च सजोगसूत्र ।

जे भिक्खू बहुसो मासिय बहुसो सातिरेकमासिय च ।

जे भिक्खू बहुसो दुमासिय बहुसो सातिरेगदुमासिय चेत्यादि बहुसस्स सातिरेगस्स य सजोगसुत्त, इत्येवमापत्तिसूत्राणि दस कथितानि, आलोचनासूत्राण्यपि इत्थ वास्यानि, इम नवमे सुत्ते इति इदमिति सूत्रादर्शोपात्त पचम सूत्र, आलोचना नवमसूत्र च, बहुभगसकुलमिति नवमसूत्रस्य चतुष्कसयोगेनान्त्य चतुष्कसजोगरूप पचम सूत्र षष्ठ च सूत्र बहुसरूप सूत्रोपात्तेना-लोचनादशमसूत्रेऽन्यचतुष्कसयोगरूप तदनेन त्रिशत्सूत्रेषु मध्येऽष्टादशसूत्रेष्वतिक्रान्तेष्वेकोनविंश-तितमे च सूत्रे षष्ठ सूत्रोपात्त सूत्रमिति कथित, न पुनर्नाममात्रेण कथनात् गतार्थममीषा दृश्य, किन्तु पचमषष्ठसूत्रयोराश्रयदर्शनार्थमेवमेतेषु गतेष्वित्युक्त, तथा चाग्रे आलोचनासूत्राणि व्याख्या-स्यति, तद्व्याख्याते च सर्वेषा सदृशत्वात् सर्वाण्यपि व्याख्यातान्येव भवति, तत्राप्याद्य आपत्ति-सूत्रचतुष्कभङ्गे नालोचनासूत्रचतुष्क आरोपणासूत्रचतुष्क सूत्रेणैवोक्त व्याख्यात च द्रष्टव्यम् साति-रेकसूत्रादीनि च षड् व्याख्यास्यति, तत्राप्यालोचनाविषयपचमषष्ठसप्तमाष्टमसूत्रव्याख्याने आपत्ति-सूत्रारोपणासूत्रयोरप्येतानि भवति, आलोचना नवमदशमसूत्रयोर्व्याख्याने आपत्यारोपणासूत्र-योरपि द्विक व्याख्यान भवतीत्यारोपणासूत्रद्विके च नवमदशमे यथाक्रम सूत्रादर्शापत्ते सूत्रे सप्तमाष्टमे भविष्यत इत्यालोचनासूत्राणि षड् व्याख्यास्यति चूर्णिकृत् । इह चालोचनासूत्र-योर्नवमदशमयोरेते पचषष्ठे सूत्रोपात्ते सूत्रे इति कुतो लभ्यते इति न वाच्य । भाष्ये हीत्थमेवाऽ नयो सूचितत्वात्, इयाणि छट्ठमित्यादि इदं पचमषष्ठसंख्यान सूत्रोपात्तमात्रापेक्षया द्रष्टव्यम्, न तु प्राग् दर्शितप्रत्येकसगलसूत्रमित्यादि, नामभेदेन सूत्रदशकापेक्षया नवमदशमसूत्रयोर्ये चतुष्कसयोगास्तेष्वन्तचतुष्कसयोगसूत्रे इमे, एएसि अत्थो पूर्ववदिति, पंचमषष्ठसूत्रोपात्तसूत्रयो-रित्यर्थ । अहवा – त मासादीत्यादि त मासाइपडिसेवियं आलोयणविहीए गुरवो नाउ ज मासाइ-आरोवणाए आरोवयंति त ति काइय भन्नइ इति योग , आरोवणाए वि आरोप्यमान यन्मासादि हीनाधिकतया यथारुहपरे यदारोप्यते तदित्यर्थ । भावओ वा निष्पन्न त्ति रागद्वेषादिना तओ मासियं गुरुपणग वा मुंचतेण लघुदशक चेत्यादि ताव भाणियव्वं जाव गुरु भिण्णमासो त्ति पणगाइयाण सव्वे दुगसजोग त्ति ५॥५॥१०॥१०॥१५॥१५॥२०॥२०॥२५॥२५॥

जाइ कुल० गाहा ।। सा चेयम् –

जाइकुलविणयनाणे दंसणचरणे य खंतिदमजुत्ते ।
मायारहिए पच्छा-णुतावि इय दसगुणोगाही ।।

अमुगसुएण त्ति अमुकश्रुतेन कल्पनिशीथादिकेन दसणेण ति सम्यक्त्वेन मायारहिए इत्यस्य व्याख्यामाह – अपलिउचमाणो इत्यादि अपच्छाणतावीत्यस्यार्थमाह आलोएत्ता नो पच्छेत्यादि केनापि किंचिदकथनीयमालोचित, तत पश्चाद् यो न खेद याति स इत्यर्थ । सुहुमे आलोएइ नो बायरे एव कुर्वंत शिष्यस्य गुरोरेवम्भूत प्रत्ययो जायते, तमेवदर्शयितुमाह – जो य इत्यादिना, इयरठविय व त्ति अणतरठविय, इयाणि एएसि चेव दोण्ह वीत्यादि आलोचनासूत्र-दशकसख्यानमध्ये ये पचमपष्ठसूत्रे तयोरित्यर्थ । जहा पढमबितियसुत्तेसु त्ति यथाद्यसूत्रचतुष्टयमध्ये आद्यसूत्रपदसयोगैस्तृतीय सकलसयोगसूत्र निष्पद्यते यथा च द्वितीयबहुससूत्रपदसयोगैश्चतुर्थ बहुसस-योगसूत्र निष्पद्यते तथालोचनाविषयसातिरेकपचमसूत्रपदसयोगै सप्तम सातिरेकसयोगसूत्राणा सख्यानमाह – नवसया एगसट्ठ त्ति उद्घातिमानुद्घातिमाभ्या मिश्रसयोगसूत्रसख्यानमिद, इम चेत्थ यथा – उग्घाइयसजोगठाणा ५।।१०।।१०।।५।।१ गुण्या , एते पच त्रि अणुग्घाइयसजोगेण गुणिया, जहासख इमे जाया २५।।५०।।५०।।२५।।५।। एव उग्घाइयाण एगदुतिचउपचसयोगो अणुग्घाइय-दुगसजोगेहि दसहि गुणिए जहासख इमे जाया – ५०।।१००।।१००।।५०।।१०।। उग्घाइयाण सव्व-सजोगा अणुग्घाइयदुगसजोगेहि मिलिया ३१०, पुणो उग्घाइयाण सव्वसजोगा अणुग्घाइयतिय-सजोगेहि गुणिया जहासख जाया ५०।।१००।।१००।।५०।।१०।। एए सव्व ३१० पुणो उग्घाइयसव्व-सजोगा अणुग्घाइयचउक्कसजोगेहि पचहि गुणिया जहासख जाया ।।२५।।५०।।५०।।२५।।५।। एए सव्वे मिलिया १५५, पुणो उग्घाइयसव्वसजोगा अणुग्घाइयपचसजोगेहि एक्केण गुणिया जहासख जाया ५।।१०।।१०।।५।।१।। एए सव्वे एक्कत्तीस ३१, एव उग्घाइयाणुग्घाइएहि सव्वसजोग-सुत्ताण संखेवो ९६१ ।, सातिरेकाणि सति सगलसूत्राणि तेषा, तानि च त्रिनवतिसख्यानि, सा च एगतीसत्तिभागेण भवइ, तत्थ एगा एगतीसा य वासातिरेगसगलसुत्ता ।।५।। उग्घातिमादिविशेष-विकलसामान्यसयोगसूत्राणि २६ । सर्वाणि ३१ । द्वितीया च उद्घातिमसातिरेगसूत्र ५ । अनुद्घा-तिमसातिरेकसयोगसूत्र २६ । षड्विंशतिश्च द्विकसयोगा १० । चतुष्कयो ५ । पचकयो १ । एतन्मीलने निष्पद्यते, इय च त्रिनवति पूर्वराशे सयोगसूत्ररूपस्येत्यस्य ९६१ । मीलिता सजायते । १०५४ । बहुससुत्ते वि एव तओ दुगुणिए जात २१०८, पुणो मूलुत्तरदुगेण जाय ४२१६ । दप्पकप्प-द्विकेन गुणने जात ८४३२ । एव एय सखाण पचमछट्ठसत्तमअट्ठमआलोचनाविपयसुत्तचउक्कस्स आइमसुत्तचउक्के वि प्रत्येकसूत्रादिरूपे एतदेव सख्यान, तओ पुणो वि दुगुणिए जात १६८६४ । एवमालोचना सूत्राष्टके एतावत् सूत्रसख्यान जात, अत एवाह – अट्ठसु वि सुत्तेसु इत्यादि आलो-चनासूत्राणा प्रस्तुतत्वात् कथमुक्त एत्तिया आवत्तिसुत्त त्ति, सत्य सदृशत्वाद् येन केनापि व्यपदेशो न दोपायेति सभाव्यते, आपत्तिसूत्राष्टके आरोपणासूत्राष्टके च एतावत्येव सख्या इति त्रिगुणिते पूर्वराशौ त्रिंशत्सूत्रमध्ये चतुर्विंशतिसूत्राणामेतत् सूत्रसख्यान जायते ५५०५९२० । एगाइय त्ति एकादि दशान्ता दशपदा कर्तव्या , तान्येव दशपदान्याह –

त जहेत्यादि एगादेगुत्तरिए इत्यादि, एकाद्या एकोत्तरवृद्ध्या पदसख्याप्रमाणेन स्थाप-नीया., कोऽर्थ ? यावति पदान्यभिलषितानि तावत्प्रमाणा राशय एकोत्तरवृद्ध्या व्यवस्थाप्या ,

गुणकार त्ति दशकादिभिरेककान्तैरधोवर्तिभि भागहारे लब्धस्य उपरितनैरेककादिभिर्दशकान्तैर्गुण-नात् गुणकारा एते उच्यते, तथा ह्युपरितनपक्तौ व्यवस्थितेन दशकेनापरस्य रूपस्य सकलस्य गुणने जाता १० । एककेन भागे हृते भागलब्धा १० । एकक सयोगा इत्यर्थ । तत्र दशकेन रूपस्य गुणनाद्दशको गुणकारो जात, एककश्चाधोवर्तिभागहारक, तथाय दशको नवकेन गुणनाद् गुण्यनवकश्च गुणकारनवकाधोवर्ती द्विको भागहारक , इत्येवमन्यत्रापि गुण्यगुणकारभागहार कल्पना कार्या, तथापि शिष्यहितार्थ सप्रपच दर्श्यते तत्र दशकस्य गुण्यं रूप जात ।५०। भाग एकेन १ लब्ध १०, नवकस्य गुण्य १० । जाताऽस्य ९०, भागो द्वाभ्या २ लब्ध ४५। अष्टकगुण्य ४५, जात ३६०, भाग ३ लब्ध १२०, सप्तकस्य गुण्य १२० गुणिते जात ८४०, भाग ४ लब्ध २१०, षट्कस्य गुण्य २१०, गुणिते जात १२६०, भाग ५ लब्ध २५२, पचकस्य गुण्य २५२ गुणिते १२६०, भाग ६ लब्ध २१०, चतुष्कस्य गुण्य २१०, गुणिते ८४०, भाग ७ लब्ध १२०, त्रिकस्य गुण्य १२० गुणिते ३६०, भाग ८ लब्ध ४५, द्विकस्य गुण्य ४५, गुणिते ९० भाग ९ लब्ध १०, एककस्य गुण्य १० दशेव च, ते दशाना दशभिर्भागे हृते लब्ध एकक दशयोग एक एव, अत्र चोभयमुखराशिद्वयापेक्षया पक्तिरपरा आगतफलानामुत्तिष्ठते यथा १।१०।४५।१२०।२५२।२१०।१२०।४५।१०। तथा च पडिराशिये त्ति द्वितीयस्थाने धृत्वा गुणिय त्ति यदागतफल तस्य पाश्चात्याकेन तथा च नवकाद्दशक पाश्चात्यो भवति, तस्माच्च सप्तक इत्यादि, येन गुणितस्तदधस्तनेन भागे हृते यद् लब्ध तत् फल, आगत-फलाना मीलने २०३३, प्रतिसेवनाशब्देन हि नवममापत्तिसूत्र सूच्यते, आदिग्रहणालोचनारोपणा-सूत्रस्यापि नवमस्य भेदा ज्ञातव्या, एए चेवोग्घायेत्यादि तत्रोद्घातिमानुद्घातिमाभ्या मिश्रयोगे यावन्त उद्घातिमाना दशभिरेककयोगै पचचत्वारिंशदादिद्विकादियोगैश्चानुद्घातिमाना दशापि दश पचचत्वारिंशदाद्यराशयो गुणिता यत्सख्या प्रपद्यन्ते तदुत्तरत्र चूर्णिकृत् दर्शयिष्यति, अत्रताव-दन्यदपि करण पाश्चात्यभगकानयनविपय व्याख्यायते –

उभयमुहं रासिदुगं, हेट्ठिल्लाणंतरेण भय पढमं ।
लद्ध हरासि विभत्ते तस्सुवरिं गुणंतु संयोगा ॥

आद्यपाद प्रतीत अधस्तनादन्त्याद् योऽनतरस्तेन प्रथममधस्तनादुपरिवर्तिन भज, नाम तस्य हार, अधोराशिना अनतरेण विभक्ते सति उपरितनराशौ यल्लब्ध तेन लब्धेन तस्य भागहारकानन्तरराशेरुपरि योऽधस्तद्गुणन कार्य, गुणिकोऽनन्तरस्तेन भागे हृते प्रथमस्य पंचचत्वारिंशद्रूपस्य लब्धा १५, तेनाष्टकस्य त्रिकस्योपरिवर्तिनो गुणने जात १२०, एवमन्यत्रापि द्रष्टव्य, द्वितीय च करण यथा –

उभयमुहं रासिदुगं, उवरिल्लं आइलेण गुणिऊण ।
हेट्ठिल्लभायलद्धे उवरिं ठिए हुंति संजोगा ॥

व्याख्या – आद्यपाद प्रतीत, उपरितनमादिमेन गुणयित्वा हिट्ठिल्ल त्ति आदिमात्, गुणकाररूपादधोवर्तिकोऽधस्तनस्तेन भागे हृते यल्लब्ध तस्मिन् भागहारकादुपरिस्थिते संयोगमान भवति ८/३ ९/२ १०/१, अत्र ह्यकाना वामगत्या नयनाऽङ्कस्यादावपरागो नास्तीत्यादित्व, तदपेक्षया नवकस्य कल्पते, तदपेक्षया चाष्टकस्यादित्वमिति एवं तावद् यावदेककस्यादिमत्वं द्विकापेक्षयति, तत्रह्युपरितनो दशकस्य गुण्यते, आदिमे नवके जात ९०, नवकादधोवर्ती द्विकस्तेन भागे हृते नवत्या लब्ध ४५, नवकादुत्सार्य द्विकाद्युपरिन्यस्ता सा एतावन्ते द्विकयोगाः उपरितना पचचत्वारिंशत्तमा-

दिमेनाष्टकेन गुणयेत् जात ३६०, अष्टकादधोवर्ती त्रिकस्तेन भागे हृते लब्ध १२०, अष्टकमुत्सार्य न्यस्यते १२०, इत्येवमन्यत्राप्युपरित्वादिमत्वाधस्तनादिक स्वबुद्ध्या परिभाव्य सर्वं करणीय, अत्र च करणे द्विकादिसयोगपरिसख्यानमेवागच्छति, एककसख्यान क्वतो दृश्य, सामर्थ्यलब्धत्वात्तस्य वोच्छेददेशकस्य शेप परमेक सकल न्यस्यते, तदपेक्षया दशक आदिमस्तेन तद्गुण्यते जाता, १०, दशकाध एककस्तेन भागे हृते लब्ध १०, ते उपरिभागहारका न्यस्यन्ते, एवमन्यत्राप्येकोत्तर-वृद्ध्या वृध्यो पदसख्याया अग्रेऽपरमेक रूप सर्वत्र न्यसनीय तस्य च पूर्वप्रदर्शितप्रक्रियाविधाने कृते एगसंयोगे सख्यान लभ्यते । अहवा – तीसपयाणेणेत्यादि नवमालोचनासूत्रविपयाणामित्यर्थ , न केवल दशपदेष्वेतेष्वपि करणमिति । उभयमुह रासिदुगमित्यादिक पूर्ववदित्यर्थ , स्थापना कार्या एककादारभ्य एकोत्तरवृद्ध्या अकास्तावद् न्यसनीया यावत् त्रिशत्सख्य – स्थान, नवर त्रिशतोऽग्रे रूप न्यसनीय, त्रिशतोऽधस्तु एककादारभ्य तावद् नेय अका यावदुपरितनैककादारभ्य त्रिशक-तत उवरिल्ल आइमेण गुणिऊण इत्यादिक्रमेण कृते एककयोगा ३०, द्विकयोगा ४३५ इत्याद्यक-स्थानानि भवति, सर्वाग्र त्रिशत्पदाना सूत्रसख्यायाम् १०७३७४१८२३ । नवर – जत्थेत्यादि एककादि-सयोगेन निष्पन्नान् आगतफलरूपान् त्रिशत् पचत्रिशदधिकचतु शताद्यान् भागहारकान् विन्यस्या-नुद्घातिमैककद्विकादिसयोगफल त्रिशदादिक तैर्गुणयेत्; त्रिशतो त्रिशत्स्थानेष्वेकैकस्थानगत फल गुणयेत्, एव त्रिकयोगादिफलेन च गुणयेत् तावद् यावत् त्रिशद्योगफलेन त्रिशत्स्थानगत फलमिति । इम निदरिसण ति निदर्शनमेतत्, सामान्ये य (?) मिश्रसयोगफलगुणनताया न तु त्रिशत्पदागतमिश्र-सयोगफलगुणनविपये तत्रोद्घातिमानामेककयोगा दशपचचत्वारिशदादयश्च द्व्यादिसयोगविपया, एते गुणकारा , एतेषु च गुणकारेण दशाप्यनुद्घातिमसयोगफलान्येककवृद्धयादिसयोगविपयाणि गुण्यन्ते, तत्र दशकेन दशादी यथाक्रमगुणने जात १०० । ४५० । १२०० । २१०० । २५२० । २१०० १२०० । ४५० । १०० । १० । एते उग्घाइय चैककसयोगैर्दशभिर्दश पणयाला इत्यादिकस्य गुणने सपन्ना, एकत्र मीलने जात १०३३० । अधुना उग्घातिमद्विकसयोगै. पचचत्वारिशत्सङ्ख्यैरनुद्घा-तिमानामेकवृद्धयादिसयोगफलानि गुण्यन्ते । जात ४५० । २० । २५ । ५४०० । ६४५० । ११३४० ।

सेसा उवरिमुहुत्तति शेपाणि षट्कसतमाष्टमनवमसयोगफलानि पाश्चात्यगत्या यथाक्रम पचचत्वारिंशता गुणितानि चतुर्थतृतीयद्वितीयप्रथमसयोगगुणितफलसख्यानि भवति, दशकसयोगे चैक-स्मन् पचचत्वारिशदेव एककेन गुणने तदेवेति न्यायात् तदत्र पचकदशकसयोगफल ११३८५, एतद्रूप पृथगुत्सार्य प्रथमसयोगादिफल चतुष्क सम्मील्यते जात १७३२५, अस्य द्विगुणने ३४६५० । पचकाद्युत्सारितफलमीलने जात ४६०३५ । एवमुद्घातिमत्रिकयोगै १२० एतावद्भिर्गुणने दशाना जात १२०० । ५४०० । १४४०० । २५०० । एकत्र मीलने ४६२०० । द्विगुणने ९२४०० । पंचकसयोगे ३०२४० । दशकयोगश्च १२० । एतद्रूपमुभयो पूर्वराशौ मीलने १२२७६० । उद्घा-तिमचतुष्कयोगफलेन २१० गुणने दशादीना जात २१०० । ९४५० । २५२०० । ४४१०० । चतुर्णामेकत्र मीलने जात ८०८५० । द्विराहते १६१७०० । पचकयोगफल ५२९२० । दशकयोगफल २१० । एतद्रूपमुभयो पूर्वराशौ प्रक्षेपे आगत २१४८३० । अनुद्घातिमपचकसयोगफलान्यपि दशादीन्युद्घातिमपचकसयोगफलेन २५२ । एतावद्रूपेण गुणनीयानि, ततो जात २५२० । ११३४० । ५२९२० । ६३५०४ । अथ पचकयोगो विभिन्न उत्सारणीय । पष्ठसतमाष्टमनवमफलानि च यथाक्रम पचकसयोगगुणितानि चतुर्थतृतीयद्वितीयप्रथमसयोगगुणितफलसख्या प्रपद्यन्ते, तत चतुष्कमीलने ९७०२० । द्विराहते जात १९४०४० । एतस्य मध्ये दशकयोगफल २५२ । पचयोगफल च ६३५०४ । एतद्रूपमिलित तत पचकयोगसर्वाग्रमिद २५७७९६ । अमु विभिन्नमुत्सार्य एकद्विकत्रिकचतु-

ष्कसंयोगसर्वाग्रफलानि १०२३० । ४६०३५ । १२२७६० । २१४८३० । अमीषा मीलने जातं ३९३८५५ । पष्ठसप्तमाष्टमनवमसंयोगफलं सर्वाग्रमप्येतावदेवातो द्विगुणिते जातं ७८७७१० । पंचकसयोगफलोत्सारितराशे प्रक्षेपे जातं १०४५५०६ । एतच्च सख्यानमेककादीना नवान्ताना सयोगाना दशकसयोगफलानि च दशादीन्येककगुणानि तावन्त्येव मिलितानि च तानि १०२३ । अस्य च पूर्वराशौ प्रक्षेपे जातं १०४६५२९ । एतदेवाह – मीसगसुत्तसमास इत्यादि, एव कएसु त्ति दशसु पदेपु भगकरद्वारेण विस्तारितेषु यदि सा चेवेत्यादि आरोपणासूत्रदशकस्य यद्यप्यत्र सामस्त्येन पूर्वसूत्रातिदेशो दत्तस्तथाप्युच्चारण अर्थविशेपभंगकसख्यानादिक च प्रतीत्य स द्रष्टव्यो न पुन सर्वथा, तथा चारोपणासूत्रविपयेऽन्यदपि बहु वक्तव्यमस्ति । तथाहि प्रायश्चित्ते आरोपिते गुरुणा तदुद्वहन् आलापसभोगादिना परिह्रियते शेषसाधुभिरिति पारिहारिकत्व, तथा चारोपणा पचविधा भवतीति, तस्या स्वरूप तथा मासाइय पच्छित्तं वहंतो ज अन्न अंतरा आवज्जइ मासादिकं तत्थ ज जम्मि दिवसग्गहणप्पमाण कज्जइ इत्यादिकमर्थ , जातमारोपणासूत्रविषय सर्वमित ऊर्ध्वं सूत्रेण भाष्येण चूर्ण्या च भणिष्यते । इयाणि सुत्तत्थाण ति पुच्छा इति शेष ।

दाणे दवाणे० गाहा १ ॥ (पृ० ३७६ चतुर्थ भाग)

उपहियति सस्तारकादेरुपढौकनेन अन्येनास्यादानमनुपहितविधि जत्तिय चेव भणइ करेइ व त्ति सप्तसु भगकेषु वक्रत्वव्यवस्थापितपदेषु च विधिर्भवति ततश्चाष्टमभगे सर्वजु त्वादनुशास्त्यादीना त्रयाणा करणमेव सप्तसु च मध्ये यस्मिन् यावन्ति वक्राणि तावन्त सर्वे निषेधा. शेषाश्च तद्व्यतिरिक्ता ये ऋजवस्तेषु यदाचार्य उपग्रहादिक कुरुते तृतीयादिषूपलभादिक यद्भणति-तत् सर्व मुत्कलमिति सूचित दृश्यं गमनिकामात्रमिदमन्यथा वाऽभ्यूह्य आवकप्पे इत्यादि अपवादपदे छहिणज्झोसो कज्जइ इति भाव पूर्वश्च अन्यापेक्षया आद्यश्च अहवेत्यादि अत्र पक्षे पूर्वस्मिन्नाद्ये सति अनु-पश्चाद्भावी अनुपूर्वद्विकः तत. पूर्व आद्यत्रिकापेक्षया अनुपूर्वी द्विको यस्या परिपाटया ता सार्वानुपूर्वीति विग्रह, यद्वा पूर्वस्मिन् अनु – पूर्व. तत. स एवेति पूर्वक एव स मास कार्य , यथा पूर्वस्याद्यस्य त्रिकापेक्षया द्विकस्यानुपूर्वस्त्रिको यस्यामिति विग्रह , मत्वर्थीयो वा इन्, नवर तदाक्रम इति दृश्य पुव्वपच्छुत्थरणविकप्पेण चउभंगो कायव्वो त्ति ।

पुव्व पडिसेविय पुव्वं आलोइयं । पुव्व पडिसेवियं पच्छा आलोइय ।

पच्छा पडिसेविय पुव्व आलोइय । पच्छा पडिसेवियं पच्छा आलोइय ।

वितियततियभंगा मायाविणो नरस्स हुंति मायासद्भावं च स्वत एवाग्रे भावयिष्यति किमर्थ पुनरसौ प्रथमत एवानुज्ञा याचते यावता यत्रासौ यास्यति स्थास्यति वा तत्रैवासावनुज्ञां लप्स्यते इत्याह – एव तत्थ गीयत्था संभवाउ त्ति तृतीयभंगशून्य इति तथा ह्याचार्यसद्भावे स्ति यथा प्रथमालोचते तथा विकृत्यादिकं गृहीत्वा गत सन् पश्चादपि तदन्तिके आलोचिते मायार हितश्च पश्चात् प्रतिसेवते इति शून्यता, पश्चादप्यालोचनसम्भवात् पूर्वमेवालोचते इत्यवधारणा परस्य पदस्याघटनात्, अप्पलिउचि वा भावे त्ति मायारहितत्वसद्भावे इत्यर्थ , द्वितीयतृतीयौ च मायासद्भावे स्त , भावशब्दात् पाश्चात्यान्त्यवर्णस्य दीर्घता वाक्यद्वयेऽपि प्राकृतत्वात् ।

अपलिउचिए अपलिउचिय, अपलिउचिए पलिउचिय, ।

पलिउचिए अपलिउचिय, पलिउचिय पलिउचिय चतुर्थभंगः ।

अपलिउंच० गाहा ॥६६२४॥

भाष्ये यद्यप्यपलिउंचणमिति नोक्त तथापि पलिउचण माया, तन्निषेधपरो निर्देशो द्रष्टव्य, सूत्रे अकारयुक्तपदसद्भावादित्याह, पलिउचणमित्यय प्रतिषेधदर्शनादिति, पलिमत्ताए निउत्त त्ति गोभत्ते नियोजिता क्वचित् सूत्रादर्शे आदिचरिमावेव भगौ निर्दिष्टौ, द्वितीयतृतीयौ चार्थलभ्याविति, यदुक्त प्राक् चूर्णौ, तदधुना सूत्रकार स्पष्टीकुर्वन्नाह – अपलिउचिय इत्यादि, अस्यार्थ इति त असणादिग्गहणेति त सामाचारीभासणाभिग्गहेणातित्रामत प्रायश्चित्त भवतीति विशेषयति तथाह्यासन गुरोर्नीचमात्मीयासनसम वा यदि ददाति तदा सामाचार्युल्लघनमेव कृत भवति, एवमित्यादि, वृषभशब्देनेहोपाध्यायो ग्राह्यो, भिक्षुश्च सामान्ययतिरेव, आलोचनार्ह इति शेषः। नवर – कोल्हुगाणुगे विशेष इत्यादि आलोचकस्य कोल्हुगाणुगस्याचार्यादेरालोचनाग्रहणकाले आसन प्रतीत्य विशेषो भवति, निषद्या चेहौपग्रहिकी पादप्रौछनकल्पैव दृश्या, तत्र कोल्हुगाणुगो कोल्हुगाणुगसमीवे उक्कुडुओ आलोइतो सुद्धो, पायपु छणणिसिज्जोवविट्ठो पुण आलोएतो असुद्धो, सीहवसभाणुग वाऽऽलोचनार्हं प्रतीत्य सो निषद्यापायपु छणोवविट्ठो वि सुद्धो इत्येषा भजना। अथ सिंहाणुगतम् वृषभस्य, सिंहानुगत्व वृषभाणुगत्वे भिक्षोश्च कथ घटते अनुचितत्वात्? इति चेद्, उच्यते, आलोचकेन ह्याचार्येणापि निषद्यादिविनयप्रतिपत्तिं कृत्वैवालोचना ग्राह्या नान्यथेति, भिक्षुवृषभयोरपि सिंहाणुगत्वादिव्यपदेशस्तत्काल प्रतीत्य सगच्छते। अत एवाह – जो होइ सो होउ इत्यादि सिंहाणुगत्वादिका च पारिभाषिकी सज्ञा, वसभस्स वसभाणुगस्स त्ति एक कप्पे उवट्ठितस्येत्यर्थ। भिक्खुस्स कोल्हुगाणुगस्स त्ति पायपु छणे उवविट्ठस्स भिक्षुपादनिषद्यात्वासनग्रहेण द्वाभ्या तप कालाभ्या प्रायश्चित्त गुरुक भवति।

दोहि वि० गाहा ॥६६३१॥

एतस्या पूर्वार्धमाचार्यं प्रतीत्य सुगमम्। उत्तरार्धव्याख्यामाह – वसभाणवीत्यादिना। अथ दोहि वीत्यादिगाथाया वृषभमालोचनार्हं प्रतीत्य प्रायश्चित्तनिरूपणपरताया भणिताया प्राग् अपर यथा द्वय भाष्ये दृश्यते तत् किमिति नामग्राह न व्याख्यात – यावता तत्परिहारेण दोहि वीत्यादिगाथैव निर्दिष्टा।

उच्यते – क्वचिद् भाष्ये गाथाद्वय भवति क्वचिन्न नेति ततश्च यत्र तन्न भवति तत्प्रतीत्य तदर्थो मुत्कल एव चूर्णिकृता स्वतन्त्रतया कथित तमभिधाय दोहि वीत्यादि भाष्यदृष्टा गाथापत्तौ यत्र च तद्भवति तत्र पाठान्तरत्वान्नामग्राह ता गाथा गृहीत्वा विवरीपुरिदमाह, क्वचित् पाठान्तर एवमेव य गाहेत्यादि, तच्चेद –

एमेव य वसभस्स वि आयरियाईसु नवसु ठाणेसु।
नवरं पुण चउलहुगा, तस्साई चउलहू अंते ॥६६३२॥

उत्तरार्धव्याख्या यथा – तस्य सिंहाणुगवृषभस्यालोचनार्हस्यालोचके आलोचके आदिभूते सिंहाणुगे आयरिए ४, वसभाणुगवसभस्स मध्यमस्थाने सिहाणुगपदभूते आचार्ये ४, कोल्हुगाणुवसभस्स अन्त्यस्थाने आदिभूता सिंहाणुगा आचार्य ६, द्वितीयगाथा, यथा –

लहु लहुओ सुद्धो, गुरु लहुगो य अंतिमो सुद्धो।
छल्लहु चउलहु लहुओ, वसभस्स उ नवसु ठाणेसु ॥६६३३॥

भिक्षुमप्यालोचनार्हं प्रतीत्य –

एमेव य भिक्खुस्स वि, आलोएंतस्स नवसु ठाणेसु ।
चउगुरुगा पुण आई, छग्गुरुगा तस्स अंतम्मि ॥६६३४॥

इत्यस्या नामग्रहणेनार्थम् –

एमेव य भिक्खुस्स वि, आलोइंतस्स नवसु ठाणेसु ।
चउगुरुगा पुण आई, छग्गुरुगा तस्स अंतम्मि ॥६६३५॥

इत्यस्या नामग्रहणेनार्थमेव मुत्कल चूर्णिकृत् कथितवान्, क्वचित् पुस्तकेऽस्या दर्शनात्, अत एव पाठान्तरत्वेन एतामपि गृहीत्वा व्याख्यातवान्। एव विभागओ एक्कासीतयादि, सीहाणुग आयरिय पडुच्च आलोयणागाही आयरिओ तिहा – सी० व० को० ३।

वसभाणुग सूरि पडुच्च आयरिओ आलोयगो तिहा – सी० व० को० ३।

कोल्हुगाणुग पडुच्च सूरि आलोयणा आयरिओ तिहा सी० व० को० ३ सर्वे ६। आयरिय आलोचनार्हं प्रतीत्य आलोचकवृपभोऽपीत्थ नवविधो वाच्य., ततो भिक्षुरप्येव नवविधो वाच्य.। प्रत्येका सप्तविंशतिर्नवरमाचार्यस्यालोचकस्य प्रायश्चित्त उभयगुरु, वृषभस्यालोचकस्य तपोगुरु, भिक्षोरालोचकस्य कालगुर्विति वाच्यम्। एव वृषभो आलोयणार्हस्त्रिधा सी० व० को०। एतदधो आलोचनाग्राही सूरि पूर्ववद् नवधा वाच्य, वृषभोऽप्यालोचनाग्राही नवधा वाच्य, भिक्षुरपि नवविध इति द्वितीया सप्तविंशति, तृतीया तु भिक्षुमालोचनार्हं प्रतीत्य आचार्यवृपभभिक्षूणा नव नव पदै सप्तविंशतिरिति।

जे त्ति य साहु त्ति जे इति निर्देश. साधुसूचक.। जाणि य तेरसपयाणि एसा पारंचियवज्जिय त्ति पारञ्चिकमेकवारैव दीयते इति तस्यैकविधत्वात् तद्वर्जन, शेषपदानि वाश्रित्यानेकविधा प्रस्थापना भवति, तेषामनेकवार प्रदानात्। त कसिण ति तत् सर्वमारोप्यते। अणुग्गहेण वि त्ति तत्थाणुग्गह छण्ह मासाणमारोवियाण छद्दिवसा गया, ताहे अन्नो छम्मासो आवन्नो, ताहे ज जेण अद्धवूढ त भोसिज्जइ, ज पच्छा आवन्न छम्मासिय त वहति, एत्य पचमासा चउवीस च दिवसा जेण भोसिया एय अणुग्गहकसिण, णिरणुग्गहेण व त्ति जहा छम्मासिए पट्ठविए पंचमासा चतुवीस च दिवसा वूढा ताहे अन्नं छम्मासिय आवन्नो तं वहइ, पुव्विल्लस्स छद्दिणा भोसो।

मानाम्मनान्मास इत्यस्य वाक्यस्यान्वर्थमाह – अत्यानीत्यादिना (?) इह शून्याताविल्यस्य निपातनान्मास इति, असतीति वाक्यं चूर्णिवाक्यत्वात्, यद्वा भौवादिकोऽस गत्यर्थोऽप्यनेकार्थत्वात् व्याप्त्यर्थस्तस्येद रूपमिति, मानाद्वेति स्वमानेन द्रव्यादीन् प्राप्नोतीति मास, तथाहि मासन्निष्पन्न द्रव्य मासिकमुच्यते, इति स्वमानेन द्रव्यप्राप्ति., क्षेत्रे च तास्थ्यात् तद्व्यपदेशो द्रष्टव्य.। परिहार्यत इति चूर्णित्वात्, वाक्य तु – परिह्रियत इति ज्ञेय, तिष्ठन्त्यस्मिन्निति तपोविशेषे इति – स्थान आदिकर्मण्य च उदीरणचेत्यादि द्वन्द्व, अन्त आद्यन्तरूप राति गृण्हातीति अनर मध्यमुक्त, प्रतिदानयो प्रतिसन्निधानयोरिति नावबुध्यते मूलगुणादे प्रतिसेवनोच्यते, आङ्मर्यादयाऽशुद्धनिजाभिप्रायप्रकटनं सन्दर्शनम् आलोचनम्। अरज्यते तमसा व्याप्यते या सा रात्रि निपातनात्, रज्यते वा स्त्र्यादौ प्राण्य-

स्यामिति रात्रि', रात्रिशब्दस्य राग प्रवृत्तिनिमित्त, रागश्च दिवसोऽपि भवतीति रात्रिशब्दोपादानेन तदपि ग्राह्यम्, उभयोऽपीति दिने रात्रौ च इह छम्मासिय परिहारट्ठाण पट्ठविए – अतरा दो मासा पडि वीसइराइया आरोवणा इत्येक वाक्यम् । द्वितीय च आइ मज्झे अवसाणे य सट्ठ इत्यादि तावद् यावत् सवीसतिराइया दो मास त्ति तत आदिवाक्येन सामान्यत विशत्यारोपणाऽऽरोप्यते विशेषतश्च प्रायश्चित्तनिमित्तकवस्तुनो विवक्षायामनूनातिरिक्तमारोप्यते यदि तदा द्वौ मासौ विशतिरात्रिन्दिवाभ्याधिकावारोप्यौ, प्रथमासेवनाया तदुपरि वा सेवने त्रिशतिवृद्धिरेव प्रतिपदं कार्या इति । प्रतिसूत्र सामान्यारोपणा च प्रथमासेवनवारा प्रतीत्य द्रष्टव्या ।

तेण मूल वत्थुणा सहेत्यादि यस्मिन् शय्यातरपिडादावाहृतादिदोपदुष्टे द्विमासिकापत्तिस्तन्मूल वस्तु, तथाचोक्त प्राक् सागारियपिडाहडे दोमासिय ति प्रायश्चित्तनिमित्तक वस्तुद्विस्वान्यूनातिरिक्तद्वे नारोपणयो परमाण भवतीत्यस्यैवार्थमाह – न आवत्तिमाणमित्यादि, आपत्तिर्मासिकद्वयरूपा तद्रूप मान न ।

कोऽर्थं ? मासिकद्वय शुद्ध , न केवला विशत्यारोपणा, किन्तु परमन्यदेवारोप्यते, विशत्यधिकमासद्वयमित्यर्थ । अहवा – इमो अन्नो वि आदेशो इत्यादि अत्र व्याख्यानेन प्रायश्चित्तनिष्पत्तिकारण वस्तूच्यतेऽर्थशब्देन किन्त्वर्थ प्रयोजन तच्चात्मन परस्य वा वैयावृत्यादिकरणरूप तस्मिन् हि क्रियमाणे न प्रायश्चित्ततप उद्वोढु शक्यते, अत उभयतरगादिक कारण प्रतीत्य प्रथमवारासेवने विशत्यारोपणान्यूनातिरिक्ता रोपणीया, एषा च ठवियगा कज्जइ ।

उभयतरागादिगो त्ति काउ पुणो पडिसेविए शठ इति कृत्वा मासद्वय दीयते,पाश्चात्यया विशत्या युक्त एगम्मि प्रायश्चित्ते वुज्झमाणे अतरा अन्नमावज्जइ, त मज्झवत्तिय ठविय कज्जइ त्ति काउ ठवियसन्न लभइ तत्प्रतिपादका सुत्ता ठवियसुत्ता, त पि य वुज्झमाणे पट्ठवियसन्न पि लभइ, एव च वुज्झमाणपच्छित्तवत्तव्वयाभिहाइणो सुत्ता पट्ठवियसुत्ता भन्नति, अतरा आवन्नाण तेसि चेव वुज्झमाणवत्तव्वया प्रतिपादनपरा सुत्ता ठवियसुत्ता । सवीसतिराइय दोमासिय परिहारट्ठाणमित्यारभ्य ठवियसुत्ता तावत् यावद् दसरायपचमासिय परिहारट्ठाण पट्ठविए अणगारे जाव तेण पर छम्मासा इत्येतदतम् । एतावता च पण्मासिए पट्ठविए द्विमासापत्तिलक्षणसूत्रमाश्रित्य ठवियसूत्राण्युक्तानि, इत ऊर्ध्व शेपमासविपये चूर्णिसूत्राणि वाच्यानि, तान्येव भणितुमुपक्रमते ।

इयाणि अत्थवसओ इत्यादिना, एतानि वाच्यत्वादियाणि मासियसजोगसुत्ता लक्षणपत्तेत्यादिवाक्यमिति स्थापनासूत्रादर्शसूत्रसत्कार्यत अत्र च षण्मासिकादिपदमध्ये चूर्णौ द्विमासिकपद न भवति। पण्मासिक प्रस्थापित प्रतीत्य द्विमासिकस्य सूत्रैवाभिहितत्वात्, सव्वाओ लक्खणाओ पत्ताओ त्ति सर्वा सयोगसूत्रजातयो लक्षणात् प्राप्ता सामर्थ्याल्लब्धा इत्यर्थ । पण्मासिके प्रस्थापिते द्विमासिकलक्षणसूत्रोक्तद्विकस्थानव्यतिरिक्ता त्रिकादिसयोगा अन्त्या आद्याश्च द्विकान्यास्यान्त्या एकरूपा , तहा एसि पि सव्वासि ति एतासा मासिकादिषण्मासान्ताना सर्वासा सूत्रजातीना स्थापना १ २ ३ ४ ५ ६

१ २ ३ ४ ५ ६

१५, २०, २५, ३०, ३५, ४० ।

आद्य प्रस्थापितपक्ति, द्वितीया आपत्तिपक्ति, तृतीया आरोपणापक्ति । मासिए पट्ठविए चाउम्मासिए पडिसेविए तीसइमा आरोवणा से अद्धा दिज्जमागा मासचउक्क तीसारोवणाय मिलिय पचमासा भवति। एतदेव ठविया सुत्तमित्थ पदे भवति। एय ठवियसुत्त पट्ठवणासुत्त किच्चा भणइ – पचमासियमित्यादि, तेण पर पचूणा चत्तारि मास त्ति जओ आरोवणा पणुवीसिया

सट्ठा दिज्जमाणा चत्तारि मासा तहाहि सट्ठी इत्यादिन्यायेन मासा ३ आरोवणा २५ पंचदिणा हीणचत्तारिमासा।

इयाणि मासियं सजोगे सुत्तेत्यादि सूत्रादर्शसूत्राणि छम्मासिय परिहारट्ठाणं पट्ठविए अतरा मासिय परिहारट्ठाण सेवित्ता इत्याद्यारभ्य तावद् यावद् अट्ठ मासिय जाव तेण पर छम्मासा इत्येतदन्तानि वाच्यानि, एतान्येव चूर्णिकारो व्यलीलिखत् पट्ठविया सुत्त त्ति एतानि प्रदर्शितरूपाणि प्रस्थापितसूत्रा.ण गतानि। अधुना पट्ठवियसुत्तेसु जे ठवियसुत्ता आसी ते भन्नति–दिवड्ढमासियमित्यादि, अत्र क्वचित् ठवियसुत्ता इति पाठ क्वचिन् पट्ठवियसुत्त त्ति, तत्राद्य उत्तरसूत्रपातनापेक्षया योज्य, यत्र त्वितरसूत्रपाश्चात्यनिगमनतायती एव छम्मासाइपट्ठविए इत्यादिक पण्मासान्ते यथाक्रम ॥१५॥२०॥२५॥३०॥३५॥४०॥ इत्येवरूपा विकला स्थापिता सती स्वस्थानवृद्ध्या पण्मासावसाना यका भवति, सो उक्केति तथाहि पण्मासे प्रस्थापिते यदारोपणा पाक्षिकी आरोप्यमाण सट्ठ इत्यादि न्यायेन दिवड्ढो मासो आरोविज्जइ, इतीय विकला परिपूर्ण-मासानामभावात् यद्यपर पक्ष स्यात् तदा परिपूर्णमासद्वय किल भवे, स च नास्त्यतो विकलत्व तथा स्थापिता चेय, तथाहि जो सो दिवड्ढो मासो ठवियपट्ठविओ यश्च मास प्रतिसेवित: जाया दो मासा। दोमासिए पट्ठविए पुणो वि मासिअ सेवइ, इत्येव पाक्षिक्यारोपणेन तावद्वाच्य यावदपरे पण्मासा पूर्यन्त इति स्वस्थानेन मासिकलक्षणेन वृद्धिरिति। यद्यपीहापरा मासासेवनेन द्विमासादि विजातीय जायते तथाप्येकदोषदुष्ट मासिकयोग्य किंचिदासेवित येन मास एव भवति, ननु दोषद्वयदुष्ट सेवित शय्यातरपिड सोऽप्याहृतदोषदुष्ट इति, येन युगपदेव स मासिकद्वयमा-पद्यते ततो मासस्य प्रस्थापितत्वाद् मासस्यैव च सेवनात् स्वस्थानवृद्धित्वणापरापरमासेवनेन प्रायश्चित्तवृद्ध्या पण्मासावसाना वृद्धिरुक्ता, अधुना तु परिपूर्णमासाना प्रस्थापनद्वारेण रोपणा स्वस्थानवृद्ध्या परस्थानवृद्ध्या सा प्रोच्यते विकलमासप्रस्थापनाकृत सकलमासप्रस्थापनकृतश्च पातनिकाया विशेप, तत्र मासे प्रस्थापिते परमासाना प्रतिसेवने पक्ष पक्ष आरोपणेन यत्र षण्मासा पूर्यन्ते सा स्वस्थाने वृद्धि। एव द्विमासादिष्वपि योज्यम्। यथा मासिके प्रस्थापिते द्विमासिके वा सेविते विशत्यारोपणेन यत्र षण्मासा पूर्यन्ते सा परस्थाने वृद्धि। एव त्रिमासा दिसेवनेन पण्मासे पूरणमपि परस्थानवृद्धि।

मासियठविए इत्यादि प्रायश्चित्तमवहत सत स्वतन्त्र एव शय्यातरपिडादिपरिभोगतो यो मास आपन्न स वैयावृत्यकरणादौ साधोर्व्यापृतत्वात् स्थाप्य: कृत आसीत्। तत कार्ये समर्थिते मास उद्वोढुमारब्ध इति स्थापितत्व, एव दोमासियासु वि पट्ठविएसु त्ति दोमासिए ठवियपट्ठविए दोमासियं पडिसेवइ इत्येव तावद्वाच्य बीयारोवणा तेण पर सवीसइराइया दो मासा सवीस-इरायदोमासिए ठवियपट्ठविए दोमासिय वीसियारोवणा इत्येव तावद्वाच्य यावत् षण्मासा इति स्वस्थानवृद्धि।

दोमासिए पट्ठविए तेमासिए पडिसेविए पणुवीसारोवणा दोमासा। पणुवीसतिराय-दोमासिए पट्ठविए तेमासिए पडिसेविए पणुवीसारोवणा, तेण पर पणुवीसतिराया दोमासिय पट्ठविए तेमासिए सेविए पणुवीसारोवणा, इत्येवं तावद् यावत् पण्मासा इति परस्थानवृद्धि।

इयाणि दुगसजोगे इत्यादि मासे प्रस्थापिते मास द्विमासयो. सेवनेन षण्मासपूरण विधीयते, एवं मासे प्रस्थापिते मासियतेमासियप्रतिसेवनेनद्विकयोगे षण्मासा: पूरयितव्या इत्येवमन्येष्वपि। कारण त चेवत्यादि छम्मासाइरित्तो तवो न दिज्जइ इत्येव रूप। ताहेत्यादि

दुविह त्ति सट्ठाणपरट्ठाणे हिट्ठे विध्यमित्यर्थ । एव एयस्स वीत्यादि एतस्यापि द्वौ मासिकस्य प्रस्थापितस्य सर्वे द्विकसयोगादय सयोगा वाच्या, यथा मासद्विमासरूपो द्विकयोगस्तथा मासादिरूपो पि वाच्य, अत्र स्थाने निशीथसूत्र सर्वं समर्थितम् ।

इत ऊर्ध्वं शे चूर्णिकारो भाष्यकारश्च भणिष्यति । एव तेमासिएत्यादि मासद्विमासादिप्रतिसेवनरूपो द्विकयोग, मासद्विमासत्रिमासादिरूपस्त्रिकादियोग, अत्र च यद्यप्येककयोगा ६, द्विकयोगा. २०, चतुष्कयोगा १५ पचकयोगा ६, षड्योगश्चैकस्तथापि मासिक एव स्थापिते द्विमासिके वा प्रस्थापिते सर्वे ते सगच्छन्ते । त्रैमासिके प्रस्थापिते द्विकयोगत्रिकयोगचतुष्कयोगा एव भवन्ति, न परत षण्मासानामाधिक्यात्, तथाहि – चाउम्मासिए ठवियपट्ठविए मासिए पडिसेविए पक्खिया आरोपणा, तेण पर अद्धपचममासा अद्धपचममासेसु पट्ठविएसु दोमासिए सेविए वीसियारोवणा, तेण पर सपचराया पचमासा तेसु पट्ठविएसु तेमासिए सेविए पणुवीसारोवणा, तेण पर छम्मासा, इत्येव त्रिकयोगमेव यावच्चातुर्मासिकप्रस्थापनानि सगच्छन्ते, तदूर्ध्वं चतुष्कयोगानाश्रित्य चतुर्मासिसेवने आरोपणायास्तत्र त्रिंशद्रूपत्वात् सप्तमासा जायन्ते, षण्मासाधिक्यात् । अत्र चूर्णौ चातुर्मासिकपचमासिकपदे आश्रित्यैककादय षट्कपर्यवसाना ये अका निर्दिष्टास्ते न सयोगसख्याकथनपरतया किन्तु सयोगोच्चारणार्थ स्थापनामात्रतया दर्शिता । एवमङ्कानूर्ध्वमधश्च व्यवस्थाप्य द्विकादय सयोगाश्चार्यन्ते, सयोगसख्यान तु यत्र पदे यावत् तत्प्रदर्शितरूपमेव द्रष्टव्यमित्येव गमनिकामात्रमुक्त, तत्त्व तु बहुश्रुता विदन्ति । एव दोतीत्यादि इह षण्मासपदनिर्देशे सर्वत्र कारण षण्मासाधिकतपोऽभावरूप द्रष्टव्यम् । एयासम्मीत्यादि, पढमसुत्तस्स त्ति आरोपणासूत्रदशकविस्तरस्य प्रस्तुतत्वात् प्रथम प्रत्येकसूत्रमारोपणाविषय तद्विषय सर्वमेतद् द्रष्टव्यम् । द्वितीय बहुससूत्र तत्रापि सर्वमिद द्रष्टव्य बहुसाभिलापेन । नवर – ठवण त्ति छम्मासिए पट्ठविए इत्येव निर्देशरूप ठवणाठाण मासिय पडिसेवित्ता आलोएज्जा इत्येव निर्देशस्वरूप पडिसेवणाठाण कसिणसुत्ते सगले सुत्ते इत्यर्थ । मासिय ठवियपट्ठविए अतरा बहुसो मासिय पडिसेवइ इत्यादिकानि ठवियपट्ठवियसुत्ताणि एतेषु द्विकसयोगत्रिकसयोगादय सयोगा बहुससूत्रेष्वपि द्रष्टव्या इत्यर्थ । जिणाइय त्ति जिनकल्पिकादय हुसिय च त्ति आपन्नाल्लघुतर । पुणो इयर त्ति उत्तरार्धं व्याख्येयम् । ते चेव त्ति ते पुनरित्यर्थ तहारिह त्ति भाष्यपदान्तस्य व्याख्यातेहि आयरिया योगा बूढ त्ति तथा तथा चरिता इत्यर्थ । सावेक्खपुरिमाण भेदकरण तत्र तत्थ निरविक्खे पारचिए इत्यादि निरपेक्षः – जिनकल्पिकादिस्तस्य पारचिकमापन्नस्यापि पारचिक न दीयते, गच्छनिर्गतत्वादेव, तेषा गच्छान्निष्कासनादिकरणरूप हि किल पारचिक भवति, द्वयो प्रायश्चित्तयोर्मध्याद् यत्रैकमग्रेतनपदे याति सार्धेऽपक्रान्तिरुच्यते, अर्धस्यापक्रमणमुत्तरत्र गमनं यत्रेति कृत्वा, एव अणवट्ठे वीत्यादि अणवट्ठावत्तीए अणवट्ठो कज्जइ, मूल वा दीयते, इत्येवमादेशद्वयम् । अतरा बहु ति अनवस्थाप्यकरणपक्षे भिक्षोरगीतार्थेऽस्थिरे प्रकृतकरणे इत्येवरूपेऽन्त्यपदे चतुर्लघुर्भवति । मूलदानपक्षे द्वितीयेऽन्त्यपदे मासगुरुर्भवति । इत्थ वि त्ति अनवस्थाप्यापत्तौ मूलापत्तौ आचार्यादिक प्रतीत्य मूल वा दीयते, छेदो वा क्रियते, इत्युत्तरत्र वक्ष्यति –

सव्वेसिं० गाहा ॥

भाष्यकारेण मूलप्रायश्चित्तमादौ यदुक्त तत्र सर्वेषा जिनकल्पिनादीनामाचार्यादीना च मूलापत्तौ मूल दीयते एव इत्येवमाश्रित्योक्तम्, पारचिकानवस्थाप्ये च सापेक्षाणामेव जिनकल्पिकादेरपीति तच्चिन्ता चूर्णिकृताऽभिहिता, अत्र यन्त्रकमुत्तिष्ठते, यथा जिनकप्पिया आयरिओ कयकरणो २, अक. कर ३, उव कय ४, अकय ५, भिक्खू गीओ थिरो कय ६ । भि,

गी. थि. ऽक. ७। भि. गी. थि. ऽकय. ८। भि. गी. ऽथि. कय. ६। भि. ऽगी. थि. ऽकय. १०। भि. गी. ऽथि. ऽक. ११। भि. ऽगी. ऽथि. क. १२। एतेषु यथाक्रम पारचिकापत्तौ प्रायश्चित्तम्।

द्वितीयपक्तौ निरूप्यते यथा शून्य – ०। पार.। अण.। अण। मू.। मू। । । ६। ६। ६। ६। धी।

तृतीयपक्तौ पारचिकापत्तावाप्यादेशान्तरेणेत्थ, यथा–शून्य अण.। मूल। मू। । द्दी। द्दी। ६। ६। धी। धी। व्व।

चतुर्थपक्तौ सर्वेषा मूलापत्तौ यथाक्रम मू.। मू.। । । द्दी। द्दी। ६। ६। धी। धी। व्व। व्व। ०।

पचमपक्तौ सर्वेषा छेदापत्तौ छे। छे.। द्दी। द्दी। ६। ६। धी। धी। व्व। व्व। ०। ०। ०।

षष्टपक्तौ द्दी। द्दी। ६। ६। धी। धी। व्व। व्व। ०। ०। ०। २५।

सप्तमपक्तौ ६। ६। धी। धी। ४। व्व। ०। ०। ०। ०। २५ी। २५ी। २५।

अष्टमपक्तौ धी। धी। व्व। व्व। ०। ०। ०। ०। २५ी। २५ी। २५। २०ी। २०ी।

नवमपक्तौ। व्व। व्व। ०। ०। ०। ०। २५ी। २५ ी। २५। २५। २०। २०ी। २०ी। २०।

दशमपक्तौ ०। ०। ०। ०। २५ी। २५ी। २५। २५। २०ी। २०ी। २०। २०। १५ी।

एकादशपक्तौ ०। ० २५ी। २५ी। २५। २५। २०ी। २०ी। २०। २०। १५ी। १५ी। १५।

द्वादशपंक्तौ २५ी। २५ी। २५। २५। २०ी। २०ी। २०। २०। १५ी। १५ी। १५। १५।

त्रयोदशपक्तौ। २५। २५। २०ी। २०ी। २०। २०। १५ी। १५ी। १५। १५। १०ी। १०ी।

चतुर्दशपंक्तौ २०ी। २०ी। २०। २०। १५ी। १५ी। १५। १५। १०ी। १०ी। १०। १०। ५ी।

पचदशपंक्तौ २०। २०। १५ी। १५ी। १५। १५। १०ी। १०ी। ५ी। ५ी। ५।

षोडशपक्तौ १५ी। १५ी। १५। १५। १०ी। १०ी। १०। १०। ५ी। ५ी। ५। ५। दशमं।

सप्तदशपक्तौ १५। १५। १०ी। १०ी। १०। १०। ५ी। ५ी। ५। ५। दशम। दशम। अट्ठम।

अष्टादशपक्तौ। १०ी। १०ी। १०। १०। ५ी। ५ी। ५। ५। दशम। दशम अट्ठम। अट्ठम। छट्ठ।

एकोनविंशतिपंक्तौ। १०। १०। ५ी। ५ी। ५। ५। दशम। दशम। दशम। अट्ठम। छट्ठ। छट्ठ। छट्ठ। चउत्थ।

विंशतिपक्तौ। ५ी। ५ी। ५। ५। दशम। दशम। अट्ठम। अट्ठम। छट्ठ। छट्ठ। चउत्थ। चउत्थ। अविला।

एकविंशतितमपक्तौ । ५ । ५ । दशम । दशम । अट्ठ । अट्ठ । छट्ठ । छट्ठ । चउ, । चउ, । अंबि. । अबि. एकासणा ।

द्वाविशतितमपक्तौ । दशम । दशम । अट्ठ । अट्ठ । छ. । छ. । चउ. । चउ. । आयाम । आयाम । एगा० । एगा० । पुरिम० ।

त्रयोविशतितमपक्तौ अट्ठ । अट्ठ । छ. । छ. । च. । च. । आया० । आया. । एगा. । एगा. । पुरि. । पुरि. । निव्वीय ति । एत्थ एक्केत्यादि चरिम पारचिक द्वितीयपक्त्यादौ निर्दिष्ट तस्मादारभ्य तृतीयादिप्रायश्चित्तपक्तिक्रमेण तावन्नयन्ति यावत् पचदशीकपक्तिरिति षोडशाद्या पक्ती नेच्छन्ति, अन्ये तु पचकादुपर्यपि दशमादिष्वपि पदेष्ववस्थान मन्यन्ते ।

चतुर्विंशत्यादिका पक्तीराश्रित्य यन्त्रक यथा छ. । छ. । चउ. । चउ । आया । आया । एगा. । एगा. । पुरि. । पुरि. । निव्वीय ति ।

पचविशतितमपक्तौ चउ. । चउ. । आ । आ. । एगा. आ. । एगा. । पुरि. । पुरि । निव्वीय ति ।

षड्विशतितमपक्तौ आ. । आ । एगा, । एगा. । पुरि. । पुरि० निव्वी० ।

सप्तविंशतिपक्तौ एगा. । एगा. । पुरि । पुरि. । निव्वी. ।

अष्टाविशतिपक्तौ पुरि. । पुरि. । निव्वी. ।

एकोनत्रिशत्पक्तौ निर्विकृतकमादिपद एव ।

पढमस्स० गाहा ।।

जिनकालिकस्य पारचिकापत्तौ मूलापत्तौ वा मूलमेवेत्यर्थ । आचार्यादेस्तु मूलापत्तौ मूल वा दीयते छेदो वा विधीयते इत्ययं विकल्प. । जे सेसे त्ति अस्थिरा कृतकरणा दोन्नि अकयकरणत्ती-त्यादि सप्तमाष्टमनवमा दशमपदविहारेण एकादशद्वादशत्रयोदशपदवाच्याश्च ये तेपामित्यर्थ, द्विकाद्यन्तरितं बहु तरित चेत्यर्थ । अजयण करेतस्सावणाय त्ति तत्राचार्यस्य ४, उपाधाय व्व भि. थिराथिरो न कज्जइ त्ति गीतार्थस्य स्थिरस्यैव भावादित्यर्थ । आयरिय कय १. अकय. २, ठव क ३, अकय. व्व, ४ भिक्खु गीओ कय ५, भिक्खु गी अक. ६, भि. गी. थि कय ७, भि. अगी. थि. ऽक. ८, भिऽगी ऽथि. क. ९, भि गी. ऽथि क. १०, एतेषु दशसु पदेषु प्रायश्चित्त यथा आयरिए कयकरणे पचराइदिय आवन्ने त चेव ५, अकृतकरणादिषु द्वितीयादिषु यथाक्रम अभत्तट्ठो २ । अ ३, अबि व्व. अबि. ५, एगासणा ६, एगा. ७, पुरि ८, पुरि. ९, अते निव्वीय १० ।

द्वितीय प्रायश्चित्तपक्तौ यथाक्रम दसराइदिएसु आढत्त १० । ५ । ५ । अभ व्व अभ. ५ । अ. ६ । अ. ६ । अ. ७ । एगा ८, एगा ९ । पुरि १० ।

तृतीयपक्तौ पचदशासु आढत्त १५ । १० । १० । ५ । ५ । अभ. । अभ । अ । अ । । का. ।।१०।।

चतुर्थपक्तौ यथाक्रम २० । १५ । १५ । १० । १० । ५ । ५ । अभ । अभ । अवि ।।१०।।

पचमपक्तौ २५ । २० । २० । १५ । १५ । १० । १० । ५ । ५ । अभ । १० ।

षष्ठपंक्तौ मासलहुगाओ आढत्त ० । २५ । २५ । २० । २० । १५ । १५ । १० । १० ।

सप्तमपक्तौ द्विमासिकादारद्ध ० । ० । ० । ० । २५ । २५ । २० । २० । १५ । १५ । १० ।

अष्टमपक्तौ त्रिमासिकादारद्ध ०० । ०० । ० । ० । २५ । २५ । २० । २० । १५ ।
नवमपक्तौ चतुर्मासिकादारद्ध ०० । तेमा० । तेमा० । दोमा० दोमा० । ० । ० । २५ । २५।
दशमपंक्तौ लघुपंचमादारद्ध । ५ । व्व । व्व । ३ । ३ । २ । २ । ० । ० । २५ ।
एकादशपक्तौ ६ । ६ । ५ । व्व । व्व । ३ । ३ । २ । २ । ० ।
द्वादशपक्तौ छेद ६ । ६ । ५ । ५ । व्व । व्व । ३ । ३ । २ ।
त्रयोदशपक्तौ मूलाओ आढत्त मू० । छे० । छे० । ६ । ६ । ५ । ५ । व्व । व्व । ३ ।
चतुर्दशपक्तौ अणवट्ठाओ आढत्त अण. । मू० । मू० । छे० । छे० । ६ । ६ । ५ । ५ । व्व ।
पचदशपक्तौ पारचिकादारद्ध पार० । अण० । अण० । मू० । मू० । छे० । छे० । ६ । ६ । लघुपचमासिए ठाइ, अत्र च तपोरूपाणि प्रायश्चित्तानि सर्वाण्यपि लघूनि वाच्यानि, गुरूणि न ।

एसेव गमो० गाहा ॥

अनया गाथयाऽऽरोपणासूत्रदशकविषयमुपयुज्य सर्वं वाच्यमित्याचष्टे तत्र सकलसूत्रविषय उक्त प्राक् शेष तु वाच्यमित्याह एवमित्यादि, एव प्रदर्शितरीत्या उद्घातिममासादिसकलसूत्रारोपणा पुनस्तावद् भणिता। उद्घातिममासद्यारोपणासु च भणितासु अनुद्घातिमविशेषितास्ताएव भणनीया, उद्घातिमानुद्घातिममिश्रसयोगारोपणा अपि वाच्या , मासद्विमासाद्यापन्ने तदुपयुज्यवाच्यमित्यर्थ । एव सातिरेकमासिकाद्यापत्तौ तदारोपणा वाच्या, लहुपचकसातिरेकमासिकाद्यापत्तौ तदारोपणा वाच्या । इत्यादि एतास्वापत्तिषूपयुज्यमानं दातव्यम्। नवर — परिहारो न इति, सयतीना पारिहारिकतपो न दीयते, शेषसाधुभि साध्वीभिश्च परिहृयत इत्युक्त भवति, तस्सेव पाणाइवायस्सेत्ति नस्स त्ति पढमठाणस्स पढमपोरुसीए इत्यादि करकर्मकरणोत्पन्नाभिलाषापेक्षया प्रथमपोरुषीप्रमाणकालमात्रमध्ये तत्करणे मूल, प्रथमपौरुषीमुत्पन्नापेक्षया प्रतीक्ष्य द्वितीयपौरुष्या करणे छेद इत्यादि वाच्यं, न पुन सूर्योद्गमापेक्षया प्रतीक्ष्य पौरुष्या करणे छेद इत्यादि वाच्यम्, न पुनः सूर्योद्गमापेक्षया प्रथमपौरुष्यादि कालमानं ज्ञेयम् । अर्थ गृण्हन् निपद्या निश्चयेन करोत्येव सूत्रेऽपि करोतीति वाचनाचार्येच्छया वा ।

कोऽर्थ. ? न करोतीत्यपि कदा च नेति अर्थे च शृणोति शिष्य उत्कटुक सन् कयकच्छउ त्ति उत्कृतकक्ष विहितसमस्तवसतिप्रमार्जनादिव्यापार सन् अय च सूत्रार्थग्रहणादिविधिरत्रैव प्रागेकोनविशतितमे उद्देशके **"जे भिक्खू अप्पत्तं वाएइ"** इत्यत्र सूत्रे विस्तरेणोक्तस्तस्माद् बोद्धव्य, गणपरिपालक पूर्वगते श्रुते तद्गते अर्थे च लिगेत्यादि लिगक्षेत्रकालानाश्रित्यानवस्थाप्यपारचिको य ते अद्यापि प्रवर्तेते न तु व्यवच्छिन्न इत्यर्थः । द्रव्यलिग बाह्य नपु सकाद्याकार दृष्ट्वा पारचिको विधीयते, असौ सयतो न क्रियते परिहृयते इत्यर्थ । कृतो वा कारणे गच्छान्निसारणेन परिहृयते इति पारचिकता, भावतस्त्वनुपरतमोहोदयभावो परिहार्या, एतेऽनलादयो व्रते नावस्थाप्यन्ते इत्यनवस्थाप्यताऽपि घटते, मलिणविसोहिं व त्ति मलिनत्वविशुद्धि प्रायश्चित्तदान निमित्त च पारिहारिकत्वशुद्धतपोदानरूपमिति सभाव्यते ।

देवय० गाहा —

अल्पर्धिको देवताविशेपोऽन्यतरप्रमादेऽपि वर्तमान शुद्धचारित्रिण छलयेत् किं पुन सर्वप्रमादस्थानवर्तिनम्, अवश्य तस्य देवतापाय स्यादेव, इति त मुक्त्वेत्युक्त, तथा चोक्तम् —

"अन्नयरपमायजुत्र, छलिज्ज अप्पिड्ढिओ न उण जुत्तमि" त्ति —

घाडिय त्ति मित्त जइरि त्ति भाष्यपद यदृच्छा सेत्यर्थ· । कायणुवाइ त्ति भाष्यपद पृथिव्यादीना यत् काय शरीर तस्यानुपातेन विनाशेन वधकस्य बन्धो भवति, पृथिव्यादीना द्वीन्द्रियादीना च वध्याना यानीन्द्रियाणि तदनुपातेन च वीसइमे उद्देसगे भणिय ति प्रभूतत-रेष्यापत्त पण्मासतया कृत्वेत्यर्थ । अववायमतरेणेत्यादि अपवादचिन्ताव्यतिरेकेणैव यतना अयतनाश्च उक्त । कहए न य सावए लज्जि त्ति भाष्यपद – कथके श्रावके च श्रोतरि कथकश्रोतृभ्या लज्जा न विधेया इत्युक्त भवति । वप्परूवग इम ति वप्र केदारो जलभृतस्तेन रूप्यते उपमीयत इति वप्ररूपण, भाविता सजाता गुणा सत्यादयो यस्य तत सस्यवद्भूमौ सजातगुणे सति को यो वप्रस्तस्मिन्नीवेति अकप्पियाण ति अयोग्याना ससारश्चतूरूपो गति चतुष्कभेदात् पच-प्रकारश्च एकेन्द्रियद्वीन्द्रियत्रीन्द्रियादिभेदात् । पट्प्रकारश्च पृथिव्यप्प्रभृतिभिर्भेदात् इति सम्भाव्यते । (सभाव्यन्) घोर त्ति क्वचित् पाठो भाष्ये क्वचिच्च दीहे त्ति ततो द्वितीयपाठ-मप्यर्थतो व्याख्यातवान्, दीह कालमित्यनेन, अनवदग्रोऽपरिमित ।

इदानी चूर्णिकारो यदर्थं मया चूर्णि कृता इत्येतदाविष्करोति –

जो गाहेत्यादि गाथा शब्देन भाष्यगाथा निबद्धत्वादभिधीयते, ततो गाथा च सूत्र च तयोरर्थ इति विग्रह । पागडो त्ति प्राकृत प्रगटो वा पदार्थो वस्तुभावो यत्र स, तथा परिभाष्यतेऽर्थोऽनयेति परिभाषा चूर्णिरुच्यते ।

अधुना चूर्णिकार स्वनामकथनार्थं गाथायुग्ममाह –

अतिथि चेत्यादि वर्गा इह अ,क,च,ट,त,प,य,श, वर्गा इति वचनात् स्वरादयो हकारान्ता ग्राह्या । तदिह प्रथमगाथया जिणदास इत्येवरूप नामाभिहित, द्वितीयगाथया तदेव विशेषयितु-माह – जिणदास महत्तर इति तेन रचिता चूर्णिरियम् ।

सम्यग् तयाऽऽम्नायाभावादत्रोक्त यदुत्सूत्रम् ·· (?) ।
मतिमान्द्याद्वा किञ्चित्तच्छोद्धच श्रुतधरैं कृपाकलितै ।

श्रीशालिभद्रसूरीणा, शिष्यै श्रीचन्द्रसूरिभि ।
विशकोद्देशके व्याख्या, दृब्धा स्वपरहेतवे ॥१॥

वेदाश्वरुद्रयुक्ते, विक्रमसवत्सरे तु मृगशीर्षे ।
माघसितद्वादश्या समर्थितेय रवौ वारे ॥२॥

परिशिष्टानि

प्रथमं परिशिष्टम्

निशीथ-भाष्यगाथानामकारादिवर्णक्रमेणानुक्रमणिका [1]बृहत्कल्पभाष्यस्य समानगाथानामङ्कनिर्देशश्च ।
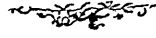
अ	नि.भा.गा.	बृ.भा.गा
अइयाण णिज्जाण	१२८	
अइयारो वि हु चरणे	५४३१	
अइरहस्स धारए पारए	६७०३	
अइरेगोवधिगहण	२८४	
अइमेस इड्ढि-धम्मकहि	३३	
अउणासीत ठवणाण सत	६४५८	
अकयकरणाय गीया	६६५८	
अकयकरणा वि दुविहा	६६५०	
अकरडगम्मि भाणे	५८८५	४०६०
अकसिणमट्ठारसग	९४२	३८७३
अकसिणमगलग्गहणे	९४०	
अक्कतितो य तेणो	३६५०	
अक्कुट्ठतालिते वा	२७८९	२७१०
अक्खरलभेण समा	४८२५	
अक्खरवजणसुद्ध	५४८८	५३७३
अक्खाण चदणस्स वा	५१२	४९०९
अक्खातिगा उ अक्खाणगाणि	५२११	
अक्खादी ट्ठाणा खलु	२३०१	
अक्खा सथारो य	१४१६	४०९९
अक्खी वाहू फुरणादि	४२९९	
अक्खुण्णेसु पहेसू	३१२६	२७३७
अगडे भातुए तिल	२१५०	
अगणि गिलाणुच्चारे	४१४३	५२६५
अगणि व गणि बूया	२६२०	
अगदोसहसजोगो	३२८२	
अगमकरणादगार	११४१	३५२२
अगमेहि कतमगार	१४४०	
अगुत्ति य बभचेरे	५३२	२५९७
अग्गघातो हणे मूल	६५३१	

	नि.भा.गा.	बृ.भा.गा
अग्गहण जेण णिसि	११५६	३५३७
अग्गहणे कप्पस्स उ	५६८३	३०९२
अग्गहणे वारत्तग	५८८८	४०६४
अग्गिकुमारुववातो	५७४३	३२७४
अगीतस्स ण कप्पति	५२५१	३३३२
,,	५३७४	
अगीतेसु विगिचे	१९९४	
अगीया खलु साहू	५२५३	
,,	५३७६	
अचित्तमसबद्ध	६१८	
अचियत्त-कुलपवेसे	२८३४	५५६७
अचियत्तमतरायं	४५०७	
अच्चावेढण मरणतराय	३९८१	
अच्चित्तसोत तं पुण	६०१	
अच्चित्ता एसणिज्जा य	६२७९	
अच्चित्ते वि विडसणा	४८४४	९८४
अच्चीकरण रण्णो	१५६९	
अच्चुसिण चिक्कणे वा	४०६५	१८२५
अच्छताण वि गुरुगा	२५७९	
अच्छतु ताव समणा	२०२७	१६७६
अच्छिज्ज पि य तिविह	४५००	
अच्छेज्जऽणिसट्ठाण	४५२३	
अच्छे ससित्थ चव्विय	२९६०	५८५५
अजतण कारिस्सेव	४४८	
अजरायु तिण्णि पोरिसि	६१०७	
अजिण सलोम जतिण	३९९९	
अजिणादी वत्था खलु	५९१६	
अज्ज अतियानि णीति व	१२९	
अज्जसुहत्थाऽऽगमण	५७४६	३२७७
अज्जसुहत्थि ममत्ते	५७५१	३२८२

१ आगम प्रभाकर श्री पुण्यविजय जी द्वारा सम्पादित ।

ई

उ

ज

त

र

ल

२

द्वितीयं परिशिष्टम्

निशीथचूर्णौ चूर्णिकारेणोद्धृतानि गाथादिप्रमाणानि

	विभाग	पृष्ठ
अकाले चरसि भिक्खू	१	७
[दश० अ० ५, उ० २, गा० ५]		
अचिरुग्गए य सूरिये	१	२१
[ ]		
अणुग्घातियाण गुणिया	४	३६७
[ ]		
अट्ठविहं कम्मरयं	१	५
[ ]		
अट्ठारसपयसहस्सिओ वेदो	१	२
[ ]		
अट्ठारसपुरिसेसुं	१	१३२
[निशीथभाष्य, गा० ३५०५, तुलना]		
अत्थिणं भन्ते लवसत्तमा	४	४००
[ ]		
अन्न भंडेहि वणं	२	१७७
[कल्पबृहद्भाष्य]		
अपत्थं अंबगं भोच्चा	३	२५०
[उत्त० अ० ७, गा० ११]		
अपि कर्द्दमपिंडाना	१	६५
[ ]		
अप्पे सिया भोयणजाए	३	५४७
[दश० अ० ५, उ० १, गा० ७४]		
अप्पोवही कलहविवज्जणा य	४	१५७
[दश० चू० २, गा० ५]		
अब्भतरगा खुभिया	१	२१
[ ]		
अब्भुवगते खलु वासावासे	३	१२२
[आचा० श्रु० २, अ० ३, उ० १, सू० १११]		

अभिति छच्च मुहुत्ते

[

अरसं विरसं वा वि

[दश० अ० ५, उ

अरहा अत्थं भासति

[बृहत्कल्पभ

अवसेसा णक्खत्ता

[

अ (आ) वती केयावंती लोगंसि

[आचा० श्रु० १,

असंसत्त

[

असिवे ओमोयरिए

[

अहयं दुक्खं पत्तो

[

अहाकडेहि रंधंति

[

आगपइत्ता अणुमाणइत्ता

[

आचेलुक्कुद्दे सिय

[

,,

[

आदिमसुत्ते भणिते

[

आणाएच्चिय चरणं

[

३

तृतीयं परिशिष्टम्

चूर्णौ प्रमाणत्वेन निर्दिष्टानां ग्रन्थानां नामानि

		विभाग	पृष्ठ
अग्घकंड	(अर्घकाण्ड)	३	४००
अत्थसत्थ	(अर्थशास्त्र)	३	३९९
अणुओगदार	(अनुयोगद्वार)	४	२३५
आचारप्रकल्प	(निशीथ-सूत्र)	१	२९
आचारप्राभृत		१	३०
आचारांग		३	१२२
आयारग्ग (आचाराग्र=निशीथ)		४	२५२
आयारपकप्प	(आचारप्रकल्प)	१	२,५,३१
आयारपगप्प	(,,)	४	७३
आयारवत्थु	(आचारवस्तु)	३	६३
आयार	(आचार)	१	२,३,५,३५
,,		३	२१२
,,		४	१९३
,,		,,	२५३
,,		,,	२५४
,		,,	२६४
आवश्यक		२	३३
आवस्सअ	(आवश्यक)	४	२५४
आवस्सग	(आवश्यक)	१	१४६
,,		४	७३,१०३,
,,		,,	२४०
इसिभासिय	(ऋषिभाषित)	४	२५३
उग्गहपडिमा (अवग्रहप्रतिमा, आचा० २-७)		१	२
उत्तरज्झयण	(उत्तराध्ययन)	२	२३८
,,		४	२५२
उपधानश्रुत	(आचाराग १-९)	१	२
ओहणिज्जुत्ति	(ओघनिर्युक्ति)	२	४३९
,,		३	४०,४४९,
,,		,,	४५०,
,,		,,	४६१
,,		४	९४,१०९,
,,		,,	१२०
कप्प	(कल्प)	१	३५
,,		३	३६८,
,,		,,	५३२
,,		,,	५८३
,,		४	३०४
कप्पसुत्त	(कल्पसूत्र)	३	५२३
,,		४	२३
कप्पपेढ	(कल्पपीठ)	१	१३२
कप्प-पेढिआ	(कल्पपीठिका)	१	१५५
खुड्डियायारकहा (क्षुल्लकाचारकथा, दश० अ० ३)		४	२४३
गोविंदणिज्जुत्ति	(गोविन्दनिर्युक्ति)	३	२१२
		,,	२६०
,,		४	९६
चदगवेज्झग	(चन्द्रकवेध्यक)	४	२३५
चेडगकहा	(चेटककथा)	४	२६
चदपण्णत्ति	(चन्द्रप्रज्ञप्ति)	१	३१
छज्जीवणिया	(षड्जीवनिका) दशवै० अ० ४	३	२८०
,,		४	२६८

४

चतुर्थं परिशिष्टम्

निशीथभाष्यचूर्ण्यन्तर्गता दृष्टान्ताः

प्रथम भाग

विषय	दृष्टान्त	पृष्ठ सख्या
अप्रशस्त भावोपक्रम	गणिका, ब्राह्मणी और अमात्य	३
अकाल स्वाध्याय	तक्र वेचने वाली अहीरी	८
,,	भृ ग वजानेवाला किसान	८
,,	शख वजाने वाला	८
,,	दो छाणहारिका वृद्धाएँ	८-६
विनय	श्रेणिक राजा औ र विद्यातिशयी चाण्डाल	६
भक्ति और वहुमान	शिवपूजक ब्राह्मण और भील	१०
उपधान-तप	असगड पिता आभीर	११
निह्नवन=अपलाप	विद्यातिशयी नापित	१२
शका और अशका	दो वालक	१५
काक्षा और अकाक्षा	राजा और अमात्य	१५
विचिकित्सा और निर्विचिकित्सा	विद्यासाधक श्रावक और चोर	१६
विदुगु छा=साधुओ के प्रति कुत्सा	एक श्रावक-कन्या (श्रेणिक पत्नी)	१७
अमूढदृष्टि	सुलसा श्राविका और अम्मड परिव्राजक	२०
उपवृ हण	श्रेणिक राजा	२०
स्थिरीकरण	आचार्य आषाढभूति	२०-२१
वात्सल्य	वज्रस्वामी द्वारा सघरक्षा	२१-२२
,,	नन्दीषेण	२२
विद्यासिद्ध	अज्ज खउड	२२
लब्धिवीर्य	महावीर द्वारा गर्भ मे माता त्रिशला की कुक्षि का चालन	२७
स्त्यानर्द्धि निद्रा	पुद्गल-भक्षी श्रमण	५५
,,	मोदकभक्षी श्रमण	५५
,,	शिरश्छेदक कुम्भकार श्रमण	५५
,,	गजदन्तोत्पाटक श्रमण	५६
,,	वटशाखा-भञ्जक श्रमण	५६

५

पंचमं परिशिष्टम्

निशीथभाष्यचूर्ण्यन्तर्गतानां विशेषनाम्नां विभागशोऽनुक्रमणिका

४
जैन श्रमणी

५
जैन निह्नव

६
प्रतिमा

७
पडिमा (अभिग्रहविशेष)

८

अध्वकल्प

९

अन्यतीर्थिक देव

१०

अन्यतीर्थिक श्रमण और श्रमणी

११

परिव्राजक

१४

चक्रवर्ती, बलदेव और वासुदेव

१५

राजा, राजकुमार और अमात्य

२२

जनपद

२३

ग्राम, नगर, नगरी आदि

२४

उद्यान

२५

अरण्य

२६

कुल

२७

वंश

२८

ज्ञाति और शिल्पी

सोवाग	३	५२७
सोहक	२	२४३
सोधग	३	२७१
हरिएस	१	१०
,,	३	२७०
हेट्ठण्हावित	२	२४३

२९

पशु-पक्षि आदि-पोषक

अय-पोसय	२	४६८
आस ,,	,,	४६८
इत्थी ,,	३	२७१
कुक्कुड ,,	२	४६८
चीरल्ल ,,	,,	,,
तित्तिर ,,	,,	,,
पोय ,,	,,	,,
मयूर ,,	,,	,,
महिस ,,	,,	,,
मिग ,,	,,	,,
मेढ ,,	,,	,,
मोर ,,	२	२४३
लावय ,,	२	४६८
वग्घ ,,	,,	,,
वट्टय ,,	,,	,,
वसह ,,	,,	,,
सीह ,,	,,	,,
सुण्ह ,,	,,	,,
सुय ,,	,,	,,
सूयर ,,	,,	,,
हत्थि ,,	,,	,,
हस ,,	,,	,,

३०

दमक, मेठ और आरोह

आस-दमग	२	४६८
हत्थि-दमग	,,	,,
आस-मिंठ	,,	४६९
हत्थि-मिंठ	,,	,,
आस-रोह	,,	,,
हत्थि-रोह	,,	,,

३१

सार्थवाह

दढमित्त	४	३६१
धणमित्त	४	३६१
माकंदियदारग	४	२१०
सागरदत्त	३	८७

३२

सामान्य व्यक्ति

इ ददत्त	२	१५,१४७,२४५,३३४
,,	२	४२०
इंदसम्म	२	१७६
उसभदत्त	३	२३९
जण्णदत्त	१	३१
देवदत्त	१	२,३१
,,	४	३०५
पेढाल	३	२७७
विण्हुदत्त	१	३१
सत्यकि	३	२३६
सोमदेव	३	२३९
सोमसम्मा	२	१५
सोमिल	३	२३९

३३

नारी

अच्चकारियभट्टा	३	१४९
असगडा	१	११
उमा	१	१०४
कविला	१	१०
किण्हगुलिया	३	१४२
खडपाणा	१	१०४
जयती	४	४६
जेट्ठा	३	२७७
तिसला	१	२७
देवती	१	१०३
धणसिरी	४	३६१
धारिणी	३	१५०
पउमसिरी	४	३६१

सभाष्यचूर्णि निशीथसूत्र ५६३

३७
पूजा

ण्हवण—	२	१३७,३३४
समण—	३	१३१
सुय —	४	२-६

३८
नाणक (मुद्रा)

उत्तरापहक	२	६५
कवड्डग	३	१११
कागणी	,,	,,
कुसुमपुरग	२	६५
केवडिए	३	१११
केतरात	,,	,,
चम्मलात	,,	,,
णेलग्र (रूपक)	२	६५
तब	३	१११
दक्खिणापहग	२	६५
दीविच्चिक	,,	,,
दीणार (सुवण्ण)	३	१११,३८८
पाडलीपुत्तग	२	६५
पीय (सुवण्ण)	३	१११
रुप्प	,,	,,
साहरक (रूपक)	२	६५

३९
पात्र

अय	३	१७१
कणग	,,	,,
कट्ठोरग	१	५१
करोडग	,,	,,
कस	३	१७१
चम्म	,,	,,
चेल	,,	,,
जायरूव	,,	,,
तउय	,,	,,
तव	,,	,,
दन्त	,,	,,
मकुय	१	५१
रुप्प	३	१७१
वइर	,,	,,
सिग	३	१७१
सिप्पी	१	५१
सुवण्ण	३	१७१

४०
पानक

उदग	३	२८७
कजिग	२	२५३
खीर	३	२८७
खड	२	१२३
गुल	२	,,
चिचा	२	,,
तक्क	३	२८७
द्राक्षापानक	२	२२३
दालिम	२	१२३
परिसित्तग	२	२५३
मज्ज	३	२८७
मुद्दिता	२	१२३
सक्करा	२	,,

४१
विशिष्ट भोज्य पदार्थ

इट्टगा	३	४१६
खड	२	२८२
घयपुण्ण	२	२८०
मण्डग	२	२८२
सत्तागल	३	४१६
हविपूय	२	२८०

४२
वस्त्र

असुय	२	३९९
आईण	२	३९९
आभरण विचित्त	२	३९९
उट्टिय	२	५७
उण्णिय	२	,,
कणग-कत	२	३९९
कणग-खचिय	,,	,,
कणग-चित्त	,,	,,
कप्पासिय	,,	,,
किट्ट	,,	,,
कुत	,,	,,

६८

मंगल			पडह्	,,	,,
चामर	३	१०१	पुण्णकलस	१	८८
छत्त	,,	,,	,,	३	१०१
णदावत्त	१	८८	भिगार	३	१०१
णदीमुख	३	१०१	सख	३	१०१
दवि	,,	,,	सीहासण	,,	,,

६

सुभाषित—सुधासार

ज जम्मि होइ काले, आयरियव्व स कालमायारो।
वतिरित्तो हु अकालो, लहुगा उ अकालकारिस्स ॥
—गाथा, ६

पडिसेवणा तु भावो, सो पुण कुसलो व होज्ज अकुसलो वा।
कुसलेण होत्ति कप्पो, अकुसलेण पडिसेवणा दप्पो ॥
—गाथा, ७४

ण य सव्वो वि पमत्तो, आवज्जति तध वि सो भवे वधओ।
जह अप्पमादसहिओ, आवण्णो वी अवहओ उ ॥
—गाथा, ६२

पचसमितस्स मुणिणो, आसज्ज विराहणा जदि हवेज्जा।
रीयतस्स गुणवओ, सुव्वत्तमबन्धओ सो उ ॥
—गाथा, १०३

रागद्दोसाणुगता तु, दप्पिया कप्पिया तु तदभावा।
आराधतो तु कप्पे, विराधतो होति दप्पेण ॥
—गाथा, ३६३

काम सव्वपदेसु, विउस्सग्गऽववातधम्मता जुत्ता।
मोत्तु मेहुण-धम्म, ण विणा सो रागदोसेहिं ॥
—गाथा, ३६४

ससारगड्डपडितो, णाणादवलवितु समारुहति।
मोक्खतड जध पुरिसो, वल्लिवितारोण विसमा उ ॥
—गाथा, ४६५

णच्चुप्पतित दुक्ख, अभिभूतो वेयणाए तिव्वाए।
अद्दीणो अव्वहितो, त दुक्खऽहियासए सम्म ॥
—गाथा, १५०३

सोऊण च गिलाणि, पथे गामे य भिक्खचरियाए।
जति तुरित णागच्छति, लग्गति गुरुगे चतुम्मासे ॥
—गाथा, १७४६

रूवस्सेव सरिसय, करेहि ण हु कोद्दवो भवे साली।
आसललिय वराओ, चाएति न गद्दभो काउ ॥
—गाथा, २६२६

ज अज्जिय चरित्त, देसूणाए वि पुव्वकोडीए।
त पि कसाइयमेत्तो, नासेइ नरो मुहुत्तेण ॥
—गाथा, २७६३

मपत्ती व विवत्ती व, होज्ज कज्जेसु कारग पप्पं।
अणुपायओ विवत्ती, सपत्ती कालुवाएहि ॥
—गाथा, ४८०८

—भाष्यकार, आचार्य सिद्धसेन क्षमाश्रमण

णाण पि काले अहिज्जमाण णिज्जराहेऊ भवति, अकाले पुण उवघायकर कम्मबन्धाय भवति, तम्हा काले पढियव्वं
—भाग १, पृ० ७

मोक्खत्थ आहारविहाराइसु अहिगारो कीरति ।
—भाग १ पृ०७

कुलगणसघसमितीसु सामायारी - परूवणेसु य ।
सुत्तधराओ अत्थधरो पमाण भवति।
—भाग १, पृ० १४

उपयोगपूर्वकरणक्रियालक्खणो अप्रमाद :।
—भाग १, पृ० ४२

हिसादिअकज्जकम्मकारिणो अणायरिया ।
—भाग ४, पृ० १२४

आवत्तीए जहा अप्प रक्खंति,
तहा अण्णोवि आवत्तीए रक्खियव्वो। —भाग ४, १८६

अज्जव अकरेमाणस्स सजमसोही ण भवति।
—भाग ४, पृ० २९४

पमाया दप्पो भवति, अप्पमाया कप्पो।
—भाग १, पृ० ४२

कम्मबधो य ण दव्वपडिसेवणाणुरूवो,रागदोसाणुरूवो भवति।
—भाग ४, पृ० ३५६

जहा जउ अग्गिणा गलति
एवं जहुत्तसंजमजोगस्स अकरणातो चरित्तं गलति ।
—भाग ४, पृ० ४

जारिसी रागभागमात्रा मदा मध्या तीव्रा
वा, तारिसी मात्रा कर्मबंधो भवति।
—भाग ४, पृ० १६

जो जो साधुस्स दोसनिरोधकम्मखवणो किरियाजोगो
सो सो मोक्खोवातो।
—भाग ४ पृ० ३५

—चूर्णिकार आचार्य जिनदास महत्तर

इ

गेण्हणे गुरुगा छम्मास	५१५०	,,
गेण्हह वीसं पाते	४५५०	
गेण्हंति वारएणं	१२०४	
गेण्हंतेसु य दोसु वि	५२९९	३३७८
गेरुय वण्णिय सेडिय	१८४९	
गेलण्णतुल्ल गुरुगा	६३७१	
गेलण्णऽद्धाणो मे	४९२१	१०५८
गेलण्णमरणमाती	४७७७	
गेलण्णमुत्तनट्ठे	१५४७	
गेलण्ण रायदुट्ठे	१४४५	
,,	१५६६	
,,	१५७४	
,,	१५८१	
,,	१८५९	
,,	१८६३	
गेलण्ण-रोह-असिवे	२३६१	४७९९
गेलण्ण वास महिता	१९५१	
गेलण्ण वास महिया	१९५९	
गेलण्ण सुत्त जोए	४६८९	
गेलण्णं पि य दुविहं	४८८७	१०२५
गेलण्णं मे कीरति	५६३१	
गेलण्णमणागाढे	१६०४	
गोच्छयपादट्ठवणं	५८०६	
गोणादि कालभूमी	६१४०	
गोणादी व अभिहणे	४१६	
गोणादीवाघाते	२३७०	४८०८
गोणे य साणमादी	५२७३	३३५२
,,	५३८६	
,,	४६५१	
गोविन्दज्जो णाणे	३६५६	
गोमंडलधन्नादी	४८०२	९४३
गोमियगहणं अण्णे	९७१	
गोयरमगोयरे वा	४०५८	
गोयरमचित्तभोयण	३७४९	
गोरसभावियपोत्ते	३४४०	२८९२
गोवय उच्छेत्तुं भनि	४५०२	
गोवाडनूणं वगंधि	११४३	३५२३
गोवालए य भतए	४५०१	
गोवालवच्छवाला	३२७०	४३०१

घ

घणकुड्डा सकवाडा	२४५५	२०५९
घण-मसिणं निरुवहतं	९४९	३८८२
घणं मूले थिरं मज्झे	५८००	३९७७
घट्टण-रेणुविणासो	२६४६	
घट्टितसंठविताए	७१५	
,,	७२३	
घट्टितसंठविते वा	६९६	
,,	७०५	
घट्टेउं सच्चितं	५४७५	५३८०
घट्टितसंठविताणं	९७६	
घतसत्तूदिट्ठंतो	४५१५	
घयकुडवो य जिणस्सा	६५०३	
घरघूमोसहकज्जे	७९८	
घरसंताणग-पणगे	१४३६	
घंसणे हत्थुवघातो	४६३६	
,,	४६४४	
घेत्तुं समयसमत्थो	३७२६	
घेत्तूणऽगारलिंगं	४५९५	
घेत्तूण णिसि पलायण	२९६३	५८५८
घेत्तूण दोण्णि वि दवे	११०५	
घेत्तूण मोयणदुगं	१११४	
घेत्तूण य आगमणं	४६०१	
घेप्पंति च-सद्देणं	६४९८	
घोडेहि व मुत्तेहि व	१७१३	३७३५

च

चउकण्णम्मि रहस्से	३९६१	
चउगुरुग छच्च लहु	९९५	३८९८
चउ गुरुग छच्च लहु गुरु	२२१०	२४७८
,,	५१२८	,,
चउ गुरुगं मासो या	६६४०	
चउगुरुगा छग्गुरुगा	२२१४	२५२१
चउगुरु चउलहु सुद्धो	६६३६	
चउत्थपदं तु विदिण्णं	५२०	२५८६
चउपादा तेइच्छा	३०३६	१९३७
उफल पोत्ति सीसे	१५२७	

छ

ज

जति अच्छंतो तुसिणीओ	१८३१	
जति उस्सग्गे ण कुणति	५३८२	
जति एक्कनागणिमित्ता	५९४१	
जति एते एव दोसा	४५३५	
जति एयविप्पहूणा	४१८४	५२८०
जति एवं संसट्ठं	४१८६	५३०८
जति कालगता गणिणी	१३०९	३७३१
जति कुलकज्जियानो	४८७२	१०११
जति गहणा तति मासा	१८७	
जति छिड्डा तति मासा	२३९	
जति जगंति सुविहिता	११४८	३५२९
जति जं पुरतो कीरति	४०६०	१८१७
जति जीविहिति जति वा	४५९६	
जति ण्हाय पुव्व सुद्धे	४६७२	
जति णिक्खिवती दिवसे	१६०३	
जति णेतु एतुमाणा	५४८४	५३८६
जति ताव णिहुगमादी	४९४५	१०८२
जति ताव सम्मपरिवट्टियस्स	४२८५	
जति ताव लोतियगुरुस्स	४१८६	५३०५
जति ता सणप्फतीसु	५१९२	२५४६
जति तण मालिग्गहि	४९७९	
जति ते कुणणे मूलं	२१७	
जति तेसिं जीवाणं	४००७	३८३०
जति दिट्ठंता सिद्धी	४८६५	१००४
जति दोण्ह चेव गहणं	४५४५	
जति पत्ता तु निसीधे	२४३०	
जति परो पडिसेविज्जा	२७८२	५७३८
जति पुण गच्छंताणं	६१२८	
जति पुण तेण ण दिट्ठा	२७१९	४७३०
जति पुण पव्वावेति	४९२६	१०६३
जति पुण पुव्वं सुद्धं	४६५९	
जति पुण सव्वो वि ठितो	५१३३	२४८३
जति पोरिसिइत्ता तं	४११०	५२७२
जति फुसति तहिं तुंडं	६१०८	
जति मागधा मता	५१६४	२५१५
जतिमि (मि) भवे आलवणा	३४८५	
जति मोयणमावहती	५८९७	४०७३
जति मं जाणह सामि	५३५५	३२८६
जति मूलगपलंबा	४३०४	८५३
जति रज्जाणो भट्ठो	५०३६	६३५

जति रण्णो भज्जाए	५०३५	६३४
जति रिक्को तो दव्वमतगम्मि	४१९१	५३१०
जति वा णिरतीचारा	५४२६	
जति वा वच्चति मासं	३३२९	
जति वि ण होज्ज अवाओ	६६८८	
जति वि णिवंबो सुत्ते	४८६१	१००१
जति वि य तुल्लजंभवाणा	६६९१	
जति वि य पिवीलगादी	३४१२	२८६४
जति वि य फासुगदव्वं	३४११	२८६३
जति वि य विसोविकोडी	४४२	
जति वि य समणुण्णाता	४६०	
जति सव्वे गीतत्था	१४६३	२९३७
जति सव्वे व य इत्थी	५२००	
जति संलिहं ण कप्पति	३९७६	
जति सि कज्जसमत्ती	१३६७	४६३१
जतिहि-गुणा आरोवणा	६४८७	
जत्तियमित्ता वारा	९२२	३८५५
जत्तियमेत्ता वारा	४००८	३८३१
”	४५४१	
जत्तियमेत्ते दिवसे	१६०२	
जतुगंतरादीणं	२५६३	
जत्तो चुतो विहारो	५४४९	
जत्तो दुस्सीला खलु	२४६०	२०६५
जत्थ अचित्ता पुढवी	४२४०	५६५०
जत्थ उ ण होज्ज संका	४६८५	
जत्थ उ दुल्लहोणा	६४८९	
जत्थ उ देसग्गहणं	५३६६	३३२५
जत्थ तु ण वि लग्गंति	२७६	
जत्थ तु देसग्गहणं	५२४३	३३२५
जत्थ पवातो दीसति	३८०२	
जत्थ पुण अहाकडए	४६६१	
जत्थ पुण होति छिन्नं	३७२५	
जत्थ वि य गंतुकामा	३३८७	२७८८
जत्थ विसेसं जाणंति	३४५७	२९१०
जत्थाइण्णं सव्वं	९०१	
जदि एगस्स उ दोसा	४०८३	१८४०
जदि एतविप्पहूणा	४१५८	
जदि तेसि तेण विणा	११३०	

त

फ

ब

भ

र

ल

व

२

द्वितीयं परिशिष्टम्

निशीथचूर्णौ चूर्णिकारेणोद्धृतानि गाथादिप्रमाणानि

३

तृतीयं परिशिष्टम्

चूर्णौ प्रमाणत्वेन निर्दिष्टानां ग्रन्थानां नामानि

४

चतुर्थं परिशिष्टम्

निशीथभाष्यचूर्ण्यन्तर्गता दृष्टान्ताः

प्रथम भाग

प्राणातिपात-कल्पिका प्रतिसेवना	सिंहमारक कोंकणभिक्षु	१००
लौकिक मृषावाद	अवन्ती के शशकादि धूर्त	१०२-१०५
भयनिमित्तक अकृत्यसेवन	पुत्रार्थी राजा और भीत तरुण भिक्षु	१२७

द्वितीय भाग

प्रणीत आहार	ब्रह्मदत्त चक्रवर्ती का भोजन और पुरोहित	२१
निरन्तर कार्यसंलग्नता	कुलवधू का कामोपशमन	२२
अंगादान का संचालनादि	सिंह, सर्प आदि सात उदाहरण	२८
अखण्ड वस्त्र-ग्रहण की सदोषता	कम्बलरत्नग्राही आचार्य और चोर	६७
कलुष-परिष्ठापन	मक्खी, छिपकली आदि	१२३
रस-भोजन सम्बन्धी लुब्धता-अलुब्धता	आर्यमंगु और आर्यसमुद्र	१२५
साधुगुण का चिन्ह रजोहरण	मरहट्ठ देश में रसापण (मद्य की दूकान) पर ध्वजा	१३६
अविमुक्ति अर्थात् गृद्धि	वीरल्लशकुनि (श्येन पक्षी)	१३७
यथावसर स्थापना-कुलों में अप्रवेश से हानि	यथावसर गो-दोहन न करने वाला गृहस्थ	२४८
,,	यथावसर फूल न तोड़ने वाला माली	२४८
निष्कारण संयती-वसति में गमन	वीरल्ल शकुनि (श्येन पक्षी)	२६०
निर्वर्तनाधिकरण=जीवोत्पादन	आचार्य सिद्धसेन द्वारा अश्वनिर्माण	२८१
,,	महिष और दृष्टिविष सर्प का निर्माण	२८१
असंवृत हास्य	श्रेष्ठी, पाँच सौ तापस	२८५
,,	भिक्षु का मृतक-हास्य	२८६
प्रस्रवण-भूमि का अप्रतिलेखन	चेला (चेल्लग) और ऊँट	२६८
असंभोग-सम्बन्धी पृच्छा	अगड आदि के ६ उदाहरण	३५६
विसंभोग का प्रारम्भ	आर्य सुहस्ती और आर्य महागिरि	३६०
,,	सम्प्रति राजा का जन्म	३६०
अभियोग-प्रतिसेवना	पुत्रार्थी राजा और तरुण भिक्षु	३८१
लोक-कथाओं का अनुपदेश	मल्लीगृहोत्पत्ति कथा कहने वाला भिक्षु	४१६
सोपसर्ग-स्थिति में संयती के साथ विहार	दो यादव श्रमण-बन्धु और भगिनी सुकुमालिका साध्वी	४१७

तृतीय भाग

अधिकरण का अनुपशम	कलहरत सरटों द्वारा जलचर-नाश	४१
,,	क्रोधी द्रमक और कनकरस	४३
सम अपराध में विषम दण्ड	राजा द्वारा तीन पुत्रों को विभिन्न दण्ड	४८
स्वगण तथा परगण में दण्ड की अल्पाधिकता	पति द्वारा चार भार्याओं को विभिन्न दण्ड	५२
दुष्ट राजा को शिक्षार्थ अनुशासन	आर्य खपुट	५८
,,	बाहुबली	५८
,,	संभूत (ब्रह्मदत्तचक्रवर्ती का भ्राता)	५८
,,	हरिकेश बल	५८

५

पंचमं परिशिष्टम्

निशीथभाष्यचूर्ण्यन्तर्गतानां विशेषनाम्नां विभागशोऽनुक्रमणिका

४

जैन श्रमणी

५

जैन निह्नव

६

प्रतिमा

७

पडिमा (अभिग्रहविशेष)

८

अध्वकल्प

६

अन्यतीर्थिक देव

१०

अन्यतीर्थिक श्रमण और श्रमणी

११

परिव्राजक

१६
राज्याधिकारी

१७
राज्यार्ह

१८
राजसेवक

१९
गणधर्म

२०
बल (सेना)

२१
अभिषेक-राजधानी

२२

जनपद

२३

ग्राम, नगर, नगरी आदि

३७
पूजा

३८
णाणक (मुद्रा)

३९
पात्र

४०
पानक

४१
विशिष्ट भोज्य पदार्थ

४२
वस्त्र

६८

मंगल

चामर	३	१०१
छत्त	,,	,,
णंदावत्त	१	८८
णंदीमुख	३	१०१
दवि	,,	,,
पडह	,,	,,
पुण्णकलस	१	८८
,,	३	१०१
भिंगार	३	१०१
संख	३	१०१
सीहासण	,,	,,

सुभाषित—सुधासार

जं जम्मि होइ काले, आयरियव्वं स कालमायारो।
वतिरित्तो हु अकालो, लहुगा उ अकालकारिस्स॥
—गाथा, ६

पडिसेवणा तु भावो, सो पुण कुसलो व होज्ज अकुसलो वा।
कुसलेण होति कप्पो, अकुसलेण पडिसेवणा दप्पो॥
—गाथा, ७४

ण य सव्वो वि पमत्तो, आवज्जति तध वि सो भवे वधओ।
जह अप्पमादसहिओ, आवण्णो वी अवहओ उ॥
—गाथा, ९२

पंचसमितस्स मुणिणो, आसज्ज विराहणा जदि हवेज्जा।
रीयंतस्स गुणवओ, सुव्वत्तमवन्धओ सो उ॥
—गाथा, १०३

रागद्दोसाणुगता तु, दप्पियां कप्पिया तु तदभावा।
आराधतो तु कप्पे, विराधतो होति दप्पेणं॥
—गाथा, ३६३

कामं सव्वपदेसु, विउस्सगऽववातधम्मता जुत्ता।
मोत्तुं मेहुण-धम्मं, ण विणा सो रागदोसेहिं॥
—गाथा, ३६४

संसारगड्डपडितो, णाणादवलंवितु समारुहति।
मोक्खतडं जध पुरिसो, वल्लिवितारोण विसमा उ॥
—गाथा, ४६५

णच्चुप्पतितं दुक्खं, अभिभूतो वेयणाए तिव्वाए।
अद्दीणो अव्वहितो, तं दुक्खऽहियासए सम्मं॥
—गाथा, १५०३

सोऊणं च गिलाणिं, पंथे गामे य भिक्खचरियाए।
जति तुरितं णागच्छति, लग्गति गुरुगे चतुम्मासे॥
—गाथा, १७४६

रू व सरिसयं, करेहि ण हु कोद्दवो भवे साली।
आसललियं वराओ, चाएति न गद्दभो काउं॥
—गाथा, २६२६

संपत्ती व विवत्ती व, होज्ज कज्जेसु कारगं पप्पं।
अणुपायओ विवत्ती, संपत्ती कालुवाएहिं ॥

—गाथा, ४८०८

—भाष्यकार, आचार्य सिद्धसेन क्षमाश्रमण

णाणं पि काले अहिज्जमाणं णिज्जराहेऊ भवति, अकाले पुण उवघायकरं कम्मबन्धाय भवति, तम्हा काले पढियव्वं

—भाग १, पृ० ७

मोक्खत्थं आहारविहाराइसु अहिगारो कीरति ।

—भाग १. पृ०७

कुलगणसंघसमितीसु सामायारी - परूवणेसु य ।
सुत्तधराओ अत्थधरो पमाणं भवति ।

—भाग १, पृ० १४

उपयोगपूर्वकरणक्रियालक्खणो अप्रमाद : ।

—भाग १. पृ० ४२

हिंसादिअकज्जकम्मकारिणो अणायरिया ।

—भाग ४, पृ० १२४

आवत्तीए जहा अप्पं रक्खंति,
तहा अण्णोवि आवत्तीए रक्खियव्वो । —भाग ४, १८९

अज्जवं अकरेमाणस्स संजमसोही ण भवति ।

—भाग ४, पृ० २९४

पमाया दप्पो भवति, अप्पमाया कप्पो ।

—भाग १, पृ० ४२

कम्मबंधो य ण दव्वपडिसेवणाणुरूवो, रागदोसाणुरूवो भवति ।

—भाग ४, पृ० ३५९

जहा जउ अग्गिणा गलति
एवं जहुत्तसंजमजोगस्स अकरणातो चरित्तं गलति ।

—भाग ४, पृ० ४

जारिसी रागभागमात्रा मंदा मध्या तीव्रा
वा, तारिसी मात्रां कर्मबंधो भवति ।

—भाग ४, पृ० १६

जो जो साधुस्स दोसनिरोधकम्मखवणो किरियाजोगो
सो सो मोक्खोवातो ।

—भाग ४. पृ० ३५

—चूर्णिकार आचार्य जिनदास महत्तर